April to June 2025
E-Journal
Volume I, Issue L (50)

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Scientific Journal Impact Factor -8.054
ISO 9001:2015 (QMS) : E2024049304
(Quality Management Systems)

Naveen Shodh Sansar

(An International Refereed/ Peer Review Research Journal)



नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, **NEEMUCH** (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, **Email** : nssresearchjournal@gmail.com, **Website** www.nssresearchjournal.com

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Index

01. Index 02
02. Regional Editor Board / Editorial Advisory Board 08/09
03. Referee Board 10
04. Spokesperson 12
05. Chemical Composition and Applications of the Banana Tree (Akhilesh Chandra Verma) 14
06. Obligations for the Maintenance of Wives and Children in Hindu Family Law 16
(Prof. (Dr.) Bijay Kumar Yadav)
07. Integration of Foreign Communities into Ancient Indian Religions and Culture: An Analytical 19
Study (Dr. Ashish Kumar Chachondia)
08. Impact of Solar Energy in Sustainable Development of India 23
(Shikha Gupta, Dr. Mahesh Gupta)
09. India and Retail Business (Dr. Sarojini Topno) 28
10. The Interplay of Policy Frameworks and Public-Private Collaborations in Fostering 30
Sustainable Tourism: An Empirical Study of Kashmir's Tourism Sector (Rahul Kumar Jha)
11. Determinants of Buying Behaviour in Organised and Unorganised Retail Sector 33
(Dr. Rajan Devi Negi)
12. Science, Technology and Society (Akhilesh Chandra Verma) 38
13. Biotechnology Patenting: An Indian Perspective (Shivani Chaurasia) 43
14. कृषि उपज मंडी समितियों का वित्तीय एवं संरचनात्मक अध्ययन (छत्तीसगढ़ राज्य के संदर्भ में) 47
(डॉ. आकांक्षा राठौर)
15. प्राचीन भारतीय राज्यव्यवस्था में मंत्रिपरिषद की उपयोगिता वर्तमान संदर्भ में (डॉ. जे. के. संत) 50
16. भारत में लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण में संविधान की भूमिका का विश्लेषणात्मक अध्ययन 53
(विजय लक्ष्मी जोशी)
17. उच्च शिक्षण संस्थानों का स्थानीय आर्थिक विकास में योगदान मध्य प्रदेश के मालवा के आगर मालवा एवं 57
निमाड़ के खरगोन क्षेत्र के विशेष सन्दर्भ में (डॉ. मितेश चौधरी, सपना सोनी)
18. भूमि उपयोग परिवर्तन का मूल्यांकन एवं उसका भोपाल महानगरीय उपातं की ग्रामीण पृष्ठभूमि पर प्रभाव 62
(डॉ. दुर्गेश कुर्मी)
19. बाल मनोविज्ञान पर आधारित वैज्ञानिक बोध : समकालीन हिंदी बाल कथा साहित्य के संदर्भ में 69
(गीतांजली कोलीवाल, डॉ. ज्योति यादव)
20. ई–कॉमर्स और मानव संसाधन प्रबंधन (डॉ. मोनिका जैन, संजय सिंह गहलोत) 74
21. मध्य प्रदेश विधानसभा 2023 में अनुसूचित जातियों के मतदान व्यवहार का वर्णनात्मक अध्ययन : 77
उज्जैन उत्तर विधानसभा एवं उज्जैन दक्षिण विधानसभा क्षेत्र के विशेष संदर्भ में (रवि दायमा)
22. भारत में महिलाओं का मानसिक सशक्तिकरण: एक अध्ययन (डॉ. आभा सैनी) 80
23. आँसू का शैलीवैज्ञानिक अध्ययन (डॉ. निशा शुक्ला तिवारी) 83
24. कथाकार शिवानी के कथा साहित्य में सामाजिक समस्याएँ वर्तमान परिवेश में प्रासंगिकता 87
(रेखा शर्मा, डॉ. संध्या बिसेन)
25. मनोविश्लेषणवाद और आधुनिक समाज (ऋतू धूरिया, डॉ. संध्या बिसेन) 90
26. प्रेमचंद की कहानियों में नारी अध्ययन (किरण ठाकुर, डॉ. संध्या बिसेन) 94
27. The Evolution of Online Shopping and Its Psychological Impact on Consumer Behavior 97
(Varsha Shende, Dr. Munesh Thakre)
28. जैव विविधता का महत्व एवं संरक्षण (डॉ. धर्मेन्द्र पाटीदार) 100

29. राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता का तुलनात्मक अध्ययन (मनीषा बागोरा, डॉ. प्रमिला पुर्बिया) 102
30. ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं में उपलब्धि अभिप्रेरणाओं का तुलनात्मक अध्ययन (ज्योति कुँवर राजपूत, डॉ. गुणबाला आमेटा) 105
31. समकालीन समाज में विवाह विच्छेद के कारणों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (ऋतु गुर्जर, डॉ. लवली भाटी) 108
32. शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यों की कार्य कुशलता का अध्ययन (डॉ. नितिन मेनारिया, प्रो. सरोज गर्ग) 112
33. Awakening the Mind: An Introduction to Meditation (Dr. Mamta) 115
34. कामकाजी महिलाओं के बीच मानसिक स्वास्थ्य और कार्य पारिवारिक संघर्ष पर एक अध्ययन (डॉ. विनेता) 117
35. मुस्लिम महिलाओं के शैक्षणिक स्तर का समाजशास्त्रीय अध्ययन (डॉ. पूजा तिवारी) 121
36. पत्रकारिता में स्त्री विमर्श: मुख्यधारा मीडिया और महिला आवाज़ (डॉ. हुसन सिंह सोलंकी) 124
37. R.K. Narayan's Place in Indian English Fiction (Dr. Mukesh Sathe) 127
38. Romantic Idealism vs. Realism in Leadership: A Management Study of George Bernard Shaw's *Arms and the Man* (Dr. Minhal Haider, Dr. Sehba Jafri) 131
39. India European Union Relations in Changing World (Dr. Swati Thakur) 133
40. उच्चमध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों का समायोजन क्षमता पर शिक्षकों तथा विद्यालय वातावरण के प्रभाव का अध्ययन (डॉ. अमित कुमार शर्मा, एकता सिंधु) 136
41. मध्यप्रदेश के डिप्लोमा स्तरीय विद्यार्थियों द्वारा सोशल नेटवर्किंग साइटों के उपयोग पर एक अध्ययन (डॉ. आलोक कुमार यादव) 139
42. Assessment of Physical Properties of Soil in the South-Eastern Zone of Barwani District of Madhya Pradesh (Harish Raghunath Khairanar, Dr. Pramod Pandit, Dr. Dhananjay Dwivedi) 144
43. भारत में बैंकिंग व्यवस्था सुझाव एवं सिफारिशें (डॉ. अरूणा पाठक) 149
44. मुइज्जू सरकार और भारत – मालदीव संबंधों का विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. शोभा गौतम) 151
45. सागर जिले की बालिकाओं के शैक्षणिक एवं सामाजिक विकास के संदर्भ में लाड़ली लक्ष्मी योजना की प्रभावशीलता का अध्ययन (सुदर्शन केशरवानी, डॉ. मन्सूर खान) 154
46. मध्यपूर्व में शक्ति संतुलन ईरान – इजराइल शत्रुता का एक विश्लेषण (संदीप बिड़ला, सुदीप बिड़ला) 158
47. Culture and Gender Identity in Mahesh Dattani's "Tara" (Dr. Kalpana Pandey) 161
48. शासकीय गोदामों में भण्डारण और खराबे का आर्थिक विश्लेषण (उज्जैन संभाग के संदर्भ में एक अध्ययन) (डॉ. मनु गौतम, लवकुश पाटीदार) 164
49. प्रबंधकीय शिक्षा का रोजगार के अवसरों में योगदान (डॉ. अधिकेश राय, श्रीमती अन्नपूर्णिमा कोष्टा) 166
50. संचार माध्यमों में हिंदी की प्रगति : वैश्विक परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन (डॉ. आराधना सिंह) 170
51. उच्च शिक्षा का अनुसूचित जाति पर प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (मोरना ब्लॉक के संदर्भ में) (डॉ. रत्ना त्रिवेदी, आजाद सिंह) 172
52. A Study of BMI with Musculoskeletal Fitness in College Students (Vikram Singh Rathore, Dr. B.S. Chouhan) 176
53. A Study on Physiological Variables of Different Level Pistol Shooters (Dr. Bhupendra Singh Chouhan, Niharika Shaktawat) 179
54. Critical Analysis of Juvenile Justice System in India (Dr. Jyoti Saran Saxena, Dr. Anushka Mishra Nayak) 181
55. किशोर विद्यार्थियों में बढता व्यावसायिक रूचि का रूझान (पूजा कुमार) 185
56. जयसमन्द झील का मेवाड़ के आर्थिक क्षेत्र में योगदान – एक अध्ययन (मोनिका आमेटा, डॉ. पंकज आमेटा) 189

57. An Analytical Study of Selected Indices of Bombay Stock Exchange (During COVID -19) 192
(Dr. Sanjay Johari, Deepika Badiya)
58. Economic Ideas of Mahatma Gandhi (Dr. Ajay Kumar Gupta) 195
59. Effectiveness of Fiscal Policy in India: Evidence from 40 Years using SVAR Approach 197
(Hitika Gupta, Subhanshi Vishvakarma)
60. भारतीय इतिहास में मेवाड़ की वीरांगना किरण देवी का गौरवशाली स्थान और मुगल अकबर की पराजय 201
(सौरभ पटेल, डॉ. हेमेन्द्र सिंह सारंगदेवोत)
61. Mental Wellbeing in Ancient India (Sakshi Shrivastava) 204
62. सीवरेज कर्मकारों की स्वास्थ्य सुरक्षा संबंधी चुनौतियाँ (रिंकू साहू, डॉ. भाविक पानेरी) 207
63. कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय डूंगरपुर में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर 211
का अध्ययन (महेश कुन्तल,डॉ. मिनेश भट्ट)
64. जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय की शैक्षिक व सहशैक्षिक उपलब्धियों 216
का अध्ययन (नरेन्द्र कुमार, डॉ. सुभाष पुरोहित)
65. मेवाड़ राज्य का भौगोलिक–ऐतिहासिक परिचय और पर्यटन स्थल 220
(भेरूलाल सुथार, डॉ. हेमेन्द्र सिंह सारंगदेवोत)
66. संस्कृत के आदिकवि कालिदास के साहित्य में भारतीय ज्ञान परंपरा (डॉ. अनिता पाटीदार) 224
67. Human Relationships and Existential Dilemmas in the Plays of Girish Karnad 227
(Nikhilesh Kumar)
68. Developing a Inventory Model by Using Innovation Diffusion with Replenishment 231
(Shilpi Singh, Ashish Agarwal, Khursheed Alam)
69. काव्यशास्त्रीय परंपरा में श्वेतांबर जैन आचार्य नमिसाधु–परिचय (डॉ. रागिनी श्रीवास्तव) 236
70. Desiring Girlhood: Female Sexuality and Psychosexual Development in *Claudine at School* 240
and *The Crooked Line* (Anjali)
71. प्रवासी जनजातीय श्रमिकों को प्रेरित करने वाले कारकों का समाजकार्य अध्ययन (मध्यप्रदेश के झाबुआ 244
जिले के विशेष संदर्भ में) (कपिल डामर)
72. जयसमंद झील: परंपरा की रक्षा बनाम आधुनिकता की चुनौती : एक अध्ययन 250
(मोनिका आमेटा, डॉ. पंकज आमेटा)
73. बाँदा जिले में ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन का भौगोलिक अध्ययन (अंकिता चौरसिया) 252
74. Impact of Corporate Retailing on Consumers of Small Cities & Towns : A Study in 255
Economic Sociology (with special reference to Chhatarpur District)
(Suyash Sagar Bajpai, Dr. Shashikant Awasthi)
75. बैंकिंग में आईसीटी की भूमिका और डिजिटल बैंकिंग का ग्राहक अनुभव पर प्रभाव 261
(गुरप्रीत सिंह, डॉ. नेहा गिरधर)
76. Integrating Skill Development in Commerce Curriculum: A NEP 2020 Perspective 263
(Dr. D.C. Rathi, Dr. M.S. Dawar, Dr. Sudha Agarwal)
77. Study on Role of Panchayati Raj and Financial Management in Strengthening Rural 267
Development: A Study of Madhya Pradesh (Aadarsh Singh Dawar, Dr. P. Gautam, Dr. Pritibala Bhargava)
78. जनजातिय महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति (हेमलता डांगी) 272
79. Reimagining Indian Schooling: An Analytical Study of the National Education Policy (2020) 275
and Its Impact on School Education (Khushboo)
80. घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का अध्ययन 277
(डॉ. निरुपमा शर्मा, श्रीमती माया सुथार)
81. ग्रामीण महिलाओं पर विकास योजनाओं का सामाजिक प्रभाव (डॉ. जितेन्द्र कुशवाहा) 281
82. पंचायतीराज अधिनियम के द्वारा जनजातीय महिलाओं में राजनीतिक जागरूकता का विकास 283
(सतना जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. राजेश त्रिपाठी, कृष्णपाल सिंह परमार)

83. युवा मतदाता व्यवहार को प्रभावित करने वाले तत्व एवं वर्तमान राजनीति पर उसके परिणाम का अध्ययन 285
(बाथूसिंह डावर, डॉ. मनीष चौधरी)
84. Analysis of Adolescent Girls Health and Wellbeing Status in Rajasthan (Dr. Babita) 287
85. Analytical Study of Social and Economic Factors of Deforestation in Chhattisgarh State 294
(Dr. Kajal Moitra, Sharmistha Manna)
86. Witness Protection and its Need in India 301
(Gyanendra Kumar Pandey, Dr. Harish Chandra Pandey)
87. बलिया जिले की महिलाओं में स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता का अध्ययन 305
(डॉ. तृप्ति तिवारी)
88. A Comparative Study of Customer Satisfaction in Online and Traditional Shopping: 311
A Case Study of Ujjain Division (Neha Singh, Dr. L. N. Sharma)
89. Bank Mergers in India and Their Effect on Performance: A Public Sector Bank Perspective 314
(Dr. George Thomas, Ms. Sharda Sethia)
90. मध्यप्रदेश के बुर्हानपुर जिले में एकीकृत बाल विकास सेवा (ICDS) का मूल्यांकन : पोषण एवं सेवा कवरेज 318
का अध्ययन (सुमन कुमार पिल्लई, डॉ. दीपक गर्ग)
91. Potential of Enforceable 'Directive Principles of State Policy (DPSPs)' (Dr. S. K. Talware) 321
92. सीकर जिले में जल संसाधन और कृषि सिंचाई (सुनील कुमार ढाका, डॉ. एल. सी. अग्रवाल) 324
93. सोशल मीडिया के प्रभाव का अध्ययन: उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों के सामाजिक एवं नैतिक मूल्य 328
(श्रीमती योगिता गौर, डॉ. राखी शर्मा)
94. Towards Sustainable Energy Access: Descriptive Insights on Clean Fuel Adoption in 332
Rajasthan Using NFHS-5 (2019-21) (Kunal Ramchandani, Dr. Rameshwar Jat)
95. ग्रामीण महिलाओं में स्वास्थ्य जागरूकता का अध्ययन (ग्राम –अमकुई, जिला सतना के विशेष संदर्भ में) 340
(डॉ. राजेश त्रिपाठी, अमृतांशु मिश्रा)
96. जन्मकुण्डली में शिक्षाविद् एवं प्रोफेसर बनने के योग – एक अध्ययन 342
(महामहोपाध्याय डॉ. गोविन्द गन्धे, डॉ. कुलदीप श्रीवास्तव)
97. स्वापक औषधी और पुलिस प्रशासन की भूमिका (मनुदेव पाटीदार, डॉ. बालासाहेब गर्जे) 344
98. मुक्त शिक्षा में माध्यमिक स्तर के शिक्षार्थियों की सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीक सम्बन्धी समस्याओं 348
एवं सुझावों का अध्ययन (डॉ. दिनेश कुमार)
99. Impact of the Information Technology (Intermediary Guidelines and Digital Media Code) 353
Rules, 2021 on OTT Content (Hemant Gangawat, Dr. Kalpesh Nikawat)
100. ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों के एकाकी तथा संयुक्त परिवारों के विद्यार्थियों के अभिभावक अकादमिक 356
सहभागिता का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. सुनीता मुर्डिया, सीमा कुमावत)
101. मध्यप्रदेश में रोजगार मूलक योजनाओं का प्रभाव: उज्जैन एवं रतलाम जिलों के संदर्भ में विश्लेषणात्मक 362
अध्ययन (पूजा झाला, डॉ. एल. एन. शर्मा)
102. Assessing Institutional Preparedness for ICT Integration in Secondary Schools 366
(Rajkumari Rathore, Dr. Rajesh Kumar)
103. राजस्थान पुलिस: तब और अब – एक तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. रतन लाल सुथार) 370
104. डॉ. भीमराव अम्बेडकर का महिला मुक्ति विमर्श (नरेन्द्र सिंह पंवार) 372
105. डॉ. भीमराव अम्बेडकर के विचार – दलितों के विशेष संदर्भ में (सत्यनारायण सिंह शेखावत) 375
106. Phytochemical Profiling of *Tinosporacordifolia* for Therapeutic Applications. 378
(Dr. Ragini Sikarwar)
107. एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम (ITEP) की आवश्यकता एवं चुनौतियॉ : (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के 381
सन्दर्भ में) (डॉ. उमा श्रीवास्तव)
108. भारतीयसंस्कृते: तत्त्वचिन्तनम् (डॉ. पंकज कुमार सिंह) 385

109. Eunuchs Under the Eye of Mythology in India (Pawan Kumar Chaurasia) 388
110. Towards a Uniform Civil Code: Evaluating the Legal and Social Feasibility of Uniform 391
Divorce Laws in India (Jyoti Payasi, Dr. Rajat Kumar Satapathy)
111. Ethnic Conflict in Roma Tearne's *Mosquito*: Trauma, Memory, and the Gothic Landscape of 394
Sri Lanka's Civil War (Sachin Sharma)
112. Evaluating E-CRM Effectiveness: A Comparative Study of Public and Private Sector Banks 400
in Bhopal (Pragya Chouhan, Dr. L. N. Sharma)
113. रामचरितमानस में राजधर्म (रणधीर झा, अन्नु झा, जैमिनी खानवे) 404
114. किशोर न्याय अधिनियम, 2015 के कार्यान्वयन में चुनौतियाँ : एक आधारभूत अध्ययन 407
(श्रीमती प्रीती बुंदेला, डॉ. राम सिंह पटेल)
115. सूर्यवाला के संवेदनात्मक दंश – 'यामिनी कथा' (डॉ. मनीषा सिंह मरकाम) 411
116. The Role of Communication, Critical Thinking and Digital Literacy in Shaping Employability 413
of Future Managers (Mehvish Khan, Dr. Atul Loomba)
117. Effect of Sports Psychology Interventions on Competitive Anxiety and Confidence Level of Hockey ...416
Players Belonging to Tribal Communities of Rajasthan (Nahar Singh Jhala, Dr. Bhawanipal Singh Rathore)
118. The Use of Drugs in Educational Institutions: Impacts on Students , Teachers and Legal 419
Framework in India (Dr. Monisha Biswal)
119. Sustainable Agriculture and Rural Development: Pillars of Viksit Bharat @ 2047 424
(Dr. Rajkumar Nagwanshee, Dr. Ashvanee Kumar)
120. Social Responsibilities and Need of Legal Profession 428
(Barkha Dwivedi, Dr. Charu Chandra Vyas)
121. Novel Metal Adsorbent and Their Use for Industrial Waste Water 432
(Durgesh Rane, Dr. Arun Sikarwar, Dr. O N Choubey)
122. International Conventions on Elder Persons' Rights and India: A Descriptive and Analytical 436
Study (Mr. Ankit Khare, Dr. Rajat Kumar Satpathy)
123. Elder Persons' Rights in India: A Socio-Legal Analysis 439
(Mr. Ankit Khare, Dr. Rajat Kumar Satpathy)
124. चित्रा मुद्गल के उपन्यासों में राजनीति और स्त्री का अंर्तसम्बन्ध (डॉ. आशा अग्रवाल, बन्दना कुमारी) 443
125. छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल एवं निजी रियल एस्टेट डेवलपर्स आवास एजेंसियों का तुलनात्मक अध्ययन: 445
रायपुर जिले के विशेष संदर्भ में (पूजा मोटवानी, डॉ. शोभा अग्रवाल)
126. गृह प्रबंधन शिक्षा से महिलाओं की निर्णय–क्षमता में वृद्धि का अध्ययन (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन) 449
(डॉ. ज्योति सिंह)
127. Effect of Combined Strength and Plyometric Training on Smash Speed and Court 453
Movement in Competitive Badminton Players of Sikar and Churu Districts of Rajasthan
(Rajesh Kumar, Dr. B. K. Choudhary)
128. Effect of Reaction-Based Fielding Drills on Ball Collection Speed and Throwing Accuracy 457
in Junior Cricket Players (Ramesh Choudhary, Dr. B. K. Choudhary)
129. Relationship Between Physical Fitness Components and Injury Occurrence in 460
Kabaddi Players of Selected Districts of Rajasthan (Ramsukh Ogra, Dr. Kamal Vijayvargia)
130. Concept of Holistic Living in Yoga: A Framework for Harmonizing Body, Mind and Spirit 464
(Pooja Nagpal, Dr. B.K. Choudhary)
131. Comparative Analysis of Shooting and Passing Efficiency among State-Level Footballers 468
of Rajasthan and Haryana (Manoj Jat, Dr. Gajendra Singh Saroha)
132. Impact Of Special Sports Training On Aerobic Capacity And Muscular Endurance In 472
Competitive Handball Players (Triveni Sharma, Dr. Anita Ranawat)
133. Assessment Of Selected Physical Fitness Components In School-Level Badminton Players 476
Of Rajasthan (Subhash Bishnoi, Dr. B.K. Choudhary)

134. Impact of Working Capital Management on Profitability and Liquidity of Hospital Equipment Industries in Madhya Pradesh (Parv Jain, Dr. Sadaf Khan) 480
135. नमक आन्दोलन में मुजफ्फरनगर की भूमिका (डॉ. सचिन कुमार) 483
136. राजस्थान के विद्यालयी क्रिकेट खिलाड़ियों के शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. संतोष लांबा, राजेंद्र कुमार श्रीमाली) 485
137. मराठवाड्यातील ओ.बी.सी. समाजाच्या सामाजिक आणि आर्थिक परिस्थितीचे अध्ययन (डॉ. अविनाश शेंद्रे, प्रशांत तांदळे) 488
138. उदयपुर के शैव मतावलम्बीय पर्यटन स्थल (डॉ. मनोज दाधीच, कविता विश्नोई) 494
139. नई कहानी आंदोलन की संवेदनागत एवं शिल्पगत विशेषताएँ : योगदान, महत्व एवं समग्र मूल्यांकन (महीपाल दान, डॉ. राज बाला) 500
140. From Gold to Growth: A Comparative Study of Evolving Investment Behaviour of Working and Non-Working Women in India (Dr. B L Patidar, Milind Dandwate) 503
141. Necessity and Challenges in Lawful Implementation of Sustainability in Our Infrastructural Development (Dr. Mohammad Harun Chippa) 509
142. चिकित्सा प्रणाली के विकास में भारतीय ज्ञान परम्परा का योगदान (डॉ. मधुसूदन चौबे) 513
143. Uses and Benefits of E-Commerce (Dr. Shail Prabha Koshta) 519
144. Farmers' Rights Protection in India: A Legal and Socio-Economic Analysis (Dr. Lok Narayan Mishra) 521
145. Effect of Education on Gender Inequality in Uttar Pradesh, India (Dr. Bhavna Sharma, Dr. Mani Bansal) 527
146. Depression and Anxiety in Contemporary Young-Adult Fiction: A Critical Study (Reena Mittal) 529
147. लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण में पंचायती राज की भूमिका (डॉ. अमित मेहता) 532
148. AI and The Women, Peace and Security Agenda in India (Dr. Bhavna Sharma) 535

Regional Editor Board - International & National

1. Dr. Manisha Thakur - Fulton College, Arizona State University, America.
2. Mr. Ashok Kumar - Employbility Operations Manager, Action Training Centre Ltd. London, U.K.
3. Ass. Prof. Beciu Silviu - Vice Dean (Management) Agriculture & Rural Development, UASVM, Bucharest, Romania.
4. Mr. Khgendra Prasad Subedi - Senior Psychologist, Public Service Commission, Central Office, Anamnagar, Kathmandu, Nepal.
5. Prof. Dr. G.C. Khimesara - Former Principal, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.) India
6. Prof. Dr. Pramod Kr. Raghav - Research Guide, Jyoti Vidhyapeeth Women University, Jaipur (Raj.) India
7. Prof. Dr. Anoop Vyas - Former Dean, Commerce, Devi Ahilya University, Indore (India) India
8. Prof. Dr. P.P. Pandey - Dean, Commerce, Avadesh Pratapsingh University, Rewa (M.P.) India
9. Prof. Dr. Sanjay Bhayani - HOD, Business Management Deptt., Saurashtra University, Rajkot (Guj.) India
10. Prof. Dr. Pratap Rao Kadam - HOD, Commerce, Govt. Girls PG College, Khandwa (M.P.) India
11. Prof. Dr. B.S. Jhare - Professor, Commerce Deptt., Shri Shivaji College, Akola (Mh.) India
12. Prof. Dr. Sanjay Khare - Prof., Sociology, Govt. Auto. Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
13. Prof. Dr. R.P. Upadhayay - Exam Controller, Govt. Kamlaraje Girls Auto. PG College, Gwalior (M.P.) India
14. Prof. Dr. Pradeep Kr. Sharma - Professor, Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) India
15. Prof. Akhilesh Jadhav - Prof., Physics, Govt. J. Yoganandan Chattisgarh College, Raipur (C.G.) India
16. Prof. Dr. Kamal Jain - Prof., Commerce, Govt. PG College, Khargone (M.P.) India
17. Prof. Dr. D.L. Khadse - Prof., Commerce, Dhanvate National College, Nagpur (Maharastra) India
18. Prof. Dr.Vandna Jain - Prof., Hindi, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) India
19. Prof. Dr. Hardayal Ahirwar - Prof.,Economics, Govt. PG College, Shahdol (M.P.) India
20. Prof. Dr. Sharda Trivedi - Retd. Professor, Home Science, Indore (M.P.) India
21. Prof. Dr. Usha Shrivastav - HOD, Hindi Deptt., Acharya Institute of Graduate Study, Soldevanali, Bengaluru (Karnataka) India
22. Prof. Dr. G. P. Dawre - Professor, Commerce, Govt. College, Badwah (M.P.) India
23. Prof. Dr. H.K. Chouarsiya - Prof., Botany, T.N.V. College, Bhagalpur (Bihar) India
24. Prof. Dr. Vivek Patel - Prof., Commerce, Govt. Shaheed Kedarnath College, Mauganj (M.P.) India
25. Prof. Dr. Dinesh Kr. Chaudhary - Prof., Commerce, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) India
26. Prof. Dr. P.K. Mishra - Prof., Zoological, Govt. PG College, Betul (M.P.) India
27. Prof. Dr. Jitendra K. Sharma - Prof., Commerce, Maharishi Dayanand Uni. Centre, Palwal (Haryana) India
28. Prof. Dr. R. K. Gautam - Prof., Govt. Manjkuwar Bai Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.) India
29. Prof. Dr. Gayatri Vajpai - Professor, Hindi, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.) India
30. Prof. Dr. Avinash Shendare - HOD, Pragati Arts & Commerce College, Dombivali, Mumbai (Mh.) India
31. Prof. Dr. J.C. Mehta - Fr. HOD, Research Centre, Commerce, Devi Ahilya Uni., Indore (M.P.) India
32. Prof. Dr. B.S. Makkad - HOD, Research Centre Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) India
33. Prof. Dr. P.P. Mishra - HOD, Maths, Chattrasal Govt. PG College, Panna (M.P.) India
34. Prof. Dr. Sunil Kumar Sikarwar - Professor, Chemistry, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
35. Prof. Dr. K.L. Sahu - Professor, History, Govt. PG College, Narsinghpur (M.P.) India
36. Prof. Dr. Malini Johnson - Professor, Botany, Govt. PG College, Mahu (M.P.) India
37. Prof. Dr. Ravi Gaur - Asso. Professor, Mathematics, Gujarat University, Ahmedabad (Gujarat) India
38. Prof. Dr. Vishal Purohit - M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Miadan, Indore (M.P.) India

Editorial Advisory Board, INDIA

1. Prof. Dr. Narendra Shrivastav - Scientist , ISRO, Bengaluru (Karnataka) India
2. Prof. Dr. Aditya Lunawat - Director, Swami Vivekanand Career Guidance deptt. M.P. Higher Education, M.P. Govt., Bhopal (M.P.) India
3. Prof. Dr. Sanjay Jain - O.S.D., Additional Director Office, Bhopal (M.P.) India
4. Prof. Dr S.K. Joshi - Former Principal, Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) India
5. Prof. Dr. J.P.N. Pandey - Fr. Principal, Govt. Auto.Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.) India
6. Prof. Dr. Sumitra Waskel - Principal, Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.) India
7. Prof. Dr. P.R. Chandelkar - Principal, Govt. Girls P.G. College, Chhindwara (M.P.) India
8. Prof. Dr. Mangal Mishra - Principal, Shri Cloth Market, Girls Commerce College, Indore (M.P.) India
9. Prof. Dr. R.K. Bhatt - Former Principal, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.) India
10. Prof. Dr. Ashok Verma - Former HOD, Commerce (Dean) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
11. Prof. Dr. Rakesh Dhand - HOD, Student Welfare Deptt., Vikram University, Ujjain (M.P.) India
12. Prof. Dr. Anil Shivani - HOD, Commerce /Management, Govt. Hamidiya Arts And Commerce Degree College, Bhopal (M.P.) India
13. Prof. Dr. PadamSingh Patel - HOD, Commerce Deptt., Govt. College, Mahidpur (M.P.) India
14. Prof. Dr. Manju Dubey - HOD (Dean), Home Science Deptt. Jiwaji University, Gwalior (M.P.) India
15. Prof. Dr. A.K. Choudhary - Professor, Psychology, Govt. Meera Girls College, Udiapur (Raj.) India
16. Prof. Dr. T. M. Khan - Principal, Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) India
17. Prof. Dr. Pradeep Singh Rao - Principal, Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.) India
18. Prof. Dr. K.K. Shrivastava - Professor, Eco., Vijaya Raje Govt. Girls P.G. College, Gwalior (M.P.) India
19. Prof. Dr. Kanta Alawa - Professor, Pol. Sci., S.B.N.Govt. P.G. College, Badwani (M.P.) India
20. Prof. Dr. S.C. Jain - Professor, Commerce, Govt. P.G. College, Jhabua (M.P.) India
21. Prof. Dr. Kishan Yadav - Asso. Professor, Research Centre Bundelkhand College, Jhasi (U.P.) India
22. Prof. Dr. B.R. Nalwaya - Chairman,Commerce Deptt.,Vikram University, Ujjain (M.P.) India
23. Prof. Dr. Purshottam Gautam - Dean, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
24. Prof. Dr. Natwarlal Gupta - HOD, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
25. Prof. Dr. S.C. Mehta - Former, Professor/HOD, Govt. Bhagat Singh P.G. College, Jaora (M.P.) India
26. Prof. Dr. A. K. Pandey - HOD, Economics Deptt., Govt. Girls College, Satna (M.P.)

Referee Board

Maths	-	(1) Prof. Dr. V.K. Gupta, Director Vedic Maths - Research Centre, Ujjain (M.P.)
Physics	-	(1) Prof. Dr. R.C. Dixit, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
		(2) Prof. Dr. Neeraj Dubey, Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
Computer Science	-	(1) Prof. Dr. Umesh Kr. Singh, HOD, Computer Study Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
Chemistry	-	(1) Prof. Dr. Manmeet Kaur Makkad, Govt. Kalidas Girls College,Ujjain (M.P.)
Botany	-	(1) Prof. Dr. Suchita Jain, Govt. Girls P.G. College, Kota (Raj.)
		(2) Prof. Dr. Akhilesh Aayachi, Govt. Adarsh Science College, Jabalpur (M.P.)
		(3) Prof. Dr. Jolly Garg,HOD, D.A.K. P.G. College, Moradabad (U.P.)
Life Science	-	(1) Prof. Dr. Manjulata Sharma, M.S.J. Govt. College, Bharatpur (Raj.)
	-	(2) Prof. Dr. Amrita Khatri, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
Statitics	-	(1) Prof. Dr. Ramesh Pandya, Govt. Arts - Commerce College, Ratlam (M.P.)
Military Science	-	(1) Prof. Dr. Kailash Tyagi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
Biology	-	(1) Dr. Kanchan Dhingara, Govt. M.H. Home Science College, Jabalpur (M.P.)
Geology	-	(1) Prof. Dr. R.S. Raghuvanshi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
		(2) Prof. Dr. Suyesh Kumar, Govt. Adarsh College, Gwalior (M.P.)
Medical Science	-	(1) Dr.H.G. Varudhkar, R.D. Gardi Medical College, Ujjain (M.P.)
Microbiology Sci.	-	(1) Anurag D. Zaveri, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat)
		***** Commerce *****
Commerece	-	(1) Prof. Dr. P.K. Jain, Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)
		(2) Prof. Dr. Shailendra Bharal, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
		(3) Prof. Dr. Laxman Parwal, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)
		(4) Prof. Naresh Kumar, NSCBM Govt. College, Hamirpur (H.P.)
		***** Management *****
Management	-	(1) Prof. Dr. Anand Tiwari, Govt. Autonomus PG Girls Excellence College, Sagar (M.P.)
Human Resources	-	(1) Prof. Dr. Harwinder Soni, Pacific Business School, Udaipur (Raj.)
Business Admin.	-	(1) Prof. Dr. Kapildev Sharma, Govt. Girls P.G. College, Kota (Raj.)
		(2) Dr. Kuldeep Agnihotri, Modern Group of Institutions, Indore (M.P.)
		***** Law *****
Law	-	(1) Prof. Dr. S.N. Sharma, Principal, Govt. Madhav Law College, Ujjain (M.P.)
		(2) Prof. Dr. Narendra Kumar Jain, Principal, Shri Jawaharlal Nehru PG Law College, Mandsaur (M.P.)
		(3) Prof. Lok Narayan Mishra, Govt. Law College, Rewa (M.P.)
		(4) Dr. Bijay Kumar Yadav, Om Sterling Global University, Hisar (Haryana)
		***** Arts *****
Economics	-	(1) Prof. Dr. P.C. Ranka, Sri Sitaram Jaju Govt. Girls P.G. College, Neemuch (M.P.)
		(2) Prof. Dr. J.P. Mishra, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.)
		(3) Prof. Dr. Anjana Jain, M.L.B. Govt. Girls P.G. College, Kila Maidan, Indore (M.P.)
		(4) Prof. Rakesh Kumar Gupta, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.)
Political Science	-	(1) Prof. Dr. Ravindra Sohoni, Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.)
		(2) Prof. Dr. Anil Jain, Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
		(3) Prof. Dr. Sulekha Mishra, Mankuwar Bai Govt. Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.)
Philosophy	-	(1) Prof. Dr. Hemant Namdev, Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
Sociology	-	(1) Prof. Dr. Uma Lavania, Govt. Girls College, Bina (M.P.)
		(2) Prof. Dr. H.L. Phulvare, Govt. P.G. College, Dhar (M.P.)
		(3) Prof. Dr. Indira Burman, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)

Hindi	-	(1) Prof. Dr. Vandana Agnihotri, Chairperson, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
		(2) Prof. Dr. Kala Joshi , ABV Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
		(3) Prof. Dr. Chanda Talera Jain, M.J.B. Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.)
		(4) Prof. Dr. Amit Shukla, Govt. Thakur Ranmatsingh College, Rewa (M.P.)
		(5) Prof. Dr. Anchal Shrivastava, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.)
English	-	(1) Prof. Dr. Ajay Bhargava, Govt. College, Badnagar (M.P.)
		(2) Prof. Dr. Manjari Agnihotri, Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
Sanskrit	-	(1) Prof. Dr. Bhawana Srivastava, Govt. Autonomus Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
		(2) Prof. Dr. Balkrishan Prajapati, Govt. P.G. College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
History	-	(1) Prof. Dr. Naveen Gidiyan, Govt. Autonomus Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.)
Geography	-	(1) Prof. Dr. Rajendra Srivastava, Govt. College, Pipliya Mandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
		(2) Prof. Kajol Moitra, Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.)
Psychology	-	(1) Prof. Dr. Kamna Verma, Principal, Govt. Rajmata Sindhiya Girls P.G. College, Chhindwara (M.P.)
		(2) Prof. Dr. Saroj Kothari, Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
Drawing	-	(1) Prof. Dr. Alpana Upadhyay, Govt. Madhav Arts-Commerce-Law College. Ujjain (M.P.)
		(2) Prof. Dr. Rekha Srivastava, Maharani Laxmibai Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
		(3) Prof. Dr. Yatindera Mahobe, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.)
Music/Dance	-	(1) Prof. Dr. Bhawana Grover (Kathak),Swami Vivekanand Subharti University, Meerut (U.P.)
		(2) Prof. Dr. Sripad Aronkar, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.)
		***** Home Science *****
Diet/Nutrition	-	(1) Prof.Dr. Pragati Desai, Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
Science		(2) Prof. Madhu Goyal, Swami Keshavanand Home Science College, Bikaner (Raj.)
		(3) Prof. Dr. Sandhya Verma, Govt. Arts & Commerce College, Raipur (Chhattisgarh)
Human	-	(1) Prof. Dr. Meenakshi Mathur, HOD, Jainarayan Vyas University, Jodhpur (Raj.)
Development		(2) Prof. Dr. Abha Tiwari, HOD, Research Centre, Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.)
Family Resource Management	-	(1) Prof. Dr. Manju Sharma, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
		(2) Prof. Dr. Namrata Arora, Vansthali Vidhyapeeth (Raj.)
		***** Education *****
Education	-	(1) Prof. Dr. Manorama Mathur, Mahindra College of Education, Bangluru (Karnataka)
		(2) Prof. Dr. N.M.G. Mathur, Principal/Dean, Pacific EducationCollege, Udaipur (Raj.)
		(3) Prof. Dr. Neena Aneja, Principal, A.S. College Of Education, Khanna (Punjab)
		(4) Prof. Dr. Satish Gill, Shiv College of Education,Tigaon, Faridabad (Haryana)
		(5) Prof. Dr. Mahesh Kumar Muchhal, Digambar Jain (P.G.) College, Baraut (U.P.)
		***** Architecture *****
Architecture	-	(1) Prof. Kiran P. Shindey, Principal,School of Architecture,IPS Academy, Indore (M.P.)
		***** Physical Education *****
Physical Education	-	(1) Prof. Dr. Joginder Singh, Physical Education, Pacific University, Udaipur (Raj.)
		(2) Dr. Ramneek Jain, Associate Professor, Madhav University, Pindwara (Raj.)
		(3) Dr. Seema Gurjar, Associate Professor, Pacific University, Udaipur (Raj.)
		***** Library Science *****
Library Science	-	(1) Dr. Anil Sirothia, Govt. Maharaja College, Chhattarpur (M.P.)

Spokesperson's

1.	Prof. Dr. Davendra Rathore	-	Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.)
2.	Prof. Smt. Vijaya Wadhwa	-	Govt. Girls P.G. College, Neemuch (M.P.)
3.	Dr. Surendra Shaktawat	-	Gyanodaya Institute of Management - Technology, Neemuch (M.P.)
4.	Prof. Dr. Devilal Ahir	-	Govt. College, Jawad, Distt. Neemuch (M.P.)
5.	Shri Ashish Dwivedi	-	Govt. College, Manasa, Distt. Neemuch (M.P.)
6.	Prof. Manoj Mahajan	-	Govt. College, Sonkach, Distt. Dewas (M.P.)
7.	Shri Umesh Sharma	-	Shree Sarvodaya Institute Of Professional Studies, Sarwaniya Maharaj, Jawad, Distt. Neemuch (M.P.)
8.	Prof. Dr. S.P. Panwar	-	Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.)
9.	Prof. Dr. Puralal Patidar	-	Govt. Girls College, Mandsaur (M.P.)
10.	Prof. Dr. Kshitij Purohit	-	Jain Arts, Commerce & Science College, Mandsaur (M.P.)
11.	Prof. Dr. N.K. Patidar	-	Govt. College, Pipliyamandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
12.	Prof. Dr. Y.K. Mishra	-	Govt. Arts & Commerce College, Ratlam (M.P.)
13.	Prof. Dr. Suresh Kataria	-	Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
14.	Prof. Dr. Abhay Pathak	-	Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)
15.	Prof. Dr. Malsingh Chouhan	-	Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.)
16.	Prof. Dr. Gendalal Chouhan	-	Govt. Vikram College, Khachrod, Distt. Ujjain (M.P.)
17.	Prof. Dr. Prabhakar Mishra	-	Govt. College, Mahidpur, Distt. Ujjain (M.P.)
18.	Prof. Dr. Prakash Kumar Jain	-	Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
19.	Prof. Dr. Kamla Chauhan	-	Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
20.	Prof. Abha Dixit	-	Govt. Girls P.G. College, Ujjain (M.P.)
21.	Prof. Dr. Pankaj Maheshwari	-	Govt. College, Tarana, Distt. Ujjain (M.P.)
22.	Prof. Dr. D.C. Rathi	-	Swami Vivekanand Career Gudiance Deptt., Higher Education Deptt., M.P. Govt., Indore (M.P.)
23.	Prof. Dr. Anita Gagrade	-	Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
24.	Prof. Dr. Sanjay Pandit	-	Govt. M.J.B. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
25.	Prof.Dr. Rambabu Gupta	-	Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
26.	Prof. Dr. Anjana Saxena	-	Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
27.	Prof. Dr. Sonali Nargunde	-	Journalism & Mass Comm .Research Centre, D.A.V.V., Indore (M.P.)
28.	Prof. Dr. Bharti Joshi	-	Life Education Department, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
29.	Prof. Dr. M.D. Somani	-	Govt. M.J.B. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
30.	Prof. Dr. Priti Bhatt	-	Govt. N.S.P. Science College, Indore (M.P.)
31.	Prof. Dr. Sanjay Prasad	-	Govt. College, Sanwer, Distt. Indore (M.P.)
32.	Prof. Dr. Meena Matkar	-	Suganidevi Girls College, Indore (M.P.)
33.	Prof. Dr. Mohan Waskel	-	Govt. College, Thandla Distt. Jhabua (M.P.)
34.	Prof. Dr. Nitin Sahariya	-	Govt. College, Kotma Distt. Anooppur (M.P.)
35.	Prof. Dr. Manju Rajoriya	-	Govt. Girls College, Dewas (M.P.)
36.	Prof. Dr. Shahjad Qureshi	-	Govt. New Arts & Science College, Mundi, Distt. Khandwa (M.P.)
37.	Prof. Dr. Shail Bala Sanghi	-	Maharani Lakshmibai Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
38.	Prof. Dr. Praveen Ojha	-	Shri Bhagwat Sahay Govt. P.G. College, Gwalior (M.P.)
39.	Prof. Dr. Omprakash Sharma	-	Govt. P.G. College, Sheopur (M.P.)
40.	Prof. Dr. S.K. Shrivastava	-	Govt. Vijayaraje Girls P.G. College, Gwalior (M.P.)
41.	Prof. Dr. Anoop Moghe	-	Govt. Kamlaraje Girls P.G. College, Gwalior (M.P.)
42.	Prof. Dr. Hemlata Chouhan	-	Govt. College, Badnagar (M.P.)
43.	Prof. Dr. Maheshchandra Gupta	-	Govt. P.G. College, Khargone (M.P.)
44.	Prof. Dr. Mangla Thakur	-	Govt. P.G. College, Badhwah, Distt. Khargone (M.P.)
45.	Prof. Dr. K.R. Kumhekar	-	Govt College, Sanawad, Distt. Khargone(M.P.)

46.	Prof. Dr. R.K. Yadav	-	Govt. Girls College, Khargone (M.P.)
47.	Prof. Dr. Asha Sakhi Gupta	-	Govt. P.G. College, Badwani (M.P.)
48.	Prof. Dr. Hemsingh Mandloi	-	Govt. P.G. College, Dhar (M.P.)
49.	Prof. Dr. Prabha Pandey	-	Govt. P.G. College, Mehar, Distt. Satna (M.P.)
50.	Prof. Dr. Rajesh Kumar	-	Govt. College, Amarpatan, Distt. Satna (M.P.)
51.	Prof. Dr. Ravendra singh Patel	-	Govt. P.G. College, Satna (M.P.)
52.	Prof. Dr. Manoharlal Gupta	-	Govt. P.G. College, Rajgarh, Biora (M.P.)
53.	Prof. Dr. Madhusudan Prakash	-	Govt. College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
54.	Prof. Dr. Yuwraj Shirvatava	-	Dr. C.V. Raman Univeristy, Bilaspur (C.G.)
55.	Prof. Dr. Sunil Vajpai	-	Govt. Tilak P.G. College, Katni (M.P.)
56.	Prof. Dr. B.S. Sisodiya	-	Govt. P.G. College, Dhar (M.P
57.	Prof. Dr. Shashi Prabha Jain	-	Govt. P.G. College, Agar-Malwa (M.P.)
58.	Prof. Dr. Niyaz Ansari	-	Govt. Aadarsh College, Umaria (M.P.)
59.	Prof. Dr. ArjunSingh Baghel	-	Govt. College, Harda (M.P.)
60.	Dr. Suresh Kumar Vimal	-	Govt. College, Bansadehi, Distt. Betul (M.P.)
61.	Prof. Dr. Amar Chand Jain	-	Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
62.	Prof. Dr. Rashmi Dubey	-	Govt. Autonomus Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.)
63.	Prof. Dr. A.K. Jain	-	Govt. P.G. College, Bina, Distt. Sagar (M.P.)
64.	Prof. Dr. Sandhya Tikekar	-	Govt. Girls College, Bina, Distt. Sagar (M.P.)
65.	Prof. Dr. Rajiv Sharma	-	Govt. Narmada P.G. College, Hoshangabad (M.P.)
66.	Prof. Dr. Rashmi Srivastava	-	Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)
67.	Prof. Dr. Laxmikant Chandela	-	Govt. Autonomus P.G. College, Chhindwara (M.P.)
68.	Prof. Dr. Balram Singotiya	-	Govt. College, Saunsar, Distt. Chhindwara (M.P.)
69.	Prof. Dr. Vimmi Bahel	-	Govt. College, Kalapipal, Distt. Shajapur (M.P.)
70.	Dr. Aprajita Bhargava	-	R.D.Public School, Betul (M.P)
71.	Prof. Dr. Meenu Gajala Khan	-	Govt. College, Maksi, Distt. Shajapaur (M.P.)
72.	Prof. Dr. Pallavi Mishra	-	Govt. College, Mauganj Distt. Rewa (M.P.)
73.	Prof. Dr. N.P. Sharma	-	Govt. College, Datia (M.P.)
74.	Prof. Dr. Jaya Sharma	-	Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
75.	Prof. Dr. Sunil Somwanshi	-	Govt. College, Nepanagar, Distt. Burhanpur (M.P.)
76.	Prof. Dr. Ishrat Khan	-	Govt. College, Raisen (M.P.)
77.	Prof. Dr. Kamlesh Singh Negi	-	Govt. P.G. College, Sehore (M.P.)
78.	Prof. Dr. Bhawana Thakur	-	Govt. College, Rehati, Distt. Sehore (M.P.)
79.	Prof. Dr. Keshavmani Sharma	-	Pandit Balkrishan Sharma New Govt. College, Shajapur (M.P.)
80.	Prof. Dr. Renu Rajesh	-	Govt. Nehru Leading College ,Ashok Nagar (M.P.)
81.	Prof. Dr. Avinash Dubey	-	Govt. P.G. College, Khandwa (M.P.)
82.	Prof. Dr. V.K. Dixit	-	Chhatrasal Govt. P.G. College, Panna (M.P.)
83.	Prof. Dr. Ram Awdesh Sharma	-	M.J.S. Govt. P.G. College, Bhind (M.P.)
84.	Prof. Dr. Manoj Kr. Agnihotri	-	Sarojini Naidu Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
85.	Prof. Dr. Sameer Kr. Shukla	-	Govt. Chandra Vijay College, Dhindori (M.P.)
86.	Prof. Dr. Anoop Parsai	-	Govt. J. Yoganand Chattisgarh P.G. College, Raipur (Chattisgarh)
87.	Prof. Dr. Anil Kumar Jain	-	Vardhaman Mahavir Open University, Kota (Rajasthan)
88.	Prof. Dr. Kavita Bhadiriya	-	Govt. Girls College, Barwani (M.P.)
89.	Prof. Dr. Archana Vishith	-	Govt. Rajrishi College, Alwar (Rajasthan)
90.	Prof. Dr. Kalpana Parikh	-	S.S.G. Parikh P.G. College, Udaipur (Rajasthan)
91.	Prof. Dr. Gajendra Siroha	-	Pacific University, Udaipur (Rajasthan)
92.	Prof. Dr. Krishna Pensia	-	Harish Anjana College, Chhotisadri, Distt. Pratapgarh (Rajasthan)
93.	Prof. Dr. Pradeep Singh	-	Central University Haryana, Mahendragarh (Haryana)
94.	Prof. Dr. Smriti Agarwal	-	Research Consultant, New Delhi

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Chemical Composition and Applications of the Banana Tree

Akhilesh Chandra Verma*

***Department of Chemistry, Government Naveen College, Kui-Kukdur, Kabirdham (C.G.) INDIA**

Abstract: The banana tree (*Musa spp.*), commonly known for its fruit, is a chemically rich plant with diverse applications in agriculture, medicine, and industry. This paper explores the banana tree's constituents—including the fruit, peel, pseudo stem, leaf, and root—from a chemical perspective. Each part contains valuable organic compounds such as polyphenols, flavonoids, cellulose, lignin, starch, and various bioactive phytochemicals. By understanding these chemical properties, we can better utilize the banana tree for bioplastics, textiles, natural dyes, biofertilizers, pharmaceuticals, and waste management. This study highlights the potential for sustainable and value-added applications rooted in the tree's biochemistry.

Introduction - The banana tree is not just a source of edible fruit but also a valuable biomass resource. It grows in tropical and subtropical regions and is rich in bioorganic compounds. A chemist's interest lies in the diverse chemical compounds present in different parts of the plant, which offer possibilities for green chemistry, sustainable development, and functional material synthesis.

Chemical Composition Of Banana Tree Parts

Banana Fruit

Carbohydrates: Mainly sucrose, glucose, and fructose. Ripe bananas are ~22% carbohydrates.

Starch: Unripe bananas are rich in resistant starch (~70-80% of dry matter).

Vitamins & Minerals: High in potassium, magnesium, and vitamin B6.

Phenolic Compounds: Catechins, gallic acid, and dopamine with antioxidant properties.

Banana Peel

Lignocellulosic Material: Contains cellulose (~10-15%), hemicellulose (~6-10%), and lignin (~12-20%).

Polyphenols & Flavonoids: Useful in natural antioxidant and antimicrobial formulations.

Pectin: Important for biodegradable film formation.

Tannins and Alkaloids: Provide astringency and medicinal potential.

Banana Pseudostem

Cellulose and Hemicellulose: Excellent fiber source, used in biodegradable textiles.

Starch and Sugars: Used for bioethanol production.

Ash and Silica: Impart strength to the fibers; used in composite materials.

Water Content: ~90%, which makes it ideal for juice and pulp-based extraction for chemicals.

Banana Leaves

Polyphenols and Flavonoids: Used in traditional medicine and antioxidant research.

Waxy Cuticle: Provides a hydrophobic layer for natural packaging materials.

Proteins and Chlorophylls: Offer scope for natural dye and pigment extraction.

Roots

Phytochemicals: Alkaloids, saponins, and glycosides with anti-inflammatory properties.

Absorption Elements: Capable of metal uptake, useful in phytoremediation.

Applications Based On Chemical Composition

Bioplastics and Packaging

Pectin and starch from peels and pseudostems are processed into biodegradable plastics.

Lignocellulosic fibers are blended with polymers for strength enhancement.

Bioethanol and Biogas Production

Fermentation of banana pseudostem juice and peel starch can yield ethanol.

Anaerobic digestion of waste biomass provides methane for energy.

Water Purification

Banana peel powder binds heavy metals ($Pb^{2}z$, $Cd^{2}z$, Crv z) through functional groups such as hydroxyls and carboxyls.

Lignin and pectin complexes serve as low-cost adsorbents.

Medicinal and Cosmetic Use

Dopamine and serotonin from the fruit and peel help in neuroprotective applications.

Antioxidant compounds from leaves and peels are used in skincare.

Natural Dyes and Pigments

Banana leaves and stems yield chlorophyll-based green pigments.

Peel extracts are used as pH-sensitive natural indicators.

Conclusion: From fruit to root, the banana tree offers a wealth of chemical compounds that support multiple industries. The chemical richness—especially in starches, lignocellulosic fibers, and polyphenols—makes the banana tree an ideal subject for sustainable chemistry research. Continued exploration can unlock newer applications in biopolymer development, nanomaterials, green fuels, and environmental remediation.

References :-

1. M. Happi Emaga, R. Andrianaivo, M. Paquot, J. T. Tchango, and B. Wathelet (2007) "Effects of the stage of maturation and varieties on the chemical composition of banana and plantain peels." Food Chemistry, 103(2), 590–600.DOI: 10.1016/j.foodchem.2006.09.006
2. D. Mohapatra, S. Mishra, and N. Sutar (2010)"Banana and its by-product utilization: An overview."Journal of Scientific and Industrial Research (JSIR), 69, 323–329.Available at: http://nopr.niscpr.res.in/handle/123456789/8897
3. B. S. Padam, H. S. Tin, F. Y. Chye, and M. I. Abdullah (2014)"Banana by-products: an under-utilized renewable food biomass with great potential."Journal of Food Science and Technology, 51(12), 3527–3545.DOI: 10.1007/s13197-012-0861-2
4. M. G. Kulkarni, J. A. Staden (2013)"Plant-derived smoke: Old technology with possibilities for economic applications in agriculture and horticulture."South African Journal of Botany, 84, 138–144.DOI: 10.1016/j.sajb.2012.10.014
5. R. A. Kareem, A. O. Sulaimon, and O. O. Balogun (2017)"Utilization of banana (Musa spp.) peels and stalks as bioadsorbents for removal of heavy metals in industrial wastewater."Journal of Applied Sciences and Environmental Management, 21(3), 491–495.DOI: 10.4314/jasem.v21i3.21
6. L. M. S. Larrauri, E. Rupérez, and F. Saura-Calixto (1997)"Effect of drying temperature on the stability of polyphenols and antioxidant activity of red grape pomace peels."Journal of Agricultural and Food Chemistry, 45(4), 1390–1393.DOI: 10.1021/jf960282f
7. K. Hossain, M. M. Rahman, and N. Nahar (2015)"Characterization of Banana (Musa spp.) Pseudostem and its Fiber for Biocomposite Development." International Journal of Engineering and Technology, 7(3), 227–232.Available at: https://www.enggjournals.com/ijet/docs/IJET15-07-03-076.pdf
8. Nandhini, M. Prakash (2014)"Study on biochemical constituents of banana pseudostem juice and its potential as a functional food ingredient." International Journal of Current Microbiology and Applied Sciences, 3(4), 884–891.Available at: https://www.ijcmas.com/vol-3-4/A.Nandhini%20and%20M.Prakash.pdf
9. M. A. Hossain, M. I. Hossain, et al. (2014) "Utilization of Banana Peels in the Production of Bioethanol." International Journal of Engineering and Technology, 4(3), 89–94.Available at: http://www.ijetch.org/papers/669-C00003.pdf
10. M. A. Mohamed, A. M. El-Sherbiny (2019)"Preparation and characterization of biodegradable banana starch-based films reinforced with cellulose nanocrystals." International Journal of Biological Macromolecules, 128, 750–758.DOI: 10.1016/j.ijbiomac.2019.01.113

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Obligations for the Maintenance of Wives and Children in Hindu Family Law

Prof. (Dr.) Bijay Kumar Yadav*

***Dean (Law) IIMT College of Law, Greater Noida (U.P.) INDIA**

Abstract - This abstract explores the legal obligations for the maintenance of wives and children under Hindu family law, emphasizing the statutory and judicial frameworks that ensure financial support for dependents.

The Hindu Adoption and Maintenance Act, 1956, serve as the cornerstone of these provisions, delineating the rights of wives and children to receive maintenance and the corresponding duties of husbands and parents to provide it. Additionally, Section 125 of the Code of Criminal Procedure offers a summary remedy for maintenance across all religions, further reinforcing these obligations. This paper examines the scope of maintenance, including the factors influencing the determination and enforcement of maintenance orders, such as financial capacity, standard of living, and special circumstances.

It also highlights the significance of these legal provisions in upholding the social and moral responsibilities within Hindu families, ensuring the well-being and dignity of wives and children. Through a detailed analysis of statutory laws, judicial precedents, and practical implications, this study aims to provide a comprehensive understanding of the maintenance obligations in Hindu family law.

Keywords:IPC,CRPC,HAMA,NHRC.

Introduction - Maintenance refers to payments which are a husband is under an obligation to make a wife either during the subsistence of the marriage or upon separation or divorce under criteria , circumstances . The liability of the husband flows from the bond of matrimony. A wife is entitled to claim maintenance. Under the personal laws as well as under the provision of the Code of Criminal Procedure 1973. In Hindu law, the maintenance of wife and children is a fundamental concept that ensures the well-being and financial support of family members who are dependent. The provisions regarding maintenance are enshrined in various statutes, with the Hindu Adoption and Maintenance Act, 1956, being the cornerstone. This article explores the legal framework, rights, and obligations related to the maintenance of wife and children under Hindu law.

Hindu Law

The Hindu law: There are two statistics which provide for maintenance via the Hindu Marriage Act 1955, and the Hindu Adoption and Maintenance Act 1956.

Hindu Marriage Act : Section 24 of the act state Maintenance a pendent like and expense of proceeding shall , as far as possible , be disposed of within sinty days from the date of service of notice on the wife or the husband as the case may be. Passing an ex part decree in favour of a husband who does not comply with the Maintenance order "would be nothing but doing nothing but doing mockery with the procedure provide for that purpose ". The court held The Shashikala Pandey V. Ramesh Pandey a husband obtained a decree of divorce on the ground of wife mental disorder. The wife filed an appeal against the trial court order she also filed in application for maintenance pendente lite under sec 24 which was ordered. However is view of his deliberate non- compliance of this order , not only was his defence against wife appeal stuck down but also the divorce decree was set aside by allowing the wife appeal.

Hindu Adoption and Maintenance Act (HAMA)

A Hindu wife has the advantage of an additional statistics HAMA . Under section 18of this Act a Hindu wife is entitled to live separately from his husband without forfeiting her claim to maintenance provided his separate living is justified means that the husband:

1. Is guilty of desertion?
2. Has treats has with cruelty?
3. Is suffering from a virulent form of leprosy?
4. Has any other wife living?
5. Keep s combine in same home, as a living or habitually reside with a combine elsewhere?

Literature Review

To gain a comprehensive understanding of the maintenance of wife and children in Hindu law, several authoritative texts and reference books provide detailed analysis and insights. Here are some highly recommended books:

1. "Hindu Law: Principles and Precedents" by N.R. Raghavachariar.This book provides an in-depth analysis of Hindu law, including maintenance. It covers the principles and judicial precedents that shape the maintenance rights and obligations under Hindu law.
2. "Hindu Adoption and Maintenance Act, 1956" by J.D. Jain. A detailed commentary on the Hindu Adoption and Maintenance Act, 1956, offering insights into each provision of the Act with relevant case law.
3. "Family Law in India" by Paras Diwan. Paras Diwan's book is a comprehensive resource on family law in India, including the maintenance of wives and children. It discusses statutory provisions, case law, and practical aspects of family law.
4. "Family Law Lectures: Family Law I" by Dr. Kusum: This book is a part of the Family Law Lectures series and provides detailed coverage of family law topics, including maintenance. Dr. Kusum offers a thorough examination of the legal principles and their applications.
5. "Introduction to Hindu Law" by B.M. Gandhi:B.M. Gandhi's book serves as an introduction to Hindu law, covering various aspects, including the maintenance of wives and children. It provides historical context and modern interpretations of the law.
6. "Hindu Law and Usage" by John D. Mayne:This classic text offers a detailed exploration of Hindu law, including customs and usage related to maintenance. It is considered a foundational resource for understanding the traditional aspects of Hindu law.
7. "Mulla's Principles of Hindu Law" by Satyajeet A. Desai :Mulla's Principles of Hindu Law is a comprehensive legal text that covers various aspects of Hindu law, including maintenance. It is widely referenced by legal professionals and scholars.
8. "Law of Maintenance: Principles and Practice" by Dr. S.P. Srivastava:This book provides an extensive examination of the law of maintenance in India, covering statutory provisions, judicial interpretations, and practical applications.
9. "Law Relating to Women and Children" by Mamta Rao:Mamta Rao's book discusses the legal provisions related to women and children, including maintenance laws. It provides a gender perspective and covers relevant case law and statutory provisions.
10. "Modern Hindu Law" by Ramesh Chandra Nagpal:This book offers a modern perspective on Hindu law, including the maintenance of wives and children. It covers recent developments and judicial trends in the field.

These books offer a range of perspectives, from traditional interpretations to modern applications of Hindu law regarding maintenance. They are invaluable resources for students, legal practitioners, and anyone interested in understanding the nuances of family law in the Hindu context.

Legal Framework

1. Hindu Adoption and Maintenance Act, 1956 (HAMA): This act is the primary legislation that governs the maintenance of wives, children, and other dependents in Hindu law. It specifies the rights of individuals to claim maintenance and the corresponding duties of those obligated to provide it.

2. Section 18 of HAMA: This section deals specifically with the maintenance of wives. It entitles a Hindu wife to be maintained by her husband during her lifetime, unless she is unchaste or converts to another religion.

3. Section 20 of HAMA: This section outlines the maintenance of children and aged parents. It mandates that a Hindu is legally bound to maintain his or her legitimate or illegitimate minor children and aged or infirm parents.

4. Section 125 of the Code of Criminal Procedure (CrPC): While not specific to Hindu law, Section 125 CrPC provides a summary remedy for the maintenance of wives, children, and parents across all religions. It is frequently invoked for quick relief in maintenance cases.

Maintenance Of Children: The obligation of parent to maintenance children arises both out of blood relationships as well as moral duty which is reinforcing by statutory provision almost every society recognizes. The duty of a parent is to maintain his child so long as he is minor or unable to maintain himself. The degree and extent of such obligation varies from society to society and from time to time.

Children in India are entitled to be maintained under the two set of laws via (i) The personal laws and (ii) The secular law which is code of criminal procedure 1973.

Hindu Law: There are two personal laws state to amongst the Hindu where under children entitled to claim maintenance. These are the Hindu Marriage Act 1955 and the Hindu Adoption Act and Maintenance Act 1956.

Hindu Marriage Act 1955: The Hindu Marriage Act 1955 is primarily a states governing matrimonial relation and providing to parties but children bring an integral component of Matrimonial Act makes provision to safeguard to interst of the children of marriage section 26 of the act says.

Hindu Adoption and Maintenance Act 1956 section 20 of the act s20 Maintenance of Children:

1. Hindu is bound during his or her lifetime to maintain his or her legitimate or illegitimate of children.
2. A legitimate or illegitimate child may claim maintenance from his or her father or another so long as the child is minor.
3. The obligation of a person to maintain his or her children or her daughter who is unmarried extends in so far as the unmarried daughter is unable to maintain herself her own earning or other property.

Maintenance under Sec 3(B) of the Act include-

1. In all provision for food, clothing,residence, educations and medical attendance and treatment.

2. In the case of unmarried daughter, also the reasonable expenses of an individual to her marriage.

Thus, it is clear under this act

1. The obligation to maintain children lies equally on both the mother and the father.
2. Both legitimate as well as illegitimate children are entitled to Maintenance.
3. The liability of the parents extends to maintain the Children until they as minor , which is two or sec3 of this act , name a person who has not completely the age.

Maintenance Of Wife: A Hindu wife is entitled to maintenance from her husband under various circumstances:

During Matrimonial Life: A wife is entitled to be maintained by her husband throughout her lifetime. This includes the provision of food, clothing, shelter, medical care, and other necessities.

Upon Separation: If the couple separates but the marriage is not dissolved, the wife still has the right to be maintained by her husband. This is particularly relevant in cases of desertion or judicial separation.

After Divorce: Even after divorce, a Hindu wife may be entitled to maintenance, depending on the circumstances of the case and the financial status of the parties involved. The amount of maintenance is determined based on various factors, including the husband's financial capacity, the wife's needs, and the standard of living enjoyed during the marriage.

Maintenance Of Children: The maintenance of children is an essential obligation under Hindu law. This includes:

Legitimate and Illegitimate Children: Both legitimate and illegitimate children are entitled to maintenance. The obligation continues until the child reaches the age of majority. However, if the child is unable to maintain themselves due to physical or mental abnormalities or injury, the duty to maintain may extend beyond adulthood.

Education and Welfare: Maintenance covers not only basic necessities like food, clothing, and shelter but also educational expenses, healthcare, and other aspects crucial for the child's overall development.

Custody and Guardianship: Maintenance issues often arise in conjunction with custody disputes. The parent granted custody is usually entitled to claim maintenance for the child's upkeep from the non-custodial parent.

Determination and Enforcement: The determination of maintenance involves judicial discretion, taking into account various factors such as the claimant's needs, the respondent's financial status, and any special circumstances of the case. Courts aim to balance fairness and equity, ensuring that dependents are adequately provided for without unduly burdening the provider.

Enforcement of maintenance orders can be sought through civil or criminal courts. Non-compliance can lead to legal consequences, including attachment of property, fines, and even imprisonment.

Conclusion : I would like to conclude this legal research by saying that according to section 125(1) (a) of criminal proceeding code 1973 provide that if any person having sufficient means neglects or refuse to maintain his wife, who is unable to maintain herself them in such a case imagination of the first class may upon proof of such neglects or refusal order such person to pay a monthly rate which the magistrate think fit.

The wife under section 125(1)(a) means a legally married wife and can be of any age, minor or major.

However, it should always be kept in mind that there should not be any misuse of the provision. The court must apply its judicial mind every minute detail of the husband and the dependents regarding this means to livelihood and the accordingly pass or order.

The maintenance of wife and children under Hindu law underscores the importance of family support and responsibility. The legal provisions aim to ensure that dependents are not left destitute and can live with dignity. By providing a structured framework for maintenance, Hindu law upholds the social and moral obligations of family members towards each other, reflecting the enduring values of care and support in Indian society.

References:-

1. "Hindu Law: Principles and Precedents" by N.R. Raghavachariar
2. "Hindu Adoption and Maintenance Act, 1956" by J.D. Jain
3. "Family Law in India" by Paras Diwan
4. "Family Law Lectures: Family Law I" by Dr. Kusum
5. "Introduction to Hindu Law" by B.M. Gandhi
6. "Hindu Law and Usage" by John D. Mayne
7. "Mulla's Principles of Hindu Law" by Satyajeet A. Desai
8. "Law of Maintenance: Principles and Practice" by Dr. S.P. Srivastava
9. "Law Relating to Women and Children" by Mamta Rao
10. "Modern Hindu Law" by Ramesh Chandra Nagpal

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Integration of Foreign Communities into Ancient Indian Religions and Culture: An Analytical Study

Dr. Ashish Kumar Chachondia*

***Assistant Professor (History) Institute for Excellence in Higher Education, Bhopal (M.P.) INDIA**

Abstract: The article explores how ancient Indian culture absorbed multiple foreign groups such as Greeks, Shakas, Kushans, and Huns. Despite their initial invasions, many of these groups gradually adopted Indian religious and cultural practices. Indian religions—particularly Buddhism, Shaivism, and Vaishnavism—offered logical, philosophical, and inclusive traditions that appealed to foreigners, especially those from tribal or proto-religious backgrounds. However, from the medieval period onward, such integration declined due to the increasing ritualism in Indian religions and the rise of Islam and Christianity, which discouraged conversion and promoted exclusivity. The article emphasises the early flexibility and philosophical depth of Indian thought, which allowed mutual cultural assimilation. Over time, with growing rigidity and complexity, Indian religious systems lost their appeal to outsiders, ending a rich phase of cultural and religious integration by the medieval era.
Keywords - Nasadiya Sukta, polytheism, henotheism, pantheism, monotheism.

Introduction - India's cultural fabric has demonstrated remarkable resilience, enduring countless upheavals while retaining its core identity. Scholars often highlight this adaptability as a defining feature of Indian civilisation. Invading forces such as the Greeks, Kushans, Parthians, and Huns, who wreaked havoc across many ancient societies, also entered India. Yet, unlike elsewhere, they did not remain outsiders for long—instead, they gradually assimilated into the Indian way of life. This raises an intriguing question: Does Indian culture possess an innate quality that allows it to absorb and harmonise with foreign elements? While this characteristic is often celebrated, it has not been thoroughly examined from all angles. It is also important to consider whether, over time, Indian society—particularly Hindu society—began to lose its integrative capacity, or whether incoming communities themselves lacked the willingness to merge. One must delve into the broader historical context of ancient global civilisations to explore these questions.

From the dawn of human life, evidence of spiritual or supernatural belief systems begins to surface. These early beliefs likely stemmed from imaginative attempts to explain the mysterious forces of nature, evolving gradually into what scholars call proto-religions. Traces of such early religious thought are present in nearly all ancient cultures, including the Harappan civilisation, though concrete interpretations remain speculative due to limited evidence. Beyond the Indian subcontinent, ancient civilisations like Mesopotamia and Egypt developed structured polytheistic systems complete with organised priesthoods and elaborate afterlife concepts. Harappa, too, shows signs of religious life, yet the absence of decipherable texts means much remains unknown. Nonetheless, humanity's earliest spiritual impulses were deeply rooted in a desire to understand and coexist with the natural world.

With the advent of the Vedic era, Indian spiritual thought began to transition from rudimentary belief systems to a more organised and philosophical framework. The Vedic texts offer a rich tapestry of ideas, encompassing polytheism, henotheism, pantheism, and even early monotheistic concepts. Among these, the *Nasadiya Sukta* of the *Rigveda* stands out for its profound philosophical inquiry. It dares to question the origins of creation, challenging the simplistic deification of natural forces and marking a significant shift toward abstract, rational contemplation. This hymn can be seen as one of humanity's earliest efforts to seek truth beyond myth and symbolism, laying the foundation for systematic religious thought in India.

This intellectual evolution culminated in the Upanishads, which propelled Indian philosophy to its zenith. These texts explored metaphysical questions with unmatched depth, providing a robust philosophical base that later nourished a wide spectrum of Indian religious traditions and sects.

Following the sixth century BCE, India witnessed a vibrant diversification of religious and philosophical schools. In addition to Buddhism and Jainism, a variety of other sects

emerged, including atheistic, sceptical, and fatalistic movements, each seeking a space in society. Concurrently, devotional traditions such as Shaivism and Vaishnavism also gained prominence. Rooted in the Vedas and epic literature, these sects found further expression through the Puranas, which simplified rituals and practices to resonate with the masses. This democratisation of spiritual access allowed complex philosophies to be experienced through stories, symbols, and practices that were both accessible and emotionally engaging to the common people.

The diverse religious traditions and sects that evolved in India over time shared several defining features. These included distinct philosophical ideas about the nature of God or Brahman and the universe, an articulated ideology, established systems of rituals and worship, specific spiritual texts, and often a central deity or enlightened teacher who interpreted and transmitted core teachings. Over time, devotional practices also emerged as a strong and accessible alternative path to spiritual realisation. Notably, Jainism and Buddhism introduced a remarkable element—egalitarianism. Unlike the rigid varna-based exclusivity seen in mainstream Vedic traditions, these sects allowed individuals of any caste or background to become followers. While Vedic thought theoretically acknowledged such inclusivity, in practice, it was rarely implemented. Though the influence of Jain and Buddhist ideals, along with Upanishadic thought, began to influence Brahmanical traditions before the Common Era, their impact remained limited in scope.

Each of these sects developed unique spiritual paths. Jainism emphasised strict discipline, asceticism, and non-violence; Buddhism offered a practical and balanced Middle Way (*The Madhyam Marg)*; the Upanishads and Vedanta promoted the pursuit of knowledge; while Vedic religion emphasised ritual sacrifices. Mythological narratives provided a devotional route, and all of these traditions shared profound philosophical inquiries into life, death, and the afterlife. A distinctive feature of Indian religions, rarely found in contemporary world religions, was their deep-rooted logical and philosophical foundation. Furthermore, a vibrant tradition of debate and discourse flourished, helping to shape and refine religious thought.

Importantly, these Indian sects did not actively pursue conversion. Religious transformation occurs either through the intellectual appeal of scriptural truths or through an individual's awakened inner faith. As a result, the spread of these religions was often organic and based on personal conviction rather than coercion.

Some religions gained popularity more swiftly than others, depending on their accessibility and doctrinal appeal. Jainism, despite its vast philosophical framework, faced limitations due to the late compilation of its scriptures and the rigid nature of its principles, which often deterred foreigners. In contrast, Buddhism was unburdened by complex rituals and offered a clear, inclusive path, making it more approachable for both Indians and foreigners. Similarly, the *Vaishnava* and *Shaiva* traditions that emerged from the epics offered a rich blend of philosophical depth and simplified devotional practices. This made them appealing to the wider public and helped them attract followers, including those from outside India.

Based on the preceding analysis, we can assess how foreign communities accepted Indian religions and assimilated into Indian culture over time.

The Iranians or Persians were among the earliest foreign groups to arrive in India during the historical period. Although they failed to establish a lasting empire, their cultural interactions with India are notable. Due to the striking similarities between ancient Iranian and Vedic traditions, clear evidence of cultural or religious assimilation is scarce. In a later period, the Parsis migrated to India from Iran and successfully maintained their distinct religious identity, demonstrating selective integration without the full cultural merger.

The arrival of the Greeks began with Alexander's invasion and continued until the first century BCE. Greek religion at the time was proto-theistic, combining mythological gods with an emerging tradition of philosophical reasoning, influenced by thinkers such as Socrates, Plato, Aristotle, and Pythagoras. Initially, Greek visitors and settlers in India were primarily influenced by Indian philosophy, as noted by classical Greek writers accompanying Alexander. However, subsequent evidence points to deeper religious integration. The Besnagar pillar inscription records the Greek ambassador Heliodorus's devotion to the *Bhagavata* tradition.[1] His reference to *Vaishnava* principles, sacrificial rites, and the concept of*Dama, Tyag and Apramada*(Self-restraint, Renunciation, and Consciousness) indicates sincere reverence. Similarly, coins issued by Agathocles depicting Vasudeva Krishna and Sankarshana Balarama[2] suggest his dedication to the Bhagavata faith.

The text *Milind-Panho* narrates philosophical dialogues between the Indo-Greek king Menander and the Buddhist sage Nagasena, reflecting Menander's deep engagement with Buddhism. Although sources differ on whether he formally converted, his coins bear the title "*Dhramikas"* and feature the *Dharma-Chakra*, indicating at least a symbolic affiliation with Buddhist values.[3] Nonetheless, widespread conversion among Greeks was limited, perhaps due to their strong cultural pride and attachment to their heritage.

Other foreign groups, such as the Sakas, Yuezhi (Kushans), and Huns, arrived in India between the first and seventh centuries CE. Unlike the Greeks or Iranians, these groups did not possess well-developed religions; instead, they adhered to tribal or primitive belief systems. These systems often revolved around mythic interpretations of nature and supernatural forces and lacked philosophical depth. Such belief systems remain strong until confronted with a more structured, rational, and philosophically

coherent religious tradition.

By the first century CE, Indian religious thought had reached a golden age.A rich tapestry of sects and philosophies flourished in India, sustained by a vibrant culture of dialogue, critical inquiry, and continuous refinement. When foreign communities encountered these intellectually profound and spiritually sophisticated traditions, they were deeply captivated and naturally drawn to them." The richness of Indian spiritual and philosophical discourse offered a compelling alternative to their earlier, less structured beliefs, facilitating their gradual integration into the Indian religious landscape.

Between the 1st century BCE and the 4th century CE, the Shakas (or Scythians) ruled over various regions of India through five distinct branches. Chinese sources refer to them as "Sai" or "Sai Wang."[4] Originally nomadic tribes from the region around the Syr Darya (Jaxartes), the Shakas were seen as fierce and uncivilised. However, soon after establishing dominion in India, they began to absorb local cultural and religious influences. One of the earliest signs of their assimilation is the adoption of Indian names and participation in religious acts. A cave inscription from Nashik records a donation made by Rishabhdutta (Ushavdata), son-in-law of the Kshaharata ruler Nahapana, to the Sarvadeshi Sangha.[5] The Junagarh inscription of Mahakshatrapa Rudradamana, written in refined Sanskrit and beginning with the auspicious word "*Siddham"*, reflects his embrace of Indian traditions.[6] The use of epithets such as "ruler holding *Rajalakshmi*" further suggests deep cultural integration. Rudradaman's descendants also bore names rooted in Indian tradition, implying continued religious affiliation.

The Pahlavas or Parthiyans, who entered India around the same period, have left behind limited records of their religious beliefs. However, coins issued by them bearing the title "*Dharmiya"* (religious) suggest a degree of influence from Indian spiritual traditions, possibly Buddhism[7]

The Yuezhi—later known as the Kushans—were another Central Asian tribe of nomadic origin who gradually became Indianized. The second Kushan ruler, Vima Kadphises, adopted Shaivism and took on the title "*Maheshwar"*, a reference inscribed on his coins. His successor, the great emperor Kanishka, became a major patron of Buddhism. Under his reign, the Fourth Buddhist Council was convened, and extensive Buddhist literature was compiled. Kanishka's coins often featured images of the Buddha and inscriptions such as *Boddo*,[8,] indicating his religious devotion. Although his successors—Vashishka, Huvishka, and others—displayed religious eclecticism, their coins still featured Indian inscriptions alongside depictions of Greek, Iranian, and Roman deities, reflecting a culturally diverse yet increasingly Indianized worldview.[9]

The Huns, considered among the most brutal and culturally distant of all invaders, emerged as a major force during the Gupta era. Chinese texts refer to them as "Hung-Nu." Yet even among them, signs of Indianization appeared. Mihirkula, a prominent Hun ruler, showed a clear inclination towards Shaivism. His devotion is evidenced by Yashodharman's Mandsaur inscription and Kalhana's *Rajatarangini*,[10,] as well as coins bearing the images of *Nandi* and *Trishul* and inscriptions like "*Jayati Vrishabha"*.[11] Over time, through prolonged interaction and intermarriage—some Indian kings even took Hun women as consorts—the Huns, too, began to assimilate. Historian Col. James Tod even suggested that many Rajput clans trace their lineage to these Indo-Hun unions, gradually merging into the Kshatriya varna.[12]

With the rise of the Rajput era, however, evidence of foreign assimilation into Indian religious culture becomes scarcer. Many scholars argue that Rajput lineages themselves emerged from the integration of earlier foreign tribes, and elevated into the Kshatriya class through the ideological framework of *Yagya*-based origin stories.[13] While this theory remains debated, it highlights how the Indian varna system could accommodate outsiders based on martial valour and cultural adoption.

Beyond this period, the pattern of assimilation largely ceased. Subsequent arrivals—Arab and Turkish Muslims, Afghans, Mughals, and European Christians—rarely integrated into Indian religious or cultural frameworks in the same manner. Two broad categories of reasons help explain this shift: internal (Indian) and external (non-Indian). Internally, the simplicity and inclusivity of earlier Indian religions had begun to wane. Over time, religious practices became increasingly rigid, and caste-based restrictions grew more pronounced. Dogma and ritualism gradually overshadowed the philosophical underpinnings that once defined Vedic and Upanishadic traditions. Puranic Hinduism emphasised belief over inquiry, reducing its intellectual appeal. Similarly, both Buddhism and Jainism moved away from their original rational and ethical ideals, becoming more ritualistic and esoteric through the influence of Tantra, often appearing complex and intimidating to outsiders.

Despite the continued presence of great philosophers such as Vasubandhu, Dignaga, Shankaracharya, Acharya Kundakunda, and Ramanujacharya, their contributions remained largely confined to scholarly circles. Their works, often composed in Sanskrit and laden with abstract thought, failed to reach the general populace or establish mass philosophical movements like those of the Buddha or Mahavira.

Externally, the emergence of Islam and Christianity brought with them strong doctrinal frameworks and structured theological principles. Both religions emphasised monotheism, scriptural authority, and prophetic teachings. Their firm opposition to polytheism and idol worship stood in stark contrast to Indian religious norms. Additionally, unlike earlier faiths that respected spiritual autonomy, Islam and Christianity promoted active conversion, often viewing it as a religious duty. Voluntary conversion to other religions

was discouraged, if not condemned. These theological and ideological differences effectively ended the era of organic assimilation, marking a new phase in India's religious and cultural history by the medieval period.

References:-

1. Bajpai, Krishnadutt, "*Bhartiy Aitihasik Abhilekh"* P-97
2. Gupta, Parameshwari Lal, "*Bhartiya Vastukala",* p. 61
3. Sahay Shiva Swaroop, *"Prachin Bhartiya Sikke"* p-148
4. Srivastava, Krishnachandra, "*Prachin Bharat ka Itihas Evam Sanskriti"* United Book Depot, Allahabad, 2022, p-324
5. Bajpai, Krishnadutt, "*Bhartiy Aitihasik Abhilekh"*p-135
6. Ibid. p-140
7. Srivastava, Krishnachandra, "*Prachin Bharat ka Itihas Evam Sanskriti"* United Book Depot, Allahabad, 2022
8. Upadhyay Vasudev, "*Bhartiya Mudrayen*" Bharti Bhandar, Prayag, P-132
9. Gupta Parameshwari Lal, *"Ancient Indian Coins"*, University Publications, Varanasi, p. 26
10. Srivastava, Krishnachandra, "*Prachin Bharat ka Itihas Evam Sanskriti"* United Book Depot, Allahabad, 2022p-455, 456
11. Pandey, Vimalchandra "*Prachin Bharat Ka Isahas, Sanskriti Evam Puratatva"* Central Book Depot, Allahabad P-138
12. Srivastava, Krishnachandra, "*Prachin Bharat ka Itihas Evam Sanskriti"* United Book Depot, Allahabad, 2022, p-457
13. Pandey, Vimalchandra "*Prachin Bharat Ka Isahas, Sanskriti Evam Puratatva"* Central Book Depot, Allahabad P-138

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Impact of Solar Energy in Sustainable Development of India

Shikha Gupta* Dr. Mahesh Gupta**

***Ph.D. Scholar (Commerce) Shri Atal Bihari Vajpayee Govt. Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA**
****Professor (Commerce) Shri Atal Bihari Vajpayee Govt. Arts and Commerce College, Indore (M.P.) INDIA**

Abstract: Sustainable development of any country aims to make a development that cannot only meet the demands of the present but can also set up the future generation's needs and requirements. Emerging global warming, unfavorable climatic conditions, dependence on fossil fuels, and many other factors pose significant challenges to sustainability in India. To get rid of all these issues, solar energy can play a versatile role in the sustainable development of the country. India is fortunate to have an abundance of solar energy. It is the cleanest energy source on the planet, produces zero carbon emissions, and is the best replacement for energy from fossil fuels. This paper discusses the impact of solar energy in developing a sustainable India. Ways of harnessing solar energy, like solar panels, solar streetlights, solar water heaters, solar signals, and so on, are discussed.
Keywords: Sustainable development, smart cities, solar energy products, smart city strategies & solutions, and Government initiatives.

Introduction

1. **Sustainable development in India:** Smart and sustainable development aims to renovate cities' operational efficiency without negotiating the requirements of forthcoming generations and maintains a healthy environment with optimum resource utilization.
2. **Smart Cities Mission:** On25 June 2015, the Government of India launched the Smart Cities mission, by adopting a futuristic approach for developing 100 cities, including 2-tier and 3-tier cities in the country. Its main objective is the transformation of the cities by providing valuable infrastructure and, a good quality of life to the Indian citizens, and availing clean and green planet by application of smart solutions. The central Government provides financial assistance to the cities under Smart cities criteria, up to 100 crores per city per year. Our country has 6 fundamental principles on which the smart cities are formed:
1. **Community at the Core:** a city that uses digital technology and advanced solutions to upgrade its population.
2. **More from less:** Maximum outcomes through limited resources.
3. **Cooperative and competitive Federalism:** Cities are selected through competition and flexibility for the implementation of the projects.
4. **Integration, Innovation, and Sustainability:** Smart city projects are formed to find innovative solutions for the sustainable development of the population and environment together.
5. **Technology as means, not the goal:** Technology is selected according to modification required in a city, it may differ city by city as per the need of improvisation.
6. **Convergence:** Combination of objectives and resources of smart cities such as Amrut – Urban Transformation, Swachh Bharat (cleanliness), HRIDAY (Heritage city development), Digital India, skill development, etc.

Smart Solutions of Smart Cities:

E-Governance and Citizens services
- Public information, Grievances handling, Redressal
- Electronic Service Delivery
- Citizens-City's Eyes and Ears
- Citizens Engagement
- Video crime monitoring

Energy Management
- Renewable Sources of Energy
- Smart Meters and Management
- Energy efficient & Green building.

Waste Management
- Waste to Energy Fuel
- Waste to Concept
- Waste water to be treated
- Recycling and reduction of C&D waste.

Urban Mobility
- Smart Parking
- Intelligent traffic management
- Integrated Multi Model Transport.

Water Management

- Smart Meters & Management
- Leakage identification, Preventive maint.
- Water quality monitoring

Others

- Tele Medicine and Tele Education
- Incubation/Trade facilitation centers
- Skill Development Centers



Fig.1. Smart Cities Solutions

Smart City Strategies

- **Retrofitting-** Replanning of already built-up area with smart solutions to make it well organized and comfortable
- **Redevelopment-** Replacement of old built-up environment with the enhanced version of infrastructure
- **Greenfield-(Smart from scratch)**- Sustainable, efficient, and liveable environment on undeveloped land in urban and rural areas, by adopting advanced technologies.
- **Pan city-** Selected smart solutions to the existing city-wide infrastructure.

Impact of Solar Energy in Smart Cities Mission: A Smart City is the development of a planned city comprising all the amenities for the citizens full of information, communication, and upgraded technologies (i.e. internet of things, Artificial intelligence), nevertheless, it should also be environment friendly. To be future-focused, the population of countries' villages, towns, and cities will increase with more demand for energy consumption, and to justify the needs of future generations, the worldwide government is seeking smarter solutions for more power generation and lack of dependency on fossil fuels. To bring technology expansion and sustainability together, the Government of India has mandated that up to 10% of the power supply will be derived from solar energy sources. In this respect, the Government has targeted up to 80% of the buildings will be converted into green buildings by implanting solar power panels, solar water heaters, solar lights, etc. for the generation of electricity in a clean form. In India, solar power energy is the most substantial source of energy out of the other renewable resources. It eradicates the dependence of the country on non-renewable resources and moves to green and clean resources.

Review Of Literature

1. Telang, S., Chel, A., Nafdey, R., & Kaushik, G. (2021) The article "Solar Energy for Sustainable Development of Smart City" is published in the book "Studies in Systems, Decisions and Control". The researchersreveal that by 2021, the Indian government intends to build a sizable solar project to satisfy the country's rising electricity needs. Smart Cities will require small-scale solar parks, and solar power can be utilized for household cooking, traffic signals, streetlights, water heaters, and pumps.

2. Mishra, R. K., Kumari, C. L., Janaki Krishna, P. S., & Dubey, A. (2022).
The article "Smart Cities for Sustainable Development: An Overview", is published in the book "Advances in Geographical and Environmental Sciences". The researcher discussed that cities all around the world are facing serious issues as a result of population expansion, economic restructuring, and climate change. Efforts are being made to create sustainable and intelligent cities. Development nations such as India face difficulties with delayed investments, scheduling, coordinating, and allocating funds for rural infrastructure.

3. Mahesha, C. R., Ramalingam, M., Sujith, S., Kalyanasundaram, P., Soni, N. B., Nalinashini, G., ... & Mohanavel, V. (2022)
The researchers in their article "Sustainable Cooling and Heating in Smart Cities usingSolar Energy SystemPlanning" conclude that Smart city elements can efficiently use renewable resources and improve energy efficiency, benefiting disadvantaged communities. Proper planning and finance can lead to widespread adoption of sustainable energy technologies, enhancing economies, safety, and quality of life by reducing corruption and implementing innovative government strategies.

Research Methodology: The present research isdescriptive in nature. The data has been derived from secondary sources, i.e., books, journals, and government websites like MNRE, Smartcities.gov, etc., to highlight the role and importance of solar energy appliances in the development of Sustainable India.

Objectives Of The Study:

1. Intention to move focus towards benefits of solar energy products for the success of smart cities mission.
2. To bring attention to the contribution of solar products toa sustainable environment.
3. To highlight, energy conservation held after the adoption of solar energy appliances.
4. To bring attention to the issues and challenges that occur in the installation of solar-powered products in smart cities mission.

Limitations Of The Study: As it is descriptive research, there may be some variations in data collected through secondary sources from the actual database.

Types And Role Of Solar Energy Products

Smart cities rely on solar energy goods to meet sustainability targets. These products improve urban living conditions by utilizing efficient and sustainable technologies.

1. Solar Energized Infrastructure

- **Solar-powered buildings**: In smart cities, it is targeted

to optimize the use of energy, minimize dependence on power grids, and reduction in operational costs by installing solar panels on the rooftops of buildings.



Fig.2- Solar Rooftop Panels

- **Solar Streetlights:** To cut down on energy use and carbon emissions, solar-powered LED streetlights are becoming a growing trend. These lights are linked to a central system that employs real-time data to optimize their operation through the use of sensors.



Fig.3- Solar Streetlights

- **Solar Signals:** under the smart cities mission, traffic signals are also controlled through solar panelized signals, which is again a virtuous step towards sustainability.

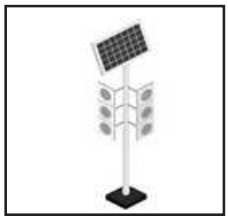


Fig. 4-Solar Signals

- **Public Places:** In the smart cities mission, public spaces like gardens, bus stops, and others are also filled with solar-energized amenities, like lighting, charging stations, solar parking sheds, and information kiosks.

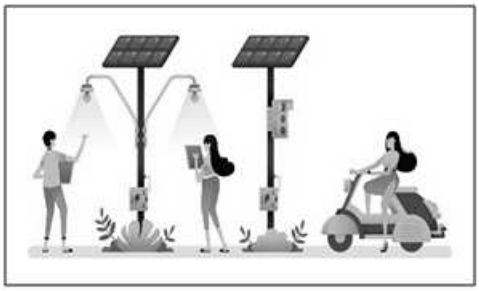


Fig.5- Solar Amenities in Public Places

- **Solar Water Heaters:** Solar water heaters have replaced high-wattage geysers and gas geysers used for heating water. The solar heating panels collect heat from the sun and transfer it to an insulated storage tank for heating water. The adoption of solar water heaters has reduced huge electricity bill amounts and dependence on geysers for the water heating process.

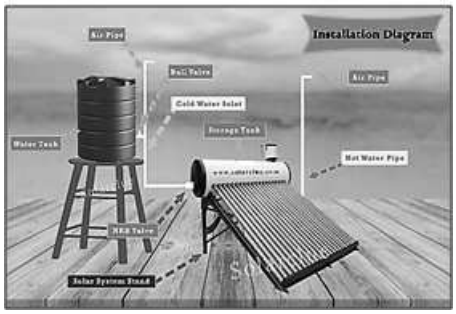


Fig-6 Solar Water Heaters

2. Smart Grids

- **Convergence with Smart Grids**:In smart cities, demand-responsive management, real-time monitoring, and efficient energy distribution are made possible by the pairing of solar energy systems with smart networks. Refeeding surplus solar energy back into the grid may boost the city's overall energy efficiency.

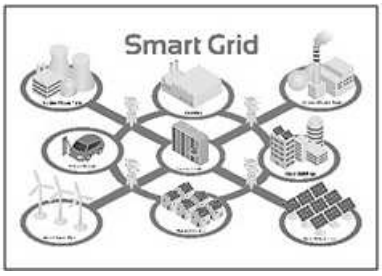


Fig.7- Smart Grids

- **Microgrids**:Microgrids, or small-scale power networks that can function independently or in tandem with the main grid, are made possible in smart cities only with the help of solar energy products. If the main grid fails, this boosts resilience and offers dependable energy.

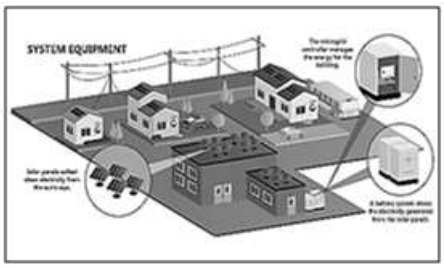


Fig.8-Microgrids

3. Electric Vehicles (EV):

- Solar EV Charging Stations: As smart cities promote EV vehicles, solar-energized EV charging stations are installed. These stations not only reduce carbon footprints but also help to address the power shortage issues.



ig.9- EV Vehicle Charging Stations

- Solar-energized public transport:Urban pollution and energy expenses can be decreased by using solar energy to power public transit vehicles like buses and trams.



Fig.10-Solar Energized Public Transport

4. Power Storage System:

- **Battery Storage:**Automated battery storage systems are a common feature of solar energy products in smart cities, enabling the daytime storage of surplus solar energy. This energy can be used at night or during peak hours, promising a steady supply of electricity and eliminating the demand for fossil fuels.
- **Energy Management System (EMS):** These systems optimize the use of solar energy in smart cities by managing energy storage and consumption in real time using artificial intelligence and data analytics.

5. Environmental Monitoring and Management:

· **Solar Powered Sensors:** Smart monitoring sensors (IOT devices) used for monitoring air quality index, water level, and weather forecasting, are also powered by solar energy. These sensors provide real-time data to the city management system and maintain clean energy in urban space.

- **Waste Management:** To cut costs and increase efficiency, smart cities employ solar-powered waste collecting systems and compactors.



Fig.11-Smart waste management system

6. Economic and Social Impact:

i. Job Opportunities: Installation of solar energy productsincreases the scope of employment in manufacturing, installation and maintenance, and other related sectors.

ii. Energy Independence: The emergence of solar energy products has reduced the dependence on grid lines and conventional energy i.e. Coal, gas, oil, etc.

iii. Cost Reduction: "Let the sun pay your electricity bill', solar energy has not only reduced dependence on grid lines but also helps in reducing electricity bills by installing solar panels and supplying surplus energy to public grids.

iv. Sustainable Urban Planning: Optimization of solar energy in smart cities, creating farms, and using solar energy for cooling and heating systems has made a sustainable environment for the inhabitants in urban cities.

Achievements Of Solar Power Products For Smart Cities Mission:

1. India has gained 5th position in solar energy installed capacity as per the Global Status report of REN 21 Renewables, 2024.
2. India's solar energy potential is estimated to be 748 GW, as per the National Institute of Solar Energy (NISE). It has increased 30 times in the last 9 years and become 85.47 GW as of June 2024 from 2.6 GW since 2014.
3. The Government of India has approved 57 city parks with an approx. capacity of 37.49 GW across the country.
4. India added approx. 8 GW of rooftop solar capacity by March 2024; it has already achieved up to 70 GW by the end of 2023. Out of this, around 2.5 GW has been installed in Smart Cities Projects till March 2024.
5. Utility Solar Scale projects have contributed up to 60% of the total solar capacity of India, cities like Rajasthan, Karnataka, and Gujarat are foremost in this pathway.
6. Over 1.2 million solar streetlights have been installed under the smart city project.
7. Approximately, 500 solar-powered EV charging stations have been established across smart cities.
8. The Government of India putting more focus on the installation of Solar floating panels. The Tumakuru smart city District has 80 to 100 acres of floated panels at Bugundanahalli Lake Reservoir in the Tumakuru District of Karnataka.

Most Successful Solar-Powered Smart City In India:

- **Diu Smart City-** Its first city in India to run on 100% renewable energy during the daytime. The city now saves 13000 tonnes of carbon emissions every year and managed to reduce power tariffs by up to 15%. Equipped-9MW solar park spread over 50 hectares and 79 Government buildings with installed solar panels as of 23 April 2018,according to a report from Press Information Bureau.

Challenges Towards The Implication Of Solar-Powered

Smart Cities:

1. **Large land area required** for the installation of solar parks, or solar power plants, becomes more challenging in highly populated and large agricultural lands.
2. **Dependency on weather** is another face-off before the installation process, as solar energy does not harness equivalent energy outcomes in every season.
3. **Energy Storage is required** during non-sunny days, which can be done through battery storage, but it has high cost and technical challenges.
4. **High initial cost required** for the installation of solar-powered panels.
5. **Secured financing** can be difficult, mostly in an area that is developing or underdeveloped, there may be some uncertainties about Government policies or long-term returns.
6. **Erratic policies and regulatory barriers** may also be proved as the biggest hurdle towards the mission, as new/modified policies may change the rate of subsidies, tax benefits, and tariffs. Also, lengthy approvals may delay investment and development in solar panel installation.
7. **Biodiversity** can be the main issue in the success of solar-powered smart cities, as it can affect the ecosystems, wildlife, and natural vegetation. Proper assessment and mitigation are required to reduce its impact.
8. **Maintenance and operations** over a while are needed in solar panels as they lose their efficiency by up to 0.5 to 1% annually. Also, dust and soil over the panels may affect the productivity of panels, which becomes very challenging to clean onto larger spread areas.

Suggestions And Findings:

1. **Consistency in Government policies** related to solar energy and smart city framework, proper and fixed guidelines for subsidies, installation, and incentives. Also, **streamlining Government approvals** and simplifying procedures can make the mission more rapid and successful.
2. **Advancement of energy storage solutions** such as batteries for efficient utilization of surplus energy in non-sunny hours.
3. **Promote Research and development in solar technology** to cut down the cost, and improvisation in efficiency.
4. **More exploration in hybrid systems** to remove the loopholes in case one fails, the other will work and both together increase productivity. In respect of it, Solar power should be combined with other renewable resources. Like sun and wind energy.
5. **More public awareness is needed**to increase the installation process frequently, promotional activities like educational campaigns, and people engagement programs should be initiated more often.
6. **Should be focused on sustainability**, installation should be done by keeping in mind that it will not harm the ecosystems and communities.
7. **Encourage private and public sector collaboration** to increase innovations and technology.
8. **Global Collaboration** should be welcomed to enhance the best practices, technological advancement, and educational knowledge.

Conclusion: As we are all aware, the future will be more advanced in technology and advancement always requires a supply of efficient energy for its implication. The mission of Smart Cities is based on Digital India with a sustainable development concept, and solar power products have played a very crucial role in making it successful. To make cities of India highly digitized and with technically upgraded infrastructure, and to keep themclean and eco-friendly, solar-powered products can be proved as smart decisions. Though there may be some challenges,they can be addressed through innovative ideas, government policies, more solar promotional programs, and careful planning to get long-term advantages.

References:-

1. Telang S, Chel A, Nafdey R, Kaushik G. Solar energy for sustainable development of a smart city. In: Security and Privacy Applications for Smart City Development. 2021. p. 155–69.
2. Mishra RK, Kumari CL, Janaki Krishna PS, Dubey A. Smart cities for sustainable development: An overview. 2022. p. 1–12.
3. Mahesha CR, Ramalingam M, Sujith S, Kalyanasundaram P, Soni NB, Nalinashini G, et al. Sustainable cooling and heating in smart cities using solar energy system planning. Energy Rep. 2022;8:826–35.https://doi.org/10.1016/j.egyr.2021.12.149
4. Industrial Outlook. Renewable energy - Authored article [Internet]. [cited 2025 Apr 28]. Available from: https://industrialoutlook.in/renewable-energy-2/authored-article/
5. Invest India. Renewable energy [Internet]. [cited 2025 Apr 28]. Available from: https://www.investindia.gov.in/sector/renewable-energy
6. JMK Research & Analytics. Annual India solar report card FY2024 [Internet]. 2024 [cited 2025 Apr 28]. Available from: https://jmkresearch.com/renewable-sector-published-reports/annual-india-solar-report-card-
7. Ministry of New and Renewable Energy (MNRE). Solar energy [Internet]. [cited 2025 Apr 28]. Available from: https://mnre.gov.in/solar/#
8. Ministry of Power, Government of India. Annual reports - Year wise [Internet]. [cited 2025 Apr 28]. Available from: https://powermin.gov.in/en/content/annual-reports-year-wise-ministry
9. Smart Cities Mission, Government of India. Smart Cities Mission [Internet]. [cited 2025 Apr 28]. Available from: https://smartcities.gov.in/

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

India and Retail Business

Dr. Sarojini Topno*

***Assistant Professor (Economics) Government Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) INDIA**

Introduction - Retailing is the latest buzz-word among the business. This newest fad is getting high visibility media coverage dynamic young people as well as blue-chip companies are suddenly taking pride in calling themselves shopkeepers. This profession is able to attract the cream of talent from management institutes.

Today's customers remain updated about products and services through various media when they are interested in buying a specific product they search out for even the smallest details regarding the same. Retailers need to follow an apparent approach in response to the growing consumer power. They realize that it is time to earn the customer's confidence, trust and loyalty to build long term relationship and this is possible only by bidding farewell to aggressive sales techniques.

India ranked second in the world, in terms of financial attractiveness during 2010. Research reports forecast India to be among the top five destinations for foreign investors during 2010-12. Recent declaration of the cos approving a 51% FDI in multi brand retail has brought joy among India retail sector. The country is now in the global radar and has enormous potential inflow of foreign investments.

As India emerges as one of the most potential markets for global brands and retailers and retail reinvents the way modern Indian celebrate their spending power, India that takes pride in its rich culture, heritage, art, craft and variety of wares must capitalize on this ever-escalating consumerism and channelise the spending towards healthy consumption for overall development of the country.

Going by the current growth trend and considering the fact that existingprominent players in organised retail have stopped up their expansion drive with Reliance announcing big plans and other Indian corporate houses too evincing keenness on investing heavily in this sector as also the inking of the joint venture between the world's largest retailer Wal-Mart and Bharti the organised retailing in India has indeed gained top speed and is now on the verge of take-off Taneja added.

There would be a real revolution in the Indian retail industry, if the changes being witnessed in the metropolitan and other tier-one towns percolator to all the 784 urban settlements, with population above 50,000 perrons.

Expressing concern over the consumption and mall development trend, Editorial director of the mega research of "India Retail Research" R.S. Roy called open the entire retail fraternity, concerned Govt. departments and the supporting organizations to work towards giving Inian retail – "A face of India". India brand story can travel across theglobe with "Delhi Kat" type shopping cum entertainment centred opening not only across India but all over the world. Public private partnership (PPP) can revitalize the formats like Khadi Bhavans that runs one of the largest retail networks in the world and also Govt. state run emporia.

Retail expression is a portfolio game, with a blend of success and failures.Recouping from recession blues retailers are currently in the expansion mode, development their networks and expanding into new markets. Direct retailers are rewarded for their long-term outlook of business.

A Research states that the number of consumers using internet especially through their smart phones are increasing day by day. They also have increasing expectations regarding the mobile experience their retailersprovide them with retailers need to pursue smart customers with integrated hi-tech experiences as will and up watching their stores succumb to competition. Smart retails need to go beyond the ordinary customers experience and reap the benefits of rich customer experience.

Understanding future demand is vital for every business. It is always easy to find a model that fits into the past data. But it is difficult to decide a model that will fit into the future data, as future trends are not very explicit. Therefore, a successful business model needs to correctly identify those past features, which will also repeat in the future. Demand forecasting helps to estimates demand and supply in individual market helping retailers in price policies.

Current Scenario of Retail in India :

1. The retail sector in India was valued at around USD 850 billion in 2022.
2. About 85-90% of the market is unorganized - including small neighbourhood stores and street vendors.
3. Organized retail (supermarkets, branded stores, malls)

is expanding fast in urban and semi-urban areas.
4. E-commerce (Amazon, Flipkart, Meesho) has seen exponential growth, especially post-COVID.

Types of Retailing in India :

1. Unorganized Retail Local shops, kiosks, roadside vendors Cash transactions, personal relationships with customers.
2. Organized Retail Large format stores, malls, supermarket chainsStructured billing, digital payments, loyalty programs.
3. Online Retail (E-commerce)Platforms like Amazon, Flipkart, JioMart, etc. Digital shopping, doorstep delivery, return policies.

Key Drivers of Growth :

1. Urbanization and rising disposable incomes.
2. Youth population with tech-savvy buying behaviour.
3. Growth in digital payments (UPI, wallets).
4. Government reforms allowing 100% FDI in single-brand retail.
5. Affordable smartphones and widespread internet access.

Challenges Facing Indian Retail:

1. Fragmentation due to dominance of unorganized sector.
2. High competition and price sensitivity among consumers.
3. Logistics and supply chain inefficiencies.
4. Regulatory issues (GST, licensing, state-wise compliance).
5. Low digital literacy in rural regions.

Future Prospects of Retail in India :

1. Retail market projected to reach USD 2 trillion by 2032.
2. Rise of hybrid retail (offline + online experiences).
3. Al and Data Analytics for personalized marketing.
4. Growth in tier-2 and tier-3 cities.
5. Sustainable retail practices and eco-friendly packaging.

Conclusion : The retail industry in India is dynamic and brimming with potential. With digital transformation, increasing consumer expectations, and government support, the sector is poised for tremendous growth. Retail not only contributes significantly to the country's GDP but also empowers entrepreneurship, job creation, and innovation across all levels of society.

References:-

1. Ministry of Commerce & Industry, Govt. of India.
2. India Brand Equity Foundation (IBEF) Reports.
3. Economic Survey of India 2023-24.
4. Deloitte & PwC Retail Industry Insights.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Interplay of Policy Frameworks and Public-Private Collaborations in Fostering Sustainable Tourism: An Empirical Study of Kashmir's Tourism Sector

Rahul Kumar Jha*

*Department of Business Administration, Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA

Abstract - The Kashmir Valley, known for its breathtaking natural beauty, faces complex socio-political and environmental challenges that obstruct sustainable tourism development. This paper explores the dynamic interaction between policy frameworks and public-private partnerships (PPP) in promoting sustainable tourism practices in the region. Using a qualitative research design based on document analysis, stakeholder interviews, and policy reviews, this empirical study identifies key policy gaps, implementation bottlenecks, and opportunities for collaborative tourism development. Findings highlight that while initiatives like the Swadesh Darshan and National Tourism Policy 2022 offer a vision for sustainability, actual outcomes are hindered by fragmented governance and limited local participation. The paper proposes a multi-tiered governance model integrating local communities, private enterprises, and public institutions for inclusive and resilient tourism. It contributes to the academic discourse by offering pragmatic insights for tourism governance in conflict-prone areas.

Introduction - Tourism is one of the most powerful economic drivers globally, accounting for over 10% of global GDP and employment. In the Indian context, it contributes about 9.2% to GDP and provides direct and indirect employment to more than 42 million people (WTTC, 2023). Despite such impressive statistics, tourism in fragile and politically sensitive areas such as Jammu & Kashmir remains underdeveloped and prone to volatility. The unique geopolitical context of Kashmir, characterized by ongoing conflict, heightened militarization, and socio-cultural complexities, presents formidable challenges to traditional models of tourism development.

Yet, Kashmir's tourism potential remains largely untapped. Rich in natural landscapes, heritage sites, and religious tourism circuits, the valley offers immense opportunities for sustainable tourism development. However, conventional tourism practices have often led to the degradation of ecological balance, strained community resources, and failed to translate into long-term socio-economic benefits. The existing tourism frameworks are marred by disjointed policy execution, lack of multi-stakeholder collaboration, and poor infrastructure.

Sustainable Tourism Development (STD) offers a new paradigm to redefine tourism's role in Kashmir. Grounded in principles of environmental preservation, socio-cultural respect, and equitable economic distribution, STD aligns with the UN Sustainable Development Goals (SDGs), especially SDG 8 (Decent Work and Economic Growth), SDG 11 (Sustainable Cities and Communities), and SDG 13 (Climate Action). In this context, policy frameworks and PPPs emerge as catalytic tools for translating this vision into action.

This paper aims to explore the interplay of tourism policy frameworks and public-private partnerships in shaping the sustainable tourism landscape of Kashmir. By investigating policy intentions, practical constraints, and stakeholder perceptions, it attempts to offer a grounded understanding and strategic pathway for inclusive and regenerative tourism development in the region.

Objectives of the Study: This study is guided by the following research objectives:

1. To analyze the current policy landscape governing tourism in the Kashmir Valley.
2. To examine the role and effectiveness of public-private partnerships in implementing sustainable tourism projects.
3. To identify the major constraints in integrating policy and partnership approaches in conflict-sensitive regions.
4. To provide recommendations for creating a robust sustainable tourism ecosystem in Kashmir through inclusive governance.

Methodology: This research adopts a qualitative case study design, focusing on the Kashmir Valley as a critical unit of analysis. The study employs a multi-source approach, combining primary data from stakeholder interviews with secondary data from policy documents and tourism reports. Primary Data: In-depth interviews were conducted with 12 stakeholders, including officials from the Department of Tourism (J&K), representatives from the private hospitality sector, and community leaders from key tourist locations such as Srinagar, Pahalgam, and Gulmarg.

Secondary Data: Policy documents such as the J&K Tourism Policy (2020), National Tourism Policy Draft (2022), Swadesh Darshan guidelines, and project reports from JKTDC and ITDC were analyzed.

The analytical lens for this study is provided by the Triple Bottom Line (TBL) framework, which evaluates tourism initiatives through three dimensions—economic viability, environmental stewardship, and socio-cultural equity.

Literature Review

The discourse around sustainable tourism has evolved significantly over the past three decades. Initially framed as an environmental counterweight to mass tourism, it has since embraced a more holistic definition incorporating community well-being, cultural preservation, and institutional integrity (Bramwell & Lane, 2011).

India's sustainable tourism strategy, reflected in the National Tourism Policy (2022) and earlier schemes like Swadesh Darshan and PRASAD, recognizes the need for responsible tourism development. However, centralized control and weak local implementation often dilute the impact of these policies.

Public-private partnerships are increasingly recognized for their ability to mobilize resources, distribute risks, and foster innovation. Successful models in Kerala's ecotourism and Rajasthan's heritage hotels illustrate the potential of PPPs when supported by clear legal frameworks and community alignment.

Kashmir's unique context necessitates a customized approach that balances security concerns, ecological sensitivity, and community aspirations. While the region attracts more than 2 million tourists annually, challenges persist due to poor infrastructure, policy fragmentation, and lack of stakeholder trust (JKTDC, 2023).

Analysis of Policy and PPP Ecosystem

Policy Review: The J&K Tourism Policy (2020) marks a shift toward sustainability, with provisions for:

1. Environmental Impact Assessments (EIAs)
2. Incentives for green infrastructure
3. Local employment mandates

However, several weaknesses are evident:

1. Poor enforcement mechanisms
2. Limited coordination with central policies
3. Absence of clear performance metrics

Review of Public-Private Initiatives

Notable examples include:

1. **Gulmarg Gondola:** India's highest cable car system, a PPP with operational inefficiencies due to poor maintenance and bureaucratic control.
2. **Dal Lake Cleanup Initiative:** Initially envisioned as a collaborative project between ITDC and local municipalities, the project stalled due to funding delays and land disputes.
3. **Pahalgam Eco-Resort:** Faced opposition from locals over land rights and ecological impact concerns.

Stakeholders reported that delays in approvals, lack of transparency in bidding processes, and weak risk-sharing arrangements were major deterrents to successful PPP implementation.

Key Challenges Identified: From the analysis, five major challenges were identified:

1. **Policy Fragmentation:** Multiple agencies with overlapping mandates dilute accountability.
2. **Administrative Bottlenecks:** Delays in land clearance, licensing, and financing hamper timely project execution.
3. **Community Exclusion:** Most projects are conceived without local consultation, leading to resistance and project failures.
4. **Environmental Degradation:** Poor regulation of tourist inflow has led to excessive waste, water pollution, and biodiversity loss.
5. **Security and Perception Barriers:** Frequent lockdowns and media portrayal dissuade both tourists and investors.

Strategic Recommendations

Policy Reforms

1. Draft a Kashmir-specific Sustainable Tourism Master Plan aligned with the SDGs.
2. Establish an autonomous Tourism Regulatory Authority for conflict-sensitive governance.

Enhancing PPP Effectiveness

1. Introduce standard PPP contracts and model concession agreements specific to tourism.
2. Leverage schemes like Viability Gap Funding (VGF) to de-risk investments.

Community-Based Tourism (CBT)

1. Incentivize local entrepreneurship through micro-financing and cooperative societies.
2. Establish tourism clusters managed by indigenous stakeholders.

Technology and Innovation

1. Use digital dashboards for project monitoring, tourist feedback, and crisis management.
2. Promote low-carbon transport solutions and smart waste management in tourist zones.

Proposed Governance Model

We propose an Integrated Sustainable Tourism Governance (ISTG) Model with four core pillars:

1. **Collaborative Governance:** Equal representation from government, private sector, and local communities.

2. Resource Efficiency: Incorporate climate-resilient infrastructure and clean energy.

3. Cultural Integrity: Protect local traditions through community-run cultural tourism hubs.

4. Crisis Resilience: Institutional mechanisms to handle emergencies and maintain continuity of tourism flows.

Conclusion: Sustainable tourism in Kashmir is not a utopia but a realistic vision contingent upon bold reforms and collective action. This study demonstrates that while policies and partnerships exist, their transformative potential is hindered by implementation deficits and stakeholder mistrust. A decentralized, participatory, and adaptive model is required to navigate the unique challenges of Kashmir. By harmonizing local aspirations with national goals, and ensuring that tourism development benefits both people and the planet, Kashmir can emerge as a model for regenerative tourism in conflict-affected regions.

References:-

1. Bramwell, B., & Lane, B. (2011). Critical research on the governance of tourism and sustainability. Journal of Sustainable Tourism.
2. Government of India. (2022). National Tourism Policy Draft.
3. Jammu & Kashmir Tourism Department. (2020). J&K Tourism Policy.
4. WTTC. (2023). Economic Impact Report.
5. Deloitte. (2021). Role of PPPs in Indian tourism: A case study approach.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Determinants of Buying Behaviour in Organised and Unorganised Retail Sector

Dr. Rajan Devi Negi*

***Associate Professor (Commerce) Govt. College, Nirmand, Distt. Kullu (H.P.) INDIA**

Abstract: Retail is the fastest growing sector in the Indian economy. Traditional markets are making way for new formats such as departmental stores, hypermarkets, supermarkets and specialty stores.The study is mainly concerned with changing satisfaction level of customers from organised and unorganised retail in Punjab area specifically in Jalandhar and Ludhiana.To identify the significant factors which affect the satisfaction level of consumers.a scale has been developed comprising of thirty statements. These statements are measured on 5-point likert scale i.e., very dissatisfied (1), dissatisfied (2), neutral(3), satisfied (4), very satisfied (5). On the basis of responses from consumers, factor analysis has been done to extract the factors from observed variables which affect the satisfaction level of consumers of organised and unorganised retail.
Keywords: Retail; buying behavior, organized retail andunorganised retail.

Introduction - Retail industry the largest sectors in India and second largest employment provider after agriculture, it plays a significant role in increasing the productivity across a wide range of goods and services. In India, both organised and unorganised retail sector exists, majority of the share being under unorganised. Organised retailing has finally emerged from the shadows of unorganised retailing and is contributing significantly to the growth of Indian retail sector.The word '*retail'* is derived from French word retailers which means 'to cut a price off 'or to break bulk. The distribution of consumer products begins with the products and ends at the ultimate consumers. Between the producer and the consumer there are middlemen– the retailer, who links the producers and the ultimate consumers. A retailer is a person, agent, agency, company, or organization which is instrumental in providing the goods, merchandise or service to the ultimate consumers.

Structure Of Retail Industry In India: The structure of retail industry in India as follow:

Unorganized Retail Sector: The unorganized retail sector basically includes the local kiranas, hand cart, the vendors onthe pavement etc. This sector constitutes about 98% of the total retail trade.

Organized Retail Sector: In the organized sector trading is undertaken by the licensed retailers who have registeredthemselves to sales as well as income tax.

Consumer Behaviour: Consumer behaviour is the study of individuals, groups, or organizations and the processes they use to select, secure, and dispose of products, services, experiences, or ideas to satisfy needs and the impacts that these processes have on the consumer and society.

Bansal, Sandeep and Bansal, Rama (2014) in their study 'Consumer Buying Behaviour Regarding Shopping Malls In Ludhiana',made an attempt to study the consumer decision making styles in shopping malls of India. The main stress was upon the mail shopping malls in Ludhiana city of Punjab. like West End Mall, Ansal Plaza and MBD Nepoleins. Study was based on primary and secondary data. The primary data was collected with the help of questionnaire which were filled up by the respondents from Ludhiana district of Punjab State. A sample of 100 shoppers is selected. The data collected has been analyzed through the tabulation based on percentages & actual number scores. It was found that there is a trend of considerable increase of shopping malls in all the metro cities small towns and a large section of middle class, upper middle class people are coming for shopping because of reasons like convenience, better environment and improved customer service, competitive price with seasonal discount various gift scheme, availability of parking space for their car.

Zia and Azam (2013) in their study 'Unorganised Retail Shopping Experience in India', made an attempt to develop a scale measuring shopping experience and to measure the impact of various factors of shopping experience in the context of unorganised retail. Hypothesized model was developed based on literature survey, and refined using exploratory and confirmatory factor analysis. Reliability and validity of scale was checked using Cronbach alpha. Impact was measured using multiple regression method. Study

was primary data based and the sample of 355 retail consumers was taken. Fifteen factors were found to be important to determine shopping experience in unorganised retail where "merchandise" has maximum positive impact with beta value of 0.0452 and "reliability" has the least impact with beta value of 0.017. The results of the study helped to identify the key factors influencing the customers of unorganised retail set.

Mathur and Sharma (2013) in their study 'Analysis of Stimuli Attracting Customer Buying Behavior and their Satisfaction Level in Modern as Well as in Conventional Retail Stores', highlighted the stimuli that attract a prospective buyer in modern retail mall and conventional stores and they made a comparative analysis of those variables between modern retail format and conventional retail store. The purpose of this research was specifically to compare the level of satisfaction of the customers with the offerings and attributes offered to them in modern retail formats vis-à-vis conventional shopping stores. They concluded that factors affecting consumer buying behaviour are significant while making choice of retail outlet by consumers that whether they prefer conventional shopping stores or modern retail format. People are highly satisfied with the offerings and attributes provided by conventional shopping stores or modern retail store.

Bhatt JD and Thaker (2020) they found out that last 4-5 years of food retail Sales has been increased. Various trading companies are already planning to invest in this sector over the next 2- 3 years. Retailers will have to face the problem of increased demand and customers will be also highly competitive. Competitors with more investment flowing in shares of the organized food sector that is growing rapidly so that existing and new players are not getting much profit.

Das Ganesh (2020) According to him, unorganized retailers face a complex situation in which they compete with organized retailers and there will be many challenges ahead that will not beeasy to survive. The organized sector offers home delivery services and discount offers to attract consumers. If the unorganized sector does not do these types of things this sector have to face many difficulties in the future.

India Brand Equity Foundations(2021) According to this foundation, the most common methods of payment were digital wallets (40%), followed by credit cards (15%) and debit cards (15%). Retail's online reach is expected to reach 10.7% by 2024, which is 4.7% in 2019.

RaoKedar (2021) According to him, Just as supermarket chains exploit farmers the expansion of Indian supermarkets is not crowding out small and marginal farmers. Regulating costs was a major concern for farmers due to the opportunistic behavior of MERC companies in grading and monitoring to provide better quality.

Objectives Of Study:

1. To identify the significant factors which affect the satisfaction level of consumers.
2. To study the contribution of various identified factors in satisfying the consumers.

Hypotheses:

1. All identified factors are equally important for consumer's satisfaction.
2. There is no significant difference in the satisfaction level of consumers irrespective of their demographic features.

Research Methodology:

S.	Particulars of Research	Details
1	Data Collection method	Primary and Secondary data
2	Survey Area	Jalandhar & Ludhiana cities of Punjab
3	Sample Size	400 Respondents (200 from each city)
4	Sampling Method	Purposive, quota and judgment sampling
5	Research Instrument	Structured questionnaire, Interviews and Personal observations
6	Statistical Tools	1. Mathematical Methods 2. Statistical Methods 3. Diagrammatic Methods

Data Analysis And Interpretation:

To meet first objective of the study, a scale has been developed comprising of thirty variables. These statements are measured on 5-point liker scale i.e., (1)very dissatisfied,(2) dissatisfied, (3)neutral, (4)satisfied, (5)very satisfied. On the basis of responses from consumers, factor analysis has been done to extract the factors from observed variables which affect the satisfaction level of consumers of organized and unorganized retail.

Table 1.1

(see in last page)

Table 1.1 explains, the descriptive statistics for factors affecting the satisfaction level of consumers of organised and unorganised retail. The table shows the values of mean, standard deviation, skewness and kurtosis for thirty variables. Further, the table depicts that the mean value is highest i.e., 3.59 in case of two variables i.e., the employees in the store are knowledgeable and there remain a lot of shoppers in the store. Therefore, it can be said that knowledge of the store employees and number of shoppers are most important variables which affects the satisfaction level of consumers of organised and unorganised retail.

Kaiser-Meyer-Olkin Measure of Sampling:

Table 1.2: Kaiser-Meyer-Olkin Measure of Sampling Adequacy and Bartlett's Test of Sphericity: KMO and Bartlett's Test

Kaiser-Meyer-Olkin Measure of Sampling Adequacy.		.915
Bartlett's Test of Sphericity	**Approx. Chi-Square**	11873.688
	Df	435
	Sig.	0.000

Table 1.2 shows that the Kaiser-Meyer-Olkin measure is 0.915, which implies that sample is adequate and factor analysis is appropriate for data. Bartlett's test is another indication of the strength of the relationship among variables. This tests the null hypothesis that the correlation matrix is an identity matrix in which each variable correlates perfectly with itself but has no correlation with other variables. Further, Table 1.2 shows that Bartlett's test of sphericity is significant that is its associated probability is less than 0.05. In fact, it is actually 0.000, i.e. the significance level is small enough to reject the null hypothesis. This means that correlation matrix is not an identity matrix.

Total Variance: Table 1.3 reveals that, the first factor accounts for 25.331% of the variance, the second factor 23.407%, third factor 13.418% and the fourth factor 12.008%. All the remaining factors are not significant.

Table 1.3(see in next page)

Rotated Component Matrix: Table 1.4 exhibits the results of rotated component matrix. Further, the table reports that four factor are extracted through factor analysis i.e., social, design, ambience and merchandise. The rotation reduces the number of factors on which the variables under investigation have high loadings.

Table 1.4: Rotated Component Matrix

Variables	Component			
	1	2	3	4
1	.974	.003	.030	-.026
2	.814	-.027	-.060	.013
3	.793	.026	-.015	-.009
4	.866	-.039	.080	.040
5	.897	-.030	.044	-.006
6	.774	-.068	.015	.016
7	.781	-.073	.017	-.047
8	.859	-.004	.005	-.045
9	.869	.022	.019	-.025
10	.876	.004	.042	-.007
11	-.007	.973	.015	.023
12	-.032	.780	.063	.003
13	-.034	.762	.011	.050
14	.043	.871	-.008	.001
15	-.038	.901	-.006	-.020
16	-.031	.788	-.028	-.066
17	-.049	.801	.003	.029
18	.004	.846	-.002	.066
19	-.044	.871	.008	.054
20	.003	.901	.049	-.014
21	.029	.021	.956	.032
22	.019	-.014	.827	.043
23	.035	.048	.795	.029
24	.032	.058	.882	-.005
25	-.041	.008	.896	.018
26	.056	.006	.022	.968
27	-.043	-.034	.051	.838
28	-.019	-.023	-.004	.756
29	.077	.032	.024	.889
30	.034	-.046	.029	.897

Extraction Method: Principal Component Analysis.
Rotation Method: Varimax with Kaiser Normalization.
Rotation converged in 4 iterations.

Further, Table 1.4 reports the loading of different statements on identified four factors. Following variables are loaded on factor 1 i.e., social: The store has enough employees to serve the customers. The store employees are well-dressed and appear neat. The employees in the store are friendly. The employees in the store are helpful. The employees in the store are knowledgeable. The store employees greet me courteously when I enter the store. The store appears very crowded to me. The store seems somewhat too busy. I don't have to face much traffic in the store during my shopping visits. There remain a lot of shoppers in the store. The variableswhich are loaded on factor 2 i.e., designs are as follow: The colour scheme is pleasing. The colours used in the store seem to be of latest fashion. The store has attractive physical facilities. The merchandise in the store appears organized. The Store has logically placed merchandise. Navigation in the store is easy. The store has sufficient aisle space. The store has impressive inside displays. There is adequate display of in-store information. The decor of store is pleasing to me. In the factor 3i.e., ambience following variables are loaded: The lighting in the store is pleasing to me. The lighting in the store accentuates the products that are displayed in the store. The background music in the store makes the shopping pleasant. The background music in the store does not bother me. The background music in the store is appropriate. All the remaining variables viz. the store carries dependable products. The store has a wide selection of merchandise. The store is fully stocked. The store has high fashion merchandise. The store has stylish merchandise are loaded on factor 4 i.e., merchandise.

Conclusion: Descriptive statistical analysis shows that, knowledge of the store employees and numbers of shoppers are most important variables which affects the satisfaction level of consumers of organised and unorganised retail. Further, the calculated values of standard deviation reveal high variation in the factors affecting satisfaction level of consumers. In case of skewness most values are concentrated on the right of the mean with extreme values to the right, so it can be said that distribution is negatively skewed. In case of kurtosis the calculated values are less than three which depicts that distribution is platykurtic, flatter than normal distribution with a wider peak. The probability for extreme value is less than for a normal distribu-

tion and the values are wider spread around the mean. Study shows that Kaiser-Meyer-Olkin measure is 0.915, which implies that sample is adequate and factor analysis is appropriate for data and Bartlett's test of sphericity is significant, i.e., its associated probability is 0.000, which means that correlation matrix is not an identity matrix. Total variance table reveals that the first factor accounts for 25.331% of the variance, the second factor 23.407%, third factor 13.418% and the fourth factor 12.008% while all the remaining factors are not significant.

Rotated component matrix shows that only four factor are extracted through factor analysis i.e., social, design, ambience and merchandise.Following variablesare loaded on factor.Cronbach alpha shows the overall reliability and validity of the scale above 0.7, which implies that scale used in the study is valid.

References:-

1. A.T. Kearney (2005) **"*Emerging Market Priorities for Global Retailer*"**.The 2005 Global Retail Employment Index.
2. C. Winston Borgen (1976), "***Learning Experiences In Retailing:Test and Case".*** Good Year Publishing Company, INC,.Pacific Palisades California, pp-15.
3. R.B.Rudani(2010 ***" Basics of Marketing Management"***. S.Chand& Company Ltd, New Delhi,pp.343.
4. A. Shivakumar(2007),"***Retail Marketing".***Anurag Jain Publication,New Delhi 2007, pp-15.
5. R.B.Rudani (2010***) "Basics of Marketing Management".*** S. Chand & Company Ltd, New Delhi,pp.343-344.
6. SwapnaPathan (2006) ***"Retailing and Management"***. Tata McGraw-Hill Company ltd., New Delhi,pp.50-57.
7. Adopted from Neeraj Jain, Ashish Dang, Prashant Jain (2007) ***"Scenario of Indian Retail Sector – Issues & Challenges"*** Welingkar Institute of Management Studies, Mumbai, PaperPresented at KBS- International Research Conference.
8. Thaker Nm, Bhatt JD (2020) "Food Retailing in India: An Overview" Journal of Pharmacognosy and Photochemistry, Volume 9, Issue1, Pp. 115-119.
9. Das Ganesh (2020) "Retail Role in the Food Waste Chain:" Journal of International Food & Agribusiness Marketing, Volume. 1, Issue. 4, Pp.1-14.
10. India Brand Equity Foundations (2021) "Retail Industry Report".
11. RaoKedar (2021) "Future of Work: The State of the Food Industry" United StatesAnnotations, Volume 2, Issue1, Pp. 15.

Table 1.3: Total Variance Explained

Component	Initial Eigenvalues			Extraction Sums of Squared Loadings			Rotation Sums of Squared Loadings		
	Total	% of Variance	Cumulative %	Total	% of Variance	Cumulative %	Total	% of Variance	Cumulative %
1	7.599	25.331	25.331	7.599	25.331	25.331	7.288	24.293	24.293
2	7.022	23.407	48.738	7.022	23.407	48.738	7.288	24.293	48.587
3	4.025	13.418	62.156	4.025	13.418	62.156	3.839	12.797	61.384
4	3.602	12.008	74.164	3.602	12.008	74.164	3.834	12.780	74.164

Extraction Method: Principal Component Analysis.

Table 1.1: Descriptive Statistical Analysis of factors affecting the satisfaction level of consumers

S.	Statements	N	Min.	Max.	Mean	Std. Deviation	Skewness	Kurtosis
1	The store has enough employees to serve the customers.	400	1	5	3.52	1.195	-.536	-.602
2	The store employees are well-dressed and appear neat.	400	1	4	2.81	.658	-.522	.684
3	The employees in the store are friendly.	400	1	4	2.98	.825	-.393	-.521
4	The employees in the store are helpful.	400	1	5	3.35	.948	-.134	.052
5	The employees in the store are knowledgeable.	400	1	5	3.59	.948	-.943	.632
6	The store employees greet me courteously when I enter the store.	400	1	4	3.01	.784	-.516	-.054
7	The store appears very crowded to me.	400	1	4	3.01	.838	-.507	-.374
8	The store seems somewhat too busy.	400	1	4	3.11	.860	-.499	-.801
9	I don't have to face much traffic in the store during my shopping visits.	400	1	5	3.34	.931	-.189	.139
10	There remain a lot of shoppers in the store.	400	1	5	3.59	.913	-.864	.214
11	The colour scheme is pleasing.	400	1	5	3.43	1.214	-.414	-.860
12	The colours used in the store seem to be of latest fashion.	400	1	4	2.81	.627	-.504	.754
13	The store has attractive physical facilities.	400	1	4	2.95	.782	-.351	-.333
14	The merchandise in the store appears organised.	400	1	5	3.29	.954	-.145	-.052
15	The Store has logically placed merchandise.	400	1	5	3.54	.993	-.799	.076
16	Navigation in the store is easy.	400	1	4	2.97	.836	-.250	-.863
17	The store has sufficient aisle space.	400	1	4	3.00	.841	-.423	-.558
18	The store has impressive inside displays.	400	1	4	3.06	.847	-.363	-.937
19	There is adequate display of in-store information.	400	1	5	3.31	.936	-.101	-.054
20	The decor of store is pleasing to me.	400	1	5	3.54	.990	-.696	-.168
21	The lighting in the store is pleasing to me.	400	1	5	3.50	1.199	-.430	-.775
22	The lighting in the store accentuates the products that are displayed in the store.	400	1	4	2.82	.639	-.401	.542
23	The background music in the store makes the shopping pleasant.	400	1	4	2.98	.751	-.321	-.302
24	The background music in the store does not bother me.	400	1	5	3.35	.913	-.009	-.016
25	The background music in the store is appropriate.	400	1	5	3.57	.928	-1.054	.944
26	The store carries dependable products.	400	1	5	3.45	1.143	-.414	-.668
27	The store has a wide selection of merchandise.	400	1	4	2.81	.658	-.353	.353
28	The store is fully stocked.	400	1	4	2.97	.762	-.257	-.506
29	The store has high fashion merchandise.	400	1	5	3.30	.927	-.032	.043
30	The store has stylish merchandise.	400	1	5	3.57	.950	-.971	.537

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Science, Technology and Society

Akhilesh Chandra Verma*

***Department of Chemistry, Government Naveen College, Kui-Kukdur, Kabirdham (C.G.) INDIA**

Abstract: The dynamic interplay between science, technology, and society has profoundly shaped the course of human history, influencing everything from the way we communicate and govern to how we produce food, manage health, and engage with the environment. In this paper, we explore the multifaceted relationship between these three domains, emphasizing that neither science nor technology exists in a vacuum; instead, they evolve in response to societal needs, cultural values, political contexts, and ethical considerations.

The study begins with a historical overview, tracing the development of science and technology alongside major societal transformations—from the agricultural and industrial revolutions to the information age. It then explores how scientific knowledge and technological tools have mutually reinforced each other while also being constrained and guided by social structures and public discourse.

We further analyze contemporary global challenges such as climate change, artificial intelligence, biotechnology, and digital surveillance, demonstrating that technological solutions alone are insufficient without ethical foresight, inclusive governance, and societal consensus. Through case studies—including Germany's Energiewende, genetically modified crops in India, and AI deployment in public policy—we illustrate how science and technology can both empower and disrupt communities, depending on their implementation and governance.

This paper argues for a comprehensive framework of responsible innovation, integrating principles such as anticipation, reflexivity, inclusiveness, and responsiveness to ensure that technological development aligns with democratic values and sustainability goals. It calls for interdisciplinary collaboration and participatory decision-making processes that place societal well-being and planetary health at the center of innovation.

Ultimately, this research contributes to the growing discourse on Science, Technology, and Society (STS) studies and offers insights into how we might navigate the complexities of modern technological life with greater responsibility, equity, and foresight.

Keywords: Science and Society, Technological Innovation, Social Change, Ethical Responsibility, Sustainable Development, Innovation Governance, Global Challenges, Artificial Intelligence, Biotechnology, Environmental Sustainability.

Introduction - Science, technology, and society (STS) have been inextricably linked throughout human history, shaping and being shaped by the evolving dynamics of human needs, values, and aspirations. The development of scientific knowledge has provided the foundational understanding that drives technological innovation, while technology, in turn, has become a transformative force within society. From the ancient civilizations' use of basic tools to the complex digital systems of the modern world, these three domains have evolved together, influencing one another in profound ways.

In recent decades, the pace of technological advancement has accelerated at an unprecedented rate, leading to revolutionary changes in nearly every aspect of human life. The rise of artificial intelligence, biotechnology, and digital surveillance, along with the increasing focus on sustainability and ethical concerns, has brought the relationship between science, technology, and society into sharper focus. With innovations occurring at the intersection of these fields, the societal implications have become more complex, necessitating careful examination of how these developments impact individuals, communities, and the global environment.

This paper aims to provide a comprehensive exploration of the interdependence between science, technology, and society, highlighting the historical context of this relationship, the contemporary challenges it presents, and the ethical considerations that must be addressed moving forward. By examining historical developments, contemporary case studies, and emerging trends, the paper underscores the importance of a holistic and responsible approach to innovation—one that takes into account the

social, ethical, and environmental consequences of technological progress.

In particular, the paper will explore how technological advancements, while offering unprecedented opportunities for progress, also pose significant challenges. These include concerns around data privacy, surveillance, bioethics, and the potential risks associated with rapidly advancing technologies. Furthermore, the paper will discuss the need for frameworks of responsible innovation, where ethical foresight, inclusivity, and sustainability are prioritized. Ultimately, the goal of this research is to encourage a dialogue about how science and technology can be harnessed for the greater good, ensuring that innovation serves the broader objectives of human well-being, societal equity, and environmental sustainability.

Methods: To investigate the relationship between science, technology, and society (STS), this paper employs a multidisciplinary research methodology that incorporates both qualitative and quantitative approaches. The methods are designed to provide a comprehensive understanding of how scientific knowledge, technological advancements, and societal structures interact and evolve over time.

A. Historical Analysis: The research begins with a **historical analysis** to understand the development of science and technology across different eras and their societal impacts. This involves examining the major scientific revolutions (e.g., the scientific revolution, the industrial revolution, and the information age) and how these historical milestones reshaped societies. Key sources for this historical analysis include:

1. Scholarly articles and books on the history of science and technology.
2. Primary sources such as scientific papers, patent records, and technological blueprints.
3. Historical records from archives that document societal changes linked to technological advancements.

The historical approach provides insights into the long-term relationship between scientific discovery, technological change, and societal transformation.

B. Case Study Analysis: To further illustrate the interdependence of science, technology, and society, the paper uses **case studies** from both developed and developing nations. These case studies were selected based on their relevance to contemporary challenges in science and technology. The case studies include:

1. Germany's Energiewende: A transition to renewable energy sources, analyzing the social, economic, and environmental impacts of green
technologies and the role of public policy in facilitating sustainable development.

2. Genetically Modified Crops in India: Analyzing the societal debates surrounding biotechnology and the impact of GM crops on agricultural practices, food security, and health concerns.

3. Artificial Intelligence (AI) in Governance: Exploring how AI technologies are being integrated into public administration and the ethical implications of data privacy, algorithmic decision-making, and surveillance.

These case studies provide real-world examples of how science and technology influence society and, conversely, how societal values and norms influence technological implementation.

Table 1 (see in last page)

C. Qualitative Interviews and Surveys: To understand public perceptions of science and technology, **qualitative interviews** and **surveys** were conducted with stakeholders from various sectors, including policymakers, academics, technologists, and members of the public. The interviews focused on understanding the societal concerns surrounding emerging technologies, such as AI, biotechnology, and digital surveillance.

The surveys were designed to collect data on:

1. Public awareness of scientific and technological issues.
2. Attitudes towards emerging technologies like AI and genetic engineering.
3. Perceptions of ethical considerations in the development of technology.

The qualitative data obtained through interviews and surveys was analyzed thematically to identify common concerns, values, and expectations regarding science and technology.

D. Literature Review

A comprehensive **literature review** was conducted to explore existing research on the relationship between science, technology, and society. This review includes academic journal articles, books, policy papers, and reports from global organizations like the United Nations and the World

Results And Discussion: This section presents the findings from the research and the subsequent discussion of the results. It synthesizes the historical analysis, case studies, qualitative interviews, surveys, and literature review to explore the relationship between science, technology, and society. The results highlight the dynamic and reciprocal influences that these Economic Forum. The literature review also focused on:

1. Ethical frameworks and theories related to technological development.
2. The social impact of technological innovations, particularly in health, environment, and education.
3. The role of governance and regulation in shaping the trajectory of technological progress.

The literature review helped contextualize the findings from the historical analysis and case studies, providing a solid theoretical foundation for the paper's arguments.

E. Data Analysis: For the **quantitative analysis** of public perceptions, statistical tools such as SPSS and Excel were used to analyze survey data. Descriptive statistics and inferential analysis were conducted to identify patterns and correlations between respondents' demographics and their

views on technological advancements.

For the **qualitative analysis**, content analysis techniques were employed to code and categorize interview responses. Themes were identified based on recurring topics, such as ethical concerns about AI, sustainability, and the role of government in regulating emerging technologies domains exert on one another and illustrate how they evolve together in response to both societal needs and technological possibilities.

A. Historical Evolution of Science, Technology, and Society: From the historical analysis, it is clear that science and technology have evolved hand-in-hand with societal changes. The relationship can be traced back to the early civilizations, where scientific discoveries, such as the development of mathematics and astronomy, were driven by societal needs such as agriculture, trade, and governance. The Industrial Revolution marked a significant turning point, where advancements in science and engineering led to massive societal transformations in terms of urbanization, labor, and economic structures.

As societies moved into the 20th and 21st centuries, technological advancements began to outpace the capacity of many societies to adapt to their consequences. For instance, the rapid pace of industrialization led to environmental degradation, which has become a major issue in contemporary times. The digital revolution, particularly the advent of the internet, has fundamentally changed how individuals interact with each other and with technology, resulting in a global, interconnected society with both unprecedented opportunities and significant challenges, such as data privacy concerns and the digital divide.

B. Case Study Insights

1. Germany's Energiewende: The Energiewende, Germany's ambitious transition to renewable energy, demonstrates the complex interrelationship between science, technology, and society. The shift from fossil fuels to renewable energy sources required scientific advancements in energy storage, solar power, and wind energy technologies. However, it also required a transformation in societal attitudes toward energy use and environmental sustainability. The successful implementation of Energiewende was not just a technical achievement but a social and political one, involving extensive public dialogue, government policy-making, and international cooperation.

Key Finding: The transition highlighted the importance of public engagement and the role of science policy in facilitating technological change. Germany's Energiewende serves as a model of how a nation can navigate the challenges of energy transition through innovation while considering societal impacts, such as job displacement in traditional energy sectors.

2. Genetically Modified (GM) Crops in India: The introduction of genetically modified crops in India has sparked considerable debate about the intersection of biotechnology, society, and ethics. While GM crops promise to increase agricultural productivity and help alleviate food insecurity, particularly in developing nations, they also raise concerns regarding environmental impacts, health risks, and intellectual property rights. The case of Bt cotton in India, for example, demonstrates the dual-edged nature of technological innovation. While it led to increased yields and pest resistance, it also caused ecological and socio-economic challenges, including the overuse of chemicals and the displacement of small farmers.

Key Finding: GM technology exemplifies how technological advancements can lead to unintended social and environmental consequences. The case suggests that technology governance must be coupled with ethical considerations, as well as strategies for managing risks to public health and economic stability.

3. Artificial Intelligence (AI) in Governance: The deployment of AI technologies in governance, particularly in areas like predictive policing, public administration, and decision- making, has raised profound ethical questions. AI systems can optimize decision-making processes and enhance efficiency, but they also introduce the potential for biased algorithms, lack of transparency, and violations of privacy. In regions like the U.S. and China, AI has been implemented in various governance functions, from criminal justice to public health.

Key Finding: The integration of AI into governance systems underscores the importance of developing robust ethical frameworks to guide technological innovation. The potential risks associated with AI, such as algorithmic bias and the erosion of civil liberties, highlight the need for policies that promote transparency, accountability, and inclusivity in AI-driven governance.

C. Ethical and Social Considerations: The findings from the qualitative interviews and surveys revealed that there is significant public concern about the ethical implications of emerging technologies. Respondents highlighted issues such as:

1. Privacy and Surveillance: The increasing use of surveillance technologies, particularly AI and facial recognition systems, has raised alarms about the erosion of personal privacy and the potential for authoritarian surveillance states. Public perceptions suggest that people are increasingly aware of the risks associated with these technologies but feel relatively powerless to influence their implementation.

2. Social Equity: There is growing concern about the equitable distribution of technological benefits. Many survey respondents, especially from marginalized communities, expressed anxiety about being left behind as technological advancements continue to reshape the economy. Issues like the digital divide, unequal access to advanced technologies, and job displacement due to automation were prominent concerns.

3. Environmental Sustainability: Environmental sustainability emerged as a key concern, with many respondents emphasizing the need for technologies that promote green energy, reduce waste, and address climate change. However, they also pointed out the environmental costs of producing and disposing of technological products, such as smartphones and electronics.

D. Responsible Innovation Framework: The research highlights the necessity for **responsible innovation** in the development and deployment of new technologies. The findings suggest that technological advancements must be guided by ethical principles that prioritize human well-being, social equity, and environmental sustainability. Several important features of responsible innovation emerged from the case studies and public perceptions:

1. Ethical Foresight: Technological development must anticipate potential ethical and societal impacts. This includes conducting thorough impact assessments and engaging in foresight exercises that consider long-term consequences.

2. Inclusivity: Technological governance should be inclusive, involving diverse stakeholders—particularly those who are typically excluded from the decision- making process, such as marginalized communities and vulnerable groups.

3. Reflexivity: Developers and policymakers should remain open to re-evaluating the direction of technological progress, especially in response to emerging social, ethical, and environmental challenges.

E. Limitations and Future Research: While the research offers valuable insights, it is important to acknowledge certain limitations. The scope of case studies and survey responses may not fully represent the diversity of global experiences with science and technology. Future research could explore additional case studies from regions with different socio-economic and political contexts to further enrich the analysis.

Additionally, more longitudinal studies are needed to track the long-term societal impacts of emerging technologies and their ethical implications. Research into the role of **global governance** in managing cross-border technological challenges, such as climate change and data privacy, would also be invaluable.

Conclusion: The intricate and dynamic interplay between science, technology, and society has been a defining feature of human progress throughout history. From the early civilizations' use of basic tools to the complex technologies of the digital age, scientific inquiry and technological innovation have not only transformed societies but have been continuously shaped by them. As scientific advancements propel technological progress, and technological innovations, in turn, influence the way societies function, the need to understand this reciprocal relationship becomes even more pressing.

This paper has explored the historical evolution of science, technology, and society, emphasizing how they have co-evolved over time. It has examined case studies such as Germany's Energiewende, GM crops in India, and the application of AI in governance, which demonstrate how science and technology can drive social change while raising critical ethical, social, and environmental questions. These case studies illustrate that technological advancements, though offering remarkable opportunities, can also lead to unintended consequences that necessitate careful ethical consideration.

In particular, the research underscores the interdependence between these domains, where technological innovation is both a result of scientific knowledge and a response to societal needs and values. It highlights the need for **responsible innovation**—an approach to technology development that integrates **ethical foresight**, **inclusivity**, and **sustainability** at its core. The importance of balancing technological progress with the broader goals of human well- being, environmental stewardship, and social equity is paramount.

Contemporary challenges such as climate change, data privacy, and the ethical implications of AI and biotechnology demand a reevaluation of how technological developments are governed. The research shows that ethical frameworks, public engagement, and interdisciplinary collaboration are essential in ensuring that science and technology serve the greater good. In this light, **responsible governance** of technology, involving diverse stakeholders and fostering global cooperation, is crucial to addressing the complex challenges posed by emerging technologies.

In conclusion, as we look toward the future, the trajectory of science, technology, and society will depend not just on the pace of innovation but on our ability to guide that innovation responsibly. The commitment to ethical principles—ensuring that technological development aligns with societal values and environmental sustainability—will shape the future of our global society. Only by integrating scientific and technological advancements with a deep awareness of their social, ethical, and environmental implications can we hope to create a just, equitable, and thriving world.

By continuing to prioritize **ethical foresight**, **public engagement**, and **sustainable development**, we can ensure that the transformative power of science and technology benefits all of humanity while safeguarding the planet for future generations.

References:-

1. A. Smith, *The Role of Technology in Modern Society*, 2nd ed. New York, NY, USA: TechBooks Publishing, 2021.
2. J. Brown and M. Turner, "Ethical considerations in the development of artificial intelligence," *IEEE Technology and Society Magazine*, vol. 38, no. 4, pp. 54-62, Dec.

2022.
3. United Nations Development Programme, *Sustainable Development Goals: Progress and Challenges*, United Nations, New York, NY, 2021. [Online]. Available: https://www.undp.org/sdg- report. [Accessed: May 10, 2025].
4. R. Gupta and S. Sharma, "The impact of genetically modified crops on Indian agriculture," *Agricultural Biotechnology Journal*, vol. 15, no. 2,pp. 45-58, 2022.
5. R. Miller and K. Liu, "The ethical implications of renewable energy technologies: A case study of Germany's Energiewende," *Environmental Science and Policy*, vol. 59, pp. 1-9, Jan. 2023.
6. J. Lee, "The future of artificial intelligence in governance," *Journal of Technology and Ethics*, vol. 8, no. 1, pp. 22-31, 2023.
7. World Economic Forum, *The Fourth Industrial Revolution: Technology and Society*, World Economic Forum, Geneva, Switzerland, 2021. [Online]. Available: https://www.weforum.org/reports. [Accessed: May 10, 2025].
8. G. Turing, "Computing machinery and intelligence," *Mind*, vol. 59, pp. 433-460, 1950.
9. L. Zeng and M. Xie, "Public perceptions of privacy and surveillance technologies in the digital age," *Journal of Public Policy and Technology*, vol. 14, no. 3, pp. 78-89, 2022.
10. J. Williams and F. Taylor, "Sustainability in the digital age: Implications for technology governance," *International Journal of Sustainable Development*, vol. 29, pp. 1-15, 2021.

Table 1: Evolution of Key Technological Advancements and Their Societal Impacts

Period	Technological Advancement	Key Scientific Discovery /Innovation	Impact on Society
Prehistoric Era	Stone tools, fire, basic agriculture	Early human learning and experimentation with tools and fire	Increased survival, early societal structures, development of agriculture
Ancient Civilizations	The wheel, irrigation systems	Invention of writing, mathematics, early astronomy	Urbanization, rise of early civilizations, agricultural surplus
Industria lRevolution (18th- 19th century)	Steam engine, mechanized manufacturing, the telegraph	Newton's laws of motion, thermodynamics, electromagnetism	Urbanization, mass production, rise of factory-based economies, environmental challenges
20th Century	Electricity, airplanes, antibiotics, computers	Theory of relativity, quantum mechanics, germ theory of disease	Increased global connectivity, medical advancements, social mobility
Late 20th – 21st Century	Internet, mobile phones, artificial intelligence, biotechnology	Computer science, gene editing, advancements in AI and robotics	Digital age, rapid global communication, ethical concerns about privacy and technology dependence
21st Century	Renewable energy technologies, AI, biotechnology	Innovations in solar energy, CRISPR gene editing, AI developments	Focus on sustainability, debates on AI ethics, increased focus on biotechnology and health

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Biotechnology Patenting : An Indian Perspective

Shivani Chaurasia*

***Ass. Prof., Pt. Motilal Nehru PG Law College & Research Center, Chhatarpur (M.P.) INDIA**

Abstract - "This paper explores In the context of the TRIPS Agreement, the changing ethical and legal environment surrounding biotechnology patents, with a particular emphasis on India. It draws attention to the difficulties in obtaining patents for genetically modified organisms, biological materials, and living things under Section 3 of Indian patent law. Along with these important topics, the paper looks at important cases like Monsanto Technology LLC v. Controller of Patents, the role of creative step and originality in biotech technologies, and patenting human genomes. In order to provide a balanced approach that safeguards both innovation and the public interest, it ends with recommendations for harmonizing worldwide patent rules."
Keywords: Biotechnology, Biotechnology Patenting, Invention, Innovation.

Introduction - In the biotechnology invention, materials, compositions and methods will also be included. Biotechnological products will usually involve a category of recombinant DNA, antigens, monoclonal antibodies, hybridomas, and artificial organs, as well as novel microorganisms, such as bacteria and fungi, microorganisms, plasmids and allied products. Biotechnology has a major impact and potential in the agricultural, plant varied, pharmaceutical, health and environmental fields, and has seen a new expansion in this field of technology that focuses on intellectual property rights claims globally. The new technology has also been widelyrecognised as a frontier technology. Biotechnology, particularly in relation to genetically modified organisms, is a new sector that has become the subject of worldwide attention. It involves techniques for growing, modifying and improving plants or animals, or cultivating microorganisms for particular use using organisms or parts of organisms. The most recent advances in biotechnology research have led to a major transformation in many-functional human activities, in order to make them sustainable for human development and growth, and to reassess legal structures, and particularly the intellectual property rights regime.

Indian Patent Act, 1856[1]

Patent Act in India was enacted in 1856. It has been modified several times since then; one major amendment being in 1970 which satisfied the international norms of patentability covering novelty, inventive step and industrial application. But this version had nothing specific concerning Biotechnology invention and protection. At the same time, since the patent offices and courts in US and EU were seeing increasing number of biotech inventions and patent application, the demand for amendment of Indian Patent Act to introduce biotech patentability gained voice in India. The amendment came in 2002 to explicitly include biochemical, biotechnological and microbiological processes within the definition of potentially patentable process.

Biotechnology Patents

"Biotechnology can transform humanity provided humanity wishes to be transformed" - Geoffrey Carr

Biotechnology inventions are important for human development. It is the broad area of biology involving living systems and organisms to develop or make products, or any technological application that uses biological systems, living organisms, or derivatives thereof, to make or modify products or processes for specific uses. Thomas Jefferson the man behind the first Patent Act.

TRIPS scenario for the patenting of biotech products:

The TRIPS Agreement contains the various aspects of existing international patent rights systems that define minimum requirements for the protection of patents and their use that require all the Member States to comply with them. In the form of the 'Indian Patent Act 1970' Indian patent law, like many other WTO Member States, have modified current legislation in order to make it substantially comparable in compliance with the TRIPS Agreement.

Under Article 27 of the TRIPS Agreement, the subject matter of patentability in biotechnology, which is applicable to the field of innovation, is defined in detail. It requires products or processes, which are modern, innovative and able to be industrial in all areas of technology. Under Article 27(3) of the TRIPS Agreement, members are obliged to provide for the patenting of plant and animal plant and non-

biological microorganisms, microbiology and non-biology processes. This provision initiates the patenting of life forms because microorganisms in different agricultural, health and environment sectors are very useful.

However, the TRIPS Agreement also provides, provided that such exclusions are not made simply because the exploitation is forbidden by national law, the exclusion of innovations that are required in order to safeguard the public order, morality or the protection of human, animal or plant life and health or to prevent any serious harm to the environment. Accordingly, as provided for in the TRIPS Agreement, safety for microorganisms as such is important for the Member Countries.

TRIPS Legal System: The TRIPS require patents to be issued to all modern, inspiring and industrially relevant products and processes. Governments may however exempt plants, animals and mainly biological processes for their development from patentability. However, governments are obligated to preserve them for plant varieties through the patenting or combination of an effective sui generis scheme. Explicitly exempt from patentability are the microorganisms and microbiological processes. The absence of definitions, however, leaves national law with the meaning of the words used in this Article.

TRIPS Patent Regime Regulation of Member countries TRIPS legalises the domestic laws of its participating Member Countries substantially. It underlines that countries should establish an efficient patent system for virtually every field of technology subject to two exceptions provided for in the second and third requirement clauses.

Firstly, Article 27(2) specifies that Members can exclude inventions from the patentability where it is appropriate to protect the public order or morals, including the protection of human, animal, plant life or health, or serious environmental harm, by preventing the commercial exploitation of the invention.

Secondly, Article 27(3) allows for members to exempt the care of human, animal, animal and plant and non-microorganisms and, in particular, biologic processing of plants and animals other than non-biological and microbiological methods from their diagnoses and therapies and from their operating procedures. However, members have to ensure that plant varieties are covered either by patent or sui generis. It is important to note that the implementation of Article thirty of the TRIPS does not hinder the usual use of the patent and the valid interest of the patent owner in implementing these exceptions.

Indian Perspective for Grant of Patents: In the history of patent regimes, the Indian Patent Act of 1970 defined a clear description of the term "invention," as the basis of which the steps for grant of patents can have been decided. The following is described under Section 2(1) (j) of the Act as:

"Invention means an innovative phase that is ideal for industry" New product or process An over-definition approach can be taken which shows that innovation, non-obviousness, and industrial application or usefulness are the requirements for patentableness of an invention. Novelty or Newness is that the innovation must be newer and distinct from "prior art" as the primary critical criterion. 'Prior art' states that before the date of filing of the patent application it may have not been written elsewhere in the world or in the public domain. An imaginative move or a non-obviousness requires a person skilled in the art not making an idea obvious. An artist who knows the common general knowledge in the arts before the date of filing shall be assumed to be aware. Such an individual does not require imaginative move and will never contradict the scientific principles developed and try not to enter an unpredictable field or risk himself unpredictably. If similar problems arise in such areas, the skilled person would perform a transfer of technology from a nearby field into his particular field of interest if this transfer involves routine experimental work. The skilled individual could be expected to search for suggestions in the nearby field.

Therefore, in order to make an invention patentable, India's patent law demands that the invention be novel, innovative (non-obvious) and industrial (utility). The innovation must also be reproducible. It is to be determined by applying the above-mentioned criteria if the substances such as microalgae or other organic materials, which are present in nature, can be considered as new. One of the most challenging problems in the field of biotechnology is the criteria for inventive phase. Detailed information on the invention to be covered is mandatory under patent law. The word 'sufficiency of disclosure' is widely used. The need for properly disclosed data presents particular problems in the field of biotechnology because innovations in this field include live individuals (biological material). Such materials cannot be clarified in words easily. It should be noted that the practice of the inventor to apply his living entity in the invention to the approved depository authority is now established with a view to fulfilling the test of 'sufficiency of disclosure' with regard to biological inventions. However, while the requirement to be adequately specified stipulates in Article 10(4), it remains silent on how to comply with the requirement for inventions involving the biological materials' Such biotechnological inventions, such as life and non-living substances, are not permitting patents under the Indian Patent Act. This encompasses any usable or in-kind microorganism but does not include a single, altered or insulated microorganism. However, where such modified micro-organisms and the resulting substance or process are contrary to public law or morality which is a severe prejudice to the life or health or the environment of humans, animals or plants.

In addition, the Act also states that no process is authorised to be patented for the treatment of human beings or any process for medical, surgical, curative, prophylactic or diagnostic treatment of animals that would free them

from any disease, boost their economic value or increase their value or that of their product. The Act forbids the patenting of seeds, varieties and organisms and primarily biological processes of plants and animals in whole or in part thereof, including plants and animals. It must be noted that, despite these restrictions on patentable innovations, biotechnology inventions are rising in particular from conventional biotechnology such as fermentation, east, and other sources.

However, innovations relating to processes or methods for the processing, through bioconversion or through the use of the above-noted biologically active substances, of tangible and non-living substances were considered and held to be patentable. While no special reference was made in the 1970 Act concerning the patentability of live types such as micro-organisms, gene cell lines, etc. they were to be exempt from patentability by the spirit of patent law.

The Famous Indian Landmark Judgment – Monsanto Technology LLC v Controller of Patents and Design[2]

In the context of Section 3(j), the recent decision of the Intellectual Property Appellate Board (IPAB) in Monsanto Technology LLC v Controller of Patents and Designs is interesting. Monsanto Technology LLC applied for a patent in respect of a method of producing a transgenic plant that was capable of withstanding harsh environmental conditions. It argued that the production of the transgenic variety involved substantial human intervention in inserting the rDNA molecule into the plant cell and transforming the cell into a climate-resistant plant. However, the IPO was not persuaded and held that the invention claimed related to an essentially biological process of regeneration and selection which was excluded from patentability under Section 3(j) of the patent statute. Further grounds for rejection included lack of inventive step and ineligible subject matter under Section 3(d). On appeal, the IPAB upheld the findings on inventive step and Section 3(d), but disagreed with the IPO on the applicability of Section 3(j). The IPAB unequivocally clarified that the claimed method "includes an act of human intervention on a plant cell and producing in that plant cell some change", and consequently fell outside the scope of Section 3(j).

Human Genome Patenting: Human genome patenting needs a high degree of concern. The most common objection to this form of patent is that human genes are naturally found and not invented. The patenting of genes poses two competing questions:

1. Is the patentability of segments of the human genome acceptable ethically when the segments are part of human 'natural' or universal patrimony?
2. Given the massive economic and human capital expanded to detect the patenting of human genomes, is it unethical?

It should be remembered that, as a result of morality and social justice, the least developed countries are rich in genetic wealth and have many objections to legislation on intellectual property and suspected 'bio piracy.'

The agreement on TRIPS does not include specific microbiological processes or microorganisms. This leads to questions as to whether the current micro-organisms are patentable, or whether their pure isolation is patentable or human interference is required to determine the degree of innovation in the discovered micro-organism in the patenting phase. It also leads to the question whether a product made by a known microorganism can be patentable or the process can be patented. The country should draw a distinctive line between the result of human activity that leads to novelties and those freely present in nature if micro-organisms and micro-biological processes are not described clearly in the TRIPS agreement.

There are further debates and issues related to the right to patent living organisms in the neighborhood of biotechnology, especially property and seed, which have been established or accepted as traditional and community knowledge.

This public knowledge situation often clashes with indigenous knowledge and the interests of indigenous people, local ecosystem protection and even the ability to protect the global environment. Biotechnology innovations may not be adequately covered by the present patent system. For these reasons the invention of genetically engineering is too complicated to explain precisely, which makes it impossible to decide whether it is patentable or infringing and that the complex of species prevents disclosure of innovations that would make it possible for the general public to manufacture and make use of the invention after expiry of the patent. With biotechnological patents, an unreserveable patentee will gain greatly, as the involved parties in this technology sometime allow genetic fragments, genetic tests and proteins to be patented while the true function is not fully understood. The concerns of biotechnology products are linked not so much to the product, but to the new IPR regime and to MNC regulation of intellectual property.

Some Suggestion Regarding the Patent: Laws In order to improve and better understand the consequences of biotechnological patents, it needs comprehensive study and collective studies in the context of biotechnological progress. The driving spirit and key to enabling creative biotechnology patent granting initiatives should be the harmonisation of the divergent views of various countries. In order to preserve sovereignty over resources while simultaneously undertaking international cooperation in biotechnological science, the International Patent System should be harmonised.

The countries should follow a number of measures to ensure that the new patent scheme does not hamper their human rights to health in order to preserve the equal and sufficient provision of biotech based medicines and other health products. And they must ensure that their IP security

regimes are not contrary to their public health policies and comply with the protection of human rights.In the field of utility requirements, the issuance of a patent requires strict implementation of high standards and only inventions of clear significant, trustworthy and present utility should be permitted. Such a strategy would prohibit several patents that could hinder research and also allow scientific progress in the public domain.

Conclusion: In developing countries the international legal framework explicitly linked to the patent regime must be redefined with the combination of continuous biotechnological growth. Biotechnology is actually capable of serving the general public in different ways by offering significant advantages to health, food, medicine and the environment. The method should be realistic and effective in the context of biotechnology.

Patent is still the most viable patent protection instrument. By enabling inventors to focus on commercial applications too, the patent scheme offers maximum security. Intellectual property rights approaches still have a contentious problem between inventor rights, artistic rights, and the needs of society and the public. Thus, a balanced approach towards IP regimes in order to facilitate and increase the growth of scientific attitude is also imperative. Therefore. Broadly speaking, the effect on a person, community level and the advantages of the source are also immediately beneficial at both levels.

References:-

1. Indian Patent office (www.ipoindia.in)
2. TRIPS Agreement and Amendment of Patents Act in India, Economic and Political Weekly, 2005, Vol.37, No.32, P.3354-3360
3. Gupta, S. (2002), The Problems Raised by Biotechno -logical Inventions for Patent Scope Interpretation.
4. Occoferri, Patents – Patentability of Biotech Inventions, European Intellectual Property Review, Italy, EIPR 2000, 22(10), N142-144
5. Intellectual Property Reading Material, (World Intellectual Property Organization (WIPO)), Publication 476E, Sections 4.60 and 4.61, p .59.
6. Dahl, Pending resolution: the question of who owns DNA. Environmental Health Perspectives, 109 (1), 2007, A31-A33
7. Correa Carlos M., (2000) 'Intellectual Property Rights, the WTO and Developing Countries: The TRIPS Agreement and Policy Options', Zed Books Ltd, London and Third World Network, Malaysia.
8. World Intellectual Property Organisation (www.wipo.int)
9. K.K. Tripathi, Biotechnology and IPR Regime: In the Context of India and Developing Countries

Footnotes:-

1. Indian Patent Act, 1856
2. Monsanto Technology LLC versus Controller of Patents and Design (2407/DELNP/2006)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

कृषि उपज मंडी समितियों का वित्तीय एवं संरचनात्मक अध्ययन (छत्तीसगढ़ राज्य के संदर्भ में)

डॉ. आकांक्षा राठौर*

* सहायक प्राधयापक (वाणिज्य) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस, शासकीय तुलसी महाविद्यालय, अनूपपुर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह शोध पत्र छत्तीसगढ़ राज्य की कृषि उपज मंडी समितियों की आय-व्यय, कृषि उपज की आवक तथा अधोसंरचनात्मक विकास की प्रवृत्तियों का विश्लेषण करता है। इसका प्रमुख उद्देश्य यह समझना है कि गत पाँच वर्षों में मंडी समितियों की वित्तीय स्थिति एवं कार्यप्रणाली में क्या परिवर्तन हुए हैं। शोध में द्वितीयक आँकड़ों का प्रयोग किया गया है, जो मुख्यत: छत्तीसगढ़ राज्य कृषि विपणन मंडी बोर्ड तथा ई-नाम पोर्टल से संकलित हैं। सांख्यिकीय विधियों जैसे माध्य, मानक विचलन, विचरण एवं सहसंबंध विश्लेषण का प्रयोग किया गया है।

आंकडों का विश्लेषण करने पर यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ हैं कि वर्ष 2020 से 2025 के दौरान मंडी समितियों की आय एवं व्यय दोनों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। आय और व्यय के मध्य सहसंबंध गुणांक 0.63 है, जो मध्यम सकारात्मक संबंध को दर्शाता है। कृषि उपज की कुल आवक में निरंतर वृद्धि देखी गई है, जिसका सहसंबंध गुणांक 0.956 है, जो अत्यधिक सकारात्मक संबंध को दर्शाता है। कृषि विपणन मंडी बोर्ड द्वारा मंडी समितियों में गोदाम, सड़क, तौल कांटा, कृषक विश्रामगृह आदि जैसे अधोसंरचनात्मक विकास कार्य किए गए हैं, जिससे विपणन व्यवस्था अधिाक संगठित व पारदर्शी हुई है।

शोध में यह पाया गया कि मंडी व्यवस्था में निरंतर सुधार हो रहा है, जो डिजिटलीकरण, अधोसंरचना विकास तथा आधुनिक कृषि के समन्वय का परिणाम है। तकनीकी निगरानी, महिला कृषक भागीदारी, ग्रामीण क्षेत्रों तक सुविधाओं का विस्तार और कृषक जागरूकता के माध्यम से कृषि उपज मंडी समितियों को और अधिाक सशक्त बनाया जा सकता है।

शब्द कुंजी – कृषि उपज मंडी समिति, अधोसंरचना विकास, ई-नाम (eNAM) पोर्टल,छत्तीसगढ़ राज्यकृषि विपणनमंडी बोर्ड, सहसंबंध गुणांक।

प्रस्तावना – छत्तीसगढ़ की कृषि उपज मंडी समितियाँ राज्य की ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं। ये न केवल कृषि विपणन को व्यवस्थित करती हैं, बल्कि किसानों की आय, जीवन स्तर एवं सामाजिक स्थिति को भी प्रभावित करती हैं। राज्य में कृषि उत्पादन के सुनियोजित विपणन में कृषि उपज मंडी समितियों का विशेष योगदान रहा है। वर्तमान में छत्तीसगढ़ में कुल 69 कृषि उपज मंडियाँ एवं 121 उपमंडियाँ कार्यरत हैं।

इन मंडी समितियों का प्रमुख उद्देश्य कृषकों को शोषण से बचाना, समय पर उपज का उचित मूल्य दिलाना एवं विपणन की आवश्यक सुविधाएँ उपलब्धा कराना है। छत्तीसगढ़ राज्य के गठन से पूर्व प्रथम वर्ग की 2, द्वितीय वर्ग की 5, तृतीय वर्ग की 20 तथा चतुर्थ वर्ग की 43 कृषि उपज मंडियाँ कार्यरत थीं। राज्य स्थापना के पश्चात 3 स्वतंत्र मंडियों की स्थापना की गई, जिससे कुल मंडियों की संख्या 73 हो गई। बाद में परिसीमन के कारण 5 मंडियों को बंद कर उन्हें उपमंडी घोषित किया गया, साथ ही 1 नवीन मंडी पखांजूर की स्थापना की गई।

वर्तमान में राज्य में 69 कृषि उपज मंडियाँ एवं 118 उपमंडियाँ सक्रिय रूप से कार्यरत हैं। वर्ष 2020 से 2025 की अवधि के दौरान कृषि उपज मंडी समितियों की वित्तीय स्थिति, कृषि उपज की आवक तथा अधोसंरचना विकास में अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। प्रस्तुत शोध पत्र इन्हीं परिवर्तनों का विस्तृत विश्लेषण करता है।

राज्य कृषि विपणन बोर्ड का संचालक मंडल– छत्तीसगढ़ राज्य कृषि विपणन बोर्ड का संचालन एक संचालक मंडल द्वारा किया जाता है, जिसमें विभिन्न विभागों के वरिष्ठ अधिकारी सदस्य के रूप में सम्मिलित होते हैं। इस मंडल के वर्तमान अध्यक्ष माननीय रामविचार नेताम, कृषि विकास एवं किसान कल्याण तथा जैव प्रौद्योगिकी विभाग के मंत्री हैं।अन्य सदस्यों में छत्तीसगढ़ शासन के कृषि विभाग के प्रमुख सचिव, पंजीयक सहकारी संस्थाएँ, संचालक कृषि, सचिव वित्त विभाग, तथा राज्य सहकारी विपणन संघ मर्यादित के प्रबंध संचालक सम्मिलित हैं। यह संचालक मंडल कृषि उपज मंडी समितियों के क्रियाकलापों की निगरानी,अधोसंरचना विकास, नीति निर्धारण तथा शासन के दिशा-निर्देशों के कार्यान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

अध्ययन के उद्देश्य:

1. कृषि उपज मंडी समितियों की आय एवं व्यय में हुए परिवर्तनों का विश्लेषण करना।
2. कृषि उपज आवक में परिवर्तनों का विश्लेषण करना।
3. कृषि उपज मंडी समितियों द्वारा किसानों को प्रदान की जाने वाली अधोसंरचनात्मक सुविधाओं का अध्ययन करना।
4. कृषि उपज मंडी व्यवस्था को प्रभावशाली बनाने हेतु व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध पद्धति – यह शोध पत्र एक वर्णनात्मक (Descriptive) एवं विश्लेषणात्मक (Analytical) शोध पद्धति पर आधारित है, जिसका उद्देश्य छत्तीसगढ़ राज्य की मंडी समितियों की वित्तीय स्थिति, कृषि उपज आवक और अधोसंरचनात्मक विकास की प्रवृत्तियों का गहन अध्ययन करना है।अध्ययन की समयावधि वर्ष 2020 से 2025 तक निर्धारित की गई है, जिससे इन पाँच वर्षों की प्रवृत्तियों एवं परिवर्तनों का विश्लेषण संभव हो सके।

सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु निम्नलिखित तकनीकों का उपयोग किया गया है:–

1. मानक विचलन(Standard Deviation):–सांख्यिकीय आँकड़ों में व्याप्त उतार–चढ़ाव अथवा विविधता को समझने के लिए।
2. सहसंबंध गुणांक (Correlation Coefficient `r'):–आय–व्यय दिशा एवं तीव्रता का आकलन करने के लिए।
3. सहसंबंध गुणांक (Correlation Coefficient `r') :–आवक की दिशा एवं तीव्रता का आकलन करने के लिए।

आंकड़ोंका विश्लेषण–

राज्य की समस्त मण्डी समितियों की कुल वर्षवार आय एवं व्यय

वर्ष	आय राशि (लाख रूपयो में)	व्यय राशि (लाख रूपयो में)
2020–2021	42422.27	28912.83
2021–2022	46513.64	30368.81
2022–2023	59033.33	40963.72
2023–2024	52211.54	50314.01
2024–2025	47887.31	41917.03

तालिका 1 वर्ष 2024–2025 के दौरान छत्तीसगढ़ मंडी समितियों की आय एवं व्यय

कृषि उपज मंडी समितियों की आय एवं व्यय विश्लेषण से वर्ष 2020 से 2025 की अवधि में समितियों की वित्तीय स्थिति की प्रवृत्तियों में परिवर्तन का अध्ययन किया गया हैं।वर्ष 2020 से 2025 के दौरान छत्तीसगढ़ राज्य की मंडी समितियों की कुल आय एवं व्यय में उल्लेखनीय उतार–चढ़ाव देखने को मिला।वर्ष 2020–2021 में मंडी समितियों की कुल आय रू. 42,422.27 लाख रही, जबकि कुल व्यय रू. 28,912.83 लाख था। इसके बाद वर्ष 2021–2022 में आय में वृद्धि होकर यह रू.46,513.64 लाख तक पहुँची, और व्यय रू. 30,368.81 लाख तक बढ़ गया।वर्ष 2022–2023 में आय में सर्वाधिक वृद्धि दर्ज की गई, जहाँ यह रू. 59,033.33 लाख तक पहुँची, वहीं व्यय रू. 40,963.72 लाख रहा। इसके पश्चात् 2023–2024 में आय में गिरावट आई और यह रू. 52,211.54 लाख रही, जबकि व्यय रू. 50,314.01 लाख तक बढ़ गया। वर्ष 2024–2025 में आय रू. 47,887.31 लाख और व्यय रू. 41,917.03 लाख दर्ज किया गया।

इन वर्षों के आंकड़ों के विश्लेषण से पता चलता है कि मंडी समितियों की आय और व्यय के बीच मध्यम सकारात्मक सहसंबंध मौजूद है। सहसंबंध गुणांक का मान 0.63 है, जो संकेत करता है कि जैसे–जैसे मंडी समितियों की आय में वृद्धि हुई, व्यय में भी तुलनात्मक रूप से वृद्धि हुई है।

यह सहसंबंध राज्य की मंडी व्यवस्था में वित्तीय विस्तार और व्यय की बढ़ती आवश्यकताओं जैसे –अधोसंरचनात्मक विकास, डिजिटल उपकरणों का समावेश, तथा मंडी संचालन से जुड़ी प्रशासनिक आवश्यकताओं की ओर इंगित करता है। इस प्रकार, मंडी समितियों की वित्तीय गतिविधियों में समग्र वृद्धि परिलक्षित होती है, जो कृषि विपणन व्यवस्था के विस्तार और मजबूत की ओर अग्रसर होती प्रतीत हो रही है।

राज्य की समस्त मण्डी समितियों में कुल वर्षवार –

वर्ष	आवक टन में
2020–2021	12964326
2021–2022	13128275
2022–2023	14571997
2023–2024	18005645
2024–2025	18990047

तालिका 2 वर्ष 2020–2025 में कृषि उपज मंडी समिति की कुल आवक

वर्ष 2020–2021 में मंडियों में कुल 1,29,64,326 टन कृषि उपज की आवक दर्ज की गई। इसके पश्चात् वर्ष 2021–2022 में यह आँकड़ा बढ़कर 1,31,28,275 टन हो गया, जो कि एक स्थिर लेकिन सकारात्मक वृद्धि को दर्शाता है।वर्ष 2022–2023 में आवक में अधिक तीव्र वृद्धि देखी गई और यह 1,45,71,997 टन तक पहुँच गई। यह वर्ष 2023–2024 में और भी तीव्र हुआ, जहाँ कुल आवक 1,80,05,645 टन रही। अंतिम वर्ष 2024–2025 में यह आँकड़ा 1,89,90,047 टन तक पहुँच गया, जो अध्ययन अवधि की सर्वोच्च आवक है। वर्ष 2020–2025 की अवधि में छत्तीसगढ़ राज्य की कृषि उपज मंडियों में कुल उपज आवक में निरंतर और उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई।

उपज आवक के आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण करने पर यह पाया गया कि–मानक विचलन (Standard Deviation)– 25,04,774 टन है, जो दर्शाता है कि उपज आवक के आँकड़े औसत से कितनी भिन्नता रखते हैं। सहसंबंध गुणांक (Correlation Coefficient r)– 0.956 प्राप्त हुआ है, जो उपज आवक के बीच अत्यधिक सकारात्मक सहसंबंध को दर्शाता है।सकारात्मक सहसंबंध स्पष्ट संकेत देता है कि समय के साथ कृषि उपज की आवक में निरंतर वृद्धि हुई है। यह वृद्धि कई कारकों जैसे:–विपणन प्रणाली की पारदर्शिता में वृद्धि, ई–नाम पोर्टल के माध्यम से डिजिटल नवाचार, मंडी परिसरों में संरचनात्मक विकास और किसानों की बढ़ती भागीदारी और जागरूकता का परिणाम है।इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि छत्तीसगढ़ की मंडी व्यवस्था न केवल वित्तीय दृष्टि से सुदृढ़ हुई है, बल्कि इसकी परिचालन क्षमता और पहुंच भी उल्लेखनीय रूप से बढ़ी है, जिससे कृषि उपज आवक में सकारात्मक प्रवृत्ति स्थापित हुई है।

मंडी सुविधाएँ एवं संरचनात्मक विकास – छत्तीसगढ़ की कृषि उपज मंडियों में छत्तीसगढ़ राज्य कृषि विपणन मंडी बोर्ड द्वारा कराए गए निर्माण कार्यों के माध्यम से बुनियादी अधोसंरचना का उल्लेखनीय विकास किया गया है। इस विकास में गोदामों का निर्माण, नीलामी चबूतरे, आंतरिक पक्की सड़कें, कृषक विश्रामगृह, प्रतीक्षा शेड, समुचित प्रकाश व्यवस्था, बाउंड्री वॉल एवं सुरक्षा प्रबंधा, इलेक्ट्रॉनिक तौलकांटे, ग्रेडिंग मशीनें, कंप्यूटर कक्ष, जल आपूर्ति, शौचालय तथा कैफेटेरिया जैसी सुविधाएँ शामिल हैं।इन संरचनात्मक सुविधाओं ने किसानों को स्वच्छ, सुरक्षित, पारदर्शी और तकनीकी रूप से सुसज्जित विपणन मंच उपलब्ध कराया है। विशेष रूप से इलेक्ट्रॉनिक तौल और ग्रेडिंग सुविधाओं से किसानों को उनकी उपज का

सही मूल्य मिलने में मदद मिली है। डिजिटल कंप्यूटर कक्ष एवं ई-नाम प्लेटफ़ॉर्म की उपलब्धता से किसानों की बाजार पहुँच भी बढ़ी है। इन विकास कार्यों से मंडियों की कार्यप्रणाली में पारदर्शिता और दक्षता आई है तथा किसानों की बाजार में उपस्थिति सशक्त हुई है। परिणामस्वरूप उनकी उत्पादकता, लाभप्रदता और विपणन अनुभव में उल्लेखनीय सुधार हुआ है।

क्र.	संभाग का नाम	गोदामों की कुल संख्या	कुल भंडारण क्षमता (मीट्रिक टन)
1	रायपुर	155	1,19,524
2	दुर्ग	71	67,370
3	बिलासपुर	97	94,400
4	जगदलपुर	187	70,390
5	अंबिकापुर	32	55,800
कुल	राज्य का योग	542	4,07,484

तालिका 3 -वर्ष 2025 में कृषि उपज मंडी समिति की कुल गोदामों की संख्या और क्षमता

छत्तीसगढ़ राज्य की मंडी प्रणाली में गोदामों का वितरण असमान है। रायपुर मंडी संभाग में सर्वाधिक भंडारण क्षमता (1,19,524 मीट्रिक टन) है, जबकि जगदलपुर में सर्वाधिक गोदाम (187) हैं, लेकिन उनकी औसत क्षमता कम है। अंबिकापुर में गोदामों की संख्या और क्षमता दोनों सबसे कम हैं। कुल 542 गोदामों की 4.07 लाख मीट्रिक टन की संयुक्त क्षमता राज्य के लिए महत्वपूर्ण है। यह असंतुलन कृषि उपज की गुणवत्ता और किसानों की आय को प्रभावित कर सकता है। इसलिए, भविष्य में गोदामों के विकेंद्रीकरण, नए निर्माण और आधुनिक भंडारण तकनीकों को बढ़ावा देना आवश्यक है।

निष्कर्ष – छत्तीसगढ़ राज्य की कृषि उपज मंडी समितियों का 2020से 2025 की अवधि में किया गया वित्तीय एवं संरचनात्मक अध्ययन दर्शाता है कि राज्य की मंडी समितियों की व्यवस्था में सकारात्मक परिवर्तन हुए हैं। आय, कृषि उपज आवक तथा अधोसंरचना विकास में क्रमिक सुधार हुआ है, जिससे मंडियों की कार्यक्षमता और किसानों को मिलने वाली सुविधाओं में वृद्धि हुई है। तकनीकी प्लेटफॉर्म जैसे ई-नाम और एगमार्कनेट ने व्यापार को अधिक पारदर्शी और सुगम बनाया है। साथ ही, मंडी अधिनियम में संशोधन और निजी निवेश ने प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण को बढ़ावा दिया है। हालांकि, कुछ मंडियों में प्रशासनिक सुधार और वित्तीय अनुशासन की आवश्यकता बनी हुई है। समग्र रूप से, कृषि उपज मंडी प्रणाली राज्य की कृषि अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में सहायक सिद्ध हो रही है।

सुझाव:

1. डिजिटल निगरानी प्रणाली को सशक्त बनाया जाए।
2. किसानों को मूल्य निर्धारण व विपणन पर प्रशिक्षण दिया जाए।
3. अधोसंरचनात्मक सुविधाओं का विस्तार उपमंडियों तक किया जाए।
4. महिला कृषकों की भागीदारी को प्रोत्साहित किया जाए।
5. मंडी समितियों में शिकायत निवारण प्रणाली लागू की जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. छत्तीसगढ़ राज्य कृषि विपणन मंडल, वार्षिक प्रतिवेदन (2020-2025)
2. भारत सरकार, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, ई-नाम प्रगति प्रतिवेदन (2022)
3. कृषि विपणन एवं सहकारिता विभाग, छत्तीसगढ़ शासन, मंडी अधोसंरचना विकास प्रतिवेदन (2023)
4. कुमार, संजय एवं सिंह, प्रवीण (2021). भारत में कृषि विपणन सुधार: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन, आर्थिक समीक्षा जर्नल
5. राष्ट्रीय कृषि विपणन संस्थान (NIAM), जयपुर . मंडी संरचना एवं सर्वोत्तम प्रथाओं पर अध्ययन (2021)
6. छत्तीसगढ़ शासन, ई-गवर्नेंस एवं एग्रीमार्कनेट पोर्टल आँकड़े (2024)

वेबसाइट:-

1. http://agriportal.cg.nic.in
2. https://www.cgstate.gov.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

प्राचीन भारतीय राज्यव्यवस्था में मंत्रिपरिषद की उपयोगिता वर्तमान संदर्भ में

डॉ. जे. के. संत*

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) प्रधानमंत्री कॉलेज आफ एक्सीलेंस शासकीय तुलसी महाविद्यालय, अनूपपुर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – सर्वमान विदित है कि समाजहित राष्टहित में अकेला मनुष्य सुगम कार्य करने में कभी भी समर्थ नही हो सकता, फिर अकेला राजा कैसे राज्य सम्बन्धी समस्त कार्य को बिना सहयोग के चला सकता है, अत्यन्त दुष्कर कार्य है, राज्य संबन्धी कार्य को सुव्यवस्थित संचालन हेतु मंत्रिपरिषद का होना नितांत आवश्यक है।[1] यह भी सत्य है कि कोई व्यक्ति कितना भी बुद्धिमान हो हर क्षेत्र में परांगत नही हो सकता। इसलिये राज्य संबंधी समस्त विषयों एक ही व्यक्ति से सलाह मंत्रणा लेने से राजा हमेशा वास्तविकता पर पहुच सके ऐसा संभव ही नही है। इसलिये राजा को राज्य से संबंधित हर क्षेत्र में शासन संबंधी प्रत्येक समस्याओं के लिये मंत्रणा लेने के लिये विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों की आवश्यकता पडती है।[2]

सिर्फ इसलिये ही नही कि समस्याओं के आते ही उस विषय के ज्ञान रखने वाले व्यक्ति से मंत्रणा लेने के लिये उस समय उसकी खोज की जाये। बल्कि यह आवश्यक हो जाता है कि राजा अनेक विषयों के विशेषज्ञ व्यक्तियों को स्थायी रूप से अपने समीप रखें जिससे आवश्यकता पडते ही उस समस्याओं का तत्काल समाधान किया जा सके। मंत्रियों की आवश्यकता इसलिये भी होती है क्यों कि राजा अकेले ममता के मद से निरंकुश हो जाता है।[3] ममता पाइै काहि मद नाहि।। रामचरित मानस अयोध्या काण्ड अत: यथोचित कार्य संपादन के लिये मंत्रियों की आवश्यकता पडती है। महाभारत में भी कहा गया है कि कोई भी राज्य बिना मंत्रि कह सहायता के तीन दिन भी नही चलाया जा सकता। कौटिल्य का कथन है कि जिस प्रकार एक पहिये से रथ नही चल सकता उसी प्रकार बिना मंत्रियों के सहायता के अकेले राजा से राज्य नही चल सकता।[4] इसलिये राजा को विश्वासपात्र व्यक्तियों को मंत्री नियुक्त करना और मंत्रियों की बातों की समस्याओं को ध्यान से सुनना राजा का परम कर्तव्य है। जिससे राज्य का कार्य सुव्यवस्थित चल सके। मत्स्य पुराण का कथन है कि राजा को राज्याभिषेक के कुछ दिनों के अन्दर यदि वह राज्य का पर्यवेक्षण करना चहता है तो विश्वासपात्र व्यक्ति को सहायक चुन ले क्योंकि उन्ही में राज्य का स्थायित्व छिपा रहता है।[5]

इस प्रकार मंत्रिमण्डल प्राचीन भारतीय राज्य व्यवस्था का अभिन्न अंग है। भारत के सबसे प्राचीन ऐतिहासिक राज्य मगध राजा अजात शत्रु के महात्य वत्सकार का उल्लेख है। काव्यायन तो यहा तक निर्देश देते है कि राजा को अकेले बैठक किसी भी मुदद्दों पर निर्णय नही लेना चाहिये बल्कि मंत्रियों के साथ बैठकर विचार- विमर्श कर निर्णय लेना चाहिये।[6] कहा गया है कि राजा कितना भी बुद्धिमान कुशल और नीति व्यवहार में दक्ष क्यों न हो पर भी राज्य के किसी भी विषय पर बिना मंत्रियों के सहायता के विचार नही करना चाहिये। बुद्धिमान राजा को हमेशा मंत्रिपरिषद के सदस्यों के सम्मति के अनुसार चलना चाहिये। जब राजा मंत्रिचरिषद से स्वतंत्र हो कर मनमानी ठंग से कार्य करने लगता है तो समझ लो कि राजा अपने पैर में स्वयं कुल्हाडी मार रहा है। समय पाकर वह अपना राज्य और प्रकृति दोनों खो बैठता है।[7] इस प्रकार हम देखते है कि मंत्रिपरिषद की आवश्यकता का निरपण सभी भारतीय विचारकों ने किया है।

मंत्रिपरिषद के सदस्यों की संख्या- मंत्रिपरिषद में कितने सदस्य होने चाहिये इस विषय पर सबका अलग-अलग विचार है- मनु के अनुसार सात या आठ सदस्यों की मंत्रिपरिषद के निमार्ण का आदेश देते है। राजा को अच्छे कुल से परीक्षोत्तीर्ण पश्चात सात अथवा आठ सचिव नियुक्ति करने चाहिये।[8] इस प्रकार मनु द्वारा दी गई व्यवस्थानुसार सात अथवा आठ सदस्यों की मंत्रिपरिषद का निर्माण करना उचित है। परन्तु मानवधर्मशास्त्र में जो विचार प्रकट किये गये है विचारनुसार राजा को मंत्रिपरिषद में उतना सदस्य रखना उचित है जितने सदस्यों से शासन कार्य विधिवत संचालित किया जा सके।[9] मंत्रिपरिषद की सदस्य संख्या के विषय में आचार्य कौटिल्य व कामन्दक नें बारह एवं वृहस्पति के अनुयायियों ने सोलह आचार्य उषना के अनुयायियों ने बीस सदस्यों के रखने की व्यवस्था की है। परन्तु कौटिल्य अपना मत प्रकट करते हुये कहते है मेरे मतानुसार समय और आवश्यकतानुसार मंत्रिपरिषद के सदस्य होने चाहिये।[10] भीष्म के मतानुसार मंत्रिपरिषद में सैतीस सदस्य रखना उचित है।[11] रामायण में भी आठ मंत्रियो का उल्लेख किया गया है।[12] इससे यह सिद्ध होता है कि प्रत्येक राज्य की जनसंख्या एवं क्षेत्रफल के आवश्यकतानुसार मंत्रियों की संख्या होनी चाहिये। इस तरह हम कह सकते है कि मंत्रियों की संख्या कम ना अधिक होनी चाहिये।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में – 91 वा संवैधानिक संशोधन 2003 ने प्रधानमंत्री/ मुख्यमंत्री सहित मंत्रियों की कुल संख्या को लोकसभा/राज्य विधान सभा की कुल ताकत के 15 प्रतिशत तक सीमित कर दिया। केन्द्रीय स्तर पर कोई न्यूनतम आवश्यकता नही है लेकिन छोटे राज्यों में कम से कम 12 मंत्री होने चाहिये। केन्द्रीय मंत्रिपरिषद में प्रधानमंत्री सहित मंत्रियों की कुल संख्या लोक सभा की कुल संख्या के 15 प्रतिशत से अधिक नही होगी।

2. मंत्रियों की योग्यता एवं नियुक्ति के सिद्धांत- मंत्रियों की नियुक्ति के समय बडी सूझ-बूझ तथा सावधानी की आवश्यकता होती है। ताकि परिषद में ऐसे व्यक्ति ही स्थान पा सके जो वास्तव में इस योग्य हो और राजा

को समयानुसार उचित मंत्रणा दे सके। जिससे राज्य का परम कल्याण हो सके। इसलिये मंत्रिपरिषद की सदस्ता के लिये आचरण चरित्र कार्यकुसलता एवं योग्यता संबंधी विशेष नियमों अथवा सिद्धान्तों का आश्रय लिया जाना चाहिये। मंत्रियों की नियुक्ति संबंधी अधिकार राजा को बिना किसी प्रतिबंध के दे दिया जायेगा तो राजा के निरंकुश होने की सम्भावना भी अधिक रहेगी।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में – भारत में मंत्रियों की नियुक्ति के लिये उन्हे संसद में किसी भी सदन का सदस्य होना चाहिये और प्रधानमंत्री की नियुक्ति बहुमत दल के नेता को राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। जब कि अन्य मंत्रियों की नियुक्ति प्रधानमंत्री की सलाह पर राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। अनुच्छेद 75 मंत्रियों की नियुक्ति कार्यकाल, जिम्मेदारी योग्यता, शपथ और वेतन तथा भत्ते से संबंधित है। मंत्रिपरिषद की स्थिति संविधान के अनुच्छेद 74 में वर्णित है, मंत्री अपने मंत्रालय और सरकार के संचालन के लिये संसद के प्रति उत्तरदायी होते हैं। मंत्रियों के चयन में सामान्य रुप से प्रधानमंत्री पूर्णतया स्वतंत्र है। इसके बावजूद वह मंत्रियों के चयन में सामान्य रुप से कुछ बातों का ध्यान रखता है–

1. ऐसे कौन से व्यक्ति है जिन्हें पार्टी या मोर्चे की एकता बनाये रखने के लिये मंत्रिपरिषद में सम्मिलित करना आवश्यक है।
2. किस राज्य को मंत्रिपरिषद में कितना प्रतिनिधित्व दिया जाय।
3. शासन के कुशल संचालन के लिये किन लोगों की योग्यता का लाभ उठाया जाना आवश्यक है।
4. मंत्रियों की नियुक्ति में साम्प्रदायिक, क्षेत्रीय तथा भाषायी सन्तुलन हो।

अ. परम्परागत सिद्धांत– मंत्रिपरिषद की सदस्ता के लिये परामपरागत सिद्धान्त का अनुसरण किया जाना चाहिये मनु यह व्यवस्था देते है कि राजा को अपनी मंत्रिपरिषद में परम्परागत सेवकों में से सदस्य नियुक्त करना चाहिये तात्पर्य पिता–पितामह से चले आये हुये सेवकों से है। महाभारत में ऐसे व्यक्तियों को मंत्रिपरिषद में स्थान दिये जाने का प्रतिपादन किया गया है। महाभारत में इस पद की व्याख्या परम्परागत शब्द के रूप में नीकण्ठ की है।[13] यह बात रामायण में भी आता है।

आ. शास्त्रों का सम्यक ज्ञान– मंत्रिपरिषद के लिये यह दूसरी अनिवार्य योग्यता है। इस व्यवस्थानुसार मंत्रिपरिषद के लिये सदस्यों की नियुक्ति करते समय राजा को इस विषय का पूर्ण विश्वास हांना चाहिये के मंत्रिपरिषद की सदस्ता के लिये व जिस सदस्यों का वरण करने वाला है। उनका शास्त्री ज्ञान पुर्ण है और वह ज्ञान विधिवत प्राप्त किया गया है। उस राजा को श्रेष्ठ माना गया है जो धर्म, अर्थ और काम का अनुष्ठान समयानुसार करता है।[14]

इ. शूरता – शौर्य गुण से सम्पन्न व्यक्ति संकट काल में स्थिर बुद्धि रहकर अपने कर्तव्य पथ से विचलित नही होते और अपने कर्तव्य पालन में दृढतापूर्वक संलग्न रहते है। इसी आधार पर मंत्री पद के लिये शूरता गुण को आवश्यक माना गया है। अर्थात मंत्री पद पर शूर पुरूषों को ही नियुक्त करना चाहिये।[15]

ई. उद्देश्य प्राप्ति की सामर्थ– मंत्रिपरिषद के सदस्यों के प्रजारंजन कार्य सम्पादन हेतु चिन्तन कर अनेक योजनाओं को कार्यान्वित करना पडता है, जिसके लिये ऐसे व्यक्ति उपयुक्त नही हो सकते जो दृठ संकल्प नही है और जो अपने उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सतत् प्रयत्न करने में स्थिर बुद्धि नही है। अत: उद्देश्य की प्राप्ति की सामर्थ होना मंत्रिपरिषद की उत्तम योग्यता है।

3. उच्च कुल में जन्म – प्राचीन भारत में मनुष्य के रक्त प्रभाव की ओर विशेष महत्व दिया गया है, उस युग की यह धारणा थी कि उच्च वंश में जन्म लेने से उच्च आचरण के निर्माण की अधिक सम्भावना होती है। उच्च कर्मचारियों की नियुक्ति के समय उनके कुल या वंश की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में – मंत्रियों की नियुक्ति के लिये उच्च कुल में जन्म का विशेष महत्व नही दिया जाता बल्कि वह व्यक्ति भारत का नागरिक हो, उच्च आचरण का हो, पागल या दिवालिया ना हो, राज्य सभा में स्थान के मामले में कम से कम तीस वर्ष की आयु का हो और लोक सभा में स्थान के मामले में कम से कम पच्चीस वर्ष की आयु का हो, उसके पास ऐसी अन्य योग्यतायें हो जो संसद द्वारा बनाये गये किसी कानून द्वारा या उसके अधीन उस निमित्त विहित की जाएं। उसके पास अपनी जिम्मेदारियों को प्रभावी ढंग से निभाने के लिये अनुभव और ज्ञान होना चाहिये।

अ. परीक्षा सिद्धात– मंत्रिपरिषद की सदस्ता के लिये एक सिद्धांत यह भी माना गया है कि मंत्रिपरिषद के सदस्यों की नियुक्ति करने के पूर्व अभ्यर्थी को भली भाँति परीक्षा होनी चाहिये यदि अभ्यर्थी अपनी इस परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता है तो उसको मंत्रिपरिषद में मंत्री पद दिये जाने का विचार करना चाहिये भीष्म का कथन है कि उन्ही व्यक्तियों को मंत्रिपरिषद की सदस्ता के लिये उपयुक्त समझते है जो पंचोपधा द्वारा शुद्ध हो चुके हो। [17] इसी प्रकार कौटिल्य भी उस व्यक्ति को मंत्री पद उचित समझते है जो धर्मोपधा, कामोपधा, अर्थोपधा एवं भयोपधा प्रणाली द्वारा ली गई परीक्षाओं में सफल हो चुके हो।[18]

अत: स्पष्ट है कि मंत्रिपरिषद की सदस्ता के निमित्त अभ्यर्थी की भली भांति परीक्षा होनी चाहिये, इस सिद्धांत का प्रतिपादन प्राचीन ग्रन्थों में किया गया है। मंत्रियों की योग्यता के निर्धारण के विषय में कौटिल्य की सूची विशेष उल्लेखनी है जो इस प्रकार है– मंत्री देशवासी, उच्च कुलोत्पन्न, प्रभवशाली,कला निपुण, दूरदर्शी, समझदार, अच्छी स्मृति वाला, सतत् जागरूक, मेघावी, निर्भीक, वाग्मी चतुर, तीब्रमति, उत्साही, मनस्वी, धीर, शुद्ध चरित्र, मृदु स्नेही, अटल स्वामिभक्त, बलपराक्रम और स्वास्थ से युक्त होना चाहिये एवं अस्थिर चित्तता और दीर्घ सुत्रता से मुक्त और द्वेष तथा उत्पादक दुर्गुणों से रहित होना चाहिये।[19] अवश्य ही इन सदगुणों का एक व्यक्ति में उपस्थित होना असम्भव प्राय है। फिर भी इनकी गिनती कराने का तात्पर्य यही था कि मंत्री का चुनाव करते समय उपर्युक्त आदर्श ध्यान में रखा जाय।

निष्कर्ष वर्तमान परिप्रेक्ष्य में – उपर्युक्त वर्णित तथ्यों से सहज है कि राज्य में शासनाध्यक्ष का महत्व सर्वोपरि है। इसीलिये भारत में शासनाध्यक्ष अर्थात राजा को विशिष्ठ गुण सम्पन्न माना गया है। उनो गुणों की तुलना देवत्व से की गई है। अपनी असाधारण योग्यता, त्याग और प्रजापातकता के कारण ही उसे दैवीय गुणों से युक्त माना गया है। वह वंशानुगत उसी देश का निवासी होना चाहिये उसे हर प्रकार के व्यसन से दूर रहने की सलाह दी गई है, उसकी सार्वभौमिक शिक्षा एवं अतिव्यस्त दिनचर्या का भी विस्तृत किया गया है। ताकि उसमें आलस्य तथा प्रमाद का अंकुर तक उत्पन्न न हो सके। आजकल के शासकों के लिये भी ये बाते उतनी ही आवश्यक तथा लाभप्रद है। शासनाध्यक्ष तभी लोभ प्रिय और निर्विवाद हो सकता है,जब वह काम, क्रोध, मद लोभ इत्यादि दुर्गुणों से उपर उठ जाये। अच्छे शासन का अनुकरण जनता भी करती है। इसीलिये कहा गया है– 'यक्षा राजा तथा प्रजा' वर्तमान

शासनाध्यक्षों की भांति जहां एक ओर राजा की शक्तियां व्यापक और विस्तृत है वही दूसरी ओर उस पर कई नियंत्रण और सीमायें भी लगाई गई है ताकि वह किसी भी सूरत में निरंकुश न हो सके। इस बात का सतत् ध्यान वर्तमान संविधान निर्माताओं एवं शासकों को अच्छी प्रकार रखना चाहिये। शासनाध्यक्ष की भांति उसके मंत्रियों की योग्यता आदि का भी सविस्तार उल्लेख प्राचीन भारत में पाया जाता है। मंत्रियों के लिये आवश्यक है कि वे मूलत: उसी देश के निवासी, पर्याप्त ज्ञानी, शूर, तीक्ष्ण बुद्धि वाले, अच्छे वक्ता, सचरित्र, इमानदार, शुद्ध रक्त वाले, निष्पक्ष तथा सदाचारी हो। उनका रहन-सहन ऋषियों की तरह सीधा-साधा होना चाहिये, ये तथ्य वर्तमान शासन व्यवस्थाओं में पाये जाने वाले मंत्रियों के लिये भी उपयोगी तथा अनूकरणीय है। जिस दिन वर्तमान मत्रिगण उपर्युक्त गुणों तथा स्वभाव को प्राप्त कर लेगे वे जनता के नायक हो जायेंगे। इस प्रकार के शासनाध्यक्ष और मंत्रिगण आदर्श राज्य की स्थापना में सहायक सिद्ध होगे। मंत्रिपरिषद का होना इसलिये भी आवश्यक हो जाता है क्योकि संघ सरकार की नीतियों का निर्धारण मंत्रिपरिषद द्वारा ही किया जाता है। मंत्रिपरिषद के द्वारा ही पूरा प्रशासन संचालित किया जाता है। मंत्रिपरिषद के सदस्यों के द्वारा ही संसद में सरकारी विधेयकों का प्रस्तुतीकरण किया जाता है। मंत्रिपरिषद के द्वारा ही बजट तैयार किया जाता है। मंत्रिपरिषद के द्वारा ही विदेश नीति का निर्धारण किया जाता है। मंत्रिपरिषद द्वारा ही विभिन्न सरकारी विभागों के मध्य समन्वय का कार्य किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मनु0 7/55
2. शुक्र0 2/5
3. ममता पाइै काहि मद नाहि।। रामचरित मानस अयोध्या काण्ड
4. सहायसाध्यं राजत्वं चक्रमेकं न वर्तते कुर्वीत सचिवांस्तस्मात्तेषां च श्रणुयान्मतम् अर्थ0 1/7
5. मत्स्यपुराण 215/2-3
6. स प्राणविवाक: सामानयद सव्रामण पुरोहित:। ससम्य: प्रेक्षको राजा स्वर्गे तिष्ठित धर्मत:
7. शुक्र0 2/5
8. मनु0 7/54
9. मनु0 7/61
10. अर्थ0 1/85 वार्ता 56
11. शान्ति पर्व 85/7-8
12. रामायण बालकाण्ड 7/2-3
13. मौलान परम्परागता:। शान्ति पर्व 83/20
14. रामायण 2/100/26
15. रामायण किष्किंधाकाण्ड 38/20
16. मनु0 7/54 पुर्वाद्ध तृतीय शब्द
17. शान्ति पर्व 83/22
18. सर्वोपधाशुद्धान्मंत्रिण: कुर्यात। अर्थ0 1/10 वार्ता 24
19. अर्थ0 1/9

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारत में लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण में संविधान की भूमिका का विश्लेषणात्मक अध्ययन

विजय लक्ष्मी जोशी *

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय विधि महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – शोध सार :– प्रस्तुत शोध आलेख में लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण को परिभाषित कर भारतीय संविधान की भारत में लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण में भूमिका का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। मनुस्मृति के अध्याय 3 में कहा गया है कि –

'यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते रमन्ते तत्र देवता:।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्त्राफला: क्रिया:।।'

अर्थात् जहॉ स्त्रियों की पूजा होती है वहॉ देवता निवास करते है और जहॉ स्त्रियों की पूजा नहीं होती, उनका सम्मान नहीं होता है वहॉ किए गए समस्त कार्य निष्फल हो जाते है। हजारों वर्ष पूर्व वैदिक काल में महिलाओं को कई अधिकार प्राप्त थे, वे वेदों का पठन–पाठन करती थी। वेदों में 404 ऋषियों में 30 ऋषि महिलाए थी। वे युद्धकला तथा प्रशासनिक कार्यों में भी पारगंत थी, कोई भी धार्मिक कार्य उनके बिना पूर्ण नहीं होता था किन्तु फिर शनै: शनै: उनकी स्थिति बदत्तार होती गई उन्हें शिक्षा, सम्पति एवं समाज में पुरूषों के समान आधिकार से वंचित कर दिया गया, वे केवल उपभोग का एक साधन मात्र बनकर रह गई। संविधान के लागू होने के पूर्व भारतीय समाज में लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण का अस्तित्व ना के बराबर था। संविधान का निर्माण करने वाली संविधान सभा में कुल 15 महिला सदस्य थी, जिसमें दक्षिणायनी वेलायुधन, सरोजिनी नायडू, बेगम .कदारिया ऐजाज रसूल, दुर्गाबाई देशमुख, हंसा जीवराज मेहता, पूर्णिमा बेनर्जी, राजकुमारी अमृत कौर, विजय लक्ष्मी पंडित, सुचेता कृपलानी, कमला चौधरी आदि प्रमुख थी जो महिलाओं की तत्कालीन दयनीय स्थिति से अच्छी तरह परिचीत थी। इसके अतिरिक्त संविधान सभा के प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. भीमराव अंबेडकर भी लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण के कट्टर समर्थक थे। अत: उन्होनें भारतीय संविधान में ऐसे उपबंधों को अंतर्विष्ट कराया जो महिला के प्रति लिंग के आधार पर होने वाले भेदभाव को समाप्त कर सके एवं उन्हें पुरूषों की अपेक्षा अतिरिक्त विशेषाधिकार देकर सशक्त कर सके। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15(1), 15(3), 16(1), 21, 21क, 23, 38(क), 38(घ), 38(ड़), 42, 44, 51क(ड़), 243घ(3), 243घ(4), 243न(3), 243न(4), 325 इसके जीवंत दृष्टांत है जिनका वर्णन प्रस्तुत शोध आलेख में किया गया है।

प्रस्तावना

लैंगिक समानता का अर्थ – विभिन्न अंतराष्ट्रीय संगठनों ने लैंगिक समानता को निम्न प्रकार परिभाषित किया हैं–

संयुक्त राष्ट्र महिला के अनुसार – लैंगिक समानता का अर्थ पुरूषों और महिलाओं, बालक और बालिकाओं को समान अधिकार, उत्तरदायित्व और अवसर प्राप्त होना हैं।

यूनिसेफ के अनुसार – लैंगिक समानता का अर्थ हैं कि महिलाओं और पुरूषों, लड़कों और लड़कियों को समान अधिकारों, स्वतंत्रताओं, संसाधनों, अवसरों और सुरक्षा का आनंद प्राप्त हो।

आसान शब्दों में लैंगिक समानता का अर्थ हैं अधिकार, उत्तरदायित्व, अवसर एवं स्वतंत्रता प्रदान करनें में महिला और पुरूषों के बीच लिंग के आधार पर कोई भेदभाव न हो। लैंगिक समानता प्रत्येक राष्ट्र एवं समाज के विकास के लिए आवश्यक है इसलिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने इसे सतत् विकास के 17 लक्ष्यों में से 5 वॉ लक्ष्य निर्धारित किया है।

महिला सशक्तिकरण का अर्थ – सशक्तिकरण शब्द स+शक्ति+करण से मिलकर बना है जिसका अर्थ है शक्ति सहित गति। सशक्तिकरण एक निर्बल को सबल बनाने की प्रक्रिया है जो निरन्तर चलती रहती है एक पूर्ण सशक्त व्यक्ति वह है जो अपने जीवन से संबंधित निर्णय लेनें में पूरी तरह स्वतंत्र हो, जिस पर किसी प्रकार का कोई दवाब न हो। अत: महिला सशक्तिकरण का अर्थ यह हैं कि महिलाओं को इस योग्य बनाना कि वे अपने जीवन के सारे निर्णय स्वयं बिना किसी दवाब के ले सके, उनके अपने जीवन के सभी पहलुओं पर नियंत्रण हो। उन्हें इस योग्य बनाने के लिए निति निर्माण में उनकी बराबर की भागीदारी, राजनीति, व्यापार, समाज के साथ–साथ घर के प्रत्येक निर्णयों में उनकी पुरूषों के समान भागीदारी अत्यंत आवश्यक हैं।

अत: महिला सशक्तिकरण महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और व्यक्तिगत स्तर पर सशक्त बनाने की प्रक्रिया हैं। इसका उद्देश्य महिलाओं को अपने जीवन के सभी पहलुओं पर नियंत्रण प्रदान करना और उन्हें पुरूषों के समान अवसर प्रदान करना है। शैक्षिक, आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक सशक्तिकरण महिला सशक्तिकरण के विभिन्न आयाम हैं।

लैंगिक समानता और महिला सशक्तिकरण में संविधान की भूमिका –

भारतीय संविधान हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था का आधार स्तंभ है यह हमारी राष्ट्रीय धरोहर हैं। 26 नवंबर 1949 को हमारी संविधान सभा ने इसे अंगीकृत किया था। लैंगिक समानता का सिद्धांत भारतीय संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकारों, मौलिक कर्तव्यों और नीति निदेशक सिद्धांतों में प्रतिपादित है। संविधान न केवल महिलाओं को समानता का दर्जा प्रदान करता है बल्कि राज्य को महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए सकारात्मक कदम उठाने का अधिकार भी देता है। समय-समय पर संविधान में महिलाओं की स्थिति को मजबूत करने के लिए संशोधन किए जाते रहे है चाहे वह 42वॉ संशोधन हो 73 एवं 74वॉ संशोधन हो या फिर संसद में महिला आरक्षण के लिए किया गया 123वॉ संशोधन हो। इसमें कोई दो राय नहीं कि भारतीय संविधान ने भारत में लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण में अनूठी भूमिका निभाई है भारतीय संविधान के निम्नलिखित उपबंध इसका जीवंत साक्ष्य हैं।

मूल अधिकार – संविधान के भाग 3 मूल अधिकार में।

अनुच्छेद 14 में सभी व्यक्तियों को जिसमें महिलाएँ भी शामिल हैं, विधि के समक्ष समता एवं विधियों के समान संरक्षण का अधिकार दिया गया है।

वाद- एयर इण्डिया विरूद्ध नरगिस मिर्जा

के वाद में उच्चतम न्यायालय ने एयर इण्डिया और इण्डियन एयर लांइस द्वारा बनाए गए विनियमों को इस आधार पर असंवैधानिक घोषित कर दिया कि उनके अधीन 35 वर्ष की आयु में विवाह होने पर या गर्भवती होने पर सेवामुक्ति करने वाली सेवा शर्त अयुक्तियुक्त और विभेदकारी हैं तथा अनुच्छेद 14 का अतिक्रमण करती है।

वाद- विजय लक्ष्मी विरूद्ध पंजाब विश्वविद्यालय

के मामले में विश्वविद्यालय कैलेण्डर के एक नियम के तहत महिला विद्यालयों में प्राचार्य के पद पर केवल महिलाओं की नियुक्ति के प्रावधान को चुनौती देने पर न्यायालय ने यह निर्णीत किया कि यह नियम अनुच्छेद 14 या अनुच्छेद 16 का उल्लंघन नहीं है क्योंकि इसके अधीन किया गया वर्गीकरण युक्तियुक्त है, इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 15(3) के अधीन राज्य को स्त्रियों के लिए विशेष उपबंध करने की शक्ति हैं।

वाद- अनुज गर्ग विरूद्ध भारत का होटल संघ

के वाद में पंजाब सरकार के एक अधिनियम की धारा 30 जिसके अधीन होटल या बार में शराब परोसने के कार्य में महिलाओं के नियोजन पर रोक लगा दी, को चुनौती देने पर न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि उक्त अधिनियम स्त्री और पुरूष में लिंग के आधार पर भेद करता है, अत: अवैध है।

1. **अनुच्छेद 15(1)** केवल लिंग के आधार पर विभेद का प्रतिषेध करता हैं।

2. **अनुच्छेद 15(3)** राज्य को स्त्रियों के लिए विशेष उपबंध करने की शक्ति प्रदान करता हैं।

वाद- दत्तात्रेय विरूद्ध स्टेट

के मामलें मे न्यायालय ने यह कहा कि राज्य द्वारा केवल स्त्रियों के लिए शिक्षण संस्थाओं की स्थापना करना एवं उसमें उनके लिए स्थान आरक्षित करना अनुच्छेद 15(1) का अतिक्रमण नहीं है।

वाद- यूसुफ अब्दुल अजीज विरूद्ध बंबई राज्य

में भारतीय दण्ड संहिता की धारा 497 की संवैधानिकता को इस आधार पर चुनौती देने पर कि यह जारकर्म के अपराध के लिए केवल पुरूष को दण्डित करती है स्त्री को नहीं, अत: लिंग के आधार पर विभेद करने के कारण यह अनुच्छेद 15(1) का अतिक्रमण करती है। न्यायालय ने निर्णीत किया कि धारा 497 वैध है क्योंकि वर्गीकरण केवल लिंग के आधार पर नहीं बल्कि समाज में स्त्रियों की विशेष स्थिति के आधार पर किया गया हैं।

वाद- टी. सुधाकर रेडडी विरूद्ध आ. प्र. राज्य

में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 15(3), 16(2), 16(4) के अधीन सरकारी नौकरियों में स्त्रियों को यदि वे पुरूषों के समान योग्य एवं उनकी अपेक्षा अधिक उपयुक्त है तो राज्य को उन्हें प्राथमिकता देनें की शक्ति प्राप्त है।

3. **अनुच्छेद 16(2)** राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के संबंध में केवल लिंग के आधार पर विभेद या अपात्रता का निषेध करता है।

4. **अनुच्छेद 21** द्वारा प्रदत्त प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार बहुत व्यापक अधिकार है न्यायपालिका ने न्यायिक सक्रियता के माध्यम से इस अधिकार के अधीन निम्नलिखित अधिकारों को शामिल किया है-

- **एकांतता का अधिकार :-**

महाराष्ट्र राज्य विरूद्ध मधुकर नारायन

के मामलें में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि एक चरित्रहीन महिला को भी एकांतता का अधिकार प्राप्त हैं, उसमें कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता है।

सुरजित सिंह विरूद्ध जीत कौर

के मामले न्यायालय ने यह निर्णीत किया कि महिला के कौमार्य परीक्षण के लिए अनुमति देना अनुच्छेद 21 के अधीन प्रदत्त उसके एकांतता के अधिकार का उल्लंघन है।

व **अन्तर्जातीय विवाह करने का अधिकार :-**

लता सिंह विरूद्ध उत्तर प्रदेश राज्य

में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि एक वयस्क बालिका को अपनी स्वेच्छा से किसी भी व्यक्ति के साथ विवाह करने का अधिकार अनुच्छेद 21 के अधीन प्रदत्त उसकी वैयक्तिक स्वतंत्रता का अधिकार है।

- **बलात्कार से पीड़ित महिला का अंतरिम प्रतिकर पाने का अधिकार :-**

बोधीसत्व गौतम विरूद्ध शुभ्रा चक्रवर्ती एवं **दिल्ली डोमेस्टिक वर्किंग वुमन फोरम विरूद्ध भारत संघ** के मामलों में न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया हैं कि न्यायालय को बलात्कार की शिकार महिला को अंतरिम प्रतिकर देने की शक्ति है जब तक कि परीक्षण न्यायालय अभियुक्त के ऊपर लगाए आरोप पर अपना निर्णय नहीं दे देता है।

- **श्रमजीवी महिलाओं का यौन उत्पीड़न से संरक्षण का अधिकार :-**

वाद- विशाखा विरूद्ध राजस्थान राज्य

के वाद में उच्चतम न्यायालय ने श्रमजीवी महिलाओं के प्रति काम के स्थान पर होने वाले यौन उत्पींड़न को रोकने के लिए, जब तक इस हेतु कोई विधि नहीं बन जाती विस्तृत मार्गदर्शक सिद्धांत विहित किए है। न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 21 के अधीन सुरक्षित काम का अधिकार भी शामिल है।

वाद- एपरल एक्सपोर्ट प्रमोशन काउंसिल विरूद्ध ए. के. चौपड़ा

के वाद में न्यायालय ने विशाखा के मामलें में विहित सिद्धांतों को लागू कर यौन शोषण के दोषी एक कंपनी के उच्च अधिकारी को सेवा से निकाल दिया। न्यायालय ने कहा कि कार्य के स्थान पर यौन शोषण महिला कर्मचारी

के अनुच्छेद 21 और 14 में प्रदत्त मूल अधिकारों का उल्लंघन है।

5. **अनुच्छेद 23** 'मानव के दुर्व्यापार' और बलातश्रम का प्रतिषेध करता है। मानव दुर्व्यापार के अंतर्गत केवल स्त्रियों का वस्तुओं की भाँति क्रय-विक्रय ही शामिल नहीं है बल्कि इसमें उनका अनैतिक व्यापार, वैश्यावृति, एवं इसी प्रकार के अन्य प्रयोजन के लिए उनका प्रयोग करना भी आता है।

नीति निदेशक तत्व :- संविधान के भाग 4 राज्य के नीति निदेशक तत्व में-

1. **अनुच्छेद 39(क)** में राज्य को यह सुनिश्चित करने का निर्देश दिया गया कि पुरूष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो।
2. **अनुच्छेद 39(घ)** में राज्य को यह सुनिश्चित करने का निर्देश दिया गया कि पुरूषों और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान वेतन हो।
3. **अनुच्छेद 39(इ)** राज्य को यह निर्देश देता हैं कि वह यह सुनिश्चित करे कि स्त्री कर्मकारों के स्वास्थ्य एवं शक्ति का दुरूपयोग न हो।
4. **अनुच्छेद 42** राज्य को कार्य की न्यायसंगत एवं मानवोचित दशाओं को सुनिश्चित करने एवं महिला कर्मचारियों हेतु प्रसूति सहायता का उपबंध करने का निर्देश देता है।
5. **अनुच्छेद 44** में राज्य को सभी नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता सुनिश्चित करने का निर्देश दिया गया हैं। यह संहिता निजी मामलों जैसे- विवाह, उत्तराधिकार, तलाक, भरण-पोषण, दत्तक आदि में सभी धर्म की महिलाओं को समान अधिकार देकर उनके साथ लिंग के आधार पर हो रहे भेदभाव को समाप्त कर लैंगिक समानता का बढ़ावा देगी।

वाद- शाह बानो बेगम विरूद्ध मोहम्मद अहमद खान

के वाद में न्यायालय ने सर्वप्रथम एक समान सिविल संहिता को लागू करने की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा कि अनुच्छेद 44 मात्र एक मृत अक्षर बनकर रह गया है। सरकार ने इसे लागू करने के लिए अभी तक कोई प्रयास नहीं किया है।

मूल कर्तव्य :- भारतीय संविधान के भाग 4क 'मूल कर्तव्य' में अनुच्छेद 51क(इ) में सभी भारतीय नागरिको पर यह मूल कर्तव्य अधिरोपित किया गया है कि वह ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध हो।

73वॉ एवं 74वॉ संविधान संशोधन :- 73वॉ एवं 74वॉ संविधान संशोधन द्वारा संविधान में भाग 9 पंचायत एवं भाग 9क नगरपालिकाएँ जोड़ा गया। इसमें भाग 9 में अनुच्छेद 243घ(3) में ग्राम पंचायतों में कुल स्थानों का कम से कम एक तिहाई स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित रखने का एवं अनुच्छेद 243घ(4) में ग्राम पंचायतों के अध्यक्ष का पद महिलाओं हेतु आरक्षित रखने का प्रावधान है। इसी प्रकार भाग 9क के अनुच्छेद 243न(3) में नगरपालिकाओं में प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा भरे जाने वाले कुल स्थानों में से कम से कम एक तिहाई स्थान महिलाओं हेतु आरक्षित रखने एवं अनुच्छेद 243न(4) में नगरपालिकाओं के अध्यक्ष के पद महिलाओं हेतु आरक्षित रखने का प्रावधान किया गया है।

अनुच्छेद 325 :- अनुच्छेद 325 में लिंग के आधार पर किसी व्यक्ति के निर्वाचक नामावली में शामिल किए जाने हेतु अपात्र होने का निषेध किया गया हैं। इस अनुच्छेद द्वारा सभी वयस्क भारतीय नागरिकों को जिसमें महिलाएँ भी शामिल है, मतदान का अधिकार दिया गया हैं जबकि उस समय यूनाइटेड किंगडम, अमेरिका जैसे विकसीत देश के संविधान द्वारा भी सभी को वोट देने का अधिकार नहीं दिया गया था तब उस समय हमारे संविधान ने महिलाओं को भी मत देने का अधिकार देकर महिला सशक्तिकरण में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

भारत में लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण की वर्तमान स्थिति :- संविधान के लागू होने के पश्चात अभी तक लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण हेतु कई कानून जैसे- समान वेतन अधिनियम 1976, घरेलू हिंसा निवारण अधिनियम 2005, प्रसूति प्रसुविधा(संशोधन) अधिनियम 2017, दहेज प्रतिषेध अधिनियम 1961, नारी शक्ति वंदन अधिनियम 2023, कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न(निवारण, प्रतिषेध, प्रतितोष) अधिनियम 2013, महिलाओं का अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम 1956 पारित किए जा चुके है। इसके अतिरिक्त महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु विभिन्न योजनाएँ जैसे- 1993 में सामाजिक और आर्थिक रूप से सशक्त करने हेतु राष्ट्रीय महिला कोष की स्थापना, 2002 में जरूरतमंद महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने हेतु स्वाधार योजना, बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओं, पोषण अभियान, प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना, वन स्टॉप सेंटर, लाड़ली लक्ष्मी योजना आदि चलाई जा रही हैं किन्तु फिर भी हम भारत में लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण का लक्ष्य हासिल करने में विफल रहे हैं। संविधान के 73वें एवं 74वें संविधान संशोधन द्वारा यद्यपि ग्राम पंचायतों एवं नगरपालिकाओं में महिलाओं हेतु स्थान आरक्षित किए गए हैं किन्तु महिलाएँ चुनाव जीत जानें के बाद भी पंचायत में **'मुखिया पति','सरपंच पति'** एवं नगरपालिका में **'पार्षद पति'** की परंपरा के कारण महिला सशक्तिकरण के लक्ष्य को पूरा नहीं किया जा सका है। चुनाव जीतने के बाद भी महिलाएँ राजनैतिक फैसले नहीं ले सकती है। वर्तमान समय में देश की लोकसभा में कुल 543 सांसदों में से केवल 78 महिला सांसद है, वही राज्यसभा में केवल 24 महिला सांसद है। कुल 28 राज्यों में केवल 1 महिला मुख्यमंत्री हैं। राष्ट्रपति के पद पर अभी तक केवल 2 बार ही महिलाएँ निर्वाचित हो पाई है। 2019 में संसद मे केवल 14% महिला सांसद थी। संसद में महिला आरक्षण विधेयक जो कि 1998 से लंबित था, पारित होने के बावजूद, महिलाओं के जीतने की दर पुरूषों से अधिक होने के बावजूद इस बार लोकसभा चुनाव में भाजपा ने केवल 16%, कांग्रेस ने 11%, टी.एम.सी. ने 28% टिकट महिलाओं को दिए केवल बीजद ने 33% टिकट महिलाओं को दिए। ऐसी परिस्थितियों में भारत में महिलाओं का राजनीतिक सशक्तिकरण मुश्किल हैं। न्यायपालिका में उच्च स्तर पर उच्च न्यायालयों एवं उच्चतम न्यायालय में महिला न्यायाधीशों की संख्या ना के बराबर है। केवल शिक्षा के क्षेत्र में महिला और पुरूषों के बीच असमानता कम हुई है। इसके अतिरिक्त महिला कार्यबल में भी कमी आई है इसका मुख्य कारण कार्यस्थल पर महिलाओं की बढ़ती असुरक्षा एवं पुरूषों की तुलना में कम वेतन है। फिल्म उद्योग में पुरूष कलाकारों को उनकी साथी महिला कलाकार की तुलना में काफी अधिक वेतन मिलता है, इसी तरह एक लंबे समय तक भारतीय पुरूष क्रिकेट खिलाड़ियों को BCCI द्वारा महिला खिलाड़ियों की तुलना में कई गुना अधिक फीस दी जाती थी 2022 में इस भेदभाव को समाप्त किया गया। World Inequality Report **2022** के अनुसार भारत में कुल श्रमिक आय में पुरूषों का हिस्सा 82% जबकि महिलाओं का हिस्सा केवल 18% है। **जेंडर गेप रिपोर्ट 2023** के अनुसार भारत लैंगिक समानता के मामलें में कुल 146 देशों में 127वें स्थान पर रहा।

निष्कर्ष - निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि यद्यपि भारतीय संविधान

ने भारत में महिला सशक्तिकरण एवं लैंगिक समानता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है किन्तु फिर भी हम लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण के लक्ष्य को अभी तक प्राप्त नहीं कर सके हैं। इस स्थिति में सुधार हेतु लैंगिक समानता से जुड़े कानूनों को कड़ाई से लागू करने, समाज की पितृसत्तात्मक सोच में बदलाव लाने की एवं आम बजट में 'जेंडर बजट' की व्यवस्था करने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त हमें देश में लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण से जुड़े डाटा एकत्र करने एवं उसके आधार पर राज्यों की रैंक जारी करने की आवश्यकता है, जिस तरह रवांडा मे जेंडर मॉनिटरिंग ऑफेस और फिनलैण्ड में जेंडर इक्विलिटी यूनिट स्थापित की गई है। यदि राज्य सरकारें ऐसी ही ईकाईयों की स्थापना करें तो महिला सशक्तिकरण को प्रोत्साहन मिलेगा। अत: वास्तव में देखा जाए तो हमें अब महिला सशक्तिकरण एवं लैंगिक समानता को किताबों और सेमिनारों से बाहर निकालकर धरातल पर लाने की जरूरत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पाण्डेय, डॉ. जय नारायण(2009) *'भारत का संविधान'* 42वॉ संस्करण। इलाहाबाद: सेंट्रल लॉ एजेंसी.
2. गौतम, श्रुति(2023) '*भारत में महिला सशक्तिकरण*' (ऑनलाइन)। यहॉ उपलब्ध हैं: https://www.drishtiias.com/hindi/blog/women-employment-in-india(एक्सेस: 15 अप्रैल 2024).
3. Drishti IAS(2022)'*भारत में महिलाओं की स्थिति*'(ऑनलाइन)। यहॉ उपलब्ध है: https://www.drishtiias.com/hindi/daily-news-editorials/status-of-women-in-india. (एक्सेस: 13 अप्रैल 2024).
4. NEXT IAS Content Team(2024) '*भारत में महिला सशक्तिकरण और लैंगिक समानता*' (ऑनलाइन)। यहॉ उपलब्ध हैं: https://www.nextias.com/blog.(एक्सेस: 13 अप्रैल 2024).
5. ढक(2024) 'नारी शक्ति.... जीतने में पुरूषों से आगे, फिर भी बड़े दलों में उम्मीदवारी 16% ही.' *दैनिक भास्कर*, 15 अप्रैल, पृष्ठ क्र. 2
6. Drishti Media(videos) (2019) *Politics on Women Employment- AudioArticle*. 18 March. Available at :https://youtu.be/HY2oYtJtMr0?si=6j-7K8ALdUHEqLdUHEqLNu. (accessed: 12 April 2024).
7. Sansad tv (2022) *महिला सशक्तिकरण/75*– 15August. Available at: https://youtu.be/jtS1F052GgY?si=MCyN4adcMSyvL. (accessed: 11 April 2024).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

उच्च शिक्षण संस्थानों का स्थानीय आर्थिक विकास में योगदान मध्य प्रदेश के मालवा के आगर मालवा एवं निमाड़ के खरगोन क्षेत्र के विशेष सन्दर्भ में

डॉ. मितेश चौधरी* सपना सोनी**

* सह प्राध्यापक, महाराजा रणजीत सिंह कॉलेज ऑफ प्रोफेशनल साइंसेज, इंदौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, स्कूल ऑफ कॉमर्स, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, तक्षशिला परिसर, इंदौर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – मध्य प्रदेश का मालवा और निमाड़ क्षेत्र ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, जिनमें कृषि, उद्योग और शिक्षा के क्षेत्र में निरंतर विकास हो रहा है। उच्च शिक्षण संस्थान इन क्षेत्रों में स्थानिय आर्थिक विकास के प्रमुख कारक बनकर उभरे हैं। इन संस्थानों का योगदान केवल शिक्षा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह रोजगार सृजन, कौशल विकास, उद्यमिता को बढ़ावा देने और क्षेत्रीय बुनियादी ढांचे को सशक्त करने में भी अहम भूमिका निभाता है। इस शोध पत्र में, हम उच्च शिक्षण संस्थानों के इन क्षेत्रों में योगदान की गहराई से विवेचना करेंगे, विशेषकर उनके द्वारा उत्पन्न आर्थिक लाभ, सामाजिक परिवर्तन और स्थानीय उद्यमिता पर उनके प्रभाव को समझने की कोशिश करेंगे। प्राथमिक आंकड़ों के आधार पर, यह अध्ययन विभिन्न पहलुओं का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

शब्द कुंजी – उच्च शिक्षा, आर्थिक विकास, शिक्षा की गुणवत्ता, विद्यार्थी, शिक्षण संस्थाए।

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व की उभरती हुई अर्थव्यवस्था है। भारत विश्व का सबसे युवा देश है यह गौरव भारत को सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक क्षेत्रों में भी प्राप्त हैं। आर्थिक विकास किसी अर्थव्यवस्था में आर्थिक वृद्धि की प्रक्रिया को दर्शाता है । इस प्रक्रिया का केन्द्रीय उद्देश्य अर्थव्यवस्था के लिए प्रति व्यक्ति वास्तविक आय का ऊंचा और बढ़ता हुआ स्तर प्राप्त करना होता है। किसी देश के विकास के लिए मानवीय संसाधनों का विकास करना आवश्यक होता हैं। मानवीय संसाधनों के विकास की दृष्टि से उच्च शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान हैं। उच्च शिक्षा सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक परिवर्तन का एक शक्तिशाली माध्यम हैं। उच्च शिक्षा देश के आर्थिक विकास के जरिये आम जनता के जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने में योगदान देती हैं। एक शक्तिशाली समाज तथा एक समर्थ व जीवंत अर्थव्यवस्था के निर्माण करने की दृष्टि से शिक्षा के व्यापक उद्देश्य और भूमिका को दरकिनार कर सरकार ने शिक्षा व्यवस्था को बाजार शक्तियों के भरोसे छोड़ दिया हैं। इन नीतियों के फलस्वरुप देश में उपाधि प्राप्त बेरोजगारी की फौज खड़ी हो गई है, जो चिंताजनक हैं। किसी भी समाज अथवा राज्य की शिक्षा उसकी आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती हैं। शिक्षा के द्वारा सामाजिक, आर्थिक विकास होता हैं। शिक्षा सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक वातावरण तैयार करती है जिससे राष्ट्रीय विकास होता हैं।

मध्यप्रदेश – म.प्र. भारत का एक राज्य हैं जिसकी राजधानी भोपाल हैं। म.प्र. 1 नवंबर 2000 तक क्षेत्रठल की दृष्टि से भारत का सबसे बड़ा राज्य था, इस दिन मध्य प्रदेश राज्य से 14 जिले अलग कर छत्तीसगढ़ राज्य की स्थापना हुई। 2011 की जनगणना के अनुसार म.प्र. की साक्षरता 70.60% थी जसमें पुरुष साक्षरता 80.5% व महिला साक्षरता 60.0% थी। वर्ष 2017 के आकड़ों के मुताबिक राज्य में 114,418 प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय और 3851 उच्च विद्यालय व 4765 उच्चतर माध्यमिक विद्यालय है।

मालवा – मालवा महाकवि कालिदास की धरती हैं यहां की धरती हरी – भरी धन धान्य से भरपूर रही हैं। मालवा ज्वालामुखी के उदगार से बना पश्चिमी भारत का एक अंचल हैं । पश्चिमी भाग तथा राजस्थान के दक्षिण पूर्वी भाग से गठित यह क्षेत्र प्राचिन काल से ही एक स्वतंत्र राजनैतिक इकाई रहा हैं। मालवा के अधिकांश भाग का गठन जिस पठार के द्वारा हुआ हैं उसका नाम भी इसी अंचल के नाम से मालवा का पठार हैं यह वर्तमान में लगभग 47760 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फेला हुआ हैं तथा इसके अंतर्गत धार, झाबुआ, रतलाम, देवास, इंदौर, उज्जैन, आगर, मंदसौर, सिहौर, रायसेन, राजगढ़ तथा विदिशा आदि जिले आते हैं।

निमाड़ – निमाड़ मध्य प्रदेश के पश्चिमी ओर स्थित है। इसकी भौगोलिक सीमाओं में निमाड़ के एक तरफ विन्ध्य पर्वत और दूसरी तरफ सतपुड़ा हैं, जब कि मध्य में नर्मदा नदी है। पौराणिक काल में निमाड़ अनूप जनपद कहलाता था। बाद में इसे निमाड़ की संज्ञा दी गयी। फिर इसे पूर्वी और पश्चिमी निमाड़ के रूप में जाना जाने लगा। निमाड़ का जिले के रूप में गठन ब्रिटिशराज में नेरबुद डिवीजन में हुआ था जिस का प्रशासनिक मुख्यालय खण्डवा में था। निमाड़ अंचल में निम्न जिले आते है–बड़वानी, बुरहानपुर, खंडवा, खरगोन,। निमाड़ क्षेत्र में निम्न शहर आते है –बड़वाह, बड़वानी, बुरहानपुर, हरसूद, खंडवा, खरगोन, जूलवानिय, बमनाला, भीकनगावं, मूँढी, सनावद ।

साहित्य का पुनरावलोकन – इस अध्ययन ने शिक्षा संस्थानों की भूमिका, गुणवत्ता, और प्रभाव को मापने के लिए मूल्यांकन मापकों का उपयोग किया है। विशेष रूप से, उच्चतर शिक्षा संस्थानों के छात्रों की उपयोगिता और

तकनीकी क्षमताओं के प्रतिपादन की गुणवत्ता पर विचार किया गया सुधार करने के लिए अवसर प्रदान कर सकती है। इस अध्ययन ने उच्चतर शिक्षा संस्थानों के विभिन्न स्तरों के विद्यार्थियों के लिए रोजगार के अवसरों और आयोग्यता में सुधार के प्रत्येक पहलु को भी उजागर किया है। इस अध्ययन के परिणामों की समीक्षा भारतीय सरकार, शिक्षा नियामक निकायों, और शिक्षा प्रशासनिक निकायों को उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में नीतियों और कार्यक्रमों की समीक्षा और सुधार करने के लिए अवसर प्रदान कर सकती है। इस अध्ययन के माध्यम से उच्चतर शिक्षा संस्थानों के भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण और आवश्यक स्थान पर विचार किया जाना चाहिए और इसे समर्पित करने के लिए उच्चतर शिक्षा सेक्टर में सुधारों के लिए नीतियों और योजनाओं की विकास की जरूरत होती है**(आर.एस.,2010)**।

'यह शोध उच्चतर शिक्षा संस्थानों के आर्थिक विकास की भूमिका पर ध्यान केंद्रित करता है। इस अध्ययन में सृजनात्मक तत्वों का उपयोग किया गया है जो शिक्षा संस्थानों के आर्थिक विकास को समझने में मदद करते हैं। यह अध्ययन उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में नए विचारों और दिशा निर्देशों को प्रस्तुत करने का प्रयास करता है जो संस्थानों को उनके आर्थिक विकास की सुगमता में सुधार करने में मदद कर सकते हैं। अध्ययन में सृजनात्मक तत्वों का प्रयोग किया गया है जो शिक्षा संस्थानों के आर्थिक विकास को समझने में मदद करते हैं। यह अध्ययन उच्चतर शिक्षा क्षेत्र में नई सोच, नई दिशानिर्देश और उद्देश्यों को प्रस्तुत करने का प्रयास करता है, जो संस्थानों के आर्थिक विकास की सुविधा में सुधार करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। यह अध्ययन उच्चतर शिक्षा संस्थानों और उनके विभिन्न हिस्सों के लिए महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करता है, जिससे उन्हें अपने आर्थिक विकास को बेहतर बनाने के लिए उपाय निर्धारित करने में मदद मिल सकती है **(गुप्ता, 2012)**।

इस अध्ययन में उच्चतर शिक्षा संस्थानों की आर्थिक विकास में भूमिका के परिदृश्य को भारतीय संदर्भ में जांचा गया है। यह शोधपत्र भारतीय शिक्षा प्रणाली के आर्थिक मापदंडों, वित्तीय संसाधनों, सरकारी नीतियों और संगठनात्मक ढांचे का विश्लेषण करता है। इसका उद्देश्य है, उच्चतर शिक्षा संस्थानों के आर्थिक विकास की समझ बढ़ाना और उनके लिए आवश्यक नीतिगत सुझाव प्रदान करना। इस अध्ययन का अवलोकन भारत में उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में नीतियों और योजनाओं के लिए महत्वपूर्ण ज्ञान को प्रदान करने की संभावना प्रदान करता है **(यादव, और गोयल, 2014)**।

शोध की परिकल्पना

H(1): उच्च शिक्षण संस्थाएं मध्य प्रदेश के आर्थिक विकास में महती भूमिका निभा रही हैं।

शोध के उद्देश्य :

1. उच्च शिक्षण संस्थाए किस प्रकार मध्य प्रदेश के आर्थिक विकास में भूमिका निभाती हैं व किस प्रकार उसे प्रभावित करती हैं।

'शोध कार्य के अंतर्गत शोध हेतु, शोध क्षेत्र के रूप में 'मालवा एवं निमाड़' के निम्न जिलों व उनकी शासकीय शिक्षण संस्थाओं को लिया गया जिनका वर्णन निम्नानुसार है'

मालवा – निमाड़

आगर मालवा जिला – खरगोन जिला

शोध कार्य हेतु आगर मालवा जिले के निम्न शासकीय महाविद्यालयों को शोध क्षेत्र के रूप में लिया गया :

तालिका क्रमांक 1: शोध कार्य हेतु चुने गए आगर मालवा जिले के शासकीय महाविद्यालय

क्र.	महाविद्यालय का नाम	स्थान	जिला
1.	नेहरू स्नात्कोत्तर शासकीय महाविद्यालय	आगर मालवा	आगर मालवा
2.	शासकीय महाविद्यालय	बडोद	आगर मालवा
3.	शासकीय महाविद्यालय	नलखेड़ा	आगर मालवा

शोध कार्य हेतु खरगोन जिले के निम्न शासकीय महाविद्यालयों को शोध क्षेत्र के रूप में लिया गया –

तालिका क्रमांक 2: शोध कार्य हेतु चुने गए खरगोन जिले के शासकीय महाविद्यालय

क्र.	महाविद्यालय का नाम	स्थान	जिला
1	शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय	खरगोन	खरगोन
2	शासकीय महाविद्यालय	मंडलेश्वर	खरगोन
3	शासकीय महाविद्यालय	सनावद	खरगोन
4	शासकीय महाविद्यालय	सनावद	खरगोन

समंको का संकलन – शोध अध्ययन के लिए प्राथमिक समंको का एकत्रीकरण, साक्षात्कार व सामाजिक माध्यम के द्वारा ऑनलाइन, प्रश्नावली भरवाकर किया गया। उपरोक्त जिलों के अंतर्गत आने वाले शासकीय महाविद्यालयो से 500 उत्तरदाताओं में से 480 उत्तरदाताओं से प्राप्त प्रतिउत्तर का चयन किया गया। अन्य प्राप्त प्रतिउत्तर अधूरे व संतुष्टि जनक नहीं होने के कारण अस्वीकार कर दिए गए।

फैक्टर विश्लेषण– विश्लेषणात्मक – वर्तमान शोध अध्ययन मालवा–निमाड़ क्षेत्र के अंतर्गत आने वाली उच्च शिक्षण संस्थाएं जो उच्च शिक्षा प्रदान करती हैं, को केन्द्रित करते हुए प्राथमिक समंकों के आधार पर निष्कर्ष ज्ञात किये गये जिन्हे सत्यापित करने के लिए विभिन्न पहलूओं का अध्ययन किया तथा परिकल्पनाओं का निम्नानुसार सत्यापन किया गया है

सर्वप्रथम प्रश्नावली में 40 प्रश्नों को लिकर्ट तालिका के माध्यम से SPSS–26.0 सॉफ्टवेयर में अध्ययन हेतु रखा गया। इसके अंतर्गत चर विश्लेषण के माध्यम से कुछ महत्वपूर्ण कारकों का फेक्टर लोडिंग के आधार पर मान ज्ञात किया गया। ऐसे कौन से कारक महत्वपूर्ण हैं जो मध्य प्रदेश के आर्थिक विकास में उच्च शिक्षण संस्थानों की महती भूमिका का अध्ययन प्रस्तुत करने में समक्ष हैं। KMO व Bartlett's टेस्ट का प्रयोग करने का उद्देश्य यह ज्ञात करना होता है कि शोध अध्ययन में प्रयुक्त आँकड़े व प्रश्न विश्लेषण के लिए उपयुक्त है या नहीं ? साथ ही यह चर के स्तर की विश्वसनीयता की जाँच भी करता है। KMO का मान 0–6 से अधिक आने पर ही शोध–अध्ययन को आगे बढ़ाया जा सकता है। DF (Degree of Freedom) का मान 0–6 से उपर होना चाहिए व Significance, 0.05 से कम होना चाहिए। एक प्रश्न का मान 0–5 से अधिक होने पर ही अध्ययन किया जाना संभव होता है।

तालिका 3: KMO and Bartlett's Test

Kaiser-Meyer-Olkin Measure of Sampling Adequacy.		.898
Bartlett's Test of Sphericity	Approx. Chi-Square	12783.791
	Df	780
	Sig.	.000

तालिका क्र. 3 के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि KMO टेस्ट का मान 0-898 है, जो 0-6 से अधिक है जो उच्च स्तरीय संबंध को प्रकट करता है। Bartlett's टेस्ट का मान 12783.791 है, जो 40 प्रश्नों के आधार पर ज्ञात हुआ है। इसके अंतर्गत प्रत्येक प्रश्न का मान 5-0 से अधिक होना चाहिए, जो कि अधिक है व Model of fitness में आँकड़ों की समर्थता को प्रदर्शित करता है। Significance का प्राप्त मान 0-000 है जो कि 0-05 से कम है। उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि प्राप्त आँकड़ों के मान के माध्यम से शोध अध्ययन को आगे बढ़ाया जा सकता है।मध्य प्रदेश के आर्थिक विकास में उच्च शिक्षण संस्थानों की महती भूमिका का विश्लेषण को चर के लिए घुमावदार कारक मैट्रिक्स तालिका 4 में दिया गया है

तालिका 4 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 4 में सामान्य कारक गुणांक के मैट्रिक्स का प्रतिनिधित्व है। निकाले जाने वाले कारक की संख्या 5 है। अनुपात जो उच्चतम लोडिंग है (= 0-50) प्रत्येक कारक में समूहीकृत किया जाता है। अंतिम कॉलम कम्युनिटी (एच) है, यह फैक्टर द्वारा समझाया विवरण है।

शोध परिकल्पना का मूल्यांकन

प्रश्नावली की विश्वसनीयता तालिका क्रमांक 5

Reliability Statistics

Cronbach's Alpha	N of Items
0.893	40

मध्य प्रदेश के आर्थिक विकास में उच्च शिक्षण संस्थानों की महती भूमिका का मूल्यांकन करने के लिए प्रश्नावली का निर्माण किया गया जिसके अन्तर्गत जनसांख्यिकी डाटा के अलावा 40 प्रश्नों को स्केल पर आधारित करके प्रश्नावली की विश्वसनीयता का आँकलन किया गया। प्रश्नावली की विश्वसनीयता का मान 0.893 अभिप्राय है 89.3 प्रतिशत प्रश्नावली विश्वसनीय है,जिसका सत्यापन क्रानवेक अल्फा द्वारा किया गया है, अत: परिणामस्वरूप प्रश्नावली के विश्लेषण को आगे बढ़ाया जा सकता है।

H(1): उच्च शिक्षण संस्थाएं मध्य प्रदेश के आर्थिक विकास में महती भूमिका निभा रही हैं।

तालिका क्रमांक 6: One-Sample Test आर्थिक विकास में उच्च शिक्षण संस्थाओं की महती भूमिका

	Test Value = 0					
	T	Df	Sig. (2-tailed)	Mean Difference	95% Confidence Interval of the Difference	
					Lower	Upper
आर्थिक विकास में उच्च शिक्षण संस्थाओं की भूमिका	16.012	479	.000	1.71800	1.6615	1.7545

उच्च शिक्षण संस्थाएं मध्य प्रदेश के आर्थिक विकास में महती भूमिका निभा रही हैं यह जानने के लिए टी-टेस्ट परीक्षण का उपयोग किया गया है। टी-टेस्ट की तालिका के अनुसार सार्थकता मान .000<.05 है, व टी-टेस्ट का परिकलित मान 16-012 स्वतन्त्र कोटि 1 पर है, जो कि सारणीकृत मान 1-96 से अधिक हैं। अत: यह निष्कर्ष निकलता है कि परिकल्पना **H(1): उच्च शिक्षण संस्थाएं मध्य प्रदेश के आर्थिक विकास में महती भूमिका निभा रही हैं** को स्वीकृत किया जाता है।

अत: परिकल्पना सत्य सिद्ध होती है।

अत: यह निष्कर्ष निकलता है कि उच्च शिक्षण संस्थाएं मध्य प्रदेश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। हमारी अध्ययन ने स्पष्टता से दिखाया है कि उच्च शिक्षण संस्थाएं न केवल शैक्षिक क्षेत्र में अपना कार्य सम्पन्न कर रही हैं, बल्कि उनका सकारात्मक प्रभाव राज्य के आर्थिक संदर्भ में भी दिखाई दे रहा है। उन्होंने विभिन्न आर्थिक क्षेत्रों में अपने साकारात्मक योगदान के माध्यम से राज्य को विकसित करने में सहायक हो रहे हैं। इस निष्कर्ष के माध्यम से हम यह स्थापित करते हैं कि उच्च शिक्षण संस्थाएं अनेक आर्थिक गतिविधियों, रोजगार के अवसरों, और आम जनता के आर्थिक विकास में सक्रिय रूप से शामिल हो रही हैं। इस अध्ययन से प्राप्त परिणाम समाप्त होने पर हम यह कह सकते हैं कि उच्च शिक्षा के क्षेत्र का आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान है और इसे और बढ़ावा देने के लिए संबंधित स्कीमों और नीतियों की आवश्यकता है।

शोध निष्कर्ष : शोध विश्लेषणों से प्राप्त निष्कर्ष निम्नानुसार है -

शोध अध्ययन से ज्ञात होता है कि, उच्च शिक्षण संस्थाएँ विभिन्न पैरामीटर्स पर ध्यान केंद्रित करके छात्रों को उच्च स्तरीय शिक्षा प्रदान करने के साथ-साथ उन्हें विभिन्न क्षेत्रों में नौकरी के लिए तैयार करने में सक्षम हैं। उच्च शिक्षा के इस प्रणालीकृत योगदान के परिणामस्वरूप, छात्रों को सही रूप से तैयार किया जा रहा है, जिससे वे समृद्धि और विकास के क्षेत्र में अधिक सक्षम हो रहे हैं। शोध अध्ययन के परिणामों के अनुसार, संस्थाओं द्वारा प्रदान की जा रही उच्च शिक्षा न केवल शिक्षार्थियों को उच्चतम शिक्षा के क्षेत्र में प्रवेश करने का अवसर प्रदान कर रही है, बल्कि यह सामाजिक और आर्थिक गतिविधियों को भी बढ़ावा दे रही है। इस प्रकार की शिक्षा आर्थिक साक्षरता को बढ़ावा देने, नौकरी अवसरों को बढ़ाने और सामाजिक समानता की दिशा में कदम उठाने में सहायक हो रही है। यह आत्मनिर्भरता और रोजगार सृष्टि में भी सहायक हो रही है, जिससे समृद्धि की दिशा में प्रगति हो रही है।

शिक्षा की चुनौतियाँ एवं समाधान - प्रश्न उठता है कि वे कौन सी चुनौतियां हैं जिनका सामना करने की कवायद शिक्षक-शिक्षा को करनी है। इसका उत्तर देने के लिए शिक्षा के समक्ष जिन क्षेत्रों से चुनौतियां सामने आ रही हैं अथवा भविष्य में और तीव्र होकर सामने आने की आशंका है उन्हें तीन प्रमुख भागों में बांटा जा सकता है। सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग के अन्तर्गत आर्थिक क्षेत्र से उत्पन्न होने वाली चुनौतियां हैं। हम जानते हैं कि 1992 के बाद भारत की आर्थिक नीति में कई मूलभूत परिवर्तन हुए हैं और शिक्षा के क्षेत्र में व्यय की जा रही धनराशि का विश्लेषण, लागत और लाभ के आधार पर किया जा रहा है। शिक्षा संस्थाओं से अपने संसाधन स्वयं जुटाने की बात की जा रही है और निजीकरण को बढ़ावा मिल रहा है। अंतिम चुनौती भरा क्षेत्र राजनीतिक है। यद्यपि अपने देश में लोकतांत्रिक शासन-प्रणाली प्रचलित है तथापि नीतिगत अस्पष्टता अथवा व्याख्या भिन्नता के कारण कभी-कभी कुछ व्यवधान आ जाते हैं। आंतरिक एवं बाह्य दबाव समूह भी निर्णयों को प्रभावित करते हैं। आंतरिक स्तर पर राजनैतिक दल तथा बाह्य स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं दबाव समूह का कार्य करती हैं जिससे नीतियों के निर्माण तथा उनके क्रियान्वयन पर प्रभाव पड़ता है ।

उपसंहार - शोध अध्ययन के तथ्यों से स्पष्ट होता है कि मालवा निमाड़ क्षेत्र के अंतर्गत उच्च शिक्षण संस्थाएं पर्याप्त संख्या में उपलब्ध हैं, साथ ही साथ उच्च शिक्षण संस्थाओं द्वारा प्रदान किया गया उच्च शिक्षा क्षेत्र के विकास में भी भरपूर योगदान प्रदान करती है। उच्च शिक्षा, जो उच्च शिक्षण

संस्थाओं द्वारा प्रदान की जा रही है, समाज में सकारात्मक बदलाव और आर्थिक समृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह विद्यार्थियों को न केवल विशेषज्ञता क्षेत्र में अग्रणी बनाने में सहारा प्रदान करती है, बल्कि उन्हें समाज में जिम्मेदार नागरिक बनाने का भी कार्य करती है। उच्च शिक्षा के माध्यम से विकसित किए गए कौशल और ज्ञान का उपयोग समाज के समस्त क्षेत्रों में किया जा सकता है, जैसे कि विज्ञान, साहित्य, कला, और सामाजिक विज्ञान। इसके परिणामस्वरूप, यह एक समृद्ध समाज की दिशा में बदलाव लाने में मदद कर सकती है और राष्ट्रीय विकास को प्रोत्साहित कर सकती है। बढ़ती तकनीकी निर्भरता के युग में, विद्यार्थियों को मूल्यपरक रोजगारों की दिशा में शिक्षा प्रदान करना आवश्यक है। यह एक महत्वपूर्ण समय है जब तकनीकी उन्नति और विकास ने नौकरी के क्षेत्रों में नए मानकों को स्थापित किया है और विभिन्न क्षेत्रों में नौकरीयों की मांग बढ़ा दी है। विद्यार्थियों को उच्चतम स्तर की तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने का मौका मिलना चाहिए, जिससे वे स्वतंत्र रूप से नए और सुगम मार्गों की ओर बढ़ सकें। इससे न केवल उनका व्यक्तिगत विकास होगा, बल्कि वे समाज में भी सकारात्मक रूप से योगदान देंगे। समृद्धि और विकास के पथ पर चलने के लिए, उच्च शिक्षा से जुड़े कौशलों और ज्ञान को मजबूत बनाए रखना महत्वपूर्ण है। यह न केवल एक व्यक्ति को उसके चयनित क्षेत्र में अग्रणी बनाए रखने में मदद करेगा, बल्कि समृद्धि के पथ में पूरे समाज को भी साथ लेने में सहायक होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. https://www.allresearchjournal.com/archives/2020/vol6issue2/PartE/6-11-146-542.pdf
2. https://ncert.nic.in/textbook/pdf/ihss102.pdf
3. Meyer, Milton Walter.(1976)." *A Short History of the Subcontinent". South Asia*. pages no. 1, ISBN 0-8226-0034-X)
4. http://www.census2011.co.in/census/state/madhya+pradesh.html
5. http://www.educationportal.mp.gov.in/Public/Schools/ssrs/State_School_Block.aspx?MP=1
6. https://educationforallinindia.com/issues-challenges-indian-education-system-is-facing/
7. गुप्ता, मनीष. (2012)- उच्चतरशिक्षा संस्थानों के आर्थिक विकास में भूमिका: एक सृजनात्मक अध्ययन। अर्थशास्त्र विभागीय अध्ययन, 15(3) 78-92
8. https://hi.wikipedia.org/wiki/मध्यमप्रदेश/शिक्षा
9. https://hi.wikipedia.org/wiki/मालवा/मुखम-स्थान-एवं-नगर
10. https://hi.wikipedia.org/wiki/निमाड़
11. https://highereducation.mp.gov.in/
12. hhttp://hindimedia.in/depending-on-the-quality-of-higher-education/?print=print
13. Mohun P. Odit, K.Dookhan and S. Fauzel (2010) The Impact of Education On Economic Growth: The Case Of Mauritius. International Business & Economics Research Journal.Volume 9, Number 8, pp.141-145.
14. प्रकाश, आर. एस. (2010). उच्चतर शिक्षा संस्थानों का भारतीय अर्थव्यवस्था में योगदान: एक अध्ययन। अर्थशास्त्र अनुसंधान, 12(2), 45-62).
15. http://www.socialresearchfoundation.com/upoadresercchpapers/6/161/1708190841091st%20ravindra%20modi.pdf
16. यादव, सुरेशचन्द्र, और गोयल, सुशील. (2014). उच्चतर शिक्षा संस्थानों की आर्थिक विकास में भूमिका: भारतीय परिदृश्य। शिक्षा सांख्यिकी, 17(1), 34-48.

तालिका 4: घुमावदार कारक मैट्रिक्स

स.क	प्र क्र	विवरण	कारक 1	कारक 2	कारक 3	कारक 4	कारक 5	कम्युनिटी (एच)
1	8	गुणवत्ता युक्त शिक्षा प्रदान करना	.915					.792
2	6	सेमेस्टर प्रणाली के माध्यम से उच्च शिक्षा में व्यापक परिवर्तन	.911					.765
3	5	पुराने शिक्षण नियम एवं नीति में बदलाव	.890					.726
4	1	उच्च शिक्षण संस्थाएं पर्याप्त संख्या में उपलब्ध	.887					.585
5	7	सामाजिक, आर्थिक,सांस्कृतिक, नैतिक एवंआध्यात्मिक मसलों परसोच–विचार	.881					.805
6	9	बढ़ती तकनीकी निर्भरता के समय में विद्यार्थियों को मूल्यपरक रोजगारोन्मुखी शिक्षा देना	.876					.834
7	2	उच्च शिक्षण क्षेत्र के विकास में योगदान	.864					.785
8	3	सामाजिक एवं आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा	.850					.847
9	10	अधोसंरचनात्मक ढाँचे में बदलाव की आवश्यकता	.829					.773
10	15	आर्थिक विकास को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका	.792					.704
11	14	आर्थिक उदारीकरण के कारण शिक्षा के क्षेत्र मे शिक्षा संस्थानों से अपेक्षाएँ	.770					.891
12	4	शिक्षा से संबंधित बनाए गए नियम एवं नीतियां	.750					.903
13	5	शिक्षा के क्षेत्र में परिदृश्य बहुत तेजी से बदला	.741					.577
14	12	व्यक्ति के जीवन में उच्च मूल्यों का विकास	.739					.613
15	11	अकादमिक गतिविधियों को राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप विकसित करने का प्रयास	.735					.650
16	30	शिक्षा की गुणवत्ता और दक्षता में सुधार		.763				.497
17	29	सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा		.725				.706
18	36	शिक्षकों को रोल–मॉडल बनने का अवसर		.638				.745
19	26	आर्थिक वृद्धि और विकास में सकारात्मक योगदान		.634				.687
20	19	आवश्यक कौशल और ज्ञान		.611				.669
21	27	प्रौद्योगिकी और बुनियादी ढांचे जैसे शैक्षिक संसाधनों का प्रभावी उपयोग		.538				.674
22	40	कल्याणकारी राज्य को प्रगति करने और अन्य विकासशील और विकसित राष्ट्रों के साथ तालमेल		.505				.680
23	33	उच्च शिक्षा देश की संस्कृति को गढ़ने का हथियार		.500				.591
24	21	साक्षरता दर में वृद्धि			.738			.727
25	22	व्यावसायिक प्रशिक्षण पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता			.719			.706
26	28	उच्च शैक्षिक प्राप्ति के स्तर से नवाचार और उद्यमिता में वृद्धि			.644			.592
27	16	रोजगार के अवसर			.630			.619
28	23	नीतियों को आर्थिक विकास के लिए एक प्रमुख चालक के रूप में शिक्षा को प्राथमिकता			.612			.507
29	37	समाज में 'भावी पीढ़ी–निर्माण'			.602			.634
30	31	'अर्न व्हाइल यू लर्न' योजना				.698		.644
31	34	विद्यार्थियों को रोजगारोंमुखी प्रोजेक्ट आवंटित करना				.676		.647
32	39	सरकार का सम्मिलित प्रयास				.650		.509
33	35	शिक्षण प्रणाली में शिक्षकों को भी अपने विकास का मौका				.645		.685
34	32	'अर्न व्हाइल यू लर्न' योजना को जनभागीदारी के माध्यम से किए जाने की आवश्यकता				.640		.670
35	38	आर्थिक नीतियां और शिक्षा के लिए धन का आवंटन				.634		.571
36	25	आर्थिक विकास में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए सशक्त					.790	.538
37	24	उच्च शिक्षण संस्थानों और उद्योगों के बीच सहयोग					.785	.557
38	20	आय असमानता को कम करने में मदद					.767	.535
39	18	शिक्षा में निवेश					.765	.672
40	17	उच्च उत्पादकता और आर्थिक विकास					.732	.488

(स्रोत:– प्राथमिक समंक)

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भूमि उपयोग परिवर्तन का मूल्यांकन एवं उसका भोपाल महानगरीय उपातं की ग्रामीण पृष्ठभूमि पर प्रभाव

डॉ. दुर्गेश कुर्मी*

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, भोपाल (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – मानवीय आर्थिक गतिविधियों के फलस्वरूप भूमि उपयोग में तीव्र गति से लगातार परिवर्तन हो रहे हैं। भूमि उपयोग परिवर्तन संबंधी आंकड़ों की सटीक उपलब्धता प्राकृतिक संसाधन एवं पर्यावरण प्रबंधन, नियोजन, निगरानी, प्रशासनिक योजनाओं जैसे अनेक अनुप्रयोगों के लिए अति महत्वपूर्ण होते हैं। भूमि उपयोग परिवर्तन का मूल्यांकन समस्थानिक विधि से दशकीय आधार पर 2001 से 2021 तक कृषि भूमि, निर्माण क्षेत्र, जलीय निकाय, वन भूमि, बंजर भूमि आदि चरों का प्रयोग किया गया है, जिसमें लैण्डसेट 5टीएम 2001, लैण्डसेट 7ईटीएम 2011 एवं लैण्डसेट 8ओएलआई 2021 जैसी सेटेलाइट इमेजरी का उपयोग कर आर्क जीआईएस सॉफ्टवेयर के माध्यम से विश्लेषण किया गया। भोपाल महानगर में भूमि उपयोग परिवर्तन का प्रमुख कारण नगरीय फैलाव है, जो कि महानगर के दक्षिण एवं दक्षिण–पश्चिम दिशा में अप्रत्याशित रूप से हो रहा है। 2001 से 2021 के मध्य भोपाल महानगर के भूमि उपयोग में क्रमशरू कृषि भूमि, जलीय निकाय, वन भूमि, बंजर भूमि में 33%, 17.27%, 42%, 7.36% का ह्रासात्मक एवं निर्माण क्षेत्र में 316% की सकारात्मक परिवर्तन देखा गया। इसके परिणामस्वरूप महानगरीय उपातं पृष्ठभूमि पर सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव जैसे पारस्परिक सामाजिक संबंधों की कमी, पारस्परिक समन्वय एवं समरस्ता की कमी, व्यवसायिक संरचना में परिवर्तन तथा जीवन स्तर पर प्रभाव आदि स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं।

शब्द कुंजी – भूमि उपयोग परिवर्तन, नगरीय फैलाव, भोपाल महानगर।

प्रस्तावना – पृथ्वी पर सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधनों में से एक भूमि है, जो पृथ्वी पर जीवन को बनाए रखने एवं विकास का आधार है। भूमि संसाधन देश का सबसे मूल्यवान प्राकृतिक संपदा होती है और उसका नियोजित और उचित तरीके से उपयोग अत्यंत चिंता का विषय है, क्योंकि अन्य सभी प्राकृतिक एवं मानवीय क्रियाकलाप भूमि पर ही निर्भर होते हैं। जब भूमि का उपयोग मानव अपनी आवश्यकतानुसार कर रहा हो, तो उस भू–भाग के लिए भूमि–उपयोग शब्द का प्रयोग उचित होगा।[1] अर्थात् जब भूमि उपयोग में भू–भाग का प्राकृतिक स्वरूप क्षीण हो जाता है तथा मानवीय क्रियाओं का योगदान महत्वपूर्ण हो जाता है तभी इसे भूमि उपयोग की संज्ञा देते हैं। भूमि उपयोग उस कार्य या उद्देश्य से संबंधित है जिसके लिए भूमि का उपयोग जनसंख्या द्वारा किया जाता है। इसे उन मानवीय गतिविधियों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो सीधे तौर पर भूमि संसाधनों का उपयोग करने या उन पर प्रभाव डालने से संबंधित हैं।[2] प्राकृतिक वातावरण में मानवीय गतिविधियाँ भूमि उपयोग और भूमि आवरण परिवर्तन की मुख्य प्रेरक शक्तियों में से एक हैं।[3] प्राकृतिक क्षेत्रों का औद्योगिक या कृषि क्षेत्रों में परिवर्तन मुख्य रूप से भूमि आवरण में नाटकीय परिवर्तन के लिए उत्तरदायी हैं, विशेषकर विकासशील देशों में।[4] भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तन का संबंध इससे जुड़ा है कि कैसे मानव एवं पर्यावरण अंतरक्रिया करते हैं।[5] भूमि उपयोग परिवर्तन के प्रतिरूप विश्लेषण करने से, भूमि उपयोग प्रबंधकों और निर्णय निर्माताओं में मानव और प्राकृतिक प्रक्रियाओं के मध्य संबंधों की बेहतर समझ प्राप्त हो सकती है।[6] वैश्विक स्तर पर भूमि उपयोग में परिवर्तन के लिए जनसंख्या में तीव्र वृद्धि सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। भूमि उपयोग और जल की गुणवत्ता में परिवर्तन औद्योगिकीकरण, नगरीकरण और खनन जैसी मानवजनित गतिविधियों से प्रभावित होते हैं।[7] सूदूर संवेदन आंकड़े भूमि उपयोग परिवर्तन के अध्ययन के लिए बहुउपयोगी एवं मूल्यवान हैं।[8]

भोपाल महानगर के भूमि उपयोग के प्रतिरूप का परीक्षण करते हुए, निष्कर्षतरू नगर में मुख्य रूप से विकसित क्षेत्रों में पांच प्रकार के नगरीय भूमि उपयोग हैं – सर्वाधिक आधिपत्य आवासीय भूमि का है, इसके बाद औद्योगिक, सार्वजनिक और अर्ध–सार्वजनिक, मनोरंजन और परिवहन का स्थान है। नगर में व्यापक व्यावसायिक भूमि उपयोग के बावजूद, विभिन्न क्षेत्रों में दैनिक आवश्यकता को पूरा करने के लिए आवासीय क्षेत्रों में छोटे शॉपिंग सेंटर हैं। कई मनोरंजक स्थान हैं और शहर में एक अच्छा परिवहन नेटवर्क है जो नगरीय गतिविधियों के विकास में मदद करता है। नगर में अन्य सेवाएं, औद्योगिक और व्यापारिक और वाणिज्यिक गतिविधियां प्रमुख कार्य हैं।[9] विश्लेषण से यह अनुभव किया गया है कि भोपाल नगर का क्षैतिज विस्तार तीव्र गति से हो रहा है, 1991 में नगरीय विस्तार जहां 15.8 वर्ग किमी था, वहीं 2016 में 184.5 वर्ग किमी हो गया। इसमें स्थानिक असमानता के साथ 7 वर्ग किमी की दर से प्रतिवर्ष परिवर्तन हुआ। इस विस्तार का सीधा प्रभाव भूमि उपयोग/भूमि आवरण पर पड़ा है। निर्माण भूमि का विस्तार मुख्यत: कृषि और वन भूमि पर होता है। ये दोनों प्रथम वर्ग हैं जो इस विस्तार प्रक्रिया से अत्याधिक प्रभावित हैं।[10] भोपाल का उद्भव

और इतिहास, जिसका विस्तृत वर्णन किया गया है, अलग-अलग शासकों के शासन काल में भोपाल में विभिन्न निर्माण कार्य हुये जिससे एक नगर के रूप में एक मजबूत आधार प्राप्त किया। कैसे हाल के दिनों मभिोपाल एक प्रमुख शहर के रूप में उभरा है। मध्य प्रदेश के अन्य नगरों की तुलना में भोपाल के विकास में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है।[11] इस प्रकार का अध्ययन किसी क्षेत्र में आवश्यक उपयुक्त विकास के बारे में समझ प्रदान करता है। भोपाल को अध्ययन के क्षेत्र के रूप में चुनने के विभिन्न कारणों में से एक यह है कि सरकार द्वारा इसे स्मार्ट सिटी के रूप में विकसित करने के लिए मान्यता प्राप्त है।[12]

उद्देश्य:

1. भोपाल महानगर के भूमि उपयोग परिवर्तन का मूल्यांकन करना।
2. भोपाल महानगर के भूमि उपयोग परिवर्तन का महानगरीय उपातं की पृष्ठभूमि पर प्रभावों का अध्ययन करना।

शोध प्राविधि – अध्ययन में उपयोग किए गए आंकड़ों के स्रोत निम्न प्रकार हैंख-

1. भारतीय सर्वेक्षण विभाग का धरातल पत्रक क्र. F43/F7, F8, मापनी 1:50,000
2. भोपाल नगरीय विकास योजना 1991, 2005, 2031 (ड्राफ्ट)

सारणी क्र. 01 इमेजरी विवरण

क्र.	सैटेलाइट	इमेजरी	वर्ष
1	लैंडसैट	लैंडसैट टीएम	1991
2	लैंडसैट	लैंडसैट ईटीएम	2001
3	लैंडसैट	लैंडसैट ईटीएम	2011
4	लैंडसैट	लैंडसैट ओआईएल	2021

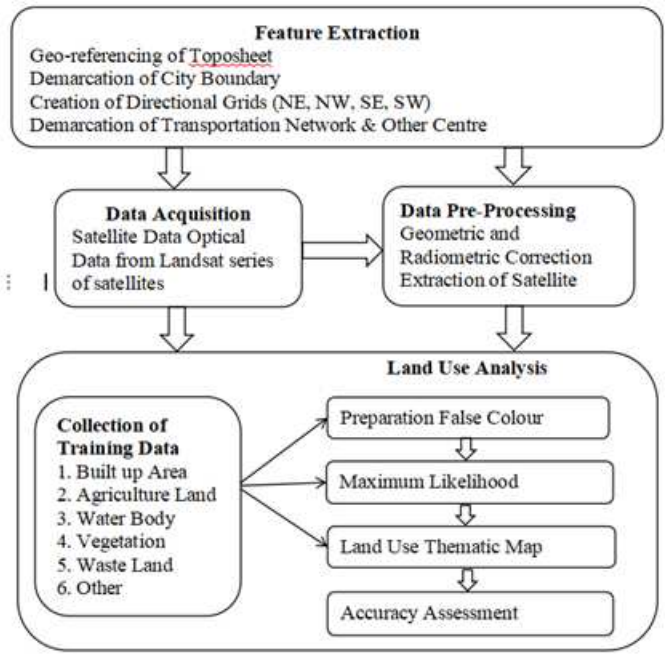
यह अध्ययन कार्य 1991 से 2021 तक 30 वर्षों की समयावधि को लेकर किया गया है। अध्ययन में द्वितीयक आंकड़ों के साथ एक एकीकृत भू-स्थानिक दृष्टिकोण यानी सुदूर संवेदी और जीआईएस को अपनाया गया है। सुदूर संवेदन और जीआईएस आंकड़ों को क्रमश: एर्डास इमेजिन (लीका जियोसिस्टम द्वारा विकसित) और आर्कजीआईएस (ईएसआरआई द्वारा विकसित) की मदद से विश्लेषित किया गया।

प्राथमिक आंकड़ों का एकत्रिकरण प्रश्नावली से शोधकर्ता द्वारा ऑनलाइन माध्यम से किया गया।

आरेख क्रमांक 01 : आधारभूत आंकड़े



आरेख क्रमांक 02 : इमेजरी विश्लेषण के चरण



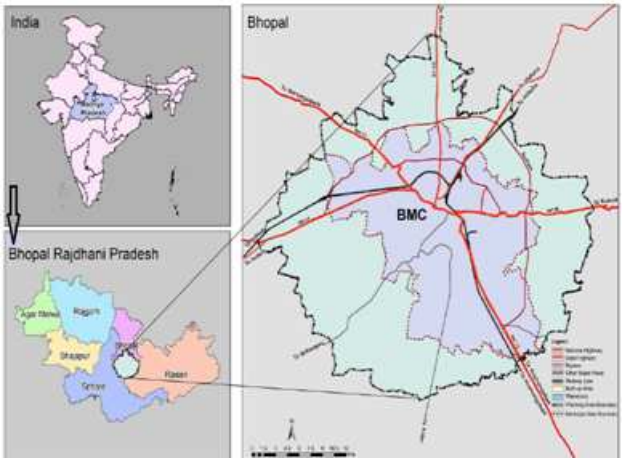
सारणी क्रमांक 02: चयनित भूमि उपयोग के वर्ग

क्र.	वर्ग	वर्णन
1	जलीय निकाय	नदी, तालाब, नहर, झीलें, डेम
2	वन भूमि	सदा हरित वन, पर्णपाती वन, विरल वन, सघन वन, वनस्पति, घास भूमि
3	निर्माण भूमि	आवासीय भूमि, वाणिज्यिक क्षेत्र, औद्योगिक क्षेत्र, परिवहन मार्ग,
4	कृषि भूमि	आर्द्र एवं शुष्क फसल क्षेत्र
5	खुली भूमि/ बंजर भूमि	परती भूमि

स्त्रोत: भोपाल विकास योजना, 1991

अध्ययन क्षेत्र – भौगोलिक दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र मालवा पठार के पहाड़ी इलाके में 77°25' पूर्वी देशांतर और 23°15' उत्तरी अक्षांश पर तथा समुद्र तल से 550-600 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। भोपाल मालवा पठार के भीतर पहाड़ी भूभाग पर स्थित है, जो ज्वालामुखी उद्गार से निर्मित है। भोपाल अपनी उत्तर-पूर्व सीमा विदिशा जिले के साथ और उत्तर-पश्चिम सीमा राजगढ़ जिले के साथ साझा करता है। रायसेन और सीहोर जिला क्रमश: दक्षिण-पूर्व और दक्षिण-पश्चिमी परिधि से भोपाल को घेरे हुए है। प्राकृतिक रूप से भोपाल को दो भागों में बांटा जा सकता है - पहाड़ी और पठारी। नगर की दक्षिणी सीमाएँ विंध्य पहाड़ी श्रृंखला के समानान्तर विस्तृत हैं। यह पर्वत श्रृंखला भोपाल के दक्षिण से उत्तरी क्षेत्र तक भोपाल नगर की सीमा के समानान्तर विस्तृत है। दक्षिणी विंध्याचल श्रेणी से सटी नर्मदा घाटी की उपस्थिति भोपाल के कृषि क्षेत्र के लिए वरदान है। यह घाटी भोपाल के प्रमुख क्षेत्रों मं पायी जाने वाली आग्नेय चट्टानों के अनाच्छादन से बनी काली मिट्टी को उर्वरता प्रदान करती है। हालाँकि, विंध्यांचल पर्वत श्रृंखला की दक्षिणी-पूर्वी शाखा बलुआ पत्थर की पहाड़ियों से बनी हुई है।

आरेख क्रमांक 03 : अध्ययन क्षेत्र



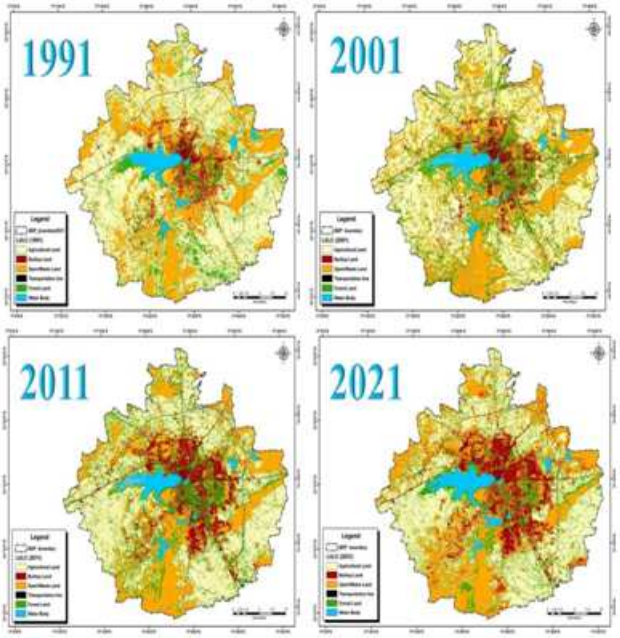
स्त्रोत : भोपाल विकास योजना

विश्लेषण – वर्तमान समय में भूगोलवेत्तओं एवं भू-वैज्ञानिकों को स्थानिक गतिशीलता, भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तन को समझना एक चुनौती पूर्ण कार्य है क्योंकि इसके विश्लेषण के लिए कोई एक सर्वभौम्य मान्य मॉडल नहीं है।

भूमि उपयोग परिवर्तन – भूमि उपयोग विश्लेषण अध्ययन करता है कि कहाँ और किस प्रकार की मानवीय गतिविधियाँ हो रही हैं। अलग-अलग गतिविधियों के लिए भूमि की अलग-अलग आवश्यकताएँ हो सकती हैं और उनके प्रभाव भी अलग-अलग होते हैं। इस प्रकार के विश्लेषण से मानवीय गतिविधियों के परिणामस्वरूप भोपाल महानगर के भूमि उपयोग परिवर्तन को समझा जा सकता है।

आरेख क्रमांक 04 : भूमि उपयोग मानचित्र

(क) 1991 (ख) 2001 (ग) 2011 (घ) 2021



स्त्रोत : लेखक द्वारा स्वत: निर्मित

आरेख क्र. 4 (क) में दर्शाये गये भूमि उपयोग मानचित्र 1991 में भोपाल महानगर के कुल नगरीय क्षेत्रफल में से 43.53 प्रतिशत कृषि भूमि का, 38.58 प्रतिशत बंजर भूमि का, 11.89 प्रतिशत वन भूमि का, 4.45 प्रतिशत जलीय भूमि का एवं 1.55 प्रतिशत निर्माण क्षेत्र का भाग था। इस समय सर्वाधिक भू-भाग पर कृषि कार्य एवं संबंधित क्रियाकलाप संलग्न थे वही सबसे कम क्षेत्र पर निर्माण क्षेत्र (आवासीय भूमि) का विस्तार था। 1991 के भूमि उपयोग परिवर्तन के अध्ययन से प्रदर्शित होता है कि भोपाल नगर का फैलाव अर्द्धवृत्तकार रूप में हुआ है, इसका मुख्य कारण बड़ी और छोटी झील की भौगोलिक स्थिति है। चूंकि झील का विस्तार नगर के पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम में अधिक है। इस कारण नगर के संपूर्ण निर्माण कार्य पुराना भोपाल (जो कि नगर का केन्द्र है) के सीमावर्ती क्षेत्र में दक्षिण में छोटी झील के किनारे बेरसिया मार्ग की ओर , दक्षिण-पूर्व में होशंगाबाद मार्ग (NH-12) के किनारे (प्रताप नगर, पुराना सुभाष नगर), पूर्व में भेल टाउन्शिप, उत्तर-पूर्व में सागर रायसेन मार्ग, उत्तर-पश्चिम में बड़ी झील के किनारे पुराने भोपाल से लालघाटी की ओर देखने को मिलता है। उपर्युक्त मार्ग के मध्य में पुराने भोपाल से बाह्य परिसीमा की ओर अत्याधिक निर्माण कार्य होने के कारण 1991 के पूर्व अर्द्धवृत्तकार प्रतिरूप में नगर का फैलाव हुआ है।

आरेख क्र. 4 (ख) में दर्शाये गये भूमि उपयोग मानचित्र 2001 से स्पष्ट है कि कुल नगरीय भूमि का 40.24 प्रतिशत कृषि भूमि का, 38.06 प्रतिशत बंजर भूमि का, 11.23 प्रतिशत वन भूमि का, 6.49 प्रतिशत जलीय भूमि का एवं 3.98 प्रतिशत निर्माण क्षेत्र का भाग था, जो कि 1991 की तुलना में 2001 में कृषि भूमि, बंजर भूमि, वन भूमि, जलीय भूमि, निर्माण क्षेत्र में प्रतिवर्ष क्रमश: - 3.35, - 0.53, - 0.66, - 0.47, 5.02 वर्ग किमी प्रतिवर्ष की दर से वृद्धि हुई।

1991 से 2001 की अवधि के नगरीय भूमि उपयोग प्रतिरूप का विस्तृत अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि भोपाल नगर का विस्तार नगर के कोर (पुराना भोपाल) से मुख्य मार्गों के सहारे बाहरी सीमा की ओर रेखीय या रिबन प्रतिरूप (Linear/Ribbon pattern) में हुआ है। दक्षिण-पूर्व में छभ-12 के सहारे रेलवे कॉलोनी से मिसरौद की ओर, दक्षिण में कोलार रोड की ओर, उत्तर-पूर्व में NH-86 के समानान्तर कैन्ची चोला तिराहे के चारों ओर तथा वाईपास के सहारे नवजीवन कॉलोनी, नवाब कॉलोनी, देवकी नगर, नारियल खेडा आदि, उत्तर पश्चिम में झील के किनारे NH-12 के समानान्तर बल्लभ नगर और लालघाटी से पश्चिम की ओर, SH-18 के साथ-साथ पूजाश्री नगर, हेमू कॉलानी की ओर फैलाव हुआ। आरेख क्र. 4 (ग) में दर्शाये गये भूमि उपयोग मानचित्र 2011 से स्पष्ट है कि कुल नगरीय भूमि उपयोग का 36.17 प्रतिशत कृषि भूमि का, 37.37 प्रतिशत बंजर भूमि का, 9.84 प्रतिशत वन भूमि का, 3.60 प्रतिशत जलीय भूमि का एवं 13.02 प्रतिशत निर्माण क्षेत्र का भाग था, जो कि 2001 की तुलना में 2011 में कृषि भूमि, बंजर भूमि, वन भूमि, जलीय भूमि, निर्माण क्षेत्र में प्रतिवर्ष क्रमश: - 4.13, - 0.7, - 1.42, - 0.39, 6.64 वर्ग किमी प्रतिवर्ष की दर से वृद्धि हुई।

2001 से 2011 की अवधि में नगरीय भूमि उपयोग परिवर्तन के परिणामस्वरूप नगरीय फैलाव नगरीय केन्द्र (Old Bhopal) से कुछ किमी. दूर सघन रूप से हुआ है, जिससे नवीन केन्द्र स्पष्ट प्रदर्शित होते हैं जो कि लीप फ्राग फैलाव प्रतिरूप कहलाता है। नगर के दक्षिण-पूर्व में NH-12 के समानान्तर मिसरोद (स्वर्णनगर, श्रीराम कॉलोनी, स्नेहनगर, भैरवपुर) मण्डद्वीप औद्योगिक केंद्र। दक्षिण में कोलार रोड के साथ-साथ कोलार

(सरधर्म कॉलोनी, महाबाली नगर, श्रीदीपुरम, बनजारी, गेहूं खेड़ा, राजहर्ष कॉलोनी) दक्षिण-पश्चिम बिलकिसगन्ज रोड के किनारे कोटरा सुलतानाबाद, कमला नगर, गोमती कॉलोनी, सी-सेक्टर, द्वारकापुरी कॉलोनी, पूर्व में राष्ट्रीय राजमार्ग 86 के समानान्तर आनंद नगर (प्रेस कॉलोनी, गोपाल नगर, सुख सागर), उत्तर-पश्चिम में NH-18 के समांतर लालघाटी, हेमू कॉलानी, ब्लाक बी, बैरागढ़ आदि। जैसे अनेक छोटे बड़े नवीन नगरीय केन्द्र भोपाल नगर के फैलाव के फलस्वरूप नवीन नियोजित अधिवास के रूप में भोपाल नगर में सम्मिलित हुए जो स्पष्ट रूप से लीपफ्राग फैलाव प्रतिरूप को प्रदर्शित करते हैं।

आरेख क्र. 4 (घ) में दर्शाये गये भूमि उपयोग मानचित्र 2021 से स्पष्ट है कि कुल नगरीय भूमि उपयोग का 26.61 प्रतिशत कृषि भूमि का, 36.58 प्रतिशत बंजर भूमि का, 6.2 प्रतिशत वन भूमि का, 3.3 प्रतिशत जलीय भूमि का एवं 27 प्रतिशत निर्माण क्षेत्र का भाग था। जो कि 2011 की तुलना में 2021 में कृषि भूमि, बंजर भूमि, वन भूमि, जलीय भूमि, निर्माण क्षेत्र में प्रतिवर्ष क्रमश: - 9.72, - 0.8, - 3.4, - 0.32, 14.22 वर्ग किमी प्रतिवर्ष की दर से वृद्धि हुई।

2011 से 2021 के दशक में नगरीय भूमि उपयोग परिवर्तन के परिणामस्वरूप महानगरीय फैलाव जो 2011 के दशक में नवीन केन्द्रों के रूप में था से परिवर्तित हो कर सघन अधिवासित हो गया।

नगरीय भूमि का रूपांतरण – भूमि उपयोग एवं भूमि आवरण परिवर्तन की दर एक स्थान से दूसरे स्थान पर भिन्न होती है, यह भिन्नता एक ही नगर में भी हो सकती है।[13] जैसे भोपाल महानगर में विभिन्न दिशाओं में अधिवास के प्रसार के कारण निर्माण क्षेत्र में अलग-अलग दिशाओं में भिन्न प्रतिरूप देखने को मिलता है। इसके परिणामस्वरूप नगरीय भूमि रूपांतरण की दर में दिशाओं एवं समय के अनुसार विभिन्नता देखने को मिलती है। दशकीय अध्ययन से यह स्पष्ट होता है की परिवर्तन की दर भिन्न रही है।

सारणी क्रमांक 03 : नगरीय भूमि का रूपांतरण

भूमि उपयोग	1991 में क्षेत्रफल वर्ग किमी	2001 में क्षेत्रफल वर्ग किमी	2011 में क्षेत्रफल वर्ग किमी	2021 में क्षेत्रफल वर्ग किमी
कृषि भूमि	442.64	409.16	367.83	270.58
निर्माण क्षेत्र	15.8	66	132.42	274.62
जलीय निकाय	45.23	40.51	36.65	33.42
वन भूमि	120.88	114.23	100	66.28
बंजर भूमि	392.35	387	380	372
कुल	1016.90	1016.90	1016.90	1016.90

स्त्रोत : लेखक द्वारा स्वत: निर्मित

कृषि भूमि – कृषि भूमि समतल प्राय: भूमि होती है जिस पर निर्माण कार्य करना सबसे आसान होता है यही कारण है कि भोपाल महानगर में सर्वाधिक भूमि का ह्रास कृषि भूमि का हुआ है। जहाँ 1991 में कुल भूमि का 442.64 वर्ग किमी वहीं 2001 में 409.16 वर्ग किमी, 2011 में 367.83 वर्ग किमी, 2021 में 270.58 वर्ग किमी क्षेत्र कृषि भूमि उपयोग के रूप में संलग्न था। 1991 से 2001 के मध्य 10 वर्षों में 7.56% परिवर्तन के साथ 33.48 वर्ग किमी कृषि भूमि का ह्रास हुआ। वहीं 2001 से 2011 की अवधि में 10% परिवर्तन के साथ 41.33 वर्ग किमी कृषि भूमि का ह्रास हुआ। इसके साथ ही 2011 से 2021 के दशक में सर्वाधिक 26.43% ह्रासात्मक परिवर्तन के साथ कृषि भूमि में 97.25 वर्ग किमी की अभूतपूर्व क्षति हुई।

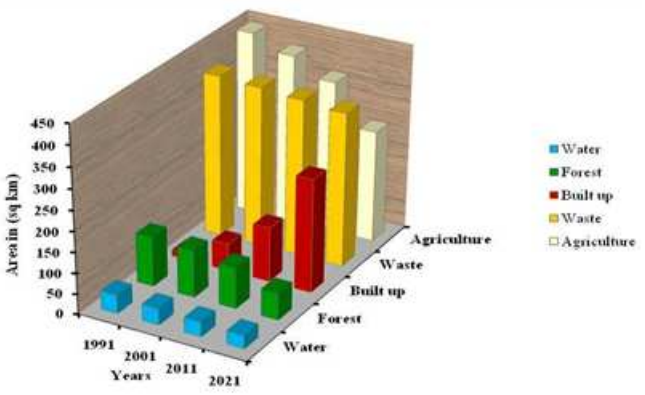
निर्माण क्षेत्र – निर्माण क्षेत्र भूमि उपयोग का एक ऐसा वर्ग है जो कि अन्य सभी वर्गों को प्रभावित करता है। निर्माण क्षेत्र में लगातार तीव्र वृद्धि नगरीय फैलाव का सूचक होता है। भोपाल महानगर का निर्माण क्षेत्र 1991 में 15.8 वर्ग किमी था, जिसमें 1991-2001 के दशक में 317.72% परिवर्तन के साथ 66 वर्ग किमी, 2001-2011 के मध्य 100.64% परिवर्तन के साथ 132.42 वर्ग किमी, 2011-2021 की अवधि में 107.36% परिवर्तन के साथ 274.62 वर्ग किमी की सकारात्मक अभूतपूर्व वृद्धि देखी गयी जो कि अन्य वर्गों के ह्रास के लिए मुख्यरूप से उत्तरदायी है।

जलीय निकाय भूमि – भोपाल महानगर तालाबों का नगर है, परंतु यह महानगर जल के साथ-साथ जलीय निकाय भूमि का भूमि दोहन कर रहा है। 1991 में जलीय निकाय भूमि 45.23 वर्ग किमी हुआ करती थी जिसमें 1991-2001 में 10.43% परिवर्तन के साथ 40.51 वर्ग किमी, 2001-2011 में 9.53% परिवर्तन के साथ 36.65 वर्ग किमी, 2011-2021 के दशक में 8.81% परिवर्तन के साथ 33.42 वर्ग किमी जलीय निकाय भूमि शेष बची जिसका मुख्य कारण भोपाल नगर का राजधानी के साथ-साथ औद्योगिक नगरी के रूप में तीव्र विकास है।

वन भूमि – यह महानगर वन अनाच्छादित पहाड़ियों एवं तालाबों के लिए जाना जाता था। 1991 में वन भूमि 120.88 वर्ग किमी थी, 1991-2001 में 5.5% परिवर्तन के साथ 114.23 वर्ग किमी, 2001-2011 में 14.23% परिवर्तन के साथ 100 वर्ग किमी, 2011-2021 में 33.72% परिवर्तन के साथ 66.28 वर्ग किमी वन भूमि शेष बची जो कि भोपाल के तीव्र गति से हो रहे निर्माण कार्य का परिणाम है।

बंजर भूमि – यह भूमि अनउपजाऊ एवं बंजर भूमि के रूप में जानी जाती है परंतु पारिस्थितिक तंत्र के संतुलन के लिए सबसे महत्वपूर्ण भूमि होती है। 1991 में 392.35 वर्ग किमी थी, 1991-2001 में 1.36% परिवर्तन के साथ 387 वर्ग किमी, 2001-2011 में 1.81% परिवर्तन के साथ 100 वर्ग किमी, 2011-2021 में 2.10% परिवर्तन के साथ 372 वर्ग किमी परिवर्तन हुआ, इसका मुख्य कारण निर्माण क्षेत्र में तीव्र गति से प्रसार है।

आरेख क्रमांक 05 : भूमि उपयोग वृद्धि



आरेख क्र.05 से स्पष्ट है कि निर्माण क्षेत्र के अतिरिक्त अन्य वर्ग जैसे कृषि भूमि, वन भूमि, बंजर भूमि, जलीय भूमि आदि में ह्रासात्मक परिवर्तन जबकि निर्माण क्षेत्र में सकारात्मक परिवर्तन प्रदर्शित होता है जो कि नगरीय भूमि उपयोग परिवर्तन का सूचक है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भूमि

उपयोग परिवर्तन के लिए उत्तरदायी कारकों में प्रमुख कारक नगरीय फैलाव है।

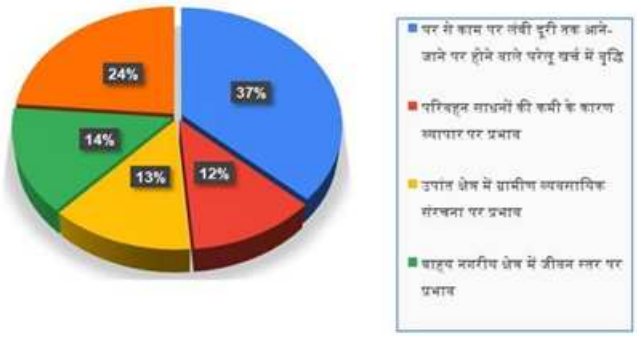
भूमि उपयोग परिवर्तन का महानगरीय उपांत की ग्रामीण पृष्ठभूमि पर प्रभाव – भूमि उपयोग परिवर्तन के कारण भोपाल महानगर के आंतरिक भाग प्रतिकर्षण (Push Factor) कारक, वहीं दूसरी ओर नगर के बाह्य उपांत ग्रामीण क्षेत्र आकर्षण (Pull Factor) कारक के रूप में प्रभावी हैं जो नगरवासियों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं, जिससे नगर का फैलाव तीव्र गति से नगरीय उपांत भूमिध्उपनगरीय भूमि सीमांत क्षेत्र पर हो रहा है जिसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र की आर्थिक स्थिति, सामाजिक स्थिति, पर्यावरणीय स्थिति पर प्रभाव पड़ा है।

भूमि उपयोग परिवर्तन का उपांत की आर्थिक स्थिति पर प्रभाव – भूमि उपयोग परिवर्तन का उपांत/बाह्य सीमांत ग्रामीण पृष्ठभूमि या ग्रामीण परिवेश पर अत्याधिक प्रभाव पड़ा है। यह प्रभाव सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों रूप में हुआ है। भूमि उपयोग की दृष्टि से यह प्रभाव परिवर्तनशीलता का परिचायक है।

मुख्यत: ग्रामीण पृष्ठभूमि वाली क्षेत्रीय समाज के जीवन स्तर पर सकारात्मक रूप में प्रभाव पड़ा है, क्योंकि नगर के फैलाव से नगर की आधारभूत सुविधाओं का विस्तार इन क्षेत्रों तक हुआ है जिससे इन क्षेत्रों के जीवन स्तर एवं आजीविका प्राप्ति के स्तर में अभूतपूर्व सुधार हुआ है। 14 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भी जीवन स्तर पर पड़े प्रभाव पर सहमति प्रकट की है। दूसरी ओर 37 प्रतिशत लोगों का मानना है कि केंद्रीय व्यापारिक क्षेत्र (सीबीडी), थोक व्यापार और हल्के वस्तु निर्माण क्षेत्र, बाजार, अन्य संस्थानों की नगर के आंतरिक भागों में अधिकता के कारण बाह्य सीमांत क्षेत्रों में निवासरत लोगों को घर से काम पर लंबी दूरी तक आने-जाने पर होने वाले घरेलू खर्च में वृद्धि हुयी है। 24 प्रतिशत लोगों ने शहरी क्षेत्रों में उपयोगिताओं और संबंधित सेवाओं सहित शहरी आधारभूत ढांचे के विस्तार की अतिरिक्त लागत पर व्यय की भी पुष्टि की है।

आरेख क्रमांक 06 : आर्थिक स्थिति पर प्रभाव

आरेख क्र. 6.9 नगरीय फैलाव के आमजन की आर्थिक स्थिति पर प्रभाव

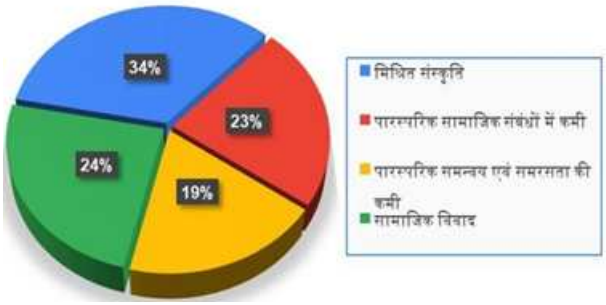


यह परिवर्तन न केवल कृषि करने के तरीके, मशीनी उपयोग के रूप में हुआ है बल्कि फसलों के प्रतिरूप में भी परिवर्तन हुआ है। नगर के फैलाव से नगरीय आवश्यकता के अनुरूप खाद्यान्य फसलों जैसे गेहुँ, चना, मक्का, चावल के साथ-साथ सब्जियों की खेती, फलों की खेती, फूलों की खेती की जा रही है। पोलिहाऊस, उद्यानिकी के प्रति रूझान भी बढ़ा है। इससे यह कहा जा सकता है कि अब जीवननिर्वाह खेती का स्थान व्यवसायिक कृषि ने ले लिया है। 24 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भी इस पर अपनी सहमति प्रदर्शित की है।

भूमि उपयोग परिवर्तन का उपांत की सामाजिक स्थिति पर प्रभाव – फैलाव वाले नगरीय क्षेत्र में सामाजिक संरचना में अभूतपूर्व परिवर्तन देखने को मिला है। ग्रामीण सामाजिक संरचना से नगरीय सामाजिक संरचना में परिवर्तन होने से एक मिश्रित प्रकार की संरचना देखने को मिलती है। 34 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि यहां पर मिश्रित संस्कृति का प्रभाव है। सभी जाति धर्म के लोग आपस मे मिल कर रहते हैं। नगरीय फैलाव से इन क्षेत्रों में भी एकल परिवार की परम्परा प्रारम्भ हुयी है। पारस्परिक सामाजिक संबंध केवल औपचारिकता मात्र रह गये हैं। 19 प्रतिशत का मानना है कि पारस्परिक समन्वय एवं समरस्ता की इन क्षेत्रों में कमी है। एक सकारात्मक प्रभाव यह हुआ है कि सामाजिक विवाद इन क्षेत्रों में प्रायरू कम देखने को मिलते हैं, इसकी पुष्टि 24 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने की है।

आरेख क्र. 07 : सामाजिक संरचना पर प्रभाव

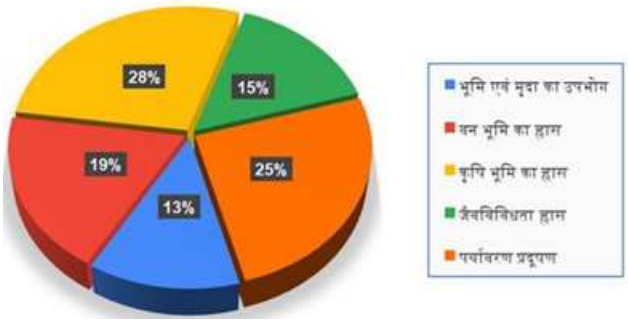
आरेख क्र. 6.12 नगरीय फैलाव का सामाजिक संरचना पर प्रभाव



भूमि उपयोग परिवर्तन का उपांत की पर्यावरणीय संसाधनों पर प्रभाव – नगरीय फैलाव का सर्वाधिक नकारात्मक प्रभाव उपांत क्षेत्र की पर्यावरणीय स्थिति पर हुआ है। फैलाव से पूर्व इन क्षेत्रों में वातावरण साफ एवं स्वच्छ था परंतु जैसे-जैसे नगर का फैलाव हो रहा है, वातावरण वैसे-वैसे प्रदूषित होता जा रहा है, साथ ही उपांत क्षेत्र के पर्यावरणीय संसाधनों पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। कृषि भूमि का लगातार ह्रास हो रहा है, जैवविविधता का ह्रास हो रहा है, वन भूमि का ह्रास हो रहा है, भूमि एवं मृदा का निर्माण क्षेत्र के रूप में उपभोग हो रहा है।

आरेख क्र. 08 : पर्यावरणीय संसाधनों पर प्रभाव

आरेख क्र. 6.13 नगरीय फैलाव का पर्यावरणीय संसाधनों पर प्रभाव



परिणाम – भोपाल, राज्य की राजधानी होने के कारण प्रशासनिक केन्द्र तो है, ही साथ ही म.प्र. राज्य के मध्य में स्थित होने के कारण वाणिज्यिक एवं औद्योगिक गतिविधियों का केन्द्र भी है।

1. भोपाल महानगर की भूभौतिकी पहाड़ी प्रकार की होने के कारण नगर का क्षैतिज विस्तार बाह्य नगरीय उपांत/परिसीमा/उपनगर की ओर तीव्रता से हुआ है।
2. जननांकिकीय दबाब नगरीय पृष्ठभूमि के परिवर्तन का उत्तरदायी कारण है। प्राकृतिक जनसंख्या वृद्धि, ग्रामीण प्रवसन एवं नगरीकरण नगरीय फैलाव का प्रमुख कारण है।
3. जननांकिकीय दबाब नगरीय पृष्ठभूमि के परिवर्तन का उत्तरदायी कारण है। प्राकृतिक जनसंख्या वृद्धि, ग्रामीण प्रवसन एवं नगरीकरण नगरीय फैलाव का प्रमुख कारण है।
4. सुदूर संवेदन तकनीक की सहायता से फैलाव का मात्रात्मक अध्ययन किया गया, जिसमें पाया गया कि 1991 में कुल निर्माण क्षेत्र 15.8 वर्ग किमी था। 1991 से 2001 में निर्माण क्षेत्र में 317.72 प्रतिशत की वृद्धि के साथ 50.2 वर्ग किमी की बढ़ोत्तरी हुयी, जिसकी वार्षिक वृद्धि दर 5.02 वर्ग किमी रही। औद्योगिक गतिविधियों का विकास एवं 1976 में बनाये गये मास्टर प्लान 1991 का क्रियान्वयन इस अवधि के दौरान तीव्र फैलाव का कारण बना।
5. भोपाल नगर के निर्माण क्षेत्र में 2001 से 2011 के दशक में 100.63 प्रतिशत की वृद्धि के साथ 66.42 वर्ग किमी की बढ़ोत्तरी हुयी। इस समय वार्षिक वृद्धि दर 6.64 वर्ग किमी रही। इस दशक में पिछले दशक की अपेक्षा वृद्धि दर के प्रतिशत में गिरावट आयी, इसका प्रमुख कारण 2001 में म.प्र. राज्य से अलग होकर छत्तीसगढ़ नवीन राज्य का गठन रहा क्योंकि नवीन राज्य के निर्माण के साथ-साथ प्रशासनिक ढ़ाचे का हस्तांतरण भी नवीन राजधानी रायपुर हुआ।
6. 2011 से 2021 के मध्य 107.38% की वृद्धि के साथ 142.2 वर्ग किमी की बढ़ोत्तरी हुई। यह विगत दशकों में दर्ज की गयी सर्वाधिक बढ़ोत्तरी है जिसका प्रमुख कारण भोपाल का नगर से महानगर एवं स्मार्ट सिटी के रूप में स्थापित होना है, इसके साथ ही इस दशक में भोपाल नगर एक औद्योगिक (भेल एक्सटेंसन, मंडीदीप, गोविंदपुरा आदि) केन्द्र के रूप में स्थापित हुआ है।
7. इस प्रकार 1991 से 2021 के मध्य अध्ययन क्षेत्र में कुल 268.18 वर्ग किमी निर्माण क्षेत्र में वृद्धि हुयी जो कि तीव्र नगरीय फैलाव का परिचायक है। यह नगरीय फैलाव अन्य भूमि उपयोग के ह्रास पर निर्भर करता है।
8. 1991 से 2001 के दशक में कृषि भूमि में 3.35 वर्ग किमी की वार्षिक दर से कुल 33.48 वर्ग किमी का, जलीय निकाय में 4.72 वर्ग किमी का, वन भूमि में 6.65 वर्ग किमी का तथा बंजर भूमि या खुली भूमि का 5.35 वर्ग किमी का ह्रास हुआ। सर्वाधिक नकारात्मक प्रभाव कृषि भूमि पर पड़ा क्योंकि इसका अधिग्रहण करना एवं इस पर निर्माण कार्य करना आसान होता है।
9. 2001 से 2011 की अवधि में कृषि भूमि में 41.33 वर्ग किमी, जलीय निकाय में 3.86 वर्ग किमी, वन भूमि में 14.23 वर्ग किमी, बंजर/खुली भूमि में 7 वर्ग किमी का नकारात्मक परिवर्तन आया।
10. 2011 से 2021 के दशक में कृषि भूमि में 97.25 वर्ग किमी, जलीय निकाय में 3.23, वन भूमि में 33.72 वर्ग किमी, बंजर/खुली परती भूमि में 8 वर्ग किमी का ह्रास हुआ। यह परिवर्तन भोपाल नगर के फैलाव के परिणामस्वरूप हुआ।
11. 1991 से 2021 के मध्य कृषि भूमि में 172.06 वर्ग किमी का ह्रास हुआ साथ ही कृषि प्रतिरूप में भी परिवर्तन हुआ है। अधिक लाभकारी फसलों के उत्पादन के प्रति रूझान बड़ा है। वहीं वन भूमि में 54.6 वर्ग किमी का ह्रास हुआ। बंजर भूमि/खुली भूमि में 20.35 वर्ग किमी की कमी आयी है। नगरीय फैलाव का जलीय भूमि पर भी प्रभाव पड़ा है, इसमें विगत 30 वर्षों में 11.81 वर्ग किमी का ह्रास हुआ है। साथ ही जलीय निकाय के जल पर भी विपरीत प्रभाव पड़ा है।

निष्कर्ष – 1991 से 2021 के मध्य अध्ययन क्षेत्र, भोपाल महानगर में निर्मित क्षेत्र में लगातार वृद्धि हुई, वहीं अन्य वर्गों में कृषि भूमि, वन भूमि, जलीय भूमि और बंजर भूमि में लगातार ह्रास हुआ है। निर्मित क्षेत्र की मात्रा में वृद्धि एवं अन्य भूमि उपयोग वर्गों में तदनुरूपी कमी भोपाल नगर के उत्तर-पूर्व, उत्तर-पश्चिम, दक्षिण-पूर्व, दक्षिण-पश्चिम दिशाओं में हुयी है। निर्मित क्षेत्र का विस्तार अन्य वर्गों की कीमत पर हुआ है। इस वृद्धि का प्रमुख कारण जनसंख्या में वृद्धि, निजी भूमि का विकास, सहकारी समितियों का विकास, अचल संपत्ति में उछाल, शैक्षणिक संस्थानों का विस्तार, बुनियादी संरचना का विकास, औद्योगिक क्षेत्रों का विकास आदि हैं। अध्ययन क्षेत्र में भूमि उपयोग की स्थानिक संरचना एवं प्रतिरूप समय के साथ तीव्रगति से परिवर्तनशील रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Chawla, S. (2012). Land use changes in India and its impacts on the environment. Journal of Environment, 1(1), 14–20.
2. Fazal, S. (2006). Land transformation in relation to distance in developing economy. Indian Journal of Regional Science, 38(1), 91–104.
3. Lambin, E. F., Geist, H. J., & Lepers, E. (2003). Dynamics of land-use and land-cover change in tropical regions. Annual Review of Environment and Resources, 28, 205–241. https://doi.org/10.1146/annurev.energy.28.050302.105459
4. Jat, M. K., Garg, P. K., & Khare, D. (2008). Monitoring and modelling of urban sprawl using remote sensing and GIS techniques. International Journal of Applied Earth Observation and Geoinformation, 10, 26–43. https://doi.org/10.1016/j.jag.2007.04.002
5. Matsa, M., Mupepi, O., Musasa, T., & Defe, R. (2020). A GIS and remote sensing-aided assessment of land use/cover changes in resettlement areas: A case of Ward 32 of Mazowe District, Zimbabwe. Journal of Environmental Management, 276, 111291. https://doi.org/10.1016/j.jenvman.2020.111291
6. López, E., Bocco, G., Mendoza, M., & Duhau, E. (2001). Predicting land-cover and land-use change in the urban fringe: A case in Morelia city, Mexico. Landscape and Urban Planning, 55, 271–285. https://doi.org/10.1016/S0169-2046(01)00160-8
7. Gajbhiye, S., & Sharma, S. K. (2012). Land use and land cover change detection of Indra River watershed through remote sensing using multi-temporal satellite data. International Journal of Geomatics and Geosciences, 3(1), 89–96.
8. Yuan, F., Sawaya, K. E., Loeffelholz, B. C., & Bauer,

M. E. (2005). Land cover classification and change analysis of the Twin Cities (Minnesota) metropolitan area by multi-temporal Landsat remote sensing. Remote Sensing of Environment, 98(2–3), 317–328. https://doi.org/10.1016/j.rse.2005.08.006

9. Singh, J. P., & Dharmajog, A. (1998). City planning in India. Mittal Publications.
10. Ghosh, S. (2019). City growth and land-use/land-cover change: A case study of Bhopal, India. Modeling Earth Systems and Environment, 5(4), 1569–1578. https://doi.org/10.1007/s40808-019-00641-0
11. Bhattacharya, A., & Rathor, S. (2017). Dynamic growth of Bhopal city core: A conceptual and legal approach. International Journal on Emerging Technologies, 8(1), 608–613.
12. Kaur, R., & Choudhary, A. (2017). Challenges and suggested remedies in making Bhopal a smart city. International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology, 6(9). https://doi.org/10.15680/IJIRSET.2017.0609001
13. Srinagesh, B., & Baktula, K. (2014). Landuse and landcover analysis of Dehradun: Application of RS and GIS. Annals of the National Association of Geographers, India, 34, 71–85.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

बाल मनोविज्ञान पर आधारित वैज्ञानिक बोध : समकालीन हिंदी बाल कथा साहित्य के संदर्भ में

गीतांजली कोलीवाल* डॉ. ज्योति यादव**

* शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत
** सहायक आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.) भारत

शोध सारांश – बाल साहित्य का प्रथम रूप लोरी व प्रभाती है। बाल साहित्य के नाम पर एक अरसे तक बालकों के लिए साहित्य लिखा गया है। बाल साहित्य से तात्पर्य ऐसे साहित्य से है जो बालोपयोगी साहित्य से भिन्न रचनात्मक साहित्य होता है। विज्ञान कथा अथवा साइंस फिक्शन साहित्य की वह विधा है जो विज्ञान और प्रौद्योगिकी में संभावित परिवर्तनों को अभिव्यक्त कर बच्चों को विज्ञान के संबंध में नई-नई जानकारियाँ देकर उनकी उत्सुकता को शांत करती है। विज्ञान लेखन के लिए गूढ़ विषय को सरल, सुगम, रोचक, मनोरंजन व मनोवैज्ञानिक शैली में बच्चों के सामने प्रस्तुत किया जाता है।

बाल साहित्य में वैज्ञानिक दृष्टिकोण सर्वाधिक मायने रखता है। वैज्ञानिक तथ्यों को आधार बनाकर उसमें कल्पना को जोड़ते हुए बाल मनोविज्ञान की आधारशिला पर संभावित सत्य के रूप में प्रस्तुत कर विज्ञान फंतासी भी लिखी गई। अमृतलाल नागर, हरिकृष्ण देवसरे, जाकिर अली रजनीश, शकुंतला कालरा, उषा यादव, विभा देवसरे, प्रकाश मनु, परशुराम शुक्ल, गोविंद शर्मा, क्षमा शर्मा, शिखर चंद्र जैन, मनोहर चमोली मनु आदि ऐसे कई नाम है जिनकी बाल विज्ञान साहित्य से संबंधित रचनाएँ प्रकाशित हुई है। विज्ञान कथाएं बालकों में वैज्ञानिक रुचि पैदा कर विज्ञान के अविष्कार एवं आविष्कारकों के संघर्ष को बालकों के सामने प्रस्तुत करती है। विज्ञान फंतासी साहित्य में विज्ञान के धरातल पर बाल मन को टटोलकर कथा का ताना-बाना बुना गया है। वर्तमान समय में सूचना प्रौद्योगिकी और संचार क्रांति जीवन का अभिन्न अंग बनती जा रही है जिस कारण बाल साहित्य में वैज्ञानिक चेतना का समाहार युगीन आवश्यकता बन गया है। आज ऐसा बाल साहित्य प्रचुर मात्रा में प्रकाशित हो रहा है जो बच्चों को संस्कारित करने की जगह उनकी मनोवृतियों को विकृत कर रहा है। समाज में हो रहे विकास और वैज्ञानिक प्रगति के साथ बच्चों का सतत समन्वय बनाए रखने के लिए उन्हें मानसिक पोषण देने के लिए नित्य नवीन स्तरीय बाल मनोविज्ञान पर आधारित बाल साहित्य के सृजन की आवश्यकता है।

शब्द कुंजी – बालोपयोगी, प्रौद्योगिकी, आविष्कारक, तथ्य, दृष्टिकोण, फंतासी।

प्रस्तावना – छोटे बच्चों का संसार अपने आकार-प्रकार, रंग-रूप में बड़ों के संसार से सर्वथा भिन्न होता है। बड़ों के संसार में लोग शिष्टाचार, सभ्यता, संस्कृति, समाज, जाति, राष्ट्र, नियम, आदर्श आदि विद्यमान रहते हैं जबकि बच्चों के संसार में इन सब का अभाव रहता हैं। बच्चे निजी तौर पर ना तो शिष्टता व सभ्यता का अर्थ समझते हैं और न ही नियमों व आदर्शों की कोई चिंता उन्हें सताती है। समय के साथ-साथ बच्चों को सूचना, शिक्षा और ज्ञान प्रदान करने के लिए एक माध्यम की आवश्यकता अनुभव की गई जो बड़े होते बच्चों की जिज्ञासा को शांत कर सकें और उनके उत्सुक मन को तृप्ति प्रदान कर सकें। ऐसे में कहानी का आविष्कार हुआ। कहानी द्वारा प्रकृति पौधों, पशु,पक्षी, चाँद-तारों, किरण, बादल, वर्षा, नैतिकता, मानवीय मूल्य आदि विभिन्न पक्षों का ज्ञान बालकों को दिया गया। पंचतंत्र की प्रणेता आचार्य विष्णु शर्मा ने अपनी कहानियों द्वारा ही भटके हुए राजकुमारों को सुमार्ग पर ला दिया। उनकी कहानी आज विश्व की लगभग सभी भाषाओं में अनूदित होकर पुस्तक रूप में उपलब्ध हैं।

राष्ट्र के निर्माण व उत्थान के लिए बच्चों के चतुर्दिक विकास को आवश्यक माना गया है। जिसमें बाल साहित्यकारों की भूमिका अहम रही है। बाल साहित्य बाल और साहित्य के योग से बना है। बाल जिसके अंतर्गत बच्चें आते हैं और साहित्य का अर्थ होता है हित करना। 'जिस भाषा में बाल साहित्य का सृजन नहीं होता उसकी स्थिति उस स्त्री के समान है जिसके संतान नहीं होती। प्रत्येक देश का भविष्य उसके बच्चों पर निर्भर होता है वही उसके भावी निर्माता होते हैं। अत: अब जो देश अपने इन भावी निर्माताओं के प्रति उदासीन रहता है उसका भविष्य अंधकार पूर्ण समझना चाहिए।'[1]

जो साहित्य बच्चों के मानसिक स्तर के अनुकूल हो उनके विकास और उन में संस्कारों के निर्माण हेतु लिखा जाए वह बाल साहित्य कहलाता है। जिससे उनमें चारित्रिक, शैक्षिक, मानसिक व नैतिक गुण विकसित होते हैं। बाल साहित्य के संबंध में विभिन्न विद्धानों के अलग-अलग मत है-

बाल साहित्य की प्रथम परिभाषा आचार्य विष्णु शर्मा की है- विष्णु शर्मा के पंचतंत्र को बाल साहित्य के क्षेत्र में विश्व की सबसे प्राचीन पुस्तक माना जाता है जिसमें उन्होंने लिखा है-

'यत्नवे भाजने लग्न: संस्कारों नान्यथा भवेत् ।
कथाच्छलेन बालानां नीतिस्तदिह कथ्यते।।'

जिस प्रकार किसी नवीन पात्र के कोई संस्कार नहीं रहते, उसी प्रकार बच्चों की स्थिति होती है इसलिए उन्हें तो कथा आदि के द्वारा ही नीति के संस्कार बताने चाहिए।[2]

बाल गीतकार निरंकार देव सेवक के शब्दों में- 'जिस साहित्य से बच्चों का मनोरंजन हो सकें, जिसमें वे रस ले सके और जिसके द्वारा वह अपनी

भावनाओं और कल्पनाओं का विकास कर सके। वह बाल साहित्य है।'[3]

सोहनलाल द्विवेदी का विचार है कि 'सफल बाल साहित्य वही है जिसे बच्चे सरलता से अपना सकें और भाव ऐसे हो जो बच्चों के मन को भायें यूं तो अनेक साहित्यकार बालकों के लिए लिखते हैं किंतु सचमुच जो बालक के मन की बात बालकों की भाषा में लिख दे वही सफल बाल साहित्य लेखन है।'[4]

बाल साहित्य के नाम पर एक अरसे तक 'बालकों के लिए साहित्य' लिखा गया है। बाल साहित्य से तात्पर्य ऐसे साहित्य से है जो बालोपयोगी साहित्य से भिन्न रचनात्मक साहित्य होता है अर्थात जो विषय निर्धारित करके शिक्षार्थ लिखा हुआ ना होकर बालकों के बीच का अनुभव आधारित रचा गया होता है। वह कविता, कहानी,नाटक आदि होता है न की कविता, कहानी नाटक आदि के चौखट से भरी हुई विषय प्रधान जानकारी अथवा उपदेश पूर्ण सामग्री होता है।[5]

बाल साहित्य के संबंध में दिविक रमेश कहते हैं कि 'मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि जैसे बच्चे की हम कल्पना करते हैं या बच्चे से जिन अपेक्षाओं की पूर्ति चाहते हैं उसके लिए बहुत कुछ हम बाल साहित्य पर निर्भर करते हैं। अत: बाल साहित्यकारों पर बहुत उत्तारदायित्व है यदि हम चाहते हैं कि बाल साहित्य बेहतर बच्चा बनाने में मदद करें और साथ ही वह बच्चों के द्वारा अपनाया भी जाए तो उसके लिए हमें अर्थात बाल साहित्यकारों को बाल मन से भी परिचित होना पड़ेगा।'

अमेरिकी कवि और बाल साहित्यकार चार्ल्स घिन्न के अनुसार 'जब आप बच्चों के लिए लिखो तो बच्चों के लिए मत लिखो अपने भीतर के बच्चें के द्वारा लिखो।'[6]

इस प्रकार कहा जा सकता है कि बाल साहित्य वह है जो बालकों के लिए लिखा जाये, जिसमें बालकों के स्तर के अनुकूल सहजता, सरलता, कौतूहलता और रोचकता हो, जो बालकों को प्रेरणा दे सके और उन्हें एक आदर्श नागरिक बनाने में सहयोग दें।

बाल साहित्य: बालक एवं विज्ञान : 'विज्ञान' शब्द को अंग्रेजी में Science कहते हैं। जिसकी उत्पत्ति लेटिन भाषा के शब्द SCIENTA से हुई है।SCIENTA का अर्थ है, ज्ञान KNOWLEDGE या जानना।'[7]

किसी भी वस्तु की जानकारी एकत्र करते हुए उसका अध्ययन और विश्लेषण करना ही विज्ञान है। विज्ञान का अर्थ– विशेष ज्ञान है। 'क्रमबद्ध ज्ञान का सिलसिलेवार वर्णन ही विज्ञान है। विज्ञान–चिंतन की सर्जनात्मक अभिव्यक्ति ही बाल विज्ञान साहित्य है।'[8]

बाल विज्ञान : बाल साहित्य की एक लंबी परंपरा होने पर भी आज का बाल साहित्य कई अर्थों में पुराने बाल साहित्य से एकदम भिन्न है। परिवर्तन की लहर से बाल साहित्य भी अछूता नहीं रहा है। वैज्ञानिक विकास ने बाल साहित्य में कई परिवर्तन किए हैं। बाल साहित्य ही नहीं आज का बच्चा भी पहले के बालक जैसा नहीं रहा है,आज का बच्चा सब कुछ आंखें मूंद कर मानने को उदित नहीं है। आज बच्चें ऑनलाइन माध्यम से भी बाल साहित्य देख और पढ़ सकते हैं। विज्ञान की नित् नूतन प्रगति ने उसकी चेतना को इतना प्रखर बना दिया है कि अंतरिक्ष पर पहुंचने का मनोरथ अब उसका सपना नहीं यथार्थ बन चुका है। वह विविध मुद्दों पर अपना स्वतंत्र मत रखना है और उस मत को लेकर बड़ों के साथ बहस करने में भी पीछे नहीं रहता। संचार माध्यमों की प्रगति ने आज उसमें जैविक चेतना उत्पन्न कर दी है, उससे उसमें गहन आत्मविश्वास आ गया है।[9]

विज्ञान समाज का अभिन्न अंग है। विज्ञान वहीं है जहां ज्ञान के साथ तार्किकता हो। बच्चें विज्ञान की नई–नई जानकारियाँ पाने को उत्सुक रहते हैं। विज्ञान को बच्चों तक पहुँचाने तथा उनमें जागरूकता लाने में बाल रचनाकार सशक्त भूमिका अदा करता है। बालक जब अपने परिवेश को समझने लगता है तो उसके मन में अनेकों सवाल उठने लगते हैं। उसके मन में उठते सवाल ही बाल विज्ञान कथाओं की पृष्ठभूमि को पुष्ट करते हैं।

विज्ञान कथा: विज्ञान कथा अथवा 'साइंस फिक्शन' साहित्य की वह विधा है, जो विज्ञान और प्रौद्योगिकी में संभावित परिवर्तनों की प्रतिक्रियाओं को अभिव्यक्ति देती है। विज्ञान को आधार बनाकर छोटी कहानी से लेकर उपन्यास तक लिखे जा सकते हैं। बच्चों के लिए विज्ञान लेखन एक कठिन कार्य है। इसके लिए जरूरी है कि विज्ञान जैसे गूढ़ विषय को सरल, बोधगम्य, रोचक और मनोरंजक शैली में बच्चों के सामने लाया जाएं। वैज्ञानिक दृष्टि को विकसित करने वाला बाल कथा साहित्य भी इसी कोटि में आता है। यह साहित्य बच्चों के भीतर रूढ़ियों और अंधविश्वासों के प्रति भय मिटाते हुए उनमें वैज्ञानिक दृष्टि से चिंतन करने की शक्ति उत्पन्न करता है। 'डॉ. देवसरे की ज्यादा रुचि अंधविश्वासों के खंडन और वैज्ञानिक दृष्टि से संपन्न उपन्यास लेखन की ओर रही है।'[10]

देवसर जी का वैज्ञानिक दृष्टिकोण अंधविश्वास की चादर को हटाकर नवीनता का प्रस्तुतीकरण करता है।

बाल साहित्य में वैज्ञानिक या तकनीकी उपकरण उतने मायने नहीं रखते जितना वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखना है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण को परिभाषित करते हुए महात्मा बुद्ध ने कहा है कि 'किसी बात पर इसलिए विश्वास मत करो कि उन्हें वैसा बताया गया है अथवा गुरुजनों ने वैसा कहा है या परंपरा से वैसा होता आया है, किंतु उचित निरीक्षण, परीक्षण और विश्लेषण के बाद जो तुम्हें उचित लगे, कल्याणकारी लगे, सर्वहित कारी लगे उस सिद्धांत पर अमल करों और आजीवन उस पर डटे रहों।'[11] यही दृष्टिकोण आधुनिक युग की माँग है जो व्यक्ति के सर्वांगीण विकास में सहायक हो सकता है।

विज्ञान साहित्य का उद्देश्य बालकों की जिज्ञासा को शांत कर उन्हें वैज्ञानिक परिवेश की प्रति जागरुक करते हुए उनके मानस पटल पर विज्ञान के ज्ञान का विस्तार करना है ताकि वह अपने आप आसपास घटित हो रही घटनाओं का अवलोकन वैज्ञानिक ढंग से कर सकें। आधुनिक साहित्य में विविध पक्ष समाहित हैं। इसलिए बाल विज्ञान साहित्य का उतना ही महत्व है जितना अन्य साहित्य का है।

आज की वैज्ञानिक प्रगति और बच्चे : वर्तमान युग विज्ञान का युग है और उसका प्रभाव जीवन के सभी क्षेत्रों में परिलक्षित होता है। इसी विज्ञान की प्रगति को जब रचनाकार सरल, रोचक व मनोरंजन रूप देकर बच्चों के समक्ष प्रस्तुत करता है तो वह वैज्ञानिक बाल साहित्य कहलाता है। वैज्ञानिक बाल साहित्य विज्ञान की प्रगति का ही परिणाम है। क्षमा शर्मा के अनुसार आज का युग विज्ञान का है हम बालकों को तकनीक से अलग नहीं रख सकते तकनीक बच्चों के लिए किसी ईश्वर की तरह है।[12]

बच्चों को आज की वैज्ञानिक प्रगति से जोड़ना जरूरी है। बाल साहित्य इस काम को रोचक ढंग से कर सकता है लेकिन, लिखना और वह भी बच्चों के लिए और वैज्ञानिक विषयों पर कोई हंसी खेल नहीं है। बच्चों को विज्ञान की जानकारी देने वाली पुस्तकें रोचक, सरल और ग्राह्य शक्ति के अनुरूप होनी चाहिए। 'आज विशेषतौर पर बच्चों में वैज्ञानिक प्रगति विकसित करने,

उनमें वैज्ञानिक अभिरुचि जगाने और वैज्ञानिक सोच लाने के लिए हर संभव तरीके का इस्तेमाल किया जा रहा है, तभी हमारे देश के पूर्व प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू का सपना की हमारे देश के बच्चे वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने वाले नागरिक बनें साकार होगा।

वैज्ञानिक सोच आज प्रगति की सीढ़ियां पार करते हुए तकनीकी वह अंतरिक्षीय खोजों तक पहुंच गई है। सुश्रुत, वराहमिहिर, आर्यभट्ट, भाभा इत्यादि विद्वानों ने अपनी बुद्धिमत्ता से पृथ्वी की विभिन्न विशेषताओं को परख कर नवीन रूप में उजागर कर अपना अमूल्य योगदान किया। हिंदी बाल कहानियों में वैज्ञानिक दृष्टि विकसित करने वाली विज्ञानपरक कथाएँ सामने आई है। विज्ञान की कहानी लिखने का काम मुख्यत: स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही शुरू हुआ। मयंक जी की भिडंत कहानी 1965 में छपी। उसके बाद कहानियों का दौर सा चल पड़ा। कतिपय कहानीकारों ने ही इस कोटी की कहानियाँ लिखी हैं। अंतरिक्ष सूट में बंदर (अमृतलाल नागर), भूकंप (अलका सिन्हा), आकाश की सैर (डॉ. गोरख प्रसाद), जलयान की कहानी (राजेश दीक्षित), चमत्कार का रहस्य (शकुंतला कालरा), हमारा पर्यावरण हमारा जीवन (चंद्रकांत शर्मा), जीवन का ज्ञान विज्ञान तथा जनसंख्या और विकास (रितु प्रिया शर्मा), पर्सनल कंप्यूटर (वंदना अग्रवाल) आदि कृतियों में विज्ञान को रोचक व मनोरंजन रूप प्रदान कर बच्चों को उसके लाभ-हानि से अवगत कराया गया है। उषा यादव की कहानियों में बाल मनोविज्ञान का पुट अधिक प्रभावी है परंतु इसी के साथ उन्होंने छिटपुट वैज्ञानिक दृष्टिकोण से युक्त कहानियाँ लिखी है जो एक कठिन कार्य है। जब वैज्ञानिक दृष्टि का लेखन करना हो तब उसे सरल, बौद्धगम्य और रुचिकर बनाकर प्रस्तुत करना पड़ता है और ऐसा प्रयास उषा यादव ने किया है। जिस कारण इनकी कहानियाँ बच्चों को पसंद आती है। उषा यादव की कहानियों में मनोवैज्ञानिकता, ऐतिहासिकता, सहासिकता, उपदेशात्मकता के साथ-साथ मनोरंजन व बाल मनोविज्ञान पर आधारित वैज्ञानिक शैली का प्रयोग भी हैं।

परी कथाएं (संग्रह) में कई कथाओं में जादूई तकनीक का ऐसा प्रयोग है जो वैज्ञानिकता की और इंगित करता है। 'नयना-सुनयना' कहानी परियों की जादुई दुनिया में वैज्ञानिक शक्तियों को इंगित करती है। कहानी अंगूठी गायब में उषा यादव ने वैज्ञानिकता से भरी मानसिकता को दर्शाया है। 'चॉकलेट का पेड़' उषा यादव की विज्ञानपरक कहानी है। इसमें अंकित को कंप्यूटर गेम खेलते हुए दिखाया गया है ।अंकित चॉकलेट की बात सोचता है और स्वप्न की दुनिया में चला जाता है। यह अंतरिक्ष स्टेशन संसार के 16 देशों के द्वारा मिलकर शुरू किया जाने वाला अंतरराष्ट्रीय अभियान है। इसका उद्देश्य धरती और अंतरिक्ष के बीच संबंध जोड़ना तथा अंतरिक्ष के ज्यादा से ज्यादा लाभों को धरती तक पहुँचना है।

1998 में इस स्टेशन के जायी और यूनिटी नामक दो खंड अंतरिक्ष में पहुंचाये और जोड़े जा चुके हैं। 31750 किलोग्राम वजन वाले 'यूनिटी' को 'जायी' के ऊपर रखना तथा पेचो से कसकर जोड़ना किसी दैत्य-दानव जैसी शक्ति वाले के भी बस की बात नहीं थी। कंप्यूटर से संचालित होने वाली रोबोट भुजाओं ने इस असंभव काम को भी संभव कर दिखाया। अगले पांच सालों में इस अंतरिक्ष स्टेशन में करीब 100 खंड और जोड़े जाएंगे।

अपनी वैज्ञानिक जानकारी पर अंकित इतरा उठा, वाह! कितना कुछ जानता है वह। उषा यादव ने वैज्ञानिक प्रगति और बाल जगत में विज्ञान के प्रति जागरुकता को अंकित के माध्यम से उजागर किया है।

विज्ञान के क्षेत्र भी खोजकर्ता को आविष्कारक कहा जाता है संसार में ऐसे बुद्धिजीवियों की खोज नई क्रांति पैदा करती है। प्रकाश मनु द्वारा रचित 'सुनो कहानी ज्ञान विज्ञान की' तथा 'अनोखी कहानी ज्ञान विज्ञान की' कहानी संग्रह में विज्ञान से जुड़े आविष्कार एवं आविष्कारकों का विवरण मौजूद है। प्रकाश मनु ने अपनी विज्ञान से जुड़ी हुई कहानियों मेंआइसक्रीम, चॉकलेट, पेंसिल और किताब के अतिरिक्त रबर, कपड़ा, सिलाई मशीन, बिजली, रेडियो, टेलीफोन, टेलीविजन, रेलगाड़ी, जहाज, कार और कंप्यूटर के आविष्कार की कहानियाँ लिखी जो बच्चों में विज्ञानपरक सोच परिपक्व कर उनके दृष्टिकोण को वैज्ञानिक रूप देती है।

कंप्यूटर से संबंधित कथाओं में विज्ञान के आधार पर कल्पना के ऐसी पंख फैलाए गए हैं कि पाठक पढ़े बगैर नहीं रह सकता। प्रकाश मनु की 'दुनिया का सबसे अनोखा चोर' कहानी सुपर कंप्यूटर बनाने वाले सुबोध और इस अनोखे चोरों को पकड़ने वाले देबू के इर्द-गिर घूमती है। 'गोपी की फिरोजी टोपी कहानी गोपी द्वारा बनाए लघु कंप्यूटर का वर्णन करती है।

'पप्पू की रिमझिम छतरी' कहानी में रचनाकार का वैज्ञानिक दृष्टिकोण झलकता है। पप्पू की रिमझिम छतरी में लेखन लिखते हैं यह ऐसी छतरी है जो किसी को दिखाई नहीं देती कितनी ही तेज बारिश हो मजाल है कि एक बूंद पानी भी इसके नजदीक आ जाए। पानी इसके पास आने से पहले ही हवा में भाप बनकर उड़ जाएगा और छतरी गीली तक नहीं होगी। इसके लिए इसमें से खास तरह के रेडिएशन निकलते हैं और देखा जाए तो असल में वही हमारी छतरी का काम भी करते हैं।[13]

मृत संजीवनी का आविष्कार (कमलेश भट्ट कमल) एक ऐसी काल्पनिक विज्ञान कथा है जो 22वीं सदी की आखिरी रात से शुरू होती है। स्पोटिंग स्टेशन (साबिर हुसैन) अंतरिक्ष में हो रहे अतिक्रमण की बात करती है।

गोविंद शर्मा के 'भूल चूक लेनी देनी' संग्रह में विज्ञान पर आधारित बाल कथाएँ हैं। जिनमें धरती से चंद्रमा तक के सफर में बच्चों की बहादुरी व उनके सद्भावना पूर्ण व्यवहार की झांकी बड़ों को भी एक सबक देती है। बरसात (दीनदयाल शर्मा) का वैज्ञानिक विश्लेषण करने वाली कहानी 'बरसात' बच्चों की वर्षा के बारे में अनेक जिज्ञासाओं को संतुष्ट करती हैं। शिखर चंद्र जैन की कहानी 'चंद्रयान-3 की जरूरत' बच्चों को अंतरिक्ष की सैर कराती वैज्ञानिक कहानी है। मनोहर चमोली मनु की 'बैलून यात्रा' विज्ञान गल्प है। मनोहर चमोली मनु की 'रखनी है साफ सफाई' वैज्ञानिक कहानी है।

बाल उपन्यासों की कथावस्तु बालकों के मनोविज्ञान व मस्तिष्क पर आधारित है। विज्ञान उपन्यासों में डॉ. हरिकृष्ण देवसरे की उड़न तश्तरियाँ, डॉ. बोमा की डायरी, विनोद अग्रवाल का शुक्रग्रह के मेहमान, कैलाश शाह का हरे दानव का देश, ओमप्रकाश का सोने का गोला, सुरेश आमेटा का उड़नतश्तरी का रहस्य, मोहन सुंदर राजन का अंतरिक्ष यान के करनामें, विजय कुमार बिस्ता का अंतरिक्ष की सैर, डॉ. पृथ्वी नाथ पांडेय का अनोखी ग्रह के विचित्र प्राणी आदि का भी हिंदी बाल उपन्यासों के विकास में महत्वपूर्ण स्थान है। डॉ. देवसरे का वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा अंधविश्वासों के विरुद्ध चेतना जगाने वाला उपन्यास एक और भूत भी अपने ढंग का अकेला उपन्यास है।[14] विज्ञान से संबंधित हर कोई घटना बच्चों को लुभाती है। बच्चों के लिए विज्ञान एक जादू की तरह है। नन्हें हाथ खोज महान, आओ चंदा देश चले, मंगल ग्रह पर राजू, डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू डॉट घना जंगल डॉट

कॉम, स्वान यात्रा, चंदू के कारनामे, भाप की शक्ति पहचान ली, चंदा मामा दूर के, होटल का रहस्य, अंतरिक्ष के रहस्य इत्यादि हरि कृष्ण देवसरे के वैज्ञानिक व तकनीकी युग पर आधारित उपन्यास है।

प्रसिद्ध दार्शनिक वैज्ञानिक बर्ट्रेंड रसेल का कथन है कि 'वैज्ञानिक प्रगति के दो इंजन हैं। एक है समाज में वैज्ञानिक सोच का विकास और दूसरा है परिवर्तन की ललक।'[15] हमारे बाल जीवन का विकास भी इन्हीं दो इंजनों पर निर्भर करता हैं।

डॉ. परशुराम शुक्ल ने बच्चों की जानकारी के लिए विज्ञान की लाभकारी व विनाशकारी शक्तियों का परिचय अपनी रचनाओं के माध्यम से दिया है। इन्होंने बीसवीं सदी का विलक्षण आविष्कार: 'लेसर' पुस्तक में मेसर और लेसर किरणों के प्रभाव लिखे हैं। 'उपयोगी आविष्कार' वैज्ञानिक आविष्कारों से संबंधित रचना है। इस पुस्तक में तीन लेखकों के पांच आलेख संग्रहित है इसमें डॉ. शुक्ल के 'रेलगाड़ी', 'आतिचालकता', 'रोबोट' तीन आलेख हैं। रोबोट एक विलक्षण वैज्ञानिक आविष्कार है जो एक यंत्र मानव होता है। रोबोट शब्द चेक भाषा का है जिसका अर्थ सेवक होता है।

जाकिर अली रजनीश का सपनों का राजा, हरि दुनिया, सुपरमैन, विभा देवसरे का शनि लोक, जयप्रकाश भारती का बर्फ की गुड़िया, हरि कृष्ण देवसरे का चटपट चंदू आदि वैज्ञानिक तथ्यों से जुड़े बाल उपन्यास धारावाहिक रूप में पराग पत्रिका में प्रकाशित हुए।

ह्यूमन ट्रांसमिशन (जाकिर अली रजनीश) विज्ञान कथा पर आधारित बाल उपन्यास है जैसा कि नाम से स्पष्ट होता है एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना वह भी व्यक्ति का। एक स्थान से दूसरे स्थान पर टीवी प्रसारण की भांति भेजना ह्यूमन ट्रांसमिशन कहलाता है। इस तरह ह्यूमन ट्रांसमिशन में व्यक्ति को तरंगों की भांति एक स्थान से दूसरे स्थान पर ट्रांसमिशन किया जा सकता है।

विज्ञान फंतासी: हिंदी बाल कथाओं में विज्ञान पर एक लेखन में दो मुख्यत: दो दृष्टियां काम करती हैं- विज्ञान की जानकारी देना तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण को विकसित करना। वैज्ञानिक बाल कथाओं की एक तीसरी श्रेणी भी है, जिसमें वैज्ञानिक यथार्थ की अपेक्षा कल्पना या फेंटेसी तत्व अधिक हावी होता है। डॉ. देवसरे के अनुसार 'इनमें बहुत से लोग विज्ञान को प्लेटफार्म बनाकर कल्पना के सहारे दूसरे लोकों में पहुँच जाते हैं।'[16]

फेंटेसी ग्रीक भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है किसी चीज को साकार करना अथवा मूर्त बनाना। यह ऐसे सत्य को उद्घाटित करती है जो सामान्य मनुष्य की पहुँच से परे है। परंपरागत फेंटेसी में परी कथाएँ, जादू की कहानी, अलिफ लैला की कहानी आदि आ जाते हैं। फेंटेसी के पात्र इस दुनिया के मनुष्य, पशु-पक्षी अथवा खिलौने आदि जड़ पदार्थ और जिन्न-भूत परियाँ आदि काल्पनिक पात्र भी हो सकते हैं किंतु वह दुनिया इस दुनिया से बिल्कुल भिन्न विचित्र व काल्पनिक होनी चाहिए। फेंटेसी देश और काल की सीमाओं से मुक्त साहित्य है। फैंटेसी का आकर्षण सार्वजनिक और सर्वकालिक होता है।

डॉ. हरिकृष्ण देवसरे ने लिलिपन स्मिथ की पुस्तक एक क्रिटिकल एप्रोच टू चिल्ड्रेन्स लिट्रेचर से उद्धृत करते हुए फंतासी के स्वरूप का विवेचन किया हैं। फंतासी कल्पना की वह क्रिया है जो किसी अमूर्त वस्तु की क्रिया,स्थिति, रूप तथा आकार का बोध कराती है। उदाहरणस्वरूप काव्य और काव्यगाथाओं में 'चंदामामा' सर्वाधिक पुरानी फंतासी है।

जिस प्रकार बच्चों के लिए लिखी गई विज्ञान कथा का आधार वैज्ञानिक तथ्य होते हैं, उन्हीं के आधार पर कल्पना आगे बढ़ती हुई संभावनाओं को सत्य के रूप में प्रस्तुत करती है। यही विज्ञान-फंतासी है। विभा देवसरे का 'शनिलोक', राज् कुमार जैन का 'नकली चाँद', जाकिर अली रजनीश का उपन्यास 'समय के पार', विज्ञान फंतासी पर आधारित है। अंतरिक्ष में विस्फोट (जयंत विष्णु नार्लीकर) एक विज्ञान फंतासी है। जिसमें कल्पना का पुट डालकर बच्चों के लिए प्रस्तुत किया गया है। डॉ. शोभनाथ लाल का सीपियाण्ड़ेला की सैर छोटे-छोटे तेरह खंडों में विभक्त एक विज्ञान फंतासी है जिसमें कल्पना का पुट डालकर अपनी धरती और देश को स्वर्ग के समान बनाने की प्रेरणा दी गई है।[17]

'सीपियाण्ड़ेला की सैर' (शोमनाथ लाल) उपन्यास में 21वीं सदी के बालक को भविष्य के लिए चेतावनी दी गई है।

रचनाकार प्रकाश मनु की फैंटसी कथाओं का उद्देश्य वैज्ञानिक तथ्यों को कल्पना के आधार पर व्यक्त कर बालकों को विज्ञान के साथ जोड़ना है। 'मंगल ग्रह की लाल चिड़िया' (प्रकाश मनु) कहानी मंगल ग्रह पर जीवन की संभावनाओं की पुष्टि करती है। चंद्रलोक की अदृश्य दुनिया कहानी बच्चों के चांद पर जाने के सपने को पूरा करती है। वर्ष 2095 अर्थात भविष्य को लेकर लिखी गई यह कहानी चंद्र ग्रह पर जीवन होने के रहस्य को खोलती है।

'विज्ञान फंतासी कथाएँ' और 'अजब अनोखी विज्ञान कथाएँ' कहानी संग्रह की विज्ञान फंतासी कथाएँ बच्चों में विज्ञान के प्रति रुचि उत्पन्न करती है। इनकथाओं में अंतरिक्ष ग्रह की यात्रा में रोबोट से जुड़े विषयों में वैज्ञानिक तथ्यों को आधार बनाकर कल्पना के द्धारा प्रस्तुत किया गया है। इन कथाओं में कल्पना के साथ-साथ वैज्ञानिक तर्क दिए गए हैं। 'गिल गिल सेवक चौकीदार' विज्ञान की नई तक की खोज रोबोट पर आधारित फेंटेसी कथा है। मार्था की नीली गुड़िया में गुड़िया रोबोट रूप में है जो आकाश में उड़ भी सकती है और बोल भी सकती है। इन कथाओं में कल्पना से भरे हुए भविष्य में तकनीक और विज्ञान की दिन प्रतिदिन हो रही प्रगति का इतिहास है। शब्दभेदी तीर कहानी परमाणु हथियारों से बचने के लिए बनाए गए तीरों का वर्णन करती हुई फंतासी है।अनोखी चिड़िया 'शिंगाई फू शुम्मा, लो चला पेड़ आकाश में फेंटेसी कथाओं का उद्देश्य बच्चों के वैज्ञानिक स्तर में परिवर्तन लाना है। जिससे उनमें वैज्ञानिक रुचि पैदा हो सके तथा विज्ञान के उपयोग-दुरुपयोग की समझ पैदा हो। यांत्रिकी और प्रौद्योगिकी क्षेत्र के उपयोग व दुरुपयोग से अवगत कराती रिमझिम छतरी उड़ने वाली विज्ञान फंतासी है। विज्ञान फंतासी साहित्य सामान्य से विशेष की ओर बढ़ता है। प्रकाश मनु ने विज्ञान फंतासी साहित्य में विज्ञान की धरातल पर बाल मन को टटोल कथा का ताना-बाना बुना है।

बाल विज्ञान लेखन व प्रकाशन : बाल साहित्य-समीक्षा से संबंधित विभिन्न ग्रंथों के अध्‍ययन से स्पष्ट होता है की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 60 के दशक में बाल पत्रिकाओं के अतिरिक्त इंडियन प्रेस, पुस्तक भंडार, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, राजपाल एंड संस एवं राजकमल प्रकाशन ने बाल विज्ञान संबंधी साहित्य का प्रकाशन किया। इनके अतिरिक्त दैनिक-पत्रों, साप्ताहिक-पत्रों में भी बाल विज्ञान कथा साहित्य का लेखन शुरू हुआ।

सातवें दशक में शकुन प्रकाशन, शिक्षा भारती, दिल्ली और साहित्य निकेतन कानपुर ने भी बाल विज्ञान कथाओं का प्रकाशन किया। इनमें मौलिक लेखन व अनुवादित साहित्य प्रकाशित हुआ। महान वैज्ञानिक एवं उनकी वैज्ञानिक खोजों पर ही विज्ञान लेखन रहा। सत्तार के दशक में आगे

बढ़ने का हौसला बाल पत्रिकाओं ने ही किया। ये पत्रिकाएँ बाल भारती, बालसखा एवं पराग थी। आठवें दशक में नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा बाल विज्ञान कथाएँ एवं यात्राएँ प्रकाशित हुई।

आज ऐसा बाल साहित्य प्रचुर मात्रा में प्रकाशित हो रहा है जो बच्चों को संस्कारित करने के बजाय उनकी प्रवृत्तियों को विकृत कर रहा है। ऐसी पुस्तकें न केवल आज के बचपन को खोखला कर रही हैं अपितु देश के भविष्य को भी नष्ट कर रही है। प्रत्येक अभिभावक का यह कर्तव्य है कि वह बच्चें को अच्छी पुस्तकें उपलब्ध कराये व यह जाने की बच्चा क्या पढ़ रहा है? बच्चों के साहित्य से संबंधित गोष्ठियों, काव्य-समारोह व वाद- विवाद प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया जाना चाहिए। बाल शिक्षण के कार्य में लगी सरकारी एवं स्वयंसेवी संस्थाओं को भी बाल साहित्य की अभिवृद्धि के लिए योजनाबद्ध प्रयासों का क्रियान्वयन करना होगा। समाज में हो रहे विकास और वैज्ञानिक प्रगति के साथ बच्चों का सतत् समन्वय बनाए रखने और उन्हें पर्याप्त मात्रा में मानसिक खुराक देते रहने के लिए नित नये और स्तरीय बाल साहित्य के सृजन की आवश्यकता सदैव बनी रहेगी।

निष्कर्ष - आज के वैज्ञानिक युग में बच्चे पौराणिक कथा कहानियों और अंधविश्वासों से ऊपर उठ विज्ञान और वैज्ञानिक सोच के ज्यादा निकट आ गए हैं। वर्तमान समय में बच्चों की सूचना प्रौद्योगिकी और संचार क्रांति के संबंध में जानकारी चमत्कृत कर देने वाली है। यह संचार क्रांति धीरे-धीरे जीवन का अभिन्न अंग बनती जा रही है। सूचना क्रांति के संवाहक फैक्ट, टी.वी., सैटेलाइट, टेलीफोन, इंटरनेट, ई-मेल, मल्टीमीडिया, मोबाइल, वीडियो फोन जैसे उपकरणों को बच्चे जानते हैं। जिस कारण बाल साहित्य में वैज्ञानिक चेतना का समाहार अभियुगीन आवश्यकता बन चुका है, किंतु यह सूचना प्रौद्योगिकी और तकनीक आज बाल साहित्यकारों के सामने सबसे बड़ी चुनौती है। कहीं यह नयी व्यवस्था बच्चों को संवेदनहीन न कर दे।

बच्चे बाल साहित्य में रुचि ले इसके लिए अपरिहार्य है कि बाल साहित्य सस्ता, सुलभ, रोचक, चिंताकर्षक व प्रकाशन की दृष्टि से उत्कृष्ट कोटि का हो। मीशन के रूप में अधिकाधिक प्रतियोगिताओं व प्रतिस्पर्धाओं द्वारा बाल साहित्य की प्रायरू सभी विधाओं में पर्याप्त बाल साहित्य का प्रकाशन कराया जाये जो विज्ञान के इस युग में बच्चों की आकांक्षाओं व जिज्ञासाओं के अनुकूल हो। घिसा- पिटा या एक ही लीक पर चलने वाला बाल साहित्य न तो आज के बच्चों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा और न ही बच्चे उसे पसंद करेंगे। निरंकार देव सेवक के शब्दों में 'बच्चों की जिज्ञासाओं, भावनाओं और कल्पनाओं को अपना बनाकर उनकी दृष्टि से ही दुनिया को देखकर जो साहित्य बच्चों के लिए सरल भाषा में लिखा जाए वही बच्चों का अपना साहित्य होता है।[18] आज का बाल साहित्यकार बच्चों का दोस्त बन उनके सुख-दुख का, उनकी उत्सुकताओं और कठिनाइयों का यानि उनके सब कुछ का भागीदार होता है।

वैज्ञानिक बाल साहित्य विज्ञान की ही प्रगति का परिणाम है। हिंदी बाल कथा साहित्य में वैज्ञानिक दृष्टि विकसित करने वाले विज्ञानपरक साहित्य ने बच्चों को रोचक व मनोरंजक साहित्य प्रदान करते हुए उसकी लाभ और हानि से अवगत करवाया है। इस प्रकार बाल कथा साहित्य में विज्ञान कथाएँ तथा विज्ञान फंतासी अपने-अपने कलेवर में बच्चों को विज्ञान के साथ जोड़ उनकी सोच को परिपक्व करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बाल गीत साहित्य: निरंकार देव सेवक (प्रस्तावना भाग से), किताब महल इलाहाबाद, 1966
2. हिंदी बाल साहित्य एक अध्ययन, हरिकृष्ण देवसरे, आत्माराम एंड सन्स, दिल्ली, 1969, पृष्ठ संख्या 5
3. हिंदी बाल साहित्य एक अध्ययन हरिकृष्ण देवसरे, आत्माराम एंड सन्स,दिल्ली, 1969 प्रश्न संख्या 7
4. हिंदी बाल साहित्य एक अध्ययन हरिकृष्ण देवसरे, आत्माराम एंड सन्स,दिल्ली, 1969 प्रश्न संख्या 7
5. हिंदी बाल साहित्य कुछ पड़ाव, दिविक रमेश, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार 2015, पृष्ठ संख्या 148
6. हिंदी बाल साहित्य कुछ पड़ाव, दिविक रमेश, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार 2015, पृष्ठ संख्या 8
7. जैन, अभिनेय कुमार, हिंदी बाल साहित्य: प्राचीन एवं आधुनिक दृष्टि, नीरज बुक सेंटर, दिल्ली, 2009 पृष्ठ संख्या 118-119
8. कालरा, डॉ. शकुंतला, हिंदी बाल साहित्य विधा-विवेचन, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ संख्या 531
9. संपादक, यादव, उषा एवं सिंह, राजकिशोर, हिंदी बाल साहित्य और बाल विमर्श, सामयिक प्रकाशन 2014, पृष्ठ क्रमांक 282
10. यादव, उषा एवं सिंह, राजकिशोर, हिंदी बाल साहित्य और बाल विमर्श, सामयिक प्रकाशन 2014, पृष्ठ संख्या 220
11. भारतीय बाल साहित्य का इतिहास, जय प्रकाश भारती, हिंदी बुक सेंटर, नई दिल्ली, 2002, पृष्ठ संख्या 250
12. आजकल, नवंबर 2016 संपादक फरहत परवीन पृष्ठ संख्या 6
13. देवसरे, डॉ. हरिकृष्ण, बाल साहित्य मेरा चिंतन, मेधा बुक्स, दिल्ली 2002, पृष्ठ संख्या 87
14. भारतीय बाल साहित्य संपादक, हरिकृष्ण देवसरे, साहित्य अकादमी नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ संख्या 592
15. भारतीय बाल साहित्य का इतिहास, जयप्रकाश भारती हिंदी बुक सेंटर, नई दिल्ली, 2002, पृष्ठ संख्या 204
16. भाषा मई- जून 2007 पृष्ठ संख्या 90
17. भारतीय बाल साहित्य संपादक, हरिकृष्ण देवसरे, साहित्य अकादमी नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ संख्या 591
18. हिंदी बाल साहित्य कुछ पड़ाव, दिविक रमेश, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार 2015, पृष्ठ संख्या 8

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

ई-कॉमर्स और मानव संसाधन प्रबंधन

डॉ. मोनिका जैन* संजय सिंह गहलोत**

* एसोसिएट प्रोफेसर, एसजीएस कॉलेज, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** असिस्टेंट प्रोफेसर, एसजीएस कॉलेज, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – इलेक्ट्रॉनिक कॉमर्स तकनीकें काम के संचालन के तरीके को बदल रही हैं और इस प्रकार संगठनों द्वारा अपने मानव संसाधन कार्यों को प्रबंधित करने के तरीके पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालती हैं । काम और रोजगार पर आईटी के प्रभाव के बावजूद शोध का विषय रहा है, इलेक्ट्रॉनिक कॉमर्स और काम के संगठन और मानव संसाधन प्रबंधन पर इसके प्रभाव पर बहुत कम ध्यान दिया गया है।

यह पेपर मौजूदा साहित्य की जांच करता है कि कैसे ई-कॉमर्स तकनीक ने कार्यस्थल प्रबंधन को आकार दिया है। यह अत्यधिक प्रतिस्पर्धी माहौल में सामना किए जाने वाले व्यावसायिक दबावों के संदर्भ में इन परिवर्तनों की पहचान करने और समझने के लिए एक वैचारिक रूपरेखा प्रस्तावित करता है।

शब्द कुंजी – ई कॉमर्स, मानव संसाधन, कार्यस्थल प्रबंधन।

प्रस्तावना – विशेषज्ञ उन विशेषताओं पर बात करते हैं जो एक मानव संसाधन पेशेवर को तेज गति वाले ई-कॉमर्स में सफल होने के लिए होनी चाहिए पर्यावरण। भारत के उच्च दबाव वाले ई-कॉमर्स उद्योग में एक मानव संसाधन पेशेवर बनना मुश्किल हो सकता है।चूंकि ऐसी अधिकांश कंपनियां स्टार्ट-अप हैं, इसलिए उपयुक्त प्रतिभा को आकर्षित करना और इसकी विविधता का प्रबंधन करना मुश्किल है।

एक भर्ती अधिकारी का कहना है कि चूंकि स्टार्ट-अप में नौकरियां अब सुबह 9 बजे से शाम 5 बजे तक सीमित नहीं हैं, इसलिए काम का दायरा एक मानव संसाधन पेशेवर के लिए कर्मचारियों को संतुष्ट और प्रेरित रखना षविशालष है। स्टार्ट-अप के भीतर, हम काम कर रहे हैंचौबीस घंटे. इससे एचआर के लिए ऐसा माहौल बनाना महत्वपूर्ण हो जाता है, जो घर जैसा लगता हो।इसके अलावा गैर-मौद्रिक कार्य में नियमित रूप से अच्छे कार्य को मान्यता देना और प्रोत्साहित करना तथा मनोबल बढ़ाना पुरस्कार और मान्यता के रास्ते आवश्यक हो गए हैं।

संगठन में व्यापक विविधता के कारण ई-कॉमर्स में एचआर एक चुनौतीपूर्ण पोर्टफोलियो है। इसके आधार पर नवीनता और उद्यमशीलता अनुभव के कारण, ई-कॉमर्स स्टार्ट-अप पारंपरिक उद्योगों से विविध प्रतिभाओं को आकर्षित कर रहे हैं। यह प्रतिभा जिस क्षेत्र में प्रवेश कर रही है, उसके संदर्भ में यह उच्च जागरूकता क्षेत्र में हो भी सकती है और नहीं भी। यह बिल्कुल सही है ई-कॉमर्स में एक मानव संसाधन पेशेवर के लिए विभिन्न उद्योगों की मजबूत समझ होना आवश्यक है, उनकी प्रतिभा परिदृश्य और वे ई-कॉमर्स पारिस्थितिकी तंत्र से कैसे जुड़ते हैं।

फैशन एंड यू में एचआर और प्रशासन प्रमुख समीर सूद कहते हैं कि एचआर प्रोफेशनल में योग्यता होनी चाहिए ! ई-कॉमर्स में अच्छा प्रदर्शन करने के लिए व्यावसायिक निर्णयों में सक्रिय भागीदारी का अनुभव। व्यक्ति के पास होना भी चाहिए बड़ी तस्वीर को देखने और सभी में मानव संसाधनों के निरंतर सुधार और अनुकूलन के लिए प्रयास करने की क्षमता प्रक्रियाएँ।

ई-कॉमर्स उद्योग के लिए सात महत्वपूर्ण मानव संसाधन विशेषताएँ:

1. 'एक टीम, एक लक्ष्य' की भावना पैदा करने की क्षमता रखने वाला टीम प्लेयर।
2. विभिन्न उद्योगों, उनकी प्रतिभा परिदृश्यों की मजबूत समझ और उन्हें ई के साथ कैसे जोड़ा जाए वाणिज्य पारिस्थितिकी तंत्र।
3. व्यावसायिक निर्णयों में सक्रिय भागीदारी की योग्यता एवं अनुभव।
4. सही लोगों के साथ सही समय पर सही तरीके से सही संचार करने की क्षमता।
5. सभी प्रक्रियाओं में हर समय लगातार सुधार और अनुकूलन।
6. बदलती व्यावसायिक स्थितियों के अनुसार ढलने की क्षमता और क्षमता।
7. बड़े चित्र को देखने की क्षमता।

ई-कॉमर्स उद्योग में निश्चित रूप से भारत के अन्य क्षेत्रों की तुलना में बहुत अधिक संभावनाएं हैं जहां इसका महत्व बढ़ रहा है एचआर और सिस्टम देखे जा सकते हैं। हम ज्यादातर युवा वर्ग को ईकॉमर्स स्टार्टअप्स का अनुसरण करते हुए देख सकते हैं क्योंकि यह उन्हें ऑफर करता है अच्छा वेतन और जीवन शैली वांछित है, लेकिन सही प्रतिभा प्राप्त करना अभी भी चुनौती बनी हुई है, यहां तक कि ईकॉमर्स में भी स्टार्टअप। हम इससे सामरिक रूप से निपटने के लिए मानव संसाधन समाधानों को स्वचालित करना चुन सकते हैं।

बिजनेस की दुनिया तेजी से बदलती है. नई तकनीक पेश की जाती है, कर्मचारी आते हैं और जाते हैं, और कंपनी के वित्त में उतार-चढ़ाव होता है। एचआर की भूमिका बदलाव के लिए कंपनी को स्थिर करने में मदद को कम करके नहीं आंका जा सकता। बदलाव की योजना बनाने का अर्थ है कर्मचारियों की मदद करना कंपनी की व्यापक तस्वीर में उनकी भूमिका को

समझें। यह विभागों के बीच पुल बनाने के बारे में है प्रबंधकों और लोगों को 'क्या होगा अगर' स्थितियों के बारे में बात करने के लिए प्रेरित करना। एचआर यह जानकारी लेता है और एक विकसित करता है आपदाओं के लिए प्रबंधन योजना, वर्कफ्लो में बदलाव के लिए और संकट के समय में कर्मचारियों को आश्वस्त करने के लिए भयावह परिवर्तन।

ई-मानव संसाधन के तत्व – ई-एचआरएम नेटवर्किंग और दोनों के लिए सूचना प्रौद्योगिकी का (योजना, कार्यान्वयन और) अनुप्रयोग है मानव संसाधन गतिविधियों के साझा प्रदर्शन में कम से कम दो व्यक्तिगत या सामूहिक कलाकारों का समर्थन करना।

ई-चयन – किसी विशिष्ट नौकरी के लिए उम्मीदवारों का साक्षात्कार और मूल्यांकन करने और रोजगार के लिए किसी व्यक्ति का चयन करने की प्रक्रिया कुछ मानदंडों के आधार पर कर्मचारियों का चयन बहुत ही सरल प्रक्रिया से लेकर बहुत जटिल प्रक्रिया तक हो सकता है कंपनी की नियुक्ति और पद पर निर्भर करता है। कुछ रोजगार कानून जैसे भेदभाव-विरोधी कानून अवश्य होने चाहिए कर्मचारी चयन के दौरान पालन किया गया.

ई-भर्ती – ई-भर्ती, जिसे ऑनलाइन भर्ती के रूप में भी जाना जाता है, प्रौद्योगिकी और विशेष रूप से वेब-आधारित का उपयोग करने की प्रथा है नए कर्मियों को खोजने, आकर्षित करने, मूल्यांकन करने, साक्षात्कार लेने और भर्ती करने से जुड़े कार्यों के लिए संसाधन। ई-भर्ती का उद्देश्य इसमें शामिल प्रक्रियाओं को अधिक कुशल और प्रभावी बनाने के साथ-साथ कम करना भी है महँगा। ऑनलाइन भर्ती संभावित कर्मचारियों के एक बड़े समूह तक पहुंच सकती है और चयन प्रक्रिया को सुविधाजनक बना सकती है। कॉर्पोरेट वेबसाइट या अन्य स्थानों के माध्यम से काम करने के लिए वांछनीय स्थान के रूप में किसी संगठन का ऑनलाइन प्रचार, ई-भर्ती का एक तत्व है। ई-भर्ती सॉफ्टवेयर और सिस्टम स्टैंडअलोन एप्लिकेशन, उत्पाद के रूप में उपलब्ध हैं सुइट्स और सेवाएँ। एक भर्ती प्रबंधन प्रणाली एक एकीकृत उत्पाद सूट या पोर्टल है जो सुव्यवस्थित करती है और शामिल प्रक्रियाओं को स्वचालित करता है।

ई-प्रशिक्षण – स्लोमन की परिभाषा आगे कहती है,'प्रशिक्षण संगठन के क्षेत्र में है: यह एक हस्तक्षेप है ऐसे व्यक्तियों से व्यवहार उत्पन्न करने के लिए डिजाइन किया गया है जिनके सकारात्मक संगठनात्मक परिणाम हैं।' फिर वह सीखने को परिभाषित करता है 'किसी के सामान्य व्यवहार पैटर्न और आदतों को बदलने में शामिल शारीरिक और मानसिक प्रक्रिया' के रूप में। 'सीखना', उनका दावा है, यह प्रशिक्षण से अलग है क्योंकि यह ष्व्यक्ति के अधिकार क्षेत्र में आता है।

ई-लर्निंग – ई-लर्निंग इलेक्ट्रॉनिक लर्निंग है, और आम तौर पर इसका मतलब किसी पाठ्यक्रम का आंशिक या संपूर्ण भाग वितरित करने के लिए कंप्यूटर का उपयोग करना है चाहे वह किसी स्कूल में हो, आपके अनिवार्य व्यावसायिक प्रशिक्षण का हिस्सा हो या पूर्ण दूरस्थ शिक्षा पाठ्यक्रम हो। शुरुआती दिनों में इसे खराब प्रेस मिला, क्योंकि कई लोगों ने सोचा था कि कक्षा में कंप्यूटर लाने से ऐसा होगा उस मानवीय तत्व को हटा दें जिसकी कुछ शिक्षार्थियों को आवश्यकता होती है, लेकिन जैसे-जैसे समय आगे बढ़ा है प्रौद्योगिकी विकसित हुई है, और अब भी हम कक्षा और कार्यालय में स्मार्टफोन और टैबलेट को अपनाते हैं, साथ ही ढेर सारे इंटरैक्टिव डिजाइन का भी उपयोग करते हैं दूरस्थ शिक्षा को न केवल उपयोगकर्ताओं के लिए आकर्षक बनाता है, बल्कि पाठ वितरण माध्यम के रूप में मूल्यवान बनाता है।

गुणवत्तापूर्ण प्रशिक्षण प्रदाताओं के साथ साझेदारी बनाना और इसे एक समर्पित अनुभवी तकनीकी के साथ जोड़ना टीम और सहयोगी स्टाफ, वर्चुअल कॉलेज उत्तम मिश्रित शिक्षण वातावरण प्रदान करता है, जो किसी को भी प्रदान करता है अपने ऑनलाइन प्रशिक्षण को अगले स्तर तक ले जाने का मौका।

ई-निष्पादन मूल्यांकन – ई परफॉर्मेंस एक कार्यात्मक, व्यावहारिक और प्रभावी प्रदर्शन मूल्यांकन प्रणाली है। यह प्रबंधकों का मार्गदर्शन करता है संपूर्ण प्रदर्शन मूल्यांकन प्रक्रिया, रिकॉर्ड और समय-सीमा बनाए रखना। ई प्रदर्शन प्रबंधकों और दोनों को सुनिश्चित करता है कर्मचारी अत्यधिक कुशल और उत्पादक प्रदर्शन मूल्यांकन प्रक्रिया से अधिकतम लाभ उठाते हैं।

ई-मुआवजा – ई-मुआवजा प्रणाली वे सॉफ्टवेयर पैकेज हैं जो कंपनियों द्वारा खरीदे या विकसित किए जाते हैं और हैं कंपनी के इंट्रानेट या इंटरनेट के माध्यम से पहुंच योग्य, जिस तक सभी कर्मचारी पहुंच सकेंगे. कहीं से भी ब्राउजर के जरिए (इंटरनेट के मामले में)। वे मुख्य रूप से प्रभावशीलता और दक्षता में योगदान करते हैं

तीन तरीके:

1. किसी विशेष आईटी बुनियादी ढांचे जैसी किसी भी आवश्यकता के बिना जानकारी तक आसान पहुंच ज्ञान
2. कर्मचारियों के लिए विस्तृत मुआवजे की जानकारी की चौबीसों घंटे उपलब्धता, प्रबंधकों और मानव संसाधन पेशेवरों (निर्णय समर्थन के लिए) इंटरैक्टिव तरीके से उनकी साख के अनुसार
3. वर्कफ्लो कार्यक्षमता और वास्तविक समय की शुरूआत के माध्यम से बोझिल नौकरशाही कार्यों को सुव्यवस्थित करना लागत-प्रभावी तरीके से सूचना प्रसंस्करण।

ई-एचआरएम लक्ष्य – ई-एचआरएम को मानव संसाधन विभाग के ग्राहकों (कर्मचारियों और दोनों) को सेवाओं में सुधार करने की क्षमता प्रदान करने के रूप में देखा जाता है प्रबंधन), मानव संसाधन विभाग के भीतर दक्षता और लागत प्रभावशीलता में सुधार, और मानव संसाधन को एक बनने की अनुमति देता है संगठनात्मक लक्ष्यों को प्राप्त करने में रणनीतिक भागीदार। भर्ती पहलू कंपनियों में कर्मचारियों की भर्ती के लिए कई वेबसाइटें हैं भारत में कुछ लोकप्रिय और महत्वपूर्ण वेबसाइटें नीचे सूचीबद्ध हैं वे हैं

1. jobsahead.com
2. monsterindia.com
3. careerindia.com
4. placementindia.com
5. jobsearch.
6. rediff.com
7. bestjobsindia.in
8. jobzing.com
9. cybermediadice.com
10. Careerjet.co.in

निष्कर्ष – ई-एचआरएम मानव संसाधन प्रक्रियाओं को स्वचालित और समर्थन करने के लिए एक वेब-आधारित उपकरण है। ई-एचआरएम का कार्यान्वयन एक है कर्मचारी को डेटा प्रविष्टि सौंपने का अवसर। ई-एचआरएम एचआर बाजार और ऑफर के उपयोग की सुविधा प्रदान करता

है कर्मचारियों को अधिक स्व–सेवा। ई– एचआरएम (इलेक्ट्रॉनिक ह्यूमन रिसोर्स मैनेजमेंट) एडवांस बिजनेस है समाधान जो सभी प्रक्रियाओं, गतिविधियों, डेटा आदि के प्रबंधन में पूर्ण ऑनलाइन सहायता प्रदान करता है

एक आधुनिक कंपनी में मानव संसाधन के प्रबंधन के लिए आवश्यक जानकारी। यह एक कुशल, विश्वसनीय, उपयोग में आसान उपकरण है, जो विभिन्न उपयोगकर्ताओं के एक व्यापक समूह के लिए सुलभ है। विभिन्न लाभों और छोटे नुकसानों के साथ यह अनुशंसा की जा सकती है कि सभी संगठन ई–एचआरएम तकनीक का उपयोग करें, जो सभी बाधाओं का सामना करने के बावजूद इस ई–एचआरएम तकनीक के माध्यम से एक उपयोगी, कुशल और बेहतर प्रदर्शन प्रदान करने का वादा करता है। ई एचआरएम एक तरीका है सचेत और निर्देशित समर्थन के माध्यम से संगठनों में मानव संसाधन रणनीतियों, नीतियों और प्रथाओं को लागू करना औरध्या वेब–प्रौद्योगिकी–आधारित चौनलों के पूर्ण उपयोग के साथ। इसमें मानव संसाधन प्रबंधन के सभी पहलुओं को शामिल किया गया है कार्मिक प्रशासन, शिक्षा और प्रशिक्षण, कैरियर विकास, कॉर्पोरेट संगठन, नौकरी विवरण, नियुक्ति प्रक्रिया, कर्मचारी के व्यक्तिगत पृष्ठ, और कर्मचारियों के साथ वार्षिक साक्षात्कार। इसलिए ई–एचआरएम एक रास्ता है एचआरएम कर रहा हूं.

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. *Adler, P. (1991). `New Technologies, New Skills', Technology and the Organisation of Work. Geelong, Victoria, Deakin University Press.
2. *Causer, G. and C. Jones (1996). "Management and the Control of Technical Labour." Work, Employment & Society, Vol. 10, (No. 1): 107-123.
3. *Child, J. (1985). `Managerial Strategies, New Technology and the Labour Process', Job Redesign Critical Perspectives on the Labour Process. D. Knights,
4. *H. Willmott and D. Collinson. Aldershot, England, Gower Publishing Company Limited: 107-141.
5. डेल योडर, हेनमैन, टर्नवुल एवं स्टोन, हैण्डबुक ऑफ पर्सनेल मैनेजमेंट एण्ड लेबर रिलेसन्स, मैग्राहिल बुक क0 न्यूयार्क 1958
6. *Piore, M. J. and C. F. Sabel (1984). The Second Industrial Divide: Possibilities for Prosperity. New York, United States of America, Basic Books Inc.
7. *Pinsonneault, A. and S. Rivard (1998). `Information Technology and the nature of managerial , work: from the productivity paradox to the Icarus paradox?' MIS Quarterly, Vol. 22 (No. 3): 287-312.
8. *Kettley, P. and Reilly, P. (2003) „e-HR: An Introduction , IES Report 398. in *Michael A. (2003), A Handbook Of Human Resource Management Practice. *Research e-HRM: Review and Review 17 (2007) pp.19–37 implications available HumanResource *http:/www.sciencedirect.com/science/article/pii/S1053482206000829.
9. *Susan Meisinger "Challenges and Opportunities for HR" HR Magzine 2009. *www.shrm.org/trends www.humanresourcemagzines.com.au/companies

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मध्य प्रदेश विधानसभा 2023 में अनुसूचित जातियों के मतदान व्यवहार का वर्णनात्मक अध्ययन : उज्जैन उत्तर विधानसभा एवं उज्जैन दक्षिण विधानसभा क्षेत्र के विशेष संदर्भ में

रवि दायमा*

* शोधार्थी, राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह शोधपत्र 'मध्यप्रदेश विधानसभा निर्वाचन 2023 में अनुसूचित जातियों के मतदान व्यवहार' पर केंद्रित है, जिसका उद्देश्य अनुसूचित जाति समुदाय की राजनीतिक भागीदारी, प्राथमिकताएँ, और मतदान निर्णयों को समझना है। मध्यप्रदेश जैसे सामाजिक–राजनीतिक रूप से विविध राज्य में अनुसूचित जातियाँ एक महत्वपूर्ण मतदाता वर्ग हैं, जिनकी भूमिका चुनावी परिणामों को प्रभावित करती रही है। इस अध्ययन में निर्वाचन आयोग के आँकड़ों, फील्ड सर्वेक्षणों और मीडिया रिपोर्ट्स का उपयोग करते हुए विश्लेषणात्मक व वर्णनात्मक शोध पद्धति अपनाई गई।

पता चला कि अनुसूचित जातियों का मतदान व्यवहार अब परंपरागत वफादारी से हटकर मुद्दा–आधारित और उम्मीदवार–केन्द्रित होता जा रहा है। युवाओं में राजनीतिक चेतना का विस्तार हुआ है और महिला मतदाताओं की भागीदारी उल्लेखनीय रूप से बढ़ी है। इस अध्ययन में यह भी पाया गया कि कल्याणकारी योजनाएँ, सामाजिक सम्मान, और नेतृत्व की भागीदारी जैसे कारकों ने मतदान निर्णयों को प्रभावित किया। निष्कर्षत: अनुसूचित जातियों की चुनावी भागीदारी लोकतांत्रिक प्रणाली को सशक्त करने की दिशा में एक सकारात्मक संकेत है।

शब्द कुंजी – अनुसूचित जातियाँ, मतदान व्यवहार, मध्यप्रदेश विधानसभा चुनाव 2023, राजनीतिक चेतना, सामाजिक न्याय, वोट बैंक राजनीति, दलित नेतृत्व, चुनावी भागीदारी, कल्याणकारी योजनाएँ, लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व, अनुसंधान की आवश्यकता और उद्देश्य।

प्रस्तावना – भारतीय लोकतंत्र विश्व का सबसे बड़ा और विविधतापूर्ण लोकतंत्र है, जहाँ विभिन्न वर्गों, जातियों और समुदायों को राजनीतिक अधिकार प्राप्त हैं। इस व्यवस्था में अनुसूचित जातियों को विशेष महत्व प्राप्त है, क्योंकि वे सामाजिक रूप से वंचित और ऐतिहासिक रूप से उपेक्षित समूह रहे हैं। संविधान द्वारा उन्हें राजनीतिक प्रतिनिधित्व, आरक्षण और सामाजिक न्याय के अधिकार दिए गए हैं, जिससे उनकी स्थिति में समय के साथ परिवर्तन आया है।

मध्यप्रदेश राज्य में अनुसूचित जातियाँ लगभग 16 प्रतिशत जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती हैं, और कई विधानसभा क्षेत्रों में वे निर्णायक भूमिका निभाती हैं। राजनीतिक दलों के लिए यह वर्ग एक प्रमुख 'वोट बैंक' बन चुका है, और हर चुनाव में इन्हें आकर्षित करने हेतु विभिन्न वादे, योजनाएँ और रणनीतियाँ अपनाई जाती हैं।

इस शोध का मुख्य उद्देश्य यह समझना है कि मध्यप्रदेश विधानसभा चुनाव 2023 में अनुसूचित जातियों ने किस प्रकार मतदान किया, उनके निर्णयों को कौन–कौन से कारक प्रभावित करते हैं, और क्या इस बार उनके मतदान व्यवहार में कोई विशेष परिवर्तन देखने को मिला। यह अध्ययन इस बात पर भी प्रकाश डालता है कि क्या अनुसूचित जातियाँ अब केवल जातीय पहचान के आधार पर मतदान कर रही हैं या सामाजिक–आर्थिक मुद्दे भी उनके निर्णयों में शामिल हो गए हैं।

इस प्रकार यह शोध अनुसूचित जातियों की लोकतांत्रिक सहभागिता की गहराई को समझने का एक प्रयास है, जो भविष्य की राजनीति के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र में द्वितीयक स्त्रोतों के माध्यम से सूचनाए एकत्रित की गयी है जिसमे पुस्तके शोध पत्र, समाचार पत्र, निर्वाचन विभाग की वेबसाइड, सरकारी आंकड़े, एवं रिपोर्ट आदि से सुचना एकत्रित की गई है। प्राप्त सुचना के आधार पर तथ्यों का संकलन, विश्लेषण एवं मूल्यांकन किया गया है।

अनुसंधान की आवश्यकता एवं उद्देश्य

(क) अनुसंधान की आवश्यकता : भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था तभी पूर्ण मानी जा सकती है जब समाज के सभी वर्गों की राजनीतिक भागीदारी सुनिश्चित हो। अनुसूचित जातियाँ, जो सामाजिक रूप से ऐतिहासिक रूप से वंचित रही हैं, अब लोकतांत्रिक प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। विशेष रूप से मध्यप्रदेश जैसे राज्य में, जहाँ अनुसूचित जातियों की जनसंख्या पर्याप्त है, उनका मतदान व्यवहार चुनाव परिणामों को प्रभावित करता है।

2023 के विधानसभा चुनाव में यह देखा गया कि अनेक राजनीतिक दलों ने अनुसूचित जातियों को लुभाने के लिए विशेष अभियान चलाए। ऐसे में यह जानना अत्यंत आवश्यक हो जाता है कि क्या ये प्रयास प्रभावी रहे, क्या मतदाता सचेत हुए, और क्या कोई नया रुझान उभरा। यह अध्ययन सामाजिक न्याय, प्रतिनिधित्व, और राजनीतिक चेतना को समझने में सहायक सिद्ध होगा।

(ख) अनुसंधान के उद्देश्य :

1. मध्यप्रदेश विधानसभा चुनाव 2023 में अनुसूचित जातियों की मतदान भागीदारी का विश्लेषण करना।
2. उन प्रमुख सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कारकों की पहचान करना जो अनुसूचित जातियों के मतदान व्यवहार को प्रभावित करते हैं।
3. यह जानना कि जातीय पहचान, पार्टी निष्ठा और उम्मीदवार की छवि में किसका अधिक प्रभाव रहा।
4. अनुसूचित जाति समुदाय में उभरती राजनीतिक चेतना और युवाओं की भूमिका का मूल्यांकन करना।
5. भविष्य की चुनावी रणनीतियों एवं नीतिगत सुझावों के लिए आधार तैयार करना हैं।

निर्वाचन क्षेत्रों की जनसांख्यिकी और सामाजिक-आर्थिक प्रोफाइल: दोनों निर्वाचन क्षेत्र विविध जनसांख्यिकीय परिदृश्य को दर्शाते हैं। उज्जैन उत्तर में मध्यम वर्ग और उच्च-मध्यम वर्ग के मतदाताओं की अधिक सांद्रता है, जिसमें व्यापारिक समुदाय, पेशेवर और शिक्षित युवा महत्वपूर्ण रूप से मौजूद हैं। उज्जैन दक्षिण में ग्रामीण जनसांख्यिकी अधिक है, जिसमें कृषि समुदाय, मजदूर और आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग का बड़ा हिस्सा है। दोनों निर्वाचन क्षेत्रों में जाति एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जिसमें ओबीसी, एससी और उच्च जाति के व्यवहार को भी प्रभावित करता है, खासकर उज्जैन उत्तर में, जहां धार्मिक जनसांख्यिकी अपेक्षाकृत अधिक विविध है।

लिंग-वार और आयु-वार मतदाता प्राथमिकताएँ: मतदान व्यवहार में लिंग गतिशीलता दर्शाती है कि महिला मतदाता तेजी से एक महत्वपूर्ण जनसांख्यिकीय बन गई हैं, जिसमें भाजपा और कांग्रेस दोनों महिलाओं के हैं।

मध्य प्रदेश में अनुसूचित जातियों की राजनीतिक पृष्ठभूमि: मध्य प्रदेश राज्य में अनुसूचित जातियाँ एक लंबे समय से सामाजिक-राजनीतिक विमर्श का केंद्र रही हैं। राज्य की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जातियों का प्रतिशत लगभग 16% है, जो कि कई विधानसभा क्षेत्रों में निर्णायक भूमिका निभाते हैं। इनकी राजनीतिक यात्रा सामाजिक आंदोलन, आरक्षण के अधिकार, और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के इर्द-गिर्द विकसित होती रही है।

स्वतंत्रता के पश्चात् संविधान द्वारा दिए गए आरक्षण के प्रावधानों के तहत अनुसूचित जातियों को राजनीतिक प्रतिनिधित्व मिला। मध्यप्रदेश में वर्तमान में 230 विधानसभा सीटों में से 35 सीटें अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित हैं। यह संख्या स्वयं इस बात का संकेत है कि इनका राजनीतिक प्रभाव केवल संख्या तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह राजनीतिक दिशा तय करने में भी सक्षम है।

राज्य में बहुजन समाज पार्टी ने 1990 के दशक में दलित चेतना को राजनीतिक रूप से मुखर करने का प्रयास किया, जिससे कुछ क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों का झुकाव इस दल की ओर देखा गया। हालांकि समय के साथ कांग्रेस और भाजपा दोनों ने भी अनुसूचित जातियों के कल्याण हेतु योजनाएँ चलाकर इस वर्ग को अपने पक्ष में करने की रणनीति अपनाई।

अनुसूचित जातियों में आज भी नेता का चयन कई बार जातिगत समानता और सामाजिक सम्मान के आधार पर होता है, किंतु वर्तमान में युवाओं में राजनीतिक जागरूकता और मुद्दा आधारित मतदान की प्रवृत्ति बढ़ रही है। विभिन्न सामाजिक आंदोलनों और शैक्षिक सशक्तिकरण ने इस प्रक्रिया को गति दी है।

इस पृष्ठभूमि को समझना इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि यह वर्तमान मतदान व्यवहार के विश्लेषण की नींव तैयार करता है।

विधानसभा निर्वाचन 2023 : एक संक्षिप्त समीक्षा

कुल सीटें : 230

आरक्षित डउ सीटें : 35

मुख्य प्रतियोगी दल : भारतीय जनता पार्टी, कांग्रेस, बहुजन समाज पार्टी

एस.सी. बहुल सीटों पर मुख्य चुनावी मुद्दे : रोजगार, शिक्षा, सामाजिक सम्मान, आरक्षण का कार्यान्वयन।

अनुसूचित जातियों का मतदान व्यवहार – विश्लेषण

(क) मतदान प्रतिशत : एस.सी. समुदाय का औसत मतदान प्रतिशत 69.3% रहा, जो कुल औसत से थोड़ा अधिक था।

(ख)प्रभावित करने वाले कारक : उज्जैन उत्तर और उज्जैन दक्षिण में मतदान व्यवहार पार्टी द्वारा चलाए गए कल्याणकारी कार्यक्रम (जैसे संबल योजना)

दलित नेताओं की सक्रियता: स्थानीय मुद्दे जैसे पानी, सड़क, और शिक्षा

(ग) दलित चेतना का उदय : कुछ क्षेत्रों में जातिगत जागरूकता के कारण बी.एस.पी. व अन्य दलों को समर्थन, शहरी क्षेत्रों में युवा वोटरों में पार्टी से अधिक उम्मीदवार की छवि को प्राथमिकता

प्रमुख निष्कर्ष – अनुसूचित जातियों का झुकाव अब परंपरागत रूप से किसी एक पार्टी तक सीमित नहीं है। दलित युवाओं में बढ़ती राजनीतिक जागरूकता दिखाई दी। कुछ क्षेत्रों में 'विकास' को जाति से अधिक वरीयता मिली। एस.सी. महिलाओं की मतदान भागीदारी में उल्लेखनीय वृद्धि हुई।

चुनौतियाँ और संभावनाएँ :

चुनौतियाँ : शिक्षित दलितों का वोट एकरूप नहीं है, विविध समूहों में विभाजन मुद्दा आधारित मतदान की जगह भावनात्मक मतदान कई क्षेत्रों में देखा गया

संभावनाएँ : यदि राजनीतिक दल एस.सी. समुदाय की यथार्थ समस्याओं को प्राथमिकता दें तो दीर्घकालिक समर्थन मिल सकता है। एस.सी. नेतृत्व को बढ़ावा देकर लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व को मजबूत किया जा सकता है।

निष्कर्ष – मध्यप्रदेश विधानसभा निर्वाचन 2023 में अनुसूचित जातियों का मतदान व्यवहार जटिल किन्तु जागरूकता से भरपूर रहा। सामाजिक न्याय, विकास, और पहचान की राजनीति इन पर प्रभाव डालती रही। भविष्य में इनका मतदान पैटर्न लोकतंत्र की दिशा और दशा तय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

सुझाव :

1. जातीय चेतना को लोकतांत्रिक भागीदारी में बदलने हेतु निरंतर संवाद आवश्यक है।
2. राजनैतिक दलों को इन वर्गों के साथ स्थायी संबंध बनाना चाहिए न कि केवल चुनाव तक सीमित।
3. अनुसूचित जातियों की राजनीतिक शिक्षा को बढ़ावा दिया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. क्रिस्टोफ जैफरेलो (2003) – इंडियाज साइलेंट रिवोल्यूशन : द राइज ऑफ द लोअर कास्ट्स इन नॉर्थ इंडिया। प्रकाशक: परमानेंट ब्लैक, नई दिल्ली।
2. घनश्याम शाह (2004) – सोशल मूवमेंट्स इन इंडिया : अ रिव्यू

ऑफ लिटरेचर। प्रकाशक: सेज पब्लिकेशन्स।
3. संजय रुपरेलिया (2015) – डिवाइडेड वी गवर्न: कोएलिशन पॉलिटिक्स इन मॉडर्न इंडिया। प्रकाशक : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. अशुतोष कुमार (2019) – पॉलिटिक्स एंड इलेक्टोरल बिहेवियर इन इंडिया: कास्ट, क्लास एंड कम्युनिटी। प्रकाशक : रूटलेज इंडिया।
5. भारत निर्वाचन आयोग – मध्यप्रदेश विधान सभा आम निर्वाचन 2023 पर सांख्यिकीय रिपोर्ट। वेबसाइट : https://eci.gov.in
6. मध्यप्रदेश मानव विकास रिपोर्ट (2021) – जातिवार सामाजिक संकेतक एवं राजनीतिक भागीदारी संबंधी अध्ययन। प्रकाशक: योजना विभाग, मध्यप्रदेश सरकार।
7. Centre for the Study of Developing Societies (CSDS-Lokniti) – मध्यप्रदेश विधानसभा चुनाव 2023 पर पश्चातवर्ती सर्वेक्षण रिपोर्ट एवं आँकड़े। वेबसाइट: https://www.lokniti.org
8. मध्यप्रदेश सरकार : मध्यप्रदेश सामाजिक न्याय विभाग की योजनाएँ एवं वार्षिक रिपोर्ट (2022–2023)। वेबसाइट: https://socialjustice.mp.gov.in
9. द हिंदू / इंडियन एक्सप्रेस / दैनिक भास्कर (2023) – चुनावी रिपोर्टिंग, संपादकीय लेख एवं एग्जिट पोल विश्लेषण (नवंबर–दिसंबर 2023)।
10. मैदानी सर्वेक्षण एवं साक्षात्कार (2023–24) – उज्जैन, सागर एवं रीवा जिलों की अनुसूचित जाति बहुल विधानसभाओं से एकत्रित प्राथमिक डेटा।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारत में महिलाओं का मानसिक सशक्तिकरण: एक अध्ययन

डॉ. आभा सैनी*

* प्रोफेसर एवं अध्यक्षा (राजनीति विज्ञान) जैन कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) भारत

प्रस्तावना – महिलाओं का मानसिक सशक्तिकरण एक ऐसी शब्दावली है जिसमें न केवल महिला सशक्तिकरण बल्कि मानसिक रूप से उनका सशक्त होना भी शामिल है। महिला सशक्तिकरण के अंतर्गत महिलाओं को मजबूत बनाना सम्मिलित है जिससे कि वह अपने निर्णय स्वयं ले सके और समाज एवं राष्ट्र निर्माण में अपनी भागीदारी कर सके यद्यपि महिलाएं सशक्त है। प्राचीन काल में दुर्गा सीता गार्गी देखें या आधुनिक समय में इंदिरा गांधी लेकिन मनोवैज्ञानिक रूप से मानसिक रूप से उन्हें इतना अधिक मजबूत बनाना कि वह किसी के दबाव में ना आए और अपने निर्णय को स्वयं लेने और उन्हें लागू करने की क्षमता उनके पास हो।

महिलाओं के मानसिक सशक्तिकरण से ना केवल उनके ज्ञान कौशल में वृद्धि होती है बल्कि सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक स्तर पर अपनी भूमिका को मजबूती से निभा सकती हैं। समाज में भी घर परिवार में वह बिना किसी दबाव से बिना किसी के प्रभावित हुए अपने कार्यों को आसानी से संपादित कर सकती हैं। महिलाओं का मानसिक सशक्तिकरण महिलाओं को मानसिक रूप से स्वतंत्रता और उन्हें सम्मान पूर्ण जीवन जीने देने की आजादी प्रदान करता है सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर , विकलांग और वृद्ध महिलाएं को मानसिक रूप से मजबूत बनाना और अधिक आवश्यक हो जाता है। महिलाओं के मानसिक सशक्तिकरण में न केवल सरकार बल्कि गैर सरकारी एजेंसियां भी भागीदारी करती है। महिलाएं अपने जीवन में सामाजिक राजनीतिक आर्थिक और शारीरिक आधार पर मानसिक रूप से अनेक चुनौतियों का सामना करती है। सरकार द्वारा प्रदत अधिकारों और सुविधाओं के बावजूद भी आज भी वर्तमान समय में उनकी स्थिति कमजोर है यद्यपि पहले की तुलना में वह बेहतर हुई है।

शोध उद्देश्य और शोध विधि – प्रस्तुत शोध पत्र में भारत में महिलाओं के मानसिक सशक्तिकरण की व्याख्या की गई है और महिलाओं को मानसिक रूप से मजबूत बनाने के लिए सरकार और सरकारी संस्थाओं के द्वारा उठाए गए कदमों का भी विश्लेषण किया गया है। महिलाओं के समक्ष मानसिक रूप से उत्पन्न चुनौतियों और उन समस्याओं के समाधान को भी प्रस्तुत शोध पत्र में प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में प्राथमिक और द्वितीय स्रोतों का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में ऐतिहासिक विश्लेषणात्मक और वर्णनात्मक शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है।

साहित्य पुनरावलोकन

Louis L.Hay (2011) वर्णन करती है मानव शरीर और मस्तिष्क एक दूसरे से संबंधित है। लेखिका व्याख्या करती है कि कैसे नकारात्मक विचार हमारे हमेशा शारीरिक और मानसिक रूप से प्रभावित करते हैं और हमारे मानसिक स्वास्थ्य को बाधित करते हैं। डॉ. हर्षवर्धन गोस्वामी(2011) व्याख्या करते हैं कि प्राणायाम हमारी मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जीवन की प्रत्येक समस्याओं का समाधान करने में सहायता करता है। डॉ. स्वामी मुक्तानंद पुरी जी महाराज (2007) अपनी पुस्तक में लिखते हैं। योग और जीवन प्रबंधन एक श्रेष्ठ और स्वस्थ जीवन के लिए जरूरी है। डॉक्टर सावित्री माथुर और मोनिका जैन (2013)भारतीय महिलाओं की भूमिका की विभिन्न आयामों और चुनौतियों की चर्चा करती हैं। प्रोफेसर मनमीत कौर और डॉक्टर वंदना शर्मा एवं डॉ संदीप मोगा (2024) विभिन्न आधारों पर यह प्रदर्शित करते हैं कि महिलाओं के अधिकारों और समानता के बावजूद भी पिछली कुछ शताब्दियों में स्थिति बेहतर हुई है लेकिन अभी भी काफी कुछ किया जाना बाकी है।

भारत में महिलाओं का मानसिक सशक्तिकरण– भारत में महिलाएं पारंपरिक रूप से घर परिवार में कार्यों में सलग्न रहती है। उन्हें प्रारंभ से शारीरिक और मानसिक रूप से कमजोर माना जाता है लेकिन वैज्ञानिक रूप से यह साबित हो चुका है कि महिलाएं पुरुषों के मुकाबले मानसिक रूप से अधिक सशक्त होती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार ,'मानसिक स्वास्थ्य मानसिक कल्याण की एक अवस्था है जो लोगों को जीवन जीने , तनाव से निपटने क्षमताओं का एहसास करने, जीवन में सीखने, काम करने और अपनी समुदाय और समाज में योगदान करने में सक्षम बनाती है'। यदि मानसिक स्वास्थ्य बेहतर है तो महिलाएं मानसिक रूप से अधिक सशक्त होंगे महिलाओं के मानसिक सशक्तिकरण से आशय ऐसी व्यवस्था से है। जिसमें वह अपनी मानसिक स्थिति को बेहतर बनाने अपनी क्षमताओं को विकसित करने और अपने जीवन की चुनौतियों से निपटने के लिए अपनी क्षमता को प्रदर्शित करती है। जैसे आत्मा जागरुकता और लचीलापन वास्तव में यह मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने की एक महत्वपूर्ण क्षमता है। मानसिक सशक्तिकरण एक लगातार चलने वाली प्रक्रिया है।

महिला सशक्तिकरण शब्द 19वीं शताब्दी में शुरू हुआ था। संयुक्त राष्ट्र ने 1975 से 1985 की अवधि को महिला सशक्तिकरण का दशक कहा 2001 में महिलाओं का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सशक्तिकरण वर्ष मनाया गया। सशक्तिकरण शब्द शारीरिक और मानसिक सशक्तिकरण को प्रदर्शित करता है।

भारत में लिंगानुपात 2011 के प्रति एक हजार पुरुषों पर 943 महिलाएं के स्तर से बढ़कर 2036 में प्रति 1000 पुरुषों पर 952 महिलाएं होने की

उम्मीद है। सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय द्वारा जारी 'भारत में महिला एवं पुरुष 2023' रिपोर्ट में यह जानकारी दी गई। रिपोर्ट में रेखांकित किया गया है कि 2036 में भारत की जनसंख्या में 2011 की जनसंख्या की तुलना में स्त्रियों की संख्या अधिक होने की संभावना है, जैसा कि लिंगानुपात मंय परिलक्षित होता है। रिपोर्ट के मुताबिक भारत में 2011 की तुलना में 2036 में हुई वृद्धि लैंगिक समानता में सकारात्मक चलन को दर्शाता है।रिपोर्ट के मुताबिक 2036 तक भारत की जनसंख्या 152.2 करोड़ तक पहुंचने की उम्मीद है, जिसमें महिलाओं का प्रतिशत 2011 के 48.5 प्रतिशत की तुलना में थोड़ा बढ़कर 48.8 प्रतिशत हो जाएगा।

रिपोर्ट के मुताबिक यदि हम राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति को देखें तो 15वें आम चुनाव (1999) तक, 60 प्रतिशत से भी कम महिला मतदाताओं ने भाग लिया, जबकि पुरुषों का मतदान प्रतिशत उनसे आठ प्रतिशत अधिक था। हालांकि, 2014 के चुनावों में एक महत्वपूर्ण बदलाव आया, जिसमें महिलाओं की भागीदारी बढ़कर 65.6 प्रतिशत हो गई, और 2019 के चुनावों में यह और बढ़कर 67.2 प्रतिशत हो गई। पहली बार, महिलाओं के लिए मतदान प्रतिशत थोड़ा अधिक था, जो महिलाओं में बढ़ती साक्षरता और राजनीतिक जागरूकता के प्रभाव को दर्शाता है।

आर्थिक दृष्टिकौन से भी महिलाओं की स्थिति बेहतर हुई है उद्योग एवं आंतरिक व्यापार संवर्धन विभाग (डीपीआईआईटी) ने जनवरी 2016 में अपनी स्थापना के बाद से दिसंबर 2023 तक कुल 1,17,254 स्टार्ट-अप को मान्यता दी है। इनमें से 55,816 स्टार्ट-अप महिलाओं द्वारा संचालित हैं, जो कुल मान्यता प्राप्त स्टार्ट-अप का 47.6 प्रतिशत है। यह महत्वपूर्ण प्रतिनिधित्व भारत के स्टार्ट-अप पारिस्थितिकी में महिला उद्यमियों के बढ़ते प्रभाव और योगदान को रेखांकित करता है।

यह सभी तथ्य यह प्रस्तुत करते हैं कि महिलाओं न केवल शारीरिक रूप से बल्कि मानसिक रूप से भी पहले की तुलना में सशक्त हुई है जो उनके बढ़ते हुए योगदान को विभिन्न क्षेत्रों में प्रदर्शित करता है।

भारत में महिलाओं के मानसिक सशक्तिकरण के समक्ष चुनौतियां – कुपोषण मातृत्व के समय में पर्याप्त पोषण न मिलाना समय पर स्वस्थ आहार न लेना गरीबी और बेरोजगारी के कारण सामाजिक और आर्थिक स्थिति के कारण महिलाओं को पर्याप्त स्वस्थ आहार न मिलने के कारण भी उनकी मानसिक स्थिति प्रभावित होती है। भारत में सामाजिक आर्थिक स्थिति के कारण महिलाओं में शारीरिक और मानसिक हिंसा और मारपीट आत्महत्या जैसे घटनाएं भी आम है जागरूकता के अभाव में भी अनेक बीमारियां महिलाओं में शारीरिक और मानसिक रूप से हो जाती है। कॉविड-19 के समय में महिलाओं की मानसिक स्थिति को बहुत अधिक प्रभावित किया। जिसमें अकेलेपन और घर में अनेक तरह की की समस्याओं का सामना करने के कारण उनके तनाव और अवसाद में वृद्धि हुई जिनसे उनकी मानसिक स्थिति प्रभावित हुआ।

अपने कार्य स्थल पर भी काम के दबाव और शारीरिक एवं मानसिक प्रताड़ना के कारण भी महिलाओं की मानसिक स्थिति कमजोर हो जाती है। महिला खिलाड़ियों का मानसिक एवं भावनात्मक आरोग्य अंतरराष्ट्रीय स्तर पर खेलों में प्रदर्शन करने में उनकी मदद करता है। यदि वह मानसिक रूप से प्रताड़ित होती है तो इस वजह से उनका प्रदर्शन खराब हो जाता है। दहेज हत्या लिंग चयनात्मक गर्भपात मानवाधिकारों का हनन, राजनीतिक जागरूकता में कमी और आर्थिक रूप से कमजोर होना या दूसरों पर निर्भर होना। जैसी चुनौतियों के कारण भी महिलाओं की मानसिक स्थिति प्रभावित होती है।

सरकार के द्वारा महिलाओं की मानसिक स्थिति को बेहतर बनाने के लिए किए गए सरकारी प्रयास – सरकार के द्वारा किए गए समस्त सरकारी प्रयास और संवैधानिक व्यवस्थाएं महिलाओं को न केवल मानसिक रूप से मजबूत बनाती है। बल्कि उन्हें आत्मनिर्भरता की ओर भी ले जाती है प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना, पंचायती राज के द्वारा महिलाओं को आरक्षण ,महिलाओं की सुरक्षा के लिए किए गए प्रावधान महिलाओं को राजनीतिक और शारीरिक रूप से मजबूती प्रदान करके उन्हें मानसिक रूप से सशक्त बनाते हैं।

बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ कार्यक्रम ,गर्भधरण व पूर्व नैदानिक तकनीक अधिनियम 1994, प्रधानमंत्री सुरक्षित मातृत्व अभियान , स्वास्थ्य मंत्रालय के द्वारा चलाए गए जननी शिशु सुरक्षा कार्यक्रम, राष्ट्रीय किशोर स्वास्थ्य कार्यक्रम, मिशन इंद्रधनुष कार्यक्रम के द्वारा महिलाओं और बच्चों को टीकाकरण की सुविधा प्रदान करना, स्वास्थ्य बीमा योजना और सुरक्षा बीमा योजना जैसी नीतियों स्वास्थ्य और विकलांगता संबंधी आकस्मिक परिस्थितियों में महिलाओं के लिए काफी मददगार साबित होती है। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन निवास करता है। यह धारणा बिल्कुल सही साबित होती है। जिसके अंतर्गत सरकार ने महिलाओं के लिए उनके स्वास्थ्य को बेहतर करने की योजनाएं चलाकर उन्हें मानसिक रूप से मजबूत बनाने का प्रयास किया है। वृद्ध औरतों के लिए वृद्ध महिलाओं के लिए पेंशन योजनाएं जिसमें अटल पेंशन योजना ऐसी योजना है। जो महिलाओं को बच्चों या पति की मर्जी के दबाव में आए बिना आत्मनिर्भर बनकर उनके बुढ़ापे के लिए उन्हें आर्थिक रूप से सक्षम बनाती हैं।

महिलाओं को आर्थिक रूप से मजबूत बनाने के लिए भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक सिडबी के द्वारा महिला उद्यम नीति योजना और महिला विकास नीति योजना, निधि योजना, स्टार्टअप इंडिया उद्यमशीलता को बढ़ावा देने के लिए और महिलाओं के लिए प्रशिक्षण और रोजगार कार्यक्रमों को प्रोत्साहन देने के लिए स्टेप सुविधा प्रदान करना, स्टैंड अप इंडिया कार्यक्रम प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना ,महिला उद्यमिता मंच ,महिलाओं के लिए मुद्रा योजना जैसी योजनाएं महिलाओं को आर्थिक दृष्टिकोण से मजबूत बनाकर उनका मानसिक रूप से सशक्त बनाती है।

यद्यपि संवैधानिक रूप से भी भारतीय संविधान में स्वतंत्रता समानता और मौलिक अधिकारों के अंतर्गत अनेक प्रावधान स्त्रियों के लिए किए गए हैं। कार्यस्थल पर उनके लिए समान वेतन का अधिकार भी दिया गया है। उत्पीड़न के खिलाफ कानूनी सुरक्षा भी प्रदान की गई है संपत्ति का अधिकार हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 दहेज विरोधी अधिनियम समान नागरिक संहिता उन्हें न केवल मानसिक रूप से मजबूत बनाता है, बल्कि उनके सशक्तिकरण को भी हर स्तर पर बढ़ावा देता है।

निष्कर्ष एवं सुझाव – सरकार के द्वारा प्रयास महिलाओं के मानसिक सशक्तिकरण के लिए एक सहायता नेटवर्क का निर्माण करके उन्हें हर प्रकार से मजबूती प्रदान करता है। मानसिक सशक्तिकरण हेतु शारीरिक और राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण अनिवार्य है। आर्थिक रूप से सक्षम होना और आर्थिक क्षेत्र में अपने निर्णय स्वयं लेना और स्वयं अपने अधिकारों को पहचानने के माध्यम से ही आर्थिक सशक्तिकरण संभव है। स्वयं महिलाओं के द्वारा अपनी शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने की प्रयास करने के लिए पहल करनी होगी। इसके लिए वह

योग प्राणायाम संतुलित आहार नकारात्मक विचारों को दूर करना–जैसे साधनों को अपना सकते हैं। मानसिक रूप से सशक्त महिलाएं समाज और समुदाय एवं राष्ट्र निर्माण में अधिक भागीदारी करती है। इसके लिए महिलाओं को भी स्वयं जागरूक होना होगा शिक्षा जन जागरूकता और परिवार एवं समाज के द्वारा अपना दृष्टिकोण बदलने के प्रयास के साथ भारत में महिलाओं के मानसिक सशक्तिकरण के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉक्टर गोस्वामी हर्षवर्धन (2011),'प्राणायाम ' , सत्यम पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।
2. डॉक्टर पुरी जी महाराज स्वामी मुक्तानंद(2007),' योग जीवन पद्धति' सत्यम पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।
3. लुईक्स ल हैं(2011)' यू कैन हील योर लाइफ', प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली।
4. प्रोफेसर मनमीत कौर एवं डॉक्टर वंदना शर्मा एवं डॉ. संदीप मोगा (2024),'राइट्स ऑफ वीमेन' सनी ओबेरॉय विवेक सदन श्री आनंदपुर साहिब पंजाब भारत।
5. डॉक्टर सावित्री माथुर एवं मोनिका जैन (2013),'आधुनिक समाज में महिलाएं', आस्था प्रकाशन जयपुर।
6. पटेल कल्पना ,'भारतीय संस्कृति एवं महिला सशक्तिकरण'(2013) पैराडाइज पब्लिशर्स जयपुर राजस्थान।
7. डॉक्टर नारायणअप्पा वेंकूव और डॉक्टर महाजन सुरभि ,'एंपावरमेंट ऑफ वीमेन'(2007) अनु बुक्स मेरठ।
8. योजना, सितंबर 2016
9. योजना अक्टूबर 2018
10. योजना सितंबर 2021
11. www.unacademy.com
12. www.livehindustan.com
13. www.worldwidejournals.com
14. www.navbharattimes.indiatimes.com
15. www.journeyline.in
16. https://www.education.gov.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

आँसू का शैलीवैज्ञानिक अध्ययन

डॉ. निशा शुक्ला तिवारी*

* प्राध्यापक (हिंदी) आदित्य इंजीनियरिंग कॉलेज, सतना (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – संसार में सब चीजें एक सी नहीं हैं उनमें भिन्नता है। यही भिन्नता सब चीजों को एक दूसरे से विशेष बनाती है। सब मनुष्य भिन्न हैं, इसीलिए सब मनुष्य विशेष हैं। हर-एक मनुष्य के कार्य करने का तरीका अलग है। इसी 'तरीके' को शैली कहा गया है। प्रत्येक व्यक्ति के बोल-चाल, उठने-बैठने, हाव-भाव जैसी छोटी-छोटी गतिविधियों में भी इस शैली का अंतर स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है। वास्तव में शैली की इन्हीं भिन्नताओं से हम अलग-अलग व्यक्तियों से अलग-अलग तौर से व्यवहार कर पाते हैं। हम उन्हें अलग-अलग रूप में पहचान पाते हैं। शैली की यही भिन्नता व्यक्ति की भाषा में परिलक्षित होती है और भाषा के माध्यम से कविता में उतर जाती है। इसीलिए अलग-अलग कवियों की कविताओं में हमें अलग-अलग शैली देखने को मिलती है। भक्ति काल में कबीर, सूर और तुलसी की कविता की कुछ पंक्तियाँ पढ़ कर ही बताया जा सकता है कि कौन सी रचना किसकी है। छायावाद के कवियों में भी यह शैली की भिन्नता स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। प्रसाद के स्वर और पंत के स्वर में भेद स्पष्ट रूप से हो सकता है। या निराला और महादेवी की ही कविता को पढ़ कर ही यह शैली भेद बताया जा सकता है। यही नहीं एक ही कवि की भिन्न-भिन्न रचनाओं में भिन्न-भिन्न शैलियाँ देखने को मिलती हैं। प्रसाद की आँसू की शैली, कामायनी की शैली से भिन्न है। यह भिन्नता कितनी है, किन आधारों पर है, शैली के कौन से तत्व दो रचनाओं, या दो कवियों को भिन्न साबित करते हैं इसी का अध्ययन शैलीविज्ञान करता है। छायावाद के महत्वपूर्ण कवि जयशंकर प्रसाद की कृति 'आँसू' को आधार बना कर यहाँ शैलीवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है।

'शैली' शब्द की व्युत्पत्ति यदि भारतीय वाङ्मय में तलाशी जाय तो यह शब्द हमें 'शील' के रूप में मिलता है। जिसका अर्थ चरित्र, स्वभाव, आचरण आदि की ओर इंगित प्रतीत होता है। इस बात से यह पुष्टि हो जाती है कि किसी व्यक्ति का आचरण, उसका स्वभाव, व्यापक अर्थों में उसका चरित्र आदि उसकी कार्य-शैली को प्रभावित करते हैं। इसी तरह किसी कविता में हमें रचनाकार की व्यक्ति-शैली की आभा मिल जाती है। और समाज के स्तर पर देखा जाय तो प्रत्येक व्यक्ति का आचरण,स्वभाव और चरित्र अधिकतर परिस्थितियों में उसके परिवेश से संचालित होता है। अर्थात् कोई भी रचना केवल रचनाकार की शैली की ही सूचना नहीं देती वरन् उस समाज की भी शैलीगत विशेषताओं को परिलक्षित करती है।

'शैली' शब्द अंग्रेजी में 'स्टाइल'(Style) निकट है। जो कि लैटिन शब्द 'स्टाइलस' का परवर्ती विकसित रूप है। डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने अपनी पुस्तक 'रीतिविज्ञान' (पृष्ठ 14) में अंग्रेजी शब्द 'स्टाइल' के लिए 'रीति' शब्द प्रयोग में लिया है। जैसे यह बात शुरू में ही स्पष्ट कर दी गई है कि 'शैली' का साधारण भाषा में अर्थ है – ढंग, जीवन-यापन की पद्धति, बोलने-लिखने की शैली आदि। शैली शब्द का प्रयोग जीवन के तमाम अंगों के साथ होता है। यही बात सत्यदेव चौधरी अपनी पुस्तक 'शैलीविज्ञान और भारतीय काव्यशास्त्र' (पृष्ठ-9) में लिखते हैं कि – 'शैली' शब्द का तात्पर्य – कवि का रचना-प्रकार है, जो उसके द्वारा प्रयुक्त पदों एवं वाक्यों के माध्यम से अथवा भाषा के माध्यम से प्रकट होता है।'

शैलीवैज्ञानिक अध्ययन का आरम्भ एक अनुशासन के रूप में पाश्चात्य काव्यशास्त्र का ही निदर्शन है। शैली विज्ञान काव्यशास्त्रीय अध्ययन का वह अनुशासन है जो भाषा का विचलन, समांतरता, चयन आदि उपयुक्त साधनों या आधारों पर विश्लेषण करता है। यह सैद्धांतिक भी हो सकता है, अनुप्रयुक्त या व्यवहारिक भी। शैलीविज्ञान साहित्य की वस्तुनिष्ठ व्याख्या का विज्ञान है। आधुनिक शैलीविज्ञान पाश्चात्य समीक्षाशास्त्र में 'स्टाइलिस्टिक्स' के समानार्थी रूप में प्रचलित हुआ है। पाश्चात्य विद्वान टर्नर के अनुसार 'शैलीविज्ञान शैली का विज्ञान या शास्त्र है। शैलीविज्ञान का अर्थ है – शैली का अध्ययन। वैज्ञानिक या कम से कम व्यवस्थित अध्ययन, जैसा कि व्युत्पत्ति से ध्वनित होता है।'

डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार 'झरना', 'लहर', 'आँसू' तथा 'कामायनी' प्रसाद के काव्य-सृजन के चार सोपान हैं। अपनी उच्चकोटि की वेदना, अनूठी मधुरता, तीव्र अनुभूति तथा अपनी प्रौढ़ कला में 'आँसू' आधुनिक समय की महान कलाकृतियों में एक है।' इस आधार पर यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि 'कामायनी' के बाद 'आँसू' प्रसाद की सबसे महत्वपूर्ण काव्य रचना है। जहाँ तक हृदय की गहरी विरह वेदना को स्वर देने की बात है वहाँ आँसू, कामायनी से भी आगे की रचना मानी जाएगी।

'आँसू' विरह प्रधान काव्य है। भारतीय विरह-काव्य परम्परा में खड़ी-बोली में रचित यह अपने ढंग का अकेला विरह-काव्य है। आमतौर पर यह धारणा है कि प्रसाद जी आँसू में अन्य परम्पराओं से प्रभाव ग्रहण करते हैं, परन्तु सत्य यह है कि विरह के सूक्ष्मतम अनुभूतियों को अपने युग के अनुरूप भावाभिव्यक्ति देने में प्रसाद जी को अभूतपूर्व सफलता मिली है। प्रसाद जी ने अपने देश के गौरवमय साहित्य की ही परंपरा को आगे बढ़ाते हुए 'आँसू' के रूप में एक नई वस्तु प्रदान की है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कहा है – ' 'आँसू' वास्तव में है तो शृंगारी विप्रलम्भ, जिसमें अतीत संयोग-सुख की भिन्न-भिन्न स्मृतियाँ रह-रह कर झलक मारती हैं, पर जहाँ प्रेमी की मादकता

की बेसुधी में प्रियतम अपनी भावभूमि से उठकर ऊपर आ जाते हैं और संज्ञा की दशा में चले जाते हैं' जहाँ हृदय की तरंगें उस अनंत कोने को नहलाने लगती हैं, वहाँ वे आँसू उस अज्ञात प्रियतम के लिए बहते जान पड़ते हैं। फिर जहाँ कवि यह देखने लगता है कि ऊपर तो –

'अवकाश असीम सुखों से
आकाशतरंग बनाता
हँसता–सा छायापथ में
नक्षत्र समाज दिखाता।'

परन्तु –

'नीचे विपुला धरणी है
दु:खभार वहन–सी करती
अपने खारे आँसू से
करुणा–सागर को भरती।'

और इस चिर दग्ध दु:खी वसुंधरा को, इस स्वच्छ जगती को, अपनी प्रेमवेदना को, कल्याणी शीतल ज्वालामय उजाला देना चाहता है। वहाँ वे आँसू लोकपीड़ा पर करुणा के आँसू जान पड़ते हैं। पर वहीं जब हम कवि की दृष्टि अपनी सदा जगती हुई अखण्ड ज्वाला की प्रभविष्णुता पर इस प्रकार जमी पाते हैं कि –

'हे मेरी ज्वाला
तेरे प्रकाश में चेतन
संसार वेदना वाला
मेरे समीप होता है
पाकर कुछ करुण उजाला।'

तब ज्वाला या प्रेमवेदना की अतिरंजित या चिरारूढ़ भावना ही जो शृंगार की प्राचीन रूढ़ि है, रह जाती है। कहने का अर्थ यह है कि वेदना की कोई एक निर्दिष्ट भूमि न होने से सम्पूर्ण पुस्तक का कोई एक समन्वित प्रभाव नहीं निष्पन्न होता। यह एक दूरी तक ठीक है कि कवि आँसू के मूलभाव–विन्यास को अत्यंत ही शृंखलित रूप में प्रस्तुत करने में पूर्ण रूप से सफल नहीं हो पाया है, पर यह कहना समीचीन प्रतीत नहीं होता कि समस्त पुस्तक का कोई एक समन्वित प्रभाव नहीं निष्पन्न होता, क्योंकि आँसुओं बरस पड़ने की पूर्ण कथा ग्रंथ में दी हुई है और लोगों की मंगल–कामना के मूल में कवि की पीड़ा विद्यमान है। परंतु कवि जनमंगल पर व्याख्यान नहीं देता है। श्री विनय मोहन शर्मा ने लिखा है कि – 'आँसू की आत्मा को देखने पर उसमें तारतम्य जान पड़ता है। अत: वह प्रबन्धमय है। पर 'आँसू' के अनेक पड़ाव ऐसे भी हैं कि उन्हीं पर मन को केंद्रित करने से प्रत्येक अपने में पूर्ण प्रतीत होते हैं। इस तरह 'आँसू' उस मोतियों की लड़ी के समान है, जिसका प्रत्येक मोती पृथक रहकर भी चमकता है और लड़ी के तार में गुँथकर भी आब देता है। वस्तुत: उसमें मुक्तक और प्रबंधत्व दोनों हैं।'

किसी भी कृति के शैली वैज्ञानिक अध्ययन के लिए जो प्रतिमान निर्धारित किये गए हैं उनमें प्रमुख हैं– 1. चयन 2. विचलन 3. समांतरता

चयन ही वह कसौटी है जो किसी रचनाकार को विशेष बनाती है। चयन काव्य की सृजन प्रक्रिया का महत्वपूर्ण सोपान है। किसी काव्य की सृजन प्रक्रिया में अन्त: के भावों को शब्दों में ढालना एक जटिल और सूक्ष्म प्रक्रिया है। भाव अमूर्त से होते हैं उन्हें चयन मूर्त बनाता है। चयन ही यह निर्धारित करता है कि रचना का स्वरूप क्या होगा, रचना की शब्दावली कैसी होगी, रचना में भाव–प्रवाह कैसा होगा। यह चयन प्रक्रिया ही एक रचनाकार की विशिष्ट शैली निर्धारित करती है। इसी से हम किसी रचनाकार की रचना विशेष से ही पहचान लेते हैं।

'कभी–कभी रचनाकार का विशिष्ट चयन विशेष प्रिय हो जाता है और वह रचना में यथास्थान उसी संदर्भ में उसका आवर्तन करता है, जो उस रचनाकार की शैली का परिचायक तत्व कहलाता है।'(एन.ई. एंक्विस्ट, आन डिफाइनिंग स्टाइल, लीगुइस्टिक्स एंड स्टाइल, पृष्ठ 34)

यह चयन प्रक्रिया भाषिक और भाषिकेतर, दो स्तरों पर होती है। भाषिकेतर चयन में रचना की विषयवस्तु चयन, भाषा चयन, साहित्यिक शैली चयन, विधा चयन आदि महत्वपूर्ण होते हैं। जैसे प्रसाद जी ने अपने मनोभावों को व्यक्त करने के लिए विरह संपृक्त विषय 'आँसू' चुना और इस करुण पुकार के लिए ठीक ही था कि उन्होंने अन्य विधाओं(निबंध आदि) का चयन न कर काव्य को चुना। जो भावाभिव्यक्ति के लिए सहज है। इसमें प्रसाद जी ने एक विशिष्ट शैली का प्रयोग किया है कि पढ़ने वाला एक धार में बहता हुआ क्रमश: करुण पुकार से अभिसिक्त हुए बिना नहीं रह सकता। यही प्रसाद जी की और 'आँसू' की विशेषता है। प्रसाद जी अपनी शैली से सहज ही सुष्क हृदय में भी रस धार की वर्षा करने में सफल हुए हैं–

'शीतल ज्वाला जलती हैं
ईधन होता दृग जल का।
यह व्यर्थ साँस चल–चल कर
करती हैं काम अनल का।।'
बाड़व ज्वाला सोती थी
इस प्रणय सिन्धु के तल में।
प्यासी मछली–सी आँखें
थी विकल रूप के जल में।।'

इसी प्रकार भाषिक चयन के प्रमुख पाँच स्तर शैलीविज्ञान के विद्वानों ने निर्धारित किये हैं– (1)ध्वनि चयन (2)शब्द चयन (3)रसचयन (4)वाक्यचयन (5)अर्थचयन ।

ध्वनि भाषा की लघुत्ताम इकाई है, जो भाषा में सार्थक ध्वनि–समूहों–शब्दों–के रूप में उपस्थित होती है। अनेक प्रकार की समानार्थक ध्वनियों में से अभीष्ट कलात्मक प्रभाव के अनुरूप किसी एक ध्वनि का निर्वाचन 'ध्वनि–चयन' कहलाता है, जो वस्तुत: शब्द–चयन के माध्यम से सम्पन्न होता है। (भोलानाथ तिवारी, शैलीविज्ञान, पृष्ठ 81)

प्रसाद ने 'आँसू' में भिन्न–भिन्न ध्वनियों का चयन भिन्न–भिन्न संदर्भों में किया है, जैसे–

'मेरे क्रंदन में बजती क्या वीणा, जो सुनते हो' (आँसू, पृष्ठ 10)

काव्यशास्त्र में ध्वनिकार ने भी शब्दों से निकलने वाली ध्वनि के अर्थ को ही सार्थक माना है, वाच्यार्थ को नहीं। इसी प्रकार आँसू से एक और उदाहरण देखा जा सकता है–

'झंझा झकोर गर्जन था बिजली थी नीरद माला' (आँसू, पृ.10)

तेज हवा, आँधी, तूफान, बिजली–गर्जन की ध्वनि के लिए ये पंक्ति प्रयुक्त सी लगती है। वास्तव में यह मानव मन के मनोभावों का प्रतिबिम्बन है। इंसान विरह में प्रेमी पर क्रोधित होता भी है, लेकिन थोड़ी ही देर में वे गरजने वाले बादल आँसू के रूप में बरस जाते हैं। काव्य में प्रत्येक शब्द किसी विशेष संदर्भ में प्रयोग होता है। प्रसाद जी शब्द–चयन विलक्षण हैं। आँसू रचना में 'समुद्र' शब्द के लिए ही उन्होंने पारावार, जलनिधि, रत्नाकर, सागर, जलधि जैसे पर्याय चुने हैं। जैसे–

'देखा बौने जलनिधि का शशि छूने को ललचाना'(पृ.27)

या

'यह पारावार तरल हो फेनिल हो गरल उगलता।'(पृ.9)

इसी प्रकार के शब्द चयन की भिन्नता से आँसू काव्य भरा पड़ा है। शब्द-चयन के बाद काव्य में वाक्य चयन की प्रक्रिया और महत्वपूर्ण होती है। एक ही बात अलग-अलग वाक्यों में कही जा सकती है। कई बार पूर्ण वाक्यों में, कभी अपूर्ण वाक्यों में या कभी सीधे-सीधे अभिधा में या लक्षणा और व्यंजना का सहारा लेकर बात कही जाती है। वस्तुत: उद्देश्य होता है सटीक भावाभिव्यक्तिय चाहे जिस प्रकार हो। जैसे - 'जीवन का लाभ नहीं वह वेदना पद्यमय छल में' आँसू का यह वाक्य जहाँ नकारात्मक है वहीं प्रसाद जी ने प्रश्नवाचक वाक्यों के सहारे यह पूँछा है कि - 'उस पार कहाँ फिर जाऊँ तम के मलीन अंचल में।'

काव्य की रचना प्रक्रिया में कई बार भावाभिव्यक्ति इतनी प्रगाढ़ होती है कि वह व्याकरणिक प्रतिमानों और काव्यशास्त्रीय सिद्धांतों का अतिक्रमण कर जाती है। यही विचलन है। शैलीविज्ञान काव्य के इसी विचलन का अध्ययन करता है। जिस प्रकार अवधूत कोटि के महापुरुषों का अवलोकन सामान्य जन की भाव भूमि से नहीं हो सकता। ऐसे महात्माओं को समझने के लिए उनके स्तर का ही भावबोध होना चाहिए। इसी प्रकार महान कृतियों के मूल्यांकन के लिए सामान्य पद्धति से परे होकर देखना पड़ता है। यही विचलन का अध्ययन है।

काव्य में विचलन कई स्तर पर हो सकता है। आँसू की इन पंक्तियों में प्रसाद जी ने ध्वनि सम्बन्धी विचलन का बड़ा ही सुंदर प्रयोग किया है-

'बिजलीमाला पहने सा फिर मुस्क्याता-सा आँगन में।
कामना-सिंध लहराता छबि पूरनिमा थी छाई।'(पृ.10)

यहाँ 'मुस्क्याता' के स्थान पर मुस्काता भी प्रयोग में लाया जा सकता था लेकिन मुस्क्याता में जो कर्ण-प्रिय सरस ध्वनि समाहित है वह वह मुस्काता में नहीं। यही बड़े कवि की पहचान है। इसी प्रकार 'आँसू' जैसे काव्य को रस-प्रवण बनाने में 'पूरनिमा' ही सार्थक है पूर्णिमा नहीं। अर्थ के स्तर पर भी आँसू में एक अनूठा विचलन देखा जा सकता है। महाकवि की उक्ति है -

'वेदना मधुर हो जाए मेरी निर्दय तन्मयता,
मिल जाए आज हृदय को पाऊँ मैं भी सहृदयता।'

आँसू की यह पंक्ति पढ़कर जलाने वाली वेदना भी मधुर लगने लगती है। और तन्मयता जो कि प्रेम का सहज गुण है कवि उसे निर्दय कहता है। क्योंकि विरह में अपने प्रियतम को निर्दय कहने में भी एक रस मिलता है। उलाहना का ही सुख गोपियों ने भ्रमरगीत में लिया है। प्रेम का सुख प्रेमी को निर्दय कहने में ही है। प्रेमी को दयालु कहना तो निरी चाटुकारिता है।

शैलीवैज्ञानिक अध्ययन में चयन और विचलन के बाद 'समांतरता' के अवलोकन को महत्व दिया जाता है। पश्चिमी शैलीविज्ञान में समांतरता के लिए 'पैरेललिज्म'(Parallelism) का प्रयोग किया जाता है। 'सामान्य प्रयोग में भाषा का सामान्य, अवक्र तथा अविचलित रूप प्रयुक्त होता है, जिसे पश्चिमी शब्दावली के आधार पर सामान्य भूमि या पुरावस्था अथवा पश्चभूमि कह सकते हैं। किन्तु काव्य-भाषा इससे भिन्न होती है। इसे नव्यव्यवस्था अथवा अग्रभूमि की आवश्यकता होती है। काव्य-भाषा नव्यव्यवस्था अथवा अपने को सामान्य भाषा से अलग करने के लिए विचलन, अप्रस्तुत विधान, तथा समनान्तरता का प्रयोग करती है। (भोलानाथ तिवारी, शैलीविज्ञान, पृ.101)

समानान्तरता से आशय है किसी रचना में समान या विरोधी भाषिक इकाइयों का प्रयोग। इसमें समान भाषिक इकाई की एक या अधिक बार आवृत्ति होती है अथवा दो या अधिक विरोधी भाषिक इकाइयाँ साथ-साथ आती हैं। अर्थात् इसमें समान या विरोधी संतुलन होता है और यह संतुलन समानान्तरता के कारण ही संभव होता है।(वही)

समानान्तरता बाह्य तथा आंतरिक होती है। बाह्य समानान्तरता शब्दालंकारों में होती है, जिसमें ध्वनि, आवृत्ति आदि मिल कर रूपगत समनान्तरता का निर्माण करती हैं। आंतरिक समानान्तरता अर्थालंकारों की होती है जिसके अंतर्गत अर्थ की समता, विरोध, न्यूनता, अनन्यता, तद्रूपता, शब्दों एवं पदों की आवृत्ति से भी समानान्तरता व्यक्त होती है। समानान्तरता के माध्यम से काव्य में चमत्कार उत्पन्न होता है तथा कविगत भावों, अनुभवों, विचारों, अनुभूतियों का सामान्यीकरण होता है।
(तुलनीय- पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु', शैलीवैज्ञानिक समांतरता और भारतीय अलंकार - विवेचन, गवेषणा, 48, पृ.1-24)

'आँसू' में ध्वनि समानान्तरता रचना की प्रत्येक पंक्ति में अनुभव की जा सकती है। कविता में जब समान ध्वनियाँ मिलकर एक विलक्षण नाद सौंदर्य को उत्पन्न करती हैं। यथा -

'अवकाश, शून्य फैला है, शक्ति न और सहारा।'(श्, स् ध्वनियाँ)

और

'तिरती थी तिमिर उदधि में नाविक रू यह मेरी तरणी।'(त्,र् ध्वनियाँ)

इसीप्रकार 'आँसू' में रूपगत समानान्तरता सामान्यत: प्रत्येक छंद के अंत में देखी जा सकती है। यथा-

'चमकूँगा धूल-कणों में,
सौरभ हो उड़ जाऊँगा।
पाऊँगा कहीं तुम्हें तो,
ग्रह-पथ में टकराऊँगा।।'

और

'तुम सुमन नोचते सुनते
करते जाते अनजानी।' (पृ.22)

इसी प्रकार,

'इस हृदय-कमल का घिरना,
अलि-अलकों की उलझन में।
आँसू-मकरंद का गिरना,
मिलना विश्वास-पवन में।।'(पृ.78)

'आँसू' में प्रसाद जी ने अपने विशिष्ट भावों, अनुभवों, अनुभूतियों के वाचक शब्दों/उक्तियों के साथ-साथ समानान्तर शब्दों/उक्तियों का प्रयोग करके उन्हें सामान्यीकृत कर दिया है। यह अर्थ-समानान्तरता निम्न पंक्तियों में देखी जा सकती है-

1. 'हीरे-सा हृदय हमारा...' (पृ.53)
2. 'जल उठा स्नेह-दीपक सा नवनीत हृदय था मेरा' पृ.85
3. 'नचती है नियति नटी-सी'
   कंदुक-क्रीड़ा सी करती।'(पृ.52)

कवि अपने मूर्त/अमूर्त भावों, अनुभवों को प्रत्यक्षीकृत एवं सामान्यीकृत करता है। संदर्भगत समानान्तरता इस प्रक्रिया में कवि की सहयोगी होती है। इसे ऐसे समझ सकते हैं कि एक संदर्भ दूसरे समनान्तर संदर्भ से अंतर्क्रिया कर के अर्थगत व्यापकता प्राप्त करता है। 'आँसू' में भिन्न-

भिन्न संदर्भों की समनान्तरता को इस प्रकार समझा जा सकता है– जैसे 'आँसू' में प्रसाद जी ने 'मुख' के वर्णन करने के लिए इसके समनान्तर संदर्भ में कमल(पृ.37), चंद्र(पृ.5, 46, 47), विधु(पृ.30), और शशि(पृ.23) को लिया है। इसी प्रकार आँख के संदर्भगत समनान्तर मछली(पृ.73) और नीलम की प्याली(पृ.31) को लिया है। आसान भाषा में इसे हम ऐसे समझ सकते हैं कि जिन शब्दों के माध्यम से किसी शब्द विशेष के भिन्न–भिन्न वर्णन किये जा सकें। जैसे मुख कमल के समान है या चंद्र के समान है। इसी प्रकार प्रसाद जी ने अपने काव्य आँसू में अनेक संदर्भगत समानान्तर शब्दों का प्रयोग किया है। इन्हीं प्रयोगों के कारण छायावाद युग में प्रसाद जी अविस्मरणीय हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रसाद, जयशंकर, आँसू, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2000.
2. तिवारी, भोलानाथ, शैलीविज्ञान ,किताबघर प्रकाशन, दिल्ली, 1977.
3. नगेंद्र, शैलीविज्ञान , नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1976.
4. पांडेय, शशिभूषण, 'शैलीवैज्ञानिक मानदंड और भारतीय अलंकार विवेचन,' गवेषणा , खंड 48, 1986, पृ.1–24.
5. पांडेय, शशिभूषण 'शीतांशु', शैलीविज्ञान: स्वरूप, प्रकार्य, एवं व्यापित, वीक्षा , 1973, चच. 41–94.
6. मिश्र, विद्या निवास, रीतिविज्ञान , राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1973.
7. विमल, कुमार, छायावाद का सौंदर्यशास्त्रीय अध्ययन , राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1970.
8. शर्मा, कृष्ण कुमार, शैलीविज्ञान की रूपरेखा , जयपुर, 1974.
9. शुक्ल, रामचंद्र, चिंतामणि , भाग 2, सरस्वती मंदिर, काशी, 2002.
10. श्रीवास्तव, रवींद्रनाथ, शैलीविज्ञान और आलोचना की नई भूमिका , केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, 1972.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

कथाकार शिवानी के कथा साहित्य में सामाजिक समस्याएँ वर्तमान परिवेश में प्रासंगिकता

रेखा शर्मा * डॉ. संध्या बिसेन**

* शोधार्थी, स्कूल ऑफ आर्ट्स एंड सोशल साइंस, सरदार पटेल यूनिवर्सिटी, बालाघाट (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष (हिन्दी) स्कूल ऑफ आर्ट्स एंड सोशल साइंस, सरदार पटेल यूनिवर्सिटी, बालाघाट (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य और समाज एक दूसरे के पूरक है। साहित्य और समाज का घनिष्ठ संबंध है। एक साहित्यकार समाज मे उपस्थित वर्तमान, देशकाल परिस्थतियों को दृष्टिगत रखते हुए साहित्य का निर्माण करता है। साहित्यकार समाज में व्याप्त समसामयिक परिस्थतियों को केन्द्र में रखकर ही साहित्य का निर्माण करता है। भारतीय संस्कृति एवं समाज की धरोहरो को सहेजने का कार्य करता है।

व्यक्ति समाज का ही अंग है। वह समाज मे रहकर विभिन्न परिस्थतियो एवं अनुभूतियो को ग्रहण करता है। तथा वह अनुभूतियो को साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। एवं समाज मे संप्रेषित करता है मुंशी प्रेमचंद के शब्दो में –

'मैं उपन्यास को मानव का चित्र समझता हूँ। मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।'

मनुष्य जीवन के यथार्थ को खोल देना, जीवन की वास्तविकता को प्रगट करना साहित्य का मूल भाव है। एवं संभवत: समस्या का समाधान भौतिक एवं मानसिक स्तर पर प्रयास करना ही साहित्य का उद्देश्य होता है। स्वातंत्रयोत्तर युग में औद्योगिकीकरण यांत्रिकीकरण राजनैतिक एवं सामाजिक उथल पुथल और अस्तित्ववादी भौतिकोन्मुख चिंतन के कारण उत्पन्न स्थिति के फलस्वरूप नारी जागरण एवं स्त्रीशिक्षा का व्यापक प्रचार प्रसार हुआ जिसके फलस्वरूप साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र में समृद्धि प्रदान करने वाली महिला साहित्यकारो की एक सशक्त पीढ़ी का उदय हुआ जिसने समाज में व्याप्त सभी दुख दर्दो अर्न्तद्धन्दो, परिवेश मे प्रचलित कुप्रथाओ, कुरीतियो मनोवैज्ञानिक आर्थिक एवं राजनैतिक समस्याओ पर अपनी लेखनी की पैनी धार से उकेरा है। एवं अपने उद्धारो से पाठको को सोचने पर मजबूर कर दिया है।

हिन्दी साहित्य में अपने सशक्त हस्ताक्षर जिन्होंने सामाज में व्याप्त समस्याओ पर अपनी लेखनी चलाई है, उनमे से प्रमुख हस्ताक्षर है–

1. **अमृता प्रीतम**
2. **शिवानी जी**
3. **कृष्णा सोबती**
4. **उषाप्रियंवदा**
5. **मन्नू भंडारी**

मेरे शोध का विषय मेरी प्रिय लेखिका शिवानी जी द्धारा समाज में व्याप्त सामाजिक परिवेश में घुली हुई समस्याये जो कि हमारे जीवन के कुछ इस तरह घुलमिल गई है कि वे नजर आकर भी जीवन का एक अंग की तरह सदा साथ–साथ चलती हुई नजर आती है। लेखिका द्धारा समसामयिक परिवेश में व्याप्त सामाजिक समस्याऐ जो वर्तमान परिवेश में आज प्रासंगिक है। एक विश्लेषणात्मक अध्ययन निम्नानुसार है–

1. सामाजिक समस्या:–

1.1. दहेज प्रथा
1.2. बालविवाह
1.3. बहुविवाह
1.4. अनमेल विवाह
1.5. प्रेम विवाह (समाज की अस्वीकार्यता)
1.6. अंतर्जातिय विवाह
1.7. विवाह विच्छेद
1.8. कुष्ठरोगियों का सामाजिक बहिष्कार
1.9. आत्म हत्या की समस्या
1.10. संयुक्त परिवार का विघटन

2. प्रेम समस्या:–

2.1. स्वच्छन्द प्रेम
2.2. असफल प्रेम
2.3. माता–पिता एवं संतान की समस्या
2.4. परदेश प्रेम की समस्या

3. राजनैतिक समस्या:–

3.1. राजनीति दाम्पत्य जीवन में बाधक
3.2. राजनीतिक भ्रष्टाचार
3.3. राजनीतिक दाँवपेंच
3.4. राजनीतिक प्रभाव

4. आर्थिक समस्या :–

4.1. बेरोजगारी एवं रिश्वतखोरी की समस्या
4.2. अनमेल विवाह
4.3. असफल प्रेम

शिवानी जी के उपन्यासो मे उक्त वर्णित समस्याऐ जो कि आज के परिवेश मे भी उतनी ही प्रासंगिक है उपन्यास 'मायापुरी' मे संयुक्त परिवार के टूटने का चित्रण मिलता है।

'कृष्णकली' उपन्यास में रजनीकांत की पत्नी के स्वर्गवास होने पर

रजनीकांत द्वारा उसके नाम का स्कूल बनाने पर घर की वृद्ध दासी कहती है – जब तक रही उसका मुहँ तक न देखा। क्या दोष था उस बच्ची का सिर्फ रूप ही तो नहीं था। अहा! कैसी लक्ष्मी थी कितना दहेजलायी थी। उसकी बदौलत इस कोठी में राज कर रहे है। सब भूल गये। इस तरह शिवानी ने दहेज एवं सौन्दर्य की समस्या का जिक्र किया है।

'कृष्णकली' के मातापिता कुष्ठरोगी होने के कारण वे सामाजिक रूप से तिरस्कृत है। एवं कली का लालन पालन एक वेश्या करती है। जिस वजह से उसका प्रेमी प्रवीर समाज से टकराकर 'कली' को स्वीकार नहीं कर पाता जिससे टूट कर कली आत्महत्या कर लेती है।

'श्मशान चंपा' मे चंपा डॉक्टर हैं सभी तरह से योग्य होने के बाद भी बहन के अर्न्तजातीय विवाह के कारण उसकी सगाई टूट जाती है। आज भी हमारे समाज में अर्न्तजातीय विवाह स्वीकार्य नहीं है।

'चल खुसरो घर आपनेय– शिक्षित युवा नारी कुमुद के कर्त्ताव्य प्रेम और सामाजिक बंधनों के कारण उत्पन्न अंतर्द्वन्द की मार्मिक गाथा प्रस्तुत करता है।

'कैंजा' नंदी तिवारी एवं सुरेश भट्ट की एक तरफा असफल प्रेम का प्रस्तुतीकरण है। ज्योतिषी पिता द्वारा बेटी का विवाह न होने से सुरेश अपना मानसिक संतुलन खो देता है। एवं पगली कमला के बलत्कार से उत्पन्न पुत्र का लालन पालन नंदी तिवारी द्वारा करना। बहुत सी सामाजिक समस्याओ का वर्णन किया है।

वेश्याओं के जीवन के प्रति आधुनिक नारी का आक्रोश व्यक्त करते हुए लेखिका 'रथ्या' मेंकहती है कि –

'कब खुलेगे पुरुष वेश्याओ के बाजार' वेश्या भी नारी है उसके मन मे भी प्रेम व त्याग की भावना होती है वह भी सफल ग्रहणी बन सकती है। 'श्मशान चंपा' उपन्यास में त्यागमयी वेश्या का चित्रण किया गया है।

'कालिन्दी' उपन्यास मे अन्नपूर्णा के बाल विवाह का जिक्र है। एवं विवाहोपरांत उस पर दहेज के लिए मानसिक एवं शारीरिक प्रताड़ना का मार्मिक चित्रण है। पिता द्वारा पुत्री को पुन: ससुराल न भेजने के कारण आजीवन पतिविहीनजीवन भोगती है। दहेज के कारण कालिंदी का विवाह भी होते होते रूक जाता है।

'रतिविलाप' लघु उपन्यास में हीरावती का विवाह बचपन मे अधेड़ के साथ करा दिया जाता है। 'पाथेय', 'पुष्पहार', पिटी गोट आदि कहानियों में भी कम आयु में विवाह कराये जाने के उदारण है।'गैंडा' लघु उपन्यास में राज अपने बदसूरत पति के कारण कुण्ठित जीवन जी रही है। और सुपर्णा के पति को अपने रुपजाल में फँसा कर दोनो का दाम्पत्य जीवन बर्बाद कर लेती है। 'पूतोवाली' उपन्यास मे समकालीन परिस्थतियो मे समाज में वृद्ध माता–पिता के प्रति संतान का असंवेदन, गैर जिम्मेदराना, व्यवहार को इंगित किया है। 'तीसरा बेटा' में आज के टूटते परिवार नये रिश्ते के बदलाव का चित्रण एवं अनाथ बच्चों की समस्या को ध्यान में रखा है।

तर्पण (लघु उपन्यास) नायिका पुष्पा पंत जिससे 13 वर्ष की उम्र में बलत्कार होता है। बलत्कारी भोला नाथ नेता बनकर गाँव मे सम्मान पाता है। तब नायिका उसकी हत्याकर खून से माता पिता को तर्पण करती है।

अर्थ कई समस्याओं का कारणभूत तत्वहै।इसके तले मनुष्य परिवार समाज ही नहीं धर्म और राजनीति भी इसके अर्न्तगत ही पलते, फूलते और संचालित होते हैं। लेखिका को अर्थ के कारण समाज मे व्याप्त परिवर्तन, सामाजिक ताना बाना एवं जन्म लेती समस्याऐ प्रभावित करती है।

शिवानी ने अपने साहित्य मे यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाया है। उन्होने समाज की वास्तविकताओ को बिना किसी लाग लपेट के उजागर किया है। उन्होने समाज में व्याप्त ठगी बाबाओ द्वारा किये गये जादूटोने, पंडो द्वारा किये गये धार्मिक भ्रष्टाचार, दहेज एवं अनमेल विवाह पंडो का यथार्थ रूपण चित्रण किया है। 'मायापुरी' में प्रचुर वैभव – सम्पत्ती प्रभावित होकर अपनी स्वछन्दमना अनाकर्षक पुत्री सविता के लिए सतीश जैसा सुयोग्यवर जुटा लेते है।

लेखिका के शब्दो में – अपने वैभव से सबसे वाँछनीय नररत्न का हृदय जो उसके चरणो मे डाल दिया है।

आर्थिक विपन्नता समाज को अव्यवस्थित कर देती है। गरीबी के कारण 'चौदह फेरे' उपन्यास की मल्लिका अपनी बसी बसाई गृहस्थी उजाड़ देती है। मात्र पैसे के लिए उसका नैतिक पतन हो जाता। इस आर्थिक विपन्नता के कारण कई सामाजिक समस्याओ का जन्म होता है।

साहित्य संसार में उपन्यास साहित्य की वह विधा है जिसमे सारा समाज दर्पण के सामने पड़ने वाली परछाई के समान दृष्टिगोचर होता है।

भारतीय समाज में जहाँ एक तरफ नारी को 'यत्र नारी पूज्यन्ते, रमंते तत्र देवता' की भावना के तहत देवी तुल्य मानकर पूज्यनीय माना गया है। वही इसका दूसरा पहलू यह है कि नारी को दूसरे पायदान पर रखकर उसका शोषण किया गया है। विधव नारी, बलात्कार पीड़िता, कुंठाग्रस्तता नारी का कई रूप आज के परिवेश में चारो ओर दिखाई देता है। शिवानी ने समाज में नारियो का समस्त विडम्बनाओ का यथार्थ वर्णन किया है। भारतीय समाज में नारी का विधवा जीवन एक अभिशाप है।वर्तमान युग की बात छोड़ दे तो पहले विधवा को पुनर्विवाह की स्वीकृति नहीं थी। उक्त नारी अभिशप्तता का वर्णन शिवानी जी ने बहुत ही मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष – वर्तमान परिवेश मे संयुक्त परिवारो का विघटन हमारे सामाजिक ढाँचे को चरमरा रहा है। एकल परिवार का चलन बढ़ने से माता–पिता एवं दम्पत्ति एवं बच्चे रोज ही एक नई समस्या से जूझ रहे है।बढ़ते वृद्धाश्रमो की संख्या जहाँ हमारा उनके प्रति असंवेदनशीलता का प्रदर्शित करता है। वही युवा पीढ़ी, वृद्धो की देखभाल के आभाव मे दिग्भ्रमित होकर सर्वनाश की ओर जा रही है।

युवा वर्ग में बढ़ती स्वतंत्रता, स्वच्छन्दता प्रेम विवाह, अनैतिक संबंध, दाम्पत्य जीवन में टूटन के रूप मे सामने आती है। स्वच्छन्द प्रेम, असफल प्रेम, अनैतिक संबंध से उत्पन्न संतान 'अवैधसंतान' जिसे अभी भी हमारा आधुनिक समाज अभी भी स्वीकार नहीं कर पाता है, एवं उनका लालन पालन आज समस्या ही हैं, चाहे वह ग्रामीण परिवेश हो या शहरी परिवेश।

राजनैतिक महत्कांक्षाओं की पूर्तिहेतु युवक–युवतिया अपने दामपत्य जीवन एवं प्रेम–संबंधो की बलि देने में तनिक भी विचार नहीं करते हैं। जिससे समाज में असंतोष, टूटन व्याप्त है परिवार अर्न्तकलह से गुजर रहे है, परिणाम स्वरुप 'तलाक' जैसा घाव परिवार को एवं समाज को मिला है। जो कि समय समय पर टीस उठती है। एवं आने वाली पीढ़ियो को दुखद परिणाम ही देती है।

आधुनिक चिकित्सा पद्धति एवं विकासशील समाज मे कुष्ठ आज भी छूत का रोग माना जाता है एवं व्यक्ति सामाजिक बहिष्कार का शिकार होता है।

बलत्कार आज के युग का सबसे अधिक अमानवीय कृत्य है, जिससे पूरा नारी समाज शर्मसार है। आज भी छोटी बच्चियाँ इस सामाजिक विद्रूपता

की शिकार होती है। एवं पूरे जीवन भर इस दंश को भोगती है। वेश्यावृत्ति समाज के लिए अभी भी एक अभिशाप है। मेरा मानना है कि वेश्यावृत्ति बलत्कार, अवैध संतान समाज का कोढ़ है, जिसे जड़ से उखाड़ फेकना अत्यंत आवश्यक है।

वृद्ध आश्रमो की बढ़ती संख्या मातापिता के प्रति संतानो का असंवेदनशील होना ही है। जो आने वाली पीढ़ियो को गर्त में ले जाने का कार्य ही करेगा एवं संस्कारहीन, संवेदनहीन, असहिष्णु, समाज का निर्माण करेगा।

लेखिका ने प्राचीन परिपाटी को तोड़कर विधवाविवाह की पैरवी की हैं साथ ही उसे स्वावलम्बी होकर समाज में संघर्ष रत रहने का साहस भी प्रदान किया है। एवं आत्मसम्मान से जीवन जीने हेतु प्रेरित किया है।

अत: कहा जा सकता है कि अपनी साहित्यक यात्रा के दौरान शिवानी जी द्वारा उठायीं गयी सामाजिक समस्याये वर्तमान परिवेश में आज भी उतनी ही प्रासंगिक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'रतिविलाप'- शिवानी - राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली -पृष्ठ 18,19
2. किशनुली-शिवानी - राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली -पृष्ठ56
3. मायापुरी - शिवानी राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली- पृष्ठ 45
4. अतिथि- शिवानी राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली- पृष्ठ 86
5. चौदहफेरे - शिवानी राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली - पृष्ठ 42
6. रथ्या (कस्तुरी मृग) -शिवानी राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली - पृष्ठ 125
7. कैंजा- शिवानी - राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली - पृष्ठ 24, 78
8. कालिन्दी-शिवानी-राधाकृष्ण प्रकाशन, नईदिल्ली -पृष्ठ 18
9. अतिथि-शिवानी -राधाकृष्ण प्रकाशन, नईदिल्ली -पृष्ठ86
10. तर्पण- शिवानी -राधाकृष्ण प्रकाशन, नईदिल्ली -पृष्ठ78
11. कैंजा- शिवानी- राधाकृष्ण प्रकाशन, नईदिल्ली -पृष्ठ50
12. करिए छिमा (सम्पूर्ण कहानियाँ) राधाकृष्ण प्रकाशन, नईदिल्ली - पृष्ठ138
13. मणिमाला की हँसी (सम्पूर्ण कहानियाँ)राधाकृष्ण प्रकाशन, नईदिल्ली- पृष्ठ69
14. शिवानी सम्पूर्ण कहाँनियाँ-भाग-1 राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली।
15. शिवानी सम्पूर्ण कहाँनियाँ-भाग-2 राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मनोविश्लेषणवाद और आधुनिक समाज

ऋतू धूरिया* डॉ. संध्या बिसेन**

* शोधार्थी (हिंदी) सरदार पटेल विश्वविद्यालय, बालाघाट (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (हिंदी) सरदार पटेल विश्वविद्यालय, बालाघाट (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – समाज और परिवार की प्राथमिक इकाई के रूप में व्यक्ति और उसकी मन किसी न किसी तरह से पूरे समाज को प्रभावित करता है। मनोविश्लेषण बाद में यही व्यक्ति के मन का ही विश्लेषण कर इसके विचार भावनाएं आदि को जानकर है हम समाज और व्यक्ति के मन अध्ययन कर समाज को एक उचित दिशा देने का प्रयास करते हैं। मनोविश्लेषणवाद मनोविज्ञान की ही एक शाखा है जो 20वीं शताब्दी के उत्तारार्ध में हमारी जानकारी में आई। जिस प्रकार जिस प्रकार मनोविज्ञान 'मानव व्यवहार का अध्ययन करता है ,उसी प्रकार मनोविश्लेषणवाद मन का विश्लेषण कर मन के गर्भ में छुपी हुई मूल प्रवृत्तियों का अध्ययन करता है।' 20वीं शताब्दी में मनोविश्लेषणवाद अपने प्रारंभिक रूप में केवल मां की व्याख्या तक ही सीमित रहा परंतु धीरे–धीरे आधुनिक समाज में यह है बहुत अधिक प्रचलित हो रहा है यह है साहित्य के क्षेत्र में एक नई क्रांति को लाया है जिससे रचनाकारों समाज ने अपने पात्रों/व्यक्तियों के मानसिक शारीरिक क्रियाकलापों के बीच मन में छुपे हुए भावों को उत्तरदाई पाया है।

शब्द कुंजी – मनोविश्लेषणवाद व मनोविज्ञान का संबंध, मनोविश्लेषणवाद और समाज के बीच संबंध,मनोविश्लेषणवाद का समाज पर प्रभाव , व्यक्तित्व विकास के महत्वपूर्ण चरण।

अध्ययन का उद्देश्य : प्रस्तावित अध्ययन के विशिष्ट उद्देश्य निम्नवत प्रस्तुत हैं:

1. समाज में मानव व्यवहार और मनोविश्लेषणवाद के बीच संबंधों का अध्ययन करना।
2. मनोविज्ञान वी मनोविश्लेषणवाद के परिपेक्ष में मानव मन की व्याख्या प्रस्तुत करना।
3. प्रस्तुत अध्ययन में समाज में स्थित व्यक्तियों की बना स्थितियों से अवगत कराना जो की
4. आधुनिक समाज में मानवीय व्यवहार के मूल कारण है।
5. व्यक्ति की सोच व उसके कार्य के पीछे मूल कर्म को जानने में सहायता करना।

उपकल्पना – प्रस्तावित शोध के विषय में यह परिकल्पना ली गई है,कि समाज में व्यक्तियों की मूल स्थिति और उनके द्धारा किए गए, अच्छे बुरे कार्यों के पीछे उसके व्यवहार के मूल कारणों की तह में जाकर निष्कर्ष निकालना।

शोध प्रविधि – प्रस्तावित शोध पत्र की अध्ययन विधि मुख्य रूप से विश्लेषण आत्मक व विवेचनात्मक है, जो सरकारी और गैर सरकारी स्रोतों से प्राप्त सूचनाओं, विभिन्न पुस्तकों, शोध पत्र, इंटरनेट आदि का आश्रय लिया गया है।

मानव की गतिविधियों और स्वभाव का निर्धारण करने वाला वैज्ञानिक आधार पर निर्मित वाद है– मनो विश्लेषणवाद। यह मानव की मानविकीय और कृत्तयों का आधार को लेकर व्याख्या करता है। यह मानव के मन की आंतरिक प्रतिक्रियाओं के अध्ययन करने वाली आधुनिक अध्ययन पद्धति है।

आज के आधुनिक समाज, विचारधारा और जीवन के प्रति दृष्टिकोण और नैतिक मूल्यों को सबसे अधिक प्रभावित मनोविश्लेषणवाद ने किया है।

समाज और मनोविश्लेषण के बीच बहुत गहरा संबंध है। इस तरह हम समाज की सोच तथा सामाजिक पैठ को जान पाएंगे। सामाजिक पैठ – मतलब समाज की गहरी ऐसी सोच जो समाज के लगभग सभी परिवारों को किसी न किसी तरह से प्रभावित करतीहै।

समाज की इकाई परिवार और परिवार की प्राथमिक इकाई व्यक्ति है। व्यक्ति का मन किसी न किसी तरह से पूरे समाज को प्रभावित करता है। मन का विश्लेषण करना मनोविश्लेषण कहलाता है।

मनोविश्लेषण अर्थात मन को एक–एक विषय से अलग–अलग तार तार कर इसके विचारों ,कारणों तथा इसके होने वाले प्रभावों को जानना। इसके अंतर्गत मन की गहरी वैचारिक प्रणाली का अध्ययन किया जाता है, जो व्यक्ति को समझने में मदद करता है। यह बताता है कि व्यक्ति के अवचेतन विचार भावनाएं और प्रेरणाय समाज में उसके व्यवहार को किस तरह से प्रभावित करती हैं।

मनोविश्लेषण और समाज के बीच संबंध

अवचेतन मन का प्रभाव : फ्राइड के अनुसार हमारे मन का बड़ा हिस्सा अवचेतन मन से आता है जो कहीं ना कहीं हमारे व्यवहार को प्रभावित करता है इसके ही प्रभाव से संस्कृति दूषित या परिष्कृत होकर निकलती है। मानवीय व्यवहार और सामाजिक संरचना दोनों ही अवचेतन मन की दमित इच्छाएं और संघर्षो को प्रभावित करती हैं।

सामाजिक संरचना : सामाजिक संरचना जैसे परिवार शिक्षा कानून एक व्यक्ति के अवचेतन मन को आकार देने में अपनी महत्व भूमिका निभाता है, प्रारंभिक शिक्षा दीक्षा आसपास का वातावरण तथा उसकी पारिवारिक लालन पालन तथा पोषण आदि। इस पथ पर निर्भर करता है कि वह अवचेतन

मन के किस प्रकार की भावनाओं को जगह दे रहा है, व किस प्रकार की सूचनाओं को एकत्रित कर रहा है।

सामाजिक संरचना और व्यवस्थाएं जैसे परिवार शिक्षा और कानूनी प्रणाली व्यक्ति में तरह-तरह की इच्छाओं के बीजों को आरोपित कर देते हैं, जो उपयुक्त वातावरण को पाकर पुष्पित और पल्लवित होने लगती है। परिवार, स्कूल,कॉलेज में मिलने वाला सम्मान, अपमान, परितोष आदि के बीज यहीं से रोपित किए जाते हैं । पारिवारिक वातावरण तथा सामाजिक वातावरण इसमें अपनी सशक्त भूमिका को निभाते हैं। सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक मानदंड व्यक्ति और व्यक्तिगत व्यवहार के विकास को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए फ्रायड ने भी लिखा है की 'दमनकारी समाज चिंता पैदा करते हैं'।

सामाजिक संघर्ष : मनोविश्लेषण सामाजिक संघर्ष को समझने में मदद करता है क्योंकि वह व्यक्ति और व्यक्तियों के मन में उत्पन्न होने वाली विचार भावनाओं को जानने का प्रयास करता है,जो कि समाज में रहकर एक प्रकार के संघर्ष को उत्पन्न करते हैं। सामाजिक संघर्ष से हमारा अभिप्राय यह है- वर्ग या क्लास संघर्ष,लिंग संघर्ष आदि। मनोविश्लेषण और समाज के बीच का संबंध में कई दृष्टिकोणों है। कुछ लोगों का मानना है कि मनोविश्लेषण व्यक्ति का संघर्षों को समझने का एक प्रभावी तरीका है, जबकि अन्य लोगों का मानना है कि मनोविश्लेषण सामाजिक संरचनाओं को समझने का एक उपकरण हो सकता है। मनोविश्लेषण का प्रभाव जिसमें साहित्य,कला संस्कृति आदि भी शामिल है। समाज का विश्लेषण करने के लिए मनोविश्लेषण का सिद्धांतों का उपयोग किया करता है, जो व्यक्तिगत और सामाजिक तौर पर संबंधों को उजागर करता है।

मनोविश्लेषण ने सामाजिक मान्यताओं और मूल्यों के बारे में हमारी समझ को प्रभावित किया है।

फ्राइड के मनोविश्लेषण के काम से यह पता चलता है कि हमारे व्यवहार को अवचेतन मन की भावनाओं ने कैसे प्रभावित किया हैं। भारतीय सामाजिक मानदंड को एक आदर्श माना जाता है, पर आधुनिक परिवेश में इसकी कल्पना संभव सी लगती है। बाजारवाद, उपभोक्तावाद विदेशी संस्कृति,इंटरनेट के नकारात्मक प्रभाव जिसमें मोबाइल,नशा कामचोरी आदि महत्वपूर्ण अपनी उपस्थिति को दर्ज करते हैं।

मनोविश्लेषण ने हमारे सामाजिक जीवन जीने के तरीकों में परिवर्तन लाया है।

हमारे विचारों को किस प्रकार से प्रभावित किया जा रहा है। इसका अंदाजा विश्लेषण के माध्यम से धीरे-धीरे हमारे समझ आ रहा है। इंटरनेट का गलत उपयोग के कारण बनती रील्स, चित्रपट या फोटोस वेबसाइट, स्कूल, बाजार, दुकानों में आसानी से उपलब्ध हो जाने वाले नशा की अधिकता कामचोरी आराम पसंद जिंदगी, इन सब का नतीजा आज का बेरोजगार नशेड़ी बिगड़े युवाओं का एक बहुत बड़ा वर्ग जो इसका शिकार हो रहा है ।

मनोविश्लेषण ने सामाजिक आंदोलन और राजनीतिक विचारों को प्रभावित किया है।

सामाजिक आंदोलन से हमारा अभिप्राय वह विचार जो समाज को प्रभावित करें- जैसे शादी की उम्र में वृद्धि के बाद पति-पत्नी के मनोभावों का ना मिलना और बहुत सारी समस्याओं को जन्म देने का कारण बनता है। जहां तक राजनीतिक विचारों की बात है आराम पसंद जिंदगी के चलते कई राजनीतिक पार्टीयां अपनी योजनाओं को बनाते समय इस बात का विशेष ध्यान रखती है कि हमारी पार्टी को इस मानसिकता से अधिक से अधिक किस प्रकार से लाभ पहुंच सके। मार्क्सवाद का वर्ग संघर्ष, अमीर दिखने की चाहत,अपनी यथार्थता को पीछे छोड़ते हुए बहुत आगे की ओर निकल आई है ।ई.एम.आई तथा बाजार से कर्ज उठाकर अपना काम चलाना आदि इस बात को दिखाते हैं कि अब लोग अपनी आराम पसंद जिंदगी को चलाने के लिए किस-किस प्रकार की योजनाओं का उपयोग करते हैं।

मनोविश्लेषण पर समाज के कुछ प्रभाव निम्नलिखित है :

कला साहित्य मनोविश्लेषणवाद में कला साहित्य पर भी प्रभाव डाला है जिस कलाकारों और लेखकों ने मानव मन गहराइयों को अपनी रचनाओं में दर्शना शुरू कर दिया है, इस कारण प्रयोगवाद तथा प्रगतिवाद की कविताएं हमारे समक्ष आई हैं। जैसे

तन की मालीनता दूर करने के लिए प्रतिपल
पाप छाया दूर करने के लिए,
दिन रात स्वच्छ करने
ब्रह्मराक्षस घिस रहा है देह,
हाथ के पंजे बराबर
बांह -छाती,मुंह छपा- छप
खूब करते साफ
फिर भी मैल...
फिर भी मैल.....॥

: मुक्तिबोध (कविता -ब्रह्मराक्षस)

सामाजिक संस्कृति को प्रभावित किया है, प्राइवेट काम या नौकरी करने वालों ने अपना एक विशेष समाज बना लिया है। साथ-साथ इन्होंने अपनी एक विशेष संस्कृति को भी जन्म दिया है, जो काम के साथ-साथ सामाजिक स्वास्थ्य और व्यक्तिगत स्वास्थ्य पर भी प्रभाव डाल रही है। अपनी सुविधा के अनुसार नियमों को बनाना पुराने नियमों का उल्लंघन करना, स्वास्थ्य के प्रति उदासीनता तथा मन के मुताबिक खाना पीना, त्योहार मनाना आदि। भारतीय संस्कृति में त्योहार मान्यताओं तथा खानपान के पीछेके पीछे जो वैज्ञानिक नियम दिए गए थे, उनका तो आज धड़ले से उल्लंघन किया जा रहा है जिसका प्रभाव हमें सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहा है।

मनोविश्लेषण समाज में सामाजिक और सांस्कृतिक मापदंडों की प्रतिक्रिया है जो संघर्षों और सामाज विरोधी तत्वों का पता लगाने में मदद करता है जो आधुनिक समाज में पनप रहे हैं।

सामाजिक परिवर्तन जिसका पता हमें मनोविश्लेषण के माध्यम से चल रहा है वह विचारों में बदलाव के साथ ही समाज के उत्थान या पतन का कारण बन रहे हैं सकारात्मक परिवर्तनों को अपनाकर हम एक बेहतर समाज का निर्माण कर सकते हैं।

मनोविश्लेषण और समाज के बीच संबंध जटिल और प्रगतिशील है। मनोविश्लेषण समाज को प्रभावित करता है और समाज मनोविश्लेषण के अध्ययन को यह एक ऐसा संबंध है जो निरंतर गतिशील भाव से परिवर्तित हो रहा है जैसे परिवार, शिक्षा, परिवेश,पालन पोषण, पर्यटन,मान्यताएं आदि।

सामाजिक संबंध मनोविश्लेषणवाद सामाजिक संबंधों को समझने में मदद करता है यह मानसिक उलझन, परेशानियां, तनाव आदि के कारणों को उजागर करता है,जिसके समाधान से हमारे संबंध दुरुस्त होते हैं। संघर्ष के कारणों का पता लगाने के कारण समाज विरोधी तत्वों का पता लगाने में

भी इनमें मदद मिलती है, जो समाज के व्यक्तियों के बीच मतभेद वैमनस्यता आदि पैदा करते हैं।

सामाजिक परिवर्तन मनोविश्लेषणवाद सामाजिक परिवर्तनों के कर्म का पता लगाने में मदद करते हैं समाज में आए नितनएं परिवर्तन जैसे शिक्षा के अन्य विकल्प ऑनलाइन एजुकेशन डिस्टेंस एजुकेशन प्राइवेट डिग्री कोर्स स्किल डेवलपमेंट कोर्स रोजगार विकल्प करियर काउंसलिंग स्पोर्ट इंडस्ट्रीज आदि को मध्य नजर रखते हुए सामाजिक परिवर्तन आम बात है।

लिंग और यौनता मनोविश्लेषणवाद में लिंग और यौनता के बारे में सामाजिक दृष्टिकोण को प्रभावित किया है स्कूलों,कॉलेजों में यौन शिक्षा इस पर आयोजित परिचर्चाएं, इस बात को खुलकर सामने रखने आदि विषयों को लेकर बात करना अब आम बात हो गई है। इन विषयों पर अब केवल प्रिंट मीडिया और मूवी वगैरा में भी(विज्ञापनों और फीचर फिल्म के माध्यम से भी)इन्हें बनाया और बताया जा रहा,है कहीं ना कहीं समाज के लिए यह लाभप्रद है। देश और समाज में बढ़ते यौन अपराध तथा इसके पीछे आपराधिक मनोवृत्ति को जानने में मनोविश्लेषण का एक बहुत बड़ा हाथ है। दमित,कुंठित काम इच्छा, मजबूरी या आदतन, एडल्ट फिल्मों (देखना या काम करना) कारण चाहे जो भी हो इसका पता मनोविश्लेषणबाद ने लगाने का प्रयास किया है। आनंद की प्राप्ति के शॉर्टकट के साधन तथा अतृप्त मन व्यक्ति की योग्यता पर प्रश्न चिन्ह लगता है।

सामाजिक नीतियों : मनोविश्लेषणवाद के सिद्धांतों ने सामाजिक नीतियों को ध्यान में रखा है, और इसे प्रभावित भी किया है,- जैसे अपराध और न्याय प्रणाली में व्यक्तियों के मानसिक स्वास्थ्य को भी ध्यान में रखकर न्याय और नीतियों को बनाया है। इन पर कार्य भी किया है। व्यक्ति की उम्र, स्थिति, वातावरण, कार्य का प्रारूप आदि को ध्यान में रखकर ही नीतियों और योजनाओं को बनाया जाता है, और यही अपराधियों के संदर्भ में भी लागू होता है।

भाषा जगत : भाषा जगत में आई उथल-पुथल तथा मिश्रित भाषा भाषाओं के शब्द अनकही इच्छा जो भाषा के माध्यम से पन्नों पर लाते हैं। लेखको, कवियों ने इसे कहानी,उपन्यास, रेखा चित्र, संस्मरण, आत्मकथा, जीवनी में आसानी से देखा जा सकता है। मनोविश्लेषणवाद की भाषा में महती भूमिका है,जिसे नकारा नहीं जा सकता अज्ञेय, जैनेंद्र, यशपाल आदि लेखकों की कृतियों में इसे आसानी से देखा जा सकता है।आधुनिक युग की रचनाएं भी आधुनिक,मुद्दों से प्रभावित है। यह मुद्दे हैं-जैसे दमित इच्छाएं कुंठा, तनाव, यंत्रवत जीवन, त्रासदी आकाल,अनकही भावनाएं,अपना संघर्ष, इच्छाओं से समझौता,आदि। इन्हीं मुद्दों पर आजकल अधिकतर रचनाएं आपको मिलेगी। आज का मनुष्य प्रगति के पथ पर बढ़ चला है। अब वह भाषा के लिखित तथा अलिखित माध्यमों से अपनी अधूरी इच्छाओं को पूरा करता है।

व्यक्तित्व विकास और मनोविश्लेषणवाद : मनोविश्लेषणवाद में व्यक्तित्व विकास और आत्म जागरूकता पर बल दिया है। अब कई ऐसे माध्यम उपलब्ध हैं,जिनके माध्यम से हम अपनी प्रतिभा को निखार सकते हैं। अपनी व्यक्तिगत कमजोरी और ताकत को पहचान सकते हैं। उन पर काम कर सकते हैं। इसमें स्वभाव, व्यवहार, दृष्टिकोण में सुधार करना शामिल है, जो व्यक्ति को व्यक्तिगत और पेशेवर दोनों रूपों से विकसित करने में मदद करती हैं।

व्यक्तित्व विकास के कई आयाम है जैसे :

शारीरिक विकास -शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक स्वास्थ्य व्यक्तित्व विकास का महत्वपूर्ण पहलू है नियमित व्यायाम और पोषण युक्त आहार, मानसिक और शारीरिक क्रियाकलाप आदि इस विकास में मदद करते हैं।

मानसिक विकास-इसके अंतर्गत सीखना, समस्या समाधान और तार्किक और व्यावहारिक सोच को शामिल किया गया है। शिक्षा,पुस्तकों को पढ़ना,नई-नई चीजों से सीखना(पहेलियां और क्यूब्स)आदि, मानसिक विकास में मदद करता है।

भावात्मक विकास- भावात्मक विकास जिसमें अपनी व दूसरों की भावनाओं को समझना महत्व देना,स्वीकार करना,प्रतिबंधित करना, प्रभावित करना,प्रेरित करना आदि को इसमें शामिल किया गया है। भावात्मक बुद्धि, आत्म जागरूकता और भावात्मक अभिव्यक्ति,भावात्मक विकास में मदद करती है,जो मनोविश्लेषणवाद के माध्यम से हमारे समक्ष एक-एक कारणों सहित प्रस्तुत होती है।

सामाजिक विकास-सामाजिक विकास में सामाजिक संबंधों को प्राथमिकता दी गई है संबंध बनाना व इसे बनाए रखना निभाना आदि को इसके अंतर्गत शामिल किया गया है सामाजिक कौशल सामाजिक सहानुभूति संचार कौशल सामाजिक विकास में मदद करता है क्योंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और इसके सारे क्रियाकलाप समाज पर ही निर्भर करते हैं अत: इसका सामाजिक विकास अत्यंत ही आवश्यक है जो इसे अंत तक सरवाइव करने के लिए बहुत जरूरी है। आज मनोविज्ञान में कई ऐसे टेस्ट मौजूद है जिनकी सहायता से हमें सामाजिक विकास में आ रही कमियोंध्बाधाओं का पता लगा सकते हैं, तथा इन्हें हम आसानी से दूर भी कर सकते हैं।

आध्यात्मिक विकास - व्यक्ति का आध्यात्मिक विकास जीवन में जीने का अर्थ और जीवन का उद्देश्य को समझने की क्षमता आदि को इसमें शामिल किया गया है। ध्यान, योग,आध्यात्मिक प्रार्थनाएं,विकास में मदद करती हैं। जो मानसिक शांति की ओर जीवन को अग्रसर करते हैं। यू कहे तो व्यक्ति का आध्यात्मिक विकास व्यक्ति को व्यक्ति से अपनी पहचान करता है तथा जीवन में शांति तथा नैतिक परिपक्वता और नैतिक विकास की ओर हमें ले जाता है कहीं ना कहीं यह हमें ईश्वर की ओर ले जाता है मनुष्य के जीवन का मोक्ष ही तो अंतिम लक्ष्य है। मनुष्य का आध्यात्मिक विकास मनुष्य को मनुष्यता से खाती है जो उसे जानवर से मनुष्य और मनुष्य से एक संभ्रांत समाज की ओर अग्रसर करती है

इस प्रकार मानव व्यवहार का अध्ययन विश्लेषण मूल्यांकन व व्याख्या करने वाले विज्ञान के रूप में मनोविज्ञान का अर्थ निहित है मनोविज्ञान से निकलने वाले संप्रदायों में गेस्टाल्ट वादी व्यवहार वादी वातावरण वादी मनोविश्लेषणवाद के प्रवर्तक वैज्ञानिक चिकित्सक सिगमंड फ्रायड का जन्म 1856 में आस्ट्रिया में हुआ इन्होंने सिद्ध कर दिया कि मनुष्य कार्य किसी न किसी कारक से प्रेरित होकर ही करता है और उसके कारण का पता लगाया जा सकता है। उन्होंने मानव मन को कारण मानते हुए इसकी तीन तरह बताई है।

चेतन मन अर्ध चेतन मन और अवचेतन मन डॉक्टर बच्चन सिंह के शब्दों में चेतन मन सामाजिक प्रतिबंधों का मन है जिसमें सभ्यता संस्कृति अचार्य विचार कहा जा सकता है (आलोचना और आलोचना पृष्ठ संख्या 69) चेतन मन में मनुष्य का क्रियाकलाप और गतिविधियां दिखाई देती हैं परंतु क्रियाकलापों पर प्रभाव अंत:करण में छिपा अवचेतन मन का होता है मन में छपी दमित वासनाएं कुंठाएं आप अपूर्ण बढलती इच्छाएं लगातार लावा का रूप लेकर देखते हैं जो कभी ना कभी मनुष्य की संवेदनाओं को विभिन्न कर्म से यथार्थ रूप में हमारे समक्ष लाकर खड़ी कर देती हैं।

'अपने नरक की बेतरतीबी मैं ही ढूंढेंगी वें। अपनी अपरिहायृर्ता की तसतली / खीस भारी प्रसन्नता के साथ' (जहां की महिलाएं हो गई कहीं, पृष्ठ संख्या 37) समाज में मनोविश्लेषणवाद के सिद्धांतों के रसायन में घोलकर जो क्रियाएं हुई वह साहित्य में यथार्थ के चित्रण के रूप में उभरकर सामने आई 20वीं शताब्दी में जहां मन का विश्लेषण जोरों पर था वही साहित्य के रजक के रूप में फ्रायड के सिद्धांतों का अवतरण को और कर अज्ञेय, मुक्तिबोध जैनेंद्र इलाचंद्र जोशी आदि साहित्यकारों ने साहित्य में निरूपित यथार्थ का चित्रण के द्वारा मां के क्रोध में छिपे हुए वह दमित कामवासनाएं प्रस्तावित होती दिखाई देती हैं जो फ्रायड के कामवृत्ति के सिद्धांत के अनुरूप विकसित मन की अभिव्यक्ति, यथार्थ का रूप लेती हुई आज की नग्नता को भी पीछे छोड़ चुकी है।

फ्रायड-मनोचिकित्सक थे और मनोरोगियों के उपचार की दृष्टि से ही उन्होंने सिद्धांतों की स्थापना की इन्हें सिद्धांतों का प्रभाव कला और साहित्य पर काफी पड़ा फ्राइड का मत था की कला और धर्म दोनों का उद्भव अवचेतन मन की संचित प्रेरणाओं और इच्छाओं से होता है समाज का व्यक्ति या कलाकार अपने काम शक्ति के उदयाति कारण के लिए ही सृजन करता है समझ में साहित्य चित्रकला मूर्तिकला काव्य कला भाषण कला जन सेवा धर्म आदि इसी काम वृत्ति के उदात्तातीकरण के विभिन्न रूप है वृहद ने साहित्य समाज सृजन की जो बात कही है वह काम वृत्ति के अनुरूप में होगी तो ही समाज कल्याणकारी होगा तथा साहित्य भी इसमें एक सकारात्मक भूमिका निभा सकेगा।

वही मनोविश्लेषणवादी विद्धान यंग के सिद्धांत 'हीन भावना' के कारण अंतर्मुखी होना अपनी क्षमता को ना पहचान पाना आदि है जैनेंद्र यशपाल आदि उपन्यासकार मनोवैज्ञानिकता के सांचे में ढले हुए पात्र व उपन्यास हमें यह दिखाते हैं।

समाज में मानव के व्यवहार और यहां तक प्रकृति और मानव के बीच संबंध को भी मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के दायरे में लाकर खड़ा कर दिया है। सुसभ्य हैं हम सचमुच ? पांडवों से नहीं। बमों, मिसाईलों से रोंधते इस पृथ्वी को, बारूदी धुएं से उधेलते वायुमंडल खांसती, हांफती कांपती /मानवता कि ओर ताके। (ज्ञानेंद्रपति संषयात्मा पृष्ठ संख्या 103)

निष्कर्ष - आधुनिक समाज में मनोविश्लेषण के सिद्धांत मानव के चरित्र व मन के विचारों के पीछे के बीहड़ जंगल के अंधकार की अभिव्यक्ति है,जो यथार्थ के रूप में अनुभूतियां व वेदना के माध्यम से उधड़कर अपनी छिपी हुई अनैतिकता,विश्वास अति विश्वास, त्रास घुटन, कामवासना, अतृप्त इच्छाएं और संभ्रांत समाज के संस्कारों के पीछे घुटी हुई वह चेतना है, जो व्यक्त होकर अपनी अभिव्यक्ति से कुछ और संतोष तथा आत्मतुष्टि प्राप्त करने की कोशिश करती है।

'जिंदगी को भूल भुलैया मानकर / मैं दौड़ता और छटपटाता / अटकता / भटकता / जिसे खोज रहा हूं, वह द्वारा / मेरे मन का था।'
भारत भूषण अग्रवाल(उतना कहे सूरज)।(कविता समाप्ति)पृष्ठ संख्या 18

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. डॉ. सुनीता कुमारी- अज्ञेय के नारी पात्रों में मनोवैज्ञानिक चित्रण- पृष्ठ संख्या 2.
2. डॉक्टर बच्चन सिंह आलोचना और आलोचना - पृष्ठ संख्या 69
3. जहां की महिलाएं हो गई कहीं -पृष्ठ संख्या 37
4. ज्ञानेंद्रपति संषयात्मा-पृष्ठ संख्या 246
5. संपादक अशोक भाटिया श्रेष्ठ निबंध द पृष्ठ संख्या 389
6. डॉ. राजकुमार-हिंदी साहित्य मनोविश्लेषण सैद्धांतिक स्वरूप - कल्पना प्रकाशन, 2021 (भूमिका से) पृष्टसंख्या 1-2
7. डॉक्टर कामता प्रसाद पांडे-नवीन शिक्षा मनोविज्ञान विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी पृष्ठ संख्या 43, 270,316.
8. अरुण कुमार सिंह- समाज-मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोतीलाल बनारसी दास इंटरनेशनल प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 445, 615,
9. सोहन लाल तातेण और रत्नलाल जैन- जैन कर्म-विज्ञान और मनोविज्ञान, रीड वर्थी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 137.
10. फाय्ड-मनोविश्लेषण-राजपाल एंड संस पब्लिकेशन हाउस पृष्ठ संख्या 219,292.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

प्रेमचंद की कहानियों में नारी अध्ययन

किरण ठाकुर* डॉ. संध्या बिसेन**

* शोधार्थी (हिन्दी) स्कूल ऑफ आर्ट्स एंड सोशल साइंस, सरदार पटेल यूनिवर्सिटी, बालाघाट (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष (हिन्दी) स्कूल ऑफ आर्ट्स एंड सोशल साइंस, सरदार पटेल यूनिवर्सिटी, बालाघाट (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – प्रेमचंद की कहानियाँ भारतीय जन की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक व राजनीतिक परिस्थितियों को उजागर करती हैं। प्रेमचंद अपनी कहानियों में समाज के हर वर्ग के साथ नारी समस्याओं पर केवल चर्चा नहीं करते अपितु नारी के स्वतन्त्र होने का मार्ग प्रशस्त करते हैं। प्रेमचंद नारी के अस्तित्व को सजग करनेके लिये स्वयं सजग होने की सलाह देते हैं। नारी जागरण की जोत जगाने के लिए, प्रेमचंद अपने लेखन से घर-घर नारियों को जागृत करते हैं। प्रेमचंद जी का वर्षो पहले अपने कहानियों के माध्यम से नारी के अस्तित्व और मूल्यों के लिये जो संघर्ष किया वह नव जागरण के इतिहास में बहुमूल्य योगदान हैं। इसी कारण प्रेमचंद का 'नारी विमर्श' प्रासंगिक बना हुआ हैं।

शब्द कुंजी – प्रेमचंद, नारी विमर्श।

प्रस्तावना – प्रेमचंद नारी पात्रों को मध्य में रखकर लगभग डेढ़ सौ कहानियाँ लिखी। जिसमे हर एक कहानी किसी न किसी रूप से नारी जीवन से जुड़ी समस्या व्यक्त करती हैं एवं नारी की बहुरंगी छवियों को प्रदर्शित करती हैं। प्रेमचंद की शुरुआती कहानियाँ आदर्श संबंधी थी जिसका अध्ययन कर आम जन का मन परिवर्तित हो उठता था और समस्याओं को हल करने का मार्ग प्राप्त होता था। एक अंतराल बाद उनके कहानियों में घटनाओं के स्थान पर अनुभव आधारित यर्थाथ का लेखन दिखाई देने लगता है। अंत में उनकी कहानियाँ वास्तविकता का रूप धारण करती है जो सहानुभुति, करुणा, दया और गहनता को प्रदर्शित करती है।

सर्वप्रथम नारियों की पहल आर्य समाज ने की। उन्होंने विधवा विवाह और नारी शिक्षा पर ठोस कदम उठाये। ब्रहम समाज के संस्थापक राजाराम मोहन राय ने सती प्रथा का अंत किया औरनारियों को सशक्त बनाया। नारी संपत्ति और अंतर्जातीय विवाह के प्रति भी ब्रह्म समाज ने खासा समर्थन किया। बाल विवाह, पर्दाप्रथा, छुआछूत यह मुख्य उद्देश्य थे जिसमें नारियाँ स्वयं अपने अधिकारों की रक्षा के लिए सामने आई।

महात्मा गांधी नारी शक्ति के सजग प्रहरी हुए। उन्होनें बाल विवाह, विधवा विवाह के प्रति उनका दृष्टिकोण यह था कि नारी पुरुष की गुलाम नहीं है। वह अर्धांगिनी है, दामिनी हैं। नारी को मित्र समझना चाहिए परन्तु पुरुष वर्ग उसे अपना साथी न समझकर उसका स्वामीमानता है। गांधी जी नारियों और पुरुषों के लिये समान अधिकार चाहते थे।

1930 ई. के समय भारतीय नारी की स्थिति में अत्याधिक परिवर्तन हुआ। इसमें नारी वर्ग राजनीति में भाग लेने लगा। देश की जागृति में हिन्दी कथाकारों में लोगों का ध्यान अपनी तरफ आकर्षित किया। प्रेमचंद गांधीजी से प्रभावित होकर लेखन के माध्यम से नारी जीवन को सशक्त करने लगे।

प्रेमचंद की कहानियों में नारी संघर्ष – भारतीय समाज पुरुष प्रधान होने के कारण यहाँ पुत्रियों को वह स्थान नहीं मिलता जो पुत्रों को मिलता है और यह स्थिति आज संतोषप्रद नहीं है। जिस समाज में हम रहते है यहाँ कहाँ जाता है 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' इसके बाद भी नारी की स्थिति दयनीय हैं। प्रारंभिक काल में नारी को समाज में अभिशाप माना जाता था। प्रेमचंद के कथा साहित्य में इस घटना का चित्रण मिलता है। समाज का पुरुष अपनी स्त्री से इसीलिए नाराज रहता है कि वह वंश को आगे बढ़ाने के लिए बालक को जन्म नहीं देती हैं। 'नैराश्य' कहानी की निरुपमा ऐसी ही अभागनी स्त्री हैं। उसका विवाह एक सम्पन्न परिवार में हुआ। परन्तु कन्या जन्म के कारण सदैव पति से तिरस्कृत होती रहती हैं। कहानी के कुछ अंश इस प्रकार हैं- आज आदमी अपनी स्त्री से इसलिए नाराज रहते हैं कि उसके यहाँ लड़कियाँ क्यों होती हैं, लड़के क्यों नहीं होते। सीधे मुँह बात नहीं करते। कई दिनों तक घर में ही नहीं आते और आते भी तो इस तरह खींचे तने रहते कि निरुपमा थर-थर काँपती रहती थी कि कही गरज न उठे। सबसे बड़ी विपत्ति यह थी कि त्रिपाठी जी ने धमकी दी थी कि कन्या हुई तो मैं घर छोड़कर निकल जाऊँगा।इस नर्क में क्षण भर भी न ठहरूंगा। निरुपमा को यह चिंता खाई जाती थी। निरुपमा घोर निराशा की दशा में अपनी भाभी को पत्र भेजती, उसकी भाभी उसे महात्मा के दर्शन के लिए बुला लेती है और बोलती है कि महात्मा का आर्शीवाद निष्फल नहीं जा सकता। अब वह पुत्रवती होगी। जब वह गर्भवती हुई तो सबके दिलों में आशाएँ हिलोरे लेने लगी लगी। उसका सम्मान बढ़ जाता है किन्तु कुछ समय पश्चात् जब पुन: कन्या हुई तो जनते ही मृत्यु को प्राप्त हो जाती है।

हमारे समाज में नारी की आरंभिक दशा यहीं थी जिन कार्यो के लिए पुरूषों का गुण-दोष नहीं देखा जाता था, उसी के लिए नारी प्रताड़ित होती रही हैं। प्रेमचंद ने इस कहानी के माध्यम से समाज के इस दोहरी नीति और छोटी मानसिकता पर करारा प्रहार करते हैं। उनका यह संदेश है कि सामाजिक अन्याय और धार्मिक कर्मकांडों से जीवन की शांति नहीं प्राप्त हो सकती। सच्चे जीवन की खोजके लिए हमें समाज और धार्मिक मान्यताओं से ऊपर उठकर सोचना चाहिए।[1]

प्रेमचंद अनमेल विवाह के विरुद्ध थे। इन विवाह से विवाहिक जीवन में

क्या-क्या समस्याएँ आती है इसका यर्थाथ चित्रण 'नरक का मार्ग' और 'नया विवाह' कहानियों में चित्रित किया हैं।

कहानी 'नरक का मार्ग' की मुख्य पात्र एक महिला है जो एक ऐसे व्यक्ति से शादी करने के बाद अपना जीवन बर्बाद कर लेती है जो उससे मेल नहीं खाता। वह अपनी दुर्दशा के लिए अपने पति और पिता को जिम्मेदार ठहराते हुए अपना दु:ख व्यक्त करती हुई कहती है 'कभी-कभी मुझे बेचारे पर दया आती है यह नहीं समझते कि नारी जीवन में कोई ऐसी वस्तु भी है जिसे खोकर उसकी आँखों में स्वयं भी नरक तुल्य हो जाता है।[2]

कहानी 'नया विवाह' की आशा अपने से काफी बड़ी उम्र के पति को पाकर खुश नहीं हैं वह अपने धर्म को निभाना जानती है किन्तु यौवन की आकाक्षाएँ उसे घर के नौकर के प्रति आकर्षित कर देती है जब जुगल आशा के रूप सौन्दर्य की प्रशंसा करता है तो उसका मन उमंग से भर उठता है। वह सोचती है लाला डंगामल ने असंख्य बार आशा के रूप और यौवन की प्रशंसा की थी, मगर उनकी प्रशंसा में उसे बनावट श्री गंध आती थी। वह शब्द उनके मुख से निकलकर कुछ ऐसे लगते थे, जैसे पंगु दोड़ने की चेष्टा कर रहा हो। जुगल के इन सीधे शब्दों में एक नशा था एक चोट थी। आशा की सारी देह प्रकम्पितहो गई।[3]

'सौत' व 'स्वामिनी' कहानियों में लेखक ने एक ऐसे चरित्र का निर्माण किया जो प्रेम, त्याग, बलिदान के साथ-साथ स्त्री सुलभ ईष्या से भी भरी प्रतीत होती है।

'सौन' कहानी में रामू, रजिया का पति जो औलाद की चाह में दुसरा विवाह करता हैं। सौतन के घर आ जाने से रजिया के मन में ईर्ष्या का भाव जागने लगता है किन्तु रजिया अपनी ईर्ष्या का भाव दबाकर घर छोड़ देती है और अपनी स्वयं की पहचान बनाती हैं। जब उसे पता चलता है कि रामू अंतिम सॉस ले रहा है तो उसका मन नही मानता और वह रामू से मिलने आ जाती है और अंत में रामू की मृत्यु हो जाने के बाद सौतन को गले लगाकर कहती है क्यों रोती है बहन ? वह चला गया। मैं तो हूँ। किसी बात की चिन्ता न कर।[4]

'स्वामिनी' कहानी की नायिका भी अपने पति की मृत्यु के बाद खुद को संभालते हुये सारे घर का दायित्व अपने कंधों पर लेकर सब कुछ परिवार के लिए समर्पित कर देती है। रामप्यारी के रूप में लेखक ने एक ऐसे चरित्र का चित्रण किया है जो सामान्य होकर भी विशिष्ट है जिसके विषय में लेखक कहते है 'एक-एक करके प्यारी के गहने उसके हाथो से निकलते जाते थे। वह चाहती थी मेरा घर गाँव में सबसे सम्पन्न समझा जाए।'

कभी घर की मरम्मत के लिए, कभी बैलों की नई गोई खरीदने के लिए, कभी नातेदारों के व्यवहार के लिए और कभी बीमारों की दवा दारु के लिए रुपयों की जरूरत पड़ती रहती थी। वह अपनी कोई न कोई चीज निकाल देती। चीजें एक बार हाथ से निकलकर फिर न लौटती थी। वह चाहती तो इनमें से कितने ही खर्चों को टाल जाती परन्तु रामप्यारी ऐसा न करते हुए अपने घर के मान सम्मान की रक्षा की।[5]

'सोहाग का शव' कहानी की नायिका सुभ्रदा भी अपने पति द्वारा धोखा दिये जाने पर मिन्नत नहीं करती। वह अपने स्वतन्त्र अस्तित्व की घोषणा करती है। जब उसे ज्ञात होता है कि लन्दन जाकर केशव किसी अन्य लड़की से विवाह कर रहा है तो वह इसका प्रतिरोध नहीं करती अपितु उस परिस्थिति में विजय प्राप्त करती है। वह कहती है 'क्या पुरुष हो जाने से सारी बातें क्षम्य और स्त्री हो जाने से सभी अक्षम्य हो जाती है।'[6]

प्रेमचंद समाज में विधवाओं की स्थिति पर प्रकाश डालते है। प्रेमचंद अपनी कहानी 'बेटों वाली विधवा' में विधवाओं की व्यथा व्यक्त करते है। जब तक पति रहता है तब तक उसका अपने घर पर अधिपत्य था परन्तु पति की मृत्यु के उपरान्त ही उसकी दशा अनाथों जैसी हो जाती है। कुछ धन सम्पत्ति और रूपये जो उसके पति कीअमानत थी उस पर भी उसका अधिकार रह नहीं जाता। जो कल तक घर की स्वामिनी थी आज वहीं नौकरानी से भी बदतर जीवन यापन कर रही है। सुबह उठकर घर का सारा काम करती, खाना बनाती, बेटे बहुओं को खिलाती, बर्तन चौका करती उसके बाद भी उसके साथ नौकरों के सदृश व्यवहार किया जाता। यहाँ तक कि उसका जो पहले का कमरा था वह भी खाली करा लिया जाता है और उसे एक छोटी सी कोठरी में भिखारिनी कीभाँति जीवन व्यतीत करना पड़ता है। हमारा समाज सोचता है कि विधवाओं को जानवरों की भाँति सिर्फ काम करना और भोजन दो की आवश्यकता होनी चाहिए। लेकिन जानवर तो काम चाबुक के नोंक पर करता है और भोजन मन से करता है परन्तु बेटों वाली विधवा फूलमती काम तो मन से करती हैऔर भोजन बेमन विष के कौर के समान करती है। जब वह अपनी लड़की कुमुद की शादी में कुछ रुपये खर्च करने का प्रश्न करती है तो उसे अपने ही बेटों से कड़वे वचन सुनने को मिलते है। फूलमती जिद पर अड़ जाती है कुमुद का विवाह मुरारी लाल के लड़के से ही होगा तो उसका पुत्र अनेको अपमान जनक बातों से उनको अपमानित करता है -

'कामतानाथ बोला अम्माँ, तुम बरबस बात बढ़ाती है। जिन रूपयों को तुम अपना समझती हो, वह तुम्हारे नहीं है हमारे है। तुम हमारी अनुमति के बिना उनमें से कुछनहीं खर्च कर सकती।'

'फूल मती को जैसे सर्प ने डस लिया-क्या कहा!फिर तो कहना! मैं अपने ही संचे रुपए अपनी इच्छा से नहीं खर्च कर सकती ?'

'वह रुपए तुम्हारे नहीं रहे, हमारे हो गए।'

'तुम्हारे होगे, लेकिन मेरे मरने के पीछे।'

'नहीं, दादा के मरते ही हमारे हो गए।'

उमानाथ ने बेहयाई से कहा- 'अम्माँ कानून-कायदा, तो जानती नहीं, नाहक उलझती हो।'

फूलमती, क्रोध में निहाल होकर वाली -भाड़ में जाए तुम्हारा कानून मैं ऐसेकानून को नहीं मानती। तुम्हारे दादा ऐसे कोई बड़े धन्नासेठ न थे। मैंने ही पेट और तन काटकर यह गृहस्थी जोड़ी है नहीं आज बैठने की छाँह न मिलती।मेरे जीते-जी तुम मेरे रुपए नहीं छू सकते। मैंने तीन भाइयों के विवाह में दस-दस हजार खर्च किए है। वहीं मैं कुमुद के विवाह में भी खर्च करूँगी।

कामतानाथभी गर्म पड़ा - आपको कुछ भी खर्च करने का अधिकार नहीं है।

उमानाथ ने बड़े भाई को डाँटा- आप खामख्वाह अम्माँ के मुहँ लगते हैभाई साहब। यह कायदा कानून तो जानती नहीं, बिना मतलब बहस करती है।

फूलमती ने संयमित स्वर में कहा - अच्छा कानून क्या है ? जरा मैं भी सूनूँ ?

उमा ने निरीह भाव से कहा- कानून यही हैकि बाप के मरने के बाद जायदाद बेटों को ही हो जाती है। माँ का हक केवल रोटी-कपड़े का है।

फूलमती ने तड़पकर पूँछा-किसने यह कानून बनाया है ?

उमानाथ शांत स्थिर स्वर में बोला-हमारे ऋषियों ने, महाराज मनु ने और किसने ?

फूलमती एक क्षण अवाक् रहकर आहत कंठ से बोली- तो इस घर में मैं तुम्हारे टुकड़ों पर पड़ी हुई हूँ।

उमानाथ ने न्यायाधीशकी निमर्मता से कहा -तुम जैसा समझो।[7]

मुंशी प्रेमचंद की 'सुभागी' ग्रामीण जीवन की एकलइकी की कहानी है। तुलसी औरलक्ष्मी की बेटी सुभागी पर केन्द्रित है। सुभागी 11 वर्ष की आयु में विधवा हो जाती है उसे अपने परिवार और समुदाय से अलग कर दिया जाता है लेकिन वह अपनी बुद्धिमानी और परिश्रम से समाज में अपना स्थान बना लेती है। [8]

'धिक्कार'कहानी में भी प्रेमचंद पात्रों के द्वारा विधवा विवाह का समर्थन करते हैं। धिक्कार कहानी का पात्र इन्द्रनाथ मानी नाम की विधवा स्त्री से विवाह करता है –

गोकुल डरते–डरते कहता है– लेकिन तुम्हें मालूम है, वह विधवा है।

इन्द्रनाथ ने मुस्कुराकर कहा– जानता हूँ, सुन चुका हूँ और इसलिए तुम्हारे बाबूजी से कुछ कहने का मुझे अब तक साहस नहीं हुआ। लेकिन न जानता तो भी इसका मेरे निश्चय पर कोई असर न पड़ता। यानी विधवा ही नहीं अछूत हो, उससे भी गयी बीती अगर कुछ हो सकती है वह भी हो, फिर भी मेरे लिए वह रमणी–रत्न है। किसी रमणी का विधवा होना मेरी आँखों में दोष नहीं गुण है।[9]

प्रेमचंद ने विधवाओं की समस्याओंको कहानियों के माध्यम से समाज के सामने प्रस्तुत किया।

प्रेमचंद के व्यक्तित्व जीवन में भी नारी पात्रों की महत्वपूर्ण भूमिका होने से उन्हें सोचने पर विवश किया। जन्म लेते ही उनकी माता का स्वर्गवास हो गया। दूसरी माँ के रुप में विमाता से तिरस्कृत होते रहे और उनकी पहली पत्नी से विचार नहीं मिलते थे। शिवरानी देवी के रूप में उन्हें दूसरी आदर्श पत्नी मिली। प्रेमचंद जी ने नारी के प्रत्येक रूप चाहे बहु, माँ, पत्नी, बहन, प्रेमिका, शिक्षिका यहाँ तक वेश्या जितने भी रूप नारियों के हो सकते है प्रेमचंद के साहित्य में विशेष भूमिका निभाते हैं।

डॉ. इन्द्रनाथ मदान प्रेमचंद के साहित्यिक उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए लिखते हैं कि 'प्रेमचंद के पाठकों के मनोरंजन के लिए या स्त्रियों और पुरुषों की वासना तथा प्रेम की समस्या वाली कहानियों के प्रति उत्पन्न जिज्ञासा कोशांत करने के लिए उपन्यास और कहानियों की रचना नहीं की। कला की उनकी भावना बड़ी ऊँची थी। जीवन की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं के संबंध में उनके जोविचार थे उनको व्यक्त करने के साधन ही वे कला समझते थे।'[10]

प्रेमचंद के समय जो समाज, शोषितों के गुलाम था किन्तु आज अपनों के द्वारा शोषित हो रहे है। एक साहित्यकार की नजर सिर्फ वर्तमान पर ही नहीं बल्कि वह भविष्य पर भी अपना दृष्टिकोण बनाये रखते हैं।

निष्कर्ष – प्रेमचंद ने अपने कहानियों में नारी की सम्पूर्ण स्थिति का चित्रण कर उन्हें ऊपर उठने के लिए एक नई सोच व नई दिशा प्रदान की। प्रेमचंद की कहानियों में शुरुआती दौर पर नारी की समस्याओं का चित्रण दिखाई देता है लेकिन धीरे–धीरे नारियों का विकासात्मक रूप भी दिखाई देता है जो जरूरत पढ़ने पर समाज की रूढ़ियो आडंबरों आदिका खुलकर विरोध करती है। प्रेमचंद का उद्देश्य नारियों की समस्याओं से परिचित कर उन्हें जागरूक एवं सचेत करना ताकि वह अपने अधिकारों के लिए स्वयं जागृत हो सके। प्रेमचंद ने नारियों की शिक्षा का भी समर्थन किया। वे मानते थे कि एक शक्ति सम्पन्न नारी ही समाज का सर्वांगीण विकास कर सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रेमचंद, नैरास्य, मानसरोवर–3, लोकभारती प्रकाशन, 2022
2. प्रेमचंद, नरक का मार्ग, मानसरोवर–3, लोकभारती प्रकाशन, 2022
3. प्रेमचंद, नया विवाह, मानसरोवर–2, लोकभारती प्रकाशन, 2022
4. प्रेमचंद, सौत, इंटरनेट डॉट कॉम
5. प्रेमचंद, स्वामिनी, मानसरोवर–1 लोकभारती प्रकाशन, 2023
6. प्रेमचंद सोहाग कासव, मानसरोवर–5, लोकभारती प्रकाशन, 2022
7. प्रेमचंद, बेटो वाली विधवा, मानसरोवर–1, लोकभारती प्रकाशन, 2023
8. प्रेमचंद, सुभागी, मानसरोवर–1, लोकभारती प्रकाशन, 2023
9. प्रेमचंद, धिक्कार, मानसरोवर–1, लोकभारती प्रकाशन, 2023
10. प्रेमचंद : एक विवेचना डॉ इंद्रनाथ मदान, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली पृ.स. –152

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Evolution of Online Shopping and Its Psychological Impact on Consumer Behavior

Varsha Shende* Dr. Munesh Thakre**

*Research Scholar, Sardar Patel University, Balaghat (M.P.) INDIA
** Associate Professor (Commerce) Sardar Patel University, Balaghat (M.P.) INDIA

Introduction - The concept of online shopping was born in the late 1970s, but truly came into focus by the mid 1990s with pioneers like Amazon and eBay. Originally a transactional novelty, e-commerce has since undergone transformative changes. Web/ 1.0 offered basic catalogs; Web/ 2.0 introduced interactive user reviews and social proof; Web/ 3.0 and mobile apps now offer personalized recommendations, immersive experiences, and social-commerce integrations.

This evolution has had profound effects on consumers. Online shopping has become routine, and platforms now influence buying behavior at the cognitive and emotional levels. This paper aims to chart the major stages in online shopping's evolution, examine psychological drivers such as convenience, social proof, FOMO, impulse and compulsive buying, analyze negative phenomena like dark patterns and cognitive dissonance post purchase, and provide recommendations to safeguard consumers.

1.1 Aims of the Research: The primary aim of this research is to investigate how online shopping has evolved over time and to analyze the psychological impact of this evolution on consumer shopping behavior. This study seeks to provide insights into the motivations, preferences, and behavioral shifts exhibited by consumers in digital marketplaces. It also aims to explore the extent to which psychological drivers like convenience, social influence, and digital design impact consumer decisions, both positively and negatively.

1.2 Hypothesis:

H1: The convenience and accessibility of online shopping significantly influence consumer preference over traditional retail.

H2: Psychological factors such as FOMO, social proof, and personalization algorithms are positively correlated with increased impulse purchases.

H3: Consumers who frequently engage in online shopping are more likely to experience cognitive dissonance post-purchase compared to in-store shoppers.

H4: The evolution of online shopping interfaces and technologies has led to measurable changes in consumer trust and decision-making behavior.

2. Evolution of Online Shopping

2.1 Web/ 1.0: Static Catalogs: During Web/ 1.0 (early-to-mid 1990s), websites primarily served as product catalogs. Corporate pages offered product listings with order by mail forms. Though enabling broader access to product information, reach was limited to early adopters; interactivity was minimal.

2.2 Web/ 2.0: Interactivity and Social Proof : The 2000s ushered in user-generated content: reviews, ratings, forums, and social media recommendations. Consumers began relying heavily on others' experiences—what Cialdini terms "social proof." Reviews became a primary trust signal; 85% trust online reviews as much as personal recommendations.

2.3 Mobile Revolution & Personalization: Smartphones and apps made shopping ubiquitous and frictionless. Data-driven recommendation systems suggested products based on browsing history—often subconsciously influencing decisions. Platforms began leveraging behavioral science to shape choices.

2.4 Social Commerce & Live-Streaming: Social media platforms further blurred the line: influencers showcasing products, "buy with us" livestreams, peer validation, and built-in purchasing options. Trust became relational—anchored in community and peer identity.

3. Psychological Drivers of Online Shopping

3.1 Convenience and Ease: 64% of consumers cite convenience as the top reason for preferring online shopping. It reduces effort, offers 24/7 access, and enables price comparisons—making buying decisions more efficient and less taxing.

3.2 Social Proof & Trust Building: Reviews, ratings, and influencer endorsements offer validation. Frequent vetting of feedback reduces perceived risks. Eye tracking studies show consumers focus heavily on negative reviews—often twice as long as positive ones.

3.3 Fear of Missing Out (FOMO): Limited-time offers, countdown timers, flash sales, and scarcity messaging tap into FOMO—driving faster, less rational purchase decisions.

3.4 Personalization & Recommendation Algorithms: Algorithms constantly curate personalized suggestions, reducing decision fatigue but also guiding consumer behavior subconsciously. The tailored experience creates a sense of being understood.

3.5 Impulse and Compulsive Buying: Impulse purchases are often prompted by emotional highs, low prices, and aesthetic triggers. In extreme cases, compulsive buying disorder (CBD) develops—an addiction recognized by ICD 11. Pandemic and stress conditions have heightened such behaviors.

3.6 Cognitive Dissonance Post-Purchase: Consumers may experience regret after purchase, especially online where sensory validation is limited. They then employ justification, seek additional confirmation, or devalue alternatives to reduce mental discomfort.

3.7 Dark Patterns & Manipulative Design: Online platforms often employ UX tricks—hidden costs, urgency banners, automatic opt ins. These "dark patterns" increase annoyance and erode trust.

4. Consumer Benefits and Risks

Benefits:

1. Therapeutic Consumption: Shopping provides emotional relief and a sense of control, especially during stress.
2. Customization & Efficiency: Personalized recommendations save time and match preferences.
3. Greater Choice: Access to global products, detailed reviews, price transparency.

Risks:

1. Impulse and Addiction: Easy checkouts and constant exposure can trigger compulsive spending.
2. Manipulative Interfaces: Dark patterns co-opt consumer behavior—creating resentment and mistrust.
3. Privacy Trade-offs: Extensive data collection raises concerns over surveillance and misuse.

5. Recommendations

For Consumers:

1. Stay Mindful: Reflection before purchases, avoid storing payment data, set time/budget constraints.
2. Verify Reviews: Cross-validate feedback and be wary of overly glowing or extremely negative reviews.

For Platforms:

1. Transparency in UX: Avoid dark patterns; use "bright patterns" to retain trust.
2. Ethical Design: Prioritize user well-being in algorithmic targeting. Offer self-limit tools.
3. Privacy Protections: Implement strong data transparency and opt-out mechanisms; clearly explain how user data is used.

For Regulators:

1. Policy Oversight: Regulate deceptive design tactics, restrict manipulative urgency claims.
2. Support Services: Encourage resources for impulse-buying issues—financial planning and mental health interventions.

6. Data-Driven Insights on Changing Consumer Behavior: According to a 2024 report by Statista, global e-commerce sales reached approximately $6.3 trillion, with projections indicating growth beyond $8 trillion by 2027. In India, online shopping has expanded exponentially, with the number of digital buyers increasing from 140 million in 2018 to over 300 million in 2024. This reflects a paradigm shift in consumer preference from traditional retail to digital platforms.

A Nielsen study (2023) found that 68% of consumers now prefer online shopping due to convenience, while 55% cited better pricing. Additionally, 72% admitted they were influenced by online reviews and social media endorsements before making a purchase.

Mobile commerce (m-commerce) has also seen an upswing-over 65% of online purchases globally are made using smartphones. Behavioral data suggests that consumers are spending more time on shopping apps, browsing product recommendations, and engaging with influencer content.

Another study by McKinsey & Company highlighted that post-pandemic, 75% of consumers tried new shopping behaviors, and over 60% planned to continue using them. This includes trialing new brands, platforms, and delivery models-all signaling a major shift in consumer expectations.

These insights underscore that online shopping behavior is not just evolving-it is being shaped by technological, psychological, and cultural forces.

Conclusion: The shift from static Web/ 1.0 to richly personalized, emotion-driven platforms has deeply transformed shopping behaviors. Convenience, social proof, FOMO, and tailored experiences boost engagement-but also fuel manipulation and addictive patterns. Recognizing and addressing these psychological drivers is vital. Ethical design, user education, and regulatory safeguards can balance commercial interests with consumer welfare.

Ultimately, as online shopping continues to evolve—with AI, augmented reality, and social commerce—maintaining consumer autonomy and trust will remain paramount. Continued research and interdisciplinary collaboration will be key.

References:-

1. Byteout. (2024). *The psychology behind online shopping*. Byteout Knowledge Base.
2. Chen, T., Wang, H., & Liu, Y. (2022). The impact of online reviews on consumers' purchasing decisions. *Frontiers in Psychology, 13*, Article 12345.
3. Gray, A., & Thomas, L. (2021). *Dark patterns in UX: An empirical analysis*. *Journal of Digital Ethics, 5*(2), 34–48.
4. Jones, K. (2022, March 15). Online shopping addiction during the pandemic. *Time Magazine*. https://time.com/online-shopping-pandemic

5. McKinsey & Company. (2023). *The great consumer shift: Ten charts that show how US shopping behavior is changing*. https://www.mckinsey.com
6. NielsenIQ. (2023). *Consumer behavior trends in online shopping*. https://nielseniq.com
7. Ni, Y. (2024). *Consumer psychology in the digital age: How online environments shape purchasing habits*. *Proceedings of Business and Economic Studies*.
8. Smith, J. (2019). *The evolution of the web and consumer behavior*. *Frontiers in Psychology*.
9. Statista. (2024). *Retail e-commerce sales worldwide from 2014 to 2027*. https://www.statista.com/statistics/379046/worldwide-retail-e-commerce-sales/
10. Wikipedia contributors. (2025). *Psychological pricing*. In *Wikipedia*. https://en.wikipedia.org/wiki/Psychological_pricing

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

जैव विविधता का महत्व एवं संरक्षण

डॉ. धर्मेन्द्र पाटीदार*

* सहायक आचार्य (भूगोल) राजकीय महाविद्यालय, सागवाड़ा, डूँगरपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – जैव विविधता से अभिप्राय विश्व में पाए जाने वाले विभिन्न जीवों तथा उनकी प्रजातियों से है। जैव विविधता विश्व के महत्वपूर्ण संसाधन है। इनकी विविधता तथा सघनता का प्रभाव किसी भी क्षेत्र के आर्थिक, सांस्कृतिक एवं मानव स्वास्थ्य पर पड़ता है। किसी भी देश का विकास इसकी जैव विविधता से जुड़ा हुआ है।

वर्तमान में अनेक जैव प्रजातियां विलुप्त हो गई है और अनेकों प्रजातियां संकटग्रस्त है। इसी कारण जैव विविधता के प्रति विश्व के कई देश जागरूक हो रहे है। साथ ही कई संगठन इनके संरक्षण हेतु प्रयास कर रहे है।

जैव विविधता पर आज सर्वाधिक संकट हो रहा है तथा प्रतिवर्ष कई सैकड़ों प्रजातियां विलुप्त होती जा रही है जिस कारण जैव विविधता के विभिन्न पक्षों की जानकारी इसके संरक्षण हेतु महत्वपूर्ण है।

जैव विविधता शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम अमेरिकी कीट विज्ञानी इ.ओ. विल्सन ने सन् 1986 में अपनी रिपार्ट में किया था। अंग्रेजी का बायोडायवर्सिटी शब्द दो शब्दों बायोलॉजिकल तथा डाइवर्सिटी का समूह है जिसे हिन्दी में जैव विविधता द्वारा व्यक्त किया जाता है।

जैव विविधता का मुख्य कारण भौगोलिक पर्यावरण में विविधता का होना है तथा यह करोड़ों वर्षो की अवधि में चलने वाली निरंतर प्रक्रिया का परिणाम है। प्रकृति के निर्माण व अस्तित्व के लिए जैव विविधता की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसीलिए यदि जैव विविधता का विनाश होता है तो पर्यावरण चक्र में गतिरोध आने के कारण जीवों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। आज विश्व में जैव विविधता के प्रति जागरूक होने का कारण जैव विविधता का तीव्र गति से विनाश होना है। वर्तमान में विश्व में प्रतिवर्ष हजारों प्रजातियां विलुप्त हो रही है। इस प्रकार का विनाश संपूर्ण संसार के लिए नुकसानदायक है। अत: जैव विविधता के समुचित स्वरूप की जानकारी कर इसका संरक्षण करना अति महत्वपूर्ण है।

जैव विविधता के स्तर– जैव विविधता को निम्नांकित तीन स्तरों या वर्गो में बांटा गया है–

1. **आनुवांशिक विविधता–** विश्व में कई प्रजातियां पायी जाती है। प्रत्येक प्रजाति में जीन की भिन्नता मिलती है। आनुवांशिक विविधता में जीन की वंशानुगत विभिन्नताएं आती है। आनुवांशिक विविधता की उत्पत्ति वातावरण से जीवों को अनुकूलित करने हेतु एवं जीवनयापन हेतु आवश्यक है। यदि हम कुछ जीवों को नष्ट कर दे तो जीन की अनुपस्थिति विविधता की मात्रा घटा देगी व जीवों में अनुकूलन कम हो जायेगा। साथ ही पारिस्थितिकी तंत्र में असंतुलन पैदा हो जाएगा।

2. **प्रजातीय विविधता–** प्रजातीय विविधता में एक ही प्रजाति के जीवों में स्थानों के आधार पर विविधता पायी जाती है। प्रजातीय विविधता से अभिप्राय किसी क्षेत्र विशेष में रहने वाली जातियों से है। जिन क्षेत्रों में अधिक आवास होंगे वहां जातीय विविधता अधिक पायी जाती है।

3. **पारिस्थितिकी विविधता–** पृथ्वी पर विविध प्रकार के पारिस्थितिकी तंत्र है जो विविध प्रकार की प्रजातियों के निवास स्थान है। एक भौगोलिक क्षेत्र में विभिन्न पारिस्थितिकी तंत्र हो सकते है जैसे– घास के मैदान, वनीय, मरूस्थलीय, पर्वतीय, नदी, झील, तालाब आदि। ये भिन्नता विविध प्रकार के जीवन को विकसित करती है। ये एक तंत्र से दूसरे तंत्र में भिन्न होते है। यही विविधता पारिस्थितिकी विविधता कहलाती है।

इनके अलावा क्षेत्रीय विस्तार के आधार पर भी जैव विविधता को स्थानीय, राष्ट्रीय एवं वैश्विक जैव विविधता में बांटा जा सकता है।

जैव विविधता का महत्व–जैव विविधता प्रकृति का अभिन्न अंग तथा यह पर्यावरण को सुरक्षित रखने व पारिस्थितिकी तंत्र को संचालित करने में मुख्य भूमिका निभाती है। यह पोषण के पुन:चक्रण, जल व वायु चक्रण, मृदा निर्माण आदि के लिए महत्वपूर्ण है। साथ ही मनुष्य की अनेक आवश्यकताओं को पूर्ण करने में भी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से सहयोग प्रदान करती है जैसे भोजन, आवास, ऊर्जा, कपड़ें, औषधियां आदि। ये आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण होते है। जैव विविधता वाले क्षेत्र प्राकृतिक सौंदर्य तथा मनोरंजन स्थल के रूप में भी उपयोगी होते है।

जैव विविधता का ह्रास–मानव द्वारा विकास हेतु किए गए अनेक कार्यो ने पर्यावरण तथा उसके जैविक एवं अजैविक घटकों को क्षति पहुंचायी है। जिस कारण कई जीवों एवं पादपों की प्रजातियों का विनाश हुआ तथा जैव विविधता में कमी आयी है।

मानव की जनसंख्या में वृद्धि, आधुनिकीकरण, प्रदूषण, पर्यावरण विराधी कार्यो ने जैव विविधता का ह्रास किया है। इन मानवीय कार्यो से पौधों एवं जीवों की कई प्रजातियां समाप्त हो गई है।

जैव विविधता की दृष्टि से शीताष्ण तथा गर्म वर्षा वन सर्वाधिक सम्पन्न माने जाते है किन्तु प्राकृतिक संसाधनों के दोहन से इन्हीं वनों का विनाश सबसे अधिक हुआ है। जिस कारण पौधों की प्रजातियां लुप्त होती जा रही है। साथ ही उनमें निवास करने वाले जीवों की प्रजातियां भी उनके आवास व भोजन के समाप्त होने से लुप्त होती जा रही है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि वनों के विनाश, मानव द्वारा वन्य जीवों के शिकार, उनके प्राकृतिक आवास को समाप्त करने आदि के कारण वर्तमान में तीव्र गति से जैव विविधता

का ह्रास हो रहा हैं यह एक चिन्ताजनक विषय है।

जैव विविधता का संरक्षण– जैव विविधता समस्त पृथ्वी के जीवन के लिए एक अनिवार्य तत्व है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार प्रतिवर्ष वन संपदा, वनीय जीव जन्तुओं की विशिष्ट जातियों तथा पशु संपदा का बड़ी मात्रा में लोप होता जा रहा है। समय रहते इनको नहीं रोका गया तो जलवायु परिवर्तन, खाद्यान्न संकट, बीमारियां आदि में बढ़ोतरी से मानव जीवन संकट में आ जाएगा। भीषण बाढ़, सूखा, बढ़ते तापमान आदि के कारण कृषि, उद्योग–धंधों आदि पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। अत: हमें इन आपदाओं से बचने हेतु जैव विविधता का संरक्षण करना अति आवश्यक है।

जैव विविधता के संरक्षण से अभिप्राय जैव विविधता का बचाव तथा उनके आवास को बचाना है। इनके संरक्षण से अनेक प्रजातियों को विलुप्त होने से बचाया जा सकता है। जैव विविधता का बने रहना पारिस्थितिकी तंत्र की क्रियाशीलता तथा पर्यावरण के संरक्षण के लिए आवश्यक है। जैव विविधता को निम्नांकित दो प्रकार से संरक्षित किया जा सकता है–

1. स्थानिक संरक्षण
2. अन्यत्र संरक्षण

1. स्थानिक संरक्षण–स्थानिक संरक्षण से तात्पर्य जीवों तथा वनस्पतियों की प्रजातियों को उनके प्राकृतिक आवास स्थलों पर ही संरक्षित करने से है। यह संरक्षण का एक महत्वपूर्ण माध्यम है क्योंकि इसके चारों ओर के प्राकृतिक वातावरण को सुरक्षित किया जाता है जो जीवों तथा वनस्पतियों को विकसित होने एवं उनके अस्तित्व को बनाए रखने हेतु आवश्यक होता है। इस प्रकार के विशिष्ट स्थलों में विभिन्न प्रजातियों का संरक्षण प्राकृतिक रूप से किया जाता है। इस हेतु राष्ट्रीय पार्क, अभ्यारण्य, जीवमंड़ल रिजर्व आदि की स्थापना की जाती है। दुनिया के समस्त देश इनके प्रति जागरूक होने लगे है तथा उन्होंने इनकी स्थापना करना प्रारम्भ कर दिया है। यूनेस्को द्वारा सन् 1971 में 'मानव एवं जीवमंड़ल कार्यक्रम' शुरू किया गया। भारत में भी कई क्षेत्रों में जीवमंड़ल रिजर्व स्थापित किए गए। साथ ही राष्ट्रीय उद्यानों तथा अभ्यारण्यों की स्थापना भी भारत के विभिन्न क्षेत्रों में की गई है। बाघ परियोजना द्वारा भी स्थानिक जैव विविधता का संरक्षण किया जा रहा है।

2. अन्यत्र संरक्षण –जब जीवों तथा वनस्पतियों को उनके मूल आवास क्षेत्र से बाहर किसी अन्य जगह पर संरक्षित किया जाता है तो उसे अन्यत्र अथवा बर्हिस्थान संरक्षण कहा जाता है। यह कार्य चिड़ियाघर, जीव विज्ञान पार्क, पादप उद्यान, कृषि शोध केन्द्रों, वन संस्थानों आदि द्वारा किया जाता है। इस प्रकार जीवों व वनस्पतियों के प्राकृतिक स्थलों के समाप्त होने से कृत्रिम आवास स्थलों को विकसित कर जैव विविधता को संरक्षित किया जाता है। भारत में भी इस प्रकार के कृत्रिम आवासों का विकास कई क्षेत्रों में किया गया है।

निष्कर्ष– जैव विविधता पर्यावरण की मौलिकता के लिए अत्यंत आवश्यक है। प्राकृतिक आवासों का संरक्षण इस दिशा में प्रमुख प्रयास माना जा सकता है। जैव विविधता किसी एक देश से सम्बन्धित न होकर सम्पूर्ण विश्व से सम्बन्धित है अत: इसके संरक्षण हेतु सम्पूर्ण विश्व के सहयोग की आवश्यकता है। इसी कारण विश्व के कई संगठन इस कार्य में अपना सहयोग प्रदान कर रहे है। इन संगठनों की स्थापना जैव विविधता के क्षरण तथा पारिस्थितिकी असंतुलन से उत्पन्न समस्याओं के समाधान हेतु विश्व स्तर पर की गयी है। ये संगठन वन्य जीवों, वनों आदि के संरक्षण का कार्य कर रहे है। वर्तमान में जैव विविधता का क्षरण तीव्र गति से हो रहा है। अत: हमें जीवों, पेड़ पौधों आदि के संरक्षण की ओर ध्यान देना नितान्त आवश्यक है। इनके अभाव में प्रकृति के स्वरूप की कल्पना नहीं की जा सकती है। जैव विविधता के संरक्षण हेतु विश्व के सभी देशों का भरसक प्रयास करने चाहिए ताकि हमारी पृथ्वी पर जैव विविधता बची रहे तथा मानव जीवन भी इसके विलुप्त होने से उत्पन्न खतरों से बचा रहे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Jadhav,H.V.(1995), "Environmental Pollution", Himalaya Publishing House, Bombay and Delhi.
2. Mcintosh R.P. (1963): Ecosystem,evolution and relation Patterns of living organisms, American scientist.
3. Mamoriya C.B. and Garg H.S. (2025), "Population Geography", SBPD Publications, Agra (U.P.).
4. सिंह, एस. (2004), 'पर्यावरण भूगोल', प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
5. अली, सलीम (2022),'भारत के पक्षी', बी.एच.एन.एस. पब्लिकेशन, मुम्बई भारत।
6. सैनी, के.सी. (2023), 'पक्षी प्रकृति और पर्यावरण', पैनासीआ रिसर्च फाउन्डेशन, जयपुर।
7. मिश्र डी. के. (2004), 'जनसंख्या, पर्यावरण एवं विकास', ए पी एच पब्लिशिंग कॉरपोरेशन, नई दिल्ली।
8. त्रिपाठी, आर. डी. (2023), 'जनसंख्या भूगोल', वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता का तुलनात्मक अध्ययन

मनीषा बागोरा* डॉ. प्रमिला पुर्बिया**

* शोध छात्रा (शिक्षा) जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय,उदयपुर (राज.) भारत
** सहायक आचार्य, लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र उदयपुर जिले के राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों में लैंगिक संवेदनशीलता के तुलनात्मक अध्ययन पर आधारित है।लैंगिक संवेदनशीलता में जागरूकता हेतु हमें विद्यालय स्तर की शिक्षा से शुरूआत करनी होगी और उसके लिए इसे विद्यालय की उच्च स्तरीय शिक्षा तक सशक्त रूप से संचालित करना होगा। साथ ही विद्यालय को भी जेण्डर संवेदनशीलता को अपनाते हुए उचित वातावरण प्रदान करना होगा। विद्यालय में अधयापक बालक–बालिकाओं के साथ समान व्यवहार करें।लैंगिक संवेदनशीलता के अन्तर्गत ग्रामीण छात्र एवं छात्राओं में लैंगिक संवदेनशीलता का स्तर औसत से कम जबकि शहरी छात्र एवं छात्राओं में औसत से अधिक पाया गया। वहीं ग्रामीण स्तर पर औसत से कम एवं शहरी स्तर पर औसत से अधिक पाया गया। जबकि छात्रों एवं छात्राओं में औसत से कम लैंगिक संवदेनशीलता का स्तर पाया गया। ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थयों के लैंगिक संवेदनशीलता में सार्थक अन्तर होता है, मध्यमान अंकों को देखने पर स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की तुलना में शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों में लैंगिक संवेदनशीलता का स्तर अधिक होता है।

प्रस्तावना – प्रारम्भ से ही समाज में पुरुष सत्तात्मक रूप मुख्य रहा है। समाज ने स्त्री व पुरुष की शरीर रचना के आधार पर दोहरे मानदण्ड अपना रखे थे। जिसमें दोनों की भूमिका अलग–अलग प्रकार की थी। समाज शास्त्रीय दृष्टिकोण से जेण्डर अथवा लैंगिक का अर्थ दो भिन्न शरीराकृति वाले व्यक्तियों से संबंधित भूमिका से अभिप्राय विभिन्न संस्कृतियों में लिंग के अनुरूप किए जाने वाले व्यवहार प्रतिमान से है। असमान लैंगिक संबंध न केवल वर्चस्व को बढ़ावा देते हैं बल्कि वे लड़के–लड़कियों में तनाव भी पैदा करते हैं एवं उनकी मानवीय क्षमताओं के पूर्ण विकास की स्वतंत्रता में बाधा पहुंचाते हैं। यह सबके हित में है कि मनुष्य को लिंग असमानताओं से मुक्त कराया जाए। उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी किशोरावस्था को प्राप्त कर लेते है इस अवस्था में कई शारीरिक, मानसिक एवं संवेगात्मक परिवर्तन होते है।

लैंगिक संवेदनशीलता में जागरूकता हेतु हमें विद्यालय स्तर की शिक्षा से शुरूआत करनी होगी और उसके लिए इसे विद्यालय की उच्च स्तरीय शिक्षा तक सशक्त रूप से संचालित करना होगा। साथ ही विद्यालय को भी जेण्डर संवेदनशीलता को अपनाते हुए उचित वातावरण प्रदान करना होगा। विद्यालय में अध्यापक बालक–बालिकाओं के साथ समान व्यवहार करें। विद्यालयों में विद्यार्थियों के साथ सोम्य तथा स्नेहवत् व्यवहार कर दोनों के बीच के भेद को मिटाना होगा तथा शिक्षा के मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास की ओर बढ़ना होगा।

वर्तमान समय में छात्र छात्राओं में लैंगिक संवेदनशीलता की समझ विकसित करना अनिवार्य है। पुरूष एवं महिला दोनों ही समाज के स्तम्भ है। व्यक्ति कक्षाओं से लेकर अपने आजीविका के क्षेत्र में लैंगिक संवेदनशीलता की समझ रखेगा तो निश्चित ही समाज में समानता के अवसर प्राप्त हो पायेगे। समाज में महिलाओं के प्रति आदर की भावना जाग्रत होगी। समाज में सभी क्षेत्रों में महिला एवं पुरूषों को स्थान प्राप्त हो पाएगा।

शोध प्रश्न:

1. क्या राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में लैंगिक संवेदनशीलता होती है?
2. क्या राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता एक समान होती है ?

शोध उद्देश्य:

1. राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता का अध्ययन करना।
2. राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

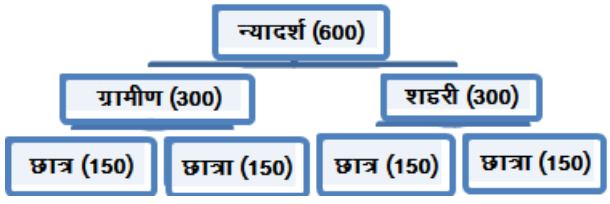
शोध परिकल्पना:

1. राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध परिसीमन:

1. शोधकार्य को उदयपुर जिले तक सीमित रखा गया।
2. प्रस्तुत शोधकार्य को राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों तक सीमित रखा गया।

न्यादर्श चयन: उपर्युक्त शोध हेतु यादृच्छिक प्रतिचयन विधि द्वारा न्यादर्श चयन किया गया जो इस प्रकार है :–



प्रस्तुत शोध हेतु शोधार्थी द्वारा न्यादर्श चयन हेतु उदयपुर जिले के राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के 30 विद्यालयों का चयन लॉटरी विधि से किया गया। प्रत्येक विद्यालय से 20 विद्यार्थियों का सोद्देश्य विधि से चयन करते हुए कुल 600 विद्यार्थियों का चयन किया गया। 600 में से 300 विद्यार्थी ग्रामीण तथा 300 शहरी क्षेत्र से चयन किए गए। 300 ग्रामीण विद्यार्थी में से 150 छात्र एवं 150 छात्राओं को सम्मिलित किया गया। इसी प्रकार 300 शहरी विद्यार्थी में से 150 छात्र एवं 150 छात्राओं को सम्मिलित किया गया।

शोध विधि, प्रविधि, उपकरण

1. **शोध विधि–** इस अनुसंधान में शोधार्थी ने राजकीय उच्च माधयमिक स्तर के विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलताके तुलनात्मक अध्ययन हेतु शोधकर्त्ता ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।
2. **शोध प्रविधि–** प्रस्तुत शोध से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण हेतु सांख्यिकी प्रविधियों में 'टी' परीक्षण का प्रयोग किया गया।
3. **शोध उपकरण–** प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए सर्वेक्षण द्वारा आंकडों के संकलन हेतु मानकीकृत उपकरण का प्रयोग किया गया है, जो इस प्रकार है:–

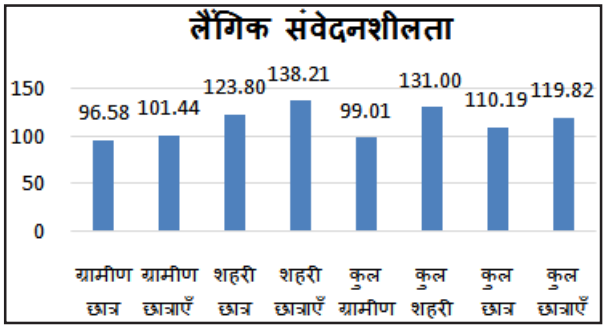
स्वनिर्मित उपकरण :–लैंगिक संवेदनशीलता प्रमापनी

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या

उद्देश्य 1 :राजकीय उच्च माधयमिक स्तर के ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता का अध्ययन करना।

सारणी संख्या 1: लैंगिक संवेदनशीलता का स्तर

	कुल लैंगिक संवेदनशीलता			
	मध्यमान	मानकविचलन	N	श्रेणी
ग्रामीण छात्र	96.58	10.817	150	औसत से कम
ग्रामीण छात्राएँ	101.44	5.761	150	औसत से कम
शहरी छात्र	123.80	16.410	150	औसत से अधिक
शहरी छात्राएँ	138.21	21.549	150	औसत से अधिक
कुल ग्रामीण	99.01	8.987	300	औसत से कम
कुल शहरी	131.00	20.437	300	औसत से अधिक
कुल छात्र	110.19	19.451	300	औसत से कम
कुल छात्राएँ	119.82	24.229	300	औसत से कम



आरेख संख्या 1

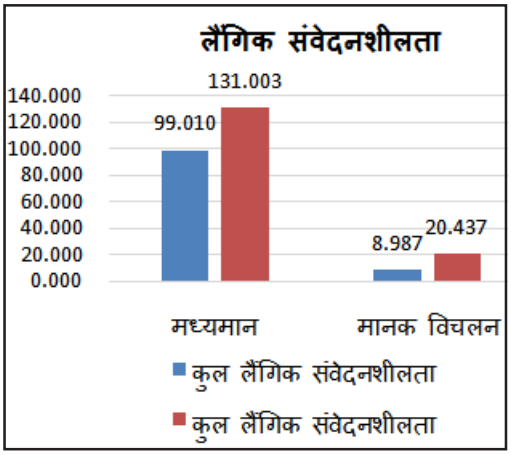
लैंगिक संवेदनशीलता का स्तर

विश्लेषण –लैंगिक संवेदनशीलता के अन्तर्गत ग्रामीण छात्र एवं छात्राओं में लैंगिक संवदेनशीलता का स्तर औसत से कम जबकि शहरी छात्र एवं छात्राओं में औसत से अधिक पाया गया। वहीं ग्रामीण स्तर पर औसत से कम एवं शहरी स्तर पर औसत से अधिक पाया गया। जबकि छात्रों एवं छात्राओं में औसत से कम लैंगिक संवदेनशीलता का स्तर पाया गया।

उद्देश्य सं. 2. राजकीय उच्च माध्यमिक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

सारणी संख्या 2: ग्रामीण क्षेत्र एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता के मध्यमानों के अन्तरों की सार्थकता की गणना

	लैंगिक संवेदनशीलता	
	ग्रामीण	शहरी
N	300	300
मध्यमान	99.010	131.003
मानक विचलन	8.987	20.437
मध्यमान की मानक त्रुटि	0.519	1.180
मध्यमान अन्तर	31.993	
'टी' मान	24.821	
P मान	0.000	



आरेख संख्या 2

ग्रामीण क्षेत्र एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता के मध्यमानों के अन्तरों की सार्थकता की गणना

विश्लेषण –लैंगिक संवेदनशीलता के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों का मध्यमान 99.010 तथा शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों का मध्यमान 131.003 प्राप्त हुआ। 'टी' का मान 24.821 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है तात्पर्य है कि ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थयों के लैंगिक संवेदनशीलता में सार्थक अन्तर होता है, मध्यमान अंकों को देखने पर स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की तुलना में शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों में लैंगिक संवेदनशीलता का स्तर अधिक होता है।

परिकल्पना सं. 1. : राजकीय उच्च माधयमिक स्तर के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

निष्कर्ष –अत: शून्य परिकल्पना के अस्वीकृति की अवधारणा सिद्ध होती है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है, अस्वीकृत होती है। अत: कहा जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों एवं शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की लैंगिक संवेदनशीलता के मध्यमानों में सार्थक अन्तर है।

शोध से प्राप्त निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राप्त दत्तों का विष्लेषण करने के पश्चात् निम्नलिखित निष्कर्ष सामने आए :-

1. लैंगिक संवेदनशीलता के अन्तर्गत ग्रामीण छात्र एवं छात्राओं में लैंगिक संवदेनशीलता का स्तर औसत से कम पाया गया।
2. शहरी छात्र एवं छात्राओं में लैंगिक संवेदनशीलता का स्तर औसत से अधिक पाया गया।
3. ग्रामीण स्तर पर औसत से कम एवं शहरी स्तर पर लैंगिक संवेदनशीलता का स्तर औसत से अधिक पाया गया।
4. छात्रों एवं छात्राओं में औसत से कम लैंगिक संवदेनशीलता का स्तर पाया गया।
5. लैंगिक संवेदनशीलता के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों का मध्यमान 99.010 पाया गया।
6. शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों का मध्यमान 131.003 प्राप्त हुआ।
7. 'टी' का मान 24.821 प्राप्त हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पाण्डेय, डॉ. रामशकल (2014),'विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशास्त्री', श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
2. व्यास, डॉ. भगवतीलाल (2016),'समकालिन भारत और शिक्षा', राधा प्रकाशन प्रा. लि., आगरा।
3. कपिल, एच.के. (2007)'अनुसंधान विधियाँ', एच.पी. भार्गव बुक हाउस 4/230, कचहरी घाट, आगरा
4. कपिल, एच.के. (2010) 'सांख्यिकी के मूल तत्व', अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा-2
5. भट्नागर, सुरेश (1992-93) 'शिक्षा मनोविज्ञान', आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
6. भार्गव, डॉ. महेश (2003),'आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन' वेदान्त पब्लिकेशन, लखनउ।
7. चौबे, डॉ. सरयू प्रसाद (2006)'शिक्षा मनोविज्ञान', अनु प्रकाशन, जयपुर।
8. गैरेट हेनरी ई. (1989),'शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकीय के प्रयोग' कल्याणी पब्लिशर्स, उ.प्र.।
9. माथुर, डॉ. एस.एस. (1993).'शिक्षा मनोविज्ञान', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, उ.प्र.।
10. Berman, P. & McLaughlin, M. (1978) Implementation of education innovation. Educational Forum, 40 (3) 345-370

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं में उपलब्धि अभिप्रेरणाओं का तुलनात्मक अध्ययन

ज्योति कुँवर राजपूत* डॉ. गुणबाला आमेटा**

* शोध छात्रा (शिक्षा) जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय,उदयपुर (राज.) भारत
** सहायक आचार्य, लोकमान्य तिलक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र उदयपुर जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं में उपलब्धि अभिप्रेरणा के अध्ययन पर आधारित है। जनाजातीय क्षेत्र में उपलब्धि अभिप्रेरणा का स्तर औसत से कम पाया गया। ग्रामीण क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं की तुलना में शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं में उपलब्धि अभिप्रेरणा का स्तर औसत पाया गया। जनजातीय क्षेत्रों में शहरी एवं ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों में औसत से अधिक उपलब्धि अभिप्रेरणा का अभाव बताता है कि जनजातीय बालिकाओं में इसे बढ़ाने की महती आवश्यकता है। ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं में उपलब्धि अभिप्रेरणा के तुलनात्मक अध्ययन करने पर टी के मान से पता लगता है कि दोनों में सार्थक अन्तर है। शोध के पहलु को देखकर शिक्षा में बालिकाओं को आगे बढ़ाने के लिए अधिक प्रयास किये जाऐगें। शिक्षा के स्तर में उच्चता को पाने के नये लक्ष्यों का निर्धारण होना चाहिए।

शब्द कुंजी – उपलब्धि अभिप्रेरणा, जनजातीय बालिकाऐं, जनजातीय क्षेत्र।

प्रस्तावना – किसी भी देश के विकास के लिए शिक्षा व्यवस्था बहुत बड़ा योगदान देती है। शिक्षा के द्वारा ही राष्ट्रीय लक्ष्यों को पूरा किया जा सकता है। एक सफलता के साथ दूसरी सफलता प्राप्त की जा सकती हैं। पहली वाली सफलता से हम अपनी दूसरी सफलता को अधिक उच्च स्तर पर प्राप्त कर पाते है। उपलब्धि अभिप्रेरणा ही एक ऐसा आयाम है जिसके द्वारा बालक निरंतर प्रतिभाशाली होकर अपने जीवन के लक्ष्यों को प्राप्त करते है। भारत की कक्षाओं में देश का भविष्य तैयार हो रहा है यह बात शिक्षाविद् डी.एस. कोठारी द्वारा कही गयी। वर्तमान दौर में देखा जाऐ तो भारत की कक्षाओं में वैश्विक स्तर के विद्यार्थी तैयार हो रहे है। भारत जहां विविधता है। कई राज्य, कई भाषाऐं, कई जातियां उप जातियां, कई क्षेत्र है लेकिन सभी शिक्षा के सुत्र से बंध गए है। जनजातीय क्षेत्र में भी आज शिक्षा का विकास हुआ है। खासतौर पर देखा जाऐ तो आजादी के बाद बालिकाओं की शिक्षा पर लगातार कार्य करने से बालिकाओं की शिक्षा में सुधार हुआ। बालिका शिक्षा से समाज में शिक्षा का विस्तार हो पाया है।

उपलब्धि अभिप्रेरणा द्वारा बालिका शिक्षा में अधिक सुधार हो पाया है। ग्रामीण क्षेत्र में बालिका शिक्षा हेतु प्रोत्साहन, साईकिल वितरण ऐसे कई पहलू है। ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं में उपलब्धि अभिप्रेरणा का पता लगाने के लिए शोध कार्य किया गया है। तुलनात्मक अध्ययन से ही सटीक जानकारी पता चलती है। शोध की दृष्टि से पता चलता है कि समान प्रोत्साहन देने पर भी जनजातीय क्षेत्र की बालिकाओं में उपलब्धि अभिप्रेरणा का स्तर औसत से कम पाया गया।

शोध प्रश्न:

1. क्या जनजातीय क्षेत्र की बालिकाओं में उपलब्धि के प्रति अभिप्रेरणा होती है?
2. क्या ग्रामीण व शहरी क्षेत्र की बालिकाओं में उपलब्धि के प्रति अभिप्रेरणा समान पाई जाती है?

शोध उद्देश्य:

1. जनजातीय क्षेत्र की ग्रामीण एवं शहरी बालिकाओं की उपलब्धि अभिप्रेरणाओं का अध्ययन करना।
2. जनजातीय क्षेत्र की ग्रामीण एवं शहरी बालिकाओं की उपलब्धि अभिप्रेरणाओं में तुलना करना।

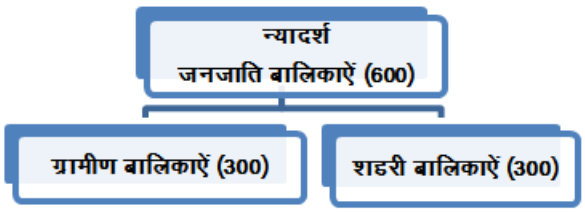
शोध परिकल्पना:

1. जनजातीय क्षेत्र की ग्रामीण व शहरी बालिकाओं की उपलब्धि अभिप्रेरणाओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध परिसीमन:

1. शोधकार्य को उदयपुर जिले तक सीमित रखा गया।
2. शोधकार्य को कक्षा 11 की बालिकाओं तक सीमित रखा गया।
3. शोधकार्य को उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों तक सीमित रखा गया।

न्यादर्श चयन : उपर्युक्त शोध हेतु यादृच्छिक प्रतिचयन विधि द्वारा न्यादर्श चयन किया गया जो इस प्रकार है :–



प्रस्तुत शोध हेतु शोधार्थी द्वारा उदयपुर जिले के जनजातीय क्षेत्र के उच्च

माध्यमिक स्तर के विद्यालयों से कुल 600 बालिकाओं का चयन किया जायेगा जिसमें से 300 बालिकाएँ ग्रामीण व 300 बालिकाएँ शहरी क्षेत्र से चयनित की गई।

शोध विधि, प्रविधि, उपकरण:

1 **शोध विधि:** इस शोध में ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं में उपलब्धि अभिप्रेरणाओं के तुलनात्मक अध्ययन हेतु शोधकर्त्ता ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

2 **शोध प्रविधि:** प्रस्तुत शोध से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण हेतु सांख्यिकी प्रविधियों में 'टी' परीक्षण का प्रयोग किया गया।

3 **शोध उपकरण:** प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए सर्वेक्षण द्वारा आंकडों के संकलन हेतु मानकीकृत उपकरण का प्रयोग किया गया है, जो इस प्रकार है:-

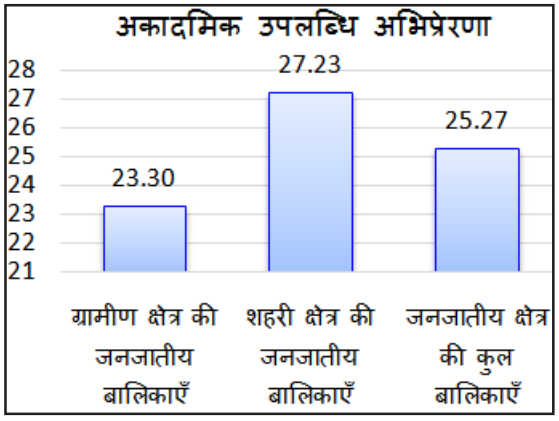
मानकीकृत उपकरण :-उपलब्धि अभिप्रेरणा प्रमापनी (टी. आर. शर्मा द्वारा निर्मित)

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या

उद्देश्य 1 :जनजातीय क्षेत्र की ग्रामीण एवं शहरी बालिकाओं की उपलब्धि अभिप्रेरणाओं का अध्ययन करना।

सारणी संख्या 1: अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा का स्तर

	अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा			
	मध्यमान	मानकविचलन	N	श्रेणी
ग्रामीण क्षेत्र की जनजातीय बालिकाएँ	23.30	3.66	300	औसत से कम
शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाएँ	27.23	4.66	300	औसत
जनजातीय क्षेत्र की कुल बालिकाएँ	25.27	4.62	600	औसत से कम



आरेख संख्या 1

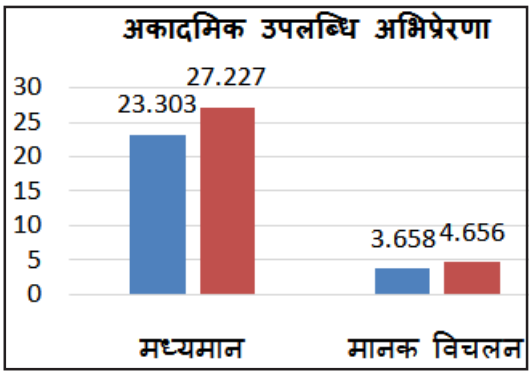
अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा का स्तर

विश्लेषण –अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं में अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा औसत से कम एवं शहरी क्षेत्र की बालिकाओं में औसत अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा पायी गई जबकि कुल बालिकाओं में औसत से कम अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा का स्तर पाया गया।

उद्देश्य सं. 2. जनजातीय क्षेत्र की ग्रामीण एवं शहरी बालिकाओं की उपलब्धि अभिप्रेरणाओं में तुलना करना।

सारणी संख्या 2: ग्रामीण क्षेत्र एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं की उपलब्धि अभिप्रेरणा के मध्यमानों के अन्तरों की सार्थकता की गणना

	अकादमिक उपलब्धिअभिप्रेरणा	
	ग्रामीण क्षेत्र की जनजातीय बालिकाएँ	शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाएँ
मध्यमान	23.303	27.227
मानक विचलन	3.658	4.656
N	300	300
मध्यमान की मानकत्रुटि	0.211	0.269
मध्यमान अन्तर	3.923	
'टी' मान	11.476	
P मान	0.000	



आरेख संख्या 2

ग्रामीण क्षेत्र एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं की उपलब्धि अभिप्रेरणा के मध्यमानों के अन्तरों की सार्थकता की गणना

विश्लेषण –अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं का मध्यमान 23.303 तथा शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं का मध्यमान 27.227 प्राप्त हुआ। 'टी' का मान 11.476 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है तात्पर्य है कि ग्रामीण क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं केअकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा में सार्थक अन्तर होता है, मध्यमान अंकों को देखने पर स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं की तुलना में शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओंमें अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा के अन्तर्गत अधिक होता है।

परिकल्पना सं. 1: जनजातीय क्षेत्र की ग्रामीण व शहरी बालिकाओं की उपलब्धि अभिप्रेरणाओं में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

निष्कर्ष :–अत: शून्य परिकल्पना के अस्वीकृति की अवधारणा सिद्ध होती है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं के उपलब्धि अभिप्रेरणा में कोई सार्थक अन्तर नहीं है, अस्वीकृत होती है। अत: कहा जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं के उपलब्धि अभिप्रेरणा के मध्यमानों में सार्थक अन्तर है।

शोध से प्राप्त निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राप्त दत्तों का विश्लेषण करने के पश्चात् पाया कि ग्रामीण क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं में अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा औसत से कम पाई गई। जबकि शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं में अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा औसत पाई गई।कुल जनजातीय बालिकाओं में अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा औसत से कम पाई गई।

निष्कर्ष यह पाया कि शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं में अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा ग्रामीण क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं से अधिक है।ग्रामीण क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं एवं शहरी क्षेत्र की जनजातीय बालिकाओं के अकादमिक उपलब्धि अभिप्रेरणा में सार्थक अन्तर पाया गया है। वास्तव में शहरी क्षेत्र में प्रतिस्प्रद्धा अधिक होने से बालिकाऐं एक–दूसरे से अधिक प्रभावित होती है और अपनी उपलब्धियों से भी हमेषा आगे बढ़ने का पूरा प्रयास करती है। शहरी क्षेत्र में संचार के साधन के साथ–साथ विज्ञापन की अधिकता होने से बालिकाऐं उपलब्धियों को प्राप्त करने के लिए प्रेरित होती हैं। साथ ही छोटी सी उपलब्धि अगली बडी उपलब्धि को प्राप्त करने में सहयोग प्रदान करती है। अत: शहरी बालिकाओं में उपलब्धि अभिप्रेरणा अधिक पायी गयी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पाण्डेय, डॉ. रामशकल (2014),'विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशास्त्री', श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
2. व्यास, डॉ. भगवतीलाल (2016),'समकालिन भारत और शिक्षा', राधा प्रकाशन प्रा. लि., आगरा।
3. कपिल, एच.के. (2007)'अनुसंधान विधियाँ', एच.पी. भार्गव बुक हाउस 4/230, कचहरी घाट, आगरा
4. कपिल, एच.के. (2010) 'सांख्यिकी के मूल तत्व', अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा–2
5. Berman, P. & McLaughlin, M. (1978) Implementation of education innovation. Educational Forum, 40 (3) 345-370

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

समकालीन समाज में विवाह विच्छेद के कारणों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

ऋतु गुर्जर* डॉ. लवली भाटी**

* शोध छात्रा (समाजशास्त्र) माणिक्यलाल वर्मा श्रमजीवी महाविद्यालय, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

** सहायक आचार्य (समाजशास्त्र) माणिक्यलाल वर्मा श्रमजीवी महाविद्यालय, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र उदयपुर जिले के तलाकशुदा पुरूषों एवं महिलाओं के विवाह विच्छेद के कारणों के अध्ययन पर आधारित है।भारतीय समाज में विवाह को एक महत्वपुर्ण संस्कार माना गया है। परिवार के संचालन में पति पत्नी की अह्म भूमिका रहती है। दोनों को समान रूप से अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहण करना होता है। कभी–कभी किसी ना किसी दाम्पत्य जीवन में कई ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो जाती है। जिससे विवाह विच्छेद की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। शोधार्थी द्वारा विवाह विच्छेद के प्रमुख कारणों का अध्ययन किया जिसमें वैवाहिक संवाद और विश्वास की कमी, घरेलू हिंसा, नशा और असम्मानजनक व्यवहार, आर्थिक दबाव और पारिवारिक हस्तक्षेप, असंगतता और व्यक्तिगत प्राथमिकताओं में अंतर, सामाजिक दबाव, तकनीकी हस्तक्षेप और परामर्श की विसंगतियां पाई गयी। वैवाहिक संबंधों में कई परिस्थितियों में विचारों और भावनाओं की खुलकर अभिव्यक्ति नहीं होती। जीवनसाथी पर विश्वास की कमी वैवाहिक असंतोष को जन्म देती है। संवाद की कमी के कारण गलतफहमियाँ उत्पन्न होती हैं। विश्वास और आपसी समझ का अभाव वैवाहिक जीवन को प्रभावित करता है। आत्म–सम्मान को ठेस पहुँचाने वाले व्यवहार वैवाहिक जीवन में दूरी का कारण बनते हैं। आर्थिक जिम्मेदारियां एवं फिजुलखर्ची को लेकर वैवाहिक मतभेद उत्पन्न होते हैं। शैक्षिक स्तर की भिन्नता एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की स्वच्छंद जीवनशैली भी कंही ना कंही विवाह विच्छेद के दरवाजे पर दस्तक देती है।

प्रस्तावना – हमारे सौरमण्डल में हमारी पृथ्वी पर जीवन संभव है। यहां प्रकृति ने जीवन यापन हेतु उपयुक्त पर्यावरण निर्मित किया गया है। यहां प्राकृतिक सम्पदा में जल, थल, वायु सभी है और इन सभी से उत्पन्न अपार वनस्पति उपलब्ध है। इस धरा पर विभिन्न जीव जन्तु पाये जाते है। पृथ्वी पर मानव सभ्यता ने विकास को कई उंचाईयों तक पहूंचाया है। मानव सभ्यता में पुरूष एवं महिला है। जो परिवार का निर्माण करते है। बहुत से परिवार मिलकर समाज कहलाता है। और विभिन्न समाज मिलकर एक सभ्यता का निर्माण करती है। ये सभ्यताऐं मिलकर किसी राष्ट्र को विकसित राष्ट्र के रूप में ले जाती है। पुरूष और महिला को जोड़ने के लिए विवाह एक प्रमुख संस्कार है जिसके द्वारा पुरूष और महिला अपने परिवार का निर्माण करते है एवं अपनी पीढ़ी को आगे बढ़ाते है।

विवाह महिलाओं और पुरूषों को पारिवारिक जीवन में प्रवेश करवाने की संस्था है। जिसे संस्था द्वारा मानव सामाजिक, सम्बन्धों का नियमन करता है उसे विवाह की संज्ञा दी जाती हैं। विवाह एक प्रजनन मूलक परिवार की स्थापना की समाज स्वीकृत विधि हैं। विवाह महिला और पुरूषो के बीच एक अनुबन्ध है जिसे सभी समाज धर्मो एवं कानुन द्वारा सर्वमान्य माना गया है। विवाह व्यक्तित्व एवं समाज का निर्माण का आधार है जिस पर समाज की बुनियाद टिकी हुई है।

विवाह सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था व एकता स्थापित करने वाली एक प्रमुख सार्वभौमिक संस्था है। विवाह जीवन को सुखद एवं प्रगति पद बनाने में सहायक है जबसे सृष्टि का निर्माण हुआ है तबसे ही महिला एंव पुरूष एक दुसरे पुरक माने गए है। दोनो एक सिक्के के दो पहलु है। वर्तमान परिवेश में विवाह मात्र औपचारिक बनकर रह गया है। इसके दुष्परिणाम धीरे–धीरे समाज में विवाह विच्छेक के रूप में परिदृष्य होने लगे है। प्रस्तुत शोध में विवाह विच्छेद के कारणों को जानने का प्रयास किया गया है।

शोध प्रश्न:

1. समाज में विवाह विच्छेद के प्रमुख कारण कौनसे है?
2. पुरूष और महिलाओं के वैवाहिक जीवन में किन समस्याओं के कारण विवाह विच्छेद की स्थिति उत्पन्न होती है।

शोध उद्देश्य:

1. समकालीन समाज में विवाह विच्छेद के प्रमुख कारणों का अध्ययन करना।
2. तलाकशुदा पुरुषों एवं तलाकशुदा महिलाओं के दृष्टिकोण में विवाह विच्छेद के प्रमुख कारणों की तुलना करना।

शोध परिकल्पना:

1. तलाकशुदा पुरुषों एवं तलाकशुदा महिलाओं के दृष्टिकोण में विवाह विच्छेद के प्रमुख कारणों में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

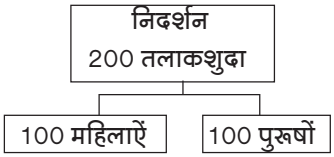
शोध परिसीमन:

1. प्रस्तुत शोध कार्य को उदयपुर जिले तक सीमित रखा गया।
2. प्रस्तुत शोध कार्य में उदयपुर जिले के विवाह विच्छेद हो चुके महिलाओं एवं पुरूषों को ही सम्मिलित किया गया।

न्यादर्श चयन :उपर्युक्त शोध हेतु सौद्देश्य प्रतिचयन विधि द्वारा न्यादर्श

चयन किया गया जो इस प्रकार है :-

प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा समकालीन समाज में विवाह विच्छेद के कारणों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन की पृष्ठभुमि का पता लगाने हेतु तलाकशुदाओं महिलाओं एवं पुरूषों का सौद्देश्य विधि से चयन किया गया। प्रस्तुत शोध हेतु शोधार्थी द्वारा न्यादर्श चयन हेतु उदयपुर जिले के विवाह विच्छेद हो चुके मामलों को ही सम्मिलित किया गया। 200 तलाकशुदा मामलों में 100 महिलाऐं और 100 पुरूषों को सम्मिलित किया गया।



शोध विधि, प्रविधि, उपकरण

1. **शोध विधि:** इस शोध में शोधकर्त्ता ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

2. **शोध प्रविधि:** प्रस्तुत शोध से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण हेतु सांख्यिकी प्रविधियों में 'टी' परीक्षण का प्रयोग किया गया।

3. **शोध उपकरण:** प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए सर्वेक्षण द्वारा आंकडों के संकलन हेतु स्वनिर्मित उपकरण का प्रयोग किया गया है, जो इस प्रकार है:-

स्वनिर्मित उपकरण :-विवाह-विच्छेद के कारणों की प्रश्नावली का उपयोग किया गया।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या

उद्देश्य 1 :समकालीन समाज में विवाह विच्छेद के प्रमुख कारणों का अध्ययन करना।

विश्लेषण -शोधार्थी द्वारा तलाकशुदा पुरुषों एवं महिलाओं के अभिमत के आधार पर विवाह विच्छेद के कारणों का अध्ययन किया गया है। विवाह विच्छेद के कारणों में कुल पांच क्षेत्रों जिसमे वैवाहिक संवाद और विश्वास की कमी, घरेलू हिंसा, नशा और असम्मानजनक व्यवहार, आर्थिक दबाव औरपारिवारिक हस्तक्षेप, असंगतता और व्यक्तिगत प्राथमिकताओं में अंतर, सामाजिक दबाव, तकनीकी हस्तक्षेप और परामर्श की अनुपस्थिति के आधार पर समंकों का विश्लेषण किया गया है।

सारणी संख्या 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

उद्देश्य सं. 2. : तलाकशुदा पुरुषों एवं तलाकशुदा महिलाओं के दृष्टिकोण में विवाह विच्छेद के प्रमुख कारणों की तुलना करना।

सारणी संख्या 2, आरेख संख्या 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

विश्लेषण - सारणी 2 को देखने पर यह स्पष्ट होता है तलाकशुदा पुरुषों काविवाह विच्छेद के कुल कारणों का मध्यमान96.85 एवं तलाकशुदा महिलाओं का मध्यमान 100.88 प्राप्त हुआ। मध्यमान अन्तर 4.03 तथा 'टी' मान 4.893 प्राप्त हुआ जो कि 0.05 स्तरपर सार्थक है। तात्पर्य है की तलाकशुदा पुरुषों एवं तलाकशुदा महिलाओं के दृष्टिकोण में 'विवाह विच्छेद के कुल कारणों' में सार्थक अन्तर है। (P =0.000, P<0.05)मध्यमान अंकों को देखने पर यह स्पष्ट होता है की तलाकशुदा महिलाएं तलाकशुदा पुरुषों के तुलना में विवाह विच्छेद के अधिक कारण मानती है। विवाह विच्छेद के कुल कारणों के विश्लेषण में यह देखा गया कि तलाकशुदा महिलाओं का कुल माध्य पुरुषों की तुलना में अधिक है, जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि महिलाएं विवाह विच्छेद के पीछे अधिक विविध और गहरे कारण अनुभव करती हैं। महिलाएं रिश्तों में अधिक भावनात्मक निवेश करती हैं और उन्हें सामाजिक, मानसिक, और व्यवहारिक दृष्टिकोण से अधिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। पुरुष अपेक्षाकृत सीमित कारणों पर ध्यान केंद्रित करते हैं जबकि महिलाएं अनेक परतों में विवाह की समस्याओं को देखती हैं, जिससे वे विवाह विच्छेद के लिए अधिक कारकों को उत्तरदायी मानती हैं।

परिकल्पना सं. 1. : तलाकशुदा पुरुषों एवं तलाकशुदा महिलाओं के दृष्टिकोण में विवाह विच्छेद के प्रमुख कारणों में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

निष्कर्ष-समंकों के विश्लेषण प्राप्त परिणामों के आधार परपरिकल्पना 'तलाकशुदा पुरुषों एवं तलाकशुदा महिलाओं के दृष्टिकोण में विवाह विच्छेद के प्रमुख कारणों में सार्थक अन्तर नहीं होता है'को अमान्य सिद्ध किया गया।

शोध से प्राप्त निष्कर्ष - प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राप्त दत्तों का विश्लेषण करने के पश्चात् निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए।

1. समकालीन समाज में विवाह विच्छेद के प्रमुख कारणों के अध्ययन करने पर प्रमुख कारण सामने आऐं जिसमें वैवाहिक संवाद और विश्वास की कमी, घरेलू हिंसा, नशा और असम्मानजनक व्यवहार, आर्थिक दबाव और पारिवारिक हस्तक्षेप, असंगतता और व्यक्तिगत प्राथमिकताओं में अंतर, सामाजिक दबाव, तकनीकी हस्तक्षेप और परामर्श की अनुपस्थिति पाई गयी। वैवाहिक संबंधों में विचारों और भावनाओं की खुलकर अभिव्यक्ति नहीं होती। जीवनसाथी पर विश्वास की कमी वैवाहिक असंतोष को जन्म देती है। संवाद की कमी के कारण गलतफहमियाँ उत्पन्न होती हैं।विश्वास और आपसी समझ का अभाव वैवाहिक जीवन को प्रभावित करता है। आत्म-सम्मान को ठेस पहुँचाने वाले व्यवहार वैवाहिक दूरी का कारण बनते हैं। आर्थिक जिम्मेदारियों को लेकर वैवाहिक मतभेद उत्पन्न होते हैं।

2. विवाह विच्छेद के प्रमुख कारणों का तलाकशुदा पुरुषों के दृष्टिकोण का अध्ययन करने पर कुल तलाकशुदा पुरुषों में से 'वैवाहिक संबंधों में विचारों और भावनाओं की खुलकर अभिव्यक्ति नहीं होती' के 26 प्रतिशत सहमत एवं 52 प्रतिशत अत्यधिक सहमत पाए गए।कुल तलाकशुदा पुरुषों में से जीवनसाथी पर विश्वास की कमी वैवाहिक असंतोष को जन्म देती है' के प्रति 23 प्रतिशत सहमत एवं 63 प्रतिशत अत्यधिक सहमत पाए गए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

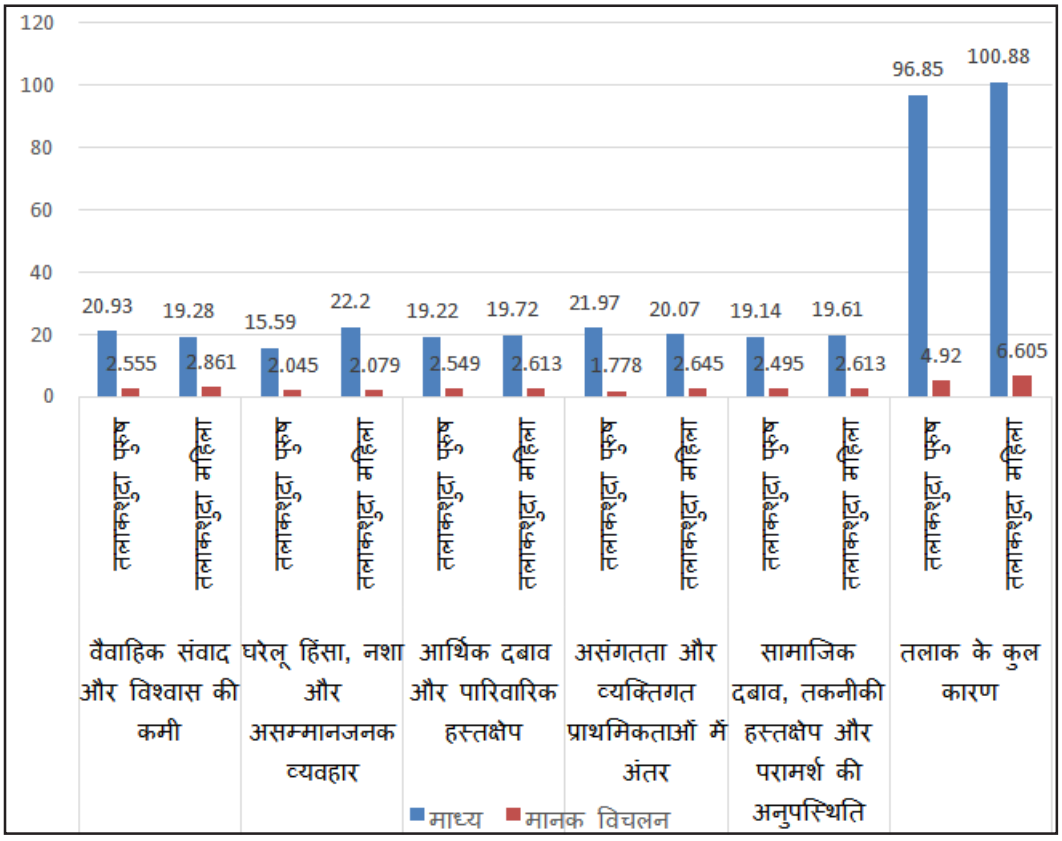
1. पाण्डेय, डॉ. रामशकल (2014),'विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशास्त्री', श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
2. व्यास, डॉ. भगवतीलाल (2016),'समकालिन भारत और शिक्षा', राधा प्रकाशन प्रा. लि., आगरा।
3. कपिल, एच.के. (2007)'अनुसंधान विधियाँ', एच.पी. भार्गव बुक हाउस 4/230, कचहरी घाट, आगरा
4. कपिल, एच.के. (2010) 'सांख्यिकी के मूल तत्व', अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा-2
5. Berman, P. & McLaughlin, M. (1978) Implementation of education innovation. Educational Forum, 40 (3) 345-370
6. हसन, गुल और मुहमूदयासीन, महमूद अमीर (2023) द्वारा विवाह विच्छेद और उसके कारण : केच (मकराना) का केस अध्ययन' वार्तालाप, अप्रेल जून खण्ड 18 अंक 2 PP 48-65
7. मुताहबोवन, अमीनेवा मंजुरा (2022) 'पारिवारिक विवाह विच्छेद के कारण और उसके निवारण के मुद्दे' जनरल ऑफ पॉजिटीव स्कूल साइकोलॉजी, 2022, Vol. 06, 11,1565-1572.

सारणी संख्या 1

विवाह विच्छेद के कारण	असहमत		उदासीन		सहमत		अत्यधिक सहमत	
	पु	म	पु	म	पु	म	पु	म
वैवाहिक संवाद और विश्वास कीकमी								
वैवाहिक संबंधों में विचारों और भावनाओं की खुलकर अभिव्यक्ति नहीं होती	21	14	1	16	26	26	52	44
जीवनसाथी पर विश्वास की कमी वैवाहिक असंतोष को जन्म देती है	14	19	0	15	23	18	63	48
संवाद की कमी के कारण गलतफहमियाँ उत्पन्न होती हैं	11	25	2	15	25	13	62	47
पारदर्शिता और खुलापन वैवाहिक जीवन में प्राय:नहीं पाया जाता है	27	26	1	11	19	25	53	38
विश्वासऔर आपसी समझ का अभाव वैवाहिक जीवन को प्रभावित करता है	22	23	1	17	19	21	58	39
घरेलू हिंसा, नशा और असम्मानजनक व्यवहार								
वैवाहिक जीवन में शारीरिक या मानसिक हिंसा जैसी स्थितियाँ उत्पन्न हो सकती हैं	16	2	51	19	22	13	11	66
नशे कीआदत वैवाहिक तनाव को बढ़ा देती है	19	1	59	16	17	19	5	64
गाली-गलौज और अपमानजनक व्यवहार वैवाहिक जीवनको नुकसान पहुँचाता है	24	3	58	12	15	21	3	64
आत्म-सम्मान को ठेस पहुँचाने वाले व्यवहार वैवाहिक दूरी का कारण बनते हैं	20	4	53	8	21	28	6	60
डर औरमानसिक तनाव जैसी स्थितियाँ विवाह में अस्थिरता लाती हैं	16	4	60	14	19	19	5	63
आर्थिक दबाव और पारिवारिक हस्तक्षेप								
आर्थिक जिम्मेदारियों को लेकर वैवाहिक मतभेद उत्पन्न होते हैं	19	21	20	16	18	22	43	41
पारिवारिक हस्तक्षेप वैवाहिक संबंधों में तनाव उत्पन्न करता है	24	21	10	16	23	16	43	47
धनसंबंधी विवाद वैवाहिक असहमति को जन्म देते हैं	21	19	17	12	24	18	38	51
वित्तीय निर्णयों में पारदर्शिता और आपसी सहमति का अभाव देखा जाता है	21	16	14	19	19	15	46	50
पारिवारिक पक्षपात वैवाहिक संतुलन को बिगाड़ताहै	19	18	22	13	16	20	43	49
असंगतता और व्यक्तिगत प्राथमिकताओं में अंतर								
जीवनशैलीऔर सोच में असंगतता वैवाहिक सामंजस्य को प्रभावित करती है	2	12	22	12	25	32	51	44
करियर कोअधिक प्राथमिकता देने से पारिवारिक संबंधों में दूरी आ सकती है	2	9	18	14	22	39	58	38
एक-दूसरेको पर्याप्त समय न देने से भावनात्मक जुड़ाव कम होता है	0	14	14	19	25	21	61	46
संतान कीपरवरिश को लेकर भिन्न दृष्टिकोण तनाव उत्पन्न कर सकता है	2	10	16	20	15	32	67	38
विवाह सेपूर्व एक-दूसरे को ठीक से न समझ पाना वैवाहिक समस्याओं का कारण बनता है	1	6	16	25	23	36	60	33
सामाजिक दबाव, तकनीकी हस्तक्षेप और परामर्श की अनुपस्थिति								
सामाजिक दबाव में लिए गए विवाह लंबे समय में संतोषजनक नहीं रहते	19	20	15	15	24	26	42	39
सोशल मीडिया और तकनीकी लत वैवाहिक संवाद को प्रभावित करती है	21	18	18	10	27	18	34	54
वैवाहिक समस्याओं पर समय रहते परामर्श न लेने से रिश्ते बिगड़ सकते हैं	19	24	17	16	17	20	47	40
सामाजिक बदनामी का भय वैवाहिक जीवन में अनावश्यक दबाव पैदा करता है	22	19	18	10	18	29	42	42
तकनीकी हस्तक्षेप के कारण व्यक्तिगत संवाद में कमी आ जाती है	18	13	21	20	25	22	36	45

सारणी संख्या 2: तलाकशुदा पुरुषों एवं तलाकशुदा महिलाओं की विवाह विच्छेद के कारणों के क्षेत्रों के आधार पर तुलना

विवाह विच्छेदके कारण		N	माध्य	मानक विचलन	माध्य अन्तर	'टी' मान	P मान
वैवाहिक संवाद और विश्वास की कमी	तलाकशुदा पुरुष	100	20.93	2.555	1.650	4.302	0.000
	तलाकशुदा महिला	100	19.28	2.861			
घरेलू हिंसा, नशा और असम्मानजनक व्यवहार	तलाकशुदा पुरुष	100	15.59	2.045	6.610	22.663	0.000
	तलाकशुदा महिला	100	22.20	2.079			
आर्थिक दबाव और पारिवारिक हस्तक्षेप	तलाकशुदा पुरुष	100	19.22	2.549	0.500	1.370	0.172
	तलाकशुदा महिला	100	19.72	2.613			
असंगतता और व्यक्तिगत प्राथमिकताओं में अंतर	तलाकशुदा पुरुष	100	21.97	1.778	1.900	5.962	0.000
	तलाकशुदा महिला	100	20.07	2.645			
सामाजिक दबाव, तकनीकी हस्तक्षेप और परामर्श की अनुपस्थिति	तलाकशुदा पुरुष	100	19.14	2.495	0.470	1.301	0.195
	तलाकशुदा महिला	100	19.61	2.613			
विवाह विच्छेद के कुल कारण	तलाकशुदा पुरुष	100	96.85	4.920	4.030	4.893	0.000
	तलाकशुदा महिला	100	100.88	6.605			



****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यों की कार्य कुशलता का अध्ययन

डॉ. नितिन मेनारिया* प्रो. सरोज गर्ग**

*उप प्रधानाचार्य, बाल विनय मन्दिर उच्च माध्यमिक विद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** प्राचार्य, लोकमान्य तिलक शिक्षाक प्रशिक्षाण महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र उदयपुर संभाग के शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यो की कार्य कुशलता के अध्ययन पर आधारित है। इस शोध पत्र के माध्यम से शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यो की कार्य कुशलता का अध्ययन किया गया। शिक्षा का प्रमुख संस्थान विद्यालय है जहाँ बालकों को बौद्धिक, नैतिक, राष्ट्रीय एवं वैश्विक कौशल का विकास किया जाता है। बालक शिक्षा के द्वारा ही जीवन में सफलता की सीढ़ी तक पहूँच पाता है।

शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष प्रधानाचार्य औसत से अधिक कार्य कुशलता के पाए गये। जबकि महिला प्रधानाचार्य अधिकतम कार्य कुशलता के पाए गये।शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यो की कार्य कुशलता में सार्थक अन्तर होता है, मध्यमान अंकों को देखने पर स्पष्ट होता है कि शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष प्रधानाचार्यों की तुलना में शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के महिला प्रधानाचार्य अधिक कार्य कुशल होते है।

प्रस्तावना – बालक जन्म से सीखना प्रारंभ करता है। सीखना ही शिक्षा कहलाती है। जिसके द्वारा बालक के व्यवहार में परिवर्तन होता है। बालक के शारीरिक एवं मानसिक विकास से उसे विकास के पथ पर लाया जा सकता है। विकास के पथ प्रदर्शन के लिए विद्यालय मार्गदर्शन की भूमिका में होता है। विद्यालय के द्वारा बालक में शारीरिक एवं मानसिक शक्तियों को पहचानने की दक्षता प्रदान होती है। विद्यालय बालक को बोद्धिक, शारीरिक, मानसिक, नैतिक, राष्ट्रीय एवं वैश्विक सन्दर्भ में तैयार करता है। विद्यालय में शैक्षिक एवं सहशैक्षिक गतिविधियों का कुशल संचालन विद्यालय के प्रधानाचार्य की कार्यकुशलता पर निर्भर करना है। विद्यालय में प्रधानाचार्य जहाज के कप्तान की तरह नेतृत्व करते हुए सभी कार्यो के मध्य समन्वय स्थापित करते है। छात्र, शिक्षाक एवं अभिभावकों में समन्वयन कर विद्यालय के विकास के साथ समाज का विकास करना अपना कर्तव्य समझते है। प्रधानाचार्य अपनी कार्यकुशलता से छात्र एवं शिक्षाकों को प्रेरणा से परिपूर्ण रखते हुए हमेशा आगे बढ़ने के लिए तैयार करते है। विद्यालय में शैक्षिक वातावरण बनाना, भौतिक एवं मानवीय संसाधनों का समूचित प्रयोग करते हूए गुणात्मक परिणाम प्राप्त करना प्रमुख लक्ष्य प्रधानाचार्य का होता है।

प्रधानाचार्य की कार्य कुशलता विद्यालय के प्रत्येक सदस्य की सफलता का मंत्र है। प्रधानाचार्य नियोजन, निर्णय, समूह कार्य, नवाचार एवं मूल्यांकन द्वारा अपनी कार्य कुशलता में वृद्धि करता है।

शोध प्रश्न:

1. शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्य किस प्रकार की कार्य कुशलता के होते है?
2. क्या शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्य की कार्य कुशलता में अन्तर होता है?

शोध उद्देश्य:

1. शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यों की कार्य कुशलता का पता लगाना।
2. शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यों की कार्यकुशलता में तुलना करना।

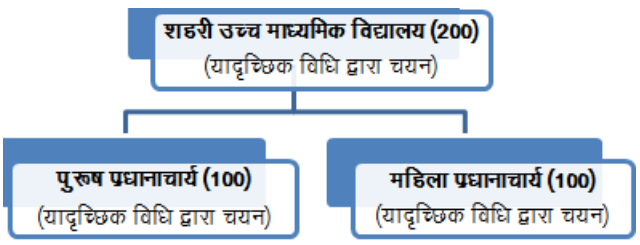
शोध परिकल्पना:

1. शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यों की कार्य कुशलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

शोध परिसीमन:

1 प्रस्तुत शोधकार्य उदयपुर संभाग के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र तक सीमित रखा गया।
2. प्रस्तुत शोध शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय तक सीमित रखा गया।

न्यादर्श चयन: उपर्युक्त शोध हेतु सोद्देश्य प्रतिचयन विधि द्वारा न्यादर्श चयन किया गया जो इस प्रकार है :–



शोधकर्त्ता द्वारा प्रत्येक विद्यालय से प्रधानाचार्य को सम्मिलित किया गया। इस प्रकार कुल 200 प्रधानाचार्यो का न्यादर्श के रूप में चयन किया

गया।

शोध विधि, प्रविधि, उपकरण:

1. **शोध विधि–** इस शोध में प्रधानाचार्यो की कार्य कुशलता के अध्ययन हेतु शोधकर्त्ता ने सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।
2. **शोध प्रविधि –** प्रस्तुत शोध से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण हेतु सांख्यिकी प्रविधियों में 'टी' परीक्षण का प्रयोग किया गया।
3. **शोध उपकरण –** प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए सर्वेक्षण द्वारा आंकडों के संकलन हेतु मानकीकृत उपकरण का प्रयोग किया गया है, जो इस प्रकार है:–

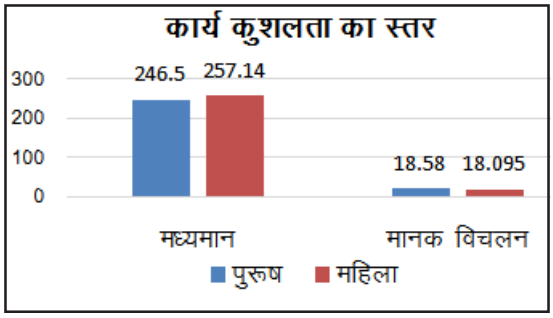
स्वनिर्मित उपकरण –कार्य कुशलता प्रमापनी

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या

उद्देश्य सं. 1 :शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यो की कार्य कुशलता का पता लगाना।

सारणी संख्या 1: कार्य कुशलता का स्तर

क्र.	समूह	मध्यमान	मानक विचलन	संख्या	कार्य कुशलता का स्तर
1	पुरूष	246.500	18.580	100	औसत से अधिक कार्य कुशलता
2	महिला	257.140	18.095	100	अधिकतम कार्य कुशलता



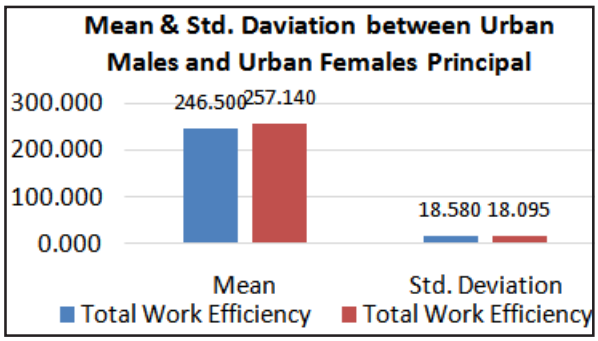
आरेख संख्या 1

कार्य कुशलता का स्तर

विश्लेषण –शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष प्रधानाचार्य औसत से अधिक कार्य कुशलता के पाए गये।जबकि महिला प्रधानाचार्य अधिकतम कार्य कुशलता के पाए गये।

उद्देश्य सं. 2. : शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यो की कार्य कुशलता में तुलना करना।

सारणी संख्या 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)



आरेख संख्या 2

शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिलाप्रधानाचार्यो की कार्य कुशलता के मध्यमानों एवं उनकी मानक त्रुटियों का प्रदर्शन

विश्लेषण :–कार्य कुशलता हेतु शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष प्रधानाचार्यो का मध्यमान 246.500 तथा शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के महिला प्रधानाचार्यो का मध्यमान 257.140 प्राप्त हुआ। 'टी' का मान 4.103 प्राप्त हुआ जो कि 0.05 स्तर पर सार्थक है तात्पर्य है कि शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यो की कार्य कुशलता में सार्थक अन्तर होता है, मध्यमान अंकों को देखने पर स्पष्ट होता है कि शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष प्रधानाचार्यो की तुलना में शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के महिला प्रधानाचार्य अधिक कार्य कुशल होते है।

परिकल्पना सं. 1. : शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यो की कार्य कुशलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

निष्कर्ष – अत: शून्य परिकल्पना के अस्वीकृति की अवधारणा सिद्ध होती है। इसलिएशहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यो की कार्य कुशलता में कोई सार्थक अंतर नहीं है, अस्वीकृत होती है। अत: कहा जा सकता है कि शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यो की कार्य कुशलता के मध्यमानों में सार्थक अन्तर है।

शोध से प्राप्त निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राप्त दत्तों का विश्लेषण करने के पश्चात् निम्नलिखित निष्कर्ष सामने आए :–

1. शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष प्रधानाचार्य औसत से अधिक कार्य कुशलता के पाए गये। जबकि महिला प्रधानाचार्य अधिकतम कार्य कुशलता के पाए गये।
2. मध्यान की सार्थकता देखने पर दोनों में सार्थक अन्तर पाया गया शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष प्रधानाचार्यो की तुलना में शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के महिला प्रधानाचार्य अधिक कार्य कुशल होते है।
3. शहरी क्षेत्र के महिला प्रधानाचार्य नियोजन क्षमता, निर्णय क्षमता, नवाचार क्षमता में अग्रणी हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पाण्डेय, डॉ. रामशकल (2014),'विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशास्त्री', श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
2. व्यास, डॉ. भगवतीलाल (2016),'समकालिन भारत और शिक्षा', राधा प्रकाशन प्रा. लि., आगरा।
3. कपिल, एच.के. (2007)'अनुसंधान विधियाँ', एच.पी. भार्गव बुक हाउस 4/230, कचहरी घाट, आगरा
4. कपिल, एच.के. (2010) 'सांख्यिकी के मूल तत्व', अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा–2
5. शर्मा, आर.ए. (2007) 'शिक्षा प्रशासन एवं प्रबंधन', आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
6. सक्सेना, एन.आर., मोहन्ती, आर. के. मिश्रा, वी.के. (2008) 'प्रधानाध्यापक शिक्षा',आर. लाल बुक डिपो, मेरठ
7. Berman, P. & McLaughlin, M. (1978) Implementation of education innovation. Educational Forum, 40 (3) 345-

370
8. Badgujar Preetikal1 and Joshi Preeti (2013) A Descriptive Study on the Challenges faced by a School Principals, International Research Journal of Social Sciences ISSN 2319-3565 Vol. 2(5), 39-40.
9. Lethiwood, K. (1996). School Restructuring, transformational leadership and school improvement. Greenwhich, CT : JAI.
10. Witziers B., Bosker R.J. and Kruger M.L. (2003) Educational leadership and student achievement: The elusive search for an association, Educational administration quarterly, 39(3), 398-425.

सारणी संख्या 2: शहरी क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालय के पुरूष एवं महिला प्रधानाचार्यो की कार्य कुशलता के मध्यमानों के अन्तरों की सार्थकता की गणना

Type Location		N	Mean	Std. Deviation	Std. Error Mean	Mean Difference	t'	p value
Total Work Efficiency	Urban Males	100	246.500	18.580	1.858	-10.640	4.103	0.000
	Urban Females	100	257.140	18.095	1.810			

स्वतंत्रता के अंश df=N1+N2-2=(100+100-2=198)

विश्वास का स्तर99%

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Awakening the Mind: An Introduction to Meditation

Dr. Mamta *

*Associate Professor (Physical Education) Ismail National Mahila P.G. College, Meerut (U.P.) INDIA

Introduction - Meditation is the art of training one's consciousness, a timeless practice that has been part of many spiritual and religious traditions across cultures and centuries. Though it may have ancient roots, meditation holds great relevance today. Whether practiced in silence by monks or integrated into busy modern lives, meditation offers a path to inner peace and mental clarity.

At its core, meditation is an inward journey—an effort to still the mind, to observe thoughts and emotions, and ultimately to develop a deeper connection with the Self. Regular meditation can help manage stress, anxiety, depression, and even physical health issues like high blood pressure. It allows us to pause in our hectic routines, to breathe, reflect, and center ourselves.

This essay explores how meditation positively affects daily life, mental health, and our overall sense of well-being. It also examines how generating emotional states—such as love, compassion, or forgiveness—through meditation can transform our responses to challenges. With consistent practice, meditation can truly reshape how we experience the world, leading to a more peaceful, energized, and aware existence.

Keywords – Mindfulness, Awareness, Consciousness, Inner peace.

The Nature Of Meditation: Meditation is not just about closing your eyes and sitting still. It's about becoming aware—of your breath, your thoughts, your sensations, your emotions. It can take many forms: focusing on the breath, observing bodily sensations, or cultivating feelings like compassion and empathy. Regardless of the form, all meditation techniques aim to bring the mind into a state of restful alertness.

When practiced regularly, meditation helps create a deep inner stillness. It allows the conscious mind to settle inward, releasing tension and bringing about a profound sense of rest—often deeper than even the deepest sleep. This inner silence nurtures both body and soul.

The human mind is incredibly complex. It holds both strength and sensitivity. Through meditation, we can tap into the more delicate, peaceful aspects of our nature while learning to manage the more reactive or agitated parts. It helps us shift from states of anger, resistance, or restlessness to calmness and clarity. With regular practice, this shift begins to happen effortlessly.

Benefits Of Meditation: Meditation offers countless benefits, touching every aspect of our being—physical, mental, and emotional. It enhances not only our inner state but also how we relate to the world around us.

1. Meditation Helps Release and Prevent Stress: One of the most significant benefits of meditation is its ability to reduce stress. In two powerful ways, it helps us live more peacefully:

1. It prevents new stress from entering our system.
2. It helps release old, accumulated stress.
3. These effects happen simultaneously, creating a lighter, more balanced state of mind.

2. Physical Benefits of Meditation: On a physical level, meditation has a calming effect on the body. With consistent practice:

1. Blood pressure levels drop.
2. Blood lactate levels decrease, reducing anxiety attacks.
3. Tension-related pain like headaches, ulcers, insomnia, and muscle or joint discomfort decreases.
4. Serotonin levels increase, improving mood and emotional balance.
5. The immune system strengthens.
6. Energy levels rise as the body gets recharged from within.
7. Every cell in the body becomes infused with more prana—vital energy—bringing a sense of vitality, joy, and enthusiasm.

3. Mental and Emotional Benefits of Meditation: Meditation also transforms the mind. It brings our brainwave patterns into a healing and relaxing Alpha state, which calms the nervous system and promotes clarity.

With regular practice:

1. Anxiety fades.
2. Emotional stability grows.
3. Creativity flows more freely.
4. Happiness becomes more constant.
5. Intuition strengthens.
6. Mental clarity and peace increase.

7. Everyday problems feel more manageable.

Meditation sharpens the mind through focused awareness while also expanding it through relaxation. A sharp mind without inner calm can lead to frustration, while expansion without clarity may lead to inaction. True meditation creates a balance—sharpening and expanding the mind at the same time, bringing about harmony and effectiveness in life.

Ultimately, meditation teaches us that our inner attitude shapes our happiness. It empowers us to stop being at the mercy of outside situations and start living from within.

Conclusion: In a world filled with noise, diversity, and constant challenges, staying undisturbed and centered can seem difficult. But with regular meditation, inner peace becomes not only possible but natural. Over time, you'll notice that you're calmer during stressful moments, more aware in your daily actions, and more compassionate toward others.

Meditation is not about trying too hard—it's about letting go. Let go of the effort to control thoughts, to focus forcefully, or to achieve something. Simply sit, breathe, and observe. The rest will unfold on its own.

In this way, meditation becomes more than a technique. It becomes a way of life—a gentle yet powerful path toward inner transformation and lasting well-being.

References:-

1. Davidson, Richard J., and Sharon Begley. The Emotional Life of Your Brain: How Its Unique Patterns Affect the Way You Think, Feel, and Live—and How You Can Change Them. Penguin Books, 2012.
2. Goleman, Daniel, and Richard J. Davidson. Altered Traits: Science Reveals How Meditation Changes Your Mind, Brain, and Body. Avery, 2017.
3. Goenka, S. N. The Art of Living: Vipassana Meditation as Taught by S. N. Goenka. Pariyatti Press, 2000.
4. Kabat-Zinn, Jon. Wherever You Go, There You Are: Mindfulness Meditation in Everyday Life. Hyperion, 1994.
5. Lazar, Sara W., et al. "Meditation Experience Is Associated with Increased Cortical Thickness." NeuroReport, vol. 16, no. 17, 2005, pp. 1893–1897.
6. Rao, Murali Krishna. "Meditation: A Simple, Fast Way to Reduce Stress." Indian Journal of Psychiatry, vol. 54, no. 4, 2012, pp. 346–348.
7. Shapiro, Shauna L., and Linda E. Carlson. The Art and Science of Mindfulness: Integrating Mindfulness into Psychology and the Helping Professions. American Psychological Association, 2009.
8. Walsh, Roger, and Shauna L. Shapiro. "The Meeting of Meditative Disciplines and Western Psychology: A Mutually Enriching Dialogue." American Psychologist, vol. 61, no. 3, 2006, pp. 227–239.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

कामकाजी महिलाओं के बीच मानसिक स्वास्थ्य और कार्य पारिवारिक संघर्ष पर एक अध्ययन

डॉ. विनेता*

* विभागाध्यक्षा (मनोविज्ञान) इस्माईल नेशनल महिला पी. जी. कॉलेज, मेरठ (उ.प्र.) भारत

शोध सारांश – इस अध्ययन का उद्देश्य कामकाजी महिलाओं के बीच मानसिक स्वास्थ्य और कार्य-परिवार के संघर्ष के बीच संबंधों का पता लगाना है। आज की दुनिया की तेज गति के साथ, महिलाएं कई भूमिकाओं का सामना करती हैं: पारिवारिक दायित्वों के साथ पेशेवर जिम्मेदारियों को संतुलित करना जो तनाव के स्तर को बढ़ाते हैं और मानसिक स्वास्थ्य के लिए खतरा पैदा करते हैं। यह पत्र इस बात की जांच करता है कि काम-परिवार का संघर्ष महिलाओं की मानसिक भलाई और समस्या में योगदान करने वाले अंतर्निहित कारकों को कैसे प्रभावित करता है। यह चिंता, अवसाद और बर्नआउट जैसे मनोवैज्ञानिक प्रभावों को इंगित करता है जो कि काम और पारिवारिक जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए निरंतर दबाव से उत्पन्न होता है। पेपर में इस संघर्ष से निपटने के लिए महिलाओं का उपयोग करने वाली रणनीतियों का उपयोग करने के साथ -साथ संगठनात्मक समर्थन, सामाजिक अपेक्षाओं और व्यक्तिगत लचीलापन की भूमिका पर भी चर्चा की गई है। यह पेपर मानसिक स्वास्थ्य और कार्य-परिवार संतुलन के मुद्दों को कम करने के माध्यम से कामकाजी महिलाओं के समग्र स्वास्थ्य में सुधार के संबंध में इन गतिशीलता के प्रभाव को समझने का एक प्रयास है।

शब्द कुंजी – मानसिक स्वास्थ्य, कार्य-परिवार संघर्ष, कामकाजी महिलाएं, तनाव, नकल तंत्र।

प्रस्तावना – इससे आधुनिक समाज में रहने वाली कामकाजी महिलाओं में काम पर या पारिवारिक दायित्वों के बीच संघर्ष होता है। उनके कामकाजी और परिवार के जीवन में आम तौर पर एक बढ़ी हुई टकराव होता है, क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र तनाव और भावनात्मक तनाव में वृद्धि के साथ अपनी अपेक्षाओं को बढ़ाता रहता है, जो एक महिला में मानसिक स्वास्थ्य को बिगड़ता है।दूसरों के बीच चिंता, अवसाद और बर्नआउट जैसे मुद्दों को हमेशा उन महिलाओं में देखा जाता है जो अपनी भूमिकाओं को प्रभावी ढंग से बनाए नहीं रख सकते हैं।

यह केवल व्यक्ति की चिंता नहीं है, संगठनात्मक उत्पादकता और सामाजिक कल्याण भी प्रभावित होते हैं। कार्य संघर्षों के परिणामस्वरूप भावनात्मक गड़बड़ी होती है और इस प्रकार नौकरी से कम संतुष्टि, प्रदर्शन में कमी और पारिवारिक जीवन को कम कर सकता है। इसलिए, कार्य-परिवार के संघर्ष के बारे में जागरूकता क्योंकि यह मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है, कार्यस्थलों और परिवारों के भीतर सहायक सेटिंग्स बनाने में जागरूकता पैदा करता है।

यह पत्र यह पता लगाने का इरादा रखता है कि काम-परिवार का संघर्ष कामकाजी महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य को कैसे प्रभावित करता है, मनोवैज्ञानिक प्रभाव क्या होते हैं, और इस तरह की चुनौती से निपटने की प्रक्रिया में महिलाओं द्वारा क्या नकल तंत्र लिया जाता है। इस मुद्दे की महत्वपूर्ण प्रकृति कार्य-परिवार के संघर्ष को कम करने और कार्यबल में महिलाओं की मानसिक भलाई में सुधार के लिए रणनीतियों के विकास में योगदान देने में अध्ययन के प्रयासों के लिए कहता है।

साहित्य की समीक्षा

कार्य-परिवार संघर्ष संगठनात्मक व्यवहार, मनोविज्ञान और लिंग अध्ययन के क्षेत्र के भीतर व्यापक अनुसंधान का एक क्षेत्र है। कई शोधकर्ताओं ने इसे विशेष रूप से कामकाजी महिलाओं में मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने के लिए पाया है, जिन्होंने अपनी पारिवारिक प्रतिबद्धताओं के साथ श्रम शक्ति में संलग्न होना शुरू कर दिया है। यह माना गया है कि काम-परिवार का संघर्ष कामकाजी महिलाओं के बीच तनाव, चिंता, अवसाद और सामान्य गरीब मानसिक स्वास्थ्य का एक महत्वपूर्ण स्रोत है।

1. **कार्य-परिवार संघर्ष और मानसिक स्वास्थ्य:** ग्रीनहॉस और बेटेल (1985) ने काम-परिवार के संघर्ष को पारिवारिक जिम्मेदारियों या इसके विपरीत काम पर दबाव के हस्तक्षेप के रूप में परिभाषित किया। अनुसंधान साक्ष्य इंगित करते हैं कि महिलाओं के पास काम और पारिवारिक जीवन दोनों में अपनी सामाजिक अपेक्षाओं के कारण पुरुषों की तुलना में काम-परिवार के संघर्ष के अधिक स्तर होते हैं, क्रमश: (क्लार्क, 2000)। इस संघर्ष के परिणामस्वरूप मानसिक स्वास्थ्य समस्याएं जैसे कि बर्नआउट, चिंता और अवसाद (एलन एट अल।, 2000)। कामकाजी महिलाएं अक्सर अभिभूत महसूस करती हैं, क्योंकि वे दोनों भूमिकाओं की अपेक्षाओं को पूरा करने की कोशिश करते हैं, जिससे भावनात्मक तनाव और असंतोष बढ़ता है।

2. **मनोवैज्ञानिक कल्याण पर कार्य-परिवार के संघर्ष प्रभाव:** कई अध्ययनों ने कार्य-परिवार के संघर्ष और बिगड़ने वाले मनोवैज्ञानिक कल्याण के बीच एक सीधा संबंध प्रकट किया। उदाहरण के लिए, एक फ्रोन स्टडी (2003) ने पाया कि काम-परिवार के संघर्ष से भावनात्मक थकावट, अवसाद और अधिक सामान्य मनोवैज्ञानिक संकट जैसे हानिकारक

मनोवैज्ञानिक परिणाम हो सकते हैं। दूसरी ओर, कार्य-जीवन संतुलन से संबंधित यह संघर्ष भावनात्मक थकावट के रूप में नकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य परिणाम पैदा करता है, जो नौकरी पर संज्ञानात्मक क्षमताओं और प्रदर्शन से समझौता करता है (मास्लाच एट अल।, 2001)।

3. कार्य-परिवार संघर्ष में योगदान देने वाले कारक: कार्य-परिवार संघर्ष अक्सर कुछ कारकों जैसे कि लंबे समय तक काम करना, नौकरी की उच्च मांग, काम के लचीले कार्यक्रम और परिवार के समर्थन की कमी (वॉयडानॉफ, 2005) के कारण बढ़ जाता है। छोटे बच्चों या देखभाल की जिम्मेदारियों वाली महिलाओं को परिवार की देखभाल के लिए आवश्यक समय और ऊर्जा के कारण अधिक महत्वपूर्ण कार्य-परिवार संघर्ष का अनुभव होता है (बार्नेट और हाइड, 2001)। काम या घर पर सामाजिक समर्थन की कमी भी काम और पारिवारिक जिम्मेदारियों के बीच फँसे होने की भावना को बढ़ा सकती है, जिससे तनाव का स्तर बढ़ जाता है (परसुरामन एट अल., 1996)।

4. मुकाबला करने के तरीके: महिलाएँ कार्य-परिवार संघर्ष से निपटने के लिए विभिन्न मुकाबला करने के तरीकों का उपयोग करती हैं। इनमें समय प्रबंधन तकनीक, कार्यों का प्रतिनिधिमंडल और परिवार और दोस्तों से भावनात्मक समर्थन प्राप्त करना शामिल है (ब्रू एट अल., 2005)। इसके अलावा, कार्यस्थल में लचीलापन और सहायक नीतियां जैसे कि माता-पिता की छुट्टी और लचीले काम के घंटे मानसिक स्वास्थ्य पर काम-परिवार के संघर्ष के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने के लिए सिद्ध हुए हैं (कोसेक एट अल., 2006)। हालांकि, इन रणनीतियों की प्रभावशीलता व्यक्ति की संसाधनों तक पहुँचने की क्षमता और कार्यस्थल और परिवार से समर्थन के स्तर पर निर्भर करती है।

5. हस्तक्षेप और संगठनात्मक समर्थन: शोध से संकेत मिलता है कि कार्य-परिवार संघर्ष को कम करने में संगठनात्मक हस्तक्षेप होना चाहिए। उदाहरण के लिए, केलीहर और एंडरसन (2010) का तर्क है कि संगठनों को अधिक लचीली कार्य नीतियां विकसित करनी चाहिए जो व्यक्तियों को उनके काम और पारिवारिक जीवन को संतुलित करने में मदद करें। इसलिए, बेहतर मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ावा मिलता है। साथ ही, कार्यस्थल के भीतर किसी प्रकार का मानसिक स्वास्थ्य समर्थन प्रदान करना, जैसे कि परामर्श सेवाएँ, महिलाओं के लिए भी मददगार हो सकती हैं जब उन्हें अपने काम और पारिवारिक जीवन को संतुलित करने के दबाव से निपटना पड़ता है।

विधि: इस अध्ययन का उद्देश्य कामकाजी महिलाओं के बीच मानसिक स्वास्थ्य और कार्य-परिवार संघर्ष के बीच संबंधों की जांच करना है। शोध गुणात्मक और मात्रात्मक दृष्टिकोणों के संयोजन का उपयोग करता है ताकि व्यापक रूप से समझा जा सके कि कार्य-परिवार संघर्ष मानसिक स्वास्थ्य और कामकाजी महिलाओं द्वारा उपयोग की जाने वाली मुकाबला रणनीतियों को कैसे प्रभावित करता है। विधि अनुभाग अनुसंधान डिजाइन, प्रतिभागियों, डेटा संग्रह प्रक्रिया और उपयोग की गई डेटा विश्लेषण तकनीकों का वर्णन करता है।

1. शोध का डिजाइन: यह कार्य संघर्ष और परिवार और मनोवैज्ञानिक परिणामों के बीच किसी भी संबंध की जाँच करने के लिए वर्णनात्मक-सहसंबंधी शोध का चयन करता है। इस अध्ययन के भीतर क्रॉस-सेक्शन, समय के एक निश्चित क्षण में कामकाजी महिलाओं से प्रश्नावली डेटा के माध्यम से खोज करता है।

2. प्रतिभागी: अध्ययन के नमूने में स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा, व्यवसाय और सरकार सहित विभिन्न क्षेत्रों की 200 कामकाजी महिलाएँ शामिल हैं। विभिन्न उद्योगों में महिलाओं के विविध प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित करने के लिए प्रतिभागियों को एक स्तरीकृत यादृच्छिक नमूनाकरण तकनीक के माध्यम से चुना जाता है। भागीदारी के लिए समावेशन मानदंड इस प्रकार हैं: 25 से 50 वर्ष की आयु की महिला कर्मचारी। कम से कम एक बच्चे औरध्या परिवार की देखभाल की जिम्मेदारियों वाली महिलाएँ। कम से कम एक वर्ष के लिए पूर्णकालिक रोजगार।

अध्ययन में भाग लेने के लिए तत्परता।

3. डेटा संग्रह: डेटा दो प्रमुख उपकरणों के माध्यम से एकत्र किया जाता है:

कार्य-परिवार संघर्ष पैमाना (WFCS): कार्लसन एट अल. (2000) ने प्रतिभागियों द्वारा अपने काम और पारिवारिक भूमिकाओं के बीच अनुभव किए जा रहे संघर्ष के स्तर को मापने के लिए कार्य-परिवार संघर्ष पैमाना विकसित किया है। इस पैमाने में 18 आइटम शामिल हैं, जिन्हें दो उप-पैमानों में विभाजित किया गया है: कार्य-से-परिवार संघर्ष और परिवार-से-कार्य संघर्ष। प्रतिभागियों को अपने अनुभवों को 5-बिंदु लिकर्ट पैमाने पर 'पूरी तरह से असहमत' से लेकर 'पूरी तरह से सहमत' तक रेट करने के लिए कहा जाता है।

मानसिक स्वास्थ्य सूची (MHI): 1983 में वीट और वेयर द्वारा विकसित मानसिक स्वास्थ्य सूची प्रतिभागियों के मानसिक स्वास्थ्य का आकलन करती है। इस सूची में 38 आइटम शामिल हैं, जो मानसिक स्वास्थ्य के विभिन्न पहलुओं को मापते हैं, जैसे कि चिंता, अवसाद, भावनात्मक कल्याण और सामान्य मनोवैज्ञानिक संकट। प्रतिक्रियाओं को 1 (बिल्कुल नहीं) से 5 (हर समय) तक के लिकरट स्केल पर मापा जाता है।

जनसांख्यिकीय प्रश्नावली: आयु, वैवाहिक स्थिति, बच्चों की संख्या, कार्य अनुभव और सहायता प्रणाली (परिवार और कार्य-संबंधी दोनों) जैसी जानकारी एकत्र करने के लिए एक जनसांख्यिकीय प्रश्नावली भी शामिल की जाती है।

4. प्रक्रिया: प्रतिभागियों को उनके कार्यस्थलों के माध्यम से एक्सेस किया जाता है और अध्ययन में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया जाता है। उन्हें अध्ययन के उद्देश्य, गोपनीयता और इसमें शामिल नैतिकता के मुद्दों को समझाते हुए एक सूचित सहमति फॉर्म दिया जाता है। सहमति प्राप्त करने के बाद, वे एक शांत और निजी क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से प्रश्नावली पूरी करते हैं। प्रश्नावली भरने में लगभग 30-40 मिनट का समय लगेगा।

5. डेटा विश्लेषण: प्राप्त डेटा का वर्णनात्मक और अनुमानात्मक सांख्यिकीय विश्लेषण का उपयोग करके विश्लेषण किया जाएगा:

वर्णनात्मक सांख्यिकी: प्रतिभागियों की जनसांख्यिकीय विशेषताओं और उनके कार्य-परिवार संघर्ष और मानसिक स्वास्थ्य के स्तरों का अवलोकन प्रदान करने के लिए माध्य, मानक विचलन और आवृत्ति वितरण की गणना की जाती है।

पियर्सन सहसंबंध विश्लेषण: पियर्सन सहसंबंध विश्लेषण का उपयोग कार्य-परिवार संघर्ष और मानसिक स्वास्थ्य के बीच संबंधों की जांच करने के लिए किया जाता है। यह विधि यह निर्धारित करने में मदद करती है कि क्या दोनों चरों के बीच कोई महत्वपूर्ण संबंध मौजूद है।

मल्टीपल रिग्रेशन विश्लेषण: मानसिक स्वास्थ्य पर कार्य-परिवार संघर्ष के प्रभाव की भविष्यवाणी करने के लिए एक मल्टीपल रिग्रेशन विश्लेषण

किया जाता है, जिसमें संभावित भ्रमित करने वाले चर जैसे कि उम्र, वैवाहिक स्थिति और बच्चों की संख्या को ध्यान में रखा जाता है।

गुणात्मक विश्लेषण: कार्य-परिवार संघर्ष के साथ मुकाबला करने की रणनीतियों और व्यक्तिगत अनुभवों के बारे में प्रतिभागियों की खुली प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण विषयगत विश्लेषण का उपयोग करके किया जाता है ताकि सामान्य विषयों और पैटर्न की पहचान की जा सके।

6. नैतिकता: यह सुनिश्चित करने के लिए कि प्रतिभागियों की गोपनीयता और गुमनामी है, अध्ययन को नैतिक मानकों के साथ संरेखित किया गया है। सभी प्रतिभागियों को सूचित किया जाता है कि उनकी भागीदारी नि:शुल्क है, और वे बिना किसी दंड के किसी भी समय खुद को वापस ले सकते हैं। डेटा को सुरक्षित हिरासत में रखा जाता है, और परिणामों की रिपोर्टिंग के लिए व्यक्तिगत पहचानकर्ताओं का उपयोग नहीं किया जाता है।

मिश्रित-विधि अनुसंधान दृष्टिकोण मानसिक स्वास्थ्य और कार्य-परिवार संघर्ष के बीच जटिल, जटिल संबंधों की व्यापक जांच की अनुमति देगा और मुकाबला करने के तंत्र और संगठनात्मक समर्थन में अंतर्दृष्टि प्रदान करेगा।

परिणाम: एकत्रित आंकड़ों के विश्लेषण से कामकाजी महिलाओं के बीच मानसिक स्वास्थ्य और कार्य-परिवार संघर्ष के बीच संबंधों के बारे में कई महत्वपूर्ण निष्कर्ष सामने आए। वर्णनात्मक और अनुमानात्मक सांख्यिकीय विश्लेषणों के परिणाम, साथ ही खुले अंत वाले उत्तरों से गुणात्मक अंतर्दृष्टि, कामकाजी महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर कार्य-परिवार संघर्ष के प्रभाव की व्यापक समझ प्रदान करती है।

1. पारिवारिक संघर्ष और मानसिक स्वास्थ्य: शोधकर्ता कार्य-परिवार संघर्ष और मानसिक स्वास्थ्य संकट के बीच एक महत्वपूर्ण सकारात्मक संबंध स्थापित करने में सक्षम थे। इसके समर्थन में, लेखक ग्रीनहॉस और बेउटेल (1985) ने बताया कि कार्य-परिवार संघर्ष तब होता है जब कार्य और परिवार की जरूरतें एक-दूसरे के साथ सीधे संघर्ष में आ जाती हैं और तनाव, चिंता और कल्याण में गिरावट का कारण बनती हैं। वर्तमान अध्ययन से पता चला है कि काम की माँगों में जितनी अधिक वृद्धि हुई, प्रतिभागियों के लिए रिपोर्ट की गई चिंता, तनाव और अवसाद के लक्षण उतने ही अधिक थे, जिससे मानसिक स्वास्थ्य के साथ कार्य-परिवार संघर्ष का विपरीत संबंध इंगित होता है। इसलिए, यह फ्रोन (2003) के पिछले शोध निष्कर्षों के सीधे अनुरूप है, जहाँ कार्य-से-परिवार संघर्ष संकट, थकान और यहाँ तक कि बर्नआउट से संबंधित है।

2. परिवार-से-कार्य संघर्ष: परिवार-से-कार्य संघर्ष में कार्य-से-परिवार संघर्ष की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण परिणाम होने की प्रवृत्ति थी। एलन एट अल. (2000) ने भी यही निष्कर्ष निकाला, जहां पारिवारिक मांगें अक्सर काम की मांग से टकराती हैं, जिससे तनाव और मनोवैज्ञानिक तनाव का स्तर बढ़ जाता है। यह निष्कर्ष विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि यह कामकाजी महिलाओं के सामने आने वाली अनूठी चुनौतियों को उजागर करता है, जो अक्सर सीमित समर्थन के साथ पेशेवर और पारिवारिक भूमिकाओं को संतुलित करती हैं।

3. मुकाबला करने की रणनीतियों की भूमिका: अध्ययन में कामकाजी महिलाओं द्वारा काम-परिवार के संघर्ष को प्रबंधित करने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले मुकाबला करने के तरीकों को भी देखा गया। भावनात्मक दमन और परिहार जैसी भावना-केंद्रित मुकाबला करने की रणनीतियों का उपयोग खराब मानसिक स्वास्थ्य परिणामों से जुड़ा था। यह निष्कर्ष वर्ष 2004 में फोकमैन और मोस्कोविट्ज के तर्क के अनुरूप है, जिसके अनुसार भावना-केंद्रित रणनीतियाँ हालांकि शुरू में सुरक्षात्मक होती हैं, लेकिन लंबे समय में उतनी प्रभावी नहीं होती हैं। इसके बजाय, समस्या-केंद्रित मुकाबला करने की रणनीतियाँ तनाव के स्तर को कम करने और मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ाने के लिए सबसे सफल मुकाबला करने के तरीके थे क्योंकि प्रतिभागियों के समय प्रबंधन और घरेलू कामों के वितरण पर कौशल ऐसे परिणामों के लिए प्रभावी साबित हुए। ये परिणाम संकेत देते हैं कि प्रभावी मुकाबला करने के तंत्र और तनाव प्रबंधन विधियों के साथ महिलाओं को सशक्त बनाना काम-परिवार के संघर्ष से जुड़े नकारात्मक प्रभावों को कम करेगा।

4. सामाजिक समर्थन एक बफर के रूप में कार्य करता है: इस अध्ययन का एक अन्य परिणाम सामाजिक समर्थन है, जिसे मानसिक स्वास्थ्य पर कार्य-परिवार संघर्ष के नकारात्मक प्रभावों को कम करने वाला कारक माना जाता है। जिन महिलाओं को अच्छा वैवाहिक समर्थन, पारिवारिक समर्थन या कार्यस्थल समर्थन मिला, वे कम मानसिक स्वास्थ्य संकट में थीं। यह सामाजिक समर्थन सिद्धांत के अनुरूप है, जो यह मानता है कि सामाजिक नेटवर्क तनाव के नकारात्मक प्रभावों को कम कर सकते हैं (कोहेन और विल्स, 1985)। परिवार और कार्यस्थल से पर्याप्त भावनात्मक और व्यावहारिक समर्थन प्रदान करना इस प्रकार कामकाजी महिलाओं के लिए एक सुरक्षात्मक कारक के रूप में काम कर सकता है, जो बेहतर मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है।

5. कार्यस्थल लचीलापन और संगठनात्मक समर्थन: परिणामों ने कार्य-परिवार संघर्ष को कम करने में कार्यस्थल लचीलेपन की भूमिका पर भी प्रकाश डाला। कम संघर्ष और बेहतर मानसिक स्वास्थ्य की रिपोर्ट प्रतिभागियों द्वारा की गई थी, जिन्हें लचीले कार्य घंटे, घर से काम करने के विकल्प या माता-पिता की छुट्टी की नीतियाँ प्रदान की गई थीं। यह परिणाम अन्य शोध अध्ययनों (हिल एट अल।, 2008) के अनुरूप है, जिन्होंने पाया है कि लचीली कार्य व्यवस्था श्रमिकों को उनकी दोहरी जिम्मेदारियों को संतुलित करने में मदद करती है और इसलिए, तनाव को कम करती है और नौकरी की संतुष्टि में सुधार करती है। इसके अलावा, तनाव प्रबंधन कार्यशालाओं और मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं जैसे कार्यस्थल कल्याण कार्यक्रम बेहतर मानसिक स्वास्थ्य से सकारात्मक रूप से जुड़े थे, जो दर्शाता है कि संगठनों के पास अपने कर्मचारियों की भलाई के समर्थन में महत्वपूर्ण भूमिका है।

6. क्षेत्र-विशिष्ट निष्कर्ष: अध्ययन में पाया गया कि स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं ने अन्य क्षेत्रों की तुलना में काम-परिवार के संघर्ष और मानसिक स्वास्थ्य संकट के उच्च स्तर का अनुभव किया। यह स्वास्थ्य सेवा में काम की मांग की प्रकृति के कारण है, जिसमें लंबे समय तक काम करना, शिफ्ट में काम करना और उच्च भावनात्मक श्रम शामिल है। यह निष्कर्ष टाइनन एट अल (2012) के पिछले शोध के अनुरूप है, जिसने संकेत दिया कि स्वास्थ्य देखभाल पेशेवर, विशेष रूप से महिलाएं, कार्य-जीवन संतुलन की कमी के कारण अपने जीवन में तनाव के स्तर में वृद्धि का अनुभव करती हैं। इसके विपरीत, सरकारी नौकरी करने वाली महिलाओं में काम-परिवार का संघर्ष सबसे कम था।

7. नीति और व्यवहार के लिए निहितार्थ: इन निष्कर्षों का नीति और व्यवहार के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ हैं। कार्य-परिवार संघर्ष को कम करने के लिए, वास्तव में, कार्य व्यवस्था में परिवर्तन शामिल होना चाहिए जो कार्यस्थल पर लचीलापन लाएगा और एक ऐसे कार्य वातावरण को बढ़ावा देगा जहाँ कार्य और परिवार दोनों को बिना किसी समझौते के प्रबंधित किया जा सके। इसके अलावा, संगठनों को मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम प्रदान करना चाहिए जिसमें परामर्श, तनाव प्रबंधन प्रशिक्षण और सहायता सेवाएँ शामिल हों ताकि महिलाओं को कार्य-परिवार की चुनौतियों को अधिक कुशलता से संभालने में मदद मिल सके। सरकारों को कार्यस्थल में महिलाओं की सुविधा के लिए सवेतन पारिवारिक अवकाश और अन्य सब्सिडी वाले चाइल्डकैअर विकल्पों के माध्यम से कानून बनाने पर भी विचार करना चाहिए, जिससे परिवार से संबंधित तनावों को जन्म देने वाले कुछ बोझ को कम किया जा सके।

8. सीमाएँ और भविष्य के शोध: कुछ सीमाएँ हैं जबकि इस अध्ययन के निष्कर्ष बेहतर समझ के लिए मूल्यवान साबित हो सकते हैं। नमूना एक विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र की कामकाजी महिलाओं तक सीमित था, जो व्यापक आबादी का प्रतिनिधि नहीं हो सकता है। भविष्य के शोध में नमूने के आकार का विस्तार किया जा सकता है और इस मुद्दे की अधिक व्यापक समझ हासिल करने के लिए विभिन्न सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमि की महिलाओं को शामिल किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, अनुदैर्ध्य अध्ययन मानसिक स्वास्थ्य और कल्याण पर कार्य-परिवार संघर्ष के दीर्घकालिक प्रभावों के बारे में अधिक जानकारी प्रदान कर सकते हैं।

निष्कर्ष: यह अध्ययन कामकाजी महिलाओं के बीच कार्य-परिवार संघर्ष और मानसिक स्वास्थ्य के बीच गहरे अंतर्संबंध को रेखांकित करता है। निष्कर्ष बताते हैं कि पेशेवर और पारिवारिक संघर्ष मानसिक कल्याण को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं, जिससे तनाव, चिंता और अवसाद के स्तर में वृद्धि होती है। अध्ययन आगे सुझाव देता है कि जबकि कार्य-संबंधी और परिवार-संबंधी दोनों तनाव मानसिक स्वास्थ्य संकट में योगदान करते हैं, परिवार-से-कार्य संघर्ष का अधिक महत्वपूर्ण प्रभाव प्रतीत होता है।

इसके अलावा, कार्य-परिवार संघर्ष के प्रभावों से निपटने में मुकाबला करने की रणनीतियाँ महत्वपूर्ण साबित हुईं। जिन महिला श्रमिकों ने समस्या-केंद्रित मुकाबला किया, जैसे कि समय का प्रबंधन और काम सौंपना, उनके मानसिक स्वास्थ्य के परिणाम बेहतर थे। इसके विपरीत, जिन महिलाओं ने भावना-केंद्रित मुकाबला किया, जैसे कि मुद्दों से बचना, उनके मानसिक स्वास्थ्य के परिणाम खराब थे। परिवार और कार्य वातावरण से सामाजिक समर्थन एक सुरक्षात्मक कारक के रूप में काम करता पाया गया है जो कार्य-परिवार संघर्ष के प्रतिकूल प्रभावों को कम कर सकता है। दूरस्थ कार्य और लचीले घंटों की संभावना सहित कार्य लचीलेपन के विकल्प होने से तनाव कम करने और मानसिक स्वास्थ्य में सुधार करने में भी मदद मिलती है। इस अध्ययन के निष्कर्ष महिलाओं को उनकी पेशेवर और पारिवारिक जिम्मेदारियों को संतुलित करने में मदद करने के लिए लचीली कार्य व्यवस्था और मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों जैसी सहायक कार्यस्थल नीतियों पर जोर देते हैं। हालाँकि, कामकाजी महिलाओं की विशेष चुनौतियों का समाधान करने के लिए संगठनात्मक और सरकारी प्रयास उनके मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देने और उनके कार्य-जीवन संतुलन में सुधार के लिए आवश्यक हैं। निष्कर्ष में, कामकाजी महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जिसमें सहायक कार्यस्थल वातावरण, प्रभावी मुकाबला रणनीतियाँ और मजबूत सामाजिक समर्थन नेटवर्क शामिल हों। कार्य-परिवार संघर्ष को संबोधित करके, संगठन और नीति निर्माता कामकाजी महिलाओं के समग्र कल्याण को बढ़ा सकते हैं, जिससे बेहतर मानसिक स्वास्थ्य और अधिक नौकरी की संतुष्टि हो सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एलन, टी. डी., हर्स्ट, डी. ई. एल., ब्रूक, सी. एस., और सटन, एम. (2000)। कार्य-से-परिवार संघर्ष से जुड़े परिणाम: भविष्य के शोध के लिए एक समीक्षा और एजेंडा। जर्नल ऑफ ऑक्यूपेशनल हेल्थ साइकोलॉजी, 5(2), 278-308.
2. चंद्रा, पी., और रानी, एस. (2014). 'कामकाजी महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर कार्य-परिवार संघर्ष और इसका प्रभाव' जर्नल ऑफ एप्लाइड साइकोलॉजी, 45(3), 156-167.
3. गुप्ता, ए., और शर्मा, आर. (2016). 'भारतीय कामकाजी महिलाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर कार्य-परिवार संघर्ष का प्रभाव' इंटरनेशनल जर्नल ऑफ विमेन हेल्थ, 9, 573-580.
4. कोसेक, ई. ई., और ओजेकी, सी. (1998). 'कार्य-परिवार संघर्ष, नीतियाँ और नौकरी-जीवन संतुष्टि संबंध: संगठनात्मक व्यवहार-मानव संसाधन अनुसंधान के लिए एक समीक्षा और दिशाएँ' जर्नल ऑफ एप्लाइड साइकोलॉजी, 83(2), 139-149.
5. महाजन, वी., और मिश्रा, पी. (2019). 'कामकाजी महिलाओं के बीच मानसिक स्वास्थ्य चुनौतियाँ: एक अवलोकन' इंडियन जर्नल ऑफ सोशल साइकियाट्री, 35(4), 213-220.
6. मैकमिलन, डी., और ओड्रिस्कॉल, एम.पी. (2009). 'कार्यस्थल तनाव और कार्य-परिवार संघर्ष: एक क्रॉस-नेशनल तुलना' इंटरनेशनल जर्नल ऑफ स्ट्रेस मैनेजमेंट, 16(3), 250-268.
7. सरकार, एस., और भट्टाचार्य, एस. (2017). 'शहरी भारत में कामकाजी महिलाओं के बीच कार्य-परिवार संघर्ष और मानसिक स्वास्थ्य' जर्नल ऑफ हेल्थ एंड सोशल बिहेवियर, 58(2), 151-168.
8. स्ट्रैजडिन्स, एल., और ब्रूम, डी.एच. (2004). 'कार्य और परिवार: कामकाजी महिलाओं का संतुलन' ऑस्ट्रेलियाई और न्यूजीलैंड जर्नल ऑफ पब्लिक हेल्थ, 28(5), 400-406.
9. थॉमस, एल.टी., और गैंस्टर, डी.सी. (1995). 'कार्य-परिवार संघर्ष और तनाव पर परिवार-सहायक कार्य चर का प्रभाव: एक नियंत्रण परिप्रेक्ष्य' जर्नल ऑफ एप्लाइड साइकोलॉजी, 80(1), 6-15।
10. वोयडानॉफ, पी. (2005). 'कथित कार्य-परिवार के सामंजस्य और संतुलन की अवधारणा की ओर: एक मांग और संसाधन दृष्टिकोण' जर्नल ऑफ मैरिज एंड फैमिली, 67(3), 789-804.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मुस्लिम महिलाओं के शैक्षणिक स्तर का समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. पूजा तिवारी*

* सह प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह शोध पत्र मुस्लिम महिलाओं के शैक्षणिक स्तर का समाजशास्त्रीय दृष्टी कोण से अध्ययन करता है। इसमें शिक्षा के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनैतिक आयामों को ध्यान में रखते हुए यह विश्लेषण किया गया है कि मुस्लिम महिलाओं को शिक्षा के क्षेत्र में किन –किन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है और उनके शैक्षणिक विकास में कोण–कोण से कारक सहायक या बाधक हैं।

शब्द कुंजी – महिलाएं, आबादी, समाज, कल्याण, शिक्षा।

प्रस्तावना – भारत देश में पुराने समय में महिलाओं को शिक्षा से वंचित रखा जाता था इसके पीछे पुरूष प्रधान समाज और दकियानूसी मानसिकता थी, धीरे–धीरे समय बीतता गया और समाज में कुछ महान लोगो का ध्यान इस ओर गया और महिलों को भी शिक्षा दि जाने लगी। इनमे ईश्वर चंद विद्यासागर, राजा राम मोहन राय ने स्त्री शिक्षा पर विशेष ध्यान आकर्षित करवाया जिसके कारण स्त्रियों ने भी शिक्षा और अध्ययन पर ध्यान दिया और तब से लेकर आज तक महिलायों ने शिक्षित बन कर समाज के हर क्षेत्र में अपना योगदान दिया और अपने को सशक्त बनाते हुए अपनी सफलता के परचम पूरी दुनिया में लहरा दिए। गाँधी जी ने कहा है की एक महिला को शिक्षित करने से उसका पूरा परिवार शिक्षित हो सकता है।

स्त्री शिक्षा एवं स्त्रियों के लिए सरकार द्वारा बनाये गये कानून :

1. सर्व शिक्षा अभियान
2. इंदिरा महिला योजना
3. राष्ट्रीय महिला कोष
4. महिला समृधी योजना
5. दहेज प्रतिबन्ध अधिनियम 1961
6. कुटुंब न्यायालय अधिनियम 1984
7. सती निषेध अधिनियम 1990
8. घरेलू हिंसा से महिलाओं का सरंक्षण अधिनियम 2008
9. घरेलू हिंसा हिंसा कानून 2005
10. सेक्सुअल हरासमेंट ऑफ वोमेन एट वर्क प्लेस 2013
11. मेटरनिटी बेनिफिट एक्ट 1961
12. समान पारिश्रमिक एक्ट 1976
13. राईट टू फ्री लीगल एक्ट
14. बाल विवाह निषेध अधिनियम 2006
15. क्रिमिनल ला (अमेंडमेंट, एक्ट)

हमारे देश में हिन्दू महिलाओं के समान मुस्लिम महिलाओं को भी शिक्षा ग्रहण करने का पूरा अधिकार है ,इस्लाम धर्म में शिक्षा का बहुत महत्व हैं। शरियत –ए –इस्लाम में आदमी और औरत दोनों को समान अधिकार और कर्तव्य दिए गये हैं और दोनों अपने फर्ज को पूरा करने के लिए जिम्मेदार है क्योकि औरते समाज का आधा हिस्सा है,आधी आबादी हैं।

किसी भी समाज के कल्याण और तरक्की के लिए इस आधी आबादी का शिक्षित होना लाजमी है बहुत जरूरी है।

इस्लाम धर्म की पवित्र किताब 'कुरान' और 'हदीस' में भी स्त्री शिक्षा को अहम माना है और कहीं भी यह उल्लेख नहीं है की औरतों को शिक्षा से दूर रखा जाना है।

वैसे देखा जाये तो हर धर्म में पुरूष प्रधानता हावी दिखाई देती है और सामाजिक नियमों को मर्द अपनी सहूलियत से मोड़ देते है। धर्म के ठेकेदार धर्म के नाम पर अपने सुविधाओं की रोटी सेक लेते हैं।

ऐसा ही इस्लाम धर्म और मुस्लिम समाज में भी देखा जा सकता है कई कुप्रथाएं पाई जाती है जो केवल औरतों को नुकसान और मर्दों को लाभ पहुंचाती हैं जैसे 'तलाक','हालाला' आदि मुस्लिम समाज में औरतो को मस्जिद में प्रवेश वर्जित हैं, मुस्लिम औरते खुद की ओर से पति को तलाक नही दे सकती हैं यदि कोई महिला स्वयं तलक देती है। तब उस तलाक को 'खुला' कहा जाता है जिसमे उस महिला को उसका पति 'मेहर' की राशी देने बाध्य नही होता है मेहर वह राशि है। जो निकाह के समय दोनों पक्ष मिल कर तय करतें है और शौहर अपने जीवन काल में उस मेहर को अदा करता है या तलाक के समय देता है। अन्य धर्मो के तुलना में इस्लाम धर्म महिलाओं के हक का पक्षधर है किन्तु हकीकत में मुस्लिम महिलाओं को ही उनके अधिकारों से सबसे जयादा वंचित रखा गया है। यह सदियों से चला आ रहा है 'शरियत' पर्सनल लॉ के नाम पर औरतों को बेहद बुरी अवस्था से गुजरना पड़ता है। मुस्लिम महिलाओं के अधिकारों के लिए कोई आगे नही आता है। मुस्लिम औरतों को 'बुरखा', 'हिजाब', 'नकाब' अर्थात परदे में रखा जाता हैं। बड़े कामों में औरतों की राय नही ली जाती है जैसे मकान , दूकान, व्यापार आदि। इसी प्रकार मुस्लिम औरतों और मर्दों के बीच शिक्षा, कारोबार और सामाजिक गतिशीलता आदि का भेद भाव सर्वाधिक मात्रा में देखा जा सकता है।औरतों को हर छोटी छोटी बातों और निर्णय में पुरूष का सहारा लेना पड़ता है याने औरतें अपना जीवन स्वतंत्र रूप से जी भी नही सकतीं हैं। आज भी कुछ मुस्लिम महिलाओं को छोड़ कर अन्य सभी महिलायें अपने बुनियादी हक के लिए भी तरस रही है। इस्लामिक देशो में तो मुस्लिम औरतों की

सामाजिक स्थितिं और भी कमतर और बुरी है। मुस्लिम समाज में औरतों को दीनी तालीम ही दी जाती है और हर बात का फैसला शरियत और धार्मिक ग्रंथों के हिसाब से होता है। जिसके कारण बेचारी महिलाये निम्नतर जीवन जीने हेतु मजबूर रहती है उनका कोई समर्थन करने आगे नही आता है इन औरतों की जिंदगी अपना घर ,चूल्हा –चौका तक ही सीमित हो जातीं हैं।

मुस्लिम शिक्षा व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग 'मदरसा' है। जो बच्चों को दीनी तालीम देता है। अर्थात इस्लाम धर्म की शिक्षा तो देता है किन्तु उन्हें आधुनिक समाज की चुनौतियों का सामना करना नही सिखा पाता है। इन मदरसों की शिक्षा को संदेह की नजरों से देखा जाता है और सरकार इन मदरसों की जाँच की कार्यवाही बार बार करवाती है। मदरसों की शिक्षा और आधुनिक शिक्षा में फर्क साफ नजर आता है इसीलिए इन मदरसों में या तो बेहद गरीब घर के बच्चे पढने आतें है या उन घरों के बच्चे आते हैं। जिनके अभिभावक अपने बच्चों को पूरी इस्लामिक शिक्षा देना चाहते हैं इन मदरसों उर्दू के साथ साथ सभी इस्लामिक धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन करवाया जाता हैं और समस्त उम्र के बच्चे एक साथ पढ़ते हैं।

मुस्लिम समाज की महिलाओं की शिक्षा यात्रा में कई बाधक तत्व है:–

1. **रुढ़िवादी सोच और परम्परागत मान्यताएं–** मुस्लिम समाज में धर्म के ठेकेदारों ने इस्लाम धर्म की दुहाई दे दे कर औरतो की भूमिका को केवल घर की चारदीवारी तक सीमित कर रखा है इसलिए औरतो की शिक्षा पर ध्यान ही नही दिया जाता है।

2. **पर्दा प्रथा–** मुस्लिम महिलाओं को बचपन से ही परदे में रखा जाता है, उन्हें नकाब ,बुरका और हिजाब लगाना अनिवार्य होता है। इसके पीछे दकियानूसी सोच है की पर पुरूष को महिलाओं का चेहरा तक नही दिखना चाहिए इसके चलते कई मुस्लिम महिलाये शिक्षा से वंचित रह जाती है क्योकि उनको सह –शिक्षा वाले शिक्षण संस्थानों में दाखिला नही दिलवाया जाता है ,और कई संस्थानों में ड्रेस कोड के कारण बुरका या हिजाब पहनना वर्जित होता है।

3. **अल्पसंख्यक समुदाय में आर्थिक पिछड़ा पन–** गरीबी के कारण परिवार सिर्फ लडको को पढ़ाते है और लड़कियों की शिक्षा पर खर्च नही करना चाहते है इसे गैर जरूरी समझतें हैं।

4. **जल्दी विवाह प्रथा–** कम उम्र में शादी कर देने के कारण भी शिक्षा अधूरी रह जाती है।

5. **सुरक्षा की चिंताद स्कूल –** कालेज दूर होने के कारण भी माँ –बाप अपनी बेटियों को पढने नही भेजते हैं।

6. **शैक्षिणिक संस्थानों की कमी–** मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्रों में स्कूल –कॉलेज की कमी के कारण भी बाधा उत्पन्न होती हैं।

7. **प्रेरणा की कमी–** मुस्लिम लड़कियों के सामने उनको प्रेरणा देने वाले नही होतें हैं उनका कोई रोल माडल भी नही होता है।

8. **पुरूष प्रधानता–** मुस्लिम समाज में पुरूष प्रधानता कठोर रूप में पाई जाती हैं घर और बच्चों से सम्बन्धित सभी निर्णय धर के मर्द लेते हैं औरतों से उनकी सलाह तक लेना मुनासिब नही समझतें है।

9. **आधुनिक और धार्मिक शिक्षा के बीच संतुलन की चुनौती–** सभी मुलिम बच्चों को मदरसे से तालीम दिलवाई जाति है जिसमे इस्लाम धर्म की समस्त धार्मिक किताबों के माध्यम से दीनी तालीम दी जाती है।

10. **अन्य कारण–** अन्य कारणों में स्वयं महिला का पढने में मन नही लगना, प्रेम के चक्कर में पड जाना, बीमारी, चिंता, अवसाद, अकेलापन , गलत संगत आदि हैं।

मुस्लिम महिलाओं के सामाजिक स्थिति को निम्न बिन्दुओं से समझा जा सकता है :–

1. **धार्मिक दृष्टिकोण से–** इस्लाम धर्म में महिलाओं को कई अधिकार दिए गयें है जैसे शिक्षा का अधिकार, पिता की सम्पति पर बेटियों का अधिकार, विरासत में हिस्सा पाने का अधिकार, विवाह की सहमति का अधिकार, तलाक लेने का अधिकार इस तलाक को 'खुला' कहा जाता है, हालाँकि इन सभी अधिकारों की व्याख्या और पालन अलग अलग देशों में अलग तरीके से होता है।

2. **सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति–** पुरूष प्रधानता से मुस्लिम समाज भी अछुता नही है पारम्परिक सोच और पुरुषवादी मानसिकता के कारण मुस्लिम महिलाएं पर्दा प्रथा, तलाक, बाल विवाह, शिक्षा से वंचित होना और हलाला जैसी कुप्रथाओं में फंसी हुई है, जिसके कारण महिलाओं की सामाजिक स्थिति बेहद शोचनीय है किन्तु कुछ देशों में मुस्लिम महिलाएं शिक्षा, रोजगार और राजनीति में सक्रिय भूमिका निभा रही है किन्तु यह मात्रा बहुत कम है।

3. **आर्थिक स्थिति–** मुस्लिम महिलाओं को आज भी कई क्षेत्रों में रोजगार के समान अवसर नही मिलतें हैं और अक्सर मुस्लिम परिवार महिलाओं को नौकरी करने ही नही देते हैं इसके पीछे पर्दा प्रथा सबसे बड़ा कारण है। किन्तु कई मुस्लिम महिलाएं अब व्यवसाय, तकनीक, चिक्तिसा, शिक्षा के क्षेत्र में सफलता पा रही हैं।

इस प्रकार से मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक स्थिति बहुत अच्छी नही है जोया हसन के अनुसार मुस्लिम समाज में धर्म का सहारा ले कर महिलाओं के शिक्षा के अधिकार को छीना जाता हैं भारत में मुस्लिम लड़कियों का नही पढ़ पाना का मुख्य कारण गरीबी है।

छिन्दवाड़ा मध्यप्रदेश के जबलपुर सम्भाग में आता है सन 2011 की जनगणना के अनुसार मुस्लिम की जनसँख्या लगभग 4.82%है और मुस्लिम मतदाताओं की संख्या लगभग 71152 हैं। इस्लाम धर्म के लगभाग 11 .87% अनुयायी है।

मुस्लिम महिलाओं के शैक्षणिक स्तर में व्यापक अन्तर देखने को मिलता हैं जो सामाजिक, आर्थिक स्थिति, भौगोलिक क्षेत्र और अन्य कारकों पर निर्भर करता हैं।

इस पत्र का मुख्य उद्देश्य मुस्लिम महिलाओं के शैक्षणिक विकास में आने वाली बाधाओं का अध्ययन करना एवम उनका अपने शैक्षणिक अधिकारों के प्रति जागरूकता स्तर के बारे में जानना और मुस्लिम महिलाओं के सामाजिक –आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना साथ ही उनके शैक्षणिक स्थिति का अध्ययन करना हैं ?

इस पत्र में परिकल्पना की गयी है की मुस्लिम महिलाओं के शैक्षणिक विकास में सांस्कृतिक बाधाओं की कोई भूमिका नही है और मुस्लिम महिलाओं में शिक्षा के प्रति और अधिकारों के प्रति जागरूकता नही है।

सच्चर कमेटी की रिपोर्ट के मुताबिक देश भर में मुस्लिम महिलाओं की साक्षरता दर 53.7% हैं। जिनमे से अधिकांश महिलाएं केवल अक्षर ज्ञान तक सीमित हैं। मुस्लिम महिलायें शिक्षा के मामले में अन्य धार्मिक समुदायों की महिलाओं की तुलना में कम शिक्षित हैं। इस अध्ययन का उद्देश्य मुस्लिम महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति का विश्लेषण करना उनके पिछड़ेपन के कारणों को जानना और उनकी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए सुझाव देना

है।

अक्सर मुस्लिम औरत से एक ऐसा चेहरा सामने आता हैं जो घर की चारदिवारी में बंद है और जो परदे में कैद हैं और हर बात ,हर काम के लिए अपने पति या पिता या पुत्र या भाई पर निर्भर हैं। आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए शिक्षा बहुत जरूरी हैं।

इस प्रकार से कहा जा सकता हैं की आज भी मुस्लिम महिलाओं को उनके विचारों को दबा कर रखा जाता हैं उन्हें पढने हेतु प्रेरित नही किया जाता है उनको सिर्फ दीनी तालीम याफ्ता ही रखा जाता है जो उनके विवाह में काम आता हैं। मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति भी कमतर दिखाई दी उनके घरों में किसी भी बड़े निर्णय में उनकी सलाह नही ली जाती हैं उनकी मर्जी नही चलती हैं। वो पूर्ण रूप से अपने पिता, पति, पुत्र पर निर्भर करती हैं उनको बुर्के में हिजाब में परदे में रखा जाता हैं जिसे वो खुद की पसंद बताती हैं कुछ महिलाये जो किसी भी प्रकार से उच्च शिक्षित हो गयी है अक्सर उनसे घर खर्च चलवाया जाता हैं उनकी बढती उम्र पर ध्यान नही दिया जाता हैं उनकी शादियों में अड़चन पैदा की जाती हैं और अंत में ऐसी महिलाये घरवालो के लिए कमाऊ पूत बन कर रह जाती हैं और अन्य सदस्यों की शादी करना उनके बच्चों का खर्च उठाना आदि में अपना समय और पैसा लगाने में मजबूर हो जाती हैं।

प्राचीन काल से मुस्लिम महिलाये तीन तलाक का दंश झेल रही थीं जिसमे पति अपनी मर्जी से कभी भी कैसे भी अपनी पत्नी को तलाक दे देता था किन्तु मोदी सरकार ने तीन तलाक पर बंदिश लगवा कर मुस्लिम महिलाओं की प्रस्थिति को किसी सीमा तक उच्च स्तर पर केन्द्रित किया हैं।

वर्तमान में मुस्लिम महिलाओ को शिक्षा में रूचि ,सोशल मिडिया में सक्रियता विदेश यात्रा अन्य सामाजिक कार्यों में सक्रिय देखा जा रहा हैं यह संकेत हैं की मुस्लिम महिलायें भी घर की चार दिवारी से बाहर निकल कर खुले आसमान में ऊँची उड़ान भरना चाहती हैं। आज अधिकांश महिलाओं ने बुरका, हिजाब पहनना त्याग दिया हैं ये सभी शिक्षा के कारण ही संभव हो पाया हैं।

छिन्दवाड़ा में कुछ इलाके मुस्लिम बाहुल्य जनसँख्या वाले है जिसमे हुसैन नगर दिवान्चीपुरा, कुकड़ा जगत, उबैद्धगर, शिवनगर, ऊँटखाना क्षेत्र, नूरी मस्जिद एरिया आदि हैं। जिनमे निवासरत महिलाओ के शिक्षा के स्तर का सामाजिक अध्ययन के दौरान मिली जानकारी से ज्ञात हुआ कि मुस्लिम महिलाओं में पारिवारिक, कौमी, सामाजिक संस्थागत, सरचनात्मक परिवर्तन दृष्टी गोचर हो रहे हैं। मुस्लिम महिलाओं ने शिक्षा का महत्व बखूबी जान लिया हैं और शिक्षित होना प्रारंभ कर दिया हैं। कुछ महिलाएं राजनीति में पकड़ बना रहीं हैं तो कुछ उच्च शिक्षा के क्षेत्र में नाम कमा रही हैं। कई महिलाये डाक्टर बनी है कई अपना बुटिक, ब्यूटी पार्लर चला रहीं हैं,कुछ वकील हैं तो कुछ महिलाये अपना एन.जी.ओ. चलाकर समाजसेवा कर रहीं हैं। शिक्षित होने के कारण मुस्लिम महिलाओं के रहन सहन और वेशभूषा में भी अंतर आया है। अब आधुनिकता के साथ मुस्लिम महिलाएं जींस शर्ट , साडी, पलाजों पेंट स्लीवलेस कुरते, घाघरे, मिडी, स्कर्ट, फ्रॉक आदि सभी कुछ् पहन रही हैं। अध्ययन क्षेत्र में दो महिलाएं ऐसे मिली जिन्होंने हिन्दू धर्म वाले व्यक्ति से शादी की है और सफल वैवाहिक जीवन यापन कर रहीं हैं और फरटिदार इंग्लिश भी बोलती हैं यह सभी परिवर्तन शिक्षा के कारण ही संभव हुयें हैं।

अंत में कहा जा सकता हैं की आज देश में मुस्लिम महिलाओं की स्थिति प्रत्येक क्षेत्र में प्रगतिशील हैं किन्तु अभी भी पूर्ण लक्ष्य से बहुत दूर हैं। अभी भी मुस्लिम महिलाओं के जीवन में परिवर्तन की गति बहुत ही धीमी हैं। जब तक सभी महिलएं शिक्षित नही हो जाती तब तक परिवर्तन का सफर अधूरा हैं। इसलिए हम सभी को चाहिए की इस्लाम धर्म की पवित्रता को बरकरार रखते हुयें मुस्लिम महिलाओं को वर्तमान तार्किक द्रष्टि कोण के आधार पर समाज में कार्य करना और शिक्षित करने के लिए प्रयास करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रिसर्च गेट ,10/02/23
2 CORE
3 शर्मा ,दिनेश ,आधुनिक सामाजिक परिवर्तन और मुस्लिम महिलाएं IJCRT, अक्टूबर 2020
4 हसन, जोया, भारतीय मुसलमान, हंस, अगस्त 2013

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

पत्रकारिता में स्त्री विमर्श: मुख्यधारा मीडिया और महिला आवाज़

डॉ. हुसन सिंह सोलंकी*

* सहायक प्राधयापक (हिन्दी) भेरूलाल पाटीदार शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, इंदौर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – मुख्यधारा की पत्रकारिता समाज के विचारों, धारणाओं और विमर्शों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। किंतु जब विषय स्त्री विमर्श का हो, तो यह अनिवार्य हो जाता है कि हम यह जानें कि क्या महिला मुद्दे, स्वर, और दृष्टिकोण पत्रकारिता की प्राथमिकताओं में हैं या नहीं। यह शोधपत्र पत्रकारिता में स्त्री की उपस्थिति, महिला पत्रकारों की भागीदारी, और महिला विषयों की प्रस्तुति की भूमिका से प्रेरित है। अध्ययन के दौरान यह स्पष्ट हुआ कि यद्यपि महिला पत्रकारिता में धीरे-धीरे सशक्त भूमिका में आ रही हैं, तथापि मीडिया की रिपोर्टिंग में महिलाओं को आज भी अक्सर एक पीड़िता, उपभोक्ता वस्तु या शोपीस के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इसके विपरीत महिलाओं के नेतृत्व, बौद्धिक योगदान, और सामुदायिक संघर्षों को कम प्राथमिकता दी जाती है। यह शोधपत्र मीडिया में स्त्री छवि के सशक्तिकरण, महिला-संबंधी मुद्दों को समाचारों की मुख्यधारा में लाने, और पत्रकारिता में जेंडर संतुलन सुनिश्चित करने की आवश्यकता पर बल देता है। इसमें हिंदी समाचार पत्रों और डिजिटल मीडिया प्लेटफार्मों की सामग्री का विश्लेषण कर यह दर्शाया गया है कि पत्रकारिता की भाषा, संदर्भ और दृष्टिकोण में संवेदनशीलता लाने की नितांत आवश्यकता है। यह अध्ययन मीडिया, समाज और स्त्री चेतना के त्रिकोण को केंद्र में रखकर पत्रकारिता में स्त्री विमर्श की सामर्थ्य और सीमाओं को उजागर करता है।

शब्द कुंजी –स्त्री विमर्श, पत्रकारिता, मुख्यधारा मीडिया, महिला पत्रकार, जेंडर प्रतिनिधित्व, मीडिया विश्लेषण, महिला मुद्दे, संवेदनशील रिपोर्टिंग, लैंगिक असमानता, महिला छवि।

प्रस्तावना – पत्रकारिता को समाज का चौथा स्तंभ माना जाता है, जिसकी भूमिका केवल सूचना देने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह जनमत निर्माण, सामाजिक चेतना के प्रसार और लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा का भी महत्वपूर्ण माध्यम है। परंतु जब हम पत्रकारिता के भीतर स्त्री विमर्श की बात करते हैं, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि महिलाओं की उपस्थिति और उनकी आवाज़ें इस क्षेत्र में अभी भी पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व नहीं पा सकी हैं। भारत जैसे पितृसत्तात्मक समाज में जहाँ महिलाएँ सदियों से दमन, असमानता और उपेक्षा का शिकार रही हैं, वहाँ पत्रकारिता में उनके मुद्दों का सम्यक और संवेदनशील चित्रण अत्यंत आवश्यक है। यह भूमिका केवल महिला पत्रकारों की संख्या बढ़ाने तक सीमित नहीं होनी चाहिए, बल्कि उस दृष्टिकोण को भी बदलने की ज़रूरत है जिससे समाचारों को प्रस्तुत किया जाता है। मीडिया जब तक स्त्री को केवल पीड़िता, शोपीस या उपभोक्ता वस्तु के रूप में प्रस्तुत करता रहेगा, तब तक समाज की सोच में परिवर्तन संभव नहीं। इसलिए यह अध्ययन पत्रकारिता में स्त्री विमर्श की उपस्थिति, उसकी प्रकृति, सीमाएँ और संभावनाओं की गहन पड़ताल करता है। मुख्यधारा मीडिया में महिलाओं के मुद्दों की प्राथमिकता, महिला पत्रकारों की भूमिका और पत्रकारिता की भाषा में लैंगिक दृष्टिकोण की उपस्थिति इस शोध का केंद्रीय विषय है।

प्रमुख परिभाषाएँ

पत्रकारिता:'पत्रकारिता केवल घटनाओं का संग्रह नहीं, बल्कि सत्य की खोज, सामाजिक उत्तरदायित्व और जनचेतना का विस्तार है।' (प्रभाकर, 2018)पत्रकारिता एक ऐसी प्रक्रिया है जो सूचना, विश्लेषण और विचारों के माध्यम से जनमानस को प्रभावित करती है और लोकतांत्रिक प्रणाली को मजबूत करती है। (मेन्चर, 2011)

स्त्री विमर्श :'स्त्री विमर्श सामाजिक, सांस्कृतिक और वैचारिक व्यवस्था में नारी की स्थिति को पुनर्परिभाषित करने का प्रयास है।' (कुमारी, 2019)टोंग (2009) के अनुसार, नारीवादी सिद्धांत लिंग, शक्ति और उत्पीड़न की प्रकृति का विश्लेषण करके लैंगिक असमानता को समझने और संबोधित करने का प्रयास करता है।

मुख्यधारा मीडिया :'मुख्यधारा मीडिया वे संचार साधान हैं जिनका समाज में सूचना के प्रवाह और जनमत निर्माण पर गहरा प्रभाव होता है।' (शुक्ला, 2020)मुख्यधारा मीडिया से तात्पर्य बड़े जन समाचार मीडिया से है जो व्यापक दर्शकों को प्रभावित करते हैं और सूचना के पारंपरिक स्रोत माने जाते हैं। (मैकक्वेल, 2010)

महिला आवाज़:'महिला आवाज़ का तात्पर्य उन अनुभवों, दृष्टिकोणों और भावनाओं से है, जो महिलाओं द्वारा स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त किए जाते हैं।' (राय, 2021)गिल (2007) के अनुसार, महिलाओं की आवाज़, सार्वजनिक चर्चा में महिलाओं के दृष्टिकोण और पहचान का प्रतिनिधित्व और अभिव्यक्ति है।

लैंगिक प्रतिनिधित्व :'लैंगिक प्रतिनिधित्व वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से मीडिया में पुरुषों और महिलाओं की उपस्थिति, भूमिका और छवि गढ़ी जाती है।' (बैनर्जी, 2017)मीडिया में लिंग प्रतिनिधित्व से तात्पर्य है कि विभिन्न लिंगों को कैसे चित्रित किया जाता है और ऐसे चित्रणों की आवृत्ति, संदर्भ और रूपरेखा क्या है। (बायर्ली और रॉस, 2006)

शोध उद्देश्य:

1. मुख्यधारा पत्रकारिता में महिलाओं के मुद्दों की प्रस्तुति का अध्ययन करना।

2. स्त्री विमर्श के दृष्टिकोण से मीडिया की भूमिका का विश्लेषण करना।
3. मीडिया संस्थानों में महिलाओं की भागीदारी और उनके दृष्टिकोण की मौजूदगी का मूल्यांकन करना।

शोध पद्धति – इस शोधपत्र में वर्णनात्मक तथा विश्लेषणात्मक शोध पद्धति का समन्वित रूप अपनाया गया है, जिससे पत्रकारिता में स्त्री विमर्श की उपस्थिति, अभिव्यक्ति तथा प्रभावशीलता का गहराई से परीक्षण किया जा सके। अध्ययन में मुख्य रूप से हिंदी मुख्यधारा मीडिया – जैसे दैनिक भास्कर, नवभारत टाइम्स, अमर उजाला एवं जनसत्ता के समाचार पत्रों एवं उनके डिजिटल संस्करणों में 2020 से 2025 के मध्य प्रकाशित महिला–संबंधी समाचार, संपादकीय, फीचर लेख तथा विशेष संवादों को आधार बनाया गया। इसके साथ ही महिला पत्रकारों द्वारा लिखे गए प्रमुख लेखों और साक्षात्कारों का भी गुणात्मक विश्लेषण किया गया, ताकि मीडिया में महिला दृष्टिकोण की उपस्थिति को समझा जा सके।

समंक संग्रह हेतु द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया, जिनमें मीडिया लेखों, रिपोर्टों, समाचारों, शोध–पत्रों एवं जर्नल लेखों का संग्रह और विश्लेषण सम्मिलित था। शोध में विषयवस्तु विश्लेषण तकनीक का प्रयोग कर यह पहचाना गया कि महिला–संबंधी मुद्दे किस प्रकार से प्रस्तुत किए जाते हैं –क्या वे केवल घटनात्मक होते हैं या उनमें संरचनात्मक सोच, समाधान और संवेदनशीलता भी दिखाई देती है। इसके अतिरिक्त, कुछ प्रमुख महिला पत्रकारों के लेखों का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए यह भी देखा गया कि महिला पत्रकारों की लेखनी में स्त्री विमर्श की स्पष्टता और विविधता किस प्रकार दृष्टिगोचर होती है।

शोध की प्रक्रिया में मीडिया प्रस्तुति की भाषा, संदर्भ, शीर्षक की प्रवृत्ति, चित्रण की शैली और घटनाओं के चुनाव जैसे पहलुओं को गहराई से परखा गया, ताकि यह जाना जा सके कि क्या मीडिया स्त्री को केवल 'समाचार की विषयवस्तु' मानता है या उसे एक 'चिंतक, कर्ता और समाज निर्माता' के रूप में भी स्थान देता है। इस पद्धति द्वारा यह स्थापित करने का प्रयास किया गया कि पत्रकारिता में स्त्री विमर्श की स्थिति केवल उपस्थिति मात्र नहीं, बल्कि उसके प्रभाव और दिशा का भी सूचक है।

मुख्यधारा मीडिया में स्त्री की छवि – मुख्यधारा मीडिया में स्त्री की छवि बहुधा विरोधाभासी, असंतुलित और पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण से निर्मित पाई जाती है। जहाँ एक ओर मीडिया स्त्री सशक्तिकरण, नेतृत्व और उपलब्धियों की कहानियाँ प्रस्तुत करता है, वहीं दूसरी ओर वह अक्सर स्त्री को एक उपभोक्ता वस्तु, सौंदर्य का प्रतीक या पीड़िता के रूप में भी प्रस्तुत करता है। यह दोहरापन न केवल स्त्री विमर्श के संदर्भ को सीमित करता है, बल्कि समाज की सोच को भी एक विशेष दिशा में मोड़ देता है।

शोध से स्पष्ट होता है कि अधिकांश समाचारों में महिला से संबंधित रिपोर्टें 'घटनात्मक' होती हैं – जैसे दुष्कर्म, हिंसा, घरेलू उत्पीड़न आदि, जबकि संरचनात्मक और नीतिगत पहलुओं पर ध्यान अपेक्षाकृत कम दिया जाता है (बायेर्ली एंड रॉस, 2006)। उदाहरणस्वरूप, महिला नेतृत्व, नीति निर्माण में उनकी भागीदारी, ग्रामीण महिलाओं की भूमिका या शिक्षा व स्वास्थ्य जैसे विषयों को केवल 'विशेष अवसरों' या 'महिला दिवस' जैसे प्रसंगों तक सीमित कर दिया जाता है (गिल, 2007)। इससे महिला विषयों की प्रस्तुति अस्थायी, अवसरजन्य और कभी–कभी सहानुभूतिपरक हो जाती है, न कि सशक्तिकरण की दृष्टि से समावेशी।

महिला छवि का एक और आयाम 'विज्ञापन पत्रकारिता' से जुड़ा है, जहाँ स्त्री को एक आकर्षक वस्तु या बिकाऊ चेहरा बनाकर प्रस्तुत किया जाता है। इन छवियों में उसकी 'इच्छा', 'विचार' और 'बौद्धिकता' को हाशिये पर डाल दिया जाता है। बैनर्जी (2017) के अनुसार, मीडिया में स्त्री की यह छवि, उसके वास्तविक सामाजिक संघर्षों को ढक देती है और उसे एक सतही संदर्भ में सीमित कर देती है।

हिंदी पत्रकारिता भी इससे अछूती नहीं है। अनेक समाचार पत्रों की प्रस्तुति में भाषा में व्यंग्यात्मकता, शीर्षकों में सनसनीखेज़ी और महिला पीड़िताओं के प्रति असंवेदनशील रुख देखा गया है (कुमारी, 2019)। स्त्री को केवल 'घटना' बनाकर प्रस्तुत करना, उसके जीवन की जटिलताओं, सामाजिक दबावों और संघर्षों को दरकिनार कर देता है। वहीं दूसरी ओर, कुछ महिला पत्रकारों और वैकल्पिक मीडिया मंचों (जैसे खबर लहरिया, भारत में नारीवाद) ने स्त्री मुद्दों को जमीनी दृष्टिकोण से उठाने का प्रयास किया है, जो मीडिया में सकारात्मक बदलाव की दिशा है (राय, 2021)।

अत: यह कहा जा सकता है कि मुख्यधारा मीडिया में स्त्री की छवि अभी भी संघर्षरत है एक ओर परंपरागत रूढ़ियों से घिरी हुई, और दूसरी ओर परिवर्तनकारी चेतना के प्रयासों से प्रभावित। जब तक मीडिया में स्त्री की छवि सहभागी, निर्माता, विचारक और निर्णायक के रूप में नहीं उभरती, तब तक स्त्री विमर्श की पत्रकारिता में पूर्णता नहीं आ सकती।

महिला पत्रकारों की भूमिका – पत्रकारिता के क्षेत्र में महिला पत्रकारों की भूमिका केवल सूचना के संप्रेषण तक सीमित नहीं है, बल्कि वे मीडिया की भाषा, दृष्टिकोण और संवेदनशीलता को नया आकार देने का कार्य कर रही हैं। परंपरागत रूप से पुरुष–प्रधान इस पेशे में महिलाओं की उपस्थिति एक सशक्त सांस्कृतिक बदलाव का संकेत है, जो मीडिया की विषयवस्तु और प्रस्तुति में विविधता और लैंगिक संतुलन को प्रेरित करती है।

महिला पत्रकार न केवल महिला मुद्दों को अधिक गहराई और संवेदनशीलता से उठाती हैं, बल्कि वे उन विषयों को भी सामने लाती हैं जिन्हें मुख्यधारा मीडिया प्राय: उपेक्षित करता रहा है –जैसे घरेलू श्रमिकों की स्थिति, यौन हिंसा पर सामाजिक चुप्पी, या ग्रामीण महिलाओं के स्वास्थ्य संबंधी संकट (शर्मा, 2020)। उनके लेखन और रिपोर्टिंग की शैली में सामाजिक जटिलताओं की बेहतर समझ, भावनात्मक सूक्ष्मता और वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रकट होता है।

बायर्ली और रॉस (2006) के अनुसार, महिला पत्रकारों की उपस्थिति मीडिया संगठनों में निर्णय–निर्माण की प्रक्रिया को अधिक लोकतांत्रिक बनाती है, जिससे स्त्री–केंद्रित विषयों को स्थान और गंभीरता मिलती है। यद्यपि उच्च पदों पर महिलाओं की संख्या अब भी सीमित है, फिर भी वे संपादन, प्रोडक्शन, ग्राउंड रिपोर्टिंग और खोजी पत्रकारिता जैसे क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं।

भारत में राणा अय्यूब, निधि राजदान, बर्खा दत्त, और अनुराधा भसीन जैसी महिला पत्रकारों ने न केवल स्त्री विमर्श, बल्कि राजनीतिक विश्लेषण, मानवाधिकार और सामाजिक न्याय जैसे विषयों को भी निर्भीकता से उठाया है। भारत में नारीवाद, खबर लहरिया, मोजो स्टोरी जैसे वैकल्पिक मीडिया प्लेटफॉर्म महिला पत्रकारों द्वारा संचालित हैं, जो जमीनी स्तर की पत्रकारिता को स्त्री दृष्टिकोण से समृद्ध कर रहे हैं (राय, 2021)।

हालांकि चुनौतियाँ अब भी विद्यमान हैं – जैसे कार्यस्थलों पर लैंगिक भेदभाव, यौन उत्पीड़न, फील्ड रिपोर्टिंग में असुरक्षा और डिजिटल माध्यमों में ट्रोलिंग – परंतु महिला पत्रकार इन बाधाओं के बावजूद मीडिया के मानकों

को नई दिशा दे रही हैं। वे पत्रकारिता को केवल 'सूचना' तक सीमित नहीं रहने देतीं, बल्कि उसमें मानवीय संवेदना, न्याय की माँग और सामाजिक उत्तरदायित्व का समावेश करती हैं (गिल, 2007)। इस प्रकार महिला पत्रकारों की भूमिका, केवल प्रतिनिधित्व तक सीमित नहीं, बल्कि संरचना, दृष्टिकोण और संवेदनशील विमर्श के सशक्त आधार के रूप में विकसित होती जा रही है।

सामाजिक प्रभाव और सीमाएँ – पत्रकारिता में स्त्री विमर्श की उपस्थिति का समाज पर बहुआयामी प्रभाव पड़ा है। महिला पत्रकारों द्वारा उठाए गए विषयों, दृष्टिकोणों और सवालों ने पारंपरिक सामाजिक सोच को चुनौती दी है और एक अधिक समावेशी व संवेदनशील संवाद की नींव रखी है। मुख्यधारा मीडिया में स्त्रियों की आवाज़ का प्रसार होने से लैंगिक समानता की अवधारणा को व्यापकता मिली है। साथ ही, घरेलू हिंसा, कार्यस्थल पर उत्पीड़न, मासिक धर्म स्वच्छता, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसे विषय अब केवल 'महिला मुद्दे' न रहकर सामाजिक सुधार का विषय बन गए हैं (सेन, 2014)।

इस संवाद ने ग्रामीण और शहरी, दोनों ही क्षेत्रों में महिलाओं की आत्म-अभिव्यक्ति को बढ़ावा दिया है। वैकल्पिक मीडिया मंचों तथा सोशल मीडिया की सहायता से अनेक युवा लड़कियाँ और महिलाएँ अब अपने अनुभवों को स्वर दे रही हैं, जो पहले पारिवारिक, सामाजिक या सांस्कृतिक दबावों के कारण मौन थीं (राय, 2021)। इससे समाज में महिला चेतना का स्तर ऊँचा हुआ है और संवाद का दायरा भी विस्तृत हुआ है।

किन्तु, इसके साथ कुछ महत्वपूर्ण सीमाएँ भी देखी जाती हैं। पहला – मीडिया का केंद्रीकरण और कॉर्पोरेट स्वार्थों के कारण महिला-संबंधी मुद्दों का प्रस्तुतीकरण कभी-कभी केवल 'ब्रांडिंग' या 'विज्ञापन रणनीति' के अंतर्गत किया जाता है (गिल, 2007)। दूसरा – स्त्री मुद्दों की रिपोर्टिंग अधिकतर 'दुखांत' या 'पीड़ित' फ्रेम में होती है, जिससे समाज में महिलाओं की छवि एक असहाय प्राणी की बनती है, न कि एक सक्रिय, सक्षम परिवर्तनकर्ता की (बनर्जी, 2017)।

तीसरा – ग्रामीण और दलित महिलाओं की आवाज़ अब भी मुख्यधारा मीडिया में गौण है। खबर लहरिया और मोजो स्टोरी जैसे मंच इनकी आवाज़ें उठाते हैं, किंतु उनकी पहुँच और प्रभावशीलता अब भी सीमित हैं। चौथा – महिला पत्रकारों को कार्यस्थल पर असमान वेतन, पदोन्नति में पक्षपात, फील्ड रिपोर्टिंग में असुरक्षा और डिजिटल ट्रोलिंग जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है (शर्मा, 2020)।

अत: जहाँ एक ओर पत्रकारिता में स्त्री विमर्श ने सामाजिक विमर्श को व्यापक और संवेदनशील बनाया है, वहीं यह आवश्यक है कि इस विमर्श को केवल 'सहायता' या 'दया' की दृष्टि से न देखा जाए, बल्कि 'साझेदारी', 'स्वर-समता' और 'निर्णय निर्माण' के स्तर पर स्थान दिया जाए।

निष्कर्ष – पत्रकारिता में स्त्री विमर्श की उपस्थिति न केवल एक वैचारिक हस्तक्षेप है, बल्कि सामाजिक चेतना के निर्माण की एक सक्रिय प्रक्रिया भी है। वर्तमान शोध के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि मुख्यधारा मीडिया में स्त्रियों की छवि, भूमिका और प्रतिनिधित्व अब पारंपरिक सीमाओं से आगे बढ़ रहा है। यद्यपि स्त्रियों को अभी भी अक्सर 'पीड़िता' या 'प्रतीक' के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, लेकिन महिला पत्रकारों के लेखन, वैकल्पिक मीडिया मंचों की सक्रियता, और डिजिटल माध्यमों के विस्तार ने स्त्री स्वर को एक नई ऊर्जा प्रदान की है।

इस शोध के विश्लेषण से यह भी प्रमाणित होता है कि महिला पत्रकार न केवल स्त्री मुद्दों को प्रमुखता से उठा रही हैं, बल्कि मीडिया में दृष्टिकोण, संवेदना और नैतिकता के स्वरूप को भी पुनर्परिभाषित कर रही हैं। वे रिपोर्टिंग में केवल तथ्य प्रस्तुत नहीं कर रहीं, बल्कि प्रश्न उठा रही हैं, समाज को विमर्श में सम्मिलित कर रही हैं और संवाद की दिशा तय कर रही हैं।

अंततः, जब तक मीडिया में स्त्री को केवल विषय नहीं, विचार, द्रष्टा और निर्णायक के रूप में स्थान नहीं मिलेगा, तब तक स्त्री विमर्श अधूरा रहेगा। अत: पत्रकारिता को चाहिए कि वह स्त्री विषयों को मात्र 'वर्गीकृत समाचार' के रूप में नहीं, बल्कि समाज के परिवर्तनशील विमर्श का केंद्रीय तत्व माने। यही पत्रकारिता की भूमिका को अधिक उत्तरदायी, समावेशी और मानवीय बनाएगा।

सुझाव :

1. संपादकीय बोर्ड में महिला प्रतिनिधित्व बढ़ाया जाए।
2. महिला पत्रकारों को निर्णय-निर्माण की भूमिका दी जाए।
3. महिला-संबंधी मुद्दों पर गहराई से रिपोर्टिंग के लिए विशेष संवाददाता नियुक्त किए जाएं।
4. मीडिया शिक्षण संस्थानों में लैंगिक संवेदनशीलता को पाठ्यक्रम में जोड़ा जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Byerly, C. M., & Ross, K. (2006). *Women and Media: A Critical Introduction*. Malden, MA: Blackwell Publishing.
2. Gill, R. (2007). *Gender and the Media*. Cambridge: Polity Press.
3. Krishnan, L. (2019). *Gender and Newsroom Dynamics*. Sage Publications.
4. McQuail, D. (2010). *McQuail's Mass Communication Theory* (6th ed.). London: Sage Publications.
5. Mencher, M. (2011). *News Reporting and Writing* (11th ed.). New York: McGraw-Hill.
6. Rai, S. (2021). "Digital Media and Women's Voice in India", *Journal of Gender Studies*, 9(2), 45-53.
7. Rai, S. (2022). "Digital Media and Women's Representation", *Journal of Media and Gender Studies*, 8(1), 33-41.
8. Sharma, N. (2020). "Women Journalists in India: Challenges and Contributions", *Indian Media Studies Journal*, 6(1), 22–35.
9. Tong, R. (2009). *Feminist Thought: A More Comprehensive Introduction* (3rd ed.). Boulder: Westview Press.
10. कुमारी, एस. (2019). स्त्री विमर्श: एक पुनरावलोकन. पटना: नीलांबर पब्लिकेशन।
11. कुमारी, श. (2020). 'भारत में स्त्री पत्रकारिता की स्थिति', भारतीय मीडिया अध्ययन जर्नल, 12(3), 45-52.
12. प्रभाकर, ए. (2018). भारतीय पत्रकारिता का सामाजिक परिप्रेक्ष्य. लखनऊ: भारत बुक डिपो।
13. बैनर्जी, प. (2021). स्त्री और मीडिया: एक विमर्श, दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
14. बैनर्जी, पी. (2017). 'मीडिया में स्त्री छवि' दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
15. शुक्ला, डी.(2020)'मीडिया, समाज और संस्कृति'भोपाल: लोकमित्र।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

R.K. Narayan's Place in Indian English Fiction

Dr. Mukesh Sathe*

***Assistant Professor (English) Acharya Mandan Mishra Govt.College, Mandleshwar, Khargone (M.P.) INDIA**

Introduction - The year 1935 was perhaps the most momentous in the History of Indian-English fiction, for it marked the beginning of R.K Narayan, needs no introduction to an average reader. Through his Literary works, he certainly proves himself to be the biggest of "The big Three" (R.K.Narayan, Mulk Raj Anand and Raja Rao) Being born and brought up in South India Narayan in his novel hold a universe appeal and evoke such emotions, which knows no geographical boundaries but is common to each human being.

Narayan makes no pretension of his art as a novelist Except that he enjoys writing. He writes primarily for himself or, "he Would have no peace of mind"[14] Writing is not merely a passion for Narayan; it is the essence of his life. He lives, writes, and stands by His conviction "Every writer", he says "has his own theory, method And practice of developing his art just like every doctor has a different Way of arriving at a diagnosis., It is the academics who tend to Generalize, professors who think that literature must be carefully Boxed and labeled" [15]

Narayan has a remarkable gift for telling stories, for Portraying memorably people of small oddities and eccentricities. Haydn Moore William makes the following interesting observation on Narayan "R.K.Narayan always has a good story to tell, like the Bazaar story-teller of immemorial tradition" [16] George Steiner, writing on the decline of story telling in the modern novel, says that few of our modern idols……could have kept a railway carriage entertained on a long journey. Narayan certainly could. Uma Parmeswaran is also not far form the truth in her assessment of Narayan when she says, "Narayan is a story-tellernothing less and Seldom more".[17]

Unlike two of his contemporaries Mulk Raj Anand and Raja Rako Narayan has undeniable a strong penchant for story telling "I'd be quite happiest" maintains Narayan. "If no more is claimed from me being just a story teller, if reader's read more significance in my stories than was meant originally then that's readers understanding of things. But if story is in tune completely with the truth of life, truth as I perceive it then it will be automatically significant".[18] In his novels, Narayan seem to present himself as a copy-book example of a story Teller. The overall structure of his novels unmistakably shows his Adherence to the oral tradition in its content and farm. The pattern of His themes seems to have moral undertones although subtle and Unobtrusive and the novels have easily noticeable episodic structure.

One of the most apparent qualities of Narayan's art is his Artlessness "the most striking quality about both Narayan's work and Narayan himself",Writes Uma Ima Parameswaran,"is unpretentiousness" [19] Narayan treats his story and work as a two in 19 oine and not as two Separate things. "The actual writing of a book", he says, may not Take much time, but its scope and subject takes time to grow and settle In"[20] Talking about Salman Rushdie's. "Midnight Children, Narayan Says, "Personally I am put off by a book that long. I would neither like To read or inflict such a long novel on anyone. I stick to my 200 odd Pages"[21] Prof. P.P. Mehta calls Narayan, "The father of the regional Novel in India"[22] Besides the novels of R.K.Narayan, Raja Rao's Kanthapura has a regional setting. Kanthapura is a typical Indian Village in the state of Karnataka. The novels of MuKulk Raj Anand deals With life in Punjab and the North West Frontier province but he does not carve out a fictional locale like raja Rao and R.K Narayan. Narayan certainly excels the first two of the "big three" in his Mastery of place in fiction. All his novels have Malgudi as the scene Of action and Malgudi Moulds Narayan's characters.

Narayan readers are not only acquainted with main road Principal streets and buildings and landmarks of it, but also with the Men and women who walk the street, inhabit the buildings, and look Admirably upon the landmark. As Narayan recalls;

"I wanted to be able to put in whatever I liked, and wherever I liked, a little street or school or a temple or even a slum, a railway line at any spot, a minor despot in a little world. I began to like my role, and I began to be fascinated by it possibilities, its rivers, market-places and far-off mountains, roads and forests acquired a concrete quality, and have imprisoned me within their boundaries, with the

result that I am unable to escape from Malgudi, even if I wished to...[23]

Through the accumulation of carefully chosen details. Narayan achieves the life like quality in his novels. "In fact", says Meenakshi Mukherjee, "Some of the best work in Indo-AnglianFiction deals withnon-metropolitan situations. Nothing could bemore Provincial and localized than the life of Malgudi town. YetR.K. Narayan successfully achieves a universal vision throughit".[24]Malgudi is the central theme, the soul and as K.R.SrinivasaIyenger Says. "The real hero of Narayan's novels "[25] "Malgudi"observes Prof. C. D. Narasimiah, " is the microcosm of traditionalIndian society" [26] In the words of Prof. Lyenger, "Malgudi isNarayan's Caster bridge', but the inhabitants ofMalgudi althoughthey have their recognizable local trappings are Essentially humanand hence, have their kinship with all humanity. In This sense,Malgudi is everywhere"[27]" Infect, Malgudi is India, k not merely afictional and fictitious south Indian small town but living India, forwhat happens in Malgudi happens all over India. School Childrenand college boys with their likes and dislikes and sincerity andinsincerity in friendship, marital harmony and disharmony, lovekin and out of marriage, love without marriage, Love before andafter marriage, Love triangles, seduction, promiscuity, matching ofhoroscopes prior to marriage e and marriages possibly within thecaste, anti-social elements and social menaces, bribe andadulterationelaborate religious rites and rituals, fake Sashes andgenuine Sanayasis, quarrels between brothers protective paternallove, humanrelationships and encounter between East and Westare the common re-current features of Indian social scene.

Thus a simple inference can be drawn that Malgudi is everywhere in India in every sense. The underlying situation is real to all Indian's and lies very close to their immediate experiences. The Indianness and Indian sensibility pervades the whole place. Narayan's Malgudi is a microcosm of India. It grows and develops and expands and changes, and is full of humanity. It has a deep Indian and local flavour, and its rich variety simultaneously creates the sense of wider human relevance.

Referring to the conception of place, Narayan is reported to have said, "I remember waking up with the name Malgudi on Vijayadasami, the day on which initiation of learning is celebrated"[28] It was in September 1930, he said, that the name of the town had been vouchsafed to him by the divine patron of knowledge.

"Malgudi was an earth shaking discovery for me, because I had no mind for facts and things like that, which would be necessary in writing about Lalgudi or any real place. I first pictured not my town but just the railway station which was a small platform with a Banyan tree, a station master and a two trains a day. One coming and one going. On Vijayadasmi 1 sat down and wrote the first sentence about my town. The train had just arrived at Malgudi Station.[29]

With the passage of time Malgudie also passes through a sea of change but at the same time it retains its traditional values, impact of the West, industrialization and modern ideas is inevitably seen in the life-style of Malgudians; hence Malgudi of *"Swami And Friends' differs very much from that of 'Painter of Signs", "A Tiger for Malgudi" "Talkative Man" and "The World of Nagraj"*. The transformation is there but underneath it all remains essentially the same and we may say that", "Malgudi is the real hero of the novels and many short stories and that underneath the seeming change and the human drama there is something - the soul of the place that defies or embraces, all change and is triumphantly and unalterably itself". [30]

Narayan with his keen observation and deep insight penetrates into the core of Indian life and captures the very essence of it. His chosen protagonists are ordinary men and women. They are anything but outstanding.

Malgudi is people by average and ordinary men and women who generally belong to middle and lower middle classes of South-Indian society. Of these he has first hand knowledge. Infect he himself happens to be a product of the middle class, therefore, he can give authentic and convincing account of them as H.M.Williams has noted, "Private life, families, the ambitions, success and frustration of simple Indian's usually of lower middle class. These have provided Narayan with a plethora of subject matter"[31]

Moreover as Rajeev Taranath observes, he, "Cherishes and explores the unnoticed, subtle possibilities of the average and unremarkable"[32] It is important to note that Narayan does not idealize or glorify them but with remarkable truthfulness compassion and authorial detachment he portrays them as they are caught in net of illusions, deceptions and self deceptions and achievements.

The novel, as Lionel Trilling puts it, is a perpetual quest for reality"[33] Narayan's novels thus we find are more realistic and less idealistic. He engages himself in "a search for the essence of human living"[34] Narayan has persistently dealt with this very important aspect of human predicament. His protagonists constantly search for identity and belonging and disintegrate and decay when they fail to achieve their identity. Narayan's novels do not attempt a philosophical exposition of Indian way of life but his involvement with Indian values and norms is undeniable. His novels imbibe the spirit of his culture. His indomitable faith in the eternal spirit of India. His firm belief in the **Pre-ordained and karma-operated** world. His high regard for the ancient Shastras and his philosophy of acceptance and quietism clearly reflect the sacrosanct tradition he belongs to.

The most important aspect of Narayan's fiction is his preoccupation with human character. In fact it is one of the basic and the necessary element of all fiction at all times. It is only through character and conflict that a novelist explores his chosen theme or themes, David madden and Virgil Scott points out. "The element of conflict and character are as important as that of theme, and the writer who fails to handle

these elements skillfully will have written a poor story regardless of his profound or significant meaning.[35] Therefore Narayan's preoccupation is with, as M.K.Naik puts it, "what man can make of himself and of the entire business of living"[36]

On more than one occasion Narayan has said "I value human relationship very much, very intensely. It makes ones existence worthwhile. Human relationship in any and every form, whether at home or outside."[37] On another occasion in an interview, he is reported to have said:

"The main concern is with human character a central character from whose point of view the world is seen and who tries to get over a difficult situation or succumbs to it or fights in his setting".[38] Narayan himself puts it, "my focus is all on character. If his personality comes alive the rest is easy for me". [39]

Narayan's success lies basically in his treatment of theme. He is able to achieve what he aims at to present his view of the world and vision of life through comic. He treats even most pathetic and serious with the subtle undercurrent of comic. This mode of treatment seems to suit Narayan's purpose admirably that of presenting joys and sorrows, pains and pleasure, smiles and tears through laughter.

Narayan is a master of comedy but at the same time he reflects upon the tragedy of human situation. He is neither an intolerant critic of Indian ways and modes nor their fanatic upholder and defender. He is on the whole content to snap Malgudi life's, little ironies, knots of satiric circumstance and tragi-comedies of mischance and misdirection's.

"At his best he can present smiles and tears together smiling through the tears in glimpse and glimpse and glimpsing the rainbow magnificence of life", [40]

Gifted with unique zest for life, he chooses for his fictional contemplation, ordinary men and women, "like Chekhow, he has produced from their inadequacies, from their weaknesses and shallow pretensions a combination of sadness and comedy that is irresistibly appealing".[41]

The present study seeks to examine Narayans fictional world and its people with the centrality of human relationships. Most of the critical writings on Narayan are eulogistic and introductory in nature, they merely highlight the Indianness of his fiction, his plots, characters, themes, irony, humour and philosophy of life but none so far has highlighted the centrality of human relationship without which the human existence and human-drama is incomplete. We find that even his most rebellious protagonist ultimately returns to the society to be an integral part of it rather than be isolated or prefers to stay within the warm security of the family even with all their strife and struggles.

The present inquiry seeks to highlight the range of familial relations as vividly portrayed by Narayan in a dozen of his novels. The family forms the basic unit for any society. Narayan presents his protagonist against this background of their families and familial relations. He painstakingly draws even the minutest details of their families. Many of them are seen as rooted in tradition, customs, beliefs and superstitions of their families.

To explore the various shades of these human relationships, it will not be out of the place to highlight the thematic patterns and techniques designed to thrive these relationships.

References:-

1. K.R.Srinivasalyingar "Indian Writings in English", (Sterling Rev.ed. 1984, New Delhi); p. 333.
2. V.V.N.Rajendra Prasad - "The self, the family and society in five Indian novelists") Prestige Books, 1990, New Delhi.) - p.14.
3. K.R.Srinivasa Iyengar - "Indian Writings inEnglish". p. 386.
4. Raja Rao, "The Writer of the World", The Literary, criterion, vol. VII, no. 1 (Winter 1965).
5. An interview with Raja Rao in New Delhi, 15, 1978 by Shiv Niranjan published in a book named "Indian Writings in English", "edited by Krishna Nandan Sinha" - Heritage Pub. New Delhi.
6. K.R.Srinivasalyenger "Indian Writings in English", (Sterling publication Pvt.Ltd., New Delhi, fourth edition, pg.No.406.
7. Ibid.;
8. Ibod.; p.no.400.
9. M.K.Naik, "The Kingdom of God is within a "Mew", A study of the Cat And Shakespeare" (Karnataka University Journal, vol. Xii, (1968), p.123.
10. KR Srinivasa Iyenger Indian Writings in English, Sterling Rev. ed. 1984 New Delhi, p. 498.
11. G.P.Sarma - "Nationalism in Indo-Anglien fiction" Sterling Publication Pvt.Ltd., 1978, New Delhi. p.254.
12. K.S.Ramamurti 0 "Rise of Indian Novels in English" (Sterling Publication Pvt.Ltd., 1987), p.104.
13. K.R.Srinivasalyenar - Indian Writings in English (Sterling Publication Pvt.Ltd.,) p.466.
14. Ibid.; p.;801.
15. Ved Mehta 'The Train had Just Arrived at Ma Station", John is not Easy to Please, (London, 1974), p.
16. Haydn Moore Williams, Studies in Modern Indian Ficti English Vol. II, (Calcutta Writers Workshop, 1973).
17. 'A Study of Representative Indo-English Novelist (Delhi, Vikas, 1976) p.46
18. India Today, 15 Feb. 1972 ð.6.
19. "A Study of Representative Indo-English Novelists" p.45
20. Sunil Sethi, "Only the Story Matters" (an interview w R.K.Narayan) India Today, 15th Feb. 1972, p.59.
21. Ibid.; pg. 62.
22. P.P.Mehta, "Indo Anglian Fiction" - 2nd (Bareilly: Praka Book Dept. 1979), p. 198.
23. S.Krishnan - Malgudi Landscapes, the best of R.K.Narayan - "Where is Malgudi - VIII, Envoy.

24. Meenakshi Mukharjee "The Twice Born Fiction" - (New Delhi Heinemann 1971) p.25.
25. K.R.Srinivasalyenger - "Indian Writings in English" p.284.
26. C.D.Narasimiah; "The Swan and The Eagle") Simla Indian Instt. of Advance Study, 1969) p. 136.
27. "Indian Writings in English", IIIed P.360.
28. "The Train had Just Arrived at the Malgudi Station", John is easy toe please (London Sicker and Warburg, 1971) p.55.
29. R.K.Narayan, My Days (Mysore Indian Gough Publication, 1975), p.94.
30. K.R.Srinivasalyenger in English p.94, IIIrd edition.
31. H.M. Williams - Studies in Modern Indian Fiction in English, Vol. 1, p.59.
32. Rajeev Taranath - "The average as positive" - A note on R.K.Narayan, critical essays on I.W.E. ed. H.K.Naik Madras, The MacMillan, 1977, p.307.
33. The Liberal Imagination (New York, Double Day 1933, pg.205)
34. C.PaulVerghese - Problem of the Indian Writings in English (Bombay Somaiba Publication, 1971) pp. 124-125.
35. David Madden and Virgil Scott, "Studies in the Short Stories (New York, Rinehart and Winston 1984) p.13.
36. M.K.Naik, The ironic vision, A Study of Fiction of R.K.Narayan's (New Delhi: Sterling 1983) p.1.
37. Eudora Welty, "Place in Fiction", Critical Approach to Fiction, ed. Shiv Kumar and Kenth Mc-Kean (New York Megrow-Hill 1968) p.254.
38. M.K.Naik "The spirit of the Place" Literary endeavors, vol.III, nos.3 & 4,
39. VedMehata, "The Train Had Just Arrived at Malgudi Station", p.148. Q
40. K.R.Srinivasalyenger; Writings in English, Rev.ed. 1984, p.384.
41. George Woodcock, "Narayan, R.K.Commonwealth Literature (London Macmillan, 1979), p.176.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Romantic Idealism vs. Realism in Leadership: A Management Study of George Bernard Shaw's *Arms and the Man*

Dr. Minhal Haider* **Dr. Sehba Jafri****

*P.hD. (Commerce) Saifia Science College, Bhopal (M.P.) INDIA
** P.hD. (English) Saifia Science College, Bhopal (M.P.) INDIA

Abstract: This research paper explores the dichotomy between romantic idealism and realism in leadership, using George Bernard Shaw's play *Arms and the Man* as a case study. The analysis focuses on how Shaw critiques idealistic leadership through the contrast between characters like Sergius Saranoff and Captain Bluntschli, and how this critique informs modern management theory. The paper argues that Shaw promotes a model of leadership grounded in pragmatism, competence, and emotional intelligence over theatrical heroism. It also explores the contrasting leadership philosophies of romantic idealism and pragmatic realism as depicted in George Bernard Shaw's play Arms and the Man. Through a management studies lens, it evaluates the implications of these approaches on leadership effectiveness. The paper draws parallels between the play's characters and modern leadership theories, concluding that balanced realism leads to more sustainable and efficient leadership.

Introduction - Leadership has long been shaped by narratives of heroism and idealism, often rooted in romantic notions of valor, sacrifice, and inspiration. However, the realities of effective leadership in organizational and military contexts demand a balance of vision and practicality. George Bernard Shaw's Arms and the Man serves as a compelling literary text to examine this dichotomy. Written in 1894, the play satirizes the romantic notions of war and leadership prevalent in the 19th century and introduces a modern, realistic perspective through its characters. Leadership has, in this way, was long been a subject of analysis in both literature and management studies. In Arms and the Man, Shaw presents a satirical examination of war, heroism, and leadership through two opposing characters: the romantic idealist Sergius and the pragmatic realist Bluntschli. This paper aims to analyze how these characters represent different leadership styles and what modern management can learn from them.

Objectives: There are several objectives behind this paper:

A. To identify and analyze the traits of romantic idealism and realism in leadership through the characters of Sergius and Bluntschli.
B. To understand Shaw's critique of romantic heroism.
C. To draw parallels between the leadership styles depicted in the play and contemporary management theories.
D. To assess the relevance of Shaw's message for modern organizational leadership.

Romantic Idealism in Leadership: Sergius Saranoff Sergius Saranoff represents the romantic idealist leader. He is valorized for a dramatic cavalry charge, which, while militarily flawed, is glorified by society. His leadership style is rooted in performance, image, and a desire for admiration. He lacks practical skills, is inconsistent, and seeks validation through grandeur rather than competence. In management terms, Sergius mirrors a leader driven by charisma but lacking in strategic thinking and operational efficacy.

Realism in Leadership: Captain Bluntschli In contrast, Captain Bluntschli embodies realistic leadership. A Swiss professional soldier, he values survival, logistics, and rational decision-making over theatrics. Bluntschli's leadership reflects modern managerial principles such as evidence-based decision making, emotional intelligence, adaptability, and ethical pragmatism. He is respected not for flamboyance but for reliability and competence.

Shaw's Critique and Management Implications Shaw critiques romantic idealism not merely for its impracticality but for its potential danger. Idealistic leaders like Sergius can lead organizations into poor decisions driven by ego and illusion. Bluntschli, though initially underestimated, emerges as the true leader due to his realistic assessment of situations and humane approach. Shaw's work aligns with contemporary leadership theories like Transformational vs. Transactional Leadership, Servant Leadership, and Adaptive Leadership.

Contemporary Parallels: Transformational Leadership:

Often romanticized, it risks becoming Sergius-like if not grounded in reality.

1. Romantic Idealism in Leadership: Sergius Saranoff Sergius Saranoff represents the romantic idealist leader. He is valorized for a dramatic cavalry charge, which, while militarily flawed, is glorified by society. His leadership style is rooted in performance, image, and a desire for admiration. He lacks practical skills, is inconsistent, and seeks validation through grandeur rather than competence. In management terms, Sergius mirrors a leader driven by charisma but lacking in strategic thinking and operational efficacy.

2. Realism in Leadership: Captain Bluntschli In contrast, Captain Bluntschli embodies realistic leadership. A Swiss professional soldier, he values survival, logistics, and rational decision-making over theatrics. Bluntschli's leadership reflects modern managerial principles such as evidence-based decision making, emotional intelligence, adaptability, and ethical pragmatism. He is respected not for flamboyance but for reliability and competence.

Shaw's Critique and Management Implications Shaw critiques romantic idealism not merely for its impracticality but for its potential danger. Idealistic leaders like Sergius can lead organizations into poor decisions driven by ego and illusion. Bluntschli, though initially underestimated, emerges as the true leader due to his realistic assessment of situations and humane approach. Shaw's work aligns with contemporary leadership theories like Transformational vs. Transactional Leadership, Servant Leadership, and Adaptive Leadership.

Conclusion: In Arms and the Man, George Bernard Shaw critiques the romantic idealism often associated with leadership, especially in the context of war and social hierarchy, by juxtaposing it with a pragmatic realism represented through the character of Captain Bluntschli. Through a management lens, the play serves as a powerful commentary on effective leadership. Idealistic leaders like Sergius are portrayed as dramatic and flamboyant, driven more by image and passion than logic or results. In contrast, Bluntschli exemplifies a realist leader—competent, practical, and grounded in reality.

This study reveals that romantic idealism, while inspiring, can lead to inefficient decisions and a distorted sense of heroism, whereas realism in leadership encourages rational planning, strategic thinking, and adaptive responses to challenges. Shaw thus promotes a model of leadership that balances ethical conviction with practical execution—qualities essential for effective management in any modern organization. The play, while satirical, presents valuable insights into leadership paradigms that remain relevant to management studies today

References:-

1. Shaw, G. B. Arms and the Man. London: Penguin Classics, various editions.
2. Freeman, R. Edward. Strategic Management: A Stakeholder Approach. Pitman, 1984.
3. Bass, B. M., & Bass, R. The Bass Handbook of Leadership: Theory, Research, and Managerial Applications. Free Press, 2008.
4. Goleman, Daniel. Emotional Intelligence: Why It Can Matter More Than IQ. Bantam Books, 1995.
5. Yukl, Gary. Leadership in Organizations. Pearson Education, 8th Edition, 2013.
6. Northouse, Peter G. Leadership: Theory and Practice. Sage Publications, 9th Edition, 2021.
7. Holroyd, Michael. Bernard Shaw: The One-Volume Definitive Edition. Vintage, 1998.
8. Joad, C.E.M. Shaw and Society. London: Victor Gollancz, 1939.
9. Daft, Richard L. The Leadership Experience. Cengage Learning, 7th Edition, 2017.
10. Jones, Gareth R., & George, Jennifer M. Contemporary Management. McGraw-Hill Education, 9th Edition, 2016.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

India European Union Relations in Changing World

Dr. Swati Thakur*

***Assistant Professor (Political Science and Public Administration) Dr. Shakuntala Misra National Rehabilitation University, Lucknow (U.P.) INDIA**

Abstract: The world is undergoing dramatic transformations. The old liberal world order which ensured peace and economic growth is gradually fading away. The transatlantic alliance which had provided strength to Europe is falling apart under Trump Presidency. India is emerging as significant power as world's fourth largest economy. Both India and EU need new partners and alliances to face the changing dynamics of the world. This paper examines the changing nature of world politicsand identifies areas of common ground as well as those where India and EUcan cooperate, and finally evaluates the future of this alliance in light of the dynamic global scene.
Keywords: India, European Union, World Order.

Introduction - International relations are undergoing dramatic shifts in contemporary times.World economy is changing, geopolitical power structures are moving, and Multilateralism is increasingly gaining prominence.Under these circumstances, the relationship between the EU and India has acquired new strategic significance. India and the European Union, being two of the most powerful democracies in the world, have a common dedication to human rights, sustainable development, and a rules-based international order. Both India and European Union have common ground on many fronts, and their alliance is developing to reflect that. These include climate change, global governance, security cooperation, trade and technology, and more. Both parties are beginning to see the other as critical to constructing a more stable international system in the face of new threats like China's ascent, the crisis between Russia and Ukraine, and the shifting dynamics of global supply networks. To comprehend the true dynamics of India-European Union ties, it is essential to grasp the polycrisis currently affecting the world.

Changing world Order: The liberal world order was formed following the Second World War. The period was characterised by the formation of robust trans-Atlantic connections, leading to a rules-based international system. wherein institutions such as the United Nations, World Bank, International Monetary Fund, and GATT embodied the concept of promoting mutual interests among nations.During this period, Europe established the institution known as the European Economic Community (EEC). Subsequently, following the conclusion of the Cold War, neoliberal ideology was advanced under U.S. hegemony, resulting in an age characterised by globalisation, free trade, and open markets. During this period, the EEC evolved into the European Union. Asian nations such as China and India have benefited from the rule-based neoliberal order. They liberalised their economies and rapidly became as significant global economic actors.

The neoliberal world order is now gradually declining. The neo-liberal international order, which has prevailed in global politics and economy since the conclusion of the Cold War, is experiencing considerable transformation. This order was based on the basic principles of free markets, open commerce, limited government involvement, and globalisation. The United States of America has acted as the guarantor of this order. In recent years, it has showing signs of strain from both internal inconsistencies and external forces.The 2008 global financial crisis revealed the vulnerabilities of deregulated financial markets, resulting in enhanced distrust towards the self-rectifying nature of markets and the minimal role of the state. Subsequently, there has been a growing call for more robust regulatory mechanisms and greater state involvement in economic and social affairs.Furthermore, the limitations of market-driven solutions have been underscored by global challenges such as technological disruption, pandemics, and climate change, which have underscored the necessity of coordinated, collective action. These concerns necessitate long-term planning, multilateral cooperation, and robust state intervention. In addition to this in many places of the world, democratic rule is being taken away and authoritarianism and national egoism are coming back. This makes it hard for rules-based international politics and the basic ideas of multilateralism[1] to work.

Challenges for Europe: The evolving dynamics of the

world have impacted Europe. It is encountering issues that were inconceivable a few years ago.The eighty years of peace and stability in Europe are on the brink of disintegration. The Russian takeover of Crimea in 2014 and subsequent aggression towards Ukraine have demonstrated that territorial boundaries can be altered. The Russia-Ukraine conflict indicates that borders and relationships are in flux. The EU has never functioned as a military organisation. These security risks provide a significant issue, as Europe relied on the United States as a reliable friend to address its security requirements. Trump has adopted a transactional approach towards EU and the transatlantic partnership is falling apart.

The Trump administration is thought to have aggressively aligned itself with far-right groups and players within the European Union, particularly those sceptical or outright opposed to European integration. Some speculated that Trump's aim was to dismantle the European Union and reconstruct it according to his vision[2].The United States harbours colonial ambitions in Europe, including the acquisition of Greenland. The existing security paradigm of the transatlantic alliance, in which post-war Europe had flourished, was no longer assured. Besides the Trump administration has initiated a tariff conflict, indicating that the principle of free movement of goods, capital, and services is being effectively repudiated by the very entity that once guaranteed this system.

The European Union is presently confronting a challenge from China. The trade between the EU and China is significantly imbalanced. The European Union experiences a trade deficit of over 400 billion euros with China, primarily attributed to imports of solar cells, electronics, machinery, and electric vehicles[3]. The increasing reliance on China is a source of apprehension and discussion in Europe. The EU aims to mitigate risks associated with China and is seeking new partnerships.

In a recent interview French President Emanual Macron said that the worst thing for Europeans would be to think that they must be followers and adapt ourselves to the American rhythm and a Chinese overreaction[4]. This clearly indicates that Europe is changing its foreign policy. It needs new meaningful alliances and India can be a good option.

India-EU partnership: The India-EU relations go back to the time when the process of European integration had just begun. Over the years the European union and India have developed a close relationship that cover key areas such as political relations, trade and investment, economic and development cooperation as well as cultural exchanges. in the year 1994 India – EU cooperation Agreement was signed in both the countries agreed to cooperate with each other in areas of trade and commerce. Further both agreed to institutionalise their relations by holding regular summits. Later in the year 2004 India EU elevated their relationship to strategic level where both the entities agree to elevate bilateral relationship to strategic partnership.Over two decades after signing the India-EU Strategic Partnership in 2004, the EU launched its India Strategy in 2018. Nonetheless, immense scope remains to enhance strategic influence and maximize synergies between the two actors in several sectors[5].A number of bilateral cooperation agreements have been signed in several areas like civil aviation, Energy and climate partnership and Science and technology. However, India EU relations have been underperforming[6] and has often been described as lackluster.

India and the EU have been facing challenges from the changing dynamics of current world order. Both India and the European Union are placed at different stages of development and possess differing worldviews. However, there is deep rooted desire in both the entities to strengthen their partnership. This desire was amplified inthe visit of the European Union College of Commissioners, led by Ursula von der Leyen, to India. It was not only the first visit by the newCommission outside the EU, but also the first such visit in the history of India-EU bilateral relations. This visit marked a significant response to the changing world order. Her visit has opened a new chapter in India-EU relations. She highlighted that India- EU relations are not just about values but also about shared interest and that interest includes several areas like climate change, Human Rights and Free trade

India -EU partnership has been very slow. Both India and EU started the talks on Free Trade Agreement (FTA) in 2008 it was stopped in the year 2013. Europe maintained an advantageous commerce relationship with the United States during the post-Cold War period as a result it did not prioritise its relations with India. Nevertheless, under the leadership of President Donald Trump, the United States is striving to alter this, contending that it is detrimental to the country's economic interests. Trump has implemented reciprocal tariffs on European nations as part of his "Make America Great Again" campaign in order to counteract their advantageous trade balance with the United States. Trump's approach has acted as catalyst to boost India-EU FTA. These talks have resumed again with the visit of Ursula von der Leyen with her cabinet with the target of completion by the end of this year. FTA would be advantageous for both the entities as India is the fourth biggest economy and EU is the single biggest market. Therefore, the trade partnership between the two is natural.

The rise of China as a formidable global force poses a challenge to both Europe and India. The Belt and Road Initiative (BRI) created by China is an ambitious infrastructure endeavour spanning multiple continents. It will enhance its commerce. India and the EU have been exploring alternatives to fight the Belt and Road Initiative (BRI) initiative. India and the EU have jointly agreed to initiate the India-Middle East-Europe Corridor Project (IMEC). The proposed IMEC will comprise railway, ship-to-rail networks, and road transport links spanning two

corridors: the eastern corridor linking India to the Gulf, and the northern corridor connecting the Gulf to Europe. His initiative aims to establish a dependable and economical cross-border ship-to-rail transit network to enhance current maritime and road transport lines[7].According to Ms. von der Leyen, President of the European Commission, the corridor is "something more than a railway or cable; it is a digital and green bridge that spans continents and civilisations." She referred to it as the "most direct connection" between India, the Gulf, and Europe, as it would facilitate commerce between the two continents at a 40% faster pace[8].

Both of them have different approach towards Russia. Russian attack on Ukraine has posed serious threat to the very idea of European integration. EU has imposed sanctions over Russia.Whereas, India has close partnership with Russia.EU has serious objection of a vibrant democracy like India doing business with Russia. This is one area where both the entities need more understanding.

Conclusion: The is changing at fast pace. The old liberal order which provided stability is now fading away. The rise of China as a major economy with imperialistic ambitions is posing a threat to the world. Under these circumstances both India and European Union appear to be natural partners. Both are vibrant democracies with multicultural societies. They both have faith in rule-based world order. India is the fourth largest economy and European Union is the biggest single market. Cooperation between the two will be beneficial for both.Both India and EU face common challenge in US and China. It is a good opportunity for both of them to work together. The initiatives such as FTA and IMEC will help them to present an alternative to the world.The EU needs to show more enthusiasm towards India to make the relationship more meaningful.

References:-

1. Philipp Gieg (ed), EU- India Relations: The Strategic Partnership in light of European Global Strategy, Springer, p-V
2. Suresh Nambath, Ukraine: Europe's war with Russia, THG publishing, p57
3. The Hindu , September 23, 2023
4. The Hindu, April 10, 2023
5. ORF India, the EU and the Demand for Renewed Partnerships, Author: Swati Prabhu, https://www.orfonline.org/expert-speak/india-the-eu-and-the-demand-for-renewed-partnerships
6. Bhaswati Mukharjee, India- EU an Insider's view, ICWA and VIJ books publication, p73
7. The Hindu, September 15, 2023
8. The Hindu, September 15, 2023

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

उच्चमध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों का समायोजन क्षमता पर शिक्षकों तथा विद्यालय वातावरण के प्रभाव का अध्ययन

डॉ. अमित कुमार शर्मा* एकता सिंधु**

* असिस्टेट प्रोफेसर, एशियन इंटरनेशनल यूनिवर्सिटी, इम्फाल (मणिपुर) भारत
** शोधार्थी (शिक्षा) एशियन इंटरनेशनल यूनिवर्सिटी, इम्फाल (मणिपुर) भारत

शोध सारांश – समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई छात्र अपने विद्यालय, समाज तथा अपनी कक्षा में सामंजस्य पूर्ण सम्बन्ध स्थापित कर लेता है। उसी के कारण छात्र का सम्पूर्ण मानसिक एवं व्यक्तित्व का विकास सम्भव हो पाता है। यदि छात्र अपने वातावरण में समायोजन नहीं कर पाता तो उसका विकास बाधित हो जाता है। समायोजन से छात्रों का आत्मविश्वास बढता है वर्तमान शोध में मुजफ्फरनगर जनपद के ग्रामीण छात्रा में माध्यमिक स्तर के छात्रों से एक प्रपत्र प्रश्न द्वारा उनके शिक्षकों के बारे में जानकारी प्राप्त की गई। यही जानकारी छात्र को विद्यालय के वातावरण में समायोजित करने को प्रभावित करती है। प्रश्न प्रपत्र के द्वारा छात्रों से अध्यापक को पढाने की रूचि कुशलता, इच्छा, परीक्षा मूल्यांकन में ईमानदारी, शिक्षक द्वारा गृहकार्य समझाना, शिक्षा द्वारा पाठयक्रम भी उपयोगिता, अपनी शिक्षण क्षमता में सुधार तथा विद्यालय प्रबन्धन के सहयोग में सम्बन्धित प्रश्न पूछे गये थे। छात्रों को प्रत्येक प्ररून में दो विकल्प दिये गये थे। भिन्न भिन्न छात्रों ने दोनों में से एक विकल्प का उत्तर दिया। इन आंकडों को सभी विद्यालयों से एकत्र कर परिणाम ज्ञात किया। साख्यिांकी विशलेषण द्वारा ज्ञात हुआ कि विद्यार्थियों के दोनों समूहो में कोई सह सम्बन्ध नही पाया गया। सबके अपने स्वतन्त्र विचार थे।

शब्द कुंजी – अध्यापक आंकलन सह, सम्बन्ध, समायोजन, विद्यालय छात्र, प्रश्न प्रपत्र।

प्रस्तावना – भारत में स्वतंत्रता से पूर्व शिक्षा की व्यवस्था पूर्ण रूप से व्यवस्थित नहीं थी। स्वतंत्रता के वाद सरकार द्वारा विभिन्न स्तर के विद्यालयों को चालू किया गया। पहले अधिकतर लोग शिक्षा पर ध्यान न देकर अपने व्यवस्याय में लगे रहते थे। जनसंख्या वृद्धि के साथ शिक्षा पद्धति तथा शिक्षण तकनीकों में भी धीरे-धीरे सुधार होता गया तथा समाज एवं सरकार के प्रयासों से पढने वालों की संख्या में वृहित होने लगी। आधुनिक समय में शिक्षकों के प्रशिक्षण पर भी ध्यान दिया जा रहा है। इसके लिए सरकार समर्थित तथा व्यक्तिगत विद्यालयों की स्थापना में भी निरन्तर वृद्धि हो रही है।

विश्व की आधुनिक स्थिति के अनुसार इस समय शिक्षा में कई अन्य परिर्वतनों की भी आवश्यकता अनुभव की जा रही है। जिससे भावी नागरिकों को शिक्षित एवं प्रशिक्षित करके उन्हें योग्य बनाया जा सके। वैसे तो उत्तम विद्यार्थी प्रारम्भिक शिक्षा में सुधार से तैयार किये जा सकते है। परन्तु उच्च माध्यमिक स्तर भी शिक्षा का विशेष महत्व होता है। क्योकि इस अवस्था में छात्र स्वयं के निर्णय लेने में सक्षम होने लगता है। अत: इस स्तर पर शिक्षकों का दायित्व तथा महत्व भी बढ जाता है। इन सबके उपरान्त भी भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा के प्रति उत्साह कम ही देखा जा रहा है। साथ ही सुविधाओ के आभाव के कारण शिक्षक भी पूर्ण रूचि तथा इच्छा के ग्रामीण क्षेत्र के विद्यालयों में शिक्षण करने से कतराते है। इससे छात्रों की समायोजन क्षमता प्रभावित होती है तथा उनमें आत्म-सम्मान की कमी रह जाती है। वर्तमान शौध में जनपद मुजफ्फर नगर के ग्रामीण क्षेत्र के विद्यालयों से 100 छात्रों का चयन कर उनसे शिक्षकों के बारे में प्रश्न प्रपत्र द्वारा जानकारी एकत्र की गई तथा उसका विश्लेषण किया गया है।

सामग्री एवं विधि- विद्यालय में छात्रों के समायोजन का अध्ययन करने के लिए जनपद मुजफ्फर नगर के ग्रामीण क्षेत्र के विद्यालय से कक्षा 12 में से 10-10 छात्रों का चयन कर उनसे विद्यालय के शिक्षकों के बारे में जानकारी प्राप्त की गई थी। इसमें छात्रों ने अपनी इच्छानुसार बिना किसी दबाव के अध्यापकों के बारे में अपने विचार व्यक्त किये। प्रश्न प्रपत्र के प्रत्येक प्रश्न के दो रखे गये थे। छात्रों को किसी एक विकल्प में चुनना था। अत: में सभी विशलयों के छात्रों को अलग अलग जोडा लिया गया था जिन्होंने प्रथम या द्वितीय विकल्प चुना था।

दोनों विकल्पों के कुल छात्रों का सांख्याकी द्वारा आपस में सहसम्बन्ध तथा टी (+) गुणांक ज्ञात किया गया।

जिन विद्यालयों से आकडें एकतत्र किये गये वे निम्न प्रकार थे।

1. आदर्श जनता इण्टर कॉलेज, रसूलपुर
2. ऐन्जिस इण्टर कॉलेज, जिला मन्सूरपुर
3. कुंद कुंद जैन इण्टर कॉलेज, खतौली
4. राजवंश विद्या मंदिर इण्टर कॉलेज, मुजफ्फर नगर
5. श्री देवी मंदिर इण्टर कॉलेज, खतौली
6. चौ0 तिलक राम इण्टर कॉलेज, खतौली
7. पिकेट इण्टर कॉलेज, खतौली
8. स्प्रिंगडेल पब्लिक स्कूल, मन्सूरपुर

प्रत्येक विद्यालय से 10-10 छात्र कक्षा 12 से चुने गये। परन्तु चौ0 तिलकराम इंटर कॉलेज तथा पिकेट इंटर कॉलेज से 20-20 छात्र लिये गये

थे। उनमें 10 छात्र विज्ञान विषय के तथा 10 छात्र कामर्स/कला विषय के थे। चुने गये 100 छात्रों में विज्ञान के 40 कला तथा कामर्स के 30-30 छात्र थे। इनमें छात्राओं की संख्या 65 तथा छात्र 35 थे। प्रश्न प्रपत्र भरने के लिए कोई निर्देश या दबाव नहीं दिया गया था तथा ही विद्यालय को उनके उत्तर के बारे में बताया गया था। प्रश्न प्रपत्र में मुख्य प्रश्न शिक्षकों द्वारा कितना कोर्स पढाया गया, शिक्षक की पढाने की इच्छा एवं कुशलता उत्तरपुस्तिका मूल्यांकन में ईमानदारी, गृहकार्य समझाना, प्रतियोगी परिक्षाओं तथा विषय की उपयोगिता बताना, विद्यार्थियों की समस्याओं का समाधान, खेलकूद भ्रमण तथा अन्या प्रतियोगिताओं का आयोजन करना प्रश्न सम्मिलित थे। छात्रोंको संख्या को एक एक अंक मान कर परिणाम एवं विश्लेषण सारिणीबद्ध किया गया।

प्रश्न प्रपत्र में कुल 16 प्रश्न पूछे गये थे। प्रत्येक प्रश्न के दो विकल्प में से एक को चुनना था। सभी विद्यालय के प्रथम व द्वितीय विकल्प चुनने वाले छात्रों का योग कर प्रश्न संख्या के सामने अंकित किया गया था। वाद में सांख्याकी विद्धि से सहसम्बन्ध तथा टी (+) गुणांक ज्ञात किया गया।

पूछे गये प्रश्न एवं विकल्प-

1. अध्यापक द्वारा कक्षाओं में कितना कोर्स पढाया गया।

विकल्प -1 80-100 प्रतिशत 2. 60-80 प्रतिशत

2. कक्षा में शिक्षक कितनी तैयारी से आते है।

विकल्प-1 पूर्ण2. संतोष जनक

3. शिक्षक छात्र को कक्षा में समझाने का कितना प्रयास करते है।

विकल्प- 1. पूर्णतया 2. संतोषजनक

4. शिक्षक की पढाने के प्रति इच्छा

विकल्प- 1. अछिक2. अच्छी

5. उत्तर पुस्तिका परीक्षण में शिक्षक की ईमानदारी।

विकल्प- 1. सदैस अच्छी 2. संतोषजनक

6. शिक्षक द्वारा दिये गये गृहकार्य को समझाना

विकल्प- 1. हरबार 2. कभी कभी

7. विद्यालय द्वारा छात्रों को प्रमण पर ले जाना

विकल्प- 1. समय समय पर 2. कभी कभी

8. विद्यालय द्वारा छात्रों के सामाजिक एवं भावनात्मक विकास का प्रयास

विकल्प-1. अच्छी प्रकार 2. सामान्य रूप से

9. शिक्षकों द्वारा छात्रों को प्रतियोगी परीक्षाओं तथा पाठ्यक्रम के नाम बताना

विकल्प-1. सदैव 2. कभी कभी

10. छात्रों को उदाहरण देकर पाठ्य क्रम की उपयोगिता बताना

विकल्प-1. हमेशा 2. कभी कभी

11. शिक्षकों द्वारा अपनी शिक्षण कमियों को सुधारने का प्रयास

विकल्प- 1. सदैव 2. कभी कभी

12. विद्यालय प्रबन्धन द्वारा छात्रों की योगता बढाने का प्रयास

विकल्प 1 हॉ 2. कभी कभी

13. शिक्षकों द्वारा छात्रों की समस्या का समाधान

विकल्प 1. अधिकांश 2. बहुतकम

14. शिक्षकों तथा विद्यालय द्वारा छात्रों को नौकरी पाने में मदद करना

विकल्प 1. सदैव 2. कभी कभी

15. शिक्षकों द्वारा श्यामपट के अलावा शिक्षण में अल्पसाधनों का प्रयोग

विकल्प - 1. 50-60 प्रतिशत 2. 50 प्रतिशत से कम

16. शिक्षकों द्वारा छात्रों को अन्य क्रियाओं में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना

विकल्प 1. सदैव 2. कभी कभी

सारिणी: अध्यापक आंकलन प्रपत्र में छात्रों प्रपत्र की संख्या में सह सम्बन्ध-

			विचलन		विचलन का वर्ग		
सं.	समूह 1X	समूह 2Y	X^1	Y^1	X^2	Y^2	X^1Y^1
1	62	38	9.2	-9.4	88.36	88.36	-86.48
2	65	35	12.2	-11.4	148.84	129.96	-139.08
3	59	41	6.2	-6.4	38.44	40.96	-39.68
4	65	35	12.2	-12.4	148.84	153.76	-151.28
5	61	39	8.2	-8.4	67.24	70.56	-68.88
6	59	41	6.2	-6.4	38.44	40.96	-39.68
7	57	43	4.2	-4.4	17.64	19.36	-18.48
8	47	53	-5.8	5.6	33.64	31.36	-49.88
9	45	55	-7.8	7.6	60.84	57.76	-59.28
10	56	44	0.2	-3.4	0.04	11.56	-0.68
11	43	57	-9.8	9.6	96.04	92.16	-94.08
12	45	55	-7.8	7.6	60.84	57.76	-59.28
13	46	54	-8.8	6.6	77.44	63.56	-58.08
14	46	55	-8.8	6.6	77.44	43.56	-58.08
15	38	62	-14.8	14.6	219.04	213.16	-216.08
16	48	52	-4.8	4.6	17.64	21.16	-220.08
योग	842	758	127	130	1190.46	115.56	1196.16

X' = प्रथम समूह का औसतांक से विचलन

Y' = द्वितीय समूह का औसतांक से विचलन

सरिणी में 1-16 तक के प्रश्नों के उत्तर जिन छात्रों ने प्रथम एवं द्वितीय विकल्प में दिये है। उन्हें समूह -1 व समूह-2 में रखकर योग किया गया। इस प्रकार दोनों समूहों में सह सम्बन्ध ज्ञात किया जिसका मान -1.63 पाया गया। अर्थात दोनों समूहों के छात्रों ने अपने स्वतंत्र विचार व्यक्त किये है। वे एक दूसरे से प्रभावित नहीं है।

टी (+) गुणांक का मान 0.45 पाया गया जबकि इसका सारिणी मुल्य 0.05 स्तर पर 1.7 तथा 0.01 स्तर पर 2.35 है। शौध से स्पष्ट हो गया कि छात्रों के समायोजन में शिक्षकों तथा विद्यालय प्रबन्धन की विशेष भूमिका होती है। जब तक शिक्षक-छात्र में समाजस्य स्थापित नहीं होगा तब तक छात्रों की समायोजन क्षमता विकसित नहीं होगी तथा न ही उनमें आत्मविश्वास की वृद्धि हो पायेगी। अत: छात्रों को शिक्षण के अतिरिक्त भी किसी न किसी रूप में शिक्षकों के सम्पर्क में रहना अनिवार्य होता है। इसके लिए शिक्षक एवंविद्यालय प्रबन्धक को कार्यक्रम बनाकर छात्रों के पूर्ण विकास पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है।

इस प्रकार के प्रयास शिक्षा क्षेत्र में प्रारम्भ से ही शोधकर्ताओं के द्वारा किये जाते रहे है। जिनमें विद्यार्थियों की रूचि के साथ अन्य विषयों पर भी शौध प्रस्तुत किये है। पासो तथा शर्मा (2010), खरे (1998), सिन्हा (1978), पाडेय व तिवार (1978), जंग बहादुर (2003), जेकव तथा

लेफग्रीन (2003), सिंह व राकेश कुमार (2011), होपकिन्स (2010), अकबरी तथा साहिब जादा (2020), सिंह (2016), चौथानी (2014)

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पासी तथा शर्मा (2010), माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शिक्षण दक्षता का अध्ययन। भारतीय आधुनिक शिक्षा।
2. कंचन खरे (1996), प्रतापगढ जनपद के सनातक स्तर के छात्र-छात्राओं की शैक्षिक निष्पान्ति पर सामाजिक आर्थिकसतर के प्रभाव का अध्ययन। प्रकाशित लघु एम0 डी0 लघुशैध प्रबन्धक, पूर्वाचल विश्वविद्यालय, जौन पुर।
3. सिन्हा जे0 सी0 (1978), परिवार की ईकाई के रूप में उसकी भूमिका का उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों की व्यवसयिक रूचि पर प्रभाव। थर्ड सर्वे ऑफ ऐजुकेशनल रिसर्च (11), पी0 एचट डी0 शिक्षा शास्त्र, कोलक्ता, विश्वविद्यालय।
4. पाडे व तिवारी (1978), विद्यार्थियों की रूचि, अभिवृति एवं शैक्षिक उपलब्धि पर सामाजिक व आर्थिक सह- सम्बन्ध। स्वतंत्र अध्ययन, एन0 सी0 आर0 टी0, नई दिल्ली।
5. जंग बहादुर (2003), ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों के शिक्षकों की बुद्धि का उनकी शिक्षण अभिरूचि का तुलनात्मक अध्ययन। बीरबहादुर पूर्वाचल विश्वविद्यालय, जौनपुर।
6. जंकब वीव ओ0 तथा लेफ ग्रीन एल (2003), द इम्पैक्ट आफ टीचर ट्रनिंग आन स्टुडैन्ट अचीवमैंट। ऐक्सपैरिमैंट अवार्डस फ्राम स्कूल रिफार्म इफैक्ट इन शिकागो।
7. सिंह आर0 के (2011), माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों की शैक्षिक आकाक्षा, समायोजन क्षमता एवं रूचि का सजनशीलता के परिपेक्ष में अध्ययन। पी0 एच0 डी0 शिक्षाशास्त्र, राममनोहर लोहिया विश्वविद्यालय, फैजाबाद।
8. हापकिन्स जे0 (2010), इफैक्टिवनैस आफ इटरेक्शन एनालाइसिस,आबजर्वेशन सिस्टम टुवर्डस मेडिफिकेशन आफ टीचर्स बिहेवियर। जर्नल आफ ऐजुकेशन, टैक्नोलोजी।
9. अकबरी ओ0 तथा सहिवजादा, जे0 (2020), स्टुडैन्ट्स सैल्फ काफीडैंस एण्ड ईट्स इफैक्ट आन देयर लर्निंग प्रोसैस। अमेरिकन इंटरनेशनल जर्नल आफ सोशल साईस रिसर्च।
10. सिंह आर (2016), स्ट्रैस अमंग सकूल गोईग एउोलसैल्स इनर रिलेशन द साईकोलोजीकल हार्डजैस। जर्नल आफ ऐहजुकेशनल साईकोलॉजी 9(4), 8-15
11. चौपानी, के (2014), स्टडी आफ ऐकेडैमिक स्ट्रैस एण्ड एडजस्टमैंट अमंग गुजराती एण्ड इंगलिश मिडियम सकूल सटुडैन्टस। जर्नल आफ इन्ज्यिन साईकोलाजी, 2(1), 86-93

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मध्यप्रदेश के डिप्लोमा स्तरीय विद्यार्थियों द्वारा सोशल नेटवर्किंग साइटों के उपयोग पर एक अध्ययन

डॉ. आलोक कुमार यादव*

* पूर्व प्राचार्य, इंदिरा गाँधी शासकीय पॉलिटेक्निक महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – वर्तमान में सोशल नेटवर्किंग साइट्स (एसएनएस) का उपयोग दिनचर्या की एक सामान्य गतिविधि बन गई है। सोशल नेटवर्किंग साइट्स एक ऑनलाइन सेवा, प्लेटफॉर्म या साइट होती है जो लोगों के बीच सामाजिक नेटवर्किंग अथवा सामाजिक संबंधों को बनाने अथवा उनको परिलक्षित करने पर केन्द्रित होती है। 2004 में प्रारंभ हुई फेसबुक विश्व की सबसे बड़ी सामाजिक नेटवर्किंग साइट बन चुकी है। वेब आधारित सोशल नेटवर्किंग साइट्स के द्वारा समान रुचियों और गतिविधियों वाले व्यक्तियों का राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और भौगोलिक सीमाओं को लांघते हुए परस्पर जुड़ना संभव हो पाता है। ई-मेल और इन्सटैंट मैसेजों के माध्यम से ऑनलाइन समुदायों की स्थापना हुई है।

सोशल नेटवर्किंग साइट्स के सामाजिक प्रभाव पर कई अध्ययन हो रहे हैं। ऐसे में मध्यप्रदेश के शासकीय डिप्लोमा प्रदान करने वाले महाविद्यालयों के विद्यार्थियों में सोशल नेटवर्किंग साइट्स के उपयोग के पैटर्न का आकलन करने की आवश्यकता महसूस हुई। इस शोधपत्र द्वारा सोशल मीडिया के उपयोग के बारे में समग्र दृष्टिकोण प्राप्त करने का भी प्रयास किया गया हैं साथ ही छात्रों और छात्राओं द्वारा इनके उपयोग का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

शब्द कुंजी – सोशल नेटवर्किंग साइट्स (एसएनएस), डिप्लोमा छात्र, फेसबुक, सोशल मीडिया, पुरुष विद्यार्थी (छात्र), महिला विद्यार्थी (छात्रा)।

प्रस्तावना – सोशल नेटवर्किंग साइट्स मूल रूप से इंटरनेट आधारित टूल्स हैं जो संचार सामग्री के आदान-प्रदान की सुविधा प्रदान करते हैं। सोशल नेटवर्किंग साइट्स का प्राथमिक उद्देश्य लोगों को एक-दूसरे से जोड़ना और संप्रेषण या विचारों के आदान प्रदान करने की सुविधा उपलब्ध कराना है। ये साइटें लोगों को अपने मित्रों, सहपाठियों और परिवार के साथ जुड़े रहने, तस्वीरें और वीडियो शेयर करने, और विभिन्न विषयों पर चर्चा करने में सहायता करती हैं। सोशल नेटवर्किंग साइट्स (जैसे, फेसबुक, ट्विटर, इंस्टाग्राम) लोगों को ऑनलाइन प्लेटफ़ॉर्म प्रदान करती हैं जहाँ वे अपनी प्रोफाइल बना कर अपनी रुचियों और गतिविधियों को अन्य यूजर्स के साथ शेयर कर सकते हैं।

सोशल नेटवर्किंग साइटें निम्नलिखित उद्देश्यों को पूरा करती हैं:

1. **सामुदायिक निर्माण:** समान रुचियों वाले लोगों को एक साथ लाने और एक-दूसरे से जुड़ने के लिए मंच प्रदान करना।
2. **जानकारी शेयर करना:** यूजर्स को अपनी राय, विचार, तस्वीरें, वीडियो और अन्य सामग्री शेयर करने की अनुमति देना।
3. **संचार:** टेक्स्ट, ऑडियो और वीडियो के माध्यम से वास्तविक समय में संवाद करने की सुविधा प्रदान करना।
4. **सामाजिक संबंध:** लोगों को अपने मित्रों, सहपाठियों, परिवार और सहकर्मियों के साथ जुड़े रहने में मदद करना।
5. **मनोरंजन:** यूजर्स को विभिन्न प्रकार की सामग्री (जैसे, वीडियो, गेम, आदि) तक पहुंचने और शेयर करने के लिए प्लेटफ़ॉर्म उपलब्ध कराना।
6. **व्यावसायिक उपयोग:** व्यवसायों को अपने ब्रांड को बढ़ावा देने, ग्राहकों से जुड़ने और अपने उत्पादों और सेवाओं का विज्ञापन करने में मदद करना। संक्षेप में, सोशल नेटवर्किंग साइटें व्यक्तियों और व्यवसायों को जुड़ने, संवाद करने, जानकारी साझा करने और एक-दूसरे से जुड़ने के लिए एक शक्तिशाली मंच प्रदान करती हैं।

सोशल नेटवर्किंग साइट्स के सामाजिक प्रभावों को लेकर अनेक शोध कार्य किये गए है। अरुमुगम, बी., नागलिंगम, एस., और गणेशन, आर. (2014) ने संकेत दिया कि अधिकांश किशोर सोशल नेटवर्किंग साइटों के आदी हैं और इसलिए सोशल नेटवर्किंग साइटों के उपयोग से जुड़े व्यसनकारी व्यवहार और जोखिम कारकों के बारे में किशोरों और उनके माता-पिता के बीच जागरूकता पैदा करने के लिए उचित कदम उठाए जाने चाहिए।

भोला, आर.एम., और महाकुद, जी.सी. (2014) ने अपने शोध में बताया हैं कि अधिकांश युवा 14.6 वर्ष की आयु में सोशल नेटवर्किंग शुरू करते हैं; सोशल नेटवर्किंग पर बिताया जाने वाला औसत समय प्रतिदिन 3.6 घंटे है। चैटिंग और दोस्त बनाने के लिए फेसबुक सबसे पसंदीदा सोशल नेटवर्क साईट है, रात्रि में चैटिंग और विपरीत लिंग के साथ बातचीत आम है, इलेक्ट्रॉनिक गैजेट्स में रुचि रखते हैं, दैनिक गतिविधियों को अनदेखा करते हैं, अपने ऑनलाइन कार्यों को दूसरों से छिपाते हैं, सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर ये कार्य छिपकर करते हैं और इसकी अनुपस्थिति में निराश महसूस करते हैं।

संपासा-कन्यांग, एच., और लुईस, आर. एफ. (2015) ने अपने अध्ययन में सोशल नेटवर्किंग साइट्स (एसएनएस) पर बिताए गए समय और मानसिक स्वास्थ्य सहायता की अपूर्ण आवश्यकता के बीच संबंधों की जांच की। अन्य बातों के अलावा यह पाया गया कि कुल नमूनों में से 25.2

प्रतिशत छात्रों ने हर दिन 2 घंटे से अधिक सोशल नेटवर्किंग साइट्स का उपयोग करने की सूचना दी, 54.23 प्रतिशत छात्रों ने हर दिन 2 घंटे या उससे कम समय के लिए सोशल नेटवर्किंग साइट्स का उपयोग करने की सूचना दी, और 20.5 प्रतिशत ने एसएनएस का कभी-कभार या बिल्कुल भी उपयोग नहीं करने की सूचना दी।

प्रस्तुत अध्ययन मध्यप्रदेश के शासकीय पॉलिटेक्निक महाविद्यालयों तक सीमित है। इस अध्ययन के लिए सर्वेक्षण पद्धति का उपयोग किया गया है। विभिन्न पॉलिटेक्निक महाविद्यालयों के विद्यार्थियों को गूगल फॉर्म शेयर कर आंकड़े एकत्रित किये गए।

अध्ययन का नमूना– इस अध्ययन में मध्यप्रदेश के शासकीय पॉलिटेक्निक महाविद्यालयों में अध्ययनरत तीन वर्षीय डिप्लोमा कार्यक्रम के विभिन्न सेमेस्टर के 1134 विद्यार्थियों ने गूगल फॉर्म की सहायता से सर्वेक्षण में सहभागिता की। सोशल नेटवर्किंग साइट्स के उपयोग से संबंधित जानकारी प्राप्त करने के लिए उन्हें स्वविकसित अनुसूची दी गई।

विश्लेषण तथा व्याख्या – शोध का एक महत्वपूर्ण कदम प्राप्त समंकों का विश्लेषण और व्याख्या है। नमूने से एकत्र किए गए समंकों का विश्लेषण स्वनिर्मित सूची के प्रश्नों के अनुसार किया गया।

1. डिप्लोमा विद्यार्थियों द्वारा सोशल नेटवर्किंग साइट्स का उपयोग :-

तालिका क्रमांक 1: सामाजिक नेटवर्किंग साइटों का उपयोग

	कुल प्रतिक्रियाएँ (प्रतिशत)	हाँ (प्रतिशत)	नहीं (प्रतिशत)
पुरुष	790 (69.66)	781 (98.86)	9 (1.14)
महिला	344 (30.34)	339 (98.55)	5 (1.45)

स्रोत : सर्वेक्षण, नोट- कोष्ठक में दिए गए सभी आंकड़े प्रतिशत दर्शाते हैं।

तालिका क्रमांक 1 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सर्वेक्षण में 1134 विद्यार्थियों में 69.66 प्रतिशत पुरुष और 30.34 प्रतिशत महिला विद्यार्थियों ने सहभागिता दी। 98.86 प्रतिशत पुरुष और 98.55 प्रतिशत महिला विद्यार्थी सोशल नेटवर्किंग साइट्स का उपयोग करते है। मात्र 1.5 प्रतिशत से कम विद्यार्थी ही इनसे अछूते है।

2. सर्वेक्षण में सहभागिता करने वाले विद्यार्थियों का ब्रांचवार विश्लेषण :- शासकीय पॉलिटेक्निकों में विभिन्न ब्रांच संचालित होती है। सर्वेक्षण में सहभागिता करने वाले विद्यार्थियों का विवरण इस प्रकार है :-

तालिका क्रमांक 2: सर्वेक्षण में सम्मिलित विद्यार्थियों का ब्रांचवार विश्लेषण

ब्रांच	कुल प्रतिक्रियाएँ (प्रतिशत)	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
कम्प्यूटर साइंस एवं इंजीनियरिंग	251 (22.13)	117 (46.61)	134 (53.39)
इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग	240 (21.16)	208 (86.67)	32 (13.33)
मैकेनिकल इंजीनियरिंग	217 (19.14)	198 (91.24)	19 (8.76)
सिविल इंजीनियरिंग	132 (11.06)	107 (81.06)	25 (18.94)
माईन एवं माइन सर्वेइंग	81 (7.14)	81 (100)	0 (0)
केमिकल इंजीनियरिंग	39 (3.44)	31 (79.49)	8 (20.51)
फैशन टेक्नोलॉजी	70 (6.17)	0 (0)	70 (100)
मॉडर्न ऑफिस मैनेजमेंट	68 (6.0)	19 (27.94)	49 (72.06)
इलेक्ट्रॉनिक्स इंजीनियरिंग	30 (2.65)	26 (86.67)	4 (13.33)
अन्य ब्रांच	6 (0.53)	3 (50.0)	3 (50.0)

स्रोत : सर्वेक्षण, नोट- कोष्ठक में दिए गए सभी आंकड़े प्रतिशत दर्शाते हैं।

तालिका क्रमांक 2 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि इंजीनियरिंग ब्रांच जैसे इलेक्ट्रिकल, मैकेनिकल, सिविल, और केमिकल इंजीनियरिंग आदि में पुरुष विद्यार्थियों का प्रतिशत ज्यादा है। माईन एवं माइन सर्वेइंग ब्रांच में केवल छात्रों का और फैशन टेक्नोलॉजी में केवल छात्राओं का प्रवेश है।

3.विद्यार्थियों का सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर सदस्यता का विवरण :-

तालिका क्रमांक 3:सर्वेक्षण में सम्मिलित विद्यार्थियों का सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर सदस्यता का विवरण

	कुल प्रतिक्रियाएँ (प्रतिशत)	हाँ (प्रतिशत)	नहीं (प्रतिशत)
पुरुष	790 (69.66)	780 (98.73)	10 (1.27)
महिला	344 (30.34)	339 (98.55)	5 (1.45)

स्रोत : सर्वेक्षण, नोट- कोष्ठक में दिए गए सभी आंकड़े प्रतिशत दर्शाते हैं।

तालिका क्रमांक 3 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 98.98 प्रतिशत छात्रों और 98.26 प्रतिशत छात्राओं द्वारा किसी न किसी सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर सदस्यता प्राप्त की है।

4. पुरुष डिप्लोमा विद्यार्थियों द्वारा उपयोग की जाने वाली शीर्ष सोशल नेटवर्किंग साइट्स का विश्लेषण इस प्रकार हैं:-

तालिका क्रमांक 4: पुरुष (781) डिप्लोमा विद्यार्थियों द्वारा उपयोग की जाने वाली शीर्ष सोशल नेटवर्किंग साइट्स

क्र.	साईट का नाम	कुल उपयोगकर्ता (पुरुष)	कुल उपयोगकर्ता का प्रतिशत
1	व्हाट्सएप	667	85.41
2	यूट्यूब	463	59.29
3	इन्स्टाग्राम	441	56.47
4	फेसबुक	329	42.13
5	टेलीग्राम	282	36.12

स्रोत : सर्वेक्षण, नोट- कोष्ठक में दिए गए सभी आंकड़े प्रतिशत दर्शाते हैं।

तालिका क्रमांक 4 के विश्लेषण से प्रकट होता है कि पुरुष विद्यार्थी विभिन्न सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर सर्फिंग करते है। वे सबसे ज्यादा 85.41 प्रतिशत व्हाट्सएप का उपयोग करते है। सर्वेक्षित छात्रों में सबसे कम टेलीग्राम एप का उपयोग करना पाया गया।

5. महिला डिप्लोमा विद्यार्थियों द्वारा उपयोग की जाने वाली शीर्ष सोशल नेटवर्किंग साइट्स इस प्रकार हैं:-

तालिका क्रमांक 5: महिला डिप्लोमा विद्यार्थियों (339) द्वारा उपयोग की जाने वाली शीर्ष सोशल नेटवर्किंग साइट्स

क्र.	साईट का नाम	कुल उपयोगकर्ता (महिला)	कुल उपयोगकर्ता का प्रतिशत
1	व्हाट्सएप	310	91.43
2	यूट्यूब	192	56.64
3	इन्स्टाग्राम	144	42.48
4	स्नेपचेट	128	37.76
5	टेलीग्राम	84	24.79

स्रोत : सर्वेक्षण, नोट- कोष्ठक में दिए गए सभी आंकड़े प्रतिशत दर्शाते हैं।

तालिका क्रमांक 5 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि 91.43 प्रतिशत छात्राएं व्हाट्सएप का उपयोग करती है। इनके द्वारा उपयोग की जाने वाली

पांच प्रमुख सोशल नेटवर्किंग साइट्स में स्नेपचेट शामिल है जबकि छात्रों द्वारा उपयोग की जाने वाली सोशल नेटवर्किंग साइट्स में यह शामिल नहीं है। छात्राओं का फेस बुक की ओर रुझान कम है।

6. डिप्लोमा विद्यार्थियों द्वारा सोशल नेटवर्किंग साइट्स तक पहुँचने के लिए उपयोग किए जाने वाले डिवाइस :- सर्वेक्षण में यह भी जानने का प्रयास किया गया कि डिप्लोमा विद्यार्थियों सोशल नेटवर्किंग साइट्स तक पहुँचने के लिए किन-किन डिवाइसों का उपयोग करते है।

तालिका-6: सोशल नेटवर्किंग साइटों तक पहुँचने के लिए उपयोग किए जाने वाले डिवाइस

उपकरण	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
मोबाइल्स	718 (91.93)	297 (87.61)
लैपटॉप	11 (1.41)	4 (1.18)
डेस्कटॉप	4 (0.51)	4 (1.18)
टेबलेट	3 (0.38)	2 (0.59)
एक से अधिक डिवाइस	50 (6.40)	36 (10.62)

स्रोत : सर्वेक्षण, नोट- कोष्ठक में दिए गए सभी आंकड़े प्रतिशत दर्शाते हैं।

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 91.93 प्रतिशत छात्र और 87.61 प्रतिशत छात्राएं सोशल नेटवर्किंग साइट्स तक पहुँचने के लिए मोबाइल्स का उपयोग करते है। छात्रों (6.40 प्रतिशत) की तुलना में एक अधिक डिवाइस का उपयोग छात्राएं (10.62 प्रतिशत) कर रही है। डिप्लोमा विद्यार्थियों में सोशल नेटवर्किंग साइट्स तक पहुँचने के लिए लेपटॉप, डेस्कटॉप या टेबलेट का उपयोग बहुत कम है। शायद निजता इसका एक कारण हो सकता है।

7. सोशल नेटवर्किंग साइटों तक पहुँचने के लिए विद्यार्थी स्वयं के अलावा भी परिवारिक सदस्यों के डिवाइस का उपयोग करते है :-

तालिका-7: सोशल नेटवर्किंग साइटों तक पहुँचने के लिए उपयोग किए जाने वाले डिवाइस

विवरण	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
स्वयं का	742 (95)	299 (88.2)
पिताजी का	29 (3.71)	12 (3.54)
माताजी का	10 (1.28)	15 (4.24)
भाई या बहन का	13 (1.66)	14 (4.13)

स्रोत : सर्वेक्षण, नोट- कोष्ठक में दिए गए सभी आंकड़े प्रतिशत दर्शाते हैं।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि महिला विद्यार्थियों (88.2 प्रतिशत) की तुलना में पुरुष विद्यार्थियों (95 प्रतिशत) द्वारा अधिक रूप से स्वयं का डिवाइस उपयोग किया जाता है। महिला विद्यार्थी पिताजी, माताजी अथवा भाई या बहन का डिवाइस पुरुष विद्यार्थी की तुलना में ज्यादा उपयोग में लाती है।

8. पुरुष डिप्लोमा विद्यार्थियों द्वारा सोशल नेटवर्किंग साइट्स का उपयोग का उद्देश्य जानने का प्रयास किया गया जिसे निम्न तालिका में प्रदर्शित किया गया है :-

तालिका-8: पुरुष डिप्लोमा विद्यार्थियों द्वारा सोशल नेटवर्किंग साइट्स के उपयोग का उद्देश्य

क्र.	सोशल नेटवर्किंग साइट्स का उपयोग का उद्देश्य	कुल उपयोगकर्ता (पुरुष)	उपयोगकर्ता का कुल प्रतिशत
1	शिक्षा	659	84.38
2	मनोरंजन	386	49.42
3	प्रतियोगिता परीक्षा की तैयारी	360	46.09
4	ज्ञान साझा करने के लिए	331	42.38
5	अपने वर्तमान मित्रों से संपर्क में बने रहने के लिए	323	41.36
6	सामाजिक सम्पर्क हेतु	307	39.31
7	भूले बिसरे मित्रों से संपर्क में बने रहने के लिए	231	29.58

स्रोत : सर्वेक्षण, नोट- कोष्ठक में दिए गए सभी आंकड़े प्रतिशत दर्शाते हैं।

तालिका क्रमांक 8 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि पुरुष डिप्लोमा विद्यार्थी सोशल नेटवर्किंग साइट्स के पांच प्रमुख उपयोग शिक्षा, मनोरंजन, प्रतियोगिता परीक्षा की तैयारी, ज्ञान साझा करने के लिए और अपने वर्तमान मित्रों से संपर्क में बने रहने के लिए करते है जिनका क्रमश: प्रतिशत 84.38, 49.42, 46.09, 42.38 और 41.36 है।

9. महिला डिप्लोमा विद्यार्थियों द्वारा सोशल नेटवर्किंग साइट्स के उपयोग का उद्देश्य जानने का प्रयास को निम्न तालिका में प्रदर्शित किया गया है :-

तालिका क्रमांक 9: महिला डिप्लोमा विद्यार्थियों द्वारा सोशल नेटवर्किंग साइट्स के उपयोग का उद्देश्य

क्र.	सोशल नेटवर्किंग साइट्स का उपयोग का उद्देश्य	कुल उपयोगकर्ता (महिला)	उपयोगकर्ता का कुल प्रतिशत
1	शिक्षा	279	82.30
2	मनोरंजन	130	38.35
3	ज्ञान साझा करने के लिए	123	36.28
4	अपने वर्तमान मित्रों से संपर्क में बने रहने के लिए	111	32.74
5	प्रतियोगिता परीक्षा की तैयारी	100	29.50
6	सामाजिक सम्पर्क हेतु	96	28.32
7	भूले बिसरे मित्रों से संपर्क में बने रहने के लिए	02	0.59

स्रोत : सर्वेक्षण, नोट- कोष्ठक में दिए गए सभी आंकड़े प्रतिशत दर्शाते हैं।

तालिका क्रमांक 9 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि महिला डिप्लोमा विद्यार्थी सोशल नेटवर्किंग साइट्स के पांच प्रमुख उपयोग शिक्षा, मनोरंजन, ज्ञान साझा करने के लिए, अपने वर्तमान मित्रों से संपर्क में बने रहने के लिए और प्रतियोगिता परीक्षा की तैयारी के लिए करती है जिनका प्रतिशत क्रमश: 82.30, 38.35, 36.28, 32.74 और 29.50 है।

10. सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर बिताया जाने वाला समय :-

तालिका क्रमांक 10: सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर दिन भर में व्यतीत किया जाना वाला समय

क्र.	विवरण	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1	2 घंटे से कम	339 (43.41)	155 (45.72)
2	2 से 4 घंटे	313 (40.08)	144 (42.78)
3	4 से 6 घंटे	78 (9.99)	30 (8.85)
4	6 घंटे से ज्यादा	51 (6.53)	10 (2.95)

स्रोत : सर्वेक्षण, नोट- कोष्ठक में दिए गए सभी आंकड़े प्रतिशत दर्शाते हैं।

तालिका क्रमांक 10 से स्पष्ट होता है कि सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर 2 घंटे से कम 43.41 प्रतिशत छात्र और 45.72 प्रतिशत छात्राएं समय व्यतीत करती है । यह थोडा संतोषजनक हो सकता है लेकिन शेष विद्यार्थी जो दिन भर में 4 से ज्यादा घंटे सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर व्यतीत कर रहे है, चिंताजनक है।

11. सोशल नेटवर्किंग साइट्स से नए कौशल सीखने पर प्रतिक्रिया :-

तालिका क्रमांक 11: सोशल नेटवर्किंग साइट्स से नए कौशल सीखने पर प्रतिक्रिया

क्र.	प्रतिक्रिया	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1	हाँ	536 (68.63)	236 (69.62)
2	नहीं	131 (16.77)	45 (13.27)
3	कह नहीं सकते	114 (14.60)	58 (17.11)

स्रोत : सर्वेक्षण, नोट- कोष्ठक में दिए गए सभी आंकड़े प्रतिशत दर्शाते हैं।

तालिका क्रमांक 11 विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सोशल नेटवर्किंग साइट्स से नए कौशल सीखने के प्रति छात्रों में 68.63 प्रतिशत और छात्राओं में 69.62 प्रतिशत सकारात्मक प्रतिक्रिया दी है ।

निष्कर्ष – सर्वेक्षण के उपरांत उपरोक्त तालिकाओं से, निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले गए हैं:

तालिका क्रमांक 1 और तालिका क्रमांक 3 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि अधिकांश डिप्लोमा विद्यार्थी सोशल नेटवर्किंग साइट्स का उपयोग कर रहे है और यह विभिन्न अन्य अध्ययनों की पुष्टि करता है। यहाँ तक कि जो लोग स्वयं किसी भी सोशल नेटवर्किंग साइट के सदस्य नहीं हैं, वे भी दूसरों के अकाउंट से उन तक पहुँच रहे थे। यहाँ तक कि इसके लिए वे अपने पारिवारिक सदस्यों की डिवाइस का उपयोग कर रहे है।

तालिका क्रमांक 4 और तालिका 5 से पता चलता है कि पुरुष और महिला विद्यार्थी सबसे अधिक व्हाट्सएप का उपयोग कर रहे थे। यूट्यूब और इन्स्टाग्राम समान रूप से सभी विद्यार्थियों द्वारा उपयोग में लाया जाता है। छात्राओं का फेस बुक की ओर रुझान कम है जबकि स्नेप चेट की ओर छात्रों का रुझान कम है। तालिका क्रमांक 6 से पता चलता है कि सोशल नेटवर्किंग साइट्स का उपयोग ज्यादातर मोबाइल फोन के माध्यम से किया जाता है। सबसे कम इस्तेमाल टैबलेट का होता है। एक से अधिक डिवाइस का उपयोग करने वाले छात्रों (6.40 प्रतिशत) की तुलना में छात्राओं का (10.62 प्रतिशत) प्रतिशत ज्यादा है ।

तालिका क्रमांक 7 से स्पष्ट है कि महिला विद्यार्थियों की तुलना में पुरुष विद्यार्थियों के पास स्वयं का डिवाइस है। महिला विद्यार्थी पिताजी, माताजी अथवा भाई या बहिन का डिवाइस पुरुष विद्यार्थी की तुलना में ज्यादा उपयोग में लाती है।

तालिका क्रमांक 8 और तालिका 9 सोशल नेटवर्किंग साइट्स तक पहुँचने के प्रमुख कारण को प्रदर्शित करती हैं। पुरुष विद्यार्थियों के लिए प्रमुख कारण शिक्षा, मनोरंजन, प्रतियोगिता परीक्षा की तैयारी, ज्ञान साझा करने और अपने वर्तमान मित्रों से संपर्क में बने रहना है जबकि महिला विद्यार्थियों के लिए यह शिक्षा, मनोरंजन, ज्ञान साझा करने के लिए, अपने वर्तमान मित्रों से संपर्क में बने रहने के लिए और प्रतियोगिता परीक्षा की तैयारी है। पुरुष विद्यार्थियों के लिए प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी अधिक महत्वपूर्ण था जबकि महिला विद्यार्थियों के लिए के लिए अन्य चीजों की तुलना में ज्ञान साझा करना महत्वपूर्ण था।

तालिका क्रमांक 10 सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर समय व्यतीत करने को प्रदर्शित करता है। विद्यार्थी जो दिन भर में 4 से ज्यादा घंटे सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर व्यतीत कर रहे है, चिंताजनक है ।

तालिका क्रमांक 11 से स्पष्ट होता है कि सोशल नेटवर्किंग साइट्स से नए कौशल सीखने के प्रति विद्यार्थियों ने सकारात्मक प्रतिक्रिया दी है ।

तालिका क्रमांक 4, क्रमांक 5, क्रमांक 8, क्रमांक 9, और क्रमांक 11 के संयुक्त विश्लेषण से प्रतीत होता है कि कोविड 19 के बाद से सोशल नेटवर्किंग साइट का उपयोग शिक्षकों और छात्रों के द्वारा एक संचार उपकरण के रूप में किया जा रहा है। चूंकि अधिकांश छात्र पहले ही सोशल नेटवर्किंग साइटों की एक व्यापक रेंज का उपयोग कर रहे थे, तो शिक्षकों ने भी स्वयं इसका उपयोग अपने लाभ के लिए करना शुरू कर दिया हैं । शिक्षक या प्राध्यापक व्हाट्सएप ग्रुप को सृजित करके, कक्षा की परिचर्चा को बढ़ाते हुए, टेस्ट व प्रश्नोत्तरी, होमवर्क आदि सब कुछ कर रहे हैं। सोशल नेटवर्किंग का प्रयोग शिक्षक व छात्रों के माता-पिता के बीच संवाद को बढ़ावा देने के लिए भी किया जा रहा है। सोशल नेटवर्किंग साइट्स का एक बड़ा प्रयोग विद्यार्थियों को ट्रेनिंग एवं प्लेसमेंट संबंधी कार्यों के लिए भी किया जा रहा है।

सुझाव के रूप में कहा जा सकता है कि इन समंकों को एक बड़े नमूने में और अधिक मान्य किया जा सकता है और उपयोग करने के अधिक कारण मिल सकते हैं। इस विषय पर काम करना भी दिलचस्प होगा कि व्हाट्सएप विद्यार्थियों की पसंद क्यों है ?

संदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. Arumugam, B., Nagalingam, S., &Ganesan, R. (2014).Behavioural attributes and risk factors on usage of social networking sites among school going children of Chennai.British Biomedical www.bbbulletin.org Bulletin, 2(1), 165-173.
2. Suraj Sharma, Sunita Godiyal, A Study on the Social Networking Sites Usage by Undergraduate Students www.oiirj. org I S S N 2249-9598 Page 162 Online International Interdisciplinary Research Journal, {Bi-Monthly}, ISSN 2249-9598, Volume-VI, Issue-III, May-June 2016 Issue
3. Retrieved from Bhola, R. M., &Mahakud, G. C. (2014).A qualitative analysis of social networking usage.International Journal of Research & Development of Health, March 2014; 2(1): 34-44. Retrieved from www.ijrdh.com
4. Kuss, D. J., & Griffiths, M. D. (2011). Addiction to social networks on the Internet: A literature review of empirical research. International Journal of Environment and Public Health, 8, 3528–3552.
5. Lenhart, A., Madden, M., &Hitlin, P. (2005). Teens and technology: Youth are leading the transition to a fully wired and mobile nation. Pew Internet & American Life Project.
6. Sampasa-kanyinga, H., & Lewis, R. F. (2015). Frequent Use of Social Networking Sites Is Associated with Poor Psychological Functioning Among Children and Adolescents, 18(7), 380–385. http://doi.org/10.1089/

cyber.2015.0055
7. Sharma, S. (2015). Use of Social Networking Sites by undergraduates in relation to their academic achievement. Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies, 3(21), 1229–1234
8. Tham, j. & Ahmed, N. (2011). The usage and implications of Social Networking Sites: A survey of college students. Journal of Interpersonal, Intercultural and Mass Communication, 5(1), 1-11. websites Ofcom Social Networking Sites research Published separately at: www.ofcom.org.uk Pewinternet.org Statisticsbrain. com www.oiirj.org ISSN 2249-9598
9. Boyd, D. M., & Ellison, N. B. (2007). Social network sites: Definition, history, and scholarship. Journal of Computer-Mediated Communication, 13(1), article1. from http://jcmc.indiana.edu/vol13/issue1/boyd.ellison.html
10. Kumar, A.& kumar, R. (2013). Use of Social Networking Sites (SNSs): A study of Maharishi Dayanand University, Rohtak, India. Library Philosophy and Practice (e-Journal), 1–12. http://doi.org/http://digitalcommons.unl.edu/libphilprac/1000.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Assessment of Physical Properties of Soil in the South-Eastern Zone of Barwani District of Madhya Pradesh

Harish Raghunath Khairanar* **Dr. Pramod Pandit**** **Dr. Dhananjay Dwivedi*****

*Research Scholar, Devi Ahilya VishwaVidyalaya, Indore (M.P.) INDIA
** Asst. Prof. (Chemistry) Shaheed Bheema Nayak Govt. PG College, Barwani, Indore (M.P.) INDIA
*** Prof. (Chemistry) P.M.B.Gujarati Science College, Nasiya Road, Indore (M.P.) INDIA

Abstract: South-Eastern Zone of Barwani District has great agricultural potential because of its vast areas of fertile land, diverse climate, generally adequate rainfall and large labour pool. However, agriculture of study area is characterized by low production per unit area. This is a paradox, which invites researchers to investigate the causes of the problem and suggest feasible solutions.

Soil is the layer(s) of generally loose mineral and/or organic material that are affected by physical, chemical and biological processes at or near the planetary surface and usually hold liquids, gases and biota and support plants. There are some soils are red, some are black; some are deep and some are shallow; some are coarse textured and some are fine-textured. They serve in varying degree as a reservoir of nutrients and water for crops, provide mechanical anchorage and favourable tilth. The components of soils are mineral material, organic matter, water, air and biota, the proportions of which vary and which together form a system for plant growth; hence the need to study the soils physical properties in perspective.

The objective of the present study entitled **"Assessment of physical properties of soil in the South-Eastern Zone of Barwani District of Madhya Pradesh"**is to assessment of physical properties of soil to determine agricultural potentials and constraints for crop production of the soils of South-Eastern Zone of Barwani District.

Keywords: Soil Physical Properties, Soil-Texture, Soil-Structure, Soil-Porosity, Soil-Permeability, Water-Holding Capacity (WHC), Soil-Moisture, Soil-Colour.

Introduction - Physical properties of the soil include soil-texture, structure, porosity, permeability, water-holding capacity, moisture and colour etc. described as follows.

i. **Soil-Texture:**The proportion of sand, silt and clay particles in the soil.

ii. **Soil-Structure:** How soil particles are arranged into aggregates.

iii. **Soil-Porosity:** The amount of space within the soil, affecting water and air movement.

iv. **Soil-Permeability:** Soil permeability refers to the ability of soil to transmit water and air, influencing factors like drainage, water infiltration and groundwater flow.

v. **Soil-Water Holding Capacity:** Soil-WHC is a measure that quantifies the amount of water a soil can retain against gravity, influencing its ability to support plant growth and other soil processes.

vi. **Soil-Moisture:** The amount of water held within the pores of soil, representing the total water content of the soil, crucial for plant growth and microbial activity.

vii. **Soil-Colour:** Can indicate soil composition and organic matter content.

Soil continue change under the effect of physical factors like the parent material, time, the climate, the organisms present in it etc. [Solanki and Chavda, 2012.].Degradation of agricultural soils usually begins with the deterioration of the vegetative cover due to over grazing, wood-cutting, improper cultivation and bush fire [Weert and Lenselink, 1972].

These degradation lead to accelerated water-erosion, soil-compaction, increase in bulk density, decrease in soil-porosity and reduction in infiltration rate, surface crusting and loss of soil-fertility. Degradation of soils can occur due to depletion of SOM, extensive use of chemical-fertilizers and pesticides and reduction of biodiversity [Tilman et al., 2001].

Soil has a heterogeneous structure and its status affects ecosystem processes which control nutrients cycling [Fitter, 2005]. Avoiding soil-degradation and improving soil-health and fertility level could be achieved by performing sustainable soil management with an appropriate understanding of soil properties [Thapa and Yila, 2012].

Soil properties vary spatially and temporally from a field to a larger region scale and are influenced by both intrinsic (soil forming factors such as parent materials) and extrinsic

factors (soil management practices, irrigation, fertilization and crop rotation) [Cambardella and Karlen1999].

Hypotheses of the Research Work:

1. Soil's physical properties such as Soil-Texture, Soil-Structure, Soil-Porosity, Soil-Permeability, Water-Holding Capacity (WHC), Soil-Moisture, Soil-Colour, will differ across various locations within the study area.
2. The nutrient deficiency, infertile soil and soil-degradation will be higher in areas with poor soil physical properties.
3. Soil physical properties are suitable for natural farming, organic farming, integrate nutrient management and balance fertilization practices in crop production.

Objectives of the Research Work:

"Assessment ofphysical properties of soil in the South-Eastern Zone of Barwani District of Madhya Pradesh"was carried out with the followings objectives:

Primary Objectives:

1. To characterize the physical properties of soil in the South-Eastern Zone of Barwani District of Madhya Pradesh. This objective aims to provide a comprehensive understanding of the soil's physical properties and soil health.
2. To determine soil-moisture, soil-permeability, soil-porosity and soil-WHC, providing insights into its physical properties, soil -quality, fertility and crop productivity.
3. To determine the soil-textural class, soil-structure and soil-colour providing insights into its physical properties and soil quality.

Specific Objectives:

1. To promote natural-farming, organic-farming and sustainable agriculture, through examined the soil physical properties that ascertain the farmer's role in controlling the movement of chemical entities in the soil and food-chain.
2. To inform the relationship between soil physical properties and crop productivity, informing strategies for improved crop productivity, providing insights into crop selection and land use planning.

Study Area:

The South-Eastern Zone of Barwani (Sendhwa City): Sendhwa city belongs to the Barwani district in South Western part of Madhya Pradesh. Sendhwa is a small town situated 155 kms away from Indore towards Mumbai. Sendhwa is geographically located at 21°41N75°06 E21.68°N75.1°E.It has an average elevation of 409 meters(1341feet). It is also a Tehsil of Barwani District. The city is bordered by Maharashtra state to the south Gujarat state to the west, Dhar district to the north and Khargone district to the east.

The climate of the region is divided into four seasons. Winter from December to February, summer from March to May, rainy from June to September and autumn for October to November. May is the hottest month in the year and December is the coldest. The peak temperature of the city during day time is 42 to 45 degree Celsius in May and low temperature during night is 6 to 10 degree Celsius in December. Humidity during rainy season is about 70%. The average rainfall in the city is about 831mm.

Sendhwa area is classified as a semi-arid tropical (SAT) region which falls under Central Plateau and Hill Region (Zone VII) of agro-climatic zone.The soil of Sendhwa, a tehsil in Barwani district of Madhya Pradesh, India, is primarily composed of Black Cotton Soil (Vertisols).This is the dominant soil type in this area, characterized by its black colour, high clay content and swelling-shrinking properties. Source: www.nagarpalikasendhwa.org.

Factors Influencing to Soil Properties: The soil-properties in the South-Eastern Zone of Barwani District is influence by factors like:

i. Geology: Basalt, sandstone, and shale rocks.
ii. Topography: Hilly to undulating terrain.
iii. Climate: Semiarid, Tropical to subtropical climate with high rainfall.
iv. Vegetation: Forests, agricultural lands, and grasslands.
v. Dominant Clay Minerals: Montmorillonite, Vermiculite.

Major Crops of City: The soil in South-Eastern Zone of Barwani District is suitable for various crops like Cotton, Soybean, Wheat, Maize, Sugarcane, Pulses, and Oilseeds. Drought-tolerant crops (e.g., cotton, pulses) are suitable in the area. Irrigation management is crucial for crop growth. [NBSSLUP].There are 59.90% Cultivators and 18.16% agricultural labourers has been recovered in Sendhwa tahsil. There are 60.32 % area is cultivable and 30.39 % of total cultivable area is irrigated [Census of India 2011].

Methods of Determination:

Soil Sample Collection and Preparation: To analysing the physical properties of soil total of 15 fully representative surface soil samples (at a depth of 0-15 cm) were collected randomly from **South-Eastern Zone (**21km around the Sendhwa city) **of Barwani District of Madhya Pradesh**from farmers field during Apr-May, 2025 by using soil sampling auger and spade. The exact location of each sample was recorded using a Global Positioning System (GPS. After air drying soil samples were sieved through a 2 mm size sieve. The prepared samples were used for determination of various physical properties of soil(Table.1).

Table-1: Methods of Determination of Physical Properties of Soil Samples Collected from the South-Eastern Zone of Barwani District of M.P.

S.	Soil-Physical Properties	Methods of Determination
1.	Soil-Texture Status	Hydrometer Method and Textural-Triangle Method
2.	Soil-Structure Status	Dry Aggregate Analysis [Gupta and Ghil Dyal, 1998]
3.	Soil-Porosity Status	The Water Saturation Method
4.	Soil-Permeability Status	Falling Head Permeameter Method.

5.	Water-Holding Capacity Status	Field Capacity Method [(Veihmeyer and Hendrickson (1931)]
6	Soil-Moisture Status	Gravimetric Method
7.	Soil-Colour Status	Munsell Soil-Colour Chart Method

Table-2 (see in last page)

Results: According to finding of research work (Table-2) results was as follows:

Soil-Texture Status of the South-Eastern Zone of Barwani: In general out of 15 soil samples 60 % soil samples were fall under clay texture class status, 6.66 % samples under clay loam texture, 20% samples under silty clay loam and 13.33% soil samples were fall under sandy clay loam texture class status. The general statistics calculated from 15 soil samples revealed that the clay percent ranged from 30-70 %, with a mean value of 47.06%. The silt percent ranged from 13-52% with a mean of 30.13%. The sand particle ranged in between 13-54 % with a mean of 22.8 %.

Soil-Structure Status of the South-Eastern Zone of Barwani: In general out of 15 soil samples, 20% samples fall under Crumb status, 13.33 % samples Granular structure and 66.66% samples were categorized under Blocky structure status.

The Aggregate Stability Status of the South-Eastern Zone of Barwani: In general out of 15 soil samples, 60% samples fall under Weakly-developed status, 40% samples were categorized under moderate-developed status.

Soil-Structure Aggregate Size Status of the South-Eastern Zone of Barwani: The general statistics calculated from 15 soil samples revealed that the coarse size particles ranged from 8- 16% with mean of 11.6%, medium coarse size particles ranged from 25-37% with mean of 31.06%, fine particles ranged from 11-23% with mean of 16.13% and very fine particles ranged from 30-48% with mean value of 41.2%.

Soil-Porosity Status of the South-Eastern Zone of Barwani: The general statistics calculated from 15 soil samples revealed that the Soil-Porosity ranged from 28 - 53 %, with a mean value of 40.73%.In general 26.66 % samples fall under low porosity status and 46.66% samples were categorized under moderate and 26.66% samples high in Soil-Porosity status.

Soil-Permeabilityof the South-Eastern Zone of Barwani: The general statistics calculated from 15 soil samples revealed that the soil-permeability ranged from 1.7 - 6.5 cm/h, with a mean value of 4.10 cm/h.In general 33.33 % samples fall under moderate soil-permeabilitystatus, 46.66% samples were categorized under low soil-permeability status and 20% samples fall under very low soil-permeability status.

Soil-Water-Holding-Capacity Status of the South-Eastern Zone of Barwani: The general statistics calculated from 15 soil samples revealed that the Soil-WHC ranged from 37 - 57%, with a mean value of 47.86 %. In general 13.33% samples fall under medium status, 53.33% samples in high WHC status and 33.33% samples were categorized under very high WHC status.

Soil-Moisture of the South-Eastern Zone of Barwani: The general statistics calculated from 15 soil samples revealed that the during pre-monsoon season (May-June) soil-moisture percentage ranged from 11-21% with a mean value of 16.4 %. In general 93.33% soil samples were fall under dry condition and 6.66% soil samples were fall under moist condition.

Soil-Colour Status of the South-Eastern Zone of Barwani: In general statistics calculated from 15 soil samples revealed that the 13.33% soil samples fall under dark brown (10YR 3/3), 6.66% very dark grayish brown (10YR 3/2), 33.33 % very dark brown (10 YR 2/2) and 46.66% soil samples were fall under Black colour with 10YR 2/1 munsell colour notation according to Munsell Soil Colour Chart.

Interpretation and Discussion: The clayey texture, high water holding capacity,blocky structure,weakly developed aggregate stability,low soil permeability,moderate porosity,dry condition during pre-monsoon season and black soil colour, all this physical properties of soil of the South-Eastern Zone of Barwani District indicated that the soil has good physical condition for crop production that is beneficial for crops productivity such as a crops like cotton, soybeans, groundnut, pulses, sugarcane, banana, papaya, vegetables and citrus fruits. However, this also suggests that the soil may be prone to waterlogging, requiring careful irrigation management.It suggested that during dry condition irrigation might be necessary to optimal maintain plant growth.

Outcomes of Research Work: Soil of South-Eastern Zone of Barwani District werefound ingood physical properties/ condition and has a strong agricultural potentials for crop production.

Recommendation for Future Work: Periodic assessment of soil fertility status, nutrients availability and study on physicochemical properties of soil in South-eastern Zone of Barwani district is recommended to optimize crop productivity and to maintain soil health and quality.

Conclusion: The findings of research work would be useful for managing soil resources, crops selection, land use planning of the South-Eastern Zone of Barwani District on sustainable basis. This kind of research would be helpful to motivate and promote an approaches like Natural Farming, Organic Farming, Integrate Nutrient Management and Balance Fertilization practices in crop production.There is need to similar study on physicochemical properties of soil in the study area.

Acknowledgement: I wish to express my profound sense of gratitude and thanks to my esteemed Supervisor Dr.Pramod Pandit (Asst. Prof. Depart. of Chemistry. Shaheed Bheema Nayak Govt.PG College Barwani (MP))

and Co- Supervisor Dr.Dhananjay Dwivedi (Prof.Depart. of Chemistry P.M.B. Gujarati Science College, Nasiya Road, Research centre, Indore, MP.) for their inspiring guidance, constant encouragement and help extended during the investigation, conception ,methodology, sampling, analysisand overall research.

References:-

1. Cambardella, C. A., &Karlen, D. L. (1999). Spatial analysis of soil fertility parameters. Precision Agriculture. 1(1), 5-14.
2. Fitter A. H. Gilligan, C. A. Hollingworth K. Kleczkowski, A.R. M. Twyman. W Pitchford" (2005). Functional Ecology 19:369-377.
3. Gupta, R.P. and Ghil Dyal, B.P. (1998). Theory and Practices in Agrophysics measurements. Allied publishers Ltd.
4. NBSSLUP: National Bureau of Soil Survey and Land Use Planing.
5. Solanki, H.A. and Chavda, N.H. (2012): Physicochemical analysis with reference to seasonal changes in soils of Victoria park reserve forest, Bhavnagar (Gujarat).Life sciences Leaflets.8, :62-68.
6. Thapa, G. B., &Yila, O. M. (2012). Farmers' Land Management Practices and Status of Agricultural Land in the Jos Plateau, Nigeria. Land Degradation & Development, 23: 263-277.
7. Tilman, D., J. Fargione, B. Wolff, C. D'Antonio, A. Dobson, R. Howarth, D. Schindler, W. H. Schlesinger, D. Simberl off, D. Swackhamer. 2001. -Forecasting agriculturally driven global environmental change. Science, 292: 281-284.
8. Veihmeyer F.J and Hendrickson A.H. (1931). The moisture equivalent as a measure of field capacity of soils. Soil Sci. 32, 181-194.

Table-2: Status of Physical Properties of Soil Samples Collected from the South-Eastern Zone of Barwani District of M.P.

Sam-ple No.	Location	Latitude	Longitude	Soil Porosity %	% WHC	Soil- Permeability Cm/ hr K27 °C
1.	Front of Suraj Nagar Niwali Rd. Sendhwa, 451666, Mp., Ind.	21.682784°	75.076104°	32	46	6.1
2.	Kunjari, 451666, Mp., Ind.	21.677331°	75.013432°	35	39	6.5
3.	Niwali, 451666, Mp., Ind.	21.678974°	74.916619°	28	55	6.5
4.	Gram BakeeUrfGoi Old AB Rd Near Advantage City Semalya, 451666, Mp., Ind.	21.719874°	745.117313°	36	49	1.8
5.	Gram Salikalan AB Rd., 451449, Mp., Ind.	21.775589°	75.165871°	42	51	3.8
6.	Balsamund Old AB Rd., 451449, Mp., Ind.	21.811221°	75.174386°	38	37	4.1
7.	Near ChhotiBijasanMandirPipaldhar Sendhwa, 451666, Mp., Ind.	21.663243°	75.081412°	38	47	4.5
8.	Gawadi AB Rd. , 451666, Mp., Ind.	21.641352°	75.077619°	41	48	3.8
9.	Bhawargarh, 451666, Mp., Ind.	21.583604°	75.063914°	53	53	5.7
10	Julwaniya, Balwadi -Sendhwa Rd, 451666, Mp., Ind.	21.673644°	75.113648°	46	48	2.5
11.	Bhamanya, Balwadi-Sendhwa Rd., 451666, Mp. , Ind.	21.626184°	75.129402°	52	52	2.8
12.	Shahpura,Balwadi-Sendhwa Rd., 451666, Mp., Ind.	21.619015°	75.145604°	52	48	1.8
13.	Front of Swami- Vivekananda College Barwani Rd., 451666, Mp., Ind.	21.696338°	75.088242°	30	57	6.2
14.	Gram Dondwada Barwani Rd , 451666, Mp., Ind.	21.778465°	75.023126°	51	43	1.7
15.	Palsud , Barwani Rd, 451447, Mp., Ind.	21.831016°	74.952324°	37	45	3.8

Sample No.	Soil Colour	Soil Structure (Shape of Particles)	Aggregate Stability	Aggregate Size			
				Coarse %	Medium %	Fine %	Very Fine %
1.	10 YR 3/3 Dark Brown	Blocky	Weakly Developed	15	29	14	42
2.	10 YR 2/2 Very Dark Brown	Crumb	Weakly Developed	13	31	14	42
3.	10 YR 3/3 Dark Brown	Blocky	Weakly Developed	16	25	13	46
4.	10 YR 2/1 Black	Blocky	Weakly Developed	12	29	13	46
5.	10 YR 2/1 Black	Granular	Moderately Developed	11	36	23	30
6.	10 YR 2/2 Very Dark Brown	Crumb	Weakly Developed	10	31	11	48
7.	10 YR 2/1 Black	Granular	Moderately Developed	11	37	19	33
8.	10 YR 3/2 V. D. Grayish Brown	Blocky	Moderately Developed	11	33	15	41
9.	10 YR 2/1 Black	Blocky	Weakly Developed	12	31	18	39
10	10 YR 2/1 Black	Crumb	Moderately Developed	10	27	18	45
11.	10 YR 2/1 Black	Blocky	Weakly Developed	8	31	17	44
12.	10 YR 2/1 Black	Blocky	Weakly Developed	9	31	19	41
13.	10 YR 2/2 Very Dark Brown	Blocky	Weakly Developed	14	34	15	37
14.	10 YR 2/2 Very Dark Brown	Blocky	Moderately Developed	9	33	16	42
15.	10 YR 2/2 Very Dark Brown	Blocky	Moderately Developed	13	28	17	42

		Soil-Texture			
Sample No.	% Soil Moisture-Premonsoon	Clay %	Sand %	Silt %	Soil Texture
1.	15	40	27	33	Clay
2.	16	30	52	18	Sandy Clay Loam
3.	13	65	15	20	Clay
4.	11	55	16	29	Clay
5.	19	34	15	51	Silty Clay Loam
6.	18	33	54	13	Sandy Clay Loam
7.	16	35	13	52	Silty Clay Loam
8.	21	34	14	52	Silty Clay Loam
9.	13	60	18	22	Clay
10	20	56	18	26	Clay
11.	17	56	18	26	Clay
12.	19	57	15	28	Clay
13.	13	70	14	16	Clay
14.	17	45	24	31	Clay
15.	18	36	29	35	Clay Loam

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारत में बैंकिंग व्यवस्था सुझाव एवं सिफारिशें

डॉ. अरूणा पाठक*

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) माता गुजरी महिला महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – किसी देश का वित्तीय क्षेत्र अर्थव्यवस्था के विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण है और बैंक वित्तीय क्षेत्र के सबसे महत्वपूर्ण संस्थान हैं। बैंक बचतकर्ताओं और निवेशकों के बीच मध्यस्थ के रूप में कार्य करते हैं। एक ओर, वे उन लोगों से धन एकत्र करते हैं जिनके पास अधिशेष धान होता है और दूसरी ओर वे इन निधियों को उन निवेशकों को प्रदान करते हैं जो उद्यमी, फर्म और कंपनियां हैं।

एक विकसित बैंकिंग क्षेत्र इस कार्य को कुशलतापूर्वक और प्रभावी ढंग से करता है। आधुनिक विश्व में यह देखा जा सकता है कि केवल वे देश तेजी से विकसित हुए हैं जिनके पास सामान्य रूप से एक कुशल वित्तीय क्षेत्र और विशेष रूप से बैंकिंग क्षेत्र था। यह न केवल आज का बल्कि अतीत में भी सच है। अर्थव्यवस्था और इसके विभिन्न क्षेत्रों का विकास मुख्य रूप से बैंकों से ऋण के प्रवाह पर निर्भर करता है। यह अनुभव किया गया है कि जिन क्षेत्रों की बैंक ऋण तक आसान पहुंच है, वे उन क्षेत्रों की तुलना में तेजी से विकसित होते हैं जिनके पास ऐसी पहुंच नहीं है चूंकि बैंक वाणिज्यिक उद्यम हैं, इसलिए उनमें उन पार्टियों को अपना ऋण उपलब्ध कराने की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है जो आर्थिक रूप से व्यवहार्य हैं। इस प्रक्रिया में अक्सर ऐसा होता है कि कई महत्वपूर्ण क्षेत्रों को छोड़ दिया जाता है जो सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, लेकिन आर्थिक रूप से इतने फायदेमंद नहीं हो सकते हैं। इस मुद्दे को हल करने के लिए सरकार या तो सीधो या देश के केंद्रीय बैंक के माध्यम से बैंकिंग क्षेत्र को अर्थव्यवस्था के विशेष क्षेत्रों को अपना ऋण उपलब्ध कराने का निर्देश देती है। ऐसे क्षेत्रों को प्राथमिकता क्षेत्र कहा जा सकता है। वर्तमान अध्ययन का फोकस भारत में बैंकों द्वारा प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को उधार देने का विश्लेषण करने पर है। यद्यपि इस विशिष्ट मुद्दे पर आने से पहले, भारत में बैंकिंग के विकास और इसकी वर्तमान स्थिति का परिचय आवश्यक है।

यद्यपि बैंक प्राचीन काल में भी मौजूद थे, उनके विकास का पता विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं के विकास में लगाया जा सकता है और बैंकिंग के आधुनिक पैटर्न का पता पंद्रहवीं शताब्दी में लगाया जा सकता है, इटली में बंका मोंटे देई पासची डि सिएना (1472), रिक्स बैंक स्वीडन (1668) और बैंक ऑफ इंग्लैंड (1694) में। इसके बाद बैंकों का विकास पूरे यूरोप, यू.एस. और यूरोपीय देशों के अन्य उपनिवेशों में फैल गया। भारत में साहूकारी प्रथा प्राचीन काल में भी मौजूद थी लेकिन बैंकों के आधुनिक रूप के विकास का श्रेय ब्रिटिश शासन की स्थापना को दिया जाता है। भारत में बैंकिंग के इन शुरुआती दिनों से लेकर वर्तमान समय तक भारतीय बैंकिंग प्रणाली विभिन्न प्रकार के बैंकों के साथ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहुंच गई है। देश में लगभग 18,000 बैंक शाखाएँ हैं जिनके पास बैंक प्रबंधन के सभी आधुनिक साधन हैं। ऐतिहासिक रूप से बदलते बैंकिंग परिदृश्य का विश्लेषण करने के लिए समयावधि को चार चरणों में विभाजित किया गया है। ये 1969 और 1991 भारत में बैंकिंग के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। 1969 वह वर्ष है जब 14 प्रमुख बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया, जिसने 80 प्रतिशत से अधिक बैंकिंग को सार्वजनिक क्षेत्र के अधीन कर दिया। राष्ट्रीयकरण का मुख्य कारण बैंकिंग क्षेत्र को सामाजिक रूप से जिम्मेदार बनाना था। इस घटना में प्राथमिकता क्षेत्र की अवधारणा की उत्पत्ति हुई है। 1991 न केवल बैंकिंग क्षेत्र के लिए बल्कि समग्र रूप से अर्थव्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण है, जब बैंकिंग क्षेत्र सहित सभी क्षेत्रों में महत्वपूर्ण आर्थिक सुधार शुरू किए गए, जिसने भारत में बैंकिंग को एक नया अभिविन्यास दिया है।

सुझाव और सिफारिशें – विश्व भर में, और भारत में भी बैंकिंग और गैर-बैंकिंग क्षेत्रों ने नीतिगत उपायों के सहारे, कोविड-19 से जुड़े व्यवधानों का अच्छी तरह से सामना किया है। जैसे-जैसे आर्थिक वृद्धि में गति आएगी एवं नीतिगत कार्यवाहियों को वापस लिया जाएगा, बैंकों की बैलेंस शीटों पर महामारी का प्रभाव और स्पष्ट होगा। जलवायु परिवर्तन और तकनीकी नवोन्मेश इस क्षेत्र के लिए मध्यावधि हैं जिनको दूर करने के लिए सुविचारित रणनीतियों की आवश्यकता है।

1. छोटे किसानों के वित्तीय समावेशन के लिए कृषि क्षेत्र के अग्रिमों के भीतर उनके लिए एक उप लक्ष्य निर्धारित किया जाना चाहिए। इस संबंध में नायर समिति पहले ही सिफारिश कर चुकी है कि 2020-21 तक कृषि क्षेत्र के एएनबीसी का 9 प्रतिशत छोटे और सीमांत किसानों के लिए अग्रिम लागू किया जाना चाहिए।
2. वित्तीय उपलब्धता की समस्याओं का तत्काल समाधान किए जाने की आवश्यकता है। इस संबंध में भी नायर समिति ने सिफारिश की है कि इस क्षेत्र के लिए एएनबीसी का 9 प्रतिशत 2020-21 तक हासिल किया जाना चाहिए।
3. निजी क्षेत्र के साथ-साथ विदेशी बैंकों को भी अपना बड़ा हिस्सा देना चाहिए पीएस को ऋण विदेशी बैंकों के लिए भी उप-क्षेत्रीय लक्ष्यों का भी स्पष्ट रूप से उल्लेख किया जाना चाहिए।
4. महंगाई, उत्पादन लागत आदि को ध्यान में रखते हुए पीएस लक्ष्यों को हर 3 साल में संशोधित किया जाना चाहिए।
5. बैंक महिला उद्यमियों और अन्य जरूरतमंद महिलाओं को भी कर्ज दें

और इसे पीएसएल का हिस्सा बनाया जाए।

6. 2011 से 2021 तक, एनपीए प्रतिशत में गिरावट आई है जो 2015 में बहुत उच्च स्तर पर थी। वर्तमान में एनपीए प्रतिशत अपेक्षाकृत कम है, लेकिन अभी भी टिकाऊ नहीं है। ऋण आवेदनों के बेहतर मूल्यांकन और अनुवर्ती कार्रवाई द्वारा अभी भी एनपीए प्रतिशत को कम करने की आवश्यकता है। प्राथमिकता वाले क्षेत्रों के एनपीए को और कम करने पर ही बैंकों को प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को अधिक ऋण देने के लिए प्रेरित किया जाएगा।
7. बैंक के प्रबंधन को प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र की विभिन्न श्रेणियों को उधार देने की कला में अधिकारियों को प्रशिक्षण देना चाहिए और उन्हें पीएसए के मोचन में अपने कौशल का उन्नयन करना चाहिए।
8. सभी संभावित केंद्रों में विशिष्ट शाखाएं स्थापित की जानी चाहिए और उन्हें प्रशिक्षित जनशक्ति और बुनियादी सुविधाओं से लैस किया जाना चाहिए।
9. ऋण सुविधा प्रदान करने से पहले उधारकर्ताओं की उधार लेने की क्षमता को अंतिम रूप देने के लिए बैंकों में विशिष्ट क्रेडिट रेटिंग एजेंसी होनी चाहिए। क्रेडिट रेटिंग एजेंसी ग्राहकों की वित्तीय स्थिति का मूल्यांकन करेगी और क्रेडिट की समय पर डिलीवरी पर जोर देगी।
10. स्वीकृत निधि की निरंतर समीक्षा होनी चाहिए, यह प्रक्रिया तीन महीने में कम से कम एक बार की जानी चाहिए ताकि एनपीए में परिवर्तित होने वाले किसी भी खाते की ठीक से पहचान की जा सके और उसका हिसाब लगाया जा सके।
11. समय पर ऋणों की वसूली के लिए प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र की प्रत्येक श्रेणी के लिए एक अलग एनपीए वसूली विभाग बनाया जाना चाहिए। प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को ऋण देने के लिए जिम्मेदार अधिकारी और जो अधिकारी सक्रिय रूप से एनपीए की वसूली कर रहे हैं उन्हें उचित प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।
12. विलफुल डिफॉल्टरों की सूची सेबी और आरबीआई को प्रस्तुत करने की आवश्यकता है, ताकि उन्हें मुद्रा बाजार और पूंजी बाजार तक पहुंच से रोका जा सके। भारतीय रिजर्व बैंक को जहां कहीं आवश्यक हो, बैंकरों को कानूनी कार्रवाई सहित कानूनी उपाय शुरू करने की अनुमति देनी चाहिए।
13. कृषि और सूक्ष्म और लघु उद्योग के क्षेत्र में अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों द्वारा प्रस्तावित ऋण की निगरानी में नाबार्ड और सिडबी की भूमिका को बढ़ाकर एनपीए की वृद्धि कुछ हद तक कम हो सकती है।
14. पीएसए के उधार और वसूली की निगरानी के लिए नाबार्ड और सिडबी द्वारा संयुक्त रूप से एक विशेष संस्थान स्थापित किया जाना चाहिए।
15. कमजोर वर्गों को उधार देने में एनपीए को निजी क्षेत्र के बैंकों और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों दोनों में नियंत्रित किया जाना चाहिए, क्योंकि यह 2015–16 में उच्च है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शुक्ल, डॉ. एस.एम. एवं सहाय, डॉ. शिवपूजन, (2011)सांख्यिकी के सिद्धान्त, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
2. शर्मा, डॉ. हरिश चन्द्र, (2011) बैंकिंग विधि एवं व्यवहार, एसबीपीडी. पब्लिशिंग हाउस, आगरा,
3. सिन्हा, डॉ. वी.सी., (2013) भारत में बैंकिंग विधि एवं व्यवहार, एसबीपीडी पब्लिशिंग हाउस, आगरा।
4. मिठानी, गॉर्डन, (2001) बैंकिंग और वित्तीय प्रणाली, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
5. मुजुमदार, एनए, (2003) वित्तीय क्षेत्र और भारत का आर्थिक विकास, खंड I और खंड II, अकादमिक फाउंडेशन, दिल्ली।
6. डोनाल्ड मैल्कम और पायने एड्रियन, (1996) के लिए विपणन योजना सर्विसेज, बटरवर्थ हेनमैन लिमिटेड, ऑक्सफोर्ड।
7. देसाई वसंत, बैंक प्रबंधन के सिद्धांत (सिद्धांत, योजना और प्रोग्रामिंग), हिमालय पब्लिशिंग हाउस, बॉम्बे 1993।
8. डेविड बी.जेनॉफ,(1989) मार्केटिंग वित्तीय सेवाएं, बॉलिंगर प्रकाशन कंपनी, मैसाचुसेट्स।
9. दश आशुतोष, (2002) वित्तीय सेवाओं का विपणन– एक रणनीतिक दृष्टिकोण– वित्तीय सेवाएं (पाठ, मामले, रणनीतियाँ।) गहरा और गहरा प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मुइज्जू सरकार और भारत – मालदीव संबंधों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. शोभा गौतम*

* सह आचार्य (राजनीति विज्ञान) से. मु .मा .राजकीय कन्या महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राज.) भारत

शोध सारांश – मालदीव हिंद महासागर क्षेत्र में भारत के प्रमुख समुद्री पड़ोसियों में से एक है। यह रणनीतिक रूप से प्रमुख पूर्व–पश्चिम अंतर्राष्ट्रीय शिपिंग मार्गों के मध्य में स्थित है।भारत के पश्चिमी तट से इसकी निकटता के कारण, मालदीव भारत की समुद्री सुरक्षा गणना में प्रमुख तत्वों में से एक है। यह भारत की 'पड़ोसी पहले' नीति और विजन 'सागर', में एक प्रमुख भागीदार है।2008 में मालदीव में लोकतंत्र की स्थापना हुई।भारत और मालदीव के संबंध सरकारों में परिवर्तन के साथ परिवर्तित होते रहे हैं। भारत मालदीव संबंधों में सरकारों में परिवर्तन के साथ उतार– चढ़ाव आते रहे हैं।मालदीव की सत्ताधारी सरकार के चीन समर्थक होने पर भारत मालदीव संबंधों में तल्खी दृष्टिगोचर होती रही है इसके विपरीत यदि सत्ताधारी सरकार भारत समर्थक होती है तो भारत मालदीव संबंधों में घनिष्ठता देखी गई है।प्रस्तुत शोध पत्र में वर्ष 2023 में बनी मोहम्मद मुइज्जू सरकार के कार्यकाल के दौरान भारत और मालदीव संबंधों में आए परिवर्तनों का विश्लेषण किया गया है। मोहम्मद मुइज्जू चीन के समर्थक माने जाते रहे हैं ऐसे में पूर्ववर्ती सोलिह सरकार के विपरीत भारत मालदीव संबंधों में प्रारंभ में कुछ तनाव दृष्टिगोचर हुए तथापि कई अन्य क्षेत्रों में दोनों देशों ने अपने संबंधों में सुधार भी किया है।

शब्द कुंजी – समुद्री सुरक्षा, सागर, पड़ोसी पहले ,अंतर्राष्ट्रीय शिपिंग मार्ग।

प्रस्तावना – मालदीव अपने सफेद रेत वाले समुद्र तटों के लिए जाना जाता है जिसकी अर्थव्यवस्था में पर्यटन का योगदान लगभग एक तिहाई है स भारत और मालदीव के बीच राजनयिक संबंध 1965 से चले आ रहे हैं, जब मालदीव को ब्रिटिश शासन से स्वतंत्रता मिली थी। भारत नए राष्ट्र को मान्यता देने और राजनयिक संबंध स्थापित करने वाले पहले देशों में से एक था। भारत और मालदीव के कई हित समान हैं, जिनमें स्थिर और समृद्ध हिंद महासागर क्षेत्र में आर्थिक और सामरिक हित, समुद्री सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन सहयोग शामिल है।भारत अब मालदीव में महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचा परियोजनाओं पर काम कर रहा है, जिसे कोई भी पक्ष रद्द नहीं करना चाहता है।मालदीव का लगभग 70 प्रतिशत रक्षा प्रशिक्षण भारत द्वारा किया जाता है। भारत ने पिछले 10 वर्षों में मालदीव के राष्ट्रीय रक्षा बल (MNDF) के 1,500 से ज्यादा कर्मियों को प्रशिक्षित किया है। मालदीव ने भारत के साथ 100 से अधिक समझौतों पर हस्ताक्षर किए है।

शोध के उद्देश्य:

1. मोहम्मद मुइज्जू के कार्यकाल के दौरान भारत– मालदीव संबंधों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।
2. मोहम्मद मुइज्जू के कार्यकाल के दौरान मालदीव और चीन के संबंधों में आए परिवर्तनों का अध्ययन करना तथा उससे मालदीव और भारत के संबंधों पर पड़े प्रभावों का मूल्यांकन करना।

शोध की परिकल्पना– मुइज्जू सरकार के कार्यकाल के दौरान मालदीव भारत की तुलना में चीन के अधिक निकट आया है तथापि मालदीव आज भी भारत के साथ संबंधों की प्रगाढता हेतु प्रयासरत है।

शोध प्रविधि – शोध कार्य हेतु ऐतिहासिक, विवरणात्मक, विश्लेषणात्मक, एवं तुलनात्मक शोध प्रविधि का प्रयोग किया गया है। शोध कार्य हेतु तथ्यों एवं आंकड़ों के संकलन हेतु द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक स्त्रोतों के रूप में पुस्तकों, समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, इन्टरनेट, सरकारी दस्तावेजों एवं भारत–मालदीव समझौतों के प्रलेखों का उपयोग किया गया है।

मोहम्मद मुइज्जू सरकार और भारत–मालदीव संबंध – मोहम्मद मुइज्जू 17 नवंबर, 2023 को मालदीव के 8वें राष्ट्रपति निर्वाचन हुए। उन्होंने राष्ट्रपति इबू सोलिह को हराया, जिन्हें भारत का मित्र माना जाता था।मोहम्मद मुइज्जू को पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल्ला यामीन का प्रतिनिधि माना जाता है, जो 2013 से 2018 के बीच अपने कार्यकाल के दौरान चीन के समर्थक रहे। मोहम्मद मुइज्जू 'इंडिया आउट' अभियान से जुड़े रहे हैं, जो मालदीव से भारतीय सैन्य कर्मियों की वापसी का आह्वान करता है।

भारत – मालदीव संबंधों में तनाव – राष्ट्रपति मुइज्जू के पदभार ग्रहण करने के बाद से मालदीव और भारत के द्विपक्षीय संबंधों में गिरावट देखी गई है। मुइजू के प्रशासन के तहत मालदीव का चीन की ओर झुकाव देखा गया जिससे संबंधों मे जटिलता आई। हालाँकि, मुइजू ने इस बात पर जोर दिया है कि मालदीव भारत के साथ अपने संबंधों को महत्व देता है, और कहा है कि इससे भारत की सुरक्षा और हितों को नुकसान नहीं पहुँचेगा।

मालदीव के राष्ट्रपति के रूप में शपथ लेने के एक दिन बाद, मोहम्मद मुइज्जू ने 18 नवंबर 2023 को भारत सरकार से मालदीव से अपने सैन्य कर्मियों को वापस बुलाने का औपचारिक अनुरोध किया। जनवरी 2024 में स्थिति और खराब हो गई।लक्षद्वीप में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की यात्रा के बाद उनके खिलाफ मालदीव के तीन मंत्रियों द्वारा अपमानजनक टिप्पणी के बाद, एक कूटनीतिक विवाद पैदा हो गया है। मालदीव सरकार ने अपने मंत्रियों – मरियम शिउना, मालशा

शरीफ और महजूम मजीद – द्वारा की गई टिप्पणियों से खुद को अलग कर लिया है और उन्हें तत्काल प्रभाव से निलंबित कर दिया है। मालदीव सरकार द्वारा अपने मंत्रियों के खिलाफ त्वरित कार्रवाई के बावजूद, पर्यटन पर निर्भर इस द्वीपीय देश को अवकाश स्थल के रूप में न देखने की अपीलें भारतीय सोशल मीडिया पर छाई रहीं।भारतीय पर्यटकों द्वारा आरक्षण रद्द करने की बढ़ती घटनाओं के बीच मालदीव के राष्ट्रपति मोहम्मद मुइज्जू ने चीन से अपील की है कि वह उनके देश में ज्यादा से ज्यादा पर्यटकों को भेजने के लिए अपने प्रयासों को तेज करे।

भारत और मालदीव के बीच संबंधों में सुधार हेतु सकारात्मक कदम– भारत और मालदीव के बीच संबंधों में तनावों के बावजूद, संबंधों को फिर से बेहतर बनाने के प्रयास किए गए हैं।मुइज्जू ने इंडिया आउटकैंपेन के तहत भारत के साथ समझौतों को मालदीव की संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता के लिए खतरा बताया था।राष्ट्रपति मुइज्जू ने कहा कि भारत के साथ मालदीव ने जो द्विपक्षीय समझौते किए हैं, उसमें चिंता की कोई बात नहीं है और कहा कि वह भारतीय सेना की जगह चीनी सेना को तैनात करके क्षेत्रीय संतुलन को बिगाड़ने नहीं देंगे।

राजकीय यात्राएं – मालदीव के राष्ट्रपति को जून 2024 में प्रधानमंत्री के रूप में मोदी के शपथ ग्रहण समारोह में आमंत्रित किया गया था। विदेश मंत्री जयशंकर ने अगस्त 2024 में माले का दौरा किया था, जो मुइज्जू के चुनाव के बाद दोनों पक्षों के बीच पहली उच्च स्तरीय बैठक थी। भारतीय और मालदीव के नेताओं के बीच कूटनीतिक बातचीत के बाद, दोनों देशों ने अपने मतभेदों को सुलझाने और बुनियादी ढांचे के विकास और समुद्री सुरक्षा सहित विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने की इच्छा व्यक्त की।

मालदीव के राष्ट्रपति मोहम्मद मुइज्जू 6 अक्टूबर से 10 अक्टूबर 2024 तक भारत की राजकीय यात्रा पर रहे।यह पदभार ग्रहण करने के बाद उनकी पहली द्विपक्षीय यात्रा थी।इस यात्रा के दौरान भारत ने मालदीव के तटरक्षक जहाज हुरवी को मुफ्त में मरम्मत करने की घोषणा की ।

मालदीव के विदेश मंत्री महामहिम डॉ. अब्दुल्ला खलील 02–04 जनवरी 2025 तक भारत की आधिकारिक यात्रा पर रहेस विदेश मंत्री डॉ. खलील ने अपनी ओर से भारत द्वारा जरूरत के समय मालदीव को दी गई समय पर आपातकालीन वित्तीय सहायता की सराहना की, जो मालदीव के 'प्रथम प्रत्युत्तारदाता' के रूप में भारत की भूमिका को दर्शाता है। यात्रा के दौरान, दोनों पक्षों ने भारत सरकार द्वारा अनुदान सहायता के माध्यम से मालदीव में चरण- III के तहत उच्च प्रभाव सामुदायिक विकास परियोजनाओं के कार्यान्वयन के लिए एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए।

8 से 10 जनवरी, 2025 मालदीव के रक्षा मंत्री मोहम्मद घासन मौमून भारत यात्रा पर रहे। मोहम्मद घासन मौमून ने रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह से समुद्री सुरक्षा सहयोग पर केंद्रित व्यापक वार्ता की। वार्ता के दौरान दोनों पक्षों ने भारत–मालदीव व्यापक आर्थिक और समुद्री सुरक्षा साझेदारी के संयुक्त दृष्टिकोण को साकार करने के लिए मिलकर काम करने की दृढ़ प्रतिबद्धता दोहराई।

मालदीव के विदेश मंत्री डॉ. अब्दुल्ला खलील ने 25–27 मई, 2025 तक भारत की यात्रा की।यात्रा से दोनों देशों के बीच व्यापक आर्थिक और समुद्री सुरक्षा साझेदारी को मजबूती मिली है। 26 मई, 2025 को विदेश मंत्री डॉ. खलील ने व्यापक आर्थिक और समुद्री सुरक्षा साझेदारी पर भारत–मालदीव विजन दस्तावेज के कार्यान्वयन में हो रही प्रगति का निरीक्षण करने के लिए द्वितीय भारत–मालदीव उच्च स्तरीय कोर ग्रुप (एचएलसीजी) बैठक में मालदीव का नेतृत्व किया। बैठक के दौरान, राजनीतिक आदान–प्रदान, रक्षा एवं सुरक्षा सहयोग, विकास साझेदारी, व्यापार, अर्थव्यवस्था, स्वास्थ्य और लोगों के आपसी संबंधों में तेजी लाने के लिए संयुक्त विजन के कार्यान्वयन पर भी बातचीत की गई।विदेश मंत्री डॉ. खलील ने अप्रैल 2025 में पहलगाम में हुए आतंकवादी हमले की कड़ी निंदा की।उन्होंने आतंकवाद के सभी रूपों और अभिव्यक्तियों के खिलाफ भारत सरकार और भारत के लोगों के प्रति मालदीव की ओर से एकजुटता और समर्थन व्यक्त किया

भारत–मालदीव सैन्य सहयोग

मिलन नौसेना अभ्यास का आयोजन – मालदीव भारत के द्विवार्षिक मिलन नौसेना अभ्यास में भी शामिल हुआ जो 19–27 फरवरी 2024 के बीच विशाखापट्टनम में आयोजित हुआ।

'दोस्ती 16' कोस्ट गार्ड अभ्यास का आयोजन – भारत–मालदीव–श्रीलंका के बीच त्रिपक्षीय 'दोस्ती 16' कोस्ट गार्ड अभ्यास, मार्च 2024 में हुआ और जिसकी मेजबानी मालदीव ने की । मालदीव के द्वारा दोस्ती अभ्यास की मेजबानी करना क्षेत्रीय सहयोग की भावना और साझा समुद्री सुरक्षा से जुड़ी चिंताओं के जारी रहने को दिखाता है। दोस्ती 16 अभ्यास के दौरान माले सिटी के नजदीक चीन के जहाज शियांग यांग होंग 03 के लंगर डालने की वजह से क्षेत्र में बहुत ज्यादा विवादों को तूल दिया गया। हालांकि मालदीव के विदेश मंत्रालय ने जनवरी में एक वक्तव्य जारी किया कि जहाज को सप्लाई और कर्मियों को बदलने के उद्देश्य से अनुमति दी गई थी। विदेश मंत्रालय ने कहा कि चीन का जहाज भले ही मालदीव के बंदरगाह पर खड़ा होता है लेकिन वो मालदीव के समुद्र में किसी भी तरह का सर्वे नहीं करेगा।

मालदीव से भारतीय सैन्यकर्मियों की वापसी – मुइज्जू ने भारत से 15 मार्च 2025 से मालदीव से अपने सैनिकों को हटाने को कहा था।मुइज्जू द्वारा भारत से अपने सैनिकों को द्वीप राष्ट्र से हटाने के लिए कहने के बाद दोनों देशों के बीच संबंध तनावपूर्ण हो गए थे, क्योंकि उन्होंने नई दिल्ली के प्रभाव को देश की संप्रभुता के लिए खतरा बताया था।मार्च से मई के मध्य आपसी सहमति से भारतीय सैन्यकर्मियों के स्थान पर नागरिकों को तैनात किया गया।पहले तैनात 71 भारतीय कर्मियों में से सभी को द्विपक्षीय चर्चा के बाद वापस भेज दिया गया है, अंतिम टुकड़ी 9 मई 2024 को रवाना हुई। यद्यपि मालदीव में तैनात रहने के दौरान भारतीय सैनिकों ने हथियार नहीं रखे थे।भारतीय सैन्य उपस्थिति भारत के सहायता कार्यक्रम के तहत संचालित डोर्नियर विमानों और हेलीकॉप्टरों के लिए परिचालन सहायता प्रदान करने तक सीमित थी।

आर्थिक विकास मे सहयोग

थिलामाले ब्रिज प्रोजेक्ट – थिलामाले ब्रिज प्रोजेक्ट, जिस पर सोलिह सरकार ने हस्ताक्षर किए थे और जो भारतीय कंपनी एफकॉन्स इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड के द्वारा बनाया जा रहा है, 6.74 किमी. लंबी एक महत्वाकांक्षी पुल परियोजना और पक्की सड़क का संपर्क है जो राजधानी माले को नजदीक के विलीमाले, गुलहीफालहू और थिलाफुशी द्वीपों से जोड़ेगा। इस परियोजना के संबंध में राष्ट्रपति मुइज्जू ने कहा कि 'मेरा इरादा किसी भी मौजूद परियोजना को रोकना नहीं था, इसके बदले मैंने उन्हें मजबूत और तेज करने की इच्छा जताई है।'

थिलामाले ब्रिज परियोजना जब पूरी हो जाएगी तो न केवल द्वीपों के मध्य संपर्क बढ़ाएगी बल्कि मालदीव के आर्थिक परिदृश्य को भी बदल देगी।साथ ही माले में भीड़-भाड़ और युवा रोजगार से जुड़ी कई चुनौतियों का भी समाधान करेगी।

भारत-मालदीव में निर्यात के लिए विशेष कोटा बढ़ाने के लिए समझौता -2025 - 2025 में भारत ने मालदीव के लिए आवश्यक वस्तुओं के निर्यात के लिए विशेष कोटा बढ़ाने के लिए भारत के साथ समझौता किया था, जो मालदीव की सरकार और लोगों के प्रति भारत के निरंतर समर्थन को दर्शाता है। यह समझौता मालदीव के लोगों के कल्याण और दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय संबंधों की मजबूती के लिए नई दिल्ली की स्थायी प्रतिबद्धता को रेखांकित करता है।

भारत द्वारा मालदीव को वित्तीय सहायता - भारत 2019 से मालदीव को ब्याज-मुक्त सहायता प्रदान कर रहा है। अक्टूबर 2024 मे भारत ने नकदी संकट से जूझ रहे मालदीव को 100 मिलियन अमेरिकी डॉलर के ट्रेजरी बिल रोल ओवर की अनुमति दी तथा दोनों पक्षों ने 400 मिलियन अमेरिकी डॉलर और 3,000 करोड़ रुपये के मुद्रा विनिमय समझौते पर हस्ताक्षर किए। जिससे मालदीव को गंभीर वित्तीय संकट का सामना करने पर महत्वपूर्ण सहायता मिली।मई 2025 मे भारत सरकार ने मालदीव को 50 मिलियन अमेरिकी डॉलर (लगभग 423 करोड़) का ट्रेजरी बिल जारी करके सहायता प्रदान की है।मालदीव के विदेश मंत्री अब्दुल्ला खलील ने कहा कि भारत द्वारा समय पर दी गई सहायता दोनों देशों के बीच मित्रता के घनिष्ठ संबंधों को दर्शाती है।

मुइज्जू सरकार और मालदीव- चीन संबंध - मालदीव का 2023 में मॉरीशस में आयोजित वार्षिक कोलंबो सिक्युरिटी कॉन्क्लेव से बाहर रहना तथा ये कहकर भारत के साथ हाइड्रोग्राफी समझौते को रद्द करना कि मालदीव के समुद्र के बारे में सूचना पर किसी दूसरे देश का अधिकार नहीं होना चाहिए और यह फैसला देश की स्वतंत्रता और संप्रभुता की रक्षा करने के लिए लिया गया है। मुइज्जू सरकार द्वारा शी जिनपिंग की ग्लोबल सिक्योरिटी इनिशिएटिव (GSI) तथा मालदीव-चीन रक्षा समझौते का समर्थन करना- ये सभी इस बात के संकेत हैं कि मालदीव भारत से दूर हो रहा है और चीन की तरफ झुक रहा है।

मुइज्जू की चीन यात्रा - मालदीव के राष्ट्रपति मुइज्जू 8से 12 जनवरी चीन की पांच दिन की राजकीय यात्रा पर चले गए थे। चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग ने मालदीव के अपने समकक्ष मोहम्मद मुइज्जू से बातचीत की, जिसके बाद दोनों देशों ने पर्यटन सहयोग सहित 20 प्रमुख समझौतों पर हस्ताक्षर किए और अपने द्विपक्षीय संबंधों को व्यापक रणनीतिक सहकारी साझेदारी तक बढ़ाया।हस्ताक्षरित समझौतों में पर्यटन सहयोग, आपदा जोखिम न्यूनीकरण, नीली अर्थव्यवस्था, डिजिटल अर्थव्यवस्था में निवेश को मजबूत करना और बेल्ट एंड रोड पहल शामिल हैं। चीन मालदीव को अनुदान सहायता भी देगा। मुइज्जू ने चीन को द्वीप राष्ट्र का 'सबसे नजदीकी' सहयोगी बताया।मुइज्जू की तुर्की और चीन की राजकीय यात्रा को भारत के प्रति अपमान के रूप में देखा गया। यह मालदीव के राष्ट्रपतियों द्वारा भारत को अपना पहला पड़ाव बनाने की विगत परंपरा से अलग था। यात्रा से लौटने के बाद मुइज्जू लगातार भारत पर निशाना साधते रहे। मुइज्जू ने मालदीव लौटते ही कह दिया था कि 'हम भले ही छोटा देश हो सकते हैं लेकिन इससे किसी को भी हमें बुली करने का लाइसेंस नहीं मिलता।' हालांकि, मुइज्जू ने प्रत्यक्ष तौर पर किसी का नाम लेकर ये बयान नहीं दिया है. लेकिन माना जा रहा है कि उनका निशाना भारत की ओर था।

निष्कर्ष - यद्यपि अंतरराष्ट्रीय संबंधों और विदेश नीति का परिदृश्य निर्णायक रूप से बदल रहा है। विश्व राजनीति मे संबंधों और गठबंधनों में अस्थिरता के उपरांत भी द्विपक्षीय समीकरणों के कुछ पहलू, विशेष रूप से भारत और मालदीव जैसे पुराने साझेदारों के बीच, नीति में निरंतरता दिखाएंगे।भारत और मालदीव समुद्री सुरक्षा, आतंकवाद, कट्टरपंथ, समुद्री डकैती, तस्करी, संगठित अपराध और प्राकृतिक आपदाओं सहित साझा चुनौतियों का प्रभावी ढंग से समाधान करने के लिए मिलकर काम कर रहे है। मुइज्जू को लग रहा है कि भारत के साथ संबंधों को बेहतर बनाना तत्काल रूप से जरूरी कर्ज राहत उपायों के लिए फायदेमंद है।लेकिन मुइज्जू सक्रिय रूप से विकल्पों की तलाश भी कर रहे हैं इसका प्रमाण है तुर्की के साथ वर्तमान समय में मुक्त व्यापार समझौते को लेकर चल रही वार्ता एवं पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए चीन के कई शहरों में मालदीव तक डायरेक्ट फ्लाइट का विस्तार करने की संभावना को लेकर चल रही वार्ता। परंतु अंत में यह भी एक निर्विवाद सत्य है कि मालदीव के लिए भारत का महत्व आज भी बना हुआ है अत: मालदीव चीन के साथ अच्छे संबंध रखते हुए भी भारत के साथ अपने संबंधों की प्रगाढता हेतु प्रयासरत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. https://indianexpress.com/article/who-is/who-is-mohamed-muizzu-maldives-president-india-relations-9105603/
2. https://www.thehindu.com/news/international/defence-pacts-with-india-being-amended-says-maldives/article69545064.ece
3. https://www.pib.gov.in/PressReleaseIframePage.aspx?PRID=1920852
4. https://www.aajtak.in/amp/world/story/muizzu-15-hour-press-conference-u-turn-remarks-on-india-out-campaign-ntc-dskc-2233637-2025-05-06?utm_source=Internal_AT&utm_medium=Article&utm_name=Read_More_1
5. https://www.aljazeera.com/news/2024/10/6/maldives-president-muizzu-in-india-on-first-state-visit-to-repair-ties
6. https://www.aajtak.in/world/story/maldives-president-muizzu-breaks-world-record-with-15-hour-press-conference-zelensky-ntc-dskc-2233421-2025-05-06
7. https://www.jagranjosh.com/general-knowledge/who-is-mohamed-muizzu-the-president-of-maldives-1728301838-1
8. https://www.bbc.com/hindi/articles/cpw30ql5vvdo
9. https://www-thehindu-com.translate.goog/news/national/india-extends-financial-support-to-maldives-through-rollover-of-50-million-treasury-bill/article69566607.ece?_x_tr_sl=en&_x_tr_tl=hi&_x_tr_hl=hi&_x_tr_pto=tc
10. https://hindi.theprint.in/india/economy/india-notifies-export-of-certain-items-to-maldives-for-2025-26/801929/

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सागर जिले की बालिकाओं के शैक्षणिक एवं सामाजिक विकास के संदर्भ में लाड़ली लक्ष्मी योजना की प्रभावशीलता का अध्ययन

सुदर्शन केशरवानी* डॉ. मन्सूर खान**

* शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** विभागध्यक्ष (वाणिज्य) पीएमसीओई शा. माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – मध्यप्रदेश सरकार द्वारा संचालित लाड़ली लक्ष्मी योजना बालिकाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य एवं सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने हेतु एक महत्वपूर्ण पहल है। शोध में सागर जिले को अध्ययन क्षेत्र के रूप में चुना गया है, जो सामाजिक रूप से पारम्परिक और ग्रामीण परिवेश वाला क्षेत्र है। शोध के उद्देश्य के क्रियान्वयन की वास्तविक स्थिति, शैक्षणिक स्तर, सामाजिक दृष्टिकोण में बदलाव, चुनौतियों की पहचान और सुधारात्मक सुझाव प्रदान करना है। आँकड़ों के विश्लेषण से सिद्ध होता है कि योजना ने बालिकाओं के नामांकन दर में वृद्धि, ड्रॉप–आउट दर में कमी, उच्च शिक्षा के प्रति रूझान और बाल विवाह में कमी जैसे क्षेत्रों में सकारात्मक परिणाम दिए है। सामाजिक दृष्टिकोण में भी बदलाव देखा गया है। बालिकाएँ आत्मनिर्भर एवं आत्मविश्वासी बनी हैं।

शोध की समस्याओं में जागरूकता की कमी, प्रक्रियागत जटिलताएँ और निगरानी व्यवस्था की कमजोरी है। इनके समाधान के लिए जागरूकता अभियान, डिजिटल प्रबन्धन, योजनाओं में समन्वय और कौशल विकास कार्यक्रमों के सुझाव दिए गए है। लाड़ली लक्ष्मी योजना सागर जिले की बालिकाओं के शिक्षण एवं सामाजिक विकास में प्रभावी रही है तथा इसके सुदृढ़ क्रियान्वयन से समाज में लैंगिक समानता और महिला सशक्तिकरण को और अधिक बल मिल सकता है।

प्रस्तावना – भारत में बालिकाओं की स्थिति लम्बे समय से सामाजिक असमानताओं, लिंग आधारित भेदभाव और शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ेपन से ग्रस्त रही है। संविधान में समानता, शिक्षा और जीवन के अधिकार प्रदत्त है, परन्तु व्यावहारिक रूप में बालिकाओं को अनेक प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। विशेषतः ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाओं की शिक्षा और सामाजिक विकास में अनेक बाधाएँ है। इन बाधाओं को दूर करने के लिए विभिन्न सरकारी योजनाएँ चलाई गई है, जिनमें मध्यप्रदेश शासन की लाड़ली लक्ष्मी योजना एक क्रांतिकारी पहल के रूप में उभरी है।

लाडली लक्ष्मी योजना – इस योजना का उद्देश्य शिक्षा, स्वास्थ्य, सेवा और वित्तीय सुरक्षा को प्रदान कर बालिकाओं के जीवन में बदलाव लाना है। प्रदेश में लिंगानुपात सूचकांक में सुधार लाना, समाज में बालिकाओं के जन्म के प्रति सकारात्मक सोच बनाना, कन्या भ्रूण हत्या को रोकना, बाल विवाह को हतोत्साहित करना, परिवार नियोजन को प्रोत्साहित करना, बालिकाओं को उज्जवल भविष्य के लिए अच्छी नींव प्रदान करना, बालिकाओं की शिक्षा व स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार लाना मध्यप्रदेश सरकार की मंशा है।

गरीब परिवार में कन्या जन्म पर उसकी शिक्षा और विवाह के समय व्यय की चिंता मुखिया हो रहती है। लाड़ली लक्ष्मी योजना लागू होने से कन्या को बोझ न मानकर वरदान मानने लगे है। बालिका की शिक्षा और विवाह के लिए नकद अनुदान (सहायता) का प्रावधान इस योजना में किया गया है।

लाड़ली लक्ष्मी योजना का परिचय – लाड़ली लक्ष्मी योजना की शुरूआत मध्यप्रदेश सरकार द्वारा दिनांक 2 मई 2007 को की गई थी। इसका उद्देश्य बालिकाओं के प्रति समाज की मानसिकता को परिवर्तित करना, बालिकाओं के जन्म दर को प्रोत्साहन देना, उनकी शिक्षा को सुनिश्चित करना और उन्हें आर्थिव रूप से सक्षम करना है। इस योजना के अन्तर्गत बालिका के जन्म से लेकर उनकी शिक्षा तक राज्य सरकार आर्थिक सहयोग प्रदान करती है।

तालिका : लाड़ली लक्ष्मी योजना में राशि हस्तांतरण समय

भुगतान समय	प्राप्त राशि
कक्षा VI	2000
कक्षा IX	4000
कक्षा XI	6000
कक्षा XII	6000

स्त्रोत : ladlilaxmi.mp.gov.in

योजना के अन्तर्गत पात्र बालिका को कुल 1.43 लाख रूपये का चरणबद्ध भुगतान किया जाता है। बालिका के कक्षा छठवी, नवमी, ग्यारहवीं और बारहवीं में प्रवेश पर प्रोत्साहन राशि के रूप में भुगतान किया जाता है। इसके अतिरिक्त बालिका के 21 वर्ष की आयु पूर्ण करने पर अंतिम किश्त 1,00,000/– रूपये प्रदान की जायेगी, बशर्ते वह विवाह पूर्व कम से कम 18 वर्ष की हो और उच्च शिक्षा में संलग्न हो। भुगतान ई–पेमेन्ट के माध्यम से किया जाता है।

योजना की प्रमुख शर्तें :

1. केवल मध्यप्रदेश की निवासी बालिकाएँ पात्र होती है।
2. परिवार में कोई आयकरदाता न हो ।
3. अधिकतम दो संतान प्रति परिवार योजना का लाभ ले सकती है।

4. द्वितीय संतान के जन्म पर परिवार नियोजन अपनाया गया हो।

यह योजना समाज में बालिकाओं के प्रति सकारात्मक सोच विकसित करने, बाल विवाह की प्रवृत्ति रोकने तथा बालिकाओं को शिक्षित व सशक्त बनाने की दिशा में एक प्रभावी माध्यम रही है।

सागर जिले की पृष्ठभूमि – मध्यप्रदेश राज्य के बुन्देलखण्ड अंचल में स्थित सागर जिला 23.10 उत्तरी अक्षांश से 24.27 उत्तरी अक्षांश तथा 78.4 पूर्वी देशान्तर से 79.21 पूर्वी देशांश के मध्य स्थित है। सागर जिले की कुल जनसंख्या (वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार) 23.78 लाख है। कुल जनसंख्या में 1256257 (52.8 प्रतिशत) पुरूष तथा 1122201 (47.2 प्रतिशत) महिला है। जिले की कुल जनसंख्या में ग्रामीण जनसंख्या 1669662 (70.2 प्रतिशत) है तथा नगरीय जनसंख्या 908796 (29.8 प्रतिशत) है।

जिले की साक्षरता दर 76.5 प्रतिशत है, जिसमें पुरूष साक्षरता दर 84.8 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 67 प्रतिशत है। सागर जिले का कुल क्षेत्रफल 12805 वर्ग कि.मी. है। सागर जिले में 1069 ग्राम पंचायतें, 7 नगर पालिकाएँ, 2 नगर निगम, 7 राजस्व विकासखण्ड ओर 12 विकासखण्ड है। (स्त्रोत : http://censusindia.gov.in)

सागर जिले में महिला एवं बाल विकास विभाग की 16 परियोजनाएँ है इनमें राहतगढ़, शाहगढ़, केसली, खुरई, गढ़ाकोटा, जैंसीनगर, देवरी बण्डा, बीना, बीना नवीन, मालथौन, रहली, सागर ग्रामीण, सागर शहरी, सागर ग्रामीण 2, सागर शहरी 2 शामिल है। सागर जिले में कुल 2633 आँगनवाड़ी केन्द्र है।

योजना प्रारम्भ से 31 मार्च 2024 तक सागर जिले में कुल पंजीकृत बालिकाओं की संख्या 164570 है। योजना प्रारम्भ से वर्ष 2023–24 तक कुल छात्रवृत्ति प्रदाय बालिकाओं की संख्या 77752 है, जिन्हें 23.45 करोड़ रूपये छात्रवृत्ति के रूप में वितरित किए गए है।

स्त्रोत : जिला कार्यक्रम अधिकारी, महिला एवं बाल विकास कार्यालय, सागर।

शिक्षण विकास पर प्रभाव – लाड़ली लक्ष्मी योजना ने बालिकाओं के शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। सागर जिले के विभिन्न विकासखण्डों के विद्यालयों के समंक आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि जिन बालिकाओं को इस योजना का लाभ मिला, उनमें पढ़ाई के प्रति रूचि बढ़ी और विद्यालयों में उपस्थिति दर में वृद्धि हुई।

1. **नामांकन दर में वृद्धि –** पहले जहाँ परिजन बालिकाओं को स्कूल भेजने में हिचकिचाते थे, वहीं इस योजना के लागू होने के पश्चात् योजना अन्तर्गत मिलने वाली राशि के कारण माता–पिता बालिकाओं को विद्यालय भेजते है।

2. **ड्राप आऊट दर में कमी –** आर्थिक सहयोग के कारण बालिकाएँ अपनी स्कूल स्तर की पढ़ाई जारी रखती है। विशेषकर 9वीं से 12वीं कक्षा में जारी प्रोत्साहन राशि बालिकाओं को पढ़ाई स्थिर बनाए रखने में सहायक है।

3. **बाल विवाह में कमी –** लाड़ली लक्ष्मी योजना के अन्तर्गत लाभार्थी के विवाह के समय आयु 18 वर्ष से अधिक होना आवश्यक है। इस प्रकार बालिकाओं के विवाह की औसत आयु में वृद्धि हुई है। यह योजना बाल विवाह की रोकथाम में सहायक सिद्ध हुई है।

4. **उच्च शिक्षा के लिए प्रेरित –** लाड़ली लक्ष्मी योजना 2.0 के अन्तर्गत उच्च शिक्षा या व्यावसायिक शिक्षा में प्रवेश लेने पर 25000 रूपये अतिरिक्त अनुदान मिलता है। अतः बालिकाएँ प्रोत्साहन पाकर उच्च शिक्षा के लिए प्रेरित होती है।

सामाजिक विकास पर प्रभाव – लाड़ली लक्ष्मी योजना का प्रभाव केवल शैक्षणिक क्षेत्र तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका सकारात्मक प्रभाव बालिकाओं के सामाजिक विकास पर भी है।

1. **दृष्टिकोण में परिवर्तन –** पहले जहाँ बालिकाओं को आर्थिक बोझ माना जाता था, वहीं अब उनके जन्म पर परिवारों में उत्साह देखा जाता है। समाज में यह बदलाव लाड़ली लक्ष्मी योजना प्रारम्भ होने के पश्चात् आया है।

2. **स्वास्थ्य व पोषण में सुधार –** योजना के अन्तर्गत पंजीयन के साथ–साथ बालिकाओं के स्वास्थ्य व पोषण एवं टीकाकरण का रिकार्ड भी रखा जाता है, जिससे बालिकाओंके स्वास्थ्य स्थिति में सुधार हुआ है।

3. **आत्मविश्वास में वृद्धि –** आर्थिक एवं शैक्षणिक सुरक्षा मिलने से बालिकाओं का आत्मविश्वास बढ़ा है। वे अब विद्यालय, समाज और परिवार में अपनी बात रखने लगी है।

4. **सशक्तीकरण की दिशा में पहल –** बालिकाओं के शिक्षित होने से अब वे आत्मनिर्भरता के लिए स्वयं सहायता समूहों व प्रशिक्षण कार्यक्रमों में आत्मविश्वास से सक्रिय भूमिका निभा रही है।

प्रमुख चुनौतियाँ और बाधाएँ – यद्यपि योजना का स्वरूप प्रभावी है, परन्तु इसके क्रियान्वयन में कुछ चनौतियाँ भी सामने आती है।

1. **प्रकियात्मक जटिलता –** आवेदन की ऑनलाईन प्रक्रिया, दस्तावेजों की अनिवार्यता, बैंक खाता, आधार कार्ड का लिंक होना आदि प्रक्रियाएँ कई बार ग्रामीणजनों के लिए प्रक्रिया जटिल बन जाती है।

2. **जानकारी का अभाव –** ग्रामीण और अशिक्षित परिवारों को योजना सम्बन्धी पूर्ण जानकारी का अभाव होने से पंजीयन या लाभ उठाने से वंचित रह जाते है।

3. **सामाजिक बाधाएँ –** कुछ परिवार अब भी बालिकाओं को शिक्षा के लिए अपात्र मानते है या अपनी जिम्मेदारी मानकर समय से पूर्व विवाह कर देते है, जिससे उन्हें योजना का लाभ नहीं मिल पाता।

4. **निगरानी की कमी –** योजना की निरन्तर निगरानी या लाभार्थियों की प्रतिक्रिया की व्यवस्था उसे सशक्त बनाती है, कई बार विद्यालयों में या आँगनवाड़ी स्तर पर या जिला मुख्यालय स्तर पर अपडेट नहीं हो पाने से लाभार्थियों को समय पर अनुदान नहीं मिल पाता।

शोध अध्ययन का उद्देश्य :

1. सागर जिले में लाड़ली लक्ष्मी योजना के क्रियान्वयन की वास्तविक स्थिति का विश्लेषण करना।
2. बालिकाओं के शिक्षण स्तर पर इस योजना के प्रभाव का मूल्यांकन करना।
3. योजना से सम्बन्धित चुनौतियों और व्यावहारिक बाधाओं की पहचान करना।
4. योजना के माध्यम से बालिकाओं के सामाजिक विकास को जानना।
5. योजना की प्रभावशीलता को बढ़ाने हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध का महत्व :

1. समाज में बालिकाओं के प्रति दृष्टिकोण परिवर्तन में सहायक हो सकता है।

2. महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में नई दिशा दिखा सकता है।
3. नीति निर्माताओं को योजनाओं की व्यावहारिक प्रभावशीलता का सूचक बनेगा।
4. शिक्षा और सामाजिक विकास के क्षेत्र में योजनाओं के परिणामों का तुलनात्मक अध्ययन करने में उपयोगी होगा।

शोध की परिकल्पना :

1. लाड़ली लक्ष्मी योजना के कारण सागर जिले की बालिकाओं के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में सुधार हुआ है।
2. लाड़ली लक्ष्मी योजना ने बालिकाओं के शैक्षिक स्तर में सकारात्मक परिवर्तन किया है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन एक वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन है। शोध द्वितीयक आँकड़ों पर आधारित है। आँकड़े सरकारी रिपोर्ट, जनगणना, विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित आँकड़ों का प्रयोग किया जायेगा। परिकल्पना परीक्षण हेतु संग्रहित आँकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण कर परिकल्पनाओं का परीक्षण किया जायेगा।

तालिका क्रमांक 1: मध्यप्रदेश के जिलो में पिछले 5 वर्षों में जन्में बच्चों के लिंगानुपात में परिवर्तन (2015–16 और 2019–21)

	राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे 4 (2015–16)	राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे 5 (2019–2021)
भारत	19	929
मध्यप्रदेश	927	956
सागर	849	939

स्त्रोत : NFHS-4(2015-16) एवं NFHS-5 (2019-21)

तालिका क्रमांक 1 के अवलोकन से स्पष्ट होता है राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे –4 के अनुसार जन्म के समय लिंगानुपात (वर्ष 2015–16) में भारत में 919 था जबकि राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे–5 (वर्ष 2019–2021) के अनुसार भारत में जन्म के समय लिंगानुपात बढ़कर 929 हो गया है, इसी अवधि में मध्यप्रदेश में यह 927 से बढ़कर 956 तथा सागर जिले में यह 849 से बढ़कर 929 हो गया है। भारत सरकार के सर्वे के अनुसार यह बेटी बचाओ – बेटी पढ़ाओ एवं लाड़ली लक्ष्मी जैसी योजनाओं के फलस्वरूप हुआ। बालिकाएँ अब शिक्षित हो रही है।

तालिका क्रमांक 2 : मध्यप्रदेश में 20–24 वर्ष की महिलाओं की शादी कम उम्र में होती जाती है

	राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे 4 (2015–16)	राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे 5 (2019–2021)
मध्यप्रदेश	32.8	23
सागर	38.1	21.4

स्त्रोत – NFHS-4(2015-16) एवं NFHS-5 (2019-21)

तालिका क्रमांक 2 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि मध्यप्रदेश में (20–24) वर्ष की महिलाओं की शादी कम आयु में ही हो जाती है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे–4 के अनुसार मध्यप्रदेश में यह 32.8 प्रतिशत था जो राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे–5 में घटकर 23 हो गया। इसी अवधि में सागर जिले में यह 38.1 प्रतिशत से घटकर 21.4 प्रतिशत हो गई, जो कि प्रदेश के स्तर से अधिक था परन्तु अब यह प्रदेश स्तर से कम हो गया है। इसका कारण योजना क्रियान्वयन के पश्चात् अधिक उम्र में विवाह होना है।

तालिका क्रमांक 3: सर्वेक्षण के समय जो महिलाएँ (15–19) वर्ष पहले से ही माँ है या गर्भवती

	राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे 4 (2015–16)	राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे 5 (2019–2021)
मध्यप्रदेश	7.5	5.2
सागर	11.1	6.4

स्त्रोत :NFHS-4(2015-16) एवं NFHS-5 (2019-21)

तालिका क्रमांक 3 के अनुसार राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे–4 (2015–16) के समय जो महिलाएँ (15–19) वर्ष आयु में माँ है या गर्भवती थी उनका प्रतिशत मध्यप्रदेश में 7.5 था, राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे–5 (2019–21) के अनुसार घटकर 5.2 प्रतिशत रहा, इसी समय सागर जिले में यह 11.1 प्रतिशत से घटकर 6.4 प्रतिशत रहा। इस प्रकार कम आयु में गर्भवती होने की दर में कमी आना बालिकाओं (महिलाओं) के स्वास्थ्य के लिए उत्तम है। यह समाज द्वारा शासकीय योजनाओं में पालन के कारण संभव हुआ है।

तालिका क्रमांक 4 : मध्यप्रदेश में स्कूली शिक्षा के स्तर के अनुसार लड़कियों की ड्रॉप आऊट दर औसत

	लाड़ली लक्ष्मी योजना के तहत संवितरण से पहले (2013–15)	लाड़ली लक्ष्मी योजना के तहत वितरण के बाद (2016–17 से 2021–22)
प्राथमिक	7.9	2.6
उच्च प्राथमिक	11.5	7.2
माध्यमिक	23.4	20.9

स्त्रोत : UDISE (Unified District Information System for Education)

तालिका क्रमांक 4 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2013–15 लाड़ली लक्ष्मी योजना के प्रारम्भिक वर्षों में मध्यप्रदेश में स्कूली शिक्षा के स्तर के अनुसार लड़कियों की शाला छोड़ने की दर जहाँ 7.9 प्रतिशत थी वह वर्ष 2016–17 से 2021–22 के समय गिरकर 2.6 प्रतिशत रही, उच्च प्राथमिक स्तर पर यह इसी अवधि में 11.5 प्रतिशत से गिरकर 7.2 प्रतिशत रही। शाला छोड़ने की दर में गिरावट यह बताती है कि बालिकाएँ अब स्कूल में अधिक समय देती है। इसका कारण लाड़ली लक्ष्मी योजना (म.प्र.सरकार) में शामिल शर्ते है जिनमें पालकों को बालिकाओं को स्कूल में प्रवेश और विशिष्ट शैक्षिक उपलब्धि तक पहुँचने पर मौद्रिक प्रोत्साहन की शर्त है। सरकार का प्रयास स्कूलों में नामांकन में वृद्धि और शाला त्याग दर में कमी से स्कूल समय में वृद्धि हो रही है।

परिकल्पना परीक्षण :

परिकल्पना 1 – लाड़ली लक्ष्मी योजना के कारण सागर जिले की बालिकाओं के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में सुधार हुआ है।

उपरोक्त परिकल्पना को लेकर किये गये शोध कार्य के अन्तर्गत तालिका क्रमांक 1, 2 एवं 3 के अध्ययन पश्चात् पाया गया कि सागर जिले में बालिकाओं के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में सुधार आया है। इसका

कारण शासकीय योजनाओं के कारण बालिकाएँ अब अधिक समय शिक्षा पर दे रही हैं। वे अब विवाह से पहले शिक्षा पर ध्यान देती हैं जिससे उनके लिए जीवन में क्या है वह सीखती है, परिवार के सदस्य भी सरकार के साथ हैं । इस प्रकार सागर जिले में न सिर्फ लिंगानुपात में सुधार आया है बल्कि कम उम्र में शादी की दर में गिरावट और कम आयु में गर्भवती या माँ बनने की दर में भी सकारात्मक गिरावट आई है। अतः यह शून्य परिकल्पना का सत्यापन होता है कि लाड़ली लक्ष्मी योजना के कारण सागर जिले की बालिकाओं के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में सुधार हुआ है।

परिकल्पना 2 – लाड़ली लक्ष्मी योजना ने बालिकाओं के शैक्षिक स्तर में सकारात्मक परिवर्तन किया है।

उपरोक्त परिकल्पना को लेकर किए गए शोध के अन्तर्गत तालिका क्रमांक 4 के अध्ययन पश्चात् यह पाया कि मध्यप्रदेश में लाड़ली लक्ष्मी योजना ने बालिकाओं के शैक्षिक स्तर में सकारात्मक परिवर्तन किया है, इसका कारण लाड़ली लक्ष्मी योजना बालिकाओं के जन्म, उनके स्कूल में प्रवेश और विशिष्ट शैक्षिक उपलब्धि तक पहुँचने पर मौद्रिक प्रोत्साहन की शर्तों का होना है। इस प्रकार बालिकाओं के शाला त्याग दर में कमी आ रही है और अब बालिकाएँ शाला में अधिक समय दे रही हैं।

अतः यह शून्य परिकल्पना का सत्यापन होता है कि लाड़ली लक्ष्मी योजना ने बालिकाओं के शैक्षिक स्तर में सकारात्मक परिवर्तन किया है। स्वावलम्बी बालिका सशक्त समाज का आधार है।

निष्कर्ष – लाड़ली लक्ष्मी योजना सागर जिले में बालिकाओं के शिक्षण और सामाजिक विकास के लिए एक महत्वपूर्ण पहल सिद्ध हुई है। इस योजना के माध्यम से जहाँ बालिकाओं का विद्यालयों में नामांकन बढ़ा है, वहीं उनके आत्मविश्वास, सामाजिक पहचान और परिवारों की मानसिकता में भी सकारात्मक परिवर्तन देखा गया है। हालाँकि अभी भी कई क्षेत्रों में सुधार की आवश्यकता है, परन्तु यदि योजना का क्रियान्वयन पारदर्शी, सरल और समन्वित तरीके से किया जाए तो यह न केवल बालिकाओं के जीवन को परिवर्तित कर सकती है, बल्कि समाज में व्यापक स्तर पर लैंगिक समानता और सशक्तिकरण की दिशा में मील का पत्थर बन सकती है। स्वावलम्बी बालिका – सशक्त समाज का आधार

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. महिला एवं बाल विकास विभाग, मध्यप्रदेश www.mpwcd.nic.in
2. सागर जिला प्रशासनिक आँकड़े
3. प्रशासकीय प्रतिवेदन 2022–23, महिला एवं बाल विकास विभाग, मध्यप्रदेश
4. सक्सेना रानू, सक्सेना पल्लवी, लाड़ली लक्ष्मी योजना का बालिकाओं के विकास में योगदान, जिला शिवपुरी (म.प्र.) के विशेष संदर्भ में। (2016)RemarkingAn Analisation Vol. 1 issue VI september 2016 P:ISSN No : 2394-0344 RNI No. UPBIL/2016/67980 (page no. 93-98) EISSN No. 2455-0817
5. सेनगुप्ता गीताली, रजा सीमा – सामाजिक क्षेत्र की योजनाएँ एवं महिला सशक्तिकरण (लाड़ली लक्ष्मी योजना के विशेष संदर्भ में) P:ISSN No. 2321-290X, E:ISSN No. 2349-980X Shrinkhala: Vol-II, Issue-II October, 2014 page 93-96.
6. वंशकार रामसेवक और खटीक डॉ. एस. के., मध्यप्रदेश में संचालित लाड़ली लक्ष्मी योजना का विश्लेषणात्मक अध्ययन, International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS) ISSN : 2581-9925, Impact Factor : 7.150 Volume 06, No. 03 (II) July-September, 2024, PP 107-112
7. ladliaxmi.mp.gov. in
8. Suri, Shoba, Kurian, Oommenc, Chakraborty Sikkim (2023), The Girl child at the centre of Policymaking Weighting the successes of the Ladli Laxmi Yojana of Madhya Pradesh, http:/www.nesearchgate.net/publication/378269027 December, 2023, pp 121-138

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मध्यपूर्व में शक्ति संतुलन ईरान – इजराइल शत्रुता का एक विश्लेषण

संदीप बिड़ला* सुदीप बिड़ला**

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) पीएमसीओई शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, पीएमसीओई महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह शोध पत्र मध्य पूर्व में शक्ति संतुलन पर ईरान और इजराइल के बीच बढ़ती शत्रुता के गहन प्रभाव का विश्लेषण करता है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि वैचारिक मतभेदों परमाणु कार्यक्रम की चिंताओं क्षेत्रीय प्रॉक्सी युद्धों और बाहरी शक्तियों की भूमि का जैसे प्रमुख कार कों का विस्तृत अध्ययन किया गया है। इसका उद्देश्य इस जटिल गतिरोध की जड़ों को समझना, इसके वर्तमान निहितार्थों की पड़ताल करना और क्षेत्र की स्थिरता और अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा पर इसके संभावित परिणामों का मूल्यांकन करना है। यह पत्र दर्शाता है कि कैसे ये शत्रुता मध्य पूर्व के भू– राजनीतिक परिदृश्य को नया आकार दे रही है जिससे अनिश्चितता और संघर्ष का एक चक्र बन रहा है।

प्रस्तावना – मध्यपूर्व अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और रणनीतिक भौगोलिक स्थिति के साथ दशकों से भू– राजनीतिक उथल– पुथल का केंद्र रहा है। इस जटिल परिदृश्य के भीतर ईरान और इजराइल के बीच का संबंध एक अनोखा और लगातार विकसित होता हुआ विरोधाभास प्रस्तुत करता है। कभी सहयोगी रहे ये दोनों देश आज घोर शत्रु बन चुके हैं जिनकी प्रतिद्वंद्विता पूरे क्षेत्र में शक्ति संतुलन को गहराई से प्रभावित कर रही है। यह शोध पत्र ईरान –इजराइल शत्रुता के मूल कारणों इसके विभिन्न आयामों और मध्य पूर्व में शक्ति संतुलन पर इसके व्यापक प्रभावों का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है। हम इस जटिल संबंध की ऐतिहासिक जड़ों वैचारिक अंतर्विरोधों सैन्य क्षमताओं की होड़ और क्षेत्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इसके बहुस्तरीय प्रभावों की पड़ताल करेंगे। इस शत्रुता को समझना न केवल क्षेत्र की वर्तमान चुनौतियों को समझने के लिए महत्वपूर्ण है बल्कि भविष्य के संभावित परिदृश्यों का अनुमान लगाने के लिए भी आवश्यक है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और संबंधों का विकास– ईरान और इजराइल के बीच संबंध हमेशा से तनावपूर्ण नहीं रहे हैं। 1979 की ईरानी क्रांति से पहले विशेष रूप से शाह मोहम्मद रजा पहल वीके शासन काल में दोनों देशों के बीच अनौपचारिक लेकिन कार्यात्मक संबंध थे। इजराइल को ईरान द्वारा मध्यपूर्व में एक गैर –अरब शक्ति के रूप में देखा जाता था जो सोवियत संघ और अरब राष्ट्रवाद के विरुद्ध एक संभावित सहयोगी हो सकता था। तेल व्यापार खुफिया जानकारी साझाकरण और सैन्य सहयोग गुप्त रूप से होता था। इजराइल ईरान को अपनी सुरक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण बाहरी मित्र मानता था खास कर जब वह अरब देशों से घिरा हुआ था।

हालांकि 1979 की इस्लामिक क्रांति ने इन संबंधों में नाटकीय परिवर्तन ला दिया। आयतुल्लाह रुहुल्लाह खुमैनी के नेतृत्व में नई इस्लामी सर कारने इजराइल को एक अवैध जायोनी इकाई और अमेरिकी साम्राज्य वाद का चौकीदार घोषित कर दिया। इजरायल के साथ सभी संबंध तुरंत तोड़ दिए गए और फिलिस्तीनी मुक्ति के लिए जोरदार समर्थन व्यक्त किया गया। क्रांति के बाद ईरान की विदेश नीति इस्लाम वादी सिद्धांतों पर आधारित हो गई जिसमें इजरायल का अस्तित्व एक वैचारिक चुनौती बन गया। इजरायल ने भी बदले में ईरान के परमाणु कार्यक्रम और क्षेत्र में बढ़ते प्रभाव को अपनी सुरक्षा के लिए एक अस्तित्व गत खतरा मानना शुरू कर दिया। यह वैचारिक मोड़ और परस्पर अविश्वास की शुरुआत थी जिसने दोनों देशों को शत्रुता के पथ पर धकेल दिया। इस खंड के विश्लेषण में (Smith,2023) द्वारा प्रस्तुत ऐतिहासिक अंतर्दृष्टि का उपयोग किया गया है।

वर्तमान गतिरोध के मुख्य कारण: ईरान और इजराइल के बीच वर्तमान गतिरोध कई जटिल और परस्पर संबंधित कारकों का परिणाम है

1. **परमाणु कार्यक्रम–** ईरान का परमाणु कार्य क्रम इजराइल के लिए सबसे बड़ी सुरक्षा चिंता है। इजराइल का मानना है कि ईरान परमाणु हथियार विकसित करने की कोशिश कर रहा है जिसे वह अपने अस्तित्व के लिए सीधा खतरा मानता है। इजराइल एक परमाणु– सशस्त्र ईरान को बर्दाश्त नहीं करेगा और उसने इस कार्यक्रम को रोकने के लिए सैन्य कार्रवाई सहित सभी विकल्पों को खुला रखा है। ईरान लगातार यह दावा करता रहा है कि उसका परमाणु कार्यक्रम केवल शांतिपूर्ण उद्देश्यों जैसे ऊर्जा उत्पादन और चिकित्सा अनुसंधान के लिए है। हालांकि अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (IAEA) की रिपोर्ट और पश्चिमी खुफिया एजेंसियां ईरान की नीयत पर सवाल उठाती रही हैं। 2015 का JCPOA (संयुक्त व्यापक कार्य योजना समझौता जिसका उद्देश्य ईरान के परमाणु कार्यक्रम को सीमित करना था इजराइल के लिए चिंता का विषय बना रहा जिसने इसे पर्याप्त नहीं माना। अमेरिका के इस समझौते से हटने के बाद ईरान ने अपनी परमाणु गतिविधियों को फिर से तेज कर दिया है जिससे इजराइल की चिंताएं और बढ़ गई हैं। इस पहलू पर विस्तृत जानकारी Jones (2024), के विश्लेषण पर आधारित है।

2. **क्षेत्रीय प्रतिद्वंद्विता–** मध्यपूर्व में प्रभुत्व और प्रभाव के लिए ईरान और इजराइल के बीच एक गहरी क्षेत्रीय प्रतिद्वंद्विता मौजूद है। यह

प्रतिद्वंद्विता प्रॉक्सी युद्धों और विभिन्न क्षेत्रीय संघर्षों में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

1. सीरिया सीरिया में गृह युद्ध दोनों देशों के लिए एक प्रमुख युद्ध क्षेत्र बन गया है। ईरान असद शासन का एक प्रमुख समर्थक है और उसने लेबनान के हिज्बुल्लाह और अन्य शियामिलिशिया के माध्यम से सीरिया में अपनी सैन्य उपस्थिति मजबूत की है। इजराइल सीरिया में ईरान की सैन्य उपस्थिति को अपनी उत्तारी सीमा पर सीधा खतरा मानता है और उसने ईरानी ठिकानों और हथियारों के काफिलों पर सैकड़ों हवाई हमले किए हैं।

2. लेबनान लेबनान में हिज्बुल्लाह ईरान द्वारा समर्थित एक शक्तिशाली शिया राजनीतिक दल और अर्धसैनिक समूह इजराइल के लिए एक महत्वपूर्ण खतरा है। हिज्बुल्लाह के पास एक बड़ा रॉकेट शस्त्रागार है जो इजराइल के अंदरूनी हिस्सों तक पहुँच सकता है। इजराइल हिज्बुल्लाह को ईरान का एक मोहरा मानता है और दोनों के बीच कई बार संघर्ष हो चुका है।

3. गाजापट्टी गाजापट्टी में हमास और इस्लामिक जिहाद जिन्हें इजराइल आतंकवादी संगठन मानता है को ईरान से महत्वपूर्ण समर्थन प्राप्त है। इजराइल और इन समूहों के बीच कई संघर्ष हुए हैं जिनमें ईरान की भूमिका एक विवादास्पद मुद्दा बनी हुई है।

4. अन्यक्षेत्र यमन में हूती विद्रोहियों और इराक में शिया मिलिशिया को ईरान का समर्थन भी क्षेत्रीय शक्ति संतुलन को प्रभावित करता है और इजराइल की सुरक्षा चिंताओं को बढ़ाता है। इन प्रॉक्सी युद्धों का विश्लेषण Miller (2023), में गहराई से किया गया है।

3. फिलिस्तीन मुद्दा – फिलिस्तीन मुद्दा ईरान और इजराइल के बीच वैचारिक विभाजन का एक महत्वपूर्ण बिंदु है। ईरान फिलिस्तीनी अधिकारों का प्रबल समर्थक है और इजराइल के अस्तित्व पर सवाल उठाता है। यह फिलिस्तीनी गुटों जैसे हमास और इस्लामिक जिहाद को महत्वपूर्ण वित्तीय और सैन्य सहायता प्रदान करता है। इसके विपरीत इजराइल फिलिस्तीनी संघर्ष में ईरान के हस्तक्षेप को अपने आंतरिक मामलों में एक खतरनाक हस्तक्षेप और क्षेत्र को अस्थिर करने का प्रयास मानता है।

4. धार्मिक और वैचारिक अंतर– ईरान की इस्लामी क्रांति के बाद वैचारिक मतभेद शत्रुता का एक केंद्रीय कारक बन गए। ईरान अपनी इस्लामी क्रांति के सिद्धांतों का प्रसार करना चाहता है और क्षेत्र में इजराइल की वैधता को चुनौती देता है। इजराइल एक यहूदी राष्ट्र के रूप में ईरान के इस्लामी गणतंत्र को अपने अस्तित्व के लिए एक वैचारिक चुनौती मानता है। यह मौलिक वैचारिक विभाजन संघर्ष को एक गहरी और अधिक जटिल परत प्रदान करता है।

5. अमेरिका की भूमिका– संयुक्त राज्य अमेरिका इजराइल का एक प्रमुख रणनीतिक सहयोगी ईरान –इजराइल संबंधों में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अमेरिका की ईरान पर अधिकतम दबाव की नीति जिसमें प्रतिबंध और सैन्य उपस्थिति शामिल है इजराइल की स्थिति को मजबूत करती है लेकिन ईरान के साथ तनाव भी बढ़ाती है। ईरान अमेरिका को महान शैतान मानता है और इजराइल को उसका क्षेत्रीय प्रतिनिधि। अमेरिकी समर्थन इजराइल को ईरान के खिलाफ आक्रामक रुख अपनाने में सक्षम बनाता है। जबकि ईरान इसे अपनी सुरक्षा के लिए एक संयुक्त खतरा मानता है। इस खंड के लिए विभिन्न थिंकटैंकों और यूनाइटेड स्टेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ पीस (USIP) की रिपोर्टों का भी संदर्भ लिया गया है।

क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव– ईरान –इजराइल शत्रुता के मध्यपूर्व और उससे आगे व्यापक प्रभाव पड़ते हैं।

1. क्षेत्रीय अस्थिरता– दोनों देशों के बीच लगातार तनाव क्षेत्र में अस्थिर ताका एक प्रमुख स्रोत है। प्रॉक्सी युद्ध और छिटपुट सैन्य झड़पें संघर्ष के बढ़ने का खतरा पैदा करती हैं। जिससे पूरे क्षेत्र में अनिश्चितता का माहौल बना रहता है। यह प्रतिद्वंद्विता अन्य क्षेत्रीय शक्तियों को भी पक्ष चुनने के लिए मजबूर करती है, जिससे ध्रुवीकरण बढ़ता है।

2. गठबंधन निर्माण– यह शत्रुता क्षेत्र में नए गठबंधनों को जन्म दे रही है। इजराइल ने हाल के वर्षों में कई अरब देशों विशेष रूप से खाड़ी राज्यों (जैसे संयुक्त अरब अमीरात बहरीन के साथ अब्राहम समझौते के माध्यम से अपने संबंधों को सामान्य किया है। इन समझौतों को ईरान के खिलाफ एक संभावित गठबंधन के रूप में देखा जाता है। दूसरी ओर ईरान ने अपनी स्थिति मजबूत करने के लिए रूस और चीन जैसे देशों के साथ अपने संबंधों को गहरा किया है।

3. वैश्विक शक्तियों पर निहितार्थ– ईरान –इजराइल तनाव का वैश्विक शक्तियों पर भी महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। अमेरिका के लिए यह क्षेत्र में अपनी सैन्य उपस्थिति और कूटनीतिक प्रयासों को बनाए रखने की चुनौती पेश करता है। रूस और चीन के लिए यह मध्यपूर्व में अपने प्रभाव को बढ़ाने का अवसर प्रदान करता है अक्सर अमेरिकी नीतियों के विरोध में। यूरोपीय संघ के देश जो अक्सर कूटनीतिक समाधानों का समर्थन करते हैं इस संघर्ष के मानवीय और आर्थिक प्रभावों से चिंतित रहते हैं।

4. अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा पर प्रभाव– यदि ईरान– इजराइल संघर्ष एक बड़े पैमाने पर युद्ध में बदल जाता है तो इसके वैश्विक अर्थव्यवस्था तेल की कीमतों और अंतर्राष्ट्रीय शिपिंग मार्गों पर गंभीर परिणाम होंगे। परमाणु प्रसार का खतरा भी एक गंभीर चिंता का विषय बना हुआ है। क्योंकि यदि ईरान परमाणु हथियार विकसित करता है तो यह क्षेत्र में एक हथियार दौड़ को ट्रिगर कर सकता है। इस खंड के लिए विभिन्न समाचार लेख और विश्लेषण से समकालीन घटनाओं और उनके प्रभावों की जानकारी ली गई है।

निष्कर्ष और भविष्य की संभावनाएं– ईरान और इजराइल के बीच की शत्रुता मध्यपूर्व में शक्तिसंतुलन को परिभाषित करने वाले सबसे महत्वपूर्ण कारकों में से एक है। इसकी जड़ें ऐतिहासिक घटनाओं गहरी वैचारिक भिन्नताओं परस्पर सुरक्षा चिंताओं और क्षेत्रीय प्रभुत्व की आकांक्षाओं में निहित हैं। परमाणु कार्यक्रम प्रॉक्सी युद्ध और फिलिस्तीन मुद्दा इस जटिल गतिरोध के प्रमुख चालक बने हुए हैं।

वर्तमान परिदृश्य में संबंधों के सामान्यीकरण की तत्काल संभावनाएं कम दिखती हैं। दोनों देश एक– दूसरे को अस्तित्वगत खतरा मानते हैं और उनके भू–राजनीतिक हित गहरे विरोधाभासी हैं। इजराइल अपनी सुरक्षा के लिए ईरान के परमाणु कार्यक्रम और क्षेत्रीय उपस्थिति को रोकने के लिए प्रतिबद्ध है जबकि ईरान अपनी सुरक्षा और क्षेत्रीय प्रभाव को बनाए रखने के लिए दृढ़ है।

भविष्य में यह तनाव या तो यथास्थिति बनाए रख सकता है जिसमें छिट पुट झड़पें और प्रॉक्सी युद्ध जारी रहेंगे या फिर यह एक बड़े पैमाने पर सैन्य संघर्ष में बदल सकता है जिसके विनाशकारी क्षेत्रीय और वैश्विक परिणाम होंगे। कूटनीतिक समाधान यदि संभव हो तो दोनों पक्षों के बीच विश्वास बहाली के उपायों सुरक्षा गारंटी और परमाणु कार्यक्रम पर एक नए व्यापक समझौते पर निर्भर करेगा। हालांकि वर्तमान माहौल में यह एक दुर्जेय चुनौती प्रतीत होती है। अंतर्राष्ट्रीय समुदाय कोइ स गतिरोध को कम करने

और किसी भी संभावित वृद्धि को रोकने के लिए सक्रिय रूप से शामिल रहना चाहिए क्योंकि मध्यपूर्व में शक्ति संतुलन पर इसके प्रभाव पूरे वैश्विक सुरक्षा ढांचे को प्रभावित करतेहैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Smith, John. The Iran-Israel Rivalry: A Geopolitical Analysis. Oxford University Press, 2023.
2. अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (IAEA). ईरान के परमाणु कार्यक्रम से संबंधित विभिन्न वर्षो की रिपोर्टे। (उदाहरण के लिए, IAEA Board of Governors Reports.
3. Jones, Sarah. "The Nuclear Dimension of Iran-Israel Relations." Middle East Policy Journal, Vol. 30, No. 2 (2024): pp. 45-62.
4. Miller, David. "Proxy Wars in the Middle East: The Iran-Israel Shadow Conflict." Journal of Conflict Studies, Vol. 15, No. 3 (2023): pp. 112-130.
5. विभिन्न थिंक टैंक के विश्लेषण (जैसे ब्रुकिंग्स इंस्टीट्यूट सेंटर फॉरस्ट्रैटेजिक एंड इंटरनेशनल स्टडीज (CSIS) की रिपोर्टे और लेख।
6. यूनाइटेड स्टेट्स इंस्टीट्यूट ऑफपीस (USIP). संबंधित रिपोर्टे और प्रकाशन।
7. अब्राहम समझौते से संबंधित आधिकारिक दस्तावेज और प्रेस विज्ञप्तियां (जैसे अमेरिकी विदेश विभाग द्वारा जारी)
8. विभिन्न विश्वसनीय समाचार स्रोतों के लेख और विश्लेषण (जैसे बीबीसी हिंदी अलजजीरा, द न्यूयॉर्क टाइम्स, द गार्जियन।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Culture and Gender Identity in Mahesh Dattani's 'Tara'

Dr. Kalpana Pandey*

***Assistant Professor (English) Atal Bihari Vajpayee Nagar Nigam Degree College, Lucknow (U.P.) INDIA**

Abstract - Gender inequality is a common malice all over the world. Millions of women throughout the world live in conditions of abject deprivation and suffer attacks on their fundamental human rights.However, they have been ignored for centuries and treated as 'second sex'. Throughout the history and in almost all societies, inequalities of men and women are part and parcel of an accepted male dominated culture. Women often have to face discrimination, injustice and dishonor. Besides this, they are denied their most basic and fundamental right, i.e. "right to life". Thenegligence of the girl child and discrimination goes hand to hand. The patriarchal and hypocritical nature of modern male dominated society has been understood, analyzed and exposed by the famous modern Indian dramatist Mahesh Dattani. Almost all his plays ring the note of some burning topics of this modern world. Dattani's well known play "Tara" is centered round the theme of gender discrimination, injustice and clash of attitude which is gaining ground everywhere in this modern age. "Tara" is not just the story of the protagonist of the play Tara, but it is the story of every girl born in Indian family whether urban or rural. "Tara" shows a typical woman character persecuted by male domination. It is a riveting play that questions the role of a society that treats the children of the same womb in two different ways. Through this play, Dattani mocks at such type of thoughts that prevail in our society.

In this paper an effort has been done to bring up this particular view of thought to make a fertile insight towards the study of women as subaltern.It also seeks to bring out from the closet the hidden faces of outdatedmale system and its effect on the females of the male dominated families.

Keywords: Malice, abject deprivation, fundamental, hypocritical, gender discrimination, injustice, subaltern.

Introduction - Mahesh Dattani is one such Indian playwright who took the burden to upgrade the society with new themes and almost all the plays of Mahesh Dattani ring the note of some burning topics of this modern world. His plays artfully touch some of the most serious concerns of our society todayand focused on several major problems prevalent around us.In many of his plays, he handles various issues like- sexuality, gender discrimination, religious bigotry, communalism and child sexual abuse etc.Dattani is the first Indian playwright to be honoured with the most prestigious award the Sahitya Akademy in 1998. His plays provided fascinating insights and took pains to emphasize the present genre through novel aspects. Like G. B. Shaw, he strongly believes in exposing the various ills and maladies of the society. Dattani seems to be belonged to the literary concept 'art for the sake of life'.

In some of his plays like "Tara" and "Where There's Will" Dattani has presented a very realistic portrayal of the deserted and the marginalized women who have to bear the brunt of patriarchy or male domination. His well-known play "Tara" is centered round the theme of gender discrimination, injustice and clash of attitude which is gaining ground everywhere in this modern age.In terms of Gender injustice, the term 'gender' refers to economic, social, political and cultural attributes and opportunities associated with being male and female. Women play a vital role equally in creation as well as development of their families in particular and society in general. Whether in today's time women have been given more rights as compared to men, since the condition of women is miserable, because there exists a wide gulf between theory and practice.

Discussion: "Tara" shows a typical woman character persecuted by male domination. This play reflects the predicament of woman, her pathetic plight, her traumatic experience and above all her step motherly treatment by a male dominated family. It also exposes the existing patriarchal stereotypes of the Indian mindset, which has always preferred a boy child to a girl child. The play also shows the hypocritical nature of modern male dominated society which never feels any qualm of conscience in making a difference between the girl and boy child sharing the same woman. "Tara" is a riveting play that questions the role of a society that treats the children of the same

womb in two different ways. Dattani mocks at such type of thoughts that prevail in our society.

"Tara" is not just the story of the protagonist of the play Tara, but it is the story of every girl child born in Indian family whether urban or rural. Every girl child in an Indian family does suffer some kind of exploitation and if there is a boy child in the family then the exploitation is very much visible as the privileges are consciously or unconsciously provided to the son. Dattani's play "Tara" is a poignant play about a boy and a girl who is joined together at the haunch and has to be separated surgically, an operation which will mean the death of the one of the two. Here the injustice perpetrated by the victim's own mother whose preference is to the male child makes the play more powerful suggesting that it is woman who continue the chain of injustice.

Dattani's play "Tara" deals with the cultural constructions of gender that always gives preference to the male over the female. Tara and Chandan are conjoined twins whose physical separation is manipulated by their mother and grandfather to favour the boy over the girl. The twins had three legs between them. The tests showed that the girl provided a major part of the blood supply to the third leg. Chances were that it would survive on the girl, but the mother had a private meeting with the doctor and bribed him to agree to give both the legs to the boy. The doctor's wise decision could have given Tara a safe, secured and complete life, but his decision has made Tara crippled for life. His cruelty not only thwarts Tara's dreams but fills her life with dejection and depression. Her depression made her wish for death than unnecessarily spend money on herself.

The play "Tara" brings forth the bizarre reality of the woman playing second fiddle to man. Dattani is known widely for picking up scintillating social problems in which this is perennial and glaring. The preference for the beneficence of the male child while staking the life of the female child is pathetic and takes to culmination the feeling of rejection felt by women in our society. Discrimination against the girl child is handed boldly by Dattani in his play, "Tara". The play deals with the courage and strong will of a handicapped Siamese twin who could have survived but for her mother's unwise and preferential decision to give the extra leg to her twin brother Chandan; eventually Tara dies. The whole effort went in vain because the leg very soon became a lump of dead flesh on Chandan and has to be amputated. To think that it would have been part of Tara! The mother, however, becomes a psychological case. Her guilt eats her up from within and she does not live long. It is Chandan who lives with the shame of it all.

Chandan escapes to London, changes his name to Dan, and tries to repress the guilt by living in a strange land. Chandan remembers about his childhood days spent with his sister Tara. Dattani says, "Tara, a feisty girl who isn't given the opportunities given to her brother eventually wastes away and dies. Chandan escapes to London, changes his name to Dan, and attempts to repress the guilt he feels over his sister's death by living without a personal history." Through the poor soul (Chandan) had nothing to do with his sister's untimely death but he bears the brunt of cruelty of his grandfather and mother. He feels someway responsible for his sister's death and decides to atone for it. Tara and Chandan are two sides of the same self rather than two separate entities and that Dan, in trying to write the story of his own childhood, has to write Tara's story. Dan writes her story to rediscover the neglected half of himself, as a means of becoming whole. He says, "I have my memories, but now I want them to come back. To masticate my memories in my mind and spit out the result to the world in anger."

Chandan wants to turn his anguish into drama on his sister's childhood. Throughout the play we can feel in Tara that she bears some kind of grudge against the society. Chandan was more complacent with his handicapped life while Tara craved every moment for a complete and normal life. The humiliation meted out to her by Rupa and her friends when she was forced to show her handicapped leg to them. Tara seems to have some kind of aversion with the outside world and her world consisted of only her parents and her brother whom she was very close to. Tara's attachment to her brother and the internal anguish is expressed in her conversation with her brother Chandan, when she says: "…Maybe we still are. Like we've always been. Inseparable. The way we started life. Two lives in one body, in one comfortable womb. Till we were forced out…and separated" (325).

The viciousness of the grandfather and his mother not only takes away the life of the girl but also ruins the life of the boy who was very much attached to his sister Tara. "Tara" gives us a glimpse into the modern society which claims to be liberal and advanced in its thought and action, but in reality, it seems to be very conservative. It is revealed in the play that a decision taken by the mother left Tara crippled for life. Having proved wrong in her decision, Bharati tries to shed her burden of guilt by showing maternal love and concern for her daughter and to assert her moral superiority over her husband Patel. Bharati uses her love for Tara as a weapon against Patel as well as an expression of her desire to compensate to Tara. Tara is also taken up by her mother's concern and love because she was unaware of the fact that her loving mother was responsible in destroying her dreams. Bharati imposes her sense of regret on Rupa too when she bribes her to be her daughter's companion. The conversation between Bharati and Rupa shows that Bharati is ready to do anything for the sake of Tara's happiness: "You can watch whatever you want! Just be my Tara's friend" (341).

Bharati's sense of regret is so deep that she agrees to donate her kidney to her daughter so that she may survive for a few more years. In a conversation with her son, she

tells him: "I plan to give her happiness, I mean to give her all the love and affection which I can give. It's what she… deserves. Love can make up for a lot" (349). Mrs. Patel's internal turmoil is so strong that it often comes out in her relationship with her husband where she is perpetually complaining about something or the other. The affluence of Mrs. Patel's father has always been a bone of contention between Mr. and Mrs. Patel. Bharati's father, a powerful and rich politician, determined about the operation in which the leg was to be given to Chandan instead of Tara. Bharati's father showed his indulgence for male grandchild by leaving his property after his demise to Chandan and not a single penny to Tara. He has been a consistent upholder of values pertaining to males. Patel's attitude has also been negative because he remained a mute observer of the whole affair. He continuously favours Chandan to give him higher education abroad. Tara is discouraged openly, notwithstanding her feelings in the matter, even though she is more intelligent, sharp and witty. It is only when Chandan refuses to go to college without her, Patel thinks of sending Tara too. But Tara refuses to fill the forms for college.

Tara being a girl has been taken for granted by Patel and all his expectations and dreams rested on Chandan whereas Chandan has been shown a boy of a different mentality. When he finally comes to know about the injustice done towards Tara by their parents and grandfather, he is filled with self-guilt and takes up the burden solely on his own shoulders. His sense of trauma and anguish is so intense that at the end of the play, Chandan apologizes to Tara in the most moving of all the lines: "Forgive me, Tara. Forgive me, for making it my tragedy" (380).

Tara was enthusiastic and full of gest and spark of life. She had high aspirations which she could not accomplish because of her handicapped state. If she had been given moral support by her parents, she might have shone like a 'star' as her name justifies. She could have been a source of cheerfulness and happiness of the family but her potentiality was sacrificed on the altar of gender. Rupa's joke about how the Gujarati is used to drown their infant daughters in the milk comes out to be true in the end. Tara is sacrificed because she was a girl and had no right to have a better life than her brother. Tara (star) does not twinkleon the Indian sky because she is not allowed to shine. Tara is killed by the socio-cultural system, which controls the minds and actions of the people. Like men, women also need space to breathe freely and flourish. Mahesh Dattani has tried to show this by bringing in Dr. Thakkar as a social element in the play. He belied his godly profession and led himself to be bribed by Bharati's father.

Conclusion: The play presents a mirror to the Indian society to see its true face. The tragic events depicted in the play are the tragic actions belonging to everyday life. The play also enlightens that no matter how much a girl outshines a boy, she will remain in the background and can never be given high pedestal. The idea of a complete girl child and an incomplete male-child is so shocking that sacrifice of the girl-child is acceptable than a handicapped male-child. And it is very pathetic to read that Bharati, being an educated mother, showed such discrimination towards the female-child. If she had not shown indulgence for the male-child and had done justice with her female childthen both the children would have happily flourished and established themselves in the world. The whole set-up of the play presents Dattani's world where he picked up various characters from the society and displays the fiery issues of today. In the play "Tara", Dattani raises only the questions related to gender and social stratification, and hierarchy and sexuality and also presents the prevalent gender biases in the society. But Dattani does not provide any solution to these problems: he only removes the veil and exposes it in its most bitter form in his famous play "Tara".

References:-

1. Acharya, Shri Nitin B. "Mahesh Dattani's Tara- A Feminist Study,"*Asian Journal of Multidimensional Research*, Volume-1, Issue- 3, August 2012, ISSN: 2278-4853, pp 87-93.
2. Bhatnagar, Manmohan K., ed. *Feminist English Literature*. Atlantic Publishers and Distributors, 1999.
3. Dattani, Mahesh. *Collected Plays*. Penguin, 2000.
4. Halder, Santwana. MaheshDattani's *Tara: A Critical Study.* Prestige International, 2009.
5. Iyengar, K.R.S. *Indian Writing in English*.Sterling, 1985.
6. Velmani, Dr. (Mrs.) N. "Drama in Indian Writing in English: Tradition and Modernity", *Language in India*. Volume-13 Issue- 6, June 2013, ISSN: 1930-2940.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

शासकीय गोदामों में भण्डारण और खराबे का आर्थिक विश्लेषण (उज्जैन संभाग के संदर्भ में एक अध्ययन)

डॉ. मनु गौतम* लवकुश पाटीदार**

* एसोसिएट प्रोफेसर (अर्थशास्त्र) म. प्र. सामजिक शोध संस्थान, भरतपुरी, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान, भगतसिंह शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा, जिला रतलाम (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध पत्र गेहूँ और चावल के शासकीय गोदामों के भण्डारण के विशेष संदर्भ में किया गया है। मध्यप्रदेश और भारत के लिए महत्व रखता है गेहूँ उत्पादन में मध्यप्रदेश का पहला स्थान है। प्रदेश के 35.49 लाख हेक्टेयर भूमि पर गेहूँ की खेती की जाती है। मध्य प्रदेश में गेहूँ अक्टूबर–नवम्बर में बोया जाता है तथा मार्च–अप्रैल में तैयार हो जाने पर फसल काट ली जाती है। गेहूँ की खेती मध्य प्रदेश के पश्चिमी भाग में होती है। प्रदेश के मैदानी क्षेत्रों में ताप्ती और नर्मदा, तवा, गंजाल, हिरण आदि नदियों की घाटियों और मालवा के पठार की काली मिट्टी के क्षेत्रों में सिंचाई के द्वारा गेहूँ पैदा किया जाता है। प्रदेश के होशंगाबाद, सीहोर, विदिशा, जबलपुर, गुना, सागर, ग्वालियर, निमाड़, उज्जैन, इंदौर, रतलाम, देवास, मंदसौर, झाबुआ, रीवा और सतना जिलों में गेहूँ का उत्पादन मुख्य रूप से होता है। इसी प्रकार मध्य प्रदेश के 41 जिलों में चावल की खेती होती है। जिनमें से 2 जिले मध्यम उत्पादकता समूह के अंतर्गत हैं।

अध्ययन के उद्देश्य:

1. शासकीय गोदामों में 2018 से 2024 तक गेहूं के भण्डारण, किराया शुल्क एवं खराबे का अध्ययन करना।
2. शासकीय गोदामों में 2018 से 2024 तक चावल के भण्डारण, किराया शुल्क एवं खराबे का अध्ययन करना।

निदर्शन तथा तथ्य संकलन– प्राथमिक तथ्य संकलन में उज्जैन संभाग के सात जिलो के शासकीय भण्डारगृहों को सम्मिलित किया गया है। प्रत्येक जिले से दो तहसील से दो–दो शासकीय भण्डारगृहों का चयन किया किया गया है जिसके अन्तर्गत कुल गोदाम की संख्या 28 हैं। उक्त गोदामों का व्यक्तिश: अवलोकन और फाईलों के माध्यम से प्राथमिक तथ्यों एवं जानकारी का संकलन किया गया है।

उज्जैन जिला – उज्जैन जिले के चयनित चार गोदामों में 2018 से 2024 तक पाँच वर्ष में खाद्य सुरक्षा हेतु 1843.97 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 40.56 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 446.7 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 12.95 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। कृषक समूहों, व्यापारियों तथा फर्मो हेतु 946.96 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 20.83 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 220.1 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 6.39 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। सहकारी समितियों हेतु 1815.31 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 39.93 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 447.6 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 12.99 मिट्रिक टन का खराबा हुआ।

मंदसौर जिला – मंदसौर जिले के चयनित चार गोदामों में 2018 से 2024 तक पाँच वर्ष में खाद्य सुरक्षा हेतु 3663.09 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 80.58 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 887.3 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 25.73 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। कृषक समूहों, व्यापारियों तथा फर्मो हेतु 1881.15 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 41.39 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 437.2 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 12.67 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। सहकारी समितियों हेतु 3606.15 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 79.33 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 889.1 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 25.78 मिट्रिक टन का खराबा हुआ।

नीमच जिला – नीमच जिले के चयनित चार गोदामों में 2018 से 2024 तक पाँच वर्ष में खाद्य सुरक्षा हेतु 9250.79 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 203.52 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 2241 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 64.99 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। कृषक समूहों, व्यापारियों तथा फर्मो हेतु 4750.65 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 104.51 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 1104 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 32.02 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। सहकारी समितियों हेतु 9106.98 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 200.35 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 2245 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 65.12 मिट्रिक टन का खराबा हुआ।

रतलाम जिला – रतलाम जिले के चयनित चार गोदामों में 2018 से 2024 तक पाँच वर्ष में खाद्य सुरक्षा हेतु 9979.87 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 219.56 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 2417 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 70.1 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। कृषक समूहों, व्यापारियों तथा फर्मो हेतु 5125.07 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 112.75 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 1191 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 34.54 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। सहकारी समितियों हेतु 9824.71 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 216.15 मिट्रिक टन का खराबा हुआ

और 2422 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 70.25 मिट्रिक टन का खराबा हुआ।

शाजापुर जिला – शाजापुर जिले के चयनित चार गोदामों में 2018 से 2024 तक पाँच वर्ष में खाद्य सुरक्षा हेतु 2291.11 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 50.41 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 555 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 16.9 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। कृषक समूहों, व्यापारियों तथा फर्मों हेतु 1176.58 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 25.89 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 273.5 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 7.93 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। सहकारी समितियों हेतु 2255.48 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 49.62 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 556.1 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 16.13 मिट्रिक टन का खराबा हुआ।

आगर मालवा जिला – आगर मालवा जिले के चयनित चार गोदामों में 2018 से 2024 तक पाँच वर्ष में खाद्य सुरक्षा हेतु 3573.26 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 78.61 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 865.5 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 25.1 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। कृषक समूहों, व्यापारियों तथा फर्मों हेतु 1835.02 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 40.37 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 426.5 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 12.37 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। सहकारी समितियों हेतु 3517.72 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 77.39 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 867.3 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 25.15 मिट्रिक टन का खराबा हुआ।

देवास जिला – देवास जिले के चयनित चार गोदामों में 2018 से 2024 तक पाँच वर्ष में खाद्य सुरक्षा हेतु 3623.18 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 79.71 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 877.6 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 25.46 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। कृषक समूहों, व्यापारियों तथा फर्मों हेतु 1860.65 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 40.93 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 432.5 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 12.55 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। सहकारी समितियों हेतु 3566.86 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 78.47 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 879.5 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 25.5 मिट्रिक टन का खराबा हुआ।

उज्जैन संभाग – उज्जैन संभाग के चयनित 28 शासकीय गोदामों में 2018 से 2024 तक पाँच वर्ष में खाद्य सुरक्षा हेतु 34225.27 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 752.95 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 8290.1 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 170.32 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। कृषक समूहों, व्यापारियों तथा फर्मों हेतु 17576.08 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 386.67 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 4084.8 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 83.93 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। सहकारी समितियों हेतु 30314.71 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 666.91 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 7473.63 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 146.52 मिट्रिक टन का खराबा हुआ।

निष्कर्ष – उज्जैन जिले में खाद्य सुरक्षा हेतु 1843.97 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 40.56 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और मंदसौर जिले में 3663.09 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 80.58 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 887.3 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 25.73 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। नीमच जिले में 9250.79 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 203.52 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 2241 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 64.99 मिट्रिक टन का खराबा हुआ रतलाम जिले में 9979.87 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 219.56 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 2417 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 70.1 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। शाजापुर जिले में 2291.11 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 50.41 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 555 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 16.9 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। आगर मालवा जिले में 3573.26 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 78.61 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 865.5 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 25.1 मिट्रिक टन का खराबा हुआ। देवास जिले में 3623.18 मिट्रिक टन गेहूँ संरक्षित किया गया था जिसमें से 79.71 मिट्रिक टन का खराबा हुआ और 877.6 मिट्रिक टन चावल संरक्षित किया गया था जिसमें से 25.46 मिट्रिक टन का खराबा हुआ।

सुझाव – यह सर्वविदित है कि कुल खाद्यान्न उत्पादन में सुधार की प्रक्रिया धीमी और महंगी है। इसलिए, प्रभावी खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के लिए पहला और सबसे महत्वपूर्ण कदम, मानव उपभोग के लिए उगाए और काटे गए अनाज को प्रभावी कीट प्रबंधन और वैज्ञानिक भंडारण द्वारा संरक्षित और संरक्षित करना है, और स्थानीय प्रसंस्करण विधियों में सुधार करके उपज के अंतर्निहित प्राकृतिक पोषण मूल्य को बनाए रखना है। अनाज भंडार में सुधार करके वर्तमान 10 प्रतिशत के नुकसान को कम किया जाए, तो देश हर साल तीन साल से अधिक उत्पादन इनपुट बचा सकता है। अनाज भंडारण हानि को कम करने की सभी रणनीतियों का आधार पर्यावरणीय कारकों – जैविक और भौतिक (तापमान और नमी) – का हेरफेर है, जो कीटों का सफाया कर देते हैं या ऐसे वातावरण को बढ़ावा देते हैं जो उनके अस्तित्व और गुणन के लिए प्रतिकूल है। नमी की मात्रा को दुनिया भर में अनाज हानि का सबसे बड़ा कारक माना जा सकता है। इस बात पर और ज़ोर दिया जाना चाहिए, जहाँ राष्ट्रीय अनाज भंडारण एजेंसियों को बहुत अधिक नमी वाला अनाज बड़ी मात्रा में प्राप्त होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वार्षिक प्रतिवेदन(2024)प्रौद्योगिकी सूचना, पूर्वानुमान एवं मूल्यांकन परिषद (टाइफैक),नई दिल्ली।
2. मध्य प्रदेश वेयरहाउसिंग एवं लॉजिस्टिक्स कॉर्पोरेशन (2024) 'प्रगति प्रतिवेदन,' उज्जैन संभाग, मध्य प्रदेश वेयरहाउसिंग एवं लॉजिस्टिक्स कॉर्पोरेशन, मध्य प्रदेश शासन, उज्जैन, पृष्ठ 23

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

प्रबंधकीय शिक्षा का रोजगार के अवसरों में योगदान

डॉ. अधिकेश राय* श्रीमती अन्नपूर्णिमा कोष्टा**

* शोध निर्देशक एवं विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) स्वामी विवेकानंद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) ठाकुर निरंजन सिंह शासकीय महाविद्यालय, गोटेगांव, जिला नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – व्यक्तिपरक दृष्टिकोण से शिक्षा व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक व नैतिक शक्तियों का विकास करती है और उसे स्वस्थ्य एवं सुखी जीवन व्यतीत करने की कुंजी प्रदान करती है। पूर्व में उच्च शिक्षा प्राप्ति की अभिलाषा समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त करने तक ही सीमित थी। किन्तु वर्तमान युग में उच्च प्रबंधकीय व व्यावसायिक शिक्षा प्राप्ति की अभिलाषा समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त करने की इच्छा से जुड़ी हुई है। एक व्यक्ति अपने लिए उच्च शिक्षा की उपयुक्त शाखा व विषयों का चुनाव केवल अपनी अभिरूचि व योग्यता के आधार पर नहीं करता है बल्कि उसको रोजगार प्रदान करने वाली क्षमता व स्वरोजगार की संभावना पर भी विचार करता है। शिक्षा के संबंध में यही विचार प्रबंधकीय शिक्षा की अवधारणा को प्रतिपादित करता है। भारतीय समाज विविधतापूर्ण समाज है। यह सांस्कृतिक, तकनीकी, आर्थिक, राजनीतिक रूप से बदल रहा है और शिक्षा इन परिवर्तनों से प्रभावित है। चूंकि शिक्षा से मनुष्य को ज्ञान, दृष्टिकोण, मूल्य और कौशल प्रदान करने की अपेक्षा की जाती है। इसलिए शिक्षा को और अधिक गतिशील एवं गुणवत्तापूर्ण बनाने की आवश्यकता है ताकि राष्ट्रीय लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

शब्द कुंजी – प्रबंधकीय व व्यावसायिक शिक्षा, रोजगार, स्वरोजगार, आर्थिक विकास।

प्रस्तावना – भारत में वैदिक सभ्यताकाल से गुरूकुल पद्धति के रूप में विकसित शिक्षा प्रणाली में जहां एक ओर जीवन के लिए आवश्यक शिक्षा प्रदान की जाती थी, वहीं दूसरी ओर योग्यता आधारित रोजगारोन्मुखी आधारभूत शिक्षा अर्थात् व्यावसायिक शिक्षा भी दी जाती थी। यह शिक्षा प्रणाली व्यक्ति को इस योग्य बनाती थी कि वह स्वयं के अलावा परिवार, समाज एवं देश की समृद्धि में पर्याप्त योगदान कर सकता था। स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात् निरक्षर, निर्धन और अविकसित भारत के विकास हेतु महात्मा गांधी जैसे अर्थवेत्ताओं एवं शिक्षाविदों ने स्वावलंबन आधारित व्यावसायिक शिक्षा के विकास पर बल दिया परन्तु डिग्री आधारित सैद्धांतिक शिक्षा का विकास ही हावी रहा। जिससे स्वरोजगार विकास एक तरह से अवरूद्ध हुआ और रोजगार के अवसर कम उत्पन्न हुए। फलस्वरूप डिग्री धारकों / शिक्षित बेरोजगारों की संख्या में बेतहाशा वृद्धि हुई। वर्ष 1987-88 से सम्पूर्ण देश में व्यावसायिक शिक्षा का क्रियान्वयन हुआ जिसका उद्देश्य 'राष्ट्रीय उत्पादकता में वृद्धि एवं व्यक्तिगत समृद्धि हेतु शिक्षा को रोजगारोन्मुखी बनाना तथा कुशल मानव शक्ति की मांग एवं पूर्ति के बीच व्याप्त विषमता को कम करना है।'

मध्यप्रदेश में प्रबंधकीय शिक्षा का स्वरूप – वर्तमान समय के बदलते परिवेश में शिक्षा का स्वरूप एवं उसके दृष्टिकोण में परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है। आज की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य ज्ञान अर्जन करना या समझ विकसित करना नहीं है, वरन् शिक्षा नौकरी प्राप्त करने का एक साधन मात्र बनकर रह गई है। प्रत्येक विद्यार्थी यह मानकर स्कूल या कॉलेज में प्रवेश लेता है कि बी.ए. या एम.ए. उपाधि प्राप्त करने के बाद वह किसी शासकीय सेवा में जाने योग्य हो जायेगा। आज का विद्यार्थी नैतिक और व्यवहारिक शिक्षा के स्थान पर केवल उपाधि प्राप्त करना चाहता है। इसके लिए वह एक सीमित पाठ्यक्रम में बंधकर उपाधि प्राप्त करता है एवं शिक्षा के मूल उद्देश्य से भटकता जा रहा है। यदि वर्तमान संदर्भ में देखा जाये तो शिक्षा का स्वरूप पहले से अधिक व्यापक रूप में सामने आ रहा है।

साहित्य शिक्षा के साथ यदि कला कौशल का भी सम्मिश्रण रखा जाये और स्नातकों को किसी शिल्प का ज्ञान करा दिया जाये तो आर्थिक समस्याओं का सहज ही समाधान हो सकता है। आज के भौतिकवादी युग में प्रत्येक परिस्थिति से लड़ने के लिए हमारे नवयुवक तैयार हैं। इसके लिए आवश्यकता है उनमें क्षमता उत्पन्न करनी की। हमारा लक्ष्य तभी पूरा हो सकेगा जब हमारी शिक्षा इसके अनुकूल होगी अर्थात् शिक्षा की महिमामयी शक्ति के माध्यम से ही हम अपने उद्देश्य की पूर्ति करेंगे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हमें शिक्षा के व्यावसायिक आदर्श को स्वीकार करना होगा। प्रबंधकीय व व्यावसायिक शिक्षा में ही ऐसी क्षमता है जो हमारे किशारों और युवाओं में वह शक्ति उत्पन्न कर सकेगी जिसके आधार पर वे भौतिकवादी सभ्यता के अनुकूल अपने को सबल और सक्षम बना सकेंगे तथा प्रतिद्वंदिता के लिए तैयार हो सकेंगे।

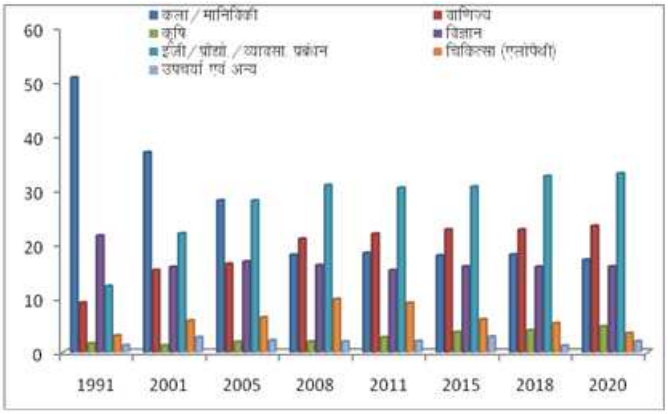
शनै:शनै सामाजिक परिवर्तन और विज्ञान में प्रगति के कारण व्यक्तियों की मानसिकता में परिवर्तन आया है और परम्परागत शिक्षा का स्थान प्रबंधकीय व व्यवसायिक शिक्षा ने ले लिया है। इसमें व्यक्तिगत कौशल के आधार पर विद्यार्थियों को शिक्षा देने की व्यवस्था की गई है, जिससे विद्यार्थी को अपने कौशल के आधार पर व्यवसाय की सुविधा उपलब्ध होगी। तकनीकी पाठ्यक्रमों की अधिकता होगी। विभिन्न प्रकार के प्रबंधकीय व व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का विकास किया जा रहा है। इन पाठ्यक्रमों के माध्यम से ज्ञान के स्थान पर कौशल को विकसित करने का प्रयास किया जा रहा है। इसी प्रकार विज्ञान के क्षेत्र में बायोकेमिस्ट्री, लाईफ साइंस तथा

अधिक लंबे कोर्स के स्थान पर छोटे एवं डिप्लोमा कोर्स का विस्तार किया जा रहा है, जिससे कम समय में ही विद्यार्थी के न केवल ज्ञान का विकास हो बल्कि उसके कौशल का भी विकास सुनिश्चित किया जा सकेगा।

शिक्षा या उपाधि, लक्ष्य नहीं है, वरन् एक साधन मात्र है जिसके द्वारा विद्यार्थी अपने उद्देश्य की पूर्ति करता है। इसी प्रकार उपाधि एवं व्यवसाय के मध्य भी गहन अंर्तसंबंध होता है। यह संबंध प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष, परस्पर तथा विलोम भी हो सकता है। वैदिक काल से शिक्षा की आरम्भिक स्थिति में केवल तीन विषयों का ही अध्ययन किया जाता था। ये थे गणित, भाषा और दर्शन। समय के साथ-साथ विभिन्न विषयों, उनमें विशेषज्ञता की मांग बढ़ते जाने के कारण विभिन्न प्रकार के विषय तथा संकाय बनते गए और उनमें लगातार वृद्धि होती रही। शिक्षा के प्रत्येक संकाय/क्षेत्र में उपाधि प्राप्त युवाओं की स्थिति को निम्न तालिका में प्रस्तुत किया गया है :-

तालिका 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

दण्डारेख



तालिका 1 एवं दण्डारेख के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1991 में जहां कला/मानिविकी क्षेत्र में उपाधि धारियों की संख्या 50.83 प्रतिशत थी वह क्रमबद्ध रूप से घटती हुई वर्ष 2020 में 17.31 प्रतिशत रह गई। जिसका मुख्य कारण कला/ मानिविकी क्षेत्र में रोजगार के अवसरों का कम होना प्रतीत होता है। इसी प्रकार वाणिज्य के क्षेत्र में जहां वर्ष 1991 में 9.21 प्रतिशत डिग्री धारी थे, जो वर्ष 2020 आते-आते 23.42 प्रतिशत हो गये अर्थात् वाणिज्य के क्षेत्र में 14.21 प्रतिशत की वृद्धि परिलक्षित हो रही है। साथ ही कृषि के क्षेत्र में उपाधि धारियों की संख्या जहां वर्ष 1991 में 1.67 प्रतिशत थी वहीं वर्ष 2020 में बढ़कर 4.82 प्रतिशत हो गयी है। इसका आशय यह है कि कृषि क्षेत्र में नवीन तकनीकी के ज्ञान और कृषि क्षेत्र में अधिक लाभ अर्जित करने के उद्देश्य से कृषि के अध्ययन हेतु लोगों में जागरूकता उत्पन्न हुई। इंजीनियरिंग/सूचना प्रौद्योगिकी व व्यावसायिक प्रबंधन के क्षेत्र में वर्ष 1991 में 12.28 प्रतिशत डिग्री धारी उपलब्ध थे, जबकि वर्ष 2020 में इनकी संख्या में आशातीत वृद्धि होते हुए 33.11 प्रतिशत हो गयी। इससे स्पष्ट होता है कि आई.टी. क्षेत्र में रोजगार के पर्याप्त अवसरों ने लोगों को आकर्षित किया है। चिकित्सा के क्षेत्र में उपाधि धारियों की स्थिति का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि वर्ष 1991 से वर्ष 2020 तक उपाधि धारियों की संख्या में घट-बढ़ देखा गया है। उपचर्या एवं अन्य उपाधि धारियों की स्थिति में भी वर्ष 1990 के बाद कुछ सुधार हुआ है।

मध्यप्रदेश में प्रबंधकीय शिक्षा में आये परिवर्तनों का अध्ययन - वर्तमान उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्विकरण के दौर में जहाँ एक ओर गलाकाट प्रतिस्पर्धा है, वहीं दूसरी और जीवन एवं नैतिक मूल्यों की रक्षा करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। स्नातक एवं स्नातकोत्तर स्तर के विद्यार्थियों को वर्तमान प्रबंधकीय संस्थाओं के लिये उपयुक्त बनाने के साथ-साथ उनके आत्मिक विकास के लिये नैतिक मूल्यों का समावेश अत्यंत आवश्यक है। जिसके लिए भारत सरकार एवं राज्य सरकार संयुक्त रूप से प्रबंधकीय शिक्षा में समय-समय पर परिवर्तन करती आ रही है। भारत में नैतिक मूल्यों एवं सामाजिक मूल्यों का गौरवशाली इतिहास रहा है। हमारे यहाँ गुरूकुल शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत धर्म ग्रंथों एवं नैतिक मूल्यों पर परिचर्चा आयोजित की जाती थी, जो विद्यार्थियों के नैतिक स्तर को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। वर्तमान परिदृश्य में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों तथा अन्य उच्च शिक्षा संस्थाओं की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। जिसमें विदेशी विद्यार्थियों की संख्या भी बहुत अधिक मात्रा में है। उच्च रोजगार दिलाने के महत्वपूर्ण उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए जीवन मूल्यों का संरक्षण करना एक महत्वपूर्ण जिम्मेदारी उच्च शिक्षा क्षेत्र की है।

मानव विकास की जय-यात्रा में शिक्षा की भूमिका सर्वोपरि है। शिक्षा में प्रारंभ से ही विकासमूलक परिवर्तन हुए हैं और मनुष्य मात्र तक इसकी पहुँच हो सके इसके लिये इतिहास में प्रयोग भी होते ही रहे हैं। वर्तमान समय में आर्थिक और तकनीकी विकास के कारण होने वाले लाभों से समाज के प्रत्येक वर्ग को जोड़ने के लिये एक सुनियोजित और समन्वित प्रयास की जरूरत है।

उच्च शिक्षा का प्रायोजन व्यक्ति के जीवन में उच्च मूल्यों के विकास से जुड़ा है। इसके लिये अध्ययन-अध्यापन का प्रबंधन करने वाले सभी हितग्राहियों के समेकित प्रयास की जरूरत है। अकेले विद्यार्थी या प्राध्यापक अथवा अभिभावक के प्रयास पर्याप्त नहीं हैं। इसके लिये समुचित दिशा-दर्शन की आवश्यकता महसूस की जा रही है जिससे प्रेरित होकर एकांगी विकास की अवधारणा के विपरीत सामूहिक रूप से नैतिक विकास की नींव डाली जा सके। तेजी से बदल रही दुनिया के साथ ही शैक्षणिक जगत में भी परिवर्तन की लहर है। नयी आवश्यकताओं के परिप्रेक्ष्य में नये संस्थान खोले गये हैं जिनमें और नित नये पाठ्यक्रमों की माँग भी बढ़ रही है। आवश्यकता इस बात की भी है कि वैश्विक चुनौतियों से निपटने के लिये संधारणीय विकास के साथ-साथ हमारी चेतना में गुणात्मक विकास भी संभव हो सके।

मध्यप्रदेश में प्रबंधकीय शिक्षा में परिवर्तन प्रमुख रूप से वर्ष 1990 के पश्चात् देखा गया है। इसके पूर्व प्रदेश में मात्र 4-5 विश्वविद्यालय संचालित थे जहां बी.बी.ए. एवं एम.बी.ए. पाठ्यक्रय संचालित किए जाते थे। जिनमें जीवाजी विश्वविद्यालय, इंदौर, देवी अहिल्याबाई विश्वविद्यालय ग्वालियर, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर एवं डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर तथा बरकतुल्ला विश्वविद्यालय भोपाल प्रमुख थे। किन्तु वर्ष 1990 के पश्चात् प्रबंधकीय शिक्षा के महत्व को स्वीकार करते हुए तथा विभिन्न क्षेत्रों में प्रबंधकों की आवश्यकता को दृष्टिगत रखते हुए वर्ष 2022 तक प्रबंधकीय शिक्षा से संबंधित 50 शासकीय व निजी क्षेत्र की महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम प्रारम्भ किए गए। प्रबंधकीय शिक्षा में आये परिवर्तनों को योजनाकाल के दौरान उच्च शिक्षा के विकास के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है।

राज्यवार स्थिति के अवलोकन उपरांत मध्यप्रदेश के जिलों में संचालित प्रबंधकीय शिक्षा से जुड़े संस्थानों का अध्ययन निम्न तालिका में किया

गया है।

तालिका क्रं. 2: मध्यप्रदेश में प्रबंधकीय शिक्षा संस्थानों की स्थिति (जिलावार)

क्रं.	जिले का नाम	प्रबंधकीय शिक्षा संस्थानों की संख्या
1.	भोपाल	18
2.	इंदौर	10
3.	ग्वालियर	10
4.	जबलपुर	06
5.	उज्जैन	06
6.	छिंदवाड़ा	04
7.	रीवा	04
8.	सागर	03
9.	सतना	03
10.	मंदसौर	02
11.	नीमच	02
12.	सिहोर	02
13	बालाघाट	01
14.	बड़वानी	01
15.	भिण्ड	01
16.	छतरपुर	01
17.	डिंडोरी	01
18.	हरदा	01
19.	कटनी	01
20.	नरसिंहपुर	01
21.	रतलाम	01
22.	शहडोल	02
23.	शाजापुर	01
24.	श्योपुर	01
25.	होशंगाबाद	03
26.	बीना	02
27.	बैतूल	02
	योग	33

स्रोत:-https://bschool.careers360.com/colleges.

उपर्युक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि वर्तमान मध्यप्रदेश के 55 जिलों में से 27 जिलों में प्रबंधकीय शिक्षा के अंतर्गत बी.बी.ए. व एम.बी.ए. पाठ्यक्रम संचालित हैं। जिनमें से सबसे अधिक संख्या भोपाल में 18, इंदौर में 13, ग्वालियर में 10, जबलपुर में 06, छिंदवाड़ा में 03, रीवा में 04, सागर में 03, सतना में 03, मंदसौर, नीमच, सिहोर, शहडोल, बीना, बैतूल में 02-02 तथा अन्य जिलों में 01-01 संस्था संचालित है। इस प्रकार देखा जाये तो अभी भी 28 ऐसे जिले हैं जहां प्रबंधकीय शिक्षा संस्थान संचालित नहीं है अथवा विद्यार्थियों की पर्याप्त संख्या न होने के कारण बंद हो चुके हैं।

प्रदेश के 90 प्रबंधकीय संस्थानों में प्रवेश की प्रक्रिया में पूर्व की अपेक्षा वर्तमान में काफी परिवर्तन हुआ है। पूर्व में प्रबंधकीय शिक्षा में प्रवेश हेतु कोई पात्रता परीक्षा आयोजित नहीं की जाती थी, केवल स्नातक के अंकों के आधार पर गुणानुक्रम सूची तैयार कर विद्यार्थियों को प्रवेश दे दिया जाता था, किन्तु वर्तमान में प्रबंधन के क्षेत्र में गुणवत्ता लाने हेतु स्नातकोत्तर (एम.बी.ए.) कक्षाओं में प्रवेश प्राप्त करने के लिए नेशनल टेस्ट एजेंसी द्वारा Common Management Admission Test, (CMAT), Management Aptitude Test (MAT), Common Admission Test (CAT) आदि प्रारम्भिक परीक्षाएं आयोजित की जाती हैं। इन प्रारम्भिक परीक्षाओं में उत्तीर्ण विद्यार्थियों के मेरिट अंकों के आधार पर संस्थानों में प्रवेश प्रक्रिया पूर्ण की जाती है।

2011 तक, भारत में प्रबंधन कार्यक्रमों के लिए कई प्रवेश परीक्षाएँ थीं। इनमें CAT, JMET XAT, Gitam, SAT, NMAT, SNAP, MAT, राज्य-विशिष्ट परीक्षाएँ, चइअ संस्थानों के प्रबंधन संघों द्वारा आयोजित परीक्षाएँ और निजी कॉलेजों द्वारा आयोजित परीक्षाएँ शामिल थीं। AICTE (All India Council for Technichal Education) ने कई परीक्षाओं में भाग लेने के लिए छात्रों के बोझ (शारीरिक, मानसिक और वित्तीय तनाव) को कम करने के लिए CMAT की शुरुआत की।

वर्ष 2015 तक सीमैट का आयोजन वर्ष में दो बार किया जाता था, लेकिन एआईसीटीई ने यह परीक्षा वर्ष में एक बार जनवरी के तीसरे रविवार को आयोजित करने का निर्णय लिया गया है।

इन प्रारम्भिक परीक्षाओं में देश, प्रदेश के नहीं अपितु विदेशों में रहने वाले छात्र/छात्रायें भी सहभागिता करते हैं। मध्यप्रदेश के लाखों की संख्या में विद्यार्थी इन परीक्षाओं में सम्मिलित होते हैं जबकि मध्यप्रदेश में प्रबंधकीय शिक्षा संस्थाओं में उपलब्ध सीट संख्या लगभग 22000 है। वर्तमान में प्रबंधकीय शिक्षा की मांग को दृष्टिगत रखते हुए आवश्यकता है कि इन संस्थानों में प्रवेश हेतु सीट संख्या में वृद्धि की जाये ताकि विद्यार्थियों को प्रबंधकीय शिक्षा स्थानीय स्तर पर प्राप्त हो सके।

निष्कर्ष - निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि उपाधि तथा व्यवसाय के मध्य संबंध मांग तथा पूर्ति के सिद्धांत पर आधारित रहा है। पूर्ति की प्रक्रिया में लगने वाला समय तथा मांग में असमय होने वाले परिवर्तन इन क्षेत्रों में बेरोजगारी के रूप में सामने आते हैं। उपाधि प्राप्त करने का प्राथमिक दृष्टिकोण पूर्व में व्यवसाय या नौकरी प्राप्त करना ही रहा है। लगभग 25 वर्ष पूर्व तक यह स्थिति थी कि कोई भी उपाधिधारी व्यक्ति स्वत: ही रोजगार प्राप्त कर लेता था। परन्तु अब मात्र उपाधि धारक होने से वह नौकरी के योग्य नहीं बन जाता है। व्यक्ति में डिग्री के अतिरिक्त अन्य योग्यताएँ विकसित होने की आवश्यकता होती है। समय के साथ-साथ विभिन्न प्रकार के व्यवसायों की आवश्यकता अनुभव की गई तथा उनकी मांग की पूर्ति के लिए भी विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रम या उपाधियाँ प्रदान की जाने लगीं, जिन्हें प्राप्त कर व्यक्ति तुरंत नौकरी पाने के योगय हो जाता था। इसके अतिरिक्त विभिन्न व्यवसायिक कुशलताओं से भरे पाठ्यक्रमों के द्वारा व्यक्तियों की पूर्ति ने भी अपने लिए मांग स्वयं उत्पन्न की है। परन्तु भारत जैसे विकासशील देश में जहां रोजगार के अवसर कम तथा जनसंख्या की अधिकता के कारण इनके मध्य संबंध सीधा न दिखाई देकर विकृत रूप में सामने आया है।

यद्यपि भारत एवं प्रदेश सरकार के संयुक्त प्रयासों से नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में शिक्षा के क्षेत्र में काफी आमूलचूल बदलाव परिलक्षित हो रहे हैं। विद्यार्थियों को इस नीति के तहत अपने पसंद के पाठ्यक्रमों का चयन कर अपनी दक्षता में वृद्धि करने का अवसर प्रदान किया जा रहा है। एक डिग्री के साथ अन्य डिप्लोमा कोर्स करने का भी प्रावधान रखा गया है। साथ ही स्थानीय परिवेश के आधार पर विभिन्न व्यावसायिक पाठ्यक्रम

(Vocational Course) को शामिल किया गया है जिससे विद्यार्थी स्थानीय आवश्यकताओं के आधार पर शिक्षा प्राप्त कर रोजगार के अवसर तलाश कर सके। उच्च शिक्षा विभाग ने वर्ष 2024 में आई.आई.टी. नई दिल्ली से ए.आई. एवं ए.आई. विथ फिनटेक जैसे महत्वपूर्ण व कौशलबर्द्धक सर्टिफिकेट कोर्सों को नि:शुल्क संचालित किया है। मध्यप्रदेश में उक्त कोर्सों को वर्तमान में केवल प्रत्येक जिले के प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस महाविद्यालयों (अग्रणी) एवं स्वशासी महाविद्यालयों में संचालित किया जा रहा है। उच्च शिक्षा विभाग की इस सराहनीय पहल से न केवल आर्थिक रूप से कमजोर विद्यार्थी इन पाठ्यक्रमों से शिक्षा प्राप्त करेंगे बल्कि आई.टी. क्षेत्र में अपने कौशल में वृद्धि कर आत्मनिर्भर बनेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. Nehru, Pt. Jawaharlal, "The Discovery of India", Pg. 351.
2. Pathak P.D., "Problem in Indian Education", Agrwal Publication, Agra, 2006.
3. तकवाले, प्रो. राम, भारत के उच्च शिक्षा में वैश्वीकरण की चुनौतियां एवं सम्भावना, गोल्डन लेक्चर सीरीज, यू.जी.सी., वर्ष 2015।
4. आचार्य रजनीश, शिक्षा में क्रांति, पृ. 13।
5. सिंह, डॉ. जे.डी., भारत में वर्तमान शिक्षा की स्थिति व चुनौतियां, इंटरनेशनल एजुकेशन जर्नल, ISSN- 2455-8729, चेतना प्रकाशन, 19 जुलाई 2017, पृ. 88।
6. मुखोपाध्याय, श्रीधरनाथ, भारतीय शिक्षा का इतिहास, पृ. 196-199।
7. श्रीवास्तव, शंकरशरण, शिक्षा और स्वतंत्रता, भारतीय शिक्षा शोध संस्थान, लखनऊ, 2007।
8. सेन, प्रो. अमर्त्य सेन, Poverty in Underdeveloped Economy, वर्ष 1998।
9. Thakur D. Vocational & Technical Education, Edited, Deep & Deep Publication. New Delhi, 1996.

तालिका 1: शिक्षा के प्रत्येक संकाय/क्षेत्र में उपाधिधारियों की स्थिति

(संख्या प्रतिशत में)

क्रं.	विषय/क्षेत्र	उपाधिधारियों की वर्षवार स्थिति							
		1991	2001	2005	2008	2011	2015	2018	2020
1.	कला/मानिविकी	50.83	37.01	28.11	18.05	18.39	17.93	18.1	17.13
2.	वाणिज्य	9.21	15.21	16.37	21.01	21.95	22.74	22.71	23.42
3.	कृषि	1.67	1.27	1.94	2.00	2.78	3.78	4.1	4.82
4.	विज्ञान	21.6	15.8	16.78	16.14	15.19	15.88	15.82	15.89
5.	इंजी/प्रौद्यो./व्यावसा. प्रबंधन	12.28	22.01	28.09	30.95	30.43	30.64	32.61	33.11
6.	चिकित्सा (एलोपैथी)	3.12	5.9	6.46	9.85	9.16	6.11	5.41	3.56
7.	उपचर्या एवं अन्य	1.29	2.80	2.25	2.00	2.10	2.92	1.25	2.07

स्रोत :- आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय, वार्षिक प्रतिवेदन वर्ष 2022।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

संचार माध्यमों में हिंदी की प्रगति : वैश्विक परिप्रेक्ष्य में एक अध्ययन

डॉ. आराधना सिंह*

* एसोसिएट प्रोफेसर (हिंदी) मंगलायतन विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – किसी भी राष्ट्र की अस्मिता सांस्कृतिक परिवेश धार्मिक प्रतिमानों, मानव के ज्ञान- विज्ञान के साधन, चिंतन- मनन और राजनीतिक, घटनाओं परंपरा के जीवंत तत्वों,वैचारिक आंदोलनों, परिवर्तनकारी माध्यमों के नियामकक रूप तथा आधुनिकीकरण, नूतन आविष्कारों और युग-बोध के प्रमुख तत्व के रूप में भाषा का महत्व अप्रतिम होता है। जनसंचार माध्यम भाषाओ को जानने , समझने ,प्रस्तुतीकरण और संप्रेषण के सफल माध्यम हैं। इन सभी दृष्टियों से हिंदी विश्व की समृद्धतम। भाषाओं में से एक है। राहुल सांकृत्यायन का मानना था कि 'जहां तक 'रामचरितमानस' गया, वह हिंदी का क्षेत्र है। 'अल्कसेई। पैतरोंविच वराव्निकोव जैसी प्रतिभाओं ने रामचरितमानस को विश्व का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य घोषित किया है। इन विद्वान आचार्यों के कथनों को सत्य सिद्ध करती 'भारतीय साहित्य और संस्कृति का अनुरक्षण करती विश्व फलक पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अभूतपूर्व प्रस्फुटन और फैलाव के साथ हिंदी अनेक उन्नत रूपों में प्रवाहमान और विकास के पथ पर अग्रसित है।'

भाषा मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता है। विचारों, भावनाओं तथा जानकारी के आदान-प्रदान के लिए भाषा और संचार माध्यमों की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। भारत में प्राचीन काल से ही संचार के विविध साधन विद्यमान रहे हैं। वैदिक मंत्रों का श्रुति परंपरा द्वारा प्रचार, लोकगीत, नाट्य, संवाद, पत्र व्यवहार और वाचिक परंपराएँ भारतीय संचार व्यवस्था का अभिन्न हिस्सा रही हैं। आधुनिक युग में जब प्रिंट मीडिया, रेडियो, दूरदर्शन और अब डिजिटल मीडिया का प्रसार हुआ, तब हिंदी भाषा ने इन सभी संचार माध्यमों में सशक्त उपस्थिति दर्ज कराई।

आज हिंदी केवल भारत में ही नहीं, बल्कि वैश्विक मंच पर भी एक प्रभावशाली भाषा के रूप में उभर रही है। तकनीक और वैश्वीकरण के इस युग में हिंदी संचार माध्यमों के माध्यम से विश्व पटल पर अपनी पहचान मजबूत कर रही है। भारत में हिंदी भाषी जनसंख्या की बहुलता और हिंदी की सरलता व ग्राह्यता ने इसे संचार माध्यमों की प्रमुख भाषा बना दिया है। इस शोध आलेख में संचार माध्यमों में हिंदी की स्थिति, विकास यात्रा, चुनौतियाँ तथा संभावनाओं का अध्ययन किया गया है।

शब्द कुंजी – हिंदी, संचार माध्यम, वैश्वीकरण, डिजिटल मीडिया, प्रिंट मीडिया, रेडियो, दूरदर्शन, सोशल मीडिया, भाषा विकास, हिंदी पत्रकारिता, जनसंचार।

हिंदी और भारतीय संचार माध्यम : एक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य – भारतीय संचार परंपरा का इतिहास अत्यंत समृद्ध है। ऋग्वेद, उपनिषदों, रामायण और महाभारत जैसी कृतियों का मौखिक प्रचार ही प्राचीन काल का सबसे बड़ा संचार माध्यम था। लोक कथाएँ, लोकगीत, लोक नाट्य, पतंगों द्वारा सूचना भेजना, संदेशवाहक, घंटाघर, नगाड़े, मंदिर की घंटियाँ आदि जनसंचार के पुरा ब्रिटिश काल में प्रिंटिग प्रेस के आगमन ने आधुनिक संचार का मार्ग प्रशस्त किया। 1826 में पंडित जुगल किशोर द्वारा प्रकाशित 'उदंत मार्तड' हिंदी पत्रकारिता का प्रारंभिक प्रयास था। उसके बाद हिंदी समाचार पत्र, पत्रिकाएँ और पुस्तकों का प्रकाशन प्रारंभ हुआ।

संचार माध्यमों में हिंदी की स्थिति एवं विकास यात्रा

प्रिंट मीडिया में हिंदी – हिंदी समाचार पत्र और पत्रिकाएँ आज भी भारतीय समाज में जनमत निर्माण का प्रभावशाली माध्यम हैं। 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिंदुस्तान', 'कादंबिनी', 'नंदन', 'सरिता', 'मनोरमा' जैसी पत्रिकाओं ने हिंदी साहित्य और जनसंचार को समृद्ध किया।

'दैनिक भास्कर', 'राजस्थान पत्रिका', 'हिंदुस्तान', 'अमर उजाला', 'प्रभात खबर', 'नवभारत', 'पत्रिका' आदि हिंदी दैनिक अखबारों की प्रसार संख्या करोड़ों में है। हिंदी अखबार देश के हर कोने में न केवल सूचना का स्रोत हैं, बल्कि जनमत निर्माण का भी कार्य कर रहे हैं।

उदाहरण : 2019 में 'दैनिक भास्कर' की प्रतिदिन प्रसार संख्या लगभग 44 लाख रही, जो इसे भारत का सबसे बड़ा हिंदी अखबार बनाते।

रेडियो में हिंदी – हिंदी की विकास यात्रा में सभी संचार -माध्यम सहयोगी रहेह हैं। पहले आकाशवाणी ने जनसंचार और भाषा के संदर्भ में अपनी प्रभावी भूमिका का निर्वाह किया। गीत -संगीत, अनुवाद ,आंखों देखा हाल ,खेल, कामेंटरी आदि के माध्यमय से भाषा का प्रचार-प्रसार बढ़ा।

1936 में ऑल इंडिया रेडियो (आकाशवाणी) की स्थापना के बाद हिंदी समाचार और विविध कार्यक्रमों का प्रसारण आरंभ हुआ। रेडियो ने स्वतंत्रता आंदोलन के समय हिंदी को जन-जन तक पहुँचाया।

आज 'आकाशवाणी', 'रेडियो मिर्ची', 'रेडियो सिटी', 'रेड एफएम', 'बिग एफएम' जैसे एफएम चौनलों पर हिंदी के विभिन्न मनोरंजन, सूचना, लोकगीत, स्वास्थ्य, शिक्षा और राजनीति विषयक कार्यक्रम लोकप्रिय हैं।

टेलीविजन में हिंदी – 1959 में दिल्ली में टेलीविजन प्रसारण आरंभ हुआ। 1982 में रंगीन प्रसारण के साथ 'दूरदर्शन' का देशभर में हिंदी कार्यक्रमों का विस्तार हुआ। आज सैकड़ों हिंदी न्यूज चौनल, मनोरंजन चौनल और शैक्षणिक चौनल देश-विदेश में लोकप्रिय हैं।

प्रमुख हिंदी चौनल : आज तक, एबीपी न्यूज, जी न्यूज, इंडिया टीवी, एनडीटीवी इंडिया, दूरदर्शन, सोनी, स्टार प्लस, जी टीवी।

डिजिटल और सोशल मीडिया में हिंदी – मोबाइल क्रांति के साथ हिंदी ने डिजिटल मंचों पर अपनी सशक्त उपस्थिति बनाई है। हिंदी में ब्लॉग, वेब पोर्टल, यूट्यूब चौनल, फेसबुक पेज, इंस्टाग्राम रील, पॉडकास्ट आदि की संख्या तेजी से बढ़ रही है।

उदाहरण : 'द लल्लनटॉपय, 'प्रभात खबर', 'सत्य हिंदी', 'द क्विंट हिंदी' जैसे पोर्टल आज लाखों हिंदी पाठकों को जोड़ रहे हैं।

सरकार की 'डिजिटल इंडिया' नीति ने भी हिंदी में ई–गवर्नेंस, डिजिटल शिक्षा, किसान ऐप, स्वास्थ्य एप आदि की सुविधा बढ़ाई है।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में हिंदी की स्थिति – आज हिंदी केवल भारत तक सीमित नहीं है। मॉरीशस, फिजी, नेपाल, सूरीनाम, दक्षिण अफ्रीका, अमेरिका, कनाडा, यूके, यूएई, कतर आदि देशों में हिंदी भाषी समुदाय बसते हैं।

वैश्विक स्तर पर हिंदी कि स्थिति पर चर्चा करते हुए डॉ राजकुमार डफ्फू कहते हैं कि–'वहां हिंदी फिल्मों और फिल्मी गानों के लिए ललक दीवानगी की हद तक कायम है। इसलिए पी.आई.ओ.एस(People of Indian Origin) के लिए भाषा एक अनिवार्य आवश्यकता बन चुकी है, जिसके बिना वहां कोई जातीय संस्कार पूर्ण नहीं होता। वहां भारतीय मूल के लोग फिल्मी गानों को न केवलस् सुनते हैं बल्कि याद भी रखते हैं। यदि हिंदी अध्यापक अपनी कक्षा में, हिंदी शिक्षण के दौरान फिल्मी गानों का उपयोग करता है तो वह बहुत सफल होता है। वैश्वीकरण की वृद्धि से इस दिशा में और भी नजदीकियां आई है।

'भूमंडलीकरण और हिंदी' शीर्षक लेख में डॉ. हरिशंकर दुबे– उपभोक्ता सस्कृति और बाजारीकारण की प्रक्रिया में हिंदी की महत्व निरूपित करते हुए इस तरफ हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं कि–भारत का विशाल भू–भाग और जनसंख्या व्यापारिक व्यावसायिक हितों के सर्वथा अनुकूल है। भारतीय जनमानस का संग्राहक वृत्ति, नवीन उत्पादनों के प्रति आकर्षकप्रियता, सुरुचि संपन्नता ,जीवन में वैविध्यता आदि के कारणों से विश्व के उत्पादकों के लिए भारत एक बहुत बड़ी उपभोक्ता मंडी है यदि विदेशियों को पेप्सी कोला जैसे खाद्य–पदार्थों का वितरण बढ़ाना और अपनी माल की खपत करना है, जो इन्हें हमारी भाषा का प्रयोग प्रयोग करना और यहां की संस्कृति के मनोनुकूल विज्ञापन देने होंगे। क्योंकि हिंदी में भारत की आत्मा बसती है।अपने इस शोध आलेख में डॉ दुबे स्मरण करवाते हैं कि वे भरत के व्यापारिक संबंध विश्व के सुदूर देशों में प्राचीन कालसेहैं रहे हैं।अंग्रेज भी व्यापारी बनकर ही इस देश में आए थे। आज व्यवसाय और प्रतिस्पर्धा एक दूसरे की पूरक है। प्रतिस्पर्धा में ठहरने का साधन विज्ञापन है। विज्ञापन तभी सार्थक है जब वह भली–भांति समझ में आए। इसके लिए जरूरी है उस देश की भाषा में प्रयोग किया जाए डॉक्टर प्रभाकर माचवे भी इस बात से सहमत हैं।' जनसंचार:माध्यम औरभषा' लेख में वे स्वीकार करते हैं कि भारत में साक्षरता का प्रतिशत कम है। अंग्रेजी भाषा के या उससे सीधे अनुदित विज्ञापन और स्टेटस सिंबल जैसे–फ्रिज, टीवी, मिक्सी महंगी गाड़ियां, कारपेट आदि के अंग्रेजी से प्रभावित विज्ञापन भारतीय साधारण जन की मनोवृति के प्रतिकूल रहते हैं। अत: इन्हें रुचिकर बनाने और उद्योग के प्रचार की दृष्टि से इनका हिंदी भाषा में होना है। देश का आर्थिक पक्ष उसके सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक युग बोध से जुड़ा होता है। इस दृष्टि से भारत जैसा विशाल देश आर्थिक हितों की आपूर्ति के लिए कितना उपयोगी और हितकारी है यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है। आत: विदेशी उद्योगों सफलता के म मूल मंत्र और उत्पाद वस्तुओं की बिक्री की वृद्धि के लिए हिंदी भाषा एक सफल उपकरण है।

उदाहरण : 'बीबीसी हिंदी' और 'वॉयस ऑफ अमेरिका हिंदी' जैसे पोर्टल विदेशों में हिंदी भाषी दर्शकों तक सूचनाएँ पहुँचा रहे हैं।

हिंदी की चुनौतियाँ और संभावनाएँ:

चुनौतियाँ :

1. अंग्रेजी व अन्य विदेशी भाषाओं का प्रभाव।
2. तकनीकी शब्दावली में हिंदी का अभाव।
3. महानगरों में हिंदी के प्रति उपेक्षा।
4. हिंदी में शोध व साहित्य सृजन की गति धीमी।

संभावनाएँ :

1. डिजिटल माध्यमों का हिंदी अनुकूल होना।
2. यूजर फ्रेंडली हिंदी ऐप्स का विकास।
3. भारतीय जनसंख्या का हिंदी के प्रति स्वाभाविक आकर्षण।
4. हिंदी वेब साहित्य व ब्लॉगिंग की बढ़ती संख्या।
5. सरकारी प्रयासों से हिंदी के प्रयोग को प्रोत्साहन।

निष्कर्ष – हिंदी ने संचार माध्यमों में अपनी विजय यात्रा निरंतर जारी रखी है। प्राचीन काल से लेकर आज के डिजिटल युग तक हिंदी ने हर संचार साधन को अपना मंच बनाया है। हिंदी समाचार पत्र, रेडियो, दूरदर्शन, सिनेमा, इंटरनेट, सोशल मीडिया सभी में हिंदी ने अपनी उपस्थिति सशक्त की है।

आज हिंदी वैश्विक मंच पर भी अपनी पहचान स्थापित कर रही है। यद्यपि चुनौतियाँ विद्यमान हैं, किंतु संभावनाएँ उससे कहीं अधिक हैं। हिंदी की सरलता, सहजता और ग्राह्यता इसकी सबसे बड़ी ताकत है। यदि सरकारी और निजी प्रयासों से हिंदी को तकनीकी और वैश्विक भाषाई मानकों के अनुरूप विकसित किया जाए, तो भविष्य में हिंदी संचार की सबसे सशक्त भाषा बन सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शर्मा, रामनिवास – हिंदी पत्रकारिता का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, 2022
2. तिवारी, शंभूनाथ – भारतीय जनसंचार : सिद्धांत और व्यावहारिक पक्ष, ग्रंथलोक, 2021
3. मिश्रा, राजेश – डिजिटल मीडिया और हिंदी, वाणी प्रकाशन, 2023
4. यूनेस्को भाषा सर्वेक्षण रिपोर्ट, 2020
5. दैनिक भास्कर, अमर उजाला, हिंदुस्तान अखबारों के आधिकारिक प्रसार आँकड़े।
6. बीबीसी हिंदी, वॉयस ऑफ अमेरिका हिंदी, लल्लनटॉप वेब पोर्टल।
7. 'डिजिटल इंडिया' कार्यक्रम रिपोर्ट, भारत सरकार, 2022

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

उच्च शिक्षा का अनुसूचित जाति पर प्रभाव: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (मोरना ब्लॉक के संदर्भ में)

डॉ. रत्ना त्रिवेदी* आजाद सिंह**

* एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) मुन्नालाल एंड जय नारायण खेमका गर्ल्स डिग्री कॉलेज, सहारनपुर (उ.प्र.) भारत
** शोध छात्र (समाजशास्त्र) मुन्नालाल एंड जयनारायण खेमका गर्ल्स डिग्री कॉलेज, सहारनपुर (उ.प्र.) भारत

शोध सारांश – व्यक्ति की बुद्धि और समाज में परिवर्तन का कारक शिक्षा ही है इस प्रकार किसी भी राष्ट्र का निर्माण और विकास उसकी शिक्षा प्रणाली पर ही निर्भर करता है। व्यकित के सशक्तिकरण के लिए शिक्षा एक सशक्त साधन है यह व्यकित और सम्पूर्ण समुदाय में अपनी जन्म जात क्षमताओ द्वारा अपने जीवन को सुधारने के लिए शिक्षा एक सशक्त माध्यम है। शिक्षा व्यक्ति की योग्यताए बढ़ाती है तथा उसके कौशलो में वृद्धि के साथ उसके व्यक्तित्व को भी निखारती है व्यक्ति को सभी प्रकार से सशक्त करती है इसलिए सभी नागरिको को ऐसी शिक्षा दी जाए जो उनकी योग्यताओ, कौशलो और क्षमताओ का विकास करके उन्हे ज्ञानवान व विवेकशील बनाए। जिससे वह जीवन के सभी पक्षो को अपनी इन योग्यताओ का भरपूर उपयोग कर सके और एक समाजोपयोगी जीवन यापन कर सके।

किसी भी देश का विकास अधिकांशत: उसके समाज में शिक्षा की प्रगति पर निर्भर होता है। एक समाज तभी सम्भव हो पाता है जब उसके नागरिक गतिशील साधन सम्पन्न उद्यमी और उत्तरदायी होते है। ऐसे नागरिकों के बिना किसी भी क्षेत्र में देश का विकास सम्भव नहीं है। शिक्षा इस तरह ऐसे सुयोग्य नागरिकों के निर्माण में योगदान देती है। यह तीव्र आर्थिक एवं तकनीकी विकास की प्राप्ति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक है। वर्तमान समय में अनुसूचित जाति उच्च शिक्षा प्राप्त करके रोजगार के नये अवसर प्राप्त कर रहे है तथा महिला सशक्तिकरण तथा राजनीतिक भागीदारी बढी है। यह अध्ययन मुजफ्फरनगर जिले के मोरना ब्लॉक पर आधारित है। इस क्षैत्र में अनुसूचित जातियों ने उच्च शिक्षा प्राप्त करके अपने जीवन में अनेक लाभ प्राप्त किये है।

प्रस्तावना – अनुसूचित जाति शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग साइमन कमीशन द्वारा 1927 में किया गया था। 1850 में यह समुदाय सामान्य रूप से शोषित वर्ग के रूप में प्रयोग किए जाते रहे। भारत धार्मिक प्रजातियों और विविध संस्कृतियों की एक प्रयोगशाला है। भारत की संस्कृति ने 1901 में कुछ जातियों को दलितों के रूपों में कुछ निर्योग्यताओं और अस्पृश्यों से पीडित के रूप में देखा और उन्हें 1935 के भारत शासन आधिनियम में अस्पृश्य जातियों के स्प में पहली बार रखा जिन्हें अब अनुसूचित जाति कहा जाता है। अनुसूचित जातियां तुलनात्मक रूप से व्यवसायी और शिक्षा सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से पिछड़ी हुई है।

दलित अंग्रेजी शब्द **डिप्रेस्ड** क्लास का हिन्दी अनुवाद है, **डिप्रेस्ड** क्लास की जनगणना 1911 में की गई, जिन्हें वर्तमान में अनुसूचित जातियां कहा जाता है दलित का अर्थ पीडित, शोषित, दबा हुआ, खिन्न, उदास, टुकडा, खण्डित, तोडना, कुचलना, दला हुआ, पिसा हुआ, मसला हुआ, रोंदा हुआ, विनष्ट हुआ होता है परन्तु अब अनुसूचित जाति को दलित कहा जाता है, अब दलित शब्द पूर्ण रूप से जाति विशेष के लिए इस्तेमाल किया जाता है हजारों वर्षो तक अस्पृश्य या अछूत समझी जाने वाली उन सभी शोषित जातियों के लिए सामुहिक रूप से प्रयुक्त होता है जो हिन्दु धर्मशास्त्रों द्वारा हिन्दु समाज व्यवस्था में सबसे निचले (चौथे) पायदान पर स्थित है और बौद्ध ग्रन्थ में पाँचवें पायदान पर (चांडाल) है संवैधानिक भाषा में इन्हें ही अनुसूचित जाति कहा गया है। भारत की जनगणना 2011 के अनुसार भारत की जनसंख्या में लगभग 16.6 प्रतिशत या 20.14 करोड़ आबादी दलितों की है।(1) आज अधिकांश हिन्दु दलित बौध धर्म की तरफ आकर्षित हुए है और हो रहे है, क्योकि बौध बनने से हिन्दु दलितों का विकास हुआ है।

सूमा चिटनिस (1995) ने कहा है कि यद्यपि शिक्षा अनुसूचित जातियों के लिये व्यावसायिक गतिशीलता की सुविधा प्रदान करती है, तथ्य यह है कि वे कम प्रतिष्ठित पाठ्यक्रमों में नामांकित है, ऐसी स्थिति है जहाँ प्रभावित गतिशीलता में मुख्यत: अछूत जाति से अछूत वर्ग में परिवर्तन स्वरूप सामने आ रहा है।

एस0 पटवर्धन (1973: 80-84) इन्होंने अपने अध्ययन में पाया, कि अनुसूचित जातियों में शिक्षा के बजाय व्यवसाय को अधिक महत्व दिया जा रहा है। बच्चे बचपन से ही खेतों में काम करना शुरू कर देते है और पैसा कमाते है और स्कूली शिक्षा में उनकी रूचि कम हो जाती है।

बी0आर0 चौहान (1967: 228-250) ने अनुसूचित जातियों के बीच उभरती असमानताओं पर ध्यान केन्द्रित करने की दृष्टि से शैक्षिक सुविधा के उपयोग में जाति और वर्ग का विश्लेषण किया। उन्होंने कुछ गाँवो के 1961 में किये गये अध्ययन का भी उल्लेख किया। इस अध्ययन में उन्होंने भारत की जनगणना की जाँच निम्न आधारों पर की। 1. अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों का विभिन्न राज्यों में वितरण, 2. उनका व्यवसाय, 3. उनकी साक्षरता तथा शैक्षिक स्तर।

एन0के0 सिंह (1979: 20-85) ने माना कि शिक्षा सामाजिक स्थिति का एक महत्वपूर्ण संकेतक है शिक्षा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति वर्ग के सन्दर्भ में सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को प्रभावित

करती है। शिक्षा के कारण उनकी स्थिति तथा संस्थागत अक्षमता के कारण वंचित रहने की स्थिति में बदलाव आया है।

शांता कुमारी (1983) द्वारा केरल में चलाये जा रहे कल्याणकारी कार्यक्रमों में अनुसूचित जातियों पर कल्याणकारी उपायों के प्रभाव की जाँच की गई। कल्याणकारी कार्यक्रम उन पर उतना प्रभाव नहीं डाल पाये। जितना इन कार्यक्रमों में परिकल्पित किया गया था। अनुसूचित जातियों को विशेष शैक्षिक रियायते दिए जाने के बाद उनकी शैक्षिक प्रगति में सुधार हुआ है।

अध्ययन का उदेश्य:

1. उच्च शिक्षा का अनुसूचित जाति पर प्रभाव का अध्ययन करना।
2. उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के लिए रोजगार के अवसरों पर प्रभाव का अध्ययन करना।
3. उच्च शिक्षा का अनुसूचित जाति की महिलाओं सशक्तिकरण मे योगदान का अध्ययन करना।
4. उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति के व्यक्तियोंकी राजनीतिक भागीदारी पर प्रभाव का अध्ययन करना।

उपकल्पना:

1. उच्चशिक्षा को प्राप्त करके अनुसूचित जाति में रोजगार के अवसर बढाये जा सकते है।
2. उच्च शिक्षा के द्वारा अनुसूचित जाति में महिला सशक्तिकरण बढाया जा सकता है।
3. उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति में राजनीतिक भागीदारी व जीवन जीने के तरीको में बदलाव किया जा सकता है।

अध्ययन का क्षेत्र– वर्तमान अध्ययन उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति का विकास मोरना ब्लॉक पर आधारित है। मोरना ब्लॉक मुजफ्फरनगर हेडक्वाटर से 24 किलोमीटर पूर्वी भाग में स्थित है। 2011 की जनगणना के अनुसार मोरना ब्लॉक की जनसंख्या 224721 है। मोरना ब्लॉक में 49 ग्राम पंचायते आती है। जिसमें से 4 गांव मोरना, भोपा, चौरावाला और बेहडा सादात को अध्ययन के लिए चुना गया है।

शोध प्रविधि–वर्तमान अध्ययन उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति का विकासमुजफ्फरनगर जिले के मोरना ब्लॉक के चार गॉव पर किया गया है, जिसमें मैनें 400 उत्तरदाताओं का चुनाव स्तरित दैव निदर्शन के आधार पर किया है। जिसमें वर्णनात्मक शोध प्रारूप के आधार पर अध्ययन की रूपरेखा तैयार की गयी है, एवं तथ्य एकत्रितकरने के लिए अवलोकन व साक्षात्कार अनुसूची प्रविधि का चयन किया गया है।

सारणी 1: उच्च शिक्षा का अनुसूचित जाति पर प्रभाव अनुसूचित जाति के व्यक्तियो के लिए रोजगार के अवसरो पर उच्च शिक्षा का प्रभाव:

क्र.	उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति के व्यक्तियो के लिए रोजगार के अवसरो पर प्रभाव	उत्तरदाताओ की संख्या	प्रतिशत
1	रोजगार की सम्भावनांओ मे उल्लेखनीय सुधार	301	75.25%
2	रोजगार की सम्भावानओ मे मामूली सुधार	55	13.75%
3	कोई महत्वापूर्ण प्रभाव नही हुआ	44	11%
4	रोजगार की सम्भावनाओ मे गिरावट	NIL	NIL
	कुल योग	400	100%

उपरोक्त सारणी में 75.25% उत्तरदाताओ का विचार है कि उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति के व्यक्तियो के लिए रोजगार के अवसरो को बढावा देने के लिए रोजगार की सम्भावनाओ में उल्लेखनीय सुधारकरके प्रभावित किया जा सकता है 13.75% उत्तरदाताओ का विचार है कि उच्च शिक्षा के द्वारा अनुसूचित जाति के व्यक्तियो के लिए रोजगार के अवसरो को बढावा देने के लिए रोजगार की सम्भावनाओ मे मामूली सूधार करके प्रभावित किया जा सकता है 11% उत्तर दाताओ का विचार है कि उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति के व्यक्तियो के लिए रोजगार के अवसरो को बढावा देने के लिए कोई महत्वपूर्णप्रभाव नही हुआ है।

सारणी 2 :उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जातियो के व्यक्तियो के लिए आर्थिक स्वतन्त्रता में योगदान

क्र.	उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जातियो के व्यक्तियो के लिए अर्थिक स्वतन्त्रता में योगदान	उत्तरदाताओ की संख्या	प्रतिशत
1	काफी हद तक	332	83%
2	लेकिन सीमित सीमा तक	68	17%
3	कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नही	NIL	NIL
4	इसने अधिक निर्भरता को जन्म दिया है	NIL	NIL
	कुल योग	400	100%

उपरोक्त सारणी में 83% उत्तर दाताओ का विचार है कि उच्च शिक्षा के अनुसूचित जाति के व्यक्तियो के व्यक्तियों के लिए आर्थिक स्वतन्त्रता में काफी हद तक योगदान किया है। 17%उत्तरदाताओं का विचार है कि उच्च शिक्षा ने अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के लिए आर्थिक स्वतन्त्रता में सीमित सीमा तक योगदान किया है।

सारणी 3:अनुसूचित जाति के लिए आधारित भेदभाव को कम करने में उच्च शिक्षा का योगदान

क्र.	अनुसूचित जाति के लिए जाति आधारित भेदभाव को कम करने में उच्च शिक्षा का योगदान	उत्तरदाताओ की संख्या	प्रतिशत
1	भेदभाव में उल्लेखनीय कमी आयी है	217	54.25%
2	भेदभाव में केवल मामूली कमी आयी है	110	27.5%
3	भेदभाव कम करने में कोई कमी नही आयी है	NIL	NIL
4	भेदभाव में वृद्धि हुई है	73	18.25%
	कुल योग	400	100%

उपरोक्त सारणी में 54%उत्तरदाताओ का विचार है कि उच्चशिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति के छात्रो के लिए जाति आधारित भेदभाव में उल्लेखनीय कमी आयी है 27.5% उत्तरदाताओ का विचार हैकि उच्चशिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति के छात्रो के लिए जाति आधारित भेदभाव में केवल मामूली कमी आयी है 18.25% उत्तरदाताओ का विचार है कि उच्चशिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति के छात्रो के लिए जाति आधरित भेदभाव को कम करने मे कोई कमी नही आयी है।

सारणी 4: उच्च शिक्षा का अनुसूचित जाति की महिलाओ के सशक्तिकरण में योगदान

क्र.	उच्च शिक्षा का अनुसूचित जाति की महिलाओ के सशक्तिकरण में योगदान	उत्तरदाताओ की संख्या	प्रतिशत
1	उच्च शिक्षा महिलाओ को मजबूती से सशक्त बनाती है	290	72.5%
2	उच्चशिक्षा महिलाओ को कुछ हद तक सशक्त बनाती है	110	27.5%
3	महिलाओ की प्रस्थिति पर कोई प्रभाव नही डालती	NIL	NIL
4	महिलाओ की प्रस्थिति को कमजोर करती है	NIL	NIL
	कुल योग	400	100%

उपरोक्त सारणी में 72.5% उत्तरदाताओ का विचार है कि उच्चशिक्षा ने अनुसूचित जाति की महिलाओ को मजबूती से सशक्त बनाया है 27.5(उत्तरदाताओ का विचार है कि उच्च शिक्षा ने अनुसूचित जाति की महिलाओ को कुछ हद तक सशक्त बनाया है।

सारणी 5 : अनुसूचितजाति में जागरुकता और सक्रियता बढाने में उच्च शिक्षा की भूमिका

क्र.	अनुसूचितजाति में जागरुकता और सक्रियता बढाने में उच्च शिक्षा की भूमिका	उत्तरदाताओ की संख्या	प्रतिशत
1	उच्च शिक्षा की भूमिका है	331	82.75%
2	उच्च शिक्षा की मध्यम भूमिका है	26	6.5%
3	उच्च शिक्षा की निम्न भूमिका है	43	10.75%
4	उच्च शिक्षा की कोई भूमिका नही है	NIL	NIL
	कुल योग	400	100%

उपरोक्त सारणी में 82.75% उत्तरदाता अनुसूचित जाति के अन्दर जागरुकता और सक्रियता बढाने में उच्च शिक्षा की प्रमुख भूमिका बनाते है 6.5% उत्तरदाता अनुसूचित जाति के अन्दर जागरुकता और सक्रियता बढाने में उच्च शिक्षा की मध्यम भूमिका बनाते है 10.75%उत्तरदाता अनुसूचित जाति के अन्दर जागरुकता और सक्रियता बढाने में उच्च शिक्षा की निम्नप्रमुख भूमिका मानते है।

सारणी 6: उच्च शिक्षा का अनुसूचित जातियों व अन्य जातियों के बीच अर्न्तजातीय संबन्धो को बेहतर बनाने में योगदान

क्र.	उच्च शिक्षा का अनुसूचित जातियों व अन्य जातियों के बीच अर्न्तजातीय संबन्धो को बेहतर बनाने में योगदान	उत्तरदाताओ की संख्या	प्रतिशत
1	सम्बन्धो में उल्लेखनीय सुधार हुआ है।	152	38%
2	कुछ हद तक सुधार हुआ है।	248	62%
3	सम्बन्धो में कोई बदलाव नही हुआ है।	NIL	NIL
4	उच्च शिक्षा के अन्दर जातीय सम्बन्धो को खराब किया है।	NIL	NIL
	कुल योग		100%

उपरोक्त सारणी में 38%उत्तरदाताओ का विचार है कि अनुसूचित जातियोंव अन्य जातियों के बीच अन्तरजातीय सम्बन्धो को बेहतर बनाने में उच्च शिक्षा द्वारा उल्लेखनीय सुधार हुआ है 62% उत्तरदाताओ का विचार है कि अनुसूचित जातियो व अन्य जातियो के बीच अन्तरजातीय सम्बन्धो को बेहतर बनाने में उच्च शिक्षा द्वारा कुछ हद तकसुधार हुआ है।

सारणी 7:उच्च शिक्षा का अनुसूचित जातियो के व्यक्तियो की राजनितिक भागीदारी पर प्रभाव

क्र.	उच्च शिक्षा का अनुसूचित जातियो के व्यक्तियो की राजनीतिक भागीदारी पर प्रभाव	उत्तरदाताओ की संख्या	प्रतिशत
1.	उच्च शिक्षा ने राजनीतिक भागीदारी में उल्लेखनीय वृद्धि की है	304	76%
2.	उच्च शिक्षा ने राजनीतिक भागीदारी मामूली वृद्धि की है	58	14.5%
3.	राजनितिक भागीदारी पर कोई प्रभाव नहीं हुआ है	22	5.5%
4.	राजनितिक भागीदारी में कमी आई है	16	4%
	कुल योग	400	100%

उपरोक्त सारणी में 76%उत्तरदाताओ का विचार है कि उच्च शिक्षा ने अनुसूचित जाति के व्यक्तियो की राजनितिक भागेदारी में उल्लेखनीय वृद्धि की है 14.5%उत्तरदाताओ का विचार है कि उच्च शिक्षा ने अनुसूचित जाति के व्यक्तियो की राजनितिक भागेदारी में मामूली वृद्धि की है 5.5%उत्तरदाताओ का विचार है कि उच्च शिक्षा का अनुसूचित जाति के व्यक्तियो की राजनितिक भागेदारी पर कोई प्रभाव नही पडा है। 4%उत्तरदाताओ का विचार है कि उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति के व्यक्तियो की राजनितिक भागेदारी में कमी आई है।

सारणी 8 : उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति के व्यक्तियो के जीवन की समग्र गुणवत्ता में वृद्धि का मुल्यांकन

क्र.	उच्च शिक्षा द्वारा अनुसूचित जाति के व्यक्तियो के जीवन जाति के व्यक्तियो के जीवन की समग्र गुणवत्ता कीं वृद्धि में योगदान	उत्तरदाताओ की संख्या	प्रतिशत
1.	जीवन की गुणवत्ता में बहुत वृद्धि की है	344	86%
2.	जीवन की गुणवत्ता में मामूली वृद्धि की है	56	14%
3.	जीवन की गुणवत्ता में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नही हुआ है	NIL	NIL
4.	जीवन की गुणवत्ता में कमी आई है	NIL	NIL
	कुल योग	400	100%

उपरोक्त सारणी में 86%उत्तरदाताओ का विचार है कि उच्च शिक्षा ने अनुसूचित जाति के व्यक्तियो के जीवन की समग्र गुणवत्ता में बहुत वृद्धि का 14% उत्तरदाताओ का विचार है कि उच्च शिक्षा ने अनुसूचित जाति के व्यक्तियो की जीवन की समग्र गुणवत्ता में मामूली वृद्धि की है।

निष्कर्ष– यह शोध कार्य उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जिले के मोरना ब्लॉक के चार गॉव पर किया गया है। अध्ययन के लिए निश्चित की गयी उपकल्पना उपरोक्त निष्कर्ष से सही प्रतीत होती है। सामान्य रूप से अध्ययन में पाया

गया है कि उच्च शिक्षा के द्वारा अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के लिए रोजगार के अवसरों की सम्भावनाओं में उल्लेखनीय सुधार किया जा सकता है। अनुसूचित जाति की महिलाओं को सशक्त बनाने में भी उच्च शिक्षा बहुत प्रभावशाली है व सामाजिक भेदभाव को कम करने में भी उच्च शिक्षा का योगदान रहा है। उच्च शिक्षा अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को आर्थिक रूप से स्वतन्त्र बना रही है। अनुसूचित जाति के व्यक्तियों में शिक्षा, स्वास्थ्य व रोजगार के विषय में भी उच्च शिक्षा जागरूकता बढा रही है। उच्च शिक्षा के द्वारा अनुसूचित जातियो व अन्य जातियों के बीच अर्न्तजातीय सम्बन्धों में कुछ हद तक ही सुधार हुआ है। अनुसूचित जातियों में उच्च शिक्षा प्राप्त करके राजनीतिक सहभागिता में भी वृद्धि हुई है। ग्राम पंचायत चुनाव में अनुसूचित जाति की महिलाएं व पुरूष अपनी सक्रिय भूमिका निभा रहे है, तथा ग्राम पंचायत चुनाव में ग्राम प्रधान के रूप में गॉव का नेतृत्व कर रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चिटनिस, सूमा 1995 : 'एजूकेशन आफ शिड्यूल्ड कास्ट' जरनल ऑफ हायर एजुकेशन, वाल्यूम 1, नं0 2 (पृष्ठ 168-175)
2. पटवर्धन, सुनंदा 1973 : चेंज अमंग इंडियाज हरिजन : महाराष्ट्रा- ए केस स्टडी, न्यू देहली ओरियंट लोंगमेन लिमिटेड
3. चौहान, बी0आर0 1967 : 'प्रॉब्लम आफ एजूकेंशन अमंग शिड्यूल कास्ट स्टूडें ट इन यू0पी0' सोशल चेंज, वोल्यूम 6, न0 1-2, (पृष्ठ 13-17)
4. सिंह, एन0के0 1979 : एजुकेशन एंड सोशल चेंज, जयपुर रावत पब्लिकेशन
5. कुमारी, सांता 1983 : शिड्यूल्ड कास्ट एंड वेलफेयर मीसर, न्यू देहली पब्लिशिंग कम्पनी
6. https://www.scobtuzz.org/2019/06/anusoochit-jaati.html
7. https://hi.m.wikipedia.org/wiki/highereducation

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

A Study of BMI with Musculoskeletal Fitness in College Students

Vikram Singh Rathore* **Dr. B.S. Chouhan****

*PhD Research Scholar, B.N. University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Dean (Physical Education) B.N. University, Udaipur (Raj.) INDIA

Abstract
Purpose: The purpose of the study was to find out relationship of body mass index with Musculoskeletal Fitness in college boys. **Methodology:** The subjects for this study were selected from various colleges of udaipur. A total of 150 college boys were selected for the purpose of the study. The age of the subjects ranged between 18 to 20 years. Selected Variables were body mass index (BMI) and Musculoskeletal Fitness. BMI was calculated from body weight and body height (kg/m2), flexibility was measured with the help of sit and reach test, muscular strength was measured with push-ups and abdominal strength was measured through bent knee sit-up test. To find out the relationship of body mass index with Musculoskeletal Fitness, descriptive statistics and the Pearson's product moment correlation was used. **Findings:** A significant relationship was obtained between BMI flexibility ($r = -.153$, $p < .05$) muscular strength ($r = -.155$, $p < .05$) and muscular endurance ($r = -.130$, $p < .05$).
Keywords: Body Mass Index, Flexibility, Muscular Strength, Muscular Endurance.

Introduction - BMI is a proportion of an individual's weight & height. BMI is generally used to characterize weight as "sound" or "not healthy for a person" The negative impacts of fatness of body on wellbeing are a past debate. The over the top muscle to fat ratio speaks to a numerous hazard factor for a few illnesses; the most significant of which ones are type 2 diabetes, hypertension, cardiovascular infections, and osteoarthritis **(Pi- Sunyer, 1991 and World Health Organization, 2000)**.

The greater part of these injurious impacts are more probable if the overabundance muscle versus fat is predominantly put away in the upper body area, with stomach instinctive fat being the most basic when assessing the wellbeing dangers of obesity **(Pi-Sunyer, 1991, Björntorp, 1993, World Health Organization, 2000)**. In addition, it has been described that fatness is related through body infirmity and a weak apparent fitness **(Wolk and Rössner, 1996,; Manderbacka, 1998; Doll, 2000; Ford, 2001).** An increasing problem of health also associated with fatness of body **(World Health Organization, 2000).**

While BMI is unquestionably more normally used to characterize stoutness and firmly identified with the level of muscle and fat ratio in many settings, its restrictions can bring about an inappropriate order of specific people with increased muscle mass **(Uwaifo & Arioglu, 2004).** In this respects, WHO featured the requirements for different markers to supplement the assessment of BMI, to recognize people at an expanded danger of fatness related disease because of aggregation of stomach fat.

Physical wellness is known to be another significant issue from a general wellbeing point of view, both in mature person (**Mette, et al., 2002; Myers, et al., 2002**) and in kids and young people **(Ortega, et al., 2008)**. Studies concerning the connection between weight status and health related physical wellness in youth have regularly revealed a decline in wellness with an expanding BMI **(Deforche, et al., 2003)**.Joint adaptability or scope of movement or motion is a significant segment of muscular fitness. The significance of flexibility as a part of wellbeing related wellness is identified with the counteractive action of orthopedic hindrances sometime down the road, particularly lower back agony. The adaptability of the lower back, legs, and shoulders goes about as a compelling obstacle to the danger of musculoskeletal damage **(Haskeil, et al., 1985).**Joint flexibility or range of motion is an important component of muscular fitness. The importance of flexibility as a component of health related fitness is related to prevention of orthopedic impairments later in life, especially lower back pain. Flexibility of the lower back, legs and shoulders acts as an effective deterrent to risk of musculoskeletal injury **(Haskeil, et al., 1985).**

Hence, this study aimed to determine the relationship between BMI with Musculoskeletal Fitness in Colleges students of various College of Delhi.

Objectives of the Study: To find out the Relationship of

BMI with Musculoskeletal Fitness in Colleges students.

Materials and Method:

Selection of Subjects: A total of 150 college boys were randomly selected from various College of Udaipur. The age of the subjects was ranged between 18 to 20 years.

Selection of Variables: Keeping the feasibility criterion in mind, following variables for the present study were selected.

1. Body Mass Index (BMI)
2. Musculoskeletal fitness.

i. Flexibility
ii. Muscular strength
iii. Muscular endurance.

Criterion Measures:

1. BMI was calculated from body weight and body height (kg/m^2), and body fatness of participants was classified according to WHO standards.
2. Flexibility was measured by administering sit and reach test.
3. Muscular endurance was measured by administering one minute sit-ups test.
4. Muscular strength was measured by administering push-ups test.

Statistical Analysis: For determining the relationships between BMI, Flexibility, muscular strength and muscular endurance, descriptive statistics and Pearson's product moment correlation was used. The data was analyzed with the help of SPSS (22.0 version) software and the level of significance was set at 0.05 level.

Result and Findings of the study:

Table 1: Descriptive Statistics of Selected Variables

Variables	Mean	Std. Deviation	N
BMI	22.1350	3.88713	273
Flexibility	35.1355	6.87011	273
Muscular Strength	25.5238	10.32987	273
Muscular Endurance	28.8681	9.01209	273

Table- 1 Indicates the descriptive statistics i.e. mean and SD of selected variables. The Mean and SD of selected variables are i.e. BMI (22.1350±3.88713), Flexibility (35.1355±6.87011) Muscular Strength (25.5238±10.32987) and Muscular Endurance (28.8681±9.01209).

Table 2: Correlation Coefficient (r) of BMI with Flexibility, Muscular Strength and Muscular Endurance in College Students of Udaipur

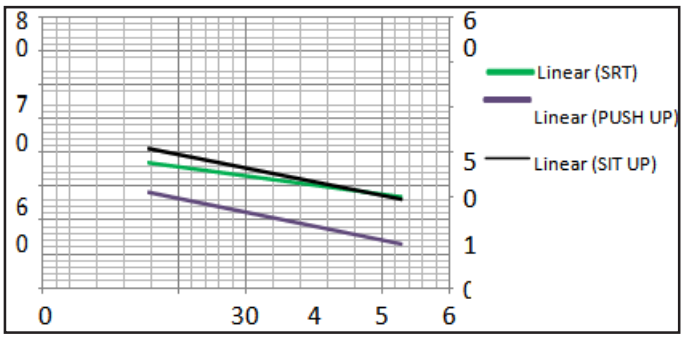
Variables	Correlation coefficient (r)	Sig.
Flexibility	-.153*	.011
Muscular Strength	-.155*	.010
Muscular Endurance	-.130*	.032

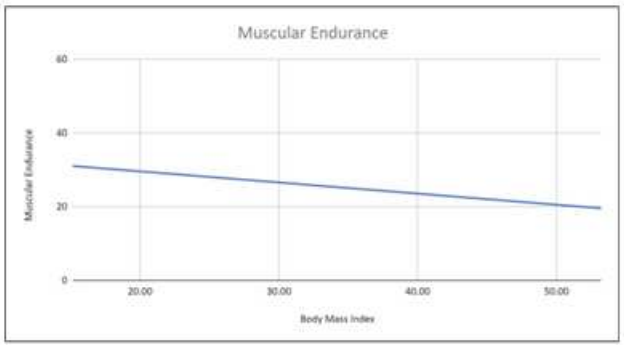
*. Correlation is significant at the 0.05 level (2-tailed).

***** Statistically Significant at 0.05 level of Significance.

Table 2 clearly indicates that there exists a significant relationship of BMI with Flexibility, Muscular Strength and Muscular Endurance in College Students**.** The values obtained for various musculoskeletal fitness were significant at 0.05 levels.

Figure 1: The graphical representation of Relationship of BMI with Flexibility Muscular Strength and Muscular Endurance is shown in figure 1, 2, & 3 respectively.





Discussion of the Findings: The body mass index (BMI) has been the most commonly applied clinical measure to characterize body composition in individuals. However, the BMI has been criticized as being an inaccurate measure of body fatness (Suchanek et al, 2012). We found a significant decreasing trend of performance in sit-and-reach and sit-up tests from normal weight to Grade I and Grade II/III underweight in both boys and girls. Poorer sit-and-reach results in underweight boys and girls (Artero,et al., 2010; Prista,et al., 2003),Overweight and obese college boys performed poorer in push-up, sit-up and endurance running compared with normal weight, which is consistent with previous studies (Deforche, et. al., 2003; Kim, et al., 2005; Graf, et. al., 2004). However, such differences need to be interpreted cautiously due to the higher energy cost of lifting a greater body mass by overweight subjects (Deforche, et al., 2003; Cureton, et al., 1977).

Conclusions: Within the limitation of the present study and on the basis of findings, the following conclusions have been drawn –

1. Significant relationship was observed between BMI and Flexibility.
2. Significant relationship was observed between BMI and Muscular Strength.
3. Significant relationship was observed between BMI a Muscular Endurance.

References:-

1. Artero, E. G., España-Romero, V., Ortega, F. B.,

Jiménez-Pavón, D., Ruiz, J. R., Vicente-Rodríguez, G., & González-Gross, M. (2010). Health-related fitness in adolescents: underweight, and not only overweight, as an influencing factor. The AVENA study. Scandinavian Journal of Medicine & Science in Sports, 20(3), 418-427.

2. Cureton, K. J., Boileau, R. A., Lohman, T. G., & Misner, J. E. (1977). Determinants of distance running performance in children: analysis of a path model. Research Quarterly. American Alliance for Health, Physical Education and Recreation, 48(2), 270-279.
3. Chen, W., Lin, C. C., Peng, C. T., Li, C. I., Wu, H. C., Chiang, J., ... & Huang, P. C. (2002). Approaching healthy body mass index norms for children and adolescents from health-related physical fitness. Obesity Reviews, 3(3), 225- 232.
4. Inokuchi, M., Matsuo, N., Takayama, J. I., & Hasegawa, T. (2007). Prevalence and trends of underweight and BMI distribution changes in Japanese teenagers based on the 2001 National Survey data. Annals of Human Biology, 34(3), 354-361.
5. Kim, J., Must, A., Fitzmaurice, G. M., Gillman, M. W., Chomitz, V., Kramer, E. & Peterson, K. E. (2005). Relationship of physical fitness to prevalence and incidence of overweight among schoolchildren. Obesity Research, 13(7), 1246-1254.
6. Prista, A., Maia, J. A. R., Damasceno, A., & Beunen, G. (2003). Anthropometric indicators of nutritional status: implications for fitness, activity, and health in school-age children and adolescents from Maputo, Mozambique. The American Journal of Clinical Nutrition, 77(4), 952-959.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

A Study on Physiological Variables of Different Level Pistol Shooters

Dr. Bhupendra Singh Chouhan* Niharika Shaktawat**

***Dean (Physical Education) Bhupal Nobles' University, Udaipur (Raj.) INDIA**
****Research Scholar, Bhupal Nobles' University, Udaipur (Raj.) INDIA**

Introduction - Fitness levels, and the time and effort put into achieving and keeping them, vary greatly as a result of the sports people choose to participate in. In light of this, it is important to do research to determine which socioeconomic group can expect to be the healthiest. Fitness levels and overall health share some correlation. Social class may play a role in disease susceptibility and fitness levels. This research set out to compare the academic and athletic achievements of high- and low-achieving college shooters in India.

Objectives :

1. To Examine Pulse Rate of state and national level pistol shooters.
2. To Examine Lungs Capacity of state and national level pistol shooters.

Hypothesis:

The hypotheses for the present research work are as follows:

1. H_{01}: There will be no significant deference in Pulse Rate of state and national level pistol shooters.
2. H_{01}: There will be no significant deference in Lungs Capacity of state and national level pistol shooters.

Definitions:

Pulse Rate : In the context of the current inquiry, the term "pulse rate" refers to a measurement of the heart rate, which can be thought of as the number of times that the heart beats in one minute. When blood is pumped through the arteries by the heart, the walls of the arteries dilate and constrict in response to the movement of the blood. Taking a person's pulse not only allows one to determine their heart rate, but it also has the potential to reveal the following information: Heart rhythm.

Lungs Capacity : In the current inquiry, the term "lung capacity" (LC) refers to the volume of air that may be drawn into the lungs by exerting the greatest amount of force during inspiration. The average lung capacity of adults who are in good health is approximately 6 litters. The varying ranges of lung capacity that individuals have can be attributed to a number of factors, including age, gender, body composition, and ethnicity.

Review of Literature:

(Mondal et al., 2011)studied Findings from the Suva Anthropoimthy& Physiological Profile of the Indian Shooter This investigation involved 50 rifle shooters from several clubs in the Hooghly region of West Bengal, India. The goal of this research is to replicate the original anthropometric and physiological measurements of competitive rifle shooters from the Indian state of West Bengal. Based on the results of a comparison study, it can be concluded that the maximum oxygen consumption (VO2 max) values of the shooters in the current study are lower than the international standards for VO2 max of swimmers, runners, footballers, basketball players, and soccer players, but are very close to that of weight lifters, shot putters, discus throwers, and their non-athlete counterparts.

According to (Rotenberg & Boucsein, 1993), the brain monoaminergic influences underpinning psycho-physiological reactions, this might be accomplished by quantifying neuro-physiological measures of cortical arousal/activation and alertness. To learn more about how arousal/activation, vigilance, and performance are connected in world-class marksmen, we might test further hypotheses based on the inverted U and the U connections, as proposed by (Mousavi et al., 2017).

Research Design: For this study players were selected who have participated in state level Rajasthan tournament and national level pistol shooting tournament.

Sample Deign

S.	**Pistol Shooters**	
1.	National level pistol shooters	50
2.	State level pistol shooters	50
	Total	**100**

Selection of Tools:

	Anthropometric		
1	Pulse Rate	oxy meter	1 minute / pulse Rate
2	Lungs Capacity	Breath metre	L / Min.

Analysis and Result:

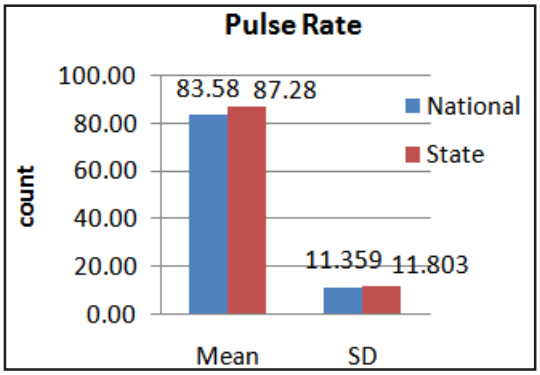
Difference in pulse rate of National and state level pistol shooters

H0: There is no significant difference in pulse rate of

National and state level pistol shooters

Table-1 (see below)

Figure-1:- Comparison of Mean Score of Pulse Rate in Pistol Shooters at National and State level



It is evident from table above that P value for pulse rate is found> 0.05. Thus, null hypothesis is accepted and it can be stated that there is no significant difference in pulse rate of National and state level pistol shooters.

Difference in Lungs capacity of National and state level pistol shooters

H0: There is no significant difference in Lungs capacity of National and state level pistol shooters

Table-2 (see below)

It is evident from table above that P value for breath hold capacity is found> 0.05. Thus, null hypothesis is accepted and it can be stated that there is no significant difference in breath hold capacity of National and state level pistol shooters.

References:-

1. Lakie, M. (2010). The influence of muscle tremor on shooting performance. Experimental physiology, 95(3), 441-450.
2. Mondal, A., Majumdar, R., & Pal, S. (2011). Anthropoimthy and Physiological Profile of Indian Shooter. *International Journal of Applied Sports Sciences*, *23*(2).
3. Peljha, Z., Michaelides, M., & Collins, D. (2018). The relative importance of selected physical fitness parameters in Olympic clay target shooting. *Journal of Human Sport and Exercise*, *13*(3), 541–552.
4. Shekhar, A. S., &Mistry, H. M. (2014). Clinical effects of pranayama on performance of rifle shooters. *International Journal of Medical Research & Health Sciences*, *3*(3), 580-586.

Table-1:- Comparison of Mean Score of Pulse Rate in Pistol Shooters at National and State level

Pulse Rate								
Level of Pistol Shooters		Mean	SD	Std. Error Mean	t	df	P value	Inference
Pulse Rate	National	83.58	11.359	1.606	1.597	98	0.113	NS
	State	87.28	11.803	1.669				

Table-2:- Comparison of Mean Score of Lungs capacity in Pistol Shooters at National and State level

Lungs capacity								
Level of Pistol Shooter		Mean	SD	Std. Error Mean	t	df	P value	Inference
Positive Breath hold capacity	National	49.76	14.085	1.992	1.449	98	0.151	NS
	State	53.66	12.806	1.811				
Negative Breath hold capacity	National	29.46	9.054	1.280	0.153	98	0.879	NS
	State	29.16	10.626	1.503				

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Critical Analysis of Juvenile Justice System in India

Dr. Jyoti Saran Saxena* Dr. Anushka Mishra Nayak**

*PhD. Scholar, LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor & HOD, School Of Legal Studies, LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA

Abstract : As we all know about that today we are seeing or facing the crime against a children. now we have to analysis the what the approach we will do to safeguarding the children against the very immoral crime and what are the prevention to be taken by us to stop the crime against the children.

As we know that there was a not a specific crime but we will say that now in present scenario children were also become the part of this crime . there was a report from (NCPCR) in India that 72.65%. Aim of the juvenile justice is based on the rights of the child. Juvenile justice focuses on prevention as a primary objective as well as makes custody a sanction of last resort. However, the brutal gang rape case which took place in Delhi on 16th December 2012 proved to be the landmark case which changed the present law of Juvenile Justice System. As soon as this Act i.e., Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015 came into existence, there was a lot of criticism from various social workers, NGOs fighting for the rights of the child as this Act was enacted following public outrage over the release of the Juvenile offender in State v. Ram Singh & Ors. (hereinafter referred to Nirbhaya case). The Authors have discussed in this Article the various aspects of recently enacted Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015, with its shortcomings thereof.

Here we are try to critically analysis of juvenile justice how to be work in India , what are the approach should be fitted in the juvenile case, what are the circumstance to be happen when they do a crime and what are the corresponding to be happen when any child do a act and offence.

Keywords- juvenile justice, commission, offence, act.

Introduction - Before going in depth of this act let's first know the term 'juvenile'. It refers to any person below the age of 18 who has been accused of a crime. As we know child is one whose age is under 18 years, but when this child commits any crime, normal or heinous, called a Juvenile. The Children's constitute almost half of the World's Population.

Juvenile Justice Act 2015 passed by the Lok Sabha in May 2015 amidst protest and criticism. It passed by Rajya Sabha in December 2015. It repealed Juvenile Justice 2000

The aim of juvenile justice in India is to prevent the right of child . while first we know the meaning of juvenile section 2 (35) "juvenile" means a child below the age of eighteen years; now it is Cleary we know about that who was a juvenile and our approach is to this criteria only. As per the above introductory part we should know that in society children are the major part of this but today so much act or offence are to be done against them and they are also the part of that. Some time children are not become the part of the crime their surrounding society will developed some activity which that way they will become the part of any offence. Parents are also equally liable for this because of their mis guidance and not proper care and caution children become the part of juvenile act. As per the definition given in section 2 (13) "child in conflict with law" means a child who is alleged or found to have committed an offence and who has not completed eighteen years of age on the date of commission of such offence; under this definition clause we have to see that which are the child to be covered under those who are become the part of commission of offence. under the juvenile justice act 2015 we have see so many provision regarding the safe guarding principal for the commission of juvenile offence.

The basic concept of juvenile justice is to prevent the offence against the child. There are so many Large numbers of 'Child in conflict with law' are socio-economic victims, denied their rights to education, health, shelter, care and protection. This Article involves the critical analysis of Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015 (hereinafter referred to J.J.A.2015) which though amended several times in the year 2000, 2006, and 2015 but still needs a serious concern from Authors' point of view.

The Authors have selected this topic due to facing the real commission of offence against child and what are the different type of offence to be seen such as gang rape, child sexual abuse, child pornography, child labor, Bullying

(including online bullying), slapping, choking or burning, Tactics of fear and control such as intimidation or forced isolation, Maintaining total control over financial resources, withholding access to money, and/or forbidding attendance at school or employment, among others, Femicide, Human trafficking, Child marriage. All that such offence to be covered under the juvenile justice against juvenile.

Historical : In India before 1960 there was no consistency regarding the age limit of Juvenile delinquent, every state had different age limit of a child, In Bombay Children Act 1948 child means a boy not completed the age of 16 year and a girl not completed the age of 18 years.

The history of India's juvenile justice system or When the Indian Constitution attempts to protect its residents through Fundamental Rights as well as imposes duties on the government through Directive Principles of State Policy, it is clear that one of the primary prerequisites of post-independence India was a law to defend children and juvenile offenders. This article explores the history of India's juvenile justice system as well as the historical context of juvenile crime in India. It concerns children who have conflicted with the law and need care and protection.

The history of Juvenile Justice in India dates back to the Indian Constitution's efforts to protect citizens and impose duties on the state. The Children's Act of 1960 was enacted to protect children and juvenile offenders, offering welfare, education, mentoring, and training. The Act also included observation homes and special educational systems. Juvenile courts in India were confined to youth under 16 years old who did not commit crimes punishable with death or life imprisonment. The juvenile Justice Act of 1986 followed the united nations Minimum Rules for the Administration of Juvenile Justice, while the Juvenile Justice Act of 2000 aimed to follow the principles outlined in united Nations Conventions.

The Nirbhaya event in the Delhi gang rape case led to a punitive approach to juvenile justice. The Main role of the juvenile justice system in India is to correct juveniles through education and non – penal treatment through social control agencies like observation homes, special homes, and school.

The movement for special treatment of juvenile offenders began in the 18th century, with developed countries like the UK and the US supporting it. The United Nations adopted a Convention on the Rights of Children in 1989 to protect juvenile offenders' best interests. This led to the repeal of the Juvenile Justice Act, 1986, and the creation of the Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2000. The Act aims to provide care, protection, treatment, development and rehabilitation, and ensuring fair criminal justice administration in cases of heinous crimes committed by juvenile offenders.

Who is Juvenile in India? or What is Juvenile Age in India? And Difference between a Juvenile and Minor: In India, a person below 18 years old is considered a juvenile or person of juvenile age. Juveniles are those who have committed offenses or need care and protection. The juvenile justice system aims too rehabilitate young offenders and give them a second chance. Factors contributing to juvenile involvement include brain development issues, exposure to alcohol or drugs, abuse or violence, poor parenting, media influence, and lack of education. The system is influenced by western countries and has been enacted by various acts, including The Apprentices Act, Indian Penal Code, Reformatory School Act, Code of Criminal Procedure, and Recommendations by the Indian Jail Committee in 1920. Juvenile courts are responsible for executing these individuals.

Who is juvenile?

Before talking about the various crimes committed by juveniles, we must understand who a juvenile is. In simple language, a teenager is a child who has not achieved the age of maturity at which he can understand the difference between right and wrong. Legally speaking, a juvenile is a minor who has not attained a certain age at which he can be held liable for his criminal acts like an adult under the law of the country. According to J.J.A.2015, a juvenile means a child below the age of eighteen years. It states that a juvenile should not be treated as an adult even if he is a child for the purpose of trial and punishment in a court of law. Also be involved in criminal acts.

Child Juvenile report in india on the basis of ministry of home affairs

Will the Minister of HOME AFFAIRS be pleased to state
(a)whether the number of minors involved in criminal activities is increasing in the country every year~
(b)if so, the details thereof along with the reasons therefore~
(c)the number of crimes committed by minors during the last three years, State-wise~
(d)the efforts made by Government to check minors from committing various crimes~ and
(e)the outcome thereof?
ANSWER
MINISTER OF STATE IN THE MINISTRY OF HOME AFFAIRS (SHRI .NITYANAND RAI)
(a)to (c): National Crime Records Bureau (NCRB) compiles and publishes information on crime in its publication "Crime in India". The published reports are available till the year 2019. State/UT-wise details of cases reported against juveniles and juveniles apprehended under Indian Penal Code (IPC) and Special and Local Laws (SLL) Crimes during 2017-2019 are at Annexure-I.
(d) & (e): „Police and „Public Order are State subjects under the Seventh Schedule to the Constitution of India. The responsibilities to maintain law and order, protection of life and property of the citizens rest with the respective State Governments. The State Governments are competent to deal with such offences under the extant provisions of laws.

The Juvenile Justice (Care and Protection of Children)

Act (JJ Act), 2015 is the primary law for children in need of care and protection and children alleged and found to be in conflict with law. The JJ Act, 2015 applies to children who have not completed the age of 18 years and categorizes offences committed by children as petty, serious and heinous offences. Special provisions have been made to tackle child offenders committing heinous offences in the age group of 16-18 years, which will act as a deterrent. The JJ Act provides for setting up of a network of services and structures for ensuring the well being and rehabilitation of such children which includes Juvenile Justice Boards, Special Juvenile Police Units, State and District Child Protection Units, Homes of various types and non institutional care through adoption, foster-care and sponsorship. These measures among other things also intend mainstreaming of children in conflict with law and thereby reducing crimes by the minors. The State Governments/UT Administrations are entrusted with the primary responsibility for implementation of the JJ Act.

The Ministry of Women and Child Development is implementing "Child Protection Services" (CPS) (erstwhile Integrated Child Protection Scheme) with the objective to create a safe and secure environment for overall development of children in need of care and protection and children in conflict with law. The State Governments /UT Administrations are entrusted with the primary responsibility for implementation of the CPS Scheme.

In mp case reported against child juvenile

In 2017 6491
In 2018 5232
In 2019 5522

As per the record given by ministry of home affairs that mp is the largest crime ratio in india against the child juvenile.

Requirement For Change: There is a so much requirement for change in the child juvenile offence . while as per the above data report provided by the central government that in first category the mp is largest crime to be done against child second Maharashtra state and the third state which is covered under this is state of Uttarpradesh. As per to the my requirement there are some point which I considered to be changes in commission of offence against child juvenile delinquency such as:

These are the that activity which I prefer other than the act or law which are applicable towards the child.

1. Requirement of children and parents consoling.
2. Consoling and coordination between children and teacher.
3. Preparation of naukad natak to given information and awareness technique to children
4. Child cell which are working to safeguard the children from domestic violence make proper inspection towards child act.
5. Initiative activity to be performed by the cyber cell and police cell.
6. NGO which are working for child welfare they also do more initiative activity for the welfare of children.
7. Also follow the supreme court decision which is very impactful impact towards society.

Result Analysis: As per the my research it is to be clearly analysis that we have so much requirement of strict rules and regulation although we have different type of law and act applicable in India which are enforced and working but as per the mu opinion we should more provide good consoling to the society towards the crime against child and also be aware and safeguard regarding the any type of offence. In India if we see that there are so many at lest 69% parents and child are illiterate who actually are not aware of such type of offence. We should also approach to the NGO and society they also do the more initiative to great impactful effect of child juvenile crime cenirio. Requirement of new release data of related crime against child juvenile because we have a data only of year 2019.requirement of data from 2019 to 2025.

Conclusion: The critical analysis shows that the juvenile justice system in India has strong legal foundations, but its effectiveness is limited due to implementation challenges. The system needs better infrastructure, trained personnel and a more consistent approach across states to truly achieve its reformative and protective goals. The balance between rehabilitation and accountability remains a central debate in its future development. India's juvenile justice system is designed to address juvenile delinquency, with a focus on rehabilitation and reform rather than punishment. A critical analysis of the system highlights both strengths and significant challenges in its implementation. A 2015 amendment to the Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act introduced a provision to try juveniles aged 16– 18 years as adults for heinous crimes, sparking debate. Critics argue that this undermines the rehabilitative focus of the system, while supporters believe it addresses the gravity of some crimes. Rehabilitation efforts are often inadequate due to poor infrastructure, a lack of trained professionals, and limited resources in juvenile homes. The system struggles with delays in judicial processes, leading to long stays in observation homes, which can negatively affect the mental and emotional health of juveniles.

References:-

1. N.V. Paranjape, Criminology and Penology with Victimology, 580 (Central Law Publications, Allahabad, 15th edn., 2012).
2. Sagnik Datta, Government giving into reactionary ideas, Frontline, The age of unreason, (22nd January, 2016).
3. Available at http://ncrb.gov.in/StatPublications/MAPS-2014/cii-2014%20maps/CII2014-JuvenileCrime.pdf [accessed on 133/07/2025 at 8:10 pm]
4. S. 2(35), The Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015.
5. Oxford university press(2010).Transforming juvenile

system justice reform details and institutional realities examines the ties and competing(Knowles et al. 2018) interest of an early juvenile court and reform school. Historical analysis of newspaper articles and count down is used to examine the creation of the juvenile justice system.

6. Winterdyk, J., Antonopoulos, G. A., & Corrado, R. (2016). Reflections on Norway's juvenile justice model: A comparative context. Crime Prevention and Community Safety.
7. Sharma, D. (2022). An Analytical Study of Juvenile Delinquency in India with Reference to 2021. Legal Research Development: An International Refered e-Journal.
8. Khushi Khandelwal (2020), JUVENILE JUSTICE SYSTEM, Burnished lawjournal.in, VOLUME 1 ISSUE 3 2020 2582-5534
9. Ujjwala Sakhalkar, Dr. Jyoti Dharm, The Juvenile Justice System In India: Reviewing Laws, Policies And Programmes For Children In Need Of Care & Protection. Journal of the Gujrat Research Society, ISSN: 0374-8588 Volume 21 Issue15, December 2019.
10. Deepshikha Agarwal, (2018), JUVENILE DELINQUENCY IN INDIA- LATEST TRENDS AND ENTAILING AMENDMENTS IN JUVENILE JUSTICE ACT, PEOPLE: International Journal of Social Sciences ISSN 2454-5899. Pp-1365-1383 Williams, K. S. (2012) "Criminology", U. K., Oxford University Press.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

किशोर विद्यार्थियों में बढता व्यावसायिक रूचि का रूझान

पूजा कुमार*

* शोधार्थी, मायादेवी इंस्टिटयूट ऑफ एडवासं एजुकेशन, उज्जैन रोड़, देवास (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – व्यावसायिक रुचि से तात्पर्य किसी व्यक्ति की पसंद, और नापसंद के अपने पैटर्न से है, जो किसी दिए गए व्यावसायिक क्षेत्र या व्यवसाय के लिए स्वयं या किसी अन्य स्रोत द्वारा किसी भी तरीके से, बुद्धिमानी से या नासमझी से पसंद किया जाता है। करियर किसी के भी जीवन का एक बहुत ही महत्वपूर्ण पहलू है। शुरुआत में ही किसी विशेष स्ट्रीम में करियर चुनने का छात्र के भविष्य पर लंबे समय तक प्रभाव पड़ता है। किसी भी छात्र के लिए यह बहुत जरूरी है कि वह अपनी रुचि के अनुसार विभिन्न विषयों में से सावधानीपूर्वक विषय का चयन करे। सही विषय का चुनाव सबसे महत्वपूर्ण निर्णयों में से एक है। विषयों में विस्तृत विकल्प हैं इसलिए, वे भ्रमित हैं कि उन्हें अपने सही भविष्य के लिए कौन सा विषय चुनना चाहिए। उनके करियर के लिए सही विषय का चयन करना बहुत मुश्किल काम है। इस स्तर पर छात्रों को उचित मार्गदर्शन की सख्त जरूरत है। मार्गदर्शन के स्रोत स्कूल के प्रशासक और कर्मचारी, वरिष्ठ नागरिक, मित्र, माता–पिता, पड़ोसी, प्रिंट और वीडियो मीडिया हैं। उच्चतर माध्यमिक शिक्षा सामान्य शिक्षा प्रणाली में महत्वपूर्ण चरण हैं। इस स्तर पर, किशोर विद्यार्थी निर्णय लेते हैं कि उच्च शिक्षा प्राप्त करना है या तकनीकी प्रशिक्षण का विकल्प चुनना है या कार्यबल में शामिल होना है। किसी विषय में रुचि होना एक मानसिक संसाधन है जो सीखने को बढ़ाता है,जिससे बेहतर प्रदर्शन और उपलब्धि प्राप्त होती है। इसलिए शिक्षा और हमारे जीवन के अन्य क्षेत्रों में रुचि सफलता का एक महत्वपूर्ण घटक है। सर्वोत्तम संभव मार्गदर्शन प्रदान करने के लिए, किसी व्यक्ति के शैक्षिक लक्ष्यों के बारे में जितना संभव हो उतना जल्दी सीखना महत्वपूर्ण है। जिससे वह उज्जवल भविष्य का निर्माण कर सकें।

प्रस्तावना – सिंह (2014) के अनुसार, व्यावसायिक रुचि किसी की प्राथमिकताओं, योग्यताओं, पसंद और नापसंद का अपना पैटर्न है, जिसे किसी व्यावसायिक क्षेत्र या व्यवसाय के लिए स्वयं या किसी अन्य स्रोत द्वारा बुद्धिमानी से या नासमझी से किसी भी तरह से पसंद किया जाता है। व्यावसायिक अभिरुचि का अर्थ आमतौर पर वह व्यवसाय है जिसमें व्यक्ति की रुचि होती है। व्यावसायिक रुचियाँ उस डिग्री को दर्शाती हैं जिस हद तक व्यक्ति कुछ निश्चित कैरियर विकल्पों या गतिविधियों/व्यवहारों को पसंद करते हैं जो विभिन्न पदों के लिए सामान्य हो सकते हैं। (शेमर, 2016)। स्ट्रॉन्ग (1954) के अनुसार, व्यवसाय का चुनाव उन बहुत महत्वपूर्ण निर्णयों में से एक है जो एक व्यक्ति को अपने लिए करना चाहिए और यह चुनाव एक साधारण घटना के बजाय एक लंबी प्रक्रिया है। व्यावसायिक रुचि और विकल्प किशोरावस्था के दौरान अचानक प्रकट नहीं होते हैं, बल्कि वे विकासात्मक प्रक्रिया के परिणामस्वरूप प्रकट होते हैं। व्यावसायिक रुचि एक एकल विकल्प के रूप में नहीं है, बल्कि कई रुचियों का योग है जो किसी भी तरह से व्यावसायिक करियर पर प्रभाव डालती है। जो लोग अपनी क्षमता के अनुसार अपना करियर नहीं चुनते हैं, वे खराब योग्यता के कारण असफलता का शिकार होते हैं। (कोचर, 1984) व्यावसायिक रुचि के उपायों के विकास का उद्देश्य युवा व्यक्ति के झुकाव का आकलन करना है ताकि उसे ऐसे व्यवसाय के चुनाव में सहायता मिल सके जो उसके हितों को बनाए रखेगा, व्यक्तिगत रूप से संतुष्ट करेगा और उसे अपने पूरे कामकाजी जीवन में उपयोगी रूप से नियोजित रखेगा। लोगों को ऐसा करियर ढूंढने में मदद करने के प्रयास में, जो उन्हें सबसे अधिक खुशहाल बनाएगा, कई हाई स्कूल अब कुछ प्रकार की व्यावसायिक रुचि सूची का प्रबंधन करते हैं। व्यावसायिक रुचि सूची एक परीक्षण है जिसका उपयोग लोगों को उनकी रुचियों और उनसे मेल खाने वाले क्षेत्रों की पहचान करने में मदद करने के लिए किया जाता है। कुछ मामलों में, वे वहां तक पहुंचने के लिए एक मार्ग की रूपरेखा तैयार करने में भी मदद कर सकते हैं, जिसमें वांछनीय कॉलेज की बड़ी पढ़ाई या आवश्यक कार्य अनुभव शामिल है। लक्ष्य हर किसी को इस प्रश्न का उत्तर देने में मदद करना है कि मैं क्या बनना चाहता हूँ? (शेमर, 2016) पाठ्य सहगामी गतिविधियाँ व्यावसायिक हितों में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।माध्यमिक विद्यालयों द्वारा संचालित सह–पाठ्यचर्या संबंधी गतिविधियाँ वे तरीके और साधन हैं जिनसे विद्यालय माध्यमिक विद्यालय के छात्रों की रुचियों, प्रतिभाओं और क्षमताओं की पहचान कर सकता है। माध्यमिक विद्यालय स्तर पर, छात्र सहपाठियों, दोस्तों और माता–पिता के साथ साझा करते हैं कि वे भविष्य में क्या बनना चाहते हैं? छात्र केवल साथियों, दोस्तों और माता–पिता के प्रभाव के कारण किसी की रुचियों और क्षमताओं के आधार पर कुछ व्यवसायों को पसंद करते हैं, लेकिन ऐसा नहीं है। इसलिए, माध्यमिक विद्यालय स्तर पर व्यावसायिक हितों का मूल्यांकन महत्वपूर्ण है, क्योंकि मूल्यांकन छात्रों को हितों के व्यावसायिक क्षेत्रों का पता लगाने का अवसर प्रदान करता है और दूसरी ओर शिक्षकों को छात्रों के व्यावसायिक हितों से संबंधित यथार्थवादी डेटा प्राप्त होता है। यह जानना कि छात्र भविष्य में क्या बनना चाहता है, शिक्षकों और स्कूल के लिए माध्यमिक विद्यालय स्तर पर महत्वपूर्ण है, व्यावसायिक मार्गदर्शन विशेष रूप से उन छात्रों को प्रदान किया जा सकता है जिनकी रुचियाँ अच्छी तरह से मेल नहीं खाती हैं या क्षमताओं के साथ संरेखित नहीं होती हैं। छात्रों को गणित और विज्ञान पसंद नहीं हो

सकता है, लेकिन वे इंजीनियरिंग को व्यावसायिक रुचि के रूप में व्यक्त करते हैं क्योंकि उनका दोस्त इंजीनियर बनना चाहता है। इसलिए, माध्यमिक विद्यालय के शिक्षकों के लिए मार्गदर्शन और परामर्श में प्रशिक्षण आवश्यक है ताकि शिक्षक पेशेवर तरीके से मामले को संभालने में सक्षम हो सकें। काम की दुनिया में जटिलता माध्यमिक विद्यालयों में प्रशिक्षित शिक्षकों या शिक्षक–परामर्शदाताओं की आवश्यकता की मांग करती है ताकि शिक्षा के इस महत्वपूर्ण चरण में छात्रों को प्रभावी मार्गदर्शन और परामर्श प्रदान किया जा सके।

व्यवसायिक रुचियों की विशेषताएं:

1. व्यवसायिक रूचि एक महान प्रेरक शक्ति है जो व्यक्ति को संज्ञानात्मक, सकारात्मक या भावात्मक व्यवहार में संलग्न होने के लिए राजी करती है।
2. व्यवसायिक रुचि और ध्यान एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं।
3. व्यवसायिक रुचियाँ जन्मजात होने के साथ–साथ अधिग्रहित स्वभाव भी हैं।
4. किसी की व्यवसायिक रुचि का पीछा करना हमेशा संतोषजनक होता है। करने में व्यक्ति की मदद करता है उसके द्वारा निर्धारित लक्ष्यों और उद्देश्यों को समझें।
5. सीखने में पठारों की पुनरावृत्ति। वे किसी व्यक्ति को थकान का प्रतिरोध करने और असफलता से बचने के लिए पर्याप्त शक्ति भी देते हैं।

सीखने के लिए छात्र के बीच व्यवसायिक रुचि कैसे पैदा करें:

1. सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार: प्रशिक्षक के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वह अपनी कक्षा के प्रति करुणा और देखभाल प्रदर्शित करे। यह न केवल छात्र को अपना ध्यान अपनी पढ़ाई पर केंद्रित करने में मदद करेगा, बल्कि यह छात्र द्वारा अध्ययन की जा रही विषय वस्तु में रुचि पैदा करने की दिशा में भी एक लंबा रास्ता तय करेगा।

2. छात्रों के बौद्धिक स्तर को समझना: बच्चों के बौद्धिक स्तर को ध्यान में रखना जरूरी है। जब शिक्षा की बात आती है, तो व्यक्तिगत मतभेदों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

3. सहज संचार: यह शिक्षक का उत्तरदायित्व है कि वह सूचना को ऐसे तरीके से प्रदान करे जो छात्रों को आसानी से समझ में आ जाए। इसके उपयोग से छात्र ज्ञान और तथ्य प्राप्त कर सकेंगे। उनकी जिज्ञासा बढ़ेगी, और परिणामस्वरूप वे जो सीख रहे हैं, उस पर वे अधिक ध्यान देंगें।

4. करके सीखना: क्योंकि बच्चों की खेल में सहज रुचि होती है, खेल पर आधारित शिक्षा की एक पद्धति को शिक्षण रणनीति के रूप में उपयोग किया जाना चाहिए। छात्रों को उनके शैक्षणिक कार्यों में रुचि दिखाने की अधिक संभावना है यदि उन्हें खेल पर आधारित दृष्टिकोण का उपयोग करके पढ़ाया जाता है।

5. खाली समय और विश्राम: छात्र सीखने और खेलने दोनों से थक जाते हैं और यह थकान उनके उत्साह को कम कर देती है। नतीजतन, विश्राम और अवकाश के समय के लिए पर्याप्त प्रावधान करना आवश्यक है।

6. विषयों की अदला–बदली करें: क्योंकि विद्यार्थियों का ध्यान सीमित है, एक ही विषय के निर्देश पर अत्यधिक समय खर्च करना उत्पादक नहीं होगा। इसलिए, शिक्षक को उपलब्ध समय को ध्यान में रखते हुए विभिन्न विषयों को पढ़ाने के लिए स्कूल कार्यक्रम की योजना बनानी चाहिए।

7. परियोजना आधारित ज्ञान: बच्चों में विभिन्न प्रकार की गतिविधियों के लिए अंतर्निहित जिज्ञासा होती है। विद्यार्थियों के लिए सीखने का सबसे प्रभावी तरीका व्यावहारिक अनुभव है, इसलिए इसे सुविधाजनक बनाने के लिए हर संभव प्रयास किया जाना चाहिए। इसके परिणामस्वरूप वे अपने काम पर अधिक ध्यान दे पाएंगे।

व्यवसायिक शैक्षिक रुचि के आयाम:

1. खेती–बाड़ी: कृषि हित क्षेत्र में खाद, पशुपालन, खेती, फलसंरक्षण, डेयरी, कृषि विस्तार, पशु चिकित्सा विज्ञान, ग्रामीण समाजशास्त्र, कृषि वनस्पति विज्ञान और अन्य संबंधित विषयों और गतिविधियों का अध्ययन शामिल है।

2. गृह विज्ञान: सामान्य गृह विज्ञान, गृह बजट की तैयारी, स्वच्छता, खाना पकाने, गृह प्रबंधन, गृह सज्जा, सिलाई, कढ़ाई, बुनाई, बच्चों की देखभाल, और संगीत नृत्य कुछ ऐसे विषय हैं जो गृह विज्ञान की छत्रछाया में आते हैं।

3. मानविकी: हिंदी, तर्कशास्त्र, इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, अंग्रेजी साहित्य, नृविज्ञान, दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र, शिक्षा, मनोविज्ञान और नागरिक शास्त्र जैसे विषय, अध्ययन क्षेत्रों के उदाहरण हैं जो मानविकी छत्र के अंतर्गत आते हैं।

4. विज्ञान: विज्ञान के अध्ययन में रसायन विज्ञान, भौतिकी, प्राणीशास्त्र, वनस्पति विज्ञान, भूविज्ञान, मौसम विज्ञान, परमाणुओं का विज्ञान, गणित, शल्य चिकित्सा, स्वास्थ्य विज्ञान, शरीर विज्ञान, सामान्य विज्ञान, और कई अन्य विषयों सहित विषयों की एक विस्तृत श्रृंखला शामिल है।

5. ललित कला: मूर्तियां, संगीत, गीत, खिलौना बनाना, काष्ठकला, कला, ड्राइंग और पेंटिंग, सजावट की कला, नृत्य, आदि सभी विषयों या गतिविधियों के उदाहरण हैं जो रुचियों की 'ललित कला' श्रेणी के अंतर्गत आते हैं।

6. तकनीकी: फिटर का काम, इलेक्ट्रिकल, मैकेनिकल, और सिविल इंजीनियरिंग, वेल्डिंग, इंजीनियरिंग–ड्राइंग, रेडियोएटीवी इंजीनियरिंग, अनुप्रयुक्त गणित, भारतीय प्रौद्योगिकी, सामान्य तकनीक, गणित विज्ञान, आदि ऐसे विषयों और गतिविधियों में से हैं, जो प्रौद्योगिकी क्षेत्र को रुचिकर बनाते हैं।

कैरियर मार्गदर्शन एवं परामर्श की अवधारणा – कैरियर मार्गदर्शन और परामर्श व्यक्तियों को सूचित शैक्षिक और व्यावसायिक विकल्प बनाने और लागू करने में सहायता करने के लिए व्यापक और विकासात्मक दृष्टिकोण को संदर्भित करता है। यह एक स्थापित वैज्ञानिक प्रथा है जो एक छात्र के स्कूल से उच्च शिक्षा और फिर उच्च शिक्षा से व्यवसायों में संक्रमण के लिए सुविज्ञ विकल्प चुनने पर आधारित है। कैरियर मार्गदर्शन और परामर्श में दीर्घकालिक पद्धतिगत आत्म–मूल्यांकन शामिल है। यह किसी व्यक्ति की शैक्षिक और व्यावसायिक विकल्पों के आत्म–अन्वेषण के साथ–साथ उसके करियर के बारे में निर्णय लेने की क्षमताओं को विकसित करने में मदद करता है। प्रारंभ में, कैरियर मार्गदर्शन और परामर्श को उन व्यक्तियों पर लक्षित अभ्यास माना जाता था जो उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं और साथ ही जो कार्यरत हैं। लेकिन कामकाजी दुनिया और शिक्षा में तेजी से बदलते परिदृश्यों के साथ, स्कूली छात्रों के लिए भी करियर मार्गदर्शन और परामर्श की आवश्यकता बेहद महत्वपूर्ण हो गई है। एक सफल करियर की ओर यात्रा सही विषयों और स्ट्रीम या पाठ्यक्रम के चयन से शुरू होती है। माध्यमिक विद्यालय स्तर पर व्यावसायिक मार्गदर्शन और व्यक्तिगत समर्थन न केवल

सही करियर विकल्प के साथ सरेखित होगा, बल्कि सही करियर स्ट्रीम की ओर भी ले जाएगा। कैरियर काउंसलिंग की अवधारणा ने अभी भी भारतीय समाज में गति नहीं पकड़ी है और छात्रों को अक्सर उनके ग्रेड के आधार पर वैज्ञानिक स्ट्रीम की ओर निर्देशित किया जाता है। छात्र अपने आसपास जो देखते हैं उसके आधार पर अपने करियर का चुनाव करते हैं या अपने माता-पिता के करियर का अनुसरण करते हैं क्योंकि वे केवल उसी के बारे में जानते हैं या कहीं और फिट होने की कोशिश करते हैं जो उन्होंने शायद टेलीविजन पर देखा है। इसके परिणामस्वरूप स्कूल छोड़ना, अस्वस्थ वयस्क जीवन और खराब व्यावसायिक विकल्प बनते हैं।

कैरियर काउंसलिंग एक छात्र की शिक्षा में सहायता करती है। करियर काउंसलिंग अब कोई विकल्प नहीं है। हर दिन हर क्षेत्र में बढ़ती प्रतिस्पर्धा के साथ, छात्रों को अपने हितों को अपने करियर के साथ जोड़ना चाहिए और इसे जल्द से जल्द शुरू करना चाहिए। लेकिन अक्सर ऐसा समय आता है जब उन्हें एहसास होता है कि रास्ता हितों के साथ बिल्कुल बेमेल है और पेशेवर जीवन में चीजें बिखरने लगती हैं। हालाँकि, अगर शुरुआत से ही उचित मार्गदर्शन उपलब्ध कराया जाए, अगर छात्रों के सामने सभी विकल्प पूरी जानकारी के साथ रखे जाएं, तो करियर चुनने की प्रक्रिया उस बिंदु पर शुरू हो सकती है जब गलत चयन के कारण न्यूनतम परिणाम होंगे। (स्वर्णप्रस्थ पब्लिक स्कूल, 2019) वास्तविक क्षमता की पहचान करने और छात्रों को सही करियर पथ की ओर मार्गदर्शन करने के लिए करियर काउंसलिंग एक आवश्यक कारक है। कैरियर परामर्श एक आवश्यकता है क्योंकि अधिकांश छात्र आमतौर पर ज्ञात डोमेन को अपने कैरियर विकल्प के रूप में चुनते हैं। करियर काउंसलिंग छात्रों को उनके स्कूल से ही उनकी रुचि और शिक्षा के क्षेत्र के अनुसार उपलब्ध करियर विकल्पों के बारे में करियर मार्गदर्शन देने का एक प्रयास है। कैरियर काउंसलिंग के माध्यम से, छात्रों के लिए एक विश्लेषण किया जा सकता है जो उनकी रुचियों और उनकी ताकत और कमजोरियों का पता लगाने में मदद करेगा।

माध्यमिक विद्यालय स्तर के लिए स्कूल में ही करियर काउंसलिंग की जानी चाहिए और इससे उन्हें यह तय करने में मदद मिलेगी कि उन्हें कौन सी स्ट्रीम चुननी चाहिए। ऐसा इसलिए है क्योंकि कई छात्र अपने द्वारा चुनी गई स्ट्रीम से संतुष्ट नहीं होते हैं और उसे बदलने की प्रवृत्ति रखते हैंय ऐसा उनकी रुचि और विभिन्न शिक्षा स्ट्रीम के अनुसार उपलब्ध विकल्पों के बारे में उचित मार्गदर्शन के अभाव में होता है।

करियर काउंसलिंग हमेशा से ही महत्वपूर्ण रही है लेकिन हाल ही में इसे वह पहचान मिली है जिसका यह हकदार है। पहले लोग नौकरी मिलने के बाद ही करियर में बदलाव के लिए करियर काउंसलर की तलाश करते थे और इससे नाखुश होते थे। इतना गलत फैसला आमतौर पर स्कूल से उत्पन्न होता है। कई छात्र अपने साथियों के बीच सबसे अधिक चुने गए करियर के आधार पर करियर का चुनाव करते हैं। वे एक बार भी इस बात पर विचार नहीं करते कि उन्हें क्या पसंद है, जब तक कि बहुत देर न हो जाए। यदि छात्र सही पाठ्यक्रम नहीं चुनते हैं, तो यह अनजाने में उनके करियर विकल्प को प्रभावित करेगा। सही करियर खोजने के लिए, यह समझ होनी चाहिए कि कौन सा कोर्स करना है और क्या क्षमताएं रुचियों से मेल खाती हैं।

स्कूल में करियर काउंसलिंग पाठ्यक्रम के चयन में गलत निर्णय लेने पर काबू पाने और छात्रों को ऐसी गलतियाँ करने से रोकने के लिए सही प्रकार की मदद सुनिश्चित करती है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि छात्रों के पास विचारों की स्पष्टता है, सही और नवीनतम सलाह प्राप्त करने के लिए छात्रों को हाई स्कूल में रहने के दौरान हर समय कैरियर परामर्शदाता उपलब्ध कराए जाने चाहिए। हाई स्कूल में लिए गए निर्णय अक्सर किसी छात्र का करियर बनाते या बिगाड़ते हैं। अनुभवी करियर परामर्शदाताओं को छात्रों की सोच और उनकी क्षमता को समझने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है। एक बार जब किसी छात्र की क्षमता समझ में आ जाती है, तो परामर्शदाता छात्र को उसके लिए उपयुक्त सर्वोत्तम करियर का मार्गदर्शन करने में सक्षम होता है और उन्हें निर्णय लेने में मदद करता है जो करियर की सफलता सुनिश्चित करता है। छात्र सफल होना चाहते हैं और उन्हें मदद लेने में कोई आपत्ति नहीं है। वे पहले शर्म महसूस कर सकते हैं या मदद लेने में अपनी कमजोरी सोच सकते हैं, लेकिन उन्हें मजबूत करियर बनाने में मदद करना हमारी जिम्मेदारी है। स्कूलों में करियर काउंसलिंग सेल का होना ऐसा करने की दिशा में पहला कदम है। (गुप्ता जे, 2017)। मूल रूप से, कैरियर परामर्श में वह प्रक्रिया शामिल होती है जिसके द्वारा व्यक्ति एक कैरियर पथ बनाता है जो उसकी अपनी रुचियों, योग्यताओं, आवश्यकताओं और व्यक्तित्व के अनुसार तैयार किया जाता है। एक करियर काउंसलर करियर चयन की प्रक्रिया में मार्गदर्शन करेगा । स्कूल में एक असहाय 16 वर्षीय छात्र को विभिन्न स्ट्रीम की पसंद का सामना करना पड़ता है और उसके पास एकमात्र कैरियर मार्गदर्शन उसके माता-पिता की राय, उसके अंकों के आधार पर उसके शिक्षक का निर्णय और उसके दोस्तों और पड़ोसियों की टिप्पणियां हैं। यह इस बिंदु पर है कि कैरियर परामर्श बच्चे को इस अशांत समय से निपटने में मदद कर सकता है। हालाँकि भारत में बहुत से स्कूल छात्रों को करियर परामर्श नहीं देते हैं और यदि स्कूल में कोई पेशेवर परामर्शदाता नहीं है, जिस चीज के लिए पूरा झुंड जा रहा है, उसके लिए जाने से बेहतर हमेशा पेशेवर मार्गदर्शन लेना बेहतर होता है। शैक्षिक और व्यावसायिक मार्गदर्शन के साथ-साथ शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में प्रत्येक विषय के शिक्षकों द्वारा स्कूल में कैरियर मार्गदर्शन और परामर्श के एकीकरण से छात्रों को अपनी रुचियों और क्षमताओं को समझने में मदद मिलेगी। जब कोई अपनी रुचियों और क्षमताओं को समझता है तो आत्म-बोध के विकास की संभावना अधिक होती है। स्कूलों को आत्म-साक्षात्कार का माध्यम होना चाहिए। आत्म-साक्षात्कार वह अवस्था है जहां कोई व्यक्ति अपने आंतरिक मूल या स्वयं को स्वीकार करने और व्यक्त करने में सक्षम होता है और वहां पाई जाने वाली क्षमताओं और संभावनाओं को साकार करना शुरू कर देता है। परामर्श एक बहुत ही संवेदनशील प्रक्रिया है जिसके लिए मानव मानस की गहरी समझ की आवश्यकता होती है। जो व्यक्ति एक प्रभावी परामर्शदाता बनने का इरादा रखता है उसे पुनश्चर्या पाठ्यक्रम के रूप में न केवल एक बार बल्कि बार-बार कठोर प्रशिक्षण से गुजरना होगा। यह समझते हुए कि परामर्श एक बहुत ही जटिल प्रक्रिया है, एक प्रभावी परामर्शदाता के लिए आवश्यक आवश्यकताएँ दूसरों की मदद करने के इरादे से एक पर्याप्त व्यक्तित्व, परामर्श के लिए पर्याप्त कौशल, एक परामर्शदाता के कर्तव्यों और जिम्मेदारियों का ज्ञान और परामर्श के क्षेत्र में पर्याप्त योग्यताएं हैं। इसलिए, एक प्रभावी परामर्शदाता बनने के लिए माध्यमिक विद्यालय स्तर पर शिक्षकों को परामर्श के क्षेत्र में प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है।

व्यवसायिक रुचि-निर्माण रणनीतियाँ:

शिक्षकों और छात्रों के बीच मजबूत बंधन: पाठ की सामग्री से जुड़ने से पहले छात्र पहले अपने शिक्षकों के साथ बातचीत में शामिल होते हैं। यदि

शिक्षक के दृष्टिकोण, दृष्टिकोण, या व्यवहार के कारण उन्हें अप्रिय भावनाओं का अनुभव होता है, तो विद्यार्थियों के लिए किसी भी गतिविधि में संलग्न होना कठिन होता है, जिसकी सलाहशिक्षक देता है।

1. **उनके ज्ञान का परीक्षण करें:** समस्याएं रुचि को उत्तेजित करती हैं। सच तो यह है कि अगर हम पूरी तरह से छात्रों की सुविधा को प्राथमिकता देंगे तो हम बच्चों को पढ़ाने में कभी सफल नहीं होंगे। छात्रों को पाठ्यक्रम, सामग्री, सीखने की प्रक्रिया और मूल्यांकन में कठिनाई की उचित डिग्री की आवश्यकता होती है। यह सीखने के लिए उनकी प्रेरणा और अंतत: विषय में उनकी सफलता पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।

2. **प्रत्येक विषय की मूल क्षमताओं का निर्धारण करें:** गणित संख्याओं, त्रिकोणों और विभेदीकरण से परे है। ये विषय विद्यार्थियों को आजीवन कौशल प्रदान करते हैं। गणित गणितीय सोच के बारे में है। भाषा संचार में भी सुधार करती है। पढ़ना, लिखना, बोलना और सुनना संचार को बढ़ावा देता है। पेंटिंग रचनात्मकता, नवीनता और अमूर्तता को प्रोत्साहित करती है। शिक्षकों को इन बुनियादी कौशलों और क्षमताओं में छात्रों की रुचि पैदा करनी चाहिए ताकि उन्हें विभिन्न गतिविधियों में व्यस्त रखा जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रावल नटूभाई वी. शिक्षा और व्यवस्थापक में प्रोद्योगिकी (2006) निरव प्रकाशन,अहमदाबाद, (गुजरात)
2. सोनी रामगोपाल, उदयोन्मुख भारतीय समाज के शिक्षा के नये आयाम,(1998), एच.पी.भार्गव बुक हाउस, पुस्तक प्रकाशन एवं वितरक, भार्गव भवन- आगरा।
3. नागार्जुन सी.एम.(2006), शिक्षा अनुसंधान का षश्ठम् सर्वे भाग-1, (1993-2000),नई दिल्ली, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्।
4. कौल लोकेश (2005), शैक्षिक अनुसंधान कार्यप्रणाली , मेरठ, आर.लाल. बुक डिपो।
5. भटनागर, ए, और गुप्ता, एन. 1988, माध्यमिक छात्रों की कैरियर परिपक्वता: का प्रभाव।
6. मार्गदर्शन हस्तक्षेप कार्यक्रम. भारतीय शैक्षिक समीक्षा, 23 (4), 42-50। शिक्षा में अनुसंधान का पांचवां सर्वेक्षण नई दिल्ली: एनसीईआरटी।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

जयसमन्द झील का मेवाड़ के आर्थिक क्षेत्र में योगदान – एक अध्ययन

मोनिका आमेटा* डॉ. पंकज आमेटा**

* शोधार्थी (इतिहास) भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोध निर्देशक (इतिहास) भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – जयसमन्द झील, जिसे ढेबर झील के नाम से भी जाना जाता है, 1687 ई. में महाराणा जयसिंह द्वारा निर्मित एक विशाल कृत्रिम जलाशय है, जिसने मेवाड़ की आर्थिक संरचना को गहराई से प्रभावित किया। इस झील ने निर्माण से लेकर 1947 तक सिंचाई, मत्स्य पालन, पशुपालन, पर्यटन, कुटीर उद्योग और रोजगार जैसे विविध क्षेत्रों में योगदान देकर क्षेत्र की अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान की। कृषि में सिंचित भूमि के विस्तार से लेकर मत्स्य उत्पादन के माध्यम से स्थानीय रोजगार की सृजनता और धार्मिक पर्यटन से व्यापारिक गतिविधियों में वृद्धि तक – जयसमन्द झील ने जनजीवन को विविध स्तरों पर समृद्ध किया। इसके अतिरिक्त, झील ने पर्यावरणीय संतुलन, जलवायु सुधार और पारिस्थितिकीय संवर्धन में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान यह क्षेत्र सामाजिक संगठनों और जनचेतना का केंद्र भी बना। इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि जयसमन्द झील केवल एक जल स्रोत न होकर, मेवाड़ की सामाजिक–आर्थिक प्रगति की आधारशिला रही है।

शब्द कुंजी – जयसमंद झील, परंपरा, आधुनिकता, आर्थिक, सामाजिक आर्थिक विकास, सतत विकास।

शोध प्रविधि– प्रस्तुत शोध पत्र वर्णात्मक और विश्लेष्णात्मक द्रष्टिकोण पर आधारित है। शोध सामग्री को प्रमुख इतिहास पुस्तको तथा ऐतिहासिक लेखन से लिया गया है स प्रस्तुत शोध प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ो पर आधारित है।

शोध के उद्देश्य –प्रस्तुत शोध पत्र निम्न उद्देश्यो पर आधारित है :

1. जयसमंद झील के आर्थिक पहलुओं की पहचान करना।
2. सामाजिक–आर्थिक संरचना का अध्ययन।

भूमिका – मेवाड़, जो राजस्थान की एक प्रमुख ऐतिहासिक और सांस्कृतिक भूमि रही है, प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध रहा है। इसी धरती पर स्थित है जयसमन्द झील – जिसे ढेबर झील भी कहा जाता है – जो भारत की सबसे बड़ी कृत्रिम झीलों में से एक है। इस झील का निर्माण महाराणा जयसिंह ने सन् 1687 में करवाया था। यह झील न केवल वास्तुशिल्प और जल प्रबंधन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि इसके निर्माण से लेकर भारत की स्वतंत्रता (1947) तक, इसने मेवाड़ की अर्थव्यवस्था में भी बहुमुखी योगदान दिया। इस शोध–पत्र में जयसमन्द झील के निर्माण, इसके उद्देश्य, इसके सामाजिक–आर्थिक प्रभाव, कृषि, मत्स्य, पर्यटन, व्यापार, श्रम और स्थानीय जीवन पर प्रभाव का गहन अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

1. निर्माण का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य – महाराणा जयसिंह ने 17वीं शताब्दी में अकाल और जल संकट से जूझते मेवाड़ क्षेत्र के दीर्घकालिक समाधान के लिए इस झील का निर्माण करवाया। गोमती नदी पर बना यह जलाशय लगभग 87 वर्ग किमी क्षेत्रफल में फैला हुआ है। इसके निर्माण में लगभग 15,000 श्रमिकों ने वर्षों तक कार्य किया। यह झील जल संचयन, सिंचाई, मछली पालन, परिवहन और जनकल्याण का आधार बनी।

2. कृषि क्षेत्र में योगदान – झील के निर्माण के बाद आस–पास के क्षेत्रों में सिंचाई सुविधा उपलब्ध होने लगी, जिससे कृषक वर्ग की स्थिति में आमूलचूल परिवर्तन हुआ।

- **सिंचित भूमि का विस्तार–** लगभग 50,000 एकड़ भूमि झील से सिंचित होती थी।
- **फसलों की विविधता–** गेहूं, जौ, चना, सरसों जैसी फसलों के साथ–साथ मौसमी सब्जियों की पैदावार भी बढ़ी।
- **जल संसाधन सुरक्षा–** वर्षा पर निर्भरता कम हुई और दो फसलों का प्रचलन बढ़ा।

3. मत्स्य पालन एवं पशुपालन में भूमिका– जयसमन्द झील ने मत्स्य व्यवसाय को स्थानीय अर्थव्यवस्था में एक नया स्तंभ प्रदान किया।

- **मछली उत्पादन–** झील में रोहू, कतला, सिल्वर कार्प आदि प्रजातियों की प्राकृतिक वृद्धि होने लगी।
- **स्थानीय रोजगार–** मत्स्यपालन से लगभग 150 परिवारों को प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से रोजगार मिला।
- **पशुपालन में जल उपलब्धता–** चरागाहों की स्थिति सुधरी और दूध उत्पादन बढ़ा।

4. पर्यटन एवं धार्मिक गतिविधियाँ – झील का सौंदर्य और सांस्कृतिक महत्व पर्यटन को भी बढ़ावा देने में सहायक रहा।

- **घाट और मंदिर–** झील के किनारे स्थित मंदिर और घाट धार्मिक पर्यटन का केंद्र बने।
- **राजसी यात्राएँ और मेलों का आयोजन–** उत्सवों में बड़ी संख्या में व्यापारियों और तीर्थयात्रियों की उपस्थिति।
- **नाव संचालन और मनोरंजन–** स्थानीय नाविकों और शिल्पकारों को आजीविका का साधन मिला।

5. व्यापार और कुटीर उद्योगों पर प्रभाव

- **जलमार्ग उपयोग–** झील के माध्यम से सीमित जल परिवहन संभव हुआ जिससे वस्त्र, मसाले और अन्य व्यापारिक वस्तुएँ आसपास के गांवों तक पहुँचीं।
- **कुटीर उद्योगों को जल आपूर्ति –** रंगाई–छपाई, बर्तन निर्माण, मछली सुखाने आदि पारंपरिक उद्योग फले–फूले।

6. रोजगार सृजन और श्रमिक कल्याण

- **निर्माणकालीन रोजगार–** झील के निर्माण में हजारों लोगों को रोजगार मिला।
- **स्थायी कार्य–** रखरखाव, मछलीपालन, नावचालन, घाट निर्माण आदि के लिए स्थायी श्रमिक वर्ग विकसित हुआ।

7. सामाजिक–आर्थिक संरचना में परिवर्तन

- **जनसंख्या का पुनर्विन्यास–** झील के आसपास नई बस्तियों और ग्रामों की स्थापना हुई।
- **संवृद्धि का प्रसार–** झील क्षेत्र के गांव अधिक समृद्ध और शिक्षित बने।
- **महिलाओं की भागीदारी–** मछली सुखाने, दूध विपणन, धार्मिक यात्राओं में सेवा आदि कार्यों में महिलाएं भी आर्थिक गतिविधियों में शामिल हुईं।

8. राज्य की राजस्व नीति पर प्रभाव

- **जल कर और मत्स्य कर–** झील से अर्जित आय राज्य के राजस्व में सहयोगी रही।
- **भूमि कर–** सिंचित भूमि के माध्यम से कर–संग्रह बढ़ा।
- **व्यापारिक शुल्क–** धार्मिक पर्यटन और मेलों से वाणिज्यिक शुल्क में वृद्धि।

9. पर्यावरणीय एवं पारिस्थितिकीय प्रभाव

- **जलवायु संतुलन–** झील क्षेत्र का तापमान अन्य शुष्क क्षेत्रों से कम रहा।
- **हरित क्षेत्र में वृद्धि–** वनस्पतियों और जीव–जंतुओं की विविधता में वृद्धि हुई।
- **स्थानीय पारिस्थितिकी का संरक्षण–** जल स्रोतों का पुनर्भरण, पक्षियों का प्रवास, और जैव विविधता का संवर्धन।

10. स्वतंत्रता संग्राम और झील का योगदान:

- **जन संगठनों का सहयोग केंद्र–** झील क्षेत्र में कई स्वतंत्रता सेनानी एकत्र होते थे।
- **जल संपदा पर नियंत्रण हेतु जन–आंदोलन–** 1940 के दशक में ग्रामीणों द्वारा जल–संसाधन पर अधिकार और उपयोग हेतु जागरूकता अभियान शुरू हुए।

आर्थिक विश्लेषण पर आधारित तालिकाएँ –

1. झील से जुड़ी आर्थिक व्यवसाय गतिविधियाँ :

व्यवसाय	सम्बंधित व्यवसाय से जुड़े लोगो का प्रतिशत
1. पर्यटन	45%
2. मछली पालन	40%
3. कृषि सिचाई	10%
4. होटल व्यवसाय	05%
5. हस्तशिल्प	–

तालिका की व्याख्या– यह तालिका झील से जुड़ी विभिन्न आर्थिक गतिविधियों और उनमें संलग्न लोगों के प्रतिशत को दर्शाती है। इसमें यह बताया गया है कि झील क्षेत्र में किन–किन व्यवसायों का विकास हुआ है और स्थानीय जनसंख्या इनमें किस हद तक भागीदारी निभा रही है।

1. पर्यटन (45%)– झील का प्राकृतिक सौंदर्य और सांस्कृतिक महत्व पर्यटन को बढ़ावा देता है। नाव विहार, गाइडिंग, सांस्कृतिक आयोजन, ट्रांसपोर्ट, फोटोग्राफी, स्मृति चिह्न विक्रय आदि क्षेत्रों में 45% लोग कार्यरत हैं। यह व्यवसाय सबसे अधिक लोगों को रोजगार देता है।

2. मछली पालन (40%)– झील का जल क्षेत्र मछली पालन के लिए अनुकूल है। यहाँ मछली पालन एक महत्वपूर्ण व्यवसाय है जिसमें लगभग 40% स्थानीय लोग संलग्न हैं। यह व्यवसाय घरेलू उपभोग के साथ–साथ बाजार की मांग को भी पूरा करता है।

3. कृषि सिंचाई (10%) – झील के जल का उपयोग आसपास की कृषि भूमि की सिंचाई के लिए किया जाता है। यह विशेषकर रबी और खरीफ फसलों की सिंचाई में सहायक होता है। लगभग 10%लोग इससे अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े हुए हैं।

4. होटल व्यवसाय (5%) – पर्यटन को बढ़ावा देने के साथ–साथ होटल व्यवसाय में भी विकास हुआ है। स्थानीय स्तर पर छोटे होटल, लॉज, गेस्ट हाउस एवं भोजनालय खुल गए हैं, जिनमें 5% लोग रोजगार प्राप्त कर रहे हैं।

5. हस्तशिल्प (–) – इस क्षेत्र में अभी हस्तशिल्प से बहुत कम या कोई विशेष गतिविधि नहीं है। हालाँकि, भविष्य में यदि हस्तशिल्प और स्थानीय उत्पादों को बढ़ावा दिया जाए तो यह क्षेत्र भी आर्थिक रूप से उभर सकता है।

निष्कर्ष– यह तालिका स्पष्ट रूप से झील से जुड़ी आर्थिक गतिविधियों में पर्यटन और मछली पालन की प्रमुखता को दर्शाती है। झील न केवल प्राकृतिक संसाधन है, बल्कि स्थानीय लोगों के लिए जीविका का एक मजबूत आधार भी है। यदि हस्तशिल्प और कृषि से संबंधित योजनाओं को बढ़ावा दिया जाए तो झील से जुड़ी आजीविका के और अधिक द्वार खुल सकते हैं।

2. झील से जुड़ी आर्थिक व्यवसाय से लाभान्वितों की संख्या

श्रेणी	संख्या	प्रतिशत (%)
पर्यटन से लाभान्वित	40	66.7%
कृषि से लाभान्वित	50	83.3%
रोजगार प्राप्त	45	75%
पर्यावरणीय समस्या अनुभव	30	50%

तालिका की व्याख्या–

1. पर्यटन से लाभान्वित (66.7%) – यह दर्शाता है कि झील के आस–पास रहने वाले लगभग दो–तिहाई लोग पर्यटन से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से लाभान्वित हो रहे हैं। इसमें नाव चलाने वाले, गाइड, स्मृति चिन्ह बेचने वाले, स्थानीय दुकानदार, आदि शामिल हो सकते हैं।

2. कृषि से लाभान्वित (83.3%) – झील का जल कृषि सिंचाई के लिए उपयोग में लाया जाता है, जिससे सर्वाधिक (83.3%) लोग लाभान्वित हो रहे हैं। यह दर्शाता है कि झील का प्रमुख उपयोग कृषक समुदाय द्वारा किया जाता है।

3. रोजगार प्राप्त (75%) – लगभग 75% लोग झील से संबंधित विभिन्न क्षेत्रों जैसे पर्यटन, मत्स्य पालन, कृषि, होटल, ट्रांसपोर्ट आदि से

प्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्राप्त कर रहे हैं। यह स्थानीय आर्थिक विकास की दिशा में एक सकारात्मक संकेत है।

4. पर्यावरणीय समस्या अनुभव (50%) – लगभग आधे लोगों ने झील क्षेत्र में पर्यावरणीय समस्याओं (जैसे जल प्रदूषण, अवैध निर्माण, प्लास्टिक कचरा, आदि) का अनुभव किया है। यह संकेत करता है कि विकास के साथ-साथ संरक्षण भी आवश्यक है।

निष्कर्ष – इस तालिका से स्पष्ट होता है कि झील का आर्थिक क्षेत्र में योगदान अत्यधिक है। कृषि और पर्यटन दो ऐसे क्षेत्र हैं जो सबसे अधिक लाभ पहुँचा रहे हैं, वहीं पर्यावरणीय चुनौतियाँ भी सामने आ रही हैं, जिन्हें दूर करना आवश्यक है।

निष्कर्ष – जयसमन्द झील महज एक जलाशय नहीं, बल्कि मेवाड़ की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक धुरी रही है। इसके निर्माण ने न केवल तत्कालीन संकटों का समाधान प्रस्तुत किया, बल्कि आने वाले तीन शताब्दियों तक क्षेत्रीय विकास की आधारशिला रखी। सिंचाई, मछलीपालन, पर्यटन, रोजगार, पर्यावरणीय संतुलन और प्रशासनिक व्यवस्था सभी पर इस झील का गहरा प्रभाव पड़ा। 1947 तक यह झील मेवाड़ की अर्थव्यवस्था के लिए एक जीवनदायिनी धरोहर बनी रही। इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि जल-संरचना यदि जनकल्याण के साथ जुड़ी हो, तो वह केवल संसाधन नहीं, बल्कि समृद्धि का प्रतीक बन जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शेखावत, रणजीतसिंह। राजस्थान की जल-संरचना एवं भू-जल संसाधन (जयपुर: राजस्थान प्रकाशन मण्डल, 2003)
2. शर्मा, गंगाराम। मेवाड़ का इतिहास (उदयपुर: भारतीय इतिहास परिषद, 1985)
3. भटनागर, आर.पी. *Water Architecture in Ancient India* (New Delhi: Aryan Books International, 1998)
4. राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बापू बाजार, उदयपुर (जल प्रबंध, मत्स्य व्यवसाय और सिंचाई के ऐतिहासिक दस्तावेज)
5. Mewar State Revenue Records (1687-1947) (संपादक: Mewar Archives Department, उदयपुर)
6. राजस्थान पर्यटन विभाग। जयसमन्द झील पर आधारित सांस्कृतिक एवं पर्यावरणीय रिपोर्ट (जयपुर: पर्यटन एवं धरोहर मंत्रालय, 2001)
7. Jain, K.K.राजस्थान में कुटीर उद्योग और ग्रामीण अर्थव्यवस्था (अजमेर: ग्रामीण विकास संस्थान, 1990)
8. Udaipur District Gazetteer (Government of Rajasthan, 1969 edition)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

An Analytical Study of Selected Indices of Bombay Stock Exchange (During COVID -19)

Dr. Sanjay Johari* Deepika Badiya**

* Professor (Commerce) Govt. Mata Jijabai Girls P.G. College, Indore (M.P.) INDIA
** Research Scholar, Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA

Abstract: Covid-19 is a global pandemic, started from China and spread all over of the world. The World Health Organization (WHO) declares Covid-19 epidemic as global pandemic on 11 of March 2020.Covid-19 outbreak affect the all spare of life all over the world. The pandemic effect economic as well as social life of the human beings. The stock market is popularly called as barometer of an economy and the economy like India also affected by the Covid-19.The sole purpose of this paper is to study the impact of Covid-19 on Indian stock market specifically Bombay Stock Exchange (BSE).Bombay Stock Exchange (BSE) is one of the best and systematic stock exchanges of the world. It is the most modern stock exchange of India. So, BSE is selected for the purpose of the study. The Covid-19 lockdown lead to sentiment in the stock markets across the word is gloomy. It has been reflected in the frequent crashes in the share markets in all parts of the world. Financial markets in India are witnessed sharp volatility in stock market indices due to fall in line with the global benchmark indices as the domestic market usually tracks the major global indices and the high volatility in likely to continue. In India BSE (Bombay Stock Exchange) is considered as oldest stock exchange and Sensex is its Major index. In this study attempt is made to identify the impact of covid-19 lockdown on Sensex and its selected sub-indices. Time period of this study is selected as before lockdown two months and after lockdown two month has been selected. For identification of impact paired t-test has been used as statistical tool. The major finding of the study indicated as significant negative impact of covid-19 lockdown is recorded on Sensex and its sub-indices. The Study is based on secondary data purely. The study used simple statistical tools like percentage and average to check the performance of selected indices during and before the outbreak of the Covid-19 pandemic.
Keywords: Covid-19, Bombay Stock Exchange (BSE),Sensex.

Introduction - Bombay stock exchange is the first ever stock exchange in Asia established in 1875. The company serving their product and service over the past 143 years andthe country to be granted permanent recognition under the securities contract regulation act, 1956. The Bombay stock exchange lists near about 6,000 companies and it is one of the largest exchanges in worldwide stock exchanges. The basic functions of Bombay stock exchanges is helped develop India's capital markets with the help of retail debt market and also help to grow and sustain Indian corporate sectors. BSE consist of equities trading platform for small and medium enterprise. It is also diversify their business from capital market to clearing, settlement, and risk management.On December 31 2019, the outbreak of Novel Coronavirus came to light when China informed to the World Health Organization (WHO) about the cluster of cases of pneumonia of an unknown cause in Wuhan city in Hubei province. By mid-January 2020, the disease spread quickly to other parts of China. The WHO declared a global emergency on 30th, January 2020, which was only the sixth time that such type of global emergency had been announced by the WHO. By assessing the risk of spread and severity, the WHO declared the outbreak to be a global pandemic on March 11 2020 and the virus has been named SARS-CoV-2 or COVID-19. As, of June 24 2020 over 176 countries have been affected and the number of cases in the world has increased to approximately 92 lakhs, with a fatality of more than 4 lakhs. As the COVID 19 spread from a regional crisis to global pandemic it not only affected economic activities and production but also impacted financial markets worldwide. Equities plummeted and market volatility shot upwards the world over.

Literature review

(Aravind M, 2020) have studied covid: 19effects on leading pharmaceutical stocks listed with NSE. For the study researcher selected ten leading pharmaceutical companies listed on NSE, these companies are selected based on market capitalisation of the companies. For this study general hypothecation was pharmaceutical stock will the general market trade or it has no effect and study period considered as pre and post covid-19 period should be considered. The data are selected of 123 daily price

observations of the selected pharmaceutical companies. Time span in dated as 3rd September 2019 to 28th February 2020. The major findings of the study indicated momentum effect is persisting with selected stock and it was moving in accordance with general benchmarking index but AurobindoPharma and Lupin Ltd reported with varied return trend during the study period. This study identified strong reputed companies like Sun pharma, Cipla, Glenmark were seems to be sustaining in the crisis period in spite of general falling market trend.

(FerrazZeren, 2020) In this study they identified the impact of covid-19 Corona Virus on stock markets: evidence from selected countries. The aim of this study was reveal possible effect of covid-19 epidemic on stock markets. Time period of the study as 23rd January 2020 and 13th march 2020 should be considered. For identification of possible impact Maki (2012) co integration test should be used. For obtaining result all selected stock market examined with total death act together in long run. The major finding of the study indicated that total cases have co integration relationship of SSE, KOSPI and IBEX35 but there is no relationship with FTSE, MIB, CAC40 and DAX30. Researcher suggested that to avoid investment in stock market and divert flow of investment to Gold markets because as per researcher it is safe for investment.

(Haiyue Liu, 2020) have analysed the Covid-19 outbreak and affected countries stock markets response. In this paper researcher studied short term impact of Covid-19 outbreak on 21 leading stock market indices in major affected nations namely Japan, Korea, Singapore, USA, Germany, Italy and UK etc. The covid-19 epidemic directly affected to stock markets in worldwide. In this study for findings event study method used and it was indicated that major stock market countries affected and area fell quickly after the covid-19 break. Out of selected nations specifically Asian countries experienced strong negative abnormal return as compared to other selected nations. Statistical tool like panel fixed regression model also support the adverse effect of covid-19 confirmed cases on stock indices and with these abnormal returns through this channel obtained and in investor think on pessimistic sentiments on future returns.

Objectives of the study:

1. To identify impact Of Covid-19 on Bombay Stock Exchange Sub-Indices.
2. To analyse trend of Bombay Stock Exchange sub-indices.

Research methodology: Research Methodology has been differ from study to study and it is give indicate path to researcher that how to conduct research on selected problem. For study following methodology should be used.

Period of the study: The time spans of study should be considered as 24th January to 24th April in which before 2 months of lockdown and after 2 months of lockdown are take to consideration for identification of impact on sub BSE indices.

Scope of the study: Functional Scope: Functional scope of the study is identify whether covid-19 lockdown was effected on selected BSE sub-indices or not and with the help of paired t-test.

Selection of indices: The probability sampling technique has been used for selection of indices in which out of total indices BSE Senses, BSE Sensex50, BSE Sensex 200, BSE Bharat 22, BSE 250 Small cap, BSE 150 Mid Cap, BSE 250 Large Mid Cap and BSE Next 50 selected.

Data collection: The data are use for this study is Secondary nature data in which various stock exchange websites, newspapers, news articles have been used for analysis and interpretation of data.

Table 1: Data analysis and interpretation

BSE Indices	Before Lock down period			After Lockdown Period		
	24-Jan.	24-Feb.	Aver	24-Mar.	24-Apr.	Aver
BSE Sensex	41613	40363	40988	26674	31327	29001
BSE Sensex 50	12840	12394	12617	8161	9594	8878
BSE Sensex200	5163	4989	5076	3280	3862	3571
BSE Bharat 22	3264	3065	3165	1905	2190	2048
BSE 250 Small Cap	2194	2111	2153	1231	1468	1350
BSE 150 MidCap	5103	5006	5055	3220	3713	3467
BSE 250 Cap LargeMid	4874	4710	4792	3095	3642	3369
BSE Next 50	32668	31320	31994	20683	24718	22701

(Source: www.bseindia.com)

Above table indicated BSE Indices in which major BSE indices as Sensex and BSE sub Indices like BSE Sensex 50, BSE Sensex 200, BSE Bharat 22, BSE 250 Small Cap, BSE 150 Midcap, BSE 250 Large midcap and BSE Next 50 should be considered for analysis and identify the impact of Covid-19 on selected indices in time duration of before lockdown period and after lockdown period. BSE Sensex demonstrate around 30 companies share prices. As on 24th January 2020 Sensex was 41,613 and after one month on 24th February Sensex indicated 40,363 that means decrease by 980 points within month. This is considered as before lockdown period. Due to Covid-19's lockdown there is significant impact on Sensex which is describe by on 24th may the Sensex was at 26,647 point which is lowest in the year of 2020. BSE Sensex 50 was 12,840 on dated 24th January and minor decrease after one month that is indicated major 50 companies share prices. This index is designed performance of the fifty largest and liquid companies which are listed on Bombay stock exchange limited and it is also demonstrate each key economic sector identify by BSE's sector model. On the date 24thmarch which is lockdown date BSE Sensex was 8,161 andafterthat it was increased up to 9,594 on the date of 24th April. It is indicated highly impacted of lock down on this stock index.

BSE Sensex 200 is the index which is demonstrates 200 companies listed on stock exchange. As on January 24th which before lock down date the index indicated 5,163 after one month minor decrease and index stood at 4,989 but due to lockdown on 24th march significant impact on index which is recorded as 3,280 and after one month it was stood at 3,862 and two month before average was 5,076 and after average was 3,571 which was indicated highly negative affected on this index. BSE Bharat 22 Index is designed to measure the performance of 22 selected companies which are disinvested by the central government of India and registered on BSE. These companies also affected by Lockdown which give evidence as on 24th January index was 3,264 and after one month index was 3,065 and average index was 3,164 but due to lockdown it is also affected as on 24th march index was 1,905 which means decrease 1,160 points due to covid19 lockdown. It was also indicated after average of two month was 2,048. The small capitalisation companies indices indicated by BSE 250 small cap and it was also affected due to lock on 24th march in which as on 24th January index was 2,194 and after one month it was stood at 2,111, two months average indicated as 2,153 but due to impact of covid-19 lock down it was stood as average 1,350 of two months in 24th march it was 1,231 then after 24th April it was 1,468. BSE 150 Mid Cap is constructed to track the performance of 150 medium capitalisations companies' performance by total market capitalisation, subject to buffers. On 24th January BSE 150 Mid Cap index was 5,103 and then after one month it was stood at 5,006 and both date average was 5,055 but due to effect of lock down on 24th march index was stood at 3,220 and 3,713 after one month. Average of two month after lockdown was 3,467 means decrease of 1,588 points due to it. The BSE 250 Large Mid Cap Index indicated total of 250 companies bifurcated by 65:35 portfolio in which 65% position consist of or weight in BSE 100 and remaining 35% weigh is BSE 150 Mid Cap Companies. Average index before lockdown was 4,710 which is consist of 24th January 's index as 4,874 and 24th February index as 4,710 then after lock down average was 3,369 which was consist of 24th march index as 3,095 and 24th April as 3,642. From these data also indicated significant impact of covid-19 lockdown. BSE Sensex next 50 indicated transparent, rules based index which is constructed to measure the performance of the next 50 largest and liquid organisation's stocks. As on 24th January index was 31,320 then on 24th February index was 31,994 but due to covid-19 lockdown first month 24th march index indicated as 32,668 and second month index was 31,320 then due to effect of covid-10 lockdown 24th march index as 20,683and 24th April index as 24,718 that average before lockdown average was 31,994 and after lockdown average index was 22,701 means 9,293 points are decrease within two months.

Table 2: PAIRED T-Test for Identification of Impact of Covid-19's Lockdown

	Before Aver.	After Aver.	df	7
Mean	13229.8125	9297.687	t Stat	2.590
Variance	221645955.1	112243518	P(T<=t) one-tail	0.0179
Observations	8	8	t Critical one-tail	1.894
Pear. Correlation	0.99		P(T<=t) two-tail	0.035
Hypoth. Mean Diff	0		t Critical two-tail	2.364

Above table indicated paired-t test for before lockdown and after lockdown average of BSE Sensex and its sub-indices. t-test has been performed base on average of two month which is before lockdown period and average of after two months lockdown period for the identification of impact of covid-19 impact on selected indices. The result of test is indicated paired t- test p-value one tail and two tails is less than 0.05 which means there is significant impact of covid19 lock down on BSE Sensex and its sub-indices.

Findings: The major finding of the study is there is significant negative impact of Covid-19 lockdown on BSE Sensex and its Sub-Indices have been recorded with the help of data analysis and statistical test

References:-

1. Aravind MMC. Covid-19: Effect on leading pharmaceutical stocks listed with NSE. International journal of research in pharmaceutical sciences, 2020, 31-36.
2. FerrazZeren AE. The impact of Covid-19 coronavirus on stock markets: Evidence from selected countries. Muhaseevefinansincelemelridergisi, 2020, 78-84.
3. Haiyue Liu AM. The covid-19 outbreak and affected countries stock markets response. International journal of environmental research and public health, 2020, 1- 19.
4. www.moneycontrol.com
5. www.bseindia.com
6. www.invstopedia.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Economic Ideas of Mahatma Gandhi

Dr. Ajay Kumar Gupta*

***Associate Professor, Govt. Arts College, Panaga Jabalpur (M.P.) INDIA**

Abstract : Gandhi's economic ideas were in sence a logical corollary of his moral principles such as Swaraj Sarvodaya truth non- violence and equality and the like based on these wider social principles. Gandh derived his economic ideas which if brough together would give a picture of the economic system that he visualised.
Keywords: Economic's Industrilization, Swadeshi, Tursteeship ,Society, Non-violence.

Introduction - Gandhi's economic ideas are understand in his whole philosophy. His main economic ideas aims at the socio-economic reconstruction of society. Gandhiji did not give any economic model regarding the development of Economics but gave some basic canons based on which we can decide what king of economic composition is most preferable for Indian economy Gandhi has given the concept useful work for which would be helpful among all communities lack of untouchability small scale and village Industries the measure suggested by Gandhi for ensuring production and distribution to take place simultaneously was to orient all productive activities to the satisfaction of the basic needs of the masses. This mean that production pattern should be uni-dimensional confining itself to the basket of necessaries only. As a means of ensuring that exploitation did not take place Gandhi desired that the methods of production should be indigenized. As a part of this he objected to the use of machine. To quote him and "machinery him it place it has come to stay, But it must not be allowed to displace human labour.

Top Economic Ideas Of Mahatma Gandhi

Industrialisation: Mahatma Gandhi opposed the idea of industrailsing India in the Western manner Large scale industrialization is a negotiation of nonviolence because its consequences are exploitation, Monopoly centralization, mass production, complicated distribution and conflicts.These arise out of cut throat competition of capturing market. Mass production is the first slogan of industrialization. According to Mahatma Gandhi "this mania for mass production is responsible for the world crisis. This mass production leads to the concentration of production at a particular place, when many milles and factories concentrate at one particular place, these very chance of their being monopolise. The monopolist ultimately begins to dictate the price according to his sweet will, if the Monopoly is in the hands of the capitalist they do not get the home market for the consumption of the goods the conflict and competition for foreign market ensue leading at times to battles and wars and endangering the peace of the world: This cut throat competition is a necessary evil of industrialization. The greatest danger of industrialisation is its exploitation of the villagers. Men materials and other resources of The villages are compelled to be drawn towards the industrialised centres. Gandhi held that Industrisation on a mass scale would necessarily lead to passive or active exploitation of the villagers as the problems of competition and marketing come in."

Containment of wants : "Nature produces enough to meet the needs of all the people, but not enough to satisfy the greed of any man " Mahatma Gandhi.

To meet the minimum needs of everybody Gandhi suggested two measures, first everybody should get sufficient work to enable him to make two ends meet. Second the means of production of Elementary necessities of life should remain under the control of masses.

Swadeshi : The greater part of Gandhi's work was to renew Indias vitality and regenerate its culture. According to the principal of Swadeshi whatever is made or produced in the village must be used first and fore most by the member of the village, Trading among villages and between villages and towns should be minimal like icing on the cake goods and services that cannot be generated within the community can be brought from else where, Swadeshi avoids economic dependence on external market forces that could make the village community vulnerable. It also avoids unnecessary unhealthy wasteful and therefore environmentally destructive transportation. Swadeshi this is the way to comprehensive Peace, peace with onself, peace between peoples and peace with nature. The global economy drives people to word high-performance high achievement and high ambition for materialistic success, this result in stress loss of meaning loss of inner peace

loss of space for personal and family relationship and loss of spiritual life.Gandhi realized that in the past life in Indian was not only prosperous but also conductive to philosophical and spiritual development.

Labour and capital : Gandhi's statement – "Capital should be labours servant not its masters repudiates the claim of these who glorify the Supremacy of capital in modern economic development. He also believed in the formation of unions by labourers because labour would be superior to Capital only, if it stood united and was morally and intellectually trained. He agreed to strikes but labourers must perform their duty first he also added stripe should be based on the principle of non violence and truth.

Trusteeship : Trusteeship meant that "The rich man will be left in possession of his wealth of which he will use what he reasonably require for his personal needs and will act as a Trustee for the remain reminder to be used for the rest of the society. Trusteeship is another novel and innovative idea of Gandhi. It is an ethico- economic concept, Gandhi believes that economic equality is a basic requirement of just and nonviolent Society, economic equality is opposed to monopolization or concentration of wealth, he takes economic equality or equitable distribution of wealth, as a great idea, But the problem is how to materialize this ideal into practice in other words to bring economic equality without any coercive measure or encroaching upon individual freedom is a great challenge. Trusteeship seems to provide a possible solution to this problem.

Gandhiji formulation of Trusteeship is based on his basic pre-suppositions, He firmly believes that by birth all men are equal and that all wealth belong to the society, Because of this assumption he hold that the daily wages of all people in the society should be equalized, If there is some difference with regard to talent intelligence physical strength etc there can be modest difference in the wages but that will not give rise to a big cap in the society further people should utilize their talent for the Welfare of the society, Since men are born equal they have a right to equal opportunity. If a person has more than his professional need he becomes a Trustee of that so as to utilize it for common good and not for his selfish interest. Since Gandhiji believes that all wealth belong to the society he is against private accumulation or hereditary inheritance trusteeship ensures the transfer of wealth from the class to the unprivileged class. The privileges class be impressed upon with the idea that they should act as Trustee and the wealth in their possessing should be utilized in the constructive way to ameliorate the condition of all, Anybody who has the wealth can be appealed to act as a Trustee, Thus Gandhi hold that what belongs to an individual is actually the wealth of the community for every person is an integral part of the society, A person relationship to his material possessions is like that of a Trustee, He has to manages it without any selfish attachment, The material possesing of an Indian is not a personal possessions but can be used in the service of others who are less possesing, Similarly a scientist, a scholar, as a teachnocrat, a doctor, a lawyer etc they elite class of the society should use their talents so talent should not be used for exploiting other or accumulating property for personal benefit. Talent should be recognized and utilised for social betterment. So people having surplus wealth or some talent should act as trustees of the society.

Conclusion : Gandhi economic ideas have great impact on Indian economy, He emphasized on Cottage and small scale industries which have significant importance for the development of economic condition of the common man, Mahatma Gandhi has proposed very reconstructive economic ideas and if these ideas implemented, India would have been relieved, many economic problems, India should emphasis on the policy of Mahatma Gandhi which especially represents, the Swadeshi policy and work for human being. In the age of globalization, Indian society is facing may economic problem on account of large scale industries and mechanization. Small Scale industries play a key role in our economy for its development these industries are basically using labour intensive and high potential for Employment generation.

References :-

1. Dr Ram Kripal Sinha MK Gandhi - sources ideas and action Ocean books Private Limited 4/19 Asaf Ali Road New Delhi edition first 2018 PP 220,221,222.
2. Gandhiji Swriti and darshan Samiti concept publishing company New Delhi Volume 4 PP 78,79.
3. Gandhiji M.K(1952) "Truth is God, NavjIvan publishing house Ahmedabad.
4. Gupta Shanti Swarup (1994) Economic Philosophy of Mahatma Gandhi concept publishing company New Delhi P 136, 137, 185.
5. ISBN Publication Gandhi in the new Millennium issues and challenges published by khandwala publishing house.
6. JK Chopra unique Quintessence of Gandhi Nehru Tagore and other eminent personalities of modern India unique publishers M- 51 Lajpat Nagar II New Delhi 25th edition 2006 PP 88,89.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Effectiveness of Fiscal Policy in India: Evidence from 40 Years using SVAR Approach

Hitika Gupta* **Subhanshi Vishvakarma****

*MSc. Economics, Birla Institute of Technology And Science, Pilani (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

Abstract: This research paper, with the help of the structural vector autoregressive framework (SVAR), attempts to review the size and effectiveness of fiscal multipliers in all the states of India. The value of multipliers is obtained by giving shocks to GDP, government expenditure, and taxes. The paper highlights the policy implications of fiscal multipliers, particularly in terms of designing and implementing effective fiscal policies to address economic downturns. It emphasizes the importance of carefully timing and choosing the composition of fiscal measures to maximize their multiplier effects. By doing so, policymakers can better leverage the impact of fiscal policy to support economic growth and stability.
Keywords: Fiscal multipliers, fiscal policy, Government expenditure, Gross State Domestic Product, Structural VAR.

Introduction - Fiscal policies of India have been a subject of interest for policymakers as it has potential to boost economic growth. India's recent economic slowdown, exacerbated by the COVID-19 pandemic, has prompted increased government intervention through fiscal policies like corporate tax cuts and infrastructure spending. However, the effectiveness of these measures in stimulating growth remains a subject of debate. This research aims to contribute to this discourse by analyzing India's fiscal multipliers and evaluating the impact of current policies on economic growth.

Leveraging empirical data spanning 40 years and employing a Structural Vector Autoregression (SVAR) model, this study addresses a notable gap in existing research by utilizing a more comprehensive dataset. The paper begins with a comprehensive literature review, synthesizing key findings from prior research.

Literature Review

1. Several prominent studies shed light on the dynamics and impact of fiscal multipliers, with a particular focus on the Indian context and broader methodological considerations. Research by **Jain and Kumar (2013)** employed a sophisticated Structural VAR analysis to estimate the size of government expenditure multipliers in India, providing a deeper understanding of how the Indian economy responds to government spending. Further contributions from **Yadav, Upadhyay, and Sharma (2012)** empirically examined the ripple effects of various fiscal policy shocks across the Indian economy, illustrating their short-term and long-term implications. **Bose and Bhanumurthy (2015)** directly estimated fiscal multipliers for India, discussing how fiscal interventions influence changes in GDP and employment within the country. Adding to this, **Goyal and Sharma (2018)** highlighted the critical role of the composition of government expenditure in India, suggesting that different types of spending yield varying multiplier effects, which is a key consideration for effective policy design.

2. Beyond India-specific analyses, broader research addresses fundamental questions about fiscal multipliers. **Ilzetzki, Mendoza, and Végh (2011)** undertook a comprehensive inquiry into the magnitude of fiscal multipliers, emphasizing that their size is not universal but highly context-dependent, and generally indicating that government spending tends to have a more significant multiplier effect than tax cuts. Complementing this, **Serrato and Wingender (2010)** advanced the methodology by focusing on "Estimating Local Fiscal Multipliers," underscoring the importance of granular analysis. Their work recognizes that the impact of fiscal interventions can vary significantly even within a single country, influenced by specific local economic conditions and the nuances of policy implementation.

Data Sources and Methodology

Data Sources: This study utilizes annual data spanning from 1980 to 2021. To conduct our analysis, we have collected state-wise data on GDP, aggregate expenditure, and tax revenues from the EPWRF. The constant prices data for Gross State Domestic Product (GSDP) for the base year 2011-12 is collected from the EPWRF website as well. Nominal data have been deflated to real values using the GDP deflator. The first difference of the logarithm of each

variable has been used to avoid non-stationarity issues. To convert the data into real values, we have calculated the GDP deflator by dividing the GSDP at current prices by the GSDP at constant prices.

Methodology: To demonstrate the connection between GSDP, tax revenues, and aggregate expenditure, we utilize the structural VAR method. Our analysis involves transforming the three variables into logarithmic form to eliminate seasonal fluctuations from the data. The VAR approach is commonly used in research to study the effects of various disturbance terms on the model's endogenous variables, considering all variables as endogenous with lag functions. The two possible ways by which causation can take place, hence the problem of identification occurs are: (a) government expenditures may impact output or (b) output may affect government expenditures (due to automatic stabilizers and explicit/implicit policy regulations). In this scenario, SVAR is used to forecast the effects of particular policy changes on the economy to address the identification problem.

The structural vector autoregression (SVAR) model equation used in research is written as:

$Ae_t = B\mu_t$

This equation tells the relationship between VAR residuals and structural shocks in this model and is defined as follows:

$$\begin{bmatrix} 1 & 0 & 0 & a_{ae}^{gdp} & 1 & 0 & 0 & 0 & 1 \end{bmatrix} \begin{bmatrix} e_t^{gdp} \\ e_t^{ae} \\ e_t^{tax} \end{bmatrix} = \begin{bmatrix} 1 & b_{gdp}^{ae} & b_{gdp}^{tax} & 0 & 1 & 0 & b_{tax}^{gdp} & 0 & 1 \end{bmatrix} \begin{vmatrix} u_t^{gdp} \\ u_t^{ae} \\ u_t^{+ax} \end{vmatrix}$$

The SVAR model provides a framework for examining the dynamic interactions between aggregate expenditure, tax, and GDP and quantifies the link between them. The coefficient a_{ae}^{gdp} represent the response of aggregate expenditure due to unexpected shock in GDP. Similarly, coefficients b_{gdp}^{ae}, b_{gdp}^{tax} and b_{tax}^{gdp} are due to structural shocks. Coefficients e_t^{gdp}, e_t^{ae} and e_t^{tax} are the residuals obtained from the respective equations in the reduced VAR form and the coefficients u_t^{gdp}, u_t^{ae} and u_t^{+ax} are the structural disturbance terms.

Analysis of Results: To ensure the accuracy of results, unit root test was done before applying the VAR model. The findings of unit root test indicated that all the variables such as GSDP, tax revenues, and aggregate expenditure are I(1) that means they are stationary at first order difference and by checking the lag length criteria, VAR satisfied the stability condition. The study employs the structural vector autoregression (SVAR) approach that was run on logarithm of GDP, tax revenues, and aggregate expenditure and used that to plot generalized impulse response functions to investigate the impacts of various shocks on the endogenous variables and their subsequent responses.

Results: For a valid Structural Vector Autoregression (SVAR) analysis, assessing the normality of residuals is crucial, as non-normal residuals can bias coefficient estimates, standard errors, and hinder accurate structural shock identification. This assessment involves examining statistical properties like mean, variance, skewness, and kurtosis, often using the Jarque-Bera test. Our analysis reveals that GDP values are centered around the mean while other variables show greater dispersion. GDP and capital expenditure exhibit positive skewness (right-skewed), whereas tax, aggregate, and revenue expenditure show negative skewness (left-skewed). Furthermore, all variables display kurtosis values less than 3, indicating platykurtic distributions that are less peaked than a normal distribution, with fewer extreme values and more observations concentrated around the mean.

Table 1.1- Descriptive Analysis of All States

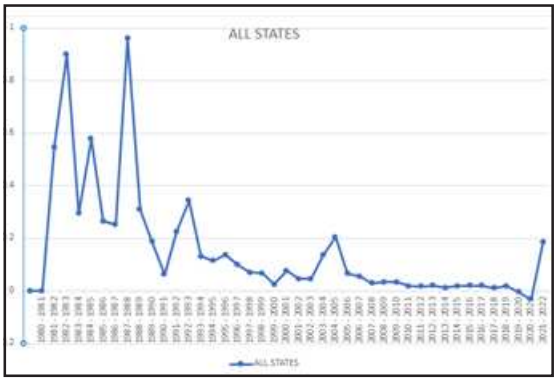
Variable Names	Mean	Std. Dev.	Skewness	Kurtosis	Jarque-Bera
LGDP	15.235	0.783	0.085	1.705	2.984
LAE	12.746	1.593	-0.042	1.834	2.392
LRE	12.496	1.622	-0.102	1.889	2.234
LCE	11.216	1.522	0.146	1.691	3.146
LTAX	12.086	1.654	-0.029	1.802	2.519

All SVAR coefficients are statistically significant ($p < 0.05$), confirming model stability. Table 1.2 indicates that a 1% increase in aggregate expenditure significantly boosts India's GDP by 2.99%, while a 1% tax increase leads to a 0.19% GDP decrease

Table 1.2- Structural Parameter Estimate

Coefficient	Coefficient	Std. Error	z-Statistic	Prob.
a_{ae}^{gdp}	-4.422426	1.391226	-3.178799	0.0015
b_{gdp}^{ae}	2.99982	0.85999	3.488202	0.0005
b_{gdp}^{tax}	-0.196163	0.055794	-3.515833	0.0004
b_{tax}^{gdp}	0.318327	0.090986	3.498652	0.0005

Graph 1- Value of Fiscal Multipliers for period of 40 years for the states of All states

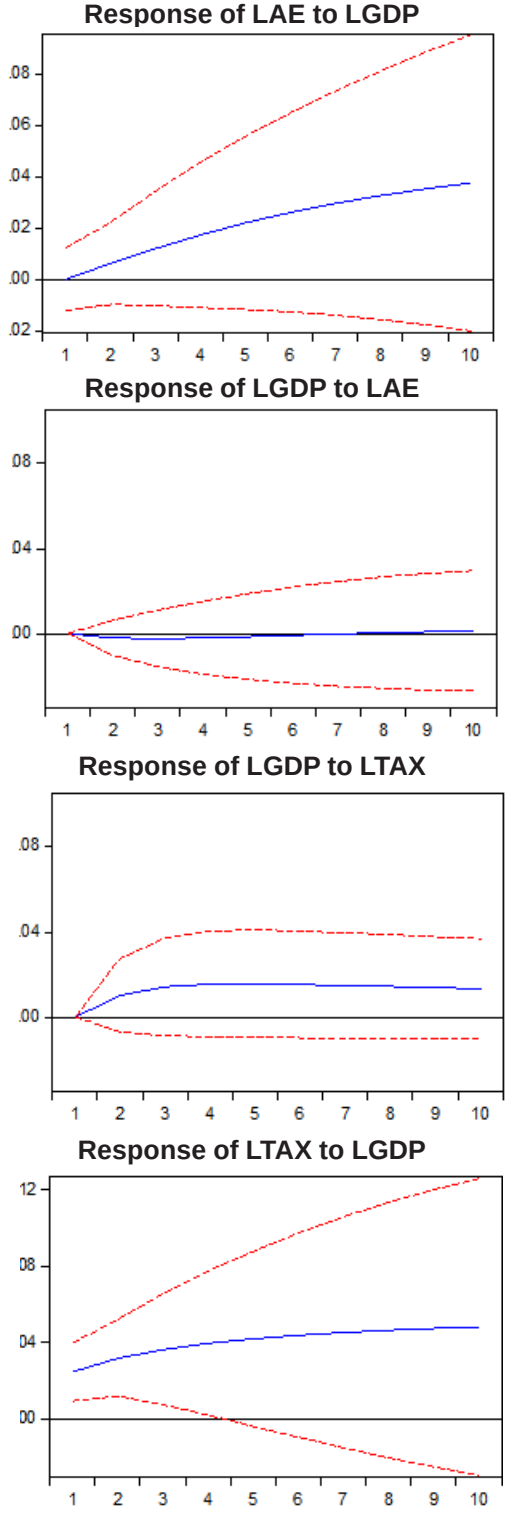


Fiscal multipliers for Indian states, peaking at nearly 1.0 in 1988, generally declined over 40 years, turning negative by 2020 before recovering to 0.2 in 2021 due to pandemic-

related fiscal measures. Higher multipliers during recessions underscore expansionary fiscal policy's potential as a stabilization tool.

Important implications for economic policy and decision-making can be drawn from the impulse response functions generated from SVAR analysis.

Graph 2- Impulse functions of All states Response to Cholesky One S.D. (d.f. adjusted) Innovations ± 2 S.E.



IRFs for response of expenditure on GDP and GDP to tax have a positive effect on output by which policymakers can use fiscal or monetary policy measures to counteract the positive effects and stabilize the economy. Response of tax to GDP is insignificant. IRFs provide details regarding the interactions between the effects of taxes and spending on GDP. The degree to which various variables influence each other, how they interact over time can be determined by policymakers with the help of IRFs.

Conclusion: This study, leveraging a robust SVAR analysis of 40 years, establishes the relationship between GDP, aggregate expenditure, and tax revenues for a growing economy like India. With time, allocations for government expenditure increase. The study highlights how important it is to thoughtfully design and implement fiscal policy actions, taking into account how they will influence total economic activity. The fiscal policy of India could be a helpful tool for fostering economic expansion and minimizing economic inequality. The effectiveness of fiscal policy measures will ultimately depend on a number of factors, including the general macroeconomic environment, the structure of the economy, and the political and institutional context.

Our findings confirm the statistical validity of the model through residual normality checks and the significance of all estimated coefficients, highlighting model stability. Empirically, we establish that aggregate expenditure has a substantial positive impact on India's GDP, with a 1% increase in spending leading to a nearly 3% rise in GDP. Conversely, tax increases are shown to have a minor contractionary effect on GDP.

Additionally, the number of fiscal multipliers might vary depending on how well the state government performs. States with better governance may be better equipped to plan, implement, and manage government spending projects, which will have more positive multiplier effects. It is critical to remember that fiscal multipliers can also be influenced by other factors, such as the structure and financing of governmental spending as well as the general macroeconomic climate. It is essential to carefully prepare and implement fiscal policy measures in order to maximize their impact on economic activity.

References:-

1. Bhat, J. A., & Sharma, N. K. (2020, September 30). Asymmetric fiscal multipliers in India – Evidence from a non-linear cointegration. Macroeconomics and Finance in Emerging Market Economies, 14(2), 157–179.
2. Bose, S., & Bhanumurthy, N. (2015, November). Fiscal Multipliers for India. Margin: The Journal of Applied Economic Research, 9(4), 379–401.
3. Goyal, A., & Sharma, B. (2018, January 22). Government Expenditure in India: Composition and Multipliers. Journal of Quantitative Economics, 16(S1), 47–85.

4. Espinoza, Raphael and Abdelhak Senhadji (2011). "How Strong are Fiscal Multipliers in the GCC? An Empirical Investigation," IMF Working Paper No. WP/11/61
5. Ilzetzki Ethan, and Carlos Végh (2008). "Procyclical Fiscal Policy in DevelopingCountries: Truth or Fiction?," NBER Working Paper No. 14191 (Cambridge, Massachusetts: NBER).
6. Ilzetzki, Ethan, Enrique G. Mendoza and Carlos A. Végh (2011). "How Big (Small?)are Fiscal Multipliers?," IMF Working Paper No. WP/11/52.
7. IMF. External Relations Dept. (2009). IMF Survey: Volume 37, Issue 13. IMF Survey, 37(10).
8. Jha, S, S. Mallick, D. Park, and P. Quising, (2010), 'Effectiveness of Countercyclical Fiscal Policy: Time-Series Evidence from Developing Asia', ADB Economics Working Paper Series, 211
9. Jain, Rajeev and Prabhat Kumar (2013) Size of Government Expenditure Multipliers inIndia: A Structural VAR Analysis" RBI Working Paper Series, Reserve Bank ofIndia, 18th September.
10. Lane, P (2003) The Cyclical Behaviour of Fiscal Policy: Evidence from the OECD, Journal of Public Economics, 87, 2661-2675
11. Mishra, B. R. (2019, July 25). The Size of Fiscal Multipliers in India: A State Level Analysis Using Panel Vector Autoregression Model. Global Business Review, 20(6), 1393–1406.
12. Reserve Bank of India - Publications. (n.d.). Reserve Bank of India - Publications. https://rbi.org.in/scripts/PublicationsView.aspx?Id=15369#T1
13. Serrato, Juan Carlos Suárez and Philippe Wingender (2010). "Estimating Local Fiscal Multipliers", Department of Economics, University of California
14. Yadav S., V. Upadhyay, Seema Sharma (2012). "Impact of Fiscal Policy Shocks on the Indian Economy," Margin: The Journal of Applied Economic Research, Vol.6 No.4. pp. 415-444

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारतीय इतिहास में मेवाड़ की वीरांगना किरण देवी का गौरवशाली स्थान और मुगल अकबर की पराजय

सौरभ पटेल* डॉ. हेमेन्द्र सिंह सारंगदेवोत**

* सहायक आचार्य (समाज शास्त्र) मेवाड़ विश्वविद्यालय, गंगरार, चित्तौड़गढ़ (राज.) भारत
** सह आचार्य (इतिहास) मेवाड़ विश्वविद्यालय, गंगरार, चित्तौड़गढ़ (राज.) भारत

शोध सारांश – मेवाड़ महाराणा प्रताप के अनुज भ्राता शक्तिसिंह की कन्या–वीरांगना किरणदेवी का ऐतिहासिक महत्व रहा हैं जो कि जीवन मूल्य, नारी सशक्तिकरण और चरित्र व राष्ट निर्माण से सम्बद्ध रहा हैं जो गाथा आज भी मेवाड़ी जनमानस के मुख पर बिराजित हैं। इन्होंने अपने पतिव्रता धर्म की तेजस्विता से कामांध मुगल अकबर को पराजित किया और उसमें नारी शक्ति के प्रति पवित्रता व सम्मान के भाव जागृत किये।

शब्द कुंजी – किरण देवी, राज कँवर, मेवाड़, शक्तिसिंह, राणा प्रताप, नारी धर्म, पतिव्रता, सिसोदिया, मुगल अकबर,नौरोज के मेले, मीना बाजार।

प्रस्तावना –अपने सतीत्व और पतिव्रत धर्म की रक्षा करना ही भारतीय स्त्रियों के जीवन का एक अनुपम और पवित्र धर्म रहा है। रामायण जी के सीता माँ हो या फिर तमिल संगम साहित्य में उल्लिखित पतिव्रता सती कन्नगी हो, उनके सतीत्व वज्राघात से बड़े–बड़े साम्राज्यों की नींव हिल उठी, राजमुकुट धूल–धूसरित हो गए, मानव वेशधारी दानवों की दानवता और व्यभिचारमूलक अत्याचार का अन्त हो गया । किरणदेवी मेवाड़ी हिंदुआ सूर्य महाराणा प्रताप के भाई शक्तिसिह की कन्या थी।



किरण देवी के पिताश्री महाराज शक्ति सिंह सिसोदिया

मेवाड़ के भींडर ठिकाने के प्राचीन अभिलेखों के अनुसार महाराज शक्ति सिंह सिसोदिया के 17 पुत्र और दो पुत्रियाँ थी जिनमें से एक किरण देवी का विवाह बीकानेर महाराजा के छोटे भाई महाराज पृथ्वीराज राठौड़ से हुआ था, जिनकी कविता या चेतावनी के दोहों ने राणा प्रताप में पुन: रजपूती का जोश ला दिया था,फलत: फिर उन्होंने किसी भी हालत में अकबर से सन्धि की बातचीत नहीं की थी। बांसी ठिकाने के हस्तलिखित ग्रन्थों के अनुसार महाराज शक्ति सिंह की पुत्री का नाम राज कंवर बाई था जिनका विवाह बीकानेर महाराज के भाई पृथ्वीराज राठौड़ से हुआ था। इसका अर्थ यह हुआ कि राज कँवर बाई का नाम किरण देवी भी मिलता हैं।

अकबर की विषैली राजनीति के क्लोरोफार्म से मतवाले होकर बड़े–बड़े राजपूत घरानों ने अपनी सांस्कृतिक परम्परा, मर्यादा और मान की उपेक्षा करना प्रारम्भ कर दिया था, मेवाड को छोड़कर अन्य राजपूत रियासतों ने अकबर का लोहा मान लिया था। पृथ्वीराज अपनी इस वीर रानी के साथ दिल्ली में ही रहते थे । किरणदेवी परम सुन्दरी और सुशीला थी। अकबर उसे अपनी वासना का शिकार बनाना चाहता था, वह शक्तिशाली सम्राट अवश्य था किन्तु कामाग्नि भी उसके हृदय में रात–दिन धधका करती थी। दिल्ली के शक्तिशाली सम्राट की अभिलाषाओं की पूर्ति में बाधक होने के लिये काफी शक्ति और साधन सम्पन्नता की आवश्यकता थी ।

अपनी विषय–वासना संतुष्टि हेतु मुगलिया अकबर प्रतिवर्ष 'नौरोज' का मेला लगवाता था। दिल्ली निवासियों सहित मुगलों के हिन्दू व मुस्लिम मनसबदारों की महिलायें भी मेले के बाजार में जाया करती थी। पुरुषों को मेले में जाने की आज्ञा नहीं थी। अकबर स्त्री वेश में इस मेले में घूमा करता था,जिस सुन्दरी पर अकबर मुग्ध होकर कामासक्त हो जाता था,उसे उसकी कुट्टिनियां फंसाकर उसके महल में ले जाती थी ।

अकबर की गिद्ध दृष्टि बहुत दिनों से किरणदेवी पर लगी हुई थी। उसे सीसोदिया राजघराने की इस सिंहनी की वीरता का पता नहीं था। वह नहीं जानता था कि भारतीय नारियों ने अपने सतीत्व की रक्षा के लिये अपने प्राणों तक को चिता में अर्पित कर बलिदान कर दिया है। महारानी पद्मिनी, राजमाता कर्मावती की चिता की जलती राखतक का दर्शन विदेशी तुर्क, अफगान आक्रान्ताओं की पापी आंखों ने नहीं किया था।

एक दिन जब 'नौरोज' के मेले में मीना बाजार की सजावट देखने के

लिये किरणदेवी आयी तो कुट्टिनियों ने अकबर के संकेत से उस पतिव्रता को धोखे से जनाने महल पर पहुंचा दिया। विषयान्ध मुगल अकबर ने उसे घेर लिया और नाना प्रकार के प्रलोभन दिये। किरणदेवी की तेजस्विता की प्रखर किरणों से अकबर की काम-वासना भभकती जा रही थी। ज्यों ही उसने उस राजपूत रमणी का अङ्ग स्पर्श करने के लिये हाथ हिलाया, त्यों ही उस रणचण्डी ने कमर से तेज कटार निकाली और शुम्भ-निशुम्भ की तरह उसे धरती पर पटक कर छाती पर पैर रखकर कहा- 'नीच !नराधम ! भारत का सम्राट होते हुए भी तूने इतना बड़ा पाप करने की कुचेष्टा की! भगवान ने सती-साध्वियों की रक्षा के लिये तुझे बादशाह बनाया है और तू उन पर बलात्कार करता है। दुष्ट ! अधर्म ! तू बादशाह नहीं, नीच विषयी कुत्ता है। पिशाच है रू तुझे पता नहीं है कि मैं किस कुल की कन्या हूं। सारा भारत तेरे पाँवों पर सिर झुकाता है: परन्तु मेवाड़ सीसोदिया गुहिलोत वंश अभी भी अपना सिर ऊंचा किये खड़ा है। मैं उसी पवित्र राजवंश की कन्या हूं। मेरी धमनियों में बप्पा रावल और सांगा का रक्त है। मेरे अंग-अंग में पावन क्षत्रिय वीरांगनाओं के चरित्र की पवित्रता है। तू बचना चाहता है तो मन में सच्चा पश्चाताप करके अपनी माता की शपथ खाकर प्रतिज्ञा कर कि अब से 'नौरोज' का मेला नहीं होगा और किसी भी नारी पर तू मन नहीं चलावेगा। नहीं तो, आज इसी तेज धार कटार से तेरा काम तमाम करती हूं।'

अकबर के शरीर का खून सूख गया। पानीपत, मालवा, गुजरात और खान-देश के सेनानायक के दोनों हाथ थरथर कांपने लगे। उसने करुण स्वर में बड़ा पश्चाताप करते हुए हाथ जोड़कर कहा- 'मां ! क्षमा कर दो, मेरे प्राण तुम्हारे हाथों में है, पुत्र प्राणों की भीख चाहता है।' उसने प्रण किया कि अब ष्नौरोजष का मेला कभी नहीं लगेगा ! दयामयी किरणदेवी ने अकबर को प्राणों की भीख दे दी।

इस तरह तेजस्विनी और पतिव्रता राजपूत रमणी ने यवन के हाथों से अपने सतीत्व को रक्षा की। नौरोज का मेला और मीना बाजार अकबर के चरित्र के बड़े कलंक हैं, जिन्हें इतिहासकार कभी नहीं भूल सकते हैं।

किरणदेवी सतीत्व की प्रखर किरण थी, जिसके आलोक ने सारे देश को पतिव्रत की आभा से जगमगा दिया।कुछ इतिहासकारों का मत है कि किरणदेवी का नाम जयावती या (जोशी-बाई) था। नाम कुछ भी हो, कर्म और गुणों से ही लोगों की प्रसिद्धि होती है। इतना तो है ही कि बीकानेर के पृथ्वीराज राठौड़ की राजराणी के पतिव्रत धर्म ने दुराचारी अकबर को विवश किया कि वह उसे 'मां' कहे। इतिहास ने दिखला दिया कि अबला कहलाने वाली नारी कितनी बलवती होती है।

मेवाड़ की प्रसिद्ध विदुषी वंदना जी जोशी मेवाड़ के ऐतिहासिक कथानकों के अंतर्गत लिखती हैं कि .....आपांरी वीरांङ्गणावांकिरण देवी.....किरण देवी मेवाड़ रा महाराणा प्रतापसिंघ रै अनुज शक्तिसिंघ री बेटी ही। इण रो ब्याव बीकानेर रा महाराज पिरथीराज राठौड रै लारै व्यो। पिरथीराज राठौड प्रसिद्ध वीर, ख्यात प्राप्त कवि अर मुगल सम्राट अकबर रो मनसबदार हो।

किरणदेवी सिसोदिया अर पिरथीराज राठौड़ दोई जिण रजपूती शानौ शौकत में रेता हा। कदी-जदी अकबर रा दरबार में महाराणा प्रताप रे तेज रौ बखाण करवा सूँ नी चूकता हा। मेवाड़ी पोषाक में किरण देवी सिसोदीदो घणी रूपाली लागती ही अर वेशभूषा विण याही आजीवन राखी।

एक दन किरणदेवी नौरोज रा मेला में घूमवा गी ही। ष्नौरोजश रौ उत्सव सोला दन तक मनायो जातो हो। ईरानी परथा रै अनुसार हर नया साल री शुरूआत वैळा पै अकबर दिल्ली में इण उत्सव रौ आयोजन करतो हो। यो उत्सव अकबर आपणा राज्य में ही करतो हो। दीवाने आम में एक साठ कदम लम्बो अर चालीस कदम चौड़ो शामियानो लगायो जावतो। इण उत्सव में मीना बाजार भी लगायो जातो हो। इण बाजार में सगला अमीर उमरावा री लुगायाँ आईन वटै दुकानाँ लगाती ही अर सौदा भी ज्यादातर जनाना ही राख्या जावता। बादशाह अर विण री बेगमाँ इण बाजार में सामान खरीदवा रै वास्तै आवती। बेगमां, बेणा अर कन्या बादशाह रै भड़े बैठती ही। अर अमीर उमरावाँ री लुगाईयाँ आई आईश्न सलाम करती ही, नजरानों देती ही। इण रै लारै ही दिन रात नाच गान वैता रेता हा।

अकबर इण मेला में आयी किण भी रूपवती रै सौन्दर्य पै मुग्ध वैजातो तो विण ने राजमहल में बुलावा री कोशीश करतो। विण रूपवती लुगाई पै एक बार अकबर री नजर पड़णी चावती। पाछे तो विण रौ राजमहल में जाणौ निश्चित हो। जिण तरै ही वा लुगाई राजमहलाँ में पूंगती तो विण रौ शील भंग वैजातो हो।

एक बार किरण देवी नौरोज रा मेला में गई ही अर अकबर री नजर विण पै पड़ी गी। अकबर रौ मन किरणदेवी री वेशभूषा, चाल-ढाल अर रहन सहन पै घणो मोहित व्यो। अकबर किरण देवी ने धोखां सूँ रंगमहलाँ में बुलाई ली। अर किरण देवी भी बिन्दास जंगल री शेरणी जिण तरै महलाँ में पूंगी गी। अकबर विण एकली ने आपणा महलाँ में देखकर हर साल हर लुगाई लारै करतो, विस्तर विण रै लारै करवा लाग्यो। वो नी जाणतो हो कि या तो मेवाड़ री खूंखार शेरणी है। जिण नै जोर सूं दहाड़णो भी आवै अर पंजों मारणो भी आवे। अकबर जिण तरै ही विण रौ शील भंग करवाने आगे बढ़यो अर विण ने छूवा लाग्यो विस्तर ही सिसोदिया कुल री सिंघणी कटार लेकर अकबर री छाती पै जा चढ़ी।

दिल्ली रौ मुगल सम्राट अकबर ने इण रौ अंदेशो नी हो। आज तक विण रै चंगुल में फंसी कोई भी लुगाई अतरी फुर्तीली अर तेज तर्राट नी ही। अकबर विण वीर नारी रा तेज अर शौर्य हामें धक धक धूजवा लाग ग्यो। गिड़गिड़ावा लाग्या अर मेवाड़ री राजकुमारी किरणदेवी रै पग्गां पड़िग्यो। किरण देवी सूँ आपणा प्राणां री भीख मांगवा लाग ग्यो।

दयावती, ममता री मूरत किरणदेवी आगे सूँ कदी नौरोज रौ मेलो नी लगावा री बात मनवाई। जदी अकबर शपथ लीदी कि अबै कदी नौरोज रौ मेलो नी लगाएगा, विण कैड़े अकबर सूं खुद ने 'माँ' केलवायो। अकबर किरणदेवी ने 'माँ' कईश्न पुकारी जदी जाईश्न अकबर ने छोड्यो। इण प्रकार सूँ या राजपूत नारी न कोरी आपणै शील री रिच्छा करी वरन अकबर जस्या सम्राट सूँ नौरोज रा मेला रौ आयोजन भी बन्द करायो अर अकबर ने बन्द करवा वास्तै विवश वेणो पड्यो।

अकबर जस्या बादश्या ने विण रा घर में जाईश्न ललकारवा री हिम्मत मेवाड़ री छत्राणी ही कर सके, वा ही दूसरा रा जंगल में जाईश्न दहाड़ सके हे। महाराणा प्रताप मेवाड़ में रेईश्न अकबर ने लोहा रा चणा चबवाया तो किरण देवी अकबर रा रंगमहल में पूंगीश्न विण री सांस फुलाई दी। 'विण रै घर मेई विण रौ सांस लेणो मुश्किल वैग्यो।'

इस प्रकार भारतीय नारियों के आदर्श ने समाज का निर्माण किया जो वर्तमान में भी प्रांसगिक हैं और आगे भी रहेंगे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. देवीलाल पालीवाल, महाराज शक्तिसिंह और बोहेड़ा के शक्तावत (ठिकाना बोहेड़ा का इतिहास), प्रकाशक कुंवर विक्रम सिंह, बोहेड़ा

हाउस, उदयपुर, 1995 ई.
2. ईश्वर सिंह राणावत, ठिकाना बांसी का इतिहास, प्रकाशक प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर, 2009 ई.
3. मोहब्बत सिंह राठौड़, गोकुलदासोत शक्तावतों का इतिहास, प्रकाशक प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर, 2017 ई.
4. Dr.Devilal Paliwal, Maharaj Shakti Singh And The Shaktawats of Boheda (A History of BohedaThikana), Book Treasure, Jodhpur, 2004 A.D
5. कल्याण के नारी विशेषांक से साभार 582-584(प्रताप शोध प्रतिष्ठान उदयपुर में संग्रहित)
6. संपादक कृष्ण चन्द्र श्रोत्रिय, ईसरदान आशिया, स्वरूप सिंह चुण्डावत, देवेन्द्र सिंह शक्तावत, देवकरण सिंह रूपाहेली, गिरधर आशिया कृत सगत रासो, पृष्ठ संख्या.632-633, प्रताप शोध प्रतिष्ठान उदयपुर, 1987 ई.
7. डॉ.वंदना जोशी, आपांरी वीरांङ्गणावां, चिराग प्रकाशन, उदयपुर, 2012 ई.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Mental Wellbeing in Ancient India

Sakshi Shrivastava*

***Former Student, Govt. M.K.B. Arts and Commerce College of Women, Jabalpur (M.P.) INDIA**

Introduction - Introduction: It is said that in India, study of psychology started since 1857, in Calcutta University. This statement is not completely true as it was the study of western form of psychology. India has always a clear vision on mental activities as *Chitta Vratti.*

Indian thought is not only rich in describing the metaphysical but also in psychological aspects. Numerous valuable insights about this topic are found as early as from the Vedic times to *Bhatikal sants*. Each school of philosophy, medicine, aesthetics etc., developed its own theory of mind. Mind which is addressed as *Man or Manas* in Indian Wisdom. The term "mind" is not a suitable representative of man's insight. The term 'mind' is limited to cognition, whereas 'manas' captures cognition, emotion, and behaviour i.e. entire insight.

Study of this "*man or manas"* is known as Manovigyan or Manovijnana *(Sanskrit:* मनोविज्ञानम्*).* This is the science of mental states and processes of human. Some aspects of this manas or insight are studied in the modern branch of Psychology and Psychiatry.

Understanding the manas or mind, thought, actions of the sense organs and consciousness have remained as exclusive subjects and beyond the reach of common understanding. Understanding the various mental processes and managing mental health has remained a major challenge to modern scientists and doctors till this day. It is the time to reflect on the various siddhanta's and methods used by ancient seers who made unfathomable advancements in the study of consciousness and mental processes.

The source of man's insights are twofold - exploring the wonders of the world outward and the states of the mind inward. In the Vedas, the boundless diversity of nature engages attention. In the Upanishads we return inwards to explore the depths of inner world. The interest of the seers has always been in understanding and in controlling the mental processes encountered in the inward journey. The Bhartiya way of philosophic analysis started with the reflection on the inner self of man with the ultimate goal, of all mental training, being the attainment of *Moksha*.

We find that the psychological and physiological disciplines developed in the *Upanishads,* the *Yoga* sutras, the Bhagavad Gita, and in the schools of Buddhism and Jainism. Practicing scholars were astonished alike at the psychosomatic views held by the great medical authorities of India, namely, Charaka and Sushruta. It has been one of the wonders in intellectual history that though there was no independent branch of study like Psychology in ancient India, the ancient thinkers had independently developed highly systematic views regarding mind and its operations, particularly with reference to mental health and well-being.

Mental health in Ayurveda: Ayurveda, the ancient Indian science of medicine is directed towards positive health. It aims at studying man in his social, religious, seasonal, climatic and regional environment. It is known as *Ashtanga Ayurveda* because of its eight disciplines. *Bhoot vidya,* one of them, refers to the study of psychological & emotional disorders. After studying Ayurveda in general & *Bhoot vidya* in particular, one observes that there is more emphasis on maintenance and preservation of normal physical & mental health than on the treatment of any disease or illness. Moreover, the role of life style, life goals, personality, and dietary, cultural & social habits in health is highlighted. Medications have been assigned a secondary role. We have now understood the limitations of modern medicine. Most of the illnesses except acute infections require long term treatment e.g. Diabetes, Hypertension, Cardiac disorders, Rheumatic disorders etc. It is only recently that physicians trained in modern medicine have studied the role of personality, life style, dietary & social habits in genesis & perpetuation of these disorders. One may say that ancient Indian medicine begins where modern medicine ends - when acute phase of an illness is over and efforts must be directed to maintain normal health & well being.

Patanjali has defined health as "Optimal utilization of one's physical, intellectual and emotional faculties to maintain harmony with self without undue preoccupation with the environment." This definition is easily the best among all other definitions. It takes into account capabilities of an individual and emphasizes harmony with self. It stresses to avoid undue & excessive comparison with others which is a major source of unhappiness.

Sushruta has not defined health but has elaborated certain parameters of health. They are

1. Samdosha - equilibrium of body humours,
2. Samagni - uniform healthy digestion, 3) Samadhatu - normal body tissues,
4. Malakriya - normal process of excretion and
5. Prasannatmanendriyamana - coordination of functions of body organs, mind & soul to maintain happiness.

Kapil Muni has discussed in detail the constituents of human being consisting of twenty-five elements.

1. Panchmahabhutas - the five great elements - Prithvi (Earth), Jala (Water), Vayu (Air), Akasha (Sky), and Tejas (Sun)
2. Sense Organs - Eyes, Ears, Nose, Tongue, Skin
3. Motor organs- hands, Feet, Speech, Excretory function, Reproductive function.
4. Tanmatra or perceptual processes - Vision, Hearing, Odour, Taste and Touch.
5. Directive elements - Cognitive apparatus - helps to process and appreciate experiences received through sensory organs & tanmatra. Intelligence, 'I 'concept, An element which is source of all, and An element which directs, creates, maintains & organizes.

Patanjali has observed that there is a constant rhythmic interaction & harmony between all the element of mind i.e. Cognitive apparatus, psychological self, Physical self and social self. The shat ripus (six foes) - Kama (lust), Krodha (anger), Lobha (greed), Mada (Pride or aggression), Moha (desire), and Matsar (jealousy) or the primary instincts increase the vulnerability of an individual. These can be compared to the Id in Freudian terms.

India's approach to psychological support has deep cultural and spiritual foundations. The earliest forms of guidance were not structured as formal counselling as we know today, but they were embedded in the very fabric of social and spiritual life. Ancient scriptures, religious texts, and philosophical teachings of Hinduism, Buddhism, Jainism, and Sikhism laid the groundwork for what would later become a more formalised system of counselling. In the Vedic period, sages and wise men (rishis) played a role akin to modern-day counsellors. These figures, who were highly revered in Indian society, often provided counsel on a wide array of issues, including moral dilemmas, personal challenges, and even mental well-being. The advice they imparted was grounded in deep knowledge, spirituality, and a holistic understanding of human nature. One of the oldest examples of this guidance system is found in the ancient Indian texts, the Upanishads, Ramayan and the Bhagavad Gita, which provide philosophical insights into human suffering, personal growth, and self-realisation—key aspects that modern counselling seeks to address as well. The concept of "counselling" in these ancient times was deeply intertwined with ideas of self-awareness, emotional regulation, and spiritual growth. The aim was not merely to address psychological issues in isolation, but to offer advice that helped individuals connect with their higher purpose and align with the natural order of life. This deep philosophical underpinning is continued in present time also.

In the Indian social structure, elders have long held the role of guides, providing emotional, moral, and practical counsel to the younger generation. This informal, yet integral, tradition has played a key part in sustaining mental health within communities. Counselling in traditional Indian society was often delivered by family elders, religious leaders, and community heads. These figures would offer advice on a range of issues, from marital challenges to career decisions. However, this advice was not always framed in psychological terms, but rather in ethical, spiritual, and community-focused contexts. Elders relied on their life experience and knowledge to offer solutions, often based on shared wisdom passed down through generations.

In rural areas, especially, the importance of elders as mental health guides remains significant. For many people, the first form of support comes from a trusted elder figure who offers practical advice, emotional solace, and reassurance. This communal, familial approach to counselling continues to influence the way modern therapy is practiced in India.

Even today, Indian therapists often strive to incorporate respect for the elderly and family dynamics into their counselling approaches, acknowledging the role that these figures still play in the lives of individuals seeking support. Religion and spirituality continue to have a profound impact on the counselling practices in India. While modern counselling techniques have become more secular, spiritual guidance remains a significant element for many individuals seeking help. The integration of religious or spiritual elements in counselling is not just a unique feature of India, but is deeply embedded in the cultural psyche.

In the Indian context, religious beliefs provide a framework for understanding life's challenges, offering a sense of purpose and a direction for those in emotional turmoil. The Bhagavad Gita, for example, presents Lord Krishna's advice to Arjuna on how to navigate conflict, suffering, and confusion—offering psychological insight that resonates with modern therapeutic approaches. Similarly, Buddhism's teachings on mindfulness and meditation have found their way into therapeutic practices in India, with mindfulness-based therapies becoming a popular form of treatment. In a multicultural society like India, various religious philosophies—whether Hinduism, Buddhism, Islam, or Christianity—inform the practice of counselling.

Many counsellors draw from these teachings to provide a more holistic, culturally relevant approach that takes into account the spiritual beliefs of the client. Therefore, in many Indian counselling settings, the blending of religious guidance and psychological support is not only accepted but encouraged, especially when the client's personal belief system is an important part of their worldview.

Thus, mental well-being had been cared in ancient India through a comprehensive approach.

References:-

1. Anonymous(1970): Ram Charit Manas, Goswami Tulsidas, Geeta press Gorakhpur.
2. Anonymous(1972): Shrimad Bhag wad Geeta, Geeta press Gorakhpur.
3. Gautam Shiv (1999) : Mental Health In Ancient India & Its Relevance To Modern PSYCHIATRY Indian Journal Of Psychiatry.
4. Yadav Ashish Kumar , Chaudhary Ankit, Singh Narendra Kumar and Shukla Mohit (2024) : Psychological Aspects of Ancient Indian Religious Texts, The International Journal of Indian Psychology, Volume 12, Issue 3.
5. Godbole Madhavi Shekhar (2022) : Healing the Mind: Vedic Psychological Techniques for Mental Well-Being in Clinical Settings Brahmavidya Vol: 86 Issue: 4.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सीवरेज कर्मकारों की स्वास्थ्य सुरक्षा संबंधी चुनौतियाँ

रिंकू साहू* डॉ. भाविक पानेरी**

* शोधार्थी (विधि) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** असिस्टेन्ट प्रोफेसर (विधि) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – स्वच्छता मूल ही स्वास्थ्य है। देश को स्वच्छ और साफ-सुथरा रखने में सफाई कर्मकारों का योगदान महत्वपूर्ण व प्रशंसनीय है। सफाई कर्मकार सेवा भावना से, 'स्वच्छता ही सेवा है' मूल मंत्र को सरोकारा करते हुए, स्वच्छता मूल्य श्रृंखला के विभिन्न कार्यों में शामिल होते है। में स्वच्छता कार्य के प्रचलित रूपों में से सबसे चुनौतीपूर्ण रूप है मैन्यूअल स्कैवेंजिंग, जिसमें सफाई कर्मकार हाथों से, बिना किसी सहायता प्रणाली या सुरक्षा उपकरण के मानव मल के निपटान हेतु मल के सीधे संपर्क में आते है।

मैन्यूअल स्कैवेंजिंग में ठोस और तरल अपशिष्ट के आधार पर मानव मल का निपटान किया जाता है। तरल अपशिष्ट में जलशील शौचालयों से निकला मानव मल सीवरों और सेप्टिक टैंकों में जाता है। जिसकी सफाई हेतु मुख्यत: पुरुष कर्मकारों को नियुक्त किया जाता है। सीवर, सेप्टिक टैंकों, नालों की सफाई शारीरिक रूप से कठिन कार्य होने के कारण पुरुष सफाई कर्मकारों द्वारा ही कि जाती है।[1]

जब हाथ से मैला ढोने वाला सेप्टिक टैंक की सफाई करता है, सीवर ट्रीटमेन्ट का रख-रखाव करता है। तब उसे सीवरेज कर्मकार कहा जाता है। आज देश 21वीं सदी में है और हमारे देश में इंसान के मलमूत्र को आज भी अन्य व्यक्तियों द्वारा हाथों से उठाया जाता है।

ये कर्मकार अंदर उतरकर अपने हाथों से बंद पडे सीवर और सेप्टिक टैंक खोलते है जिसमें गाद के साथ मल भी होता है। ऐसे सीवरों व सेप्टिक टैंकों की सफाई में सीवरेज कर्मकार अपनी जान गवाते है, क्योंकि ऐसे सेप्टिक टैंकों में कई हानिकारक गैसें बैक्टिरिया, जीवाणु, परजीवी और वायरस होते है जो सीवरेज कर्मकारों के स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक होते है। नगरीकरण के कारण सीवर प्रणाली पर बढ़ता बौझ सही मशीनरी की कमी और सस्ते श्रम ने इस तरिके को जन्म दिया है। सीवरेज कर्मकार वर्षों से अपरिवर्तवीत परिस्थितियों में सफाई के लिए सीवर और सेप्टिक टैंकों में उतरते है और हानिकारक गैसों की वजह से मौत के शिकार हो जाते है। क्योंकि उनके पास उन सुरक्षात्मक उपकरणों व सुरक्षा प्रणाली का अभाव होता है; जो उन्हें इन जहरीली गैसों से बचा सके। अगर गैसों से बच भी जाए तो जिन खतरनाक परिस्थितियों में वे काम करते है उससे होने वाली स्वास्थ्य संबंधी जोखिमों से वे बच नहीं पाते है। नगरीकरण के कारण पर्यावरण और स्वास्थ्य संबंधी कई समस्याएं उत्पन्न हुई इन्हीं उत्पन्न समस्याओं में कुछ समस्याएं मानव मल के निपटान के संबंध में आई जिनका हल निकालने के लिए शौचालय और सीवेज सिस्टम जिसे मल निकास प्रणाली भी कहा जाता है की खोज की गई और इसमें अभी भी सुधार किया जा रहा है।

इस विकास के कारण सीवरेज कर्मकार हमारे घरों और उद्योगों में इस्तेमाल होने वाले कई रसायनों के संपर्क में भी आ रहे है जो इन शौचालयों की सफाई करने के दौरान सेप्टिक टैंकों और सीवरों में चले जाते है। सीवेज सिस्टम की बढती मांग और नए पर्यावरणीय नियमों के कारण अपशिष्ट जल के परिवहन और उपचार में तकनीकी जटिलता बढ गई है। भारत में लगभग 57758[2] सीवरेज कर्मकार है जो एक सदी से भी ज्यादा अपरिवर्तित परिस्थितियों और अस्वास्थ्य वातावरण में कार्य कर रहे है।

ये कर्मकार बिना किसी सुरक्षा उपकरण के काम करते हुए अक्सर मानव अपशिष्ट व अपशिष्ट जल के संपर्क में आते है। अपने कार्य की प्रकृति के कारण इन्हें सामाजिक अत्याचारों के साथ-साथ कई स्वास्थ्य संबंधी खतरों, रोगों का सामना भी करना पड़ता है।[3] जिनमें मीथेन, हाइड्रोजन सल्फाइड, अमोनिया, कार्बनडाइआक्साइड जैसी हानिकारक गैसों के संपर्क में आना, श्वसन संबंधी विकार जीवविषाक्तता और कैसंरजन्यता, ऑस्टियो आर्थराइटिस और इंटरवर्टेबल डिस्क हर्नियेशन जैसे मस्कुलोस्केलेटल विकार, लेप्टोस्पायरोसिस जठरांत्रशोथ, जिआर्डिया, लाम्बा, क्रिप्टोसोडियम, एस्कारियासिस और एंटामोइबा हिस्टोलिका जैसे परजीवी संक्रमण तवचा संबंधी विकार, बुखार, हैजा, शामिल है। सीवरेज कर्मकारों की इन स्वास्थ्य संबंधी जोखिमों को इंजीनियरिंग, चिकित्सकीय और विधायी उपायों द्वारा दूर किया जा सकता है जिसमें सीवर सिस्टम का उचित रख-रखाव, बेहतर वेंटिलेशन, खतरनाक गैसों से सुरक्षा, नियमित स्वास्थ्य जॉच, टीकाकरण, बीमारियों के शुरूआती लक्षणों का पता लगाकर जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करना और कानूनों का प्रभावी प्रवर्तन शामिल है।

शब्द कुंजी – सीवरेज कर्मकार, सैप्टिक टैंक सीवरेज, सीवरेज कर्मकारों के स्वास्थ्य संबंधी खतरे।

प्रस्तावना – सीवेज शब्द कच्चे मल, मल-मूत्र या सेप्टिक टैंक अपशिष्ट से संबंधित है। कच्चे सीवेज में मुख्यत: पानी मल, औद्योगिक अपशिष्ट और मलबा होता है और यह हानिकारक बैक्टीरिया और अन्य सूक्ष्म जीवों का एम प्रमुख स्त्रोत है। सीवेज उपचार से पानी की मात्रा कम हो जाती हैं और मलबा हट जाता है, लेकिन सभी सूक्ष्मजीवों को नष्ट या हटाया नहीं जाता।[4]

सीवरेज कर्मकारों को मानव मल या सीवेज के साथ काम करना पड़ता है, जिसमें अनुपचारित सीवेज, कीचड, सेप्टिक टैंक का अपशिष्ट मल का गाद या बहिस्त्राव जल शामिल होता है। इस कार्य में सीवरेज कर्मकारों को

कई तरह के संक्रमणों का सामना करना पड़ता है। कई तरह की स्वास्थ्य जोखिम सीवरेज कर्मकारों से जुड़ी होती है। विभिन्न संक्रमण जो सीवरेज कर्मकारों को अपना शिकार बनाते है उनमें सबसे आम तरीका है खाने–पीन या धुमपान करते समय हाथ से मुंह का सपंर्क या दूषित हाथों या दस्तानों से चेहरा पोंछना या त्वचा से छींटे मुंह में जाना,[5] त्वचा के संपर्क से, साँस लेने या अनजाने में निगलने से कर्मकार रोगाणुओं के संपर्क में आ जाते हैं। प्रभावित क्षेत्रों में नाक, गला, श्वसन तंत्र आँखे और शरीर के अन्य अंग शामिल हो सकते है जो सींधे मल के संपर्क में आते है। सीवरेज कर्मकार अनजाने में दूषित औजारों या हाथों के माध्यम से भी रोगाणुओं के संपर्क में आ जाते है, जिससे उन्हें कई घातक बीमारियाँ होने की संभावना बढ़ रही है।[6]

सीवरेज कर्मकारों का कार्य जोखिमपूर्ण है जिन्हें इन्हें खतरनाक परिस्थितियों में करना होता है जिनमें उन्हें मानव मल के सीधे संपर्क में आते हुए जहरीली गैंसों, रसायनों और शारीरिक चोटों का सामना भी करना पड़ता है। सीवर और सेप्टिक टैंकों में कई जहरीली गैंसे बनती है जिसमें मुख्य रूप से मीथेन, हाइड्रोजन सल्फाइड, अमोनिया, कार्बनडाइआक्साइड है।[7] इनके अलावा अन्य गैंसे जैसे नाइट्रोजन हाइड्रोजन, कार्बनमोनोआक्साइड और सल्फर डाई ऑक्साइड गैंसे भी बन सकती है।[8] जो सीवरेज कर्मकारों के लिए हानिकारक है जिनकें सुंघने की वजह से उनकी जान भी जा सकती है। सीवरेज कर्मकारों के स्वास्थ्य संबंधी खतरों में इन हानिकारक गैंसों के संपर्क में आना, श्वसन संबंधी विकार, जीनविषाक्तता और कैंसरजन्यता, ऑस्टियोआर्थराइटिस और इंटरवर्टेब्रल डिस्क हर्नियेशन जैसे मस्कुलोस्केलेटल विकार, लेप्टोस्पायरोसिस जठरांत्रशोथ, जिआर्डिया, लाम्बा, क्रिप्टोसोडियम एस्कारियासिस और एंटामोइबा हिस्टोलिका जैसे परजीवी संक्रमण, त्वचा संबंधी विकार, हैजा, टाइफाइड बुखार पोलियों, पेचिश शामिल है। औद्योगिकीकरण की बढ़तीरफ्तार, तकनीकी विकास और नगरीकरण ने इन सीवरेज कर्मकारों के स्वास्थ्य को जोखिम में डाल दिया है जिससे उनकों कई स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

श्वसन प्रणाली से संबंधित विकार – सीवरेज कर्मकार सेप्टिक टैंक और सीवर की सफाई करते समय बहुत जहरीली गैसों के संपर्क में आते है जिससे वे अनेक स्वास्थ्य संबंधी बीमारियों से ग्रस्त हो जाते है। उन्हें हानिकारक गैंसों के साथ–साथ रसायनों के संपर्क में भी आना पड़ता है जिसकी वजह से वे अस्थमा, खांसी, टी.बी, पीठ, दर्द और श्वसन पथ संक्रमण से ग्रस्त होते है। लिजियोनेला न्यूमोफिलिया को पानी के एरोसोल द्वारा फैलने के लिए जाना जाता है। जो या तो निमोनिया या एक गैर न्यूमोनिक रोग (पोटियाक बुखार) का कारण बढ़ता है। एक अध्ययन से पता चलता है कि सीवेज से निकलने वाले एरोसोल के संपर्क में आने वाले कर्मचारियों में लिजियोनेला का संक्रमण होने का खतरा होता हैं। मुंबई में व्यावसायिक स्वास्थ्य और सुरक्षा केन्द्र द्वारा किए गए एक अध्ययन से पता चला है कि 60 प्रतिशत सीवरेज कर्मकारों में 15 मौते दर्ज की गई। मृत्यु का मुख्य कारण मैनहाल के अंदर जहरीली गैंसों से दम घुटना था, जिससे अन्य लोग भी अंधे हो गए। श्वसन संबंधी बीमारियों में खासी (44.3%) सांस फूलना (39.2%) बोंक्राइटिस (34.1%) और जकडन (32.9%) जैसे लक्षण शामिल थे। लोगों की मौत जहरीली गैंसों से हुई तीन की दुर्घटना में और दो की टीबी के कारण।[9]

जीनविषाक्तता और कैंसरजन्यता – जीनविषाक्तता जिसे जेनोटॉक्सिसिटी और कैंसरजन्यता जिसे कार्सिनोजेनेसिटी भी कहा जाता है। जेनोटॉक्सिसिटी एक एजेन्ट की डीएनए और आर एन ए जैसी आनुवांशिक सामग्री को नुकसान पहुंचाने की क्षमता है जिसके परिणामस्वरूप उत्परिवर्तन और कैंसर हो सकता है जो सांस के जरिए अंदर लेने निगलने या त्वचा पर लगाने पर ट्यूमर उत्पन्न करती है या ट्यूमर की घटना बढाती है।[10] सीवेज कीचड का काम करने वाले लोगों में कैंसर और अन्य स्वास्थ्य समस्याएँ होने का खतरा होता है।[11] अपशिष्ट जल और सीवेज कीचड में विभिन्न उत्परिवर्तनीय प्रतिक्रियाए देखी गई है। ऐसा लगता है कि सीवेज कीचड उत्परिवर्तनीय हो सकता है लेकिन भौगोलिक और लौकिक दोनों तरह के अंतर है। केवल घरेलू अपशिष्ट जल को संसाधित करने वाले समंकों से निकलने वाले कीचड़ में उत्परिवर्तन क्षमता कम होती है। एक अध्ययन के अनुसार, न्यूयार्क राज्य में 14 उपचार संयंत्रों में सीवरेज कर्मकारों में, पीने के पानी के सयंत्रों के श्रमिकों की तुलना में एम्स परीक्षण द्वारा निर्धारित मूत्र उत्परिवर्तनों को उत्सर्जित करने का जोखिम काफी अधिक था इन विटो चयापचय सक्रियण के साथ और बिना दोनों[12] भारत में 18.8% सीवेज कर्मकारों में कैंसर मृत्यु का कारण है। हेलिकोबैक्टर पायलोरी एक जीवाणु है जो पेप्टिक अल्सर रोग, गैस्ट्रिक कैंसर और म्यूकोसा से जुडे लिम्फोइड उत्रक (MALI) लिम्फोमा से जुडा है। मल और अपशिष्ट जल संचरण के संभावित मार्ग है।

कई अध्ययनों से पता चला है कि हेलिकोबैक्टर पायलोरी सीवरेज कर्मकारों के बीच कैंसर का एक महत्वपूर्ण जोखिम है। पिछले दशक के दौरान, जीवाणु हेलिकोबैक्टर पायलोरी गैस्ट्रिक कैंसर के लिए एक महत्वपूर्ण जोखिम कारक के रूप में उभरा है, और अब इसे कैंसर पर शोध के लिए अंतराष्ट्रीय एजेसी द्वारा वर्ग I कार्सिनोजेन माना जाता है।[13] हेपेटाइटिस के लिए सीरोलॉजिकल (एंटीबॉडी) विश्लेषण की आवश्यकता होती है क्योंकि अधिकांश संक्रमण सबक्लीनिकल होते है और प्रत्यक्ष बीमारी के रूप में प्रकट नहीं होते है। हेपेटाइटिस बी एक बडी बीमारी है जिसे दूर नहीं किया जा सकता लगभग 200 मिलियन लोग वायरस के क्रोनिक वाहक हैं और इनमें से काफी अल्पसंख्यक सिरोसिस या यकृत के कैंसर का विकास करते हैं स्वर यंत्र के कैंसर से मृत्युदर सांख्यिकीय रूप से पहचान योग्य थी। स्वीडीश सीवरेज कर्मकारों के एक पूर्वभावी अध्ययन ने सीवेज के पानी के संपर्क और स्वरयंत्र कैंसर के बीच महत्वपूर्ण संबंध का खुलासा किया।[14]

मस्कुलोस्केलेटल विकार – ऑस्टियोआर्थराइटिस और इंटरवर्टेब्रल डिस्क हर्नियेशन दोनों ही रीढ की हड्डी की समस्याएँ है जो भारत में सीवरेज कर्मकारों को होती है। ऑस्टियो आर्थ राइटिस जिसे गठिया भी कहा जाता है, जोड़ों में उपास्थि के टूटने के कारण होता है, जिससे दर्द और अकडन होती है। इंटरवर्टेब्रल डिस्क हर्नियेशन में रीढ़ की हड्डी के बीचकी डिस्क (गद्दी) फट जाती है और तंत्रिका को दबाती है, जिससे दर्द सुन्नता और कमजोरी हो सकती है।[15]

आस्टियोआर्थराइटिस परिवर्तन और इंटरवर्टेबल डिस्क हर्नियेशन इन कर्मकारों में रिपोर्ट की सामान्य रीढ़ की हड्डी की समस्याएं है। फ्रेडरिक ने रीढ की हड्डी की समस्याओं (यानी गर्दन, ऊपरी पीठ और पीठ में निचले हिस्से में दर्द) की व्यापकता निर्धारित करने के लिए 255 सीवरेज कर्मकारों का अध्ययन किया उन्होंने बताया कि गर्दन ऊपरी पीठ और पीठ के निचले हिस्से में दर्द की 12 महीने की व्यापकता दर क्रमश: 52.4, 52.8 और 72.8 थी उम्र के साथ रीढ़ की हड्डी की परेशानिया बढ़ी है।[16]

1. **लेप्टोस्पायरोसिस–** लेप्टोस्पायरोसिस संक्रमित जानवरों, विशेष रूप से कृंतकों, मवेशियों और सूअरों के मूत्र में निकलने वाले बैक्टीरिया के कारण होता है। यदि बैक्टीरिया किसी कट या अन्य टूटी हुई त्वचा या आंख, मुंह

और नाक में चले जाते हैं तो संक्रमण हो सकता है। लेप्टोस्पायरोसिस इन्फ्लूब्जा जैसी बीमारी पैदा कर सकता है। जो गंभीर बीमारी में बदल सकती है। यदि कोई व्यकित संक्रमित हो जाता है तो लक्षण दिखने में 5 से 30 दिन लग सकते है। कभी-कभी लोगों में कोई लक्षण नहीं दिखते। अक्सर लक्षण अपेक्षाकृत हल्के होते हैं जिसमें शामिल है - बुखार, ठंड लगना, मांसपेशियों में दर्द, सिर दर्द, गले में खराश, खांसी, मतली, उल्टी खरोच, भूख में कमी। यदि कोई व्यक्ति लेप्टोस्पायरोसिस के गंभीर रूप से पीडित है तो लक्षण आमतौर पर हल्के, फ्लू जैसे लक्षणों के खत्म होने के एक से तीन दिन बाद अचानक दिखाई देते है।[17] लेप्टोस्पायरोसिस एक वेइल रोग है जो जानवरो (चूहों, सूअरो, गायों और कुत्तों) के मल-मूत्र से फैलता है। कृतंक आमतौर पर भूमिगत सीवरों में बहुतायत में पाए जाते है और लेप्टोस्पाइरा के वाहक होते है। उस क्षेत्र में मौजूद कृतकों और अन्य जानवरों के मूत्र से इन सीवरों के दूषित होने की संभावना होती है। इसलिए सीवरेज कर्मकारों को लेप्टोपायरोसिस का संभावित जोखिम होता है। एम अध्ययन से पता चला है कि पुणे के पांच अलग-अलग नगरपालिका वार्डो के 78 सीवर कर्मकारों ने माइक्रो एग्लूटिनेशन टेस्ट का उपयोग करके लेपटोस्पाइरा के साथ पिछले संक्रमण के सबूतों का अध्ययन किया। व्यापकता दर 16.6% पाई गई शहर के उन क्षेत्रों में सीवरेज कर्मकारों में लेप्टोस्पाइराल संक्रमण के सबूत सबसे अधिक पाए गए जो कृतंकों और आवारा जानवरों से प्रभावित थे। यह पाया गया कि सीदर कर्मचारियों में नियंत्रण की तुलना में लेप्टोस्पायरोसिस के खिलाफ एंटीबॉडी का अधिक प्रचलन था (12% 0.003)[18]

जठरांत्र शोथ - गेस्ट्रोएन्टेराइटिस, जिसमें दस्त, उल्टी और पेंट में ऐंठन जैसे लक्षण दिखाई देते है, मल से प्रदुषित पानी में मौजूद कई रोगाणुओं जैसे रोटा वायरस और नोरोवायरस के कारण होता है।[19] एक अध्ययन से पता चला - भारत के सीवेज के पानी में बड़ी संख्या में रोग पैदा करने वाले साल्मोनेला और शेगेला भी पाए गए। यह कई अलग-अलग सूक्ष्मजीवों के कारण हो सकते हैं। गेस्ट्रोएंटेराइटिस के कई मामले सीवेज के साथ काम करते समय खराब स्वच्छता और गलत प्रथाओं के कारण होते है। गैस्ट्रोएन्टेराइटिस विकारों में, कृमि संक्रमण सबसे आम था (74.7%) इसके बाद अपच (71.2%) पेट फूलना (57.4%) और दस्त (48.2%) थे।[20]

परजीवी संक्रमण - सीवरेज कीचड, अपशिष्ट जल के संपर्क में आने से सीवरेज कर्मकारों में जिआर्डिया लाम्बा, क्रिप्टोसोडियम, और एस्कारियासिस (राउंडवार्म) सहित कई अन्य परजीवी संक्रमण होने का जोखिम होता है जिससे दस्त, पेट में एंठन, राउंडवार्म खांसी, सांस लेने में तकलीफ, पेट में दर्द और आंतों में रूकावट पैदा करते है।[21] पेचिश जिससे खुनी दस्त और पेट दर्द होता है अमीवियासिस जो गम्भीर आंतों की बीमारियां पैदा कर सकता है दोनों ही मल में पाए जाने वाले एक सामान्य परजीवी एंटामोइना हिस्टोलिका के कारण होने वाले रोग है।[22]

त्वचा संबंधी विकार - सीवेज किचड के संपर्क में आने से सीवेज कर्मकारों को त्वचा संबंधी कई बीमारियाँ हो सकती है, जिनमें संक्रमण, एलर्जी, जिल्द की सूजन और अन्य त्वचा संबंधी समस्याएँ शामिल हैं सीवेज में मौजूद हानिकारक बैक्टीरिया, वायरस ओर परजीवी त्वचा के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर सकते है और संक्रमण का कारण बन सकते है इसके अलावा सीवेज में मौजूद रसायन जैसे डिटर्जेन्ट, कीटनाशक और अन्य औद्योगिक रसायन त्वचा में जलन और एलर्जी पैदा कर सकते है।[23] सीवरेज के दूषित जल से रोगजनक जीवों के संपर्क में आने के कारण त्वचा में जलन, फंगस और सेल्युलाइटिस हो सकता है।

भारत में सीवेज उपचार करने वाले कर्मकारों में जलन पैदा करने वाले डर्माटाइटिस (त्वचा शोथ) का प्रकोप तब हुआ जब सीवरेज सिस्टम की खराबी की मरम्मत के दौरान कर्मचारी सीवेज कीचड की धूल से दूषित हो गए। इन कर्मकारों को उनकी खुली त्वचा पर एरिथेमेटस स्केली डर्माटाइटिस का सामना करना पड़ा। कुछ कर्मकारों ने आंखों में जलन की भी शिकायत की।[24]

कुछ जीव खुले घावों को संक्रमित कर सकते है जिससे स्थानीय घाव संक्रमण हो सकता है। ये संक्रमण आमतौर पर मामूली प्रकृति के होते है लेकिन संक्रमण ऊतकों के माध्यम से फैल सकता है और अधिक गंभीर बीमारियों का कारण बन सकता है। लोग दूषित तरल पदार्थ उत्ताक या पानी के माध्यम से संक्रमण का शिकार होते हैं। त्वचा का सीवेज के साथ संपर्क कट, खरोंच या छेदने वाले घावों के माध्यम से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हो सकता है। कटी हुई त्वचा या खुले घाव विशेष रूप से संक्रमण के लिए अतिसंवेदनशील होते है, आंख की सतह को छूने से भी संदूषण हो सकता है, त्वचा की बीमारियों में खुजली (57.6%) टिनियासिस (34.6%) उसके बाद दाने/पिग्मेंटेशन (25.6%) और डर्माटाइटिस (19.2%) सभी सीवरेज कर्मकारों में शामिल है।[25]

हैजा - विब्रियो कोलेरा एक प्रकार का बैक्टीरिया है जो हैजा का कारण बनता है, जिससे संक्रमण होता है। दूषित पानी, खास तौर पर सीवेज के माध्यम से संक्रमण का एक महत्वपूर्ण माध्यम है।[26] जो सीवरेज कर्मकारों में देखा जाता है।

टाइफाइड बुखार - मानव मल से दूषित पानी साल्मोनेला टाइकी के लिए आवास प्रदान करता है, जो टाइफाइड बुखार पैदा करने वाला सूक्ष्म जीव है। अपर्याप्त स्वच्छता इसके संचरण को बढ़ावा देती है।[27]

पोलियो (पोलियोमाइलाइटिस) - पोलियो वायरस के कारण सीवेज में पोलियों होता है। यदि अपर्याप्त सीवेज का सही तरिके से उपचार नहीं किया जाता है तो हैजा एक अक्षम करने वाली बीमारी बन सकती है।[28]

सीवरेज कर्मकार प्रत्यक्ष रूप से सीवेज जिसमें कीचड़ अपशिष्ट जल, सेप्टिक टैंक का मल, गाद और अनुपचारित सीवेज शामिल है के संपर्क में आते है इस कारण से उनमें गंभीर जटिलताएँ विकसित होने की संभावना सबसे अधिक होती हैं सीवेज और उसके अपशिष्ट जल में रोग पैदा करने वाले सुक्ष्म जीव होते है। इन जीवों में बैक्टीरिया, कवक, परजीवी और वायरस शामिल होते है जो विभिन्न संक्रमणों के कारण बनते है जिनसे सीवरेज कर्मकार को कई तरह के स्वास्थ्य खतरों और बीमारियों का सामना करना पड़ता है, सीवरेज कर्मकार मुख्य रूप से रासायनिक और जैविक खतरों से पीड़ित होते है। इन खतरों में हानिकारक गैसों के सम्पर्क में आने के साथ-साथ कई बीमारियां जिनमें श्वसन संबंधी विकार, जीनविषाक्तता कैंसरजन्यता, मस्कुलोस्केलेटल विकार, लेप्टोस्पायरोसिस, जठरांत्रशोथ, त्वचा संबंधी विकार, हैजा, बुखार, पोलियों पेचिश, उल्टी, सिरदर्द, दस्त, पेट में ऐंठन शामिल है। सीवरेज कर्मकारों के इन स्वास्थ्य संबंधी खतरों को इंजीनियरिंग, चिकित्सकीय और विधायी उपायो द्वारा ही रोका जा सकता है जहां इंजीनियरिंग उपाय प्रक्रिया को और अधिक यांत्रिक बनाने पर ध्यान केन्द्रित कर जोखिम से बचाने में मदद करेगे वही चिकित्सकीय और विधायी उपाय सीवरेज कर्मकारों को स्वास्थ्य सेवाओं से भी लाभान्वित करने में सहायेग करेगें।

साथ ही सुरक्षित कार्य प्रक्रियाओं और व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरणों के उपयोग के बारे में शिक्षा प्रदान करने के लिए नियमित जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए। वही चिकित्सकीय और विधायी उपायों में

कानून के प्रभावी प्रवर्तन द्वारा सीवरेज कर्मकारों की सुरक्षा और स्वास्थ्य सुनिश्चित करने हेतु सुरक्षित कार्य प्रक्रियाओं और व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरणों के उपयोग के बारे में प्रशिक्षण प्रदान कर नियमित स्वास्थ्य जांच और जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए और कर्मकारों को स्वास्थ्य सेवाओ से लाभान्वित किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. क्लीनिंग ह्युमन वेस्ट मैन्यूअल स्कैवेंजिग कास्ट एण्ड डिस्क्रीमीनेशन इन इंडिया अगस्त 25, 2014 https://www.hrw.org/Report/2014/08/25/eleaning, visited 19 june 2025, 5.25
2. पार्लियामेन्ट क्वेश्चन: वेलफेर एण्ड प्रोफाइलिंग ऑफ सीवर एण्ड सेप्टिक टैंक वर्कर्स पोस्टेड ओन : 17 दिसम्बर 2024 बाय पीआईबी देहली www. pib.gov.in
3. डिजीज अमंग सीवेज वर्कर्स जनवरी 2014, ओथर्स: गौरव कोहली, मनु कोहली, वैशाली गल्होत्रा
4. हेल्थ एण्ड सेफ्टी गाइड फोर सीवेज वर्कर्स https://cpdonline. co. UK/healthsafetyguides
5. हेल्थ एण्ड सेफ्टी गाइड फोर सीवेज वर्कर्स https://cpdonline. co.uk/health&safetyguides
6. इनफेक्शन रिस्क फ्रोम वर्क वीथ सीवेज, लास्ट अपडेट - 28 नबम्बर, 2022 https:/www.worksafe.Qid.gov.ges
7. सेप्टिक टेंक विकिपीडिया, https:// en.wikipedia.org. सीवर गैंस विकिपीडिया, https://en.wikipedia.org एवरिथिंग यू आल्वेज वान्टेड टू नो अबाउट सीवर गैस बट अफ्रेड टू आस्क द सीटी ऑफ मरिनो ओहियो https://www. marionohioys देखा 29 जून 2025
8. सीवर गैंस विकिपीडिया: https://enwikipedia.org.
9. डिजेज अमंग सीवेज वर्कर्स - जनवरी 2014 गौरवकोहली - डिपार्टमेन्ट ऑफ कम्यूनिटी हेल्थ नर्सिग, एम एम इन्स्टीट्यूट, ऑफ नर्सिग, एम एम यूनिवर्सिटी मुलाना, अबांला हरियाणा, मनु कोहली डिपार्टमेन्ट ऑफ मेन्टल हेल्थ नर्सिगं माई कामों कोलेज ऑफ नर्सिंग तरनतटन हरियाणा, इंडिया वैशाली गल्होत्रा- डिपार्टमेन्ट ऑफ मेडिकल सर्जिकल नर्सिम लाला लाजपत राय इंस्टीट्युट ऑफ नर्सिंग, मोगा पंजाब, इंडिया
10. जेनोटॉक्सिसिटी, कार्सिनोजेनेसिटी एण्ड टेराटोजेनेसिटी डा. के. मनोहर बाबु, वी जें.एस कॉलेज ऑफ फार्मेसी https://www.slideshare. net
11. नेशनल प्रायोरिटीज ग्रांट्स : एवाल्यूएशन आफ एन्टीमाइक्रोबियल रेसिस्टेंस इन वेस्ट वॉटर एण्ड सीवेज स्लज ट्रीटमेंट एण्ड इट्स इम्पैक्ट ऑन द एनवायरमेन्ट, लास्ट अपडेटेड 20 अगस्त 2024 https:// www.epa-gov.translate
    हेल्थ इफेक्ट्स अमंग एम्प्लॉइज इन सीवेज ट्रीटमेन्ट प्लान्ट्स: लीटरेचर सर्वे-अगस्त 2001; जोरजन थोर्न, इरिका केरेकेस https://www. researchgate.net, रिपोर्ट सेज 'फोरएवर केमिकल्स' इन सीवेज बेस्ड फर्टिलाइजर पोज केन्सर रिस्क, बाय अलहेन्द्रा मार्तीनेस
12. राव टीबी. सोशोलोजी इन मेडिसीन फस्ट एडिशन गुंठुर : श्री ग्राफीक्स; 2002
13. कामथ एस आर त्यागी एन. के., रशीद एस. एस. ए, लंग फक्शन इन इंडियन सब्जेक्ट्स लंग इंडिया 1982; 11-21
14. आक्यूपेशनल हेल्थ ऑफ सीवरमेन, अ सीनोप्सीज ऑफ आक्यूपेशनल मेडिसीन, टूपरक्ली, 2वि एडिशन, ग्रेट ब्रिटेन 1993
15. हर्नियेट डिस्क - सिम्पट्म्स एण्ड कोजेज बाय मायोक्लीनिक स्टाफ अक्टूबर23,2023 www.mayoclinic.org , ऑस्टियोआर्थराइटिस: सिम्पट्म्स, कोजेज एण्ड ट्रिटमेन्ट-क्लेवलेंड क्लिनिक लास्ट रिन्युड 10/02/2023, www.myclevelandclinic.org, इनवर्टेबल डिस्क डिजीज-द स्पाइन ऐक्टिस ऑफ जे पेट्रिक जानसान एम डी www.spine-practice.com
16. आक्यूपेशनल हेल्थ हर्जड्स इन सीवेज एण्ड सेनीटरी वर्कर्स राजनारायण तिवारी, इंडियन जे ऑक्यूज एनवायर मेड 2008 दिसम्बर 12 (3) 112-115 पृष्ठ
17. इन्फेक्शन रिस्क फ्रेम वर्क वीथ सीवेज https://www.worksafe. qid.gov.au लास्क अपडेट 28 नवम्बर 2022
18. आक्यूपेशनल हेल्थ हर्जड्स इन सीवेज एण्ड सेनीटरी वर्कर्स राजनारायण तिवारी, इंडियन जे ऑक्यूप एनवायर मेड 2008 दिसम्बर 12 (3) 112-115 पृ.
19. वॉट आर द टोप टेन डिजीजेज कोज्ड बाय सीवेज वांटर इन इंडिया। 2025 https:// www.netsolwater.com.translate.google
20. ऑक्यूपेशनल हेल्थ एण्ड सेफ्टी सेन्टर, मुंबई : अ सर्वे ऑफ द ऑक्यूपेशनल हेल्थ हर्जइर्स एण्ड वर्किंग कंडिशन्स ऑफ वर्कर्स (लेबर) फ्रोम द मेन सीवर डिपार्टमेन्ट ऑफ द बॉम्बे मुन्सीपल कोरपोरेशन; प्रोजेक्ट नम्बर 1, 1988
21. रिचर्डसन डीबी रेसीपायरेटरी इफेक्ट्स ऑफ क्रोनिक हाइड्रोजन सल्फाइड एक्सपोजर अमेरिकन जर्नल ऑफ इंड्स्ट्रीयल मेडिसिन 1995 28 : 99-108 पेज
22. वाट आर द टोप टेन डिजीजेज कोज्ड बाय सीवेज वाटर इन इंडिया 2025. https://www.netsolwater.com.transtate.google
23. डिजीज अमंग सीवेज वर्कर्स जनवरी 2014 गौरवी कोहली, मनु कोहली, वैशाली गल्होत्रा https/www.researchgate.net इन्फेशन रिस्क फ्रोम वर्क वीथ सीवेज, लास्ट अपडेटेड 28 नवम्बर 2022 https://www.worksafegid.gov.24
    वॉट आर द टोप 10 डिजीजेज कोज्ड बाय सीवेज वॉटर इन इंड़िया 2025 https://www.sofwater.com.translate.google.
24. उन्नटि, अ स्टडी ऑफ हेल्थ प्रोफाइल ऑफ सीवरेज वर्कर्स ऑफ अहमदाबाद सीटी; (डिजरटेशन) गुजरात यूनिवर्सिटी अहमदाबाद : 1997
25. सेन्ट्रल पब्लिक हेल्थ इंजीनियरिग रिसर्च इंस्टिट्यूट नागपुर हेल्थ स्टेटस ऑफ सीवेज फार्म वर्कर्स; टेक्नीकल डाइजेस्ट, नम्बर 17, 1971
26. वाट आर द टोप टेन डिजीजेज कोज्ड बाय सीवेज वाटर इन इंड़िया 2025 https://www.netsolwater.com.translate.goolde
27. वाट आर द टोप टेन डिजीजेज कोज्ड बाय सीवेज वाटर इन इंड़िया 2025 https://www.netsolwater.com.translate.goolde
28. वाट आर द टोप टेन डिजीजेज कोज्ड बाय सीवेज वाटर इन इंड़िया 2025 https://www.netsolwater.com.translate.goolde

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय डूंगरपुर में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर का अध्ययन

महेश कुन्तल* डॉ. मिनेश भट्ट**

* शोधार्थी (शिक्षा) जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय (डीम्ड-टू-बी विश्वविद्यालय), उदयपुर (राज.) भारत
** शोध मार्गदर्शक (शिक्षा) जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय (डीम्ड-टू-बी विश्वविद्यालय), उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – बालिका शिक्षा भारत सरकार एवं स्थानीय सरकार की प्रमुख प्राथमिकता है। समाज के वास्तविक विकास एवं प्रगतिशील समाज में महिलाओं को शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ावा दिया जा रहा है। समाज में वंचित वर्ग की बालिकाओं की शिक्षा के क्षेत्र में कम महत्व दिया जाता है। जबकि वंचित वर्ग के लिए सरकार द्वारा अनेक योजनाएं संचालित है। परन्तु इससे वह लाभान्वित नहीं हो पा रहे हैं।

भारत सरकार द्वारा गरीबी उन्मूलन, सामाजिक उत्थान, शिक्षा एवं चिकित्सा सुविधा उपलब्ध करने हेतु पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण व शहरी वर्गों के लिए अनेक योजनाएं बनाई जा रही है। स्वतंत्रता प्राप्ति के इतने वर्षों बाद भी हमारा देश आर्थिक, सामाजिक शैक्षिक एवं अन्य दृष्टि से अभी तक पिछड़ा हुआ ही है। किसी भी राष्ट्र के छात्र, छात्राओं का शिक्षित होना आवश्यक है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बड़ी द्रुतगति से शिक्षा का विकास हुआ। शिक्षा एक ऐसी गतिशील प्रक्रिया है जो बालक को देशकाल तथा परिस्थिति के अनुसार अग्रसर करती है।

शिक्षा व्यक्तिगत विकास के माध्यम से सामाजिक विकास कर मनुष्य को प्राणी बनाने में सहायता करती है।

हमारे संविधान में केन्द्र सरकार के शिक्षा सम्बन्धी दायित्वों तथा नीति मार्गदर्शन सिद्धान्तों में शिक्षा सम्बन्धी प्रावधान की धारा 45 में स्पष्ट किया गया है तथा आजादी के बाद शिक्षाविदों व राजनीतिज्ञों द्वारा यह संकल्पना की गई है कि पंचवर्षीय योजना के अन्त तक देश में शत-प्रतिशत बालक-बालिकाएं शिक्षा से लाभान्वित हो सकेंगे। किन्तु आजादी के कई वर्षों बाद भी यह सपना साकार नहीं हो सका। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् से लेकर पंचवर्षीय योजनाओं तथा नई शिक्षा नीति से लेकर संवैधानिक प्रावधानों में भी गुणवत्तापरक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण के कई प्रयास किये जा रहे हैं। इसके लिए कई योजनाएं जैसे शिक्षा लहर, शिक्षा कर्मी, लोकजुम्बिश, गुरूमित्र-योजना, सर्वशिक्षा अभियान जैसे योजना के माध्यम से गुणवत्तापरक प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के अवसर प्राप्त किये जा रहे हैं। वर्तमान समय में शिक्षा प्रक्रिया में बालिकाओं को अपने अधिकतम विकास करने के अवसर दिये जा रहे हैं। क्योंकि वह समाज का एक अंग है तथा समाज को प्रत्येक बालक से कुछ अपेक्षाएं हैं।

शिक्षा का लक्ष्य न केवल व्यक्तित्व विकास करना है। अपितु सामाजिक विकास करना भी इसका लक्ष्य है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए छात्रावास की स्थापना की जाती है। छात्रावास में बालक को समाजिक बनने के अवसर मिलते है।

भारत सरकार द्वारा अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़े वर्ग की बालिकाओं के लिए सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों में आवासीय उच्च प्राथमिक विद्यालय की स्थापना के लिए कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय योजना को लागू किया।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय की स्थापना छात्राओं की शैक्षिक उन्नति के लिए केन्द्र सरकार द्वारा सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत की गई। इन विद्यालय का मुख्य उद्देश्य वंचित बालिकाओं को आवास सहित सुविधा उपलब्ध कराके सर्वांगीण विकास करना है। वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए शोधार्थी के मस्तिष्क में निम्नलिखित प्रश्न उपजे जो इस प्रकार से है-

1. कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत बालिकाओं की आकांक्षा क्या है?

शोधार्थी के मस्तिष्क में उभरने वाले उपरोक्त विचारों की संतुष्टि के लिए इस शोध विषय को करने की प्रेरणा मिली।

शोध परिकल्पना :

1. कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत बालिकाओं की आकांक्षा स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

शोध अध्ययन क्षेत्र का परिसीमन :

1. प्रस्तुत शोध कार्य कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय तक सीमित रखा गया।
2. प्रस्तुत शोध राजस्थान राज्य के उदयपुर संभाग के उदयपुर, राजसमन्द, बांसवाड़ा एवं डूँगरपुर जिले में संचालित कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय तक सीमित रखा गया।
3. प्रस्तुत शोध कार्य कक्षा 10, 11, 12 में अध्ययनरत बालिकाओं तक सीमित रखा गया।

शोध का औचित्य : किसी समस्या का औचित्य उसके परिणामों का विस्तृत क्षेत्र में सार्थकता एवं उपयुक्तता के आधार पर निश्चित कर सकते हैं। अत: शोधकर्ता ने वर्तमान समय की समस्या पर शोध करने का निश्चय किया है। भारत में बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने का सतत् प्रयास सरकार एवं सामाजिक संस्थाओं द्वारा किये जा रहे हैं। भारत सरकार द्वारा अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़े वर्ग की बालिकाओं की शैक्षिक उन्नति के लिए

कस्तूरबा गॉधी बालिका आवासीय विद्यालय की स्थापना की गई। अत: शिक्षा का लक्ष्य न केवल व्यक्तित्व का विकास अपितु सामाजिक विकास करना भी है। कस्तूरबा गॉधी बालिका आवासीय विद्यालय में अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़े वर्ग की बालिकाओं की सांवेगिक परिपक्वता, समायोजन क्षमता एवं आकांक्षा के सम्बन्ध में अध्ययन करना शोधकर्ता की शोध की दृष्टि से औचित्य है।

पारिभाषिक शब्दावली :

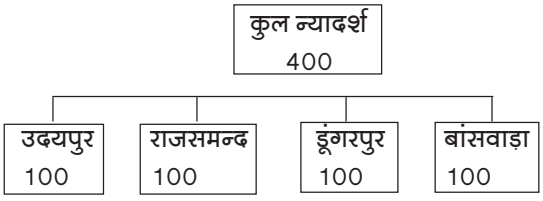
1. **कस्तूरबा गाँधी विद्यालय–**सर्व शिक्षा अभियान के तहत अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग एवं बी.पी.एल. परिवार की शिक्षा से वंचित बालिकाओं को इन विद्यालयों से जोड़ा गया है। जहाँ नि:शुल्क शिक्षा, आवास, भोजन, चिकित्सा सुविधा एवं उनके चहुंमुँखी विकास के लिए विभिन्न गतिविधियों का आयोजन किया जाता है।
2. **आकांक्षा स्तर–**हम जहाँ है, वहाँ से उच्च स्तर प्राप्त करने की इच्छा ही जीवन का लक्ष्य, आकांक्षा स्तर निर्धारित करती है। अर्थात् आकांक्षा स्तर वह सीमा बताता है। जिस सीमा तक व्यक्ति अपने जीवन के उद्देश्यों को प्राप्त करना चाहता है।
3. **अध्ययनरत बालिकाएं–**प्रस्तुत शोध में अध्ययनरत बालिकाओं से आशय उन अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग एवं बी.पी.एल. की छात्राओं से है जो कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में 10, 11, 12वीं कक्षा में अध्ययनरत है।

शोध विधि : प्रस्तुत शोध अध्ययन में समस्या की प्रकृति को देखते हुए शोधार्थी द्वारा शोध में सर्वेक्षण विधि का चयन किया गया।

शोध उपकरण : प्रस्तुत शोध कार्य में दत्तो के संकलन हेतु निम्नांकित शोध उपकरणों का उपयोग किया गया।

(1) आकांक्षा स्तर–डॉ.महेश भार्गव व डॉ. एम.ए. शाह द्वारा निर्मित मानकीकृत उपकरण आकांक्षा स्तर मापनी।

शोध का न्यादर्श : प्रस्तुत शोध में उदयपुर संभाग के उदयपुर, राजसमन्द, डूंगरपुर एवं बांसवाड़ा जिले से कुल 400 बालिकाओं (न्यादर्श) का चयन किया गया।



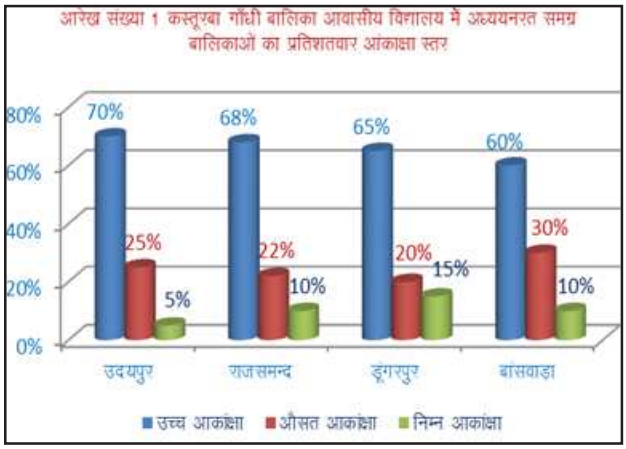
शोध में प्रयुक्त सांख्यिकी :प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्ता द्वारा तथ्यों के विश्लेषण हेतु निम्नलिखित सांख्यिकी का उपयोग किया गया –

1. मध्यमान
2. प्रमाप विचलन
3. टी–परीक्षण

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत समग्र बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर का पता लगाना।

सारणी संख्या 1: कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत समग्र बालिकाओं का प्रतिशतवार आंकाक्षा स्तर

क्र.	क्षेत्र	समूह	उदयपुर	राजसमन्द	डूंगरपुर	बांसवाड़ा
1.	आकांक्षा स्तर	उच्च आकांक्षा	70%	68%	65%	60%
		औसत आकांक्षा	25%	22%	20%	30%
		निम्न आकांक्षा	05%	10%	15%	10%



व्याख्या : उपर्यक्त सारणी एवं आरेख संख्या 1 से स्पष्ट होता है कि उच्च आकांक्षा स्तर रखने वाली बालिकाओं का प्रतिशत उदयपुर में 70 प्रतिशत, राजसमन्द में 68 प्रतिशत, डूंगरपुर में 65 प्रतिशत तथा बांसवाड़ा में 60 प्रतिशत पाया गया। इसी प्रकार औसत आकांक्षा स्तर रखने वाली बालिकाओं का प्रतिशत उदयपुर में 25 प्रतिशत, राजसमन्द में 22 प्रतिशत, डूंगरपुर में 20 प्रतिशत तथा बांसवाड़ा में 30 प्रतिशत पाया गया। इसी प्रकार निम्न आकांक्षा स्तर उदयपुर में 5 प्रतिशत, राजसमन्द में 10 प्रतिशत, डूंगरपुर में 15 प्रतिशत तथा बांसवाड़ा में 10 प्रतिशत पाया गया।

इससे पता चलता है कि कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय की बालिकाओं से निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने में सबसे अधिक 70 प्रतिशत उदयपुर का रहा। औसत लक्ष्य को प्राप्त करने में सबसे अधिक बांसवाड़ा 30 प्रतिशत रहा है। इसी तरह निम्न आकांक्षा स्तर लक्ष्य को प्राप्त करने में सबसे सबसे कम उदयपुर रहा।

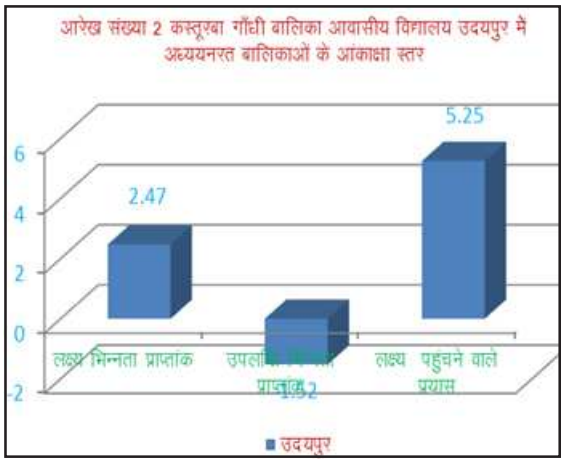
इससे निष्कर्ष निकलता है कि कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय की बालिकाओं से निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने में अधिक प्रयास करती है। निम्न आकांक्षा स्तर रखने वाली बालिकाओं की आकांक्षा स्तर की आवृति अधिक है।

1. कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय के आकांक्षा स्तर का विश्लेषण।
2. निर्धारित लक्ष्य या आंकाक्षा के प्रति इच्छा, तीव्रता का स्तर का पता लगाना, इस शोध का उद्देश्य है।
3. प्रत्येक व्यक्ति कोई भी कार्य करने से पूर्व अपने मस्तिष्क में एक लक्ष्य निर्धारित करता है तथा निश्चित अवधि में उक्त लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करता है। अगर निश्चित समयावधि में लक्ष्य को प्रापत कर लेता है तो वह प्रसन्न रहता है और आगे के लिए उससे भी ऊँचा लक्ष्य निर्धारित करता है। कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर का विश्लेषण करने का प्रयास किया जा रहा है।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय उदयपुर में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर का पता लगाना।

सारणी संख्या 2 : कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय उदयपुर में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर

	N	लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (G.D.S.)	उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक (A.D.S.)	लक्ष्य पहुंचने वाले प्रयास (N.T.R.S.)
उदयपुर		2.47	-1.52	5.25



व्याख्या : उपर्युक्त सारणी एवं आरेख संख्या 2 के आधार पर कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय उदयपुर में अध्ययनरत बालिकाओं का भिन्नता प्राप्तांक 2.47 है। यह मान धनात्मक है। यह इस बात को निर्दिष्ट करता है बालिकाओं की आकांक्षाएं अपने पूर्व प्रयास से उच्च है। बालिकाएं कोई भी कार्य करने से पहले, अपना लक्ष्य निर्धारित करना पसंद करती हैं।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय उदयपुर में अध्ययनरत बालिकाओं का उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक – 1.52 है। यह मान ऋणात्मक है। उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक का ऋणात्मक मान यह दर्शाता है कि बालिकाएं किस कार्य को पूरा करने के लिए निर्धारित लक्ष्य, वास्तविक उपलब्धि से अधिक है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि ये बालिकाएं अपने प्रयास के लक्ष्य को छू नहीं पाती है।

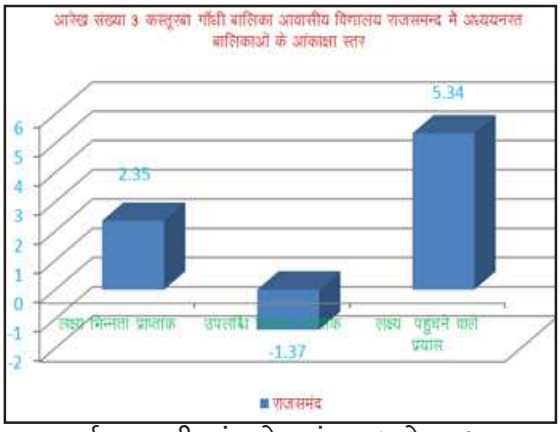
इसी प्रकार लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक **(G.D.S.)** एवं उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक **(A.D.S.)** मध्यमानों से स्पष्ट होता है कि बालिकाएं अपने निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए गम्भीर प्रयास नहीं करती लेकिन महत्वाकांक्षा सदैव उच्च रखती है तथा इनकी आकांक्षाएं वास्तविक उपलब्धि से उच्च है।

लक्ष्य तक पहुंचने वाले प्रयासों **(N.T.R.S.)** का मध्यमान 5.25 प्राप्त हुआ जो कि बालिकाएं लक्ष्य तक पहुंचने वाले प्रयास ठीक है।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय राजसमन्द में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर का पता लगाना।

आरेख संख्या 3 :कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय राजसमन्द में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर

	N	लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (G.D.S.)	उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक (A.D.S.)	लक्ष्य पहुंचने वाले प्रयास (N.T.R.S.)
राजसमंद		2.35	-1.37	5.34



व्याख्या : उपर्युक्त सारणी एवं आरेख संख्या 3 के आधार पर कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय राजसमन्द में अध्ययनरत बालिकाओं का भिन्नता प्राप्तांक 2.35 है। यह मान धनात्मक है। यह इस बात को निर्दिष्ट करता है बालिकाओं की आकांक्षाएं अपने पूर्व प्रयास से उच्च है। बालिकाएं कोई भी कार्य करने से पहले, अपना लक्ष्य निर्धारित करना पसंद करती हैं।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय राजसमन्द में अध्ययनरत बालिकाओं का उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक – 1.37 है। यह मान ऋणात्मक है। उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक का ऋणात्मक मान यह दर्शाता है कि बालिकाएं किस कार्य को पूरा करने के लिए निर्धारित लक्ष्य, वास्तविक उपलब्धि से अधिक है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि ये बालिकाएं अपने प्रयास के लक्ष्य को छू नहीं पाती है।

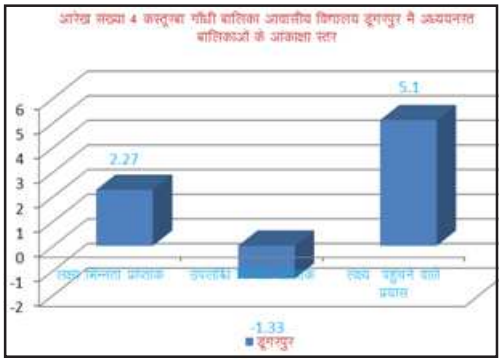
इसी प्रकार लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक **(G.D.S.)** एवं उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक **(A.D.S.)** मध्यमानों से स्पष्ट होता है कि बालिकाएं अपने निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए गम्भीर प्रयास नहीं करती लेकिन महत्वाकांक्षा सदैव उच्च रखती है तथा इनकी आकांक्षाएं वास्तविक उपलब्धि से उच्च है।

लक्ष्य तक पहुंचने वाले प्रयासों **(N.T.R.S.)** का मध्यमान 5.34 प्राप्त हुआ जो कि बालिकाएं लक्ष्य तक पहुंचने वाले प्रयास ठीक है।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय डूंगरपुर में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर का पता लगाना।

सारणी संख्या 4: कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय डूंगरपुर में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर

	N	लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (G.D.S.)	उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक (A.D.S.)	लक्ष्य पहुंचने वाले प्रयास (N.T.R.S.)
डूंगरपुर		2.27	-1.33	5.10



व्याख्या : उपर्युक्त सारणी एवं आरेख संख्या 4 के आधार पर कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय डूंगरपुर में अध्ययनरत बालिकाओं का भिन्नता प्राप्तांक 2.27 है। यह मान धनात्मक है। यह इस बात को निर्दिष्ट करता है बालिकाओं की आकांक्षाएं अपने पूर्व प्रयास से उच्च है। बालिकाएं कोई भी कार्य करने से पहले, अपना लक्ष्य निर्धारित करना पसंद करती हैं।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय डूंगरपुर में अध्ययनरत बालिकाओं का उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक – 1.33 है। यह मान ऋणात्मक है। उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक का ऋणात्मक मान यह दर्शाता है कि बालिकाएं किस कार्य को पूरा करने के लिए निर्धारित लक्ष्य, वास्तविक उपलब्धि से अधिक है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि ये बालिकाएं अपने प्रयास के लक्ष्य को छू नहीं पाती है।

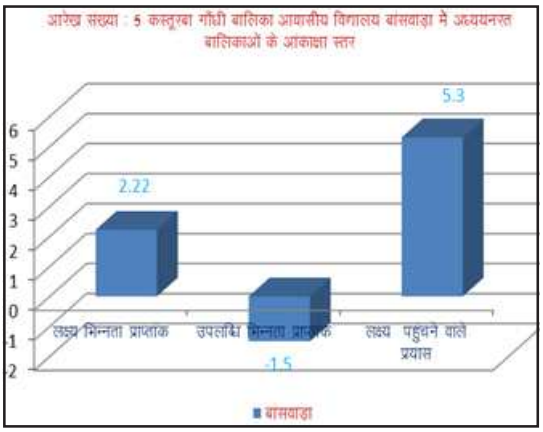
इसी प्रकार लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक **(G.D.S.)** एवं उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक **(A.D.S.)** मध्यमानों से स्पष्ट होता है कि बालिकाएं अपने निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए गम्भीर प्रयास नहीं करती लेकिन महत्वाकांक्षा सदैव उच्च रखती है तथा इनकी आकांक्षाएं वास्तविक उपलब्धि से उच्च है।

लक्ष्य तक पहुंचने वाले प्रयासों **(N.T.R.S.)** का मध्यमान 5.10 प्राप्त हुआ जो कि बालिकाएं लक्ष्य तक पहुंचने वाले प्रयास ठीक है।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय बांसवाड़ा में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर का पता लगाना।

सारणी संख्या : 5: कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय बांसवाड़ा में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर

	N	लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक (G.D.S.)	उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक (A.D.S.)	लक्ष्य पहुंचने वाले प्रयास (N.T.R.S.)
बांसवाड़ा		2.22	–1.50	5.30



व्याख्या : उपर्युक्त सारणी एवं आरेख संख्या 5 के आधार पर कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय बांसवाड़ा में अध्ययनरत बालिकाओं का भिन्नता प्राप्तांक 2.22 है। यह मान धनात्मक है। यह इस बात को निर्दिष्ट करता है बालिकाओं की आकांक्षाएं अपने पूर्व प्रयास से उच्च है। बालिकाएं कोई भी कार्य करने से पहले, अपना लक्ष्य निर्धारित करना पसंद करती हैं।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय बांसवाड़ा में अध्ययनरत बालिकाओं का उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक – 1.50 है। यह मान ऋणात्मक है। उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक का ऋणात्मक मान यह दर्शाता है कि बालिकाएं किस कार्य को पूरा करने के लिए निर्धारित लक्ष्य, वास्तविक उपलब्धि से अधिक है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि ये बालिकाएं अपने प्रयास के लक्ष्य को छू नहीं पाती है।

इसी प्रकार लक्ष्य भिन्नता प्राप्तांक **(G.D.S.)** एवं उपलब्धि भिन्नता प्राप्तांक **(A.D.S.)** मध्यमानों से स्पष्ट होता है कि बालिकाएं अपने निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए गम्भीर प्रयास नहीं करती लेकिन महत्वाकांक्षा सदैव उच्च रखती है तथा इनकी आकांक्षाएं वास्तविक उपलब्धि से उच्च है।

लक्ष्य तक पहुंचने वाले प्रयासों **(N.T.R.S.)** का मध्यमान 5.30 प्राप्त हुआ जो कि बालिकाएं लक्ष्य तक पहुंचने वाले प्रयास ठीक है।

शोध निष्कर्ष :

1. कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत समग्र बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर का पता लगाना।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय की बालिकाओं से निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने में अधिक प्रयास करती है। निम्न आकांक्षा स्तर रखने वाली बालिकाओं की आकांक्षा स्तर की आवृति अधिक है।

2. कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय उदयपुर में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर का पता लगाना।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय उदयपुर में अध्ययनरत बालिकाओं का भिन्नता प्राप्तांक 2.47 है। यह मान धनात्मक है। यह इस बात को निर्दिष्ट करता है बालिकाओं की आकांक्षाएं अपने पूर्व प्रयास से उच्च है। बालिकाएं कोई भी कार्य करने से पहले, अपना लक्ष्य निर्धारित करना पसंद करती हैं।

3. कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय राजसमन्द में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर का पता लगाना।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय राजसमन्द में अध्ययनरत बालिकाओं का भिन्नता प्राप्तांक 2.35 है। यह मान धनात्मक है। यह इस बात को निर्दिष्ट करता है बालिकाओं की आकांक्षाएं अपने पूर्व प्रयास से उच्च है। बालिकाएं कोई भी कार्य करने से पहले, अपना लक्ष्य निर्धारित करना पसंद करती हैं।

4. कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय डूंगरपुर में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर का पता लगाना।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय डूंगरपुर में अध्ययनरत बालिकाओं का भिन्नता प्राप्तांक 2.27 है। यह मान धनात्मक है। यह इस बात को निर्दिष्ट करता है बालिकाओं की आकांक्षाएं अपने पूर्व प्रयास से उच्च है। बालिकाएं कोई भी कार्य करने से पहले, अपना लक्ष्य निर्धारित करना पसंद करती हैं।

5. कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय बांसवाड़ा में अध्ययनरत बालिकाओं के आंकाक्षा स्तर का पता लगाना।

कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय बांसवाड़ा में अध्ययनरत बालिकाओं का भिन्नता प्राप्तांक 2.22 है। यह मान धनात्मक है। यह इस बात को निर्दिष्ट करता है बालिकाओं की आकांक्षाएं अपने पूर्व प्रयास से उच्च है। बालिकाएं कोई भी कार्य करने से पहले, अपना लक्ष्य निर्धारित करना पसंद करती हैं।

शैक्षिक निहितार्थ : प्रस्तुत शोध कार्य **कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत बालिकाओं**, प्राचार्यों, शिक्षकों, वार्डन, अभिभावकों, के लिए उपयोगी है। जिनका विस्तृत विवरण इस प्रकार है :–

1. प्राचार्यों के लिए :– कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में

अध्ययनरत बालिकाओं की प्राचार्य शिक्षा के गुणात्मक विकास हेतु कार्यक्रम आयोजित करावे। कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत बालिकाओं की शिक्षण व आवास संबंधी सुविधा से अधिकतम अध्ययनरत छात्राएं लाभान्वित हांगीं। शिक्षा का स्तर बढ़ाने हेतु शिक्षण की नई तकनीकी व प्रविधियों की उपलबधता छात्राओं को करावें।

2. शिक्षक के लिए :- **कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत बालिकाओं** के शिक्षकों को नवीन तकनीकी के ज्ञान हेतु कार्यशालाएँ आयोजित करनी चाहिए, जिससे शिक्षा के उन्नयन स्तर हेतु कक्षा-कक्ष में शिक्षण में उपयोग कर छात्राओं को नवीनतम शिक्षण तकनीक के माध्यम शिक्षण को आसान व आकर्षक बना सके।

3. वार्डन के लिए :- कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत बालिकाओं में वार्डन के साथ वार्डन सहायक की नियुक्ति की जाए, जिससे वार्डन का कार्यभार कम तथा अवकाश पर जाने में समस्या उत्पन्न नहीं हो। सरकार द्वारा प्रदत्ता सुविधाओं को छात्राओं को लाभान्वित करने में सहायता मिलती है।

4. छात्रों के लिए :- **कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत बालिकाओं** में शिक्षक, अनुदेशक तथा कार्यालय की नियुक्ति निम्नानुसार हो।

- जिससे छात्राओं का सर्वांगीण विकास हो सके।
- छात्राओं की शैक्षिक व सहशैक्षिक उपलब्धियाँ हो सके।
- छात्राओं को कम्प्यूटर व तकनीकी का अधिक से अधिक ज्ञान दे।

लाभान्वित कर सके, जिससे छात्रों का वैयक्तिक व शैक्षिक जीवन स्तर उन्नयन हो सके।

5. अभिभावाकों के लिए :- कस्तूरबा गाँधी बालिका आवासीय विद्यालय में अध्ययनरत बालिकाओं में अध्ययनरनत् विद्यार्थियों के अभिभावक समय-समय पर विद्यालय प्रशासन से छात्राओं के शैक्षिक व सहशैक्षिक उपलब्धि के बारे में पता करें। विद्यालय प्रशासन से छात्राओं की शैक्षिक व सहशैक्षिक उपलब्धि उन्नयन हेतु चर्चा विचार-विमर्श करके उहयोग प्रदान करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 Joshi, Mohan C.(1964):"A factorial study of the adjustment, Indian psychological review, Vol I.
2 Tallent, Norman (1978):Psychology of adjustment understanding ourselves and others, D Van Nostrand Company, New York.
3 Shrimali, P.L.(1961):A study of the adjustment problems of pupil teachers Journal of education and psychology, Vol. 9, April, 1961.
4 Shaffer L.F. (1936): The psychology of adjustment, New York, Houghton, Mifflin 1936.
5 Shaffer, and Shofen (1956) :The psychology of adjustment, Boston, Houghton Mifflin Co.
6 Mohammad Yunus: A study of adjustment and values of teachers of intermediate colleges of Bulandshar in U.P., C.I.E., Delhi, 1970.
7 Mangal, S.K. (1984):Dimensions of teacher adjustment, Vishal publications, university campus, Kurukshetra.
8 Joshi, Mohan C.(1964):"A factorial study of the adjustment, Indian psychological review, Vol I.
9 त्रिपाठी, मधुसूदन : शिक्षण अधिगम की मनोवैज्ञानिक पद्धति, 2007, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
10 सरोज आनन्द एवं सुमनलता(2000):छात्रों के प्रत्यक्षीकृत माता-पिता के व्यवहार एवं सामाजिक आर्थिक स्थिति का अध्ययन किया।
11 पाठक, डॉ. आर.पी.,पाण्डेय अमिता, 2012 : शिक्षा में अनुसंधान एवं सांख्यिकी, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
12 गोयल, स्वामी प्यारी(2002):किशोर बालिकाओं के मूल्यों, सुरक्षा की भावना तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि से सम्बन्ध का अध्ययन किया।
13 नजात, सुलेमान(2002):पूर्व प्राथमिक विद्यालय के बालकों पर घरेलू वातावरण के प्रभाव का अध्ययन किया।
14 कपिल, एच.के. (2006):'साँख्यिकी के मूल तत्व', विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
15 ढौंडियाल, एस.एन. फाटक, अरविन्द बी.(1972):शैक्षिक अनुसंधान का विधिशास्त्र, जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
16 ढौंडियाल, एस.एन. फाटक, अरविन्द बी.(2003):शैक्षिक अनुसंधान का विधिशास्त्र, जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
17 रायजादा, बी. एस.1997 : शिक्षा में अनुसंधान के आवश्यक तत्व, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
18 भटनागर, आर.पी. एवं भटनागर, मिनाक्षी(2008):शिक्षा अनुसंधान, मेरठ, आर. लाल बुक डिपो।
19. सुखिया एस. पी. मेहरोत्रा, आर. एन. (1970):'शैक्षिक अनुसधान के मूल तत्व' विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
20. अग्निहोत्री, रविन्द्र (2006):आधुनिक भारतीय शिक्षा की समस्याएँ एवं समाधान, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
21. अग्रवाल वाय.पी. (2020): स्टेटिकल मेथड स्टर्लिंग पब्लिकेशन प्रा.लि.।
22. अब्राहम, जेरी (2006):गाइडेन्स एण्ड काउंसलिंग फॉर टीचर सरूप एण्ड सन्स पब्लिकेशर एज्युकेशन, दिल्ली।
23. अस्थाना, डॉ. विपिन (2004): मनोविज्ञान और शिक्षा में सांख्यिकी, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
24. कपिल, एच.के. (2002):अनुसंधान विधियाँ, अगरा राखी प्रकाशन
25. गणेशन, एन.एस. (2009):अनुसंधान प्राविधि सिद्धांत और प्रक्रिया, इलाहाबाद
26. गैंड डी. एन. तथा शर्मा आर.पी.:शैक्षिक एवं माध्यमिक शिक्षालय व्यवस्था (रामप्रसाद एण्ड सन्स आगरा।)
27. जायसवाल डॉ. सीताराम :भारतीय शिक्षा का विकास एवं समस्याएं, प्रकाशन केन्द्र लखनऊ
28. बेस्ट, जे. डब्ल्यू (1986):रिसर्च इन एज्युकेशन प्रिंटिग हॉल ऑफ इण्डिया, प्रा. लि. नई दिल्ली।
29. बेस्ट, जे. डब्ल्यू (1989):रिसर्च इन एज्युकेशन प्रिंटिग हॉल ऑफ इण्डिया प्रा. लि. नई दिल्ली, 1989

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय की शैक्षिक व सहशैक्षिक उपलब्धियों का अध्ययन

नरेन्द्र कुमार* डॉ. सुभाष पुरोहित**

* शोधार्थी (शिक्षा) जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय (डीम्ड-टू-बी विश्वविद्यालय), उदयपुर (राज.) भारत
** शोध मार्गदर्शक (शिक्षा) जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय (डीम्ड-टू-बी विश्वविद्यालय), उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – वर्तमान समय में सम्पूर्ण विश्व एक ग्राम की भांति सामीप्य पूर्ण हो चुका है। इस स्थिति में गरीब को गणेश मानते हुए वंचित वर्ग के बालकों को उत्कृष्ट शिक्षा तक पहुंच सुनिश्चित करने हेतु एवं वैश्वीकरण, उदारीकरण, वैज्ञानिकी एक तकनीकी शिक्षा में वृद्धि के फलस्वरूप शिक्षकों की शिक्षण विधियों एवं छात्र-छात्राओं के अधिगम हेतु नवीन उपकरणों, संसाधनों एवं आधुनिक युक्तियों का प्रयोग अवश्य भावी हो गया है। राष्ट्र के सवर्णिम भविष्य के लिए माध्यमिक स्तर की शिक्षा हेतु 14 से 18 वर्ष तक के बालक-बालिकाओं के विचार से 15 अगस्त 2007 को तत्कालीन प्रधानमंत्री द्वारा शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े विकास खण्डों में एक आदर्श विद्यालय की स्थापना की अवधारणा की गई।

भारत सरकार द्वारा गरीबी उन्मूलन, सामाजिक उत्थान, चिकित्सा एवं शिक्षा सुविधाएं उपलब्ध करने हेतु पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण एवं शहरी वर्गों के लिए अनेक योजनाएं बनाई जा रही हैं स्वतंत्रता प्राप्ति के इतने वर्षो के बाद भी हमारा देश आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक एवं अन्य दृष्टि से भी पिछड़ा हुआ हैं किसी भी राष्ट्र की उन्नति एवं राष्ट्र के विकास के लिए राष्ट्र के नागरिकों को शिक्षित होना परम आवश्यक है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में बडी द्रुतगति से शिक्षा का विकास हुआ। शिक्षा एक ऐसी गतिशील प्रक्रिया है जो बालक को देशकाल तथा परिस्थिति के अनुसार अग्रसर करती है। शिक्षा व्यक्तिगत विकास के माध्यम से सामाजिक विकास कर मनुष्य में मनुष्यता संचारित करने में सहायता करती हैं इस प्रकार बालक का समुचित विकास शिक्षा से सही संभव है। हमारे संविधान में केन्द्र सरकार के शिक्षा सम्बन्धी दायित्वों तथा नीति के मार्गदर्शन सिद्धान्तों में शिक्षा सम्बन्धी दायित्वों तथा नीति के मार्गदर्शन सिद्धान्तों में शिक्षा संबंधी प्रावधान की धारा 45 में स्पष्ट किया गया है तथा आजादी के बाद शिक्षाविदों तथा राजनीतिज्ञों द्वारा यह संकल्पना की गई है कि पंचवर्षीय योजनाओं से देश में बालक शिक्षा से लाभान्वित हो सके। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् से लेकर पंचवर्षीय योजनाओं तथा नई शिक्षा नीति से लेकर संवैधानिक प्रावधानों में भी गुणवत्तापरक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के कई प्रयास शिक्षा के क्षेत्र में किए जा रहे है। वर्तमान शिक्षा प्रक्रिया में बालकों की अपने अधिकतम विकास करने के अवसर दिए जाते है। क्योंकि यह समाज का एक अंग है एवं समाज की प्रत्येक बालक से कुछ अपेक्षाएं है। शिक्षा का लक्ष्य न केवल व्यक्तित्व का विकास करना है अपितु सामाजिक विकास करना भी इसका लक्ष्य है और गाँवों में छात्रों के लिए उच्च माध्यमिक शिक्षा की व्यवस्था भी नही हैं अत: इन कारणों से मॉडल आवासीय विद्यालयों की स्थापना की गई। इन विद्यालयों में छात्रों को रहने व शिक्षा की व्यवस्था की जाती है। छात्रों को न केवल उच्चतर शिक्षा दी जाती है अपितु उन्हें सामाजिक बनने का अवसर भी मिलता है।

भारत सरकार द्वारा अनुसूचित जाति, जनजाति तथा पिछड़े वर्ग के बालकों के लिए मॉडल आवासीय विद्यालय की स्थापना की गई।

जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय की स्थापना बालकों की शैक्षिक उन्नति के लिए की गई है। इन विद्यालयों का मुख्य उद्देश्य शिक्षा से वंचित बालकों को आवास सहित सुविधा उपलब्ध कराना है।

उदयपुर के जनजाति विभाग के प्रायोजना अधिकारी एवं टीम सदस्यों की गुजरात में संचालित आवासीय विद्यालय की रिपोर्ट बनाने के निर्देश दिये गए रिपोर्ट के आधार पर राजस्थान में जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालयों की स्थापना का प्रस्ताव पारित किया गया। राजस्थान राज्य के अनुसूचित क्षेत्र में अनुच्छेद 275 (1) के तहत जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय की स्थापना की गई। सन् 2001 में सर्वप्रथम सलुम्बर तहसील में जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय की स्थापना की गई है।

जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय का उद्देश्य दूरस्थ क्षेत्रों में अनुसूचित जनजाति (एस.टी) के छात्रों को गुणवत्ता वाले मध्य और उच्च स्तर की शिक्षा प्रदान करना है, न केवल उन्हें उच्च और पेशेवर शैक्षिक पाठ्यक्रमों में सरकारी और सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में रोजगार का लाभ उठाने में सक्षम बनाना है। गैर-अनुसूचित जनजाति की आबादी के समान शिक्षा के सर्वोत्तम अवसरों तक पहुंच के लिए भी इन विद्यालयों की स्थापना की गई साथ ही इनसे जो प्राप्तियाँ होगी वे इस प्रकार है :-

1. प्रत्येक जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय में नामांकित सभी छात्रों के व्यापक शारीरिक, मानसिक और सामाजिक रूप से विकास होगा।
2. मानक (कक्षा) 11 और 12 में उन लोगों के लिए शैक्षिक सहायता पर अलग-अलग फोकस किया जाना चाहिए और उन मानकों के अनुसार जिन्हें कक्षा 6 से 10 माने, ताकि उनकी विशिष्ट

आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके।

3. वार्षिक चलने वाले खर्चों का समर्थ ऐसे तरीके से करें जो कर्मचारियों को उचित पारिश्रमिक प्रदान करता है और सुविधाओं की देखभाल करता हे।
4. छात्र जीवन की शिक्षा शारीरिक, पर्यावरण और सांस्कृतिक आवश्यकताओं को प्रदान करने वाली बुनियादी ढांचे के निर्माण का समर्थन करना।

समस्या का औचित्य – वर्तमान शिक्षा प्रक्रिया में बालक को अपने अधिकतम विकास करने के अवसर दिए जाते है, क्योंकि यह समाज का एक अंग एवं समाज के प्रत्येक बालक से कुछ अपेक्षाएं है। शिक्षा का लक्ष्य न केवल व्यक्तिगत विकास करना है। अपितु सामाजिक विकास करना भी इसका लक्ष्य है। इन लक्ष्यों को पूरा करने के लिए मॉडल आवासीय विद्यालयों की स्थापना की गई।

भारत सरकार द्वारा अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़े वर्ग के बालक बालिकाओं की अनुभत समस्याओं एवं इन विद्यालयों में उपलब्ध भौतिक एवं मानवीय संसाधनों के विषय में अध्ययन करना शोध की दृष्टि से उपयोगी होगा। आदिवासी बालक–बालिकाओं में शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए यह विद्यालय कहाँ तक साबित हो रहे है?

शोध विधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन में समस्या की प्रकृति को देखते हुए शोधकर्ता द्वारा शोध में केस स्टडी (वैयक्तिक अध्ययन) का प्रयोग किया गया।

शोध उपकरण –संरचित साक्षात्कार अनुसूची:

1. संभागीय आयुक्त
2. प्रधानाचार्य
3. वार्डन
4. शिक्षक
5. पी.टी.आई
6. पुस्तकालय अध्यक्ष
7. अभिभावक

अध्ययन क्षेत्र का परिसीमन – आज ज्ञान का विभिन्न क्षेत्रों में इतना व्यापक प्रचार एवं प्रसार हो गया है कि किसी भी विषय का क्षेत्र अपने आप में असीमित है। अत: समस्या का परिसीमन निम्नानुसार किया गया :–

1. प्रस्तुत शोध कार्य को राजस्थान राज्य तक ही सीमित किया गया।

न्यादर्श का चयन – शोध कार्य में शोधार्थी द्वारा उदयपुर जिले में राजस्थान सरकार के जनजाति क्षेत्रीय विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय ढीकली एवं सलुम्बर का चयन किया। प्रत्येक विद्यालय से प्राचार्य एवं वार्डन का चयन किया गया। प्रत्येक विद्यालय से 5 शिक्षकों का चयन करते हुए कुल 10 शिक्षकों का चयन किया गया। इनमें उन्हीं शिक्षकों का चयन किया गया है जो विद्यालय में 3 वर्ष से अधिक अवधि से कार्यरत है। 5 से अधिक शिक्षकों की संख्या होने पर ज्यादा समय से कार्यरत शिक्षकों का चयन किया गया। प्रत्येक विद्यालय में कक्षा 10 से 12 में अध्ययनरत 45 छात्रों का चयन यादृच्छिक विधि से करते हुए कुल 90 छात्रों का चयन किया गया। प्रत्येक विद्यालय से 10 छात्रों के अभिभावकों का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया। न्यादर्श का स्वरूप इस प्रकार :–

जनजाति क्षेत्र विभाग द्वारा मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय

ढीकली **सलुम्बर**

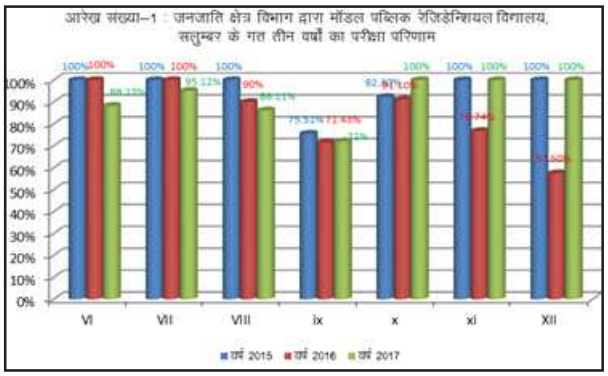
क्र.	समूह
1.	संभागीय आयुक्त
2.	प्राचार्य
3.	शिक्षक
4.	वार्डन
5.	छात्र
6.	अभिभावक
7.	शारीरिक शिक्षक

क्र.	समूह	केस–1	केस–2	कुल
1.	प्राचार्य	1	1	2
2.	शिक्षक	5	5	10
3.	वार्डन	1	1	2
4.	छात्र	45	45	90
5.	अभिभावक	10	10	20
6.	शारीरिक शिक्षक	1	1	2

जनजाति क्षेत्र विभाग द्वारा मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालयों की शैक्षिक गतिविधि – शोधार्थी द्वारा जनजाति क्षेत्रीय विभाग द्वारा राजस्थान राज्य में संचालित 6 जनजाति क्षेत्र विभाग द्वारा मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालयों का व्यक्तित्व अध्ययन करने पर विद्यालयों की शैक्षिक उपलब्धियां निम्न प्रकार से पायी गयी :–

सारणी संख्या –1: जनजाति क्षेत्र विभाग द्वारा मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय, सलुम्बर के गत तीन वर्षों का परीक्षा परिणाम

कक्षा	वर्ष 2015	वर्ष 2016	वर्ष 2017
VI	100%	100%	88.23%
VII	100%	100%	95.12%
VIII	100%	90%	86.11%
IX	75.51%	71.43%	72%
X	92.3%	91.1%	100%
XI	100%	76.74%	100%
XII	100%	57.5%	100%

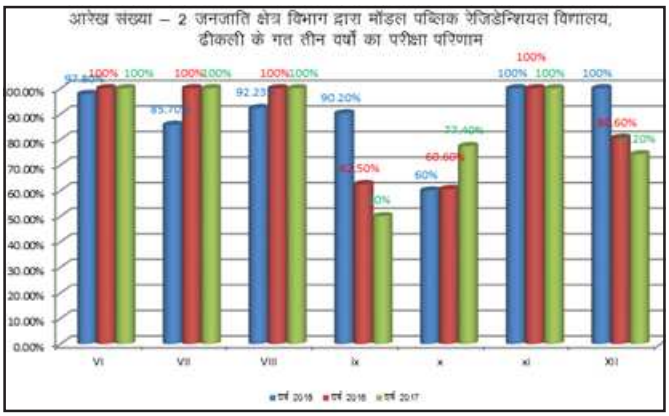


व्याख्या – शोधार्थी द्वारा जनजाति क्षेत्र विभाग द्वारा मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय, सलुम्बर के गत तीन वर्षों का परीक्षा परिणाम का विश्लेषण करने पर निम्नलिखित परिणाम पाये गये है:–

1. वर्ष 2015 में कक्षा 6 तथा 10 के अलावा सभी कक्षाओं का परिणाम शत प्रतिशत रहा है।
2. वर्ष 2016 में कक्षा 9 व 12 का परीक्षा परिणाम वर्ष 2015 की अपेक्षा शिक्षकों की कमी के कारण कम रहा है।
3. वर्ष 2017 में कक्षा 9वीं का परीक्षा परिणाम अन्य कक्षाओं के परीक्षा परिणाम से कम पाया गया है।

सारणी संख्या – 2: जनजाति क्षेत्र विभाग द्वारा मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय, ढीकली के गत तीन वर्षों का परीक्षा परिणाम

कक्षा	वर्ष 2015	वर्ष 2016	वर्ष 2017
VI	97.8%	100%	100%
VII	85.7%	100%	100%
VIII	92.23%	100%	100%
IX	90.2%	62.5%	50%
X	60%	60.6%	77.4%
XI	100%	100%	100%
XII	100%	80.6%	74.2%



व्याख्या – शोधार्थी द्वारा जनजाति क्षेत्र विभाग द्वारा मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय, ढीकली के गत तीन वर्षों का परीक्षा परिणाम का विश्लेषण करने पर निम्नलिखित परिणाम पाये गये है:–

1. वर्ष 2015 में कक्षा 10 का परीक्षा परिणाम अन्य कक्षाओं की तुलना में बहुत कम रहा है।
2. वर्ष 2016 में कक्षा 9 व 10 का परीक्षा परिणाम अन्य कक्षाओं की तुलना में बहुत कम रहा है।
3. वर्ष 2017 में कक्षा 9 व 12 का परीक्षा परिणाम अन्य कक्षाओं की तुलना में बहुत कम रहा है।

शोध निष्कर्ष – शोधार्थी द्वारा शोधकार्य में निम्न निष्कर्ष पाये गये :–

1. जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय का वैयक्तिक अध्ययन करने पर पाया गया है कि राजस्थान राज्य में संचालित जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय राजस्थान के आदिवासी जनजाति क्षेत्र मे उपयोजना क्षेत्र में संचालित हैं शोधार्थी ने पाया कि अधिकांश 90 प्रतिशत जनसंख्या है, जिनका शिक्षा स्तर न्यून के बराबर हैं अधिकांश जनसंख्या कृषि कार्य, पशुपालन करके जीवनयापन करते हैं स्वतन्त्रता के पश्चात् शिक्षा का स्तर बढ़ाने हेतु भारत व राजस्थान सरकार द्वारा निरन्तर प्रयास किए जा रहे है। शिक्षा स्तर बढ़ाने हेतु नि:शुल्क व आवासीय सुविधा भी प्रदान की गई। राजस्थान सरकार द्वारा आश्रम छात्रावास, कस्तूरबा बालिका आवासीय विद्यालय नवोदय विद्यालय, खेल छात्रावास आदि आवासीय विद्यालयों की स्थापना की गई। शिक्षा विस्तार हेतु सरकार द्वारा निरन्तर किए गए प्रयासों का सकारात्मक परिणाम दिखाई दे रहा है। शिक्षा का विस्तार जनसंख्या के व्यक्तित्व, सामाजिक व आर्थिक पर दिखाई दे रहा है।

2. **प्रवेश प्रक्रिया –** जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय का वैयक्तिक अध्ययन करने पर शोधार्थी ने पाया कि सभी जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालयों में प्रवेश प्रक्रिया एक समान है। प्रवेश हेतु जनजाति विभाग द्वारा राष्ट्रीय अखबार मे प्रवेश विज्ञप्ति जारी की जाती है। जिसमें 50 प्रतिशत छात्र जिले के, 30 प्रतिशत छात्र राज्य के एवं 20 प्रतिशत छात्र उपयोजन क्षेत्र (T.S.P.) के छात्रों को प्रवेश दिया जाता हैं। प्रवेश सिर्फ आदिवासी छात्रों को दिया जाता है जिनके अभिभावक कर दाता नहीं होते है। प्रवेश हेतु लिखित परीक्षा प्रक्रिया व साक्षात्कार कराये जाते है। प्रवेश मेरिट के आधार पर दिया जाता है। प्रवेश प्रक्रिया में राजनैतिक व स्थानीय प्रतिनिधियों का कोई हस्तक्षेप नहीं होता हैं जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय मे आदिवासी छात्रों को पारदर्शिता से प्रवेश प्रक्रिया कराके प्रवेश दिया जाता है। प्रवेश प्रक्रिया का मुख्य संरक्षक जनजाति विकास विभाग के संभागीय आयुक्त होता है। जिसके अधीनस्थ योजना अधिकारी होता है। योजना अधिकारी द्वारा सभी जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय के प्राचार्य व शिक्षक प्रतिनिधि के रूप में सदस्य होते है। प्रवेश प्रक्रिया के समस्त अधिकारी व दायित्व संरक्षक के पास सुरक्षित रहते है।

शैक्षिक निहितार्थ – प्रस्तुत शोध कार्य जनजाति विभाग, प्राचार्यो, शिक्षकों, वार्डन, छात्रो, अभिभावकों, समुदाय, पुस्तकालय एवं शारीरिक शिक्षक के लिए उपयोगी है। जिनका विस्तृत विवरण इस प्रकार है :–

1. **जनजाति विभाग के लिए** – जनजाति विभाग को समय–समय पर जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालयों के विकास/उन्नयन हेतु प्रयास किए जाने चाहिए। शारीरिक शिक्षक, कम्प्यूटर शिक्षक एवं लेब सहायक की नियुक्ति भी होवे। शिक्षकों के अभाव में शिक्षण का उपयोग छात्र हित में नही हो पा रहा है।
2. **प्राचार्यो के लिए –** जनजाति क्षेत्रीय विभाग द्वारा संचालित जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय की शिक्षण आवास संबंधी सुविधा से अधिकतम से अधिकतम अध्ययनरत छात्र लाभान्वित होवें। शिक्षा का स्तर बढ़ाने हेतु शिक्षण की नई तकनीकी व प्रविधियों की उपलबधता छात्रों व शिक्षकों को करावें।
3. **शिक्षक के लिए** – जनजाति क्षेत्रीय विभाग द्वारा संचालित जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय के शिक्षक शिक्षा के उन्नयन स्तर हेतु कक्षा–कक्ष में शिक्षण में उपयोग कर छात्रों को नवीनतम शिक्षण तकनीक के माध्यम शिक्षण को आसान व आकर्षक बना सके। अतिरिक्त कार्यभार से शिक्षण प्रभावित होता है।
4. **वार्डन के लिए** – जनजाति क्षेत्रीय विभाग द्वारा संचालित जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय में वार्डन के साथ वार्डन सहायक की नियुक्ति की जाए, जिससे वार्डन का कार्यभार कम

तथा अवकाश पर जाने में समस्या उत्पन्न नहीं हो। सरकार द्वारा प्रदत्ता सुविधाओं को छात्रों को लाभान्वित करने में सहायता मिलती है। वार्डन की प्रबन्धन कुशलता व क्षमता में वृद्धि होती है।

5. छात्रों के लिए – जनजाति क्षेत्रीय विभाग द्वारा संचालित जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय में शिक्षक, अनुदेशक तथा कार्यालय कर्मचारी की नियुक्ति निम्नानुसार हो।

i. जिससे छात्रों का सर्वांगीण विकास हो सके।
ii. छात्रों की शैक्षिक व सहशैक्षिक उपलब्धियाँ हो सके।
iii. छात्रो को कम्प्यूटर व तकनीकी का अधिक से अधिक ज्ञान दे। लाभान्वित कर सके, जिससे छात्रों का वैयक्तिक व शैक्षिक जीवन स्तर उन्नयन हो सके।

6. अभिभावकों के लिए – जनजाति क्षेत्रीय विभाग द्वारा संचालित जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय में अध्ययनरनत् विद्यार्थियों के अभिभावक समय–समय पर विद्यालय प्रशासन से छात्रों के शैक्षिक व सहशैक्षिक उपलब्धि के बारे में पता करें। विद्यालय प्रशासन से छात्रों की शैक्षिक व सहशैक्षिक उपलब्धि उन्नयन हेतु चर्चा विचार–विमर्श करके सहयोग प्रदान करें।

i. जनजाति क्षेत्रीय विभाग द्वारा संचालित जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय में अभिभावकों को चाहिए कि छात्रों को अनावश्यक विद्यालय से अवकाश दिलाकर घरेलू कार्य न करावे।
ii. जनजाति क्षेत्रीय विभाग द्वारा संचालित जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय में छात्रों को वर्षभर सत्र दिवस में अधिकतर समय विद्यालयों में ही व्यतीत करने देवे।
iii. जनजाति क्षेत्रीय विभाग द्वारा संचालित जनजाति विभाग द्वारा संचालित मॉडल पब्लिक रेजिडेन्शियल विद्यालय में प्राप्त सुविधाओं का छात्रो को लाभान्वित कराने हेतु सुसभ्य नागरिक बनाकर उज्जवल देश निर्माण में सहायता प्रदान करावे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अनुसूचित जातियों व जनुसूचित जनजातियों के आयुक्त की रिपोर्ट, (26वीं) भाग–1, 289–79, पृष्ठ 1–2
2. Dixit. U.N. (Director) : "A govt. of India Project on Tribal Education Ministry of Human Resource Development (Department of Education)". June-1987, New Delhi – Inter District variation in the development of Tribal Education in Rajasthan. {.37, Chapter V.
3. Imperial Gazettear of India Provincial series Rajputana, 1989, Superintendent of Govt. Printing Calcutta, P.87.
4. Imperial Gazettear of India Provincial series Rajputana, 1908, Superintendent of Govt. Printing Calcutta, P.36.
5. Jain, S.C. : "Community Development Panchayati Raj in India", 1987, Preface Allied Publishers.
6. Nanda, Sachchida : "The Social" Problems of the Education of Schedule Tries", 1967, Edited by M.S. Gore, Desai & Suma Chitnis Sociology of Education in India, P.204-5.
7. नवल, मदनलाल : 'अनुसूचित जातियां एवं अनुजातियां (राजस्थान के परिप्रेक्ष्य में)', 1989, ब्रिलियन्ट पब्लिशर्स, शाहदरा दिल्ली, पृ.153।
8. Roat, Harish Chandra : "Tribal Settlement System and Development Strategy, 1987, Himanshu Publications, Udaipur (Rajasthan.) P. 37-38,
9. Shering, M.A. : "The Tribes and Casted of Rajasthan", 1975, Cosmo Publications Delhi, P. 78
10. Shering, M.A. : "The Tribes and Casted of Rajasthan", 1975, Cosmo Publications Delhi, P. 81-82.
11. Singh, K.P : Tribal Development .in India", 1988, Uppal Publishing House, New Delhi, P. 344.
12. Singhi, Ajit K. : "Tribal Development in India", 1984, Classical Publishing Co., New Delhi, P.88.
13. Singhi, N.K : "Education and Social Change" 1979, Rawat Publications Jaipur. P. 299.
14. Thakkar, A.V. : "The Problems of Primitive Tribes of India".
15. Tharamvir : "Tribal Women Changing Spectrum in India", 1990, Preface Classical Publishing Company, New Delhi.
16. टॉड लिखित राजस्थान का इतिहास (Annals and Antiquities of Rajasthan) हिन्दी अनुवाद अनुवादक केशव कुमार ठाकुर, द्वितीय संस्करण, 1965, पृ. 78, आदर्श हिन्दी पुस्तकालय इलाहाबाद।
17. Vidyarthi. L.P. (ed) : "Tribal Development and its administration". 1981, Concept Publishing Company, New Delhi, P. 341-343.
18. व्यास, कैलाशनाथ :'राजस्थान की जातियों का सामाजिक एवं आर्थिक जीवन', 1992 जगदीश सिंह गहलोत शोध संस्थान, जयपुर, पृ. 267।
19. Vyas, N.N. and Singh, J.P. : "Tribal Development Past efforts and new Challenges". 1986, Himanshu Publication, Udaipur. P.-129
20. Vyas, N.N. and Singh, J.P. (Ed.) : "Tribal Development in Rajasthan Past efforts and new Challenges". 1989, Himanshu Publication, Udaipur. P.-130

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मेवाड़ राज्य का भौगोलिक-ऐतिहासिक परिचय और पर्यटन स्थल

भेरूलाल सुथार* डॉ. हेमेन्द्र सिंह सारंगदेवोत**

* शोधार्थी (भूगोल) मेवाड़ विश्वविद्यालय, गंगरार, चित्तौड़गढ़ (राज.) भारत
** सह-आचार्य (इतिहास) मेवाड़ विश्वविद्यालय, गंगरार, चित्तौड़गढ़ (राज.) भारत

प्रस्तावना – 'हिंदुआ सूरज' उपनाम से प्रसिद्ध रहे भारतीय उपमहाद्धीप के उत्तरी-पश्चिमी भाग में स्थित राजस्थान का दक्षिणी-पश्चिमी भू-भाग अर्थात् 'मेवाड़' राज्य विभिन्न नामों से प्रसिद्ध रहा है। द्वितीय शताब्दी ई. पू. में ये क्षेत्र 'शिबि' जनपद के नाम से प्रसिद्ध था तो बाद में 'प्राग्वाट' कहलाया। संस्कृत शिलालेखों एवं ग्रन्थों में यह 'मेरों का देश' अर्थात् 'मेदपाट' नामकरण से भी सम्बोधित किया गया है।

गुहिलोत सिसोदिया शासकों का 'उदयपुर राज्य'या 'मेदपाट' मेवाड़ राज्य राजस्थान में विलीनीकरण से पूर्व राजस्थान के दक्षिण में 23°49' से 25°28' उत्तर अक्षांश तथा 73°1' से 75°49' पूर्व देशान्तर के मध्य में स्थित है। भारतीय संघ में विलिनीकरण से पूर्व इसका क्षेत्रफल 12691 वर्गमील था। आधुनिक ऐतिहासिक काल में इस राज्य के उत्तर में अजमेर-मेरवाड़ा, पश्चिम में जोधपुर और सिरोही, दक्षिण पश्चिम में गुजरात का ईडर, दक्षिण में डूंगरपुर, बाँसवाड़ा और प्रतापगढ़, पूर्व में बूंदी व कोटा तथा मध्यप्रदेश का नीमच क्षेत्र सम्मिलित है। उत्तर-पूर्व में देवली की छावनी के पास जयपुर का क्षेत्र है। मेवाड़ राज्य के मध्य में स्थित ग्वालियर का परगना श्गंगापुरश जिसमें दस गाँव थे तथा आगे पूर्व में इन्दौर का परगना नंदवाय या नंदवास आ गया था जिसमें 29 गाँव थे।

अरावली की प्राकृतिक सुरक्षा और भूतलीय संरचना – मेवाड़ भू-क्षेत्र के पश्चिमी-दक्षिणी एवं पूर्वी भागों मेंविश्व की प्राचीनतम पर्वत माला अरावली पर्वत श्रेणियां फैली हुई हैं जिन्होंने पश्चिम, दक्षिण और पूर्व दिशाओं की ओर से राजस्थान व भारत के अन्य भू-प्रभागों से मेवाड़ को नैसर्गिक रूप से अलग करते हुए इन दिशाओं में मेवाड़राज्य की प्राकृतिक सीमाओंका निर्माण करती है जिन्होंने मेवाड़ के लिए एक प्रकार से सुरक्षा कवच का कार्य किया है। मेवाड़ के दक्षिणी विभाग से आगे डूंगरपुर राज्य तक फैली अरावली पर्वत श्रेणियों के बीच बहने वाली सोम व माही नदियाँ मेवाड़ व डूंगरपुर और मेवाड़ व बाँसवाड़ा के मध्य विभाजन रेखा के रूप में दक्षिण में मेवाड़ की प्राकृतिक सीमा बनाती है। मेवाड़ की उत्तरी प्राकृतिक सीमा के सन्दर्भ में उल्लेखनीय हैं कि मेवाड़ के उत्तर में बहने वाली खारी नदी इस राज्य को अजमेर-मेरवाड़ा से अलग करती है। भूगर्भशास्त्रियों के अनुसार मेवाड़ को प्राकृतिक सुरक्षा प्रदान करने वाली 'अरावली पर्वतमाला' का उदय आर्चएइन में हुआ है जी कि मेसोजोअिक काल में ऊँची हुई। अरावली पर्वतमाला में कुछ परिवर्तन पेलिओजोअिक काल में भी हुए। अत: इस पर्वतमाला का निर्माण काल वर्तमान से 10 लाख वर्ष पूर्व से एक खरब वर्ष पूर्व तक माना जा सकता है। निम्बाहेड़ा परगने के समीप मालवा का पठार भी मेवाड़ को अद्भुत भौगोलिक सौन्दर्य प्रदान करता हैं।

मेवाड़ का भू-भाग अधिकांशत: भूतल पहाड़ी है जिसकी स्थलाकृति (टोपोग्राफी) पर्वत श्रेणियों सहितदर्रे, वन-उपवन, पठार, मैदान, तालाब,नदियाँ, नाले, झीलें आदि विद्यमान रहे हैं। इसके पश्चिमी भाग में उत्तर से दक्षिण तक अरावली पर्वत की श्रृंखला फैली हुई है जो कि उत्तर (उत्तर-पूर्व) में अजमेर व मेरवाड़े में होती हुई दिवेर के करीब मेवाड़ में प्रवेश करती हैं जहाँ इनकी ऊँचाई और चौड़ाई कम है किन्तु दक्षिण-पश्चिम में मारवाड़ के किनारे किनारे अरावली पर्वत श्रृंखलाओं की ऊँचाई बढ़ती गई अर्थात् ये पर्वत श्रेणियां वायव्य कोण से लगाकर अधिकाँश पश्चिमी तथा दक्षिणी हिस्से में फैल गई हैं। कुम्भलगढ़ के निकट इनकी ऊँचाई 3568 फुट तक है,वहीं गोगुन्दा से 22 किलोमीटर उत्तर में स्थित इस क्षेत्र के सबसे ऊँचे पर्वत शिखर जर्गा पहाड़ी की ऊँचाई 4315 फुट है एवं इसकी(जर्गा)चोटी समुद्रतल से 1223 मीटर ऊँची है। ऊँचाई के बराबर ही दक्षिण की ओर बढ़ते हुए इन पर्वत श्रृंखलाओं एवं उनसे सम्बद्ध पहाड़ियों का चौड़ाई में भी विस्तार होता गया है। जर्गा और राहंग के मध्य भूमि में आम के पेड़ है और यहाँ चाँवल, गेहूँ, चना, उड़द की पैदावारअधिक होती हैं। मछावला और जर्गा के बीच की भूमि पहाड़ कुहाड़िया नला कहलाती है जो 32 किलोमीटर लम्बी है। जर्गा का पहाड़ कुहाड़िये नाले से दाहिनी ओर है। जर्गा पर्वत पर जल उपलब्धता प्रकृति प्रदत्त रही। कुम्भलगढ़ तथा केलवाड़ा के पास अरावली पर्वत श्रेणियां राज्य के मध्य भाग की ओर करीब 17-18 किलोमीटर तथा गोगुन्दा के भाग में 29-30 किलोमीटर अन्दर की ओर फैल गई है। ये पर्वत श्रृंखलाएँ राज्य के उत्तर-पश्चिमी से लगाकर सारे पश्चिमी तथा दक्षिणी हिस्से में फैल गई है। उत्तर में खारी नदी से लगाकर चित्तौड़ से कुछ दक्षिण तक और चित्तौड़ से देबारी तक एक समान अर्थात् समतल भूमि है। अरावली पर्वत श्रेणी की दूसरी शाखा राज्य के उत्तर-पूर्व में देवली के पास से शुरू होकर भीलवाड़ा तक चली गई है। तीसरी श्रेणी देवली के निकट से निकल कर राज्य के पूर्वी हिस्से जहाजपुर मांडलगढ़, बिजोलिया, भैंसरोड़गढ़ व मेनाल होती हुई चित्तौड़ में दक्षिण तक जा पहुँची है। इस श्रेणी की ऊँचाई 2000 फुट से अधिक नहीं है। देबारी से लेकर राज्य का सारा पश्चिमी भाग पहाड़ियों से भरा पड़ा है। यहाँ की पहाड़ियों घने जंगलों से आच्छादित, जल की बहुतायत से लिए हुई थी। जहाजपुर से ही अरावली पहाड़ियों की श्रेणी विस्तृत और ऊँची होती चली गई है और माँडलगढ़ से आगे जाकर उसके ऊपर एक समान समतल भूमि आ गई है जिससे इसको 'ऊपरमाल' कहते हैं। यह उपजाऊ भूमि है (उपजाऊ पठार) तथा यहाँ जल की प्रचुरता है। बिजोलियाँ

का पठारी अंचल कृषि दृष्टि से उपजाऊ क्षेत्र रहा हैं।

रूपजी के निकट स्थित पर्वत या अरावली पर्वत मेवाड़ राज्य के सीमा पर हैं।जीलवाड़ा और रीछेड़ के मध्य आमलमाल या अमजमाल का बड़ा पर्वत 5 कोस या 16 कि.मी. लम्बा है। इसके इधर केलवा है। बाघोरी के आगे घाटा नामक गाँव है। उसके आगे भोरड का मगरा उत्तर-दक्षिण की ओर 16 कि.मी. लम्बा है। भोरड़ और मछावला के बीच समीचा गाँव उदयपुर से 54 कि.मी. रूपजी से 36 कि.मी. और कुम्भलमेर से 32 कि.मी. दूरी पर है। उसके आगे मछावला का मगरा 22 कि.मी. लम्बा है। इसके आस-पास 9 गाँव बसते हैं। इस पर्वत पर सघन वृक्षावली व जल की प्रचुरता थी। उसके आगे बरवाड़ा जहाँ से बर और बनास नदियां निकलती है। इसके आगे 3 कि.मी. लम्बा घासेर का पहाड़ है तथा इसके आगे नीचे पिण्डर झांप पर्वत है। सेवाड़ी गाँव कुंभलगढ़ से 22 कि.मी. दूर हैं। इससे राहंग का मगरा बहुत ही विकट है, जहाँ जल की अधिकता थी और 25 गाँव इसके आस-पास थे। यह पर्वत 51 कि.मी. लम्बा 51 कि.मी. चौड़ा और उसका घेरा 102 कि.मी. का है। कठिनाई के समय मेवाड़ के शासकों के लिए ठहरने का सुरक्षित समुचित स्थान है। बेकरिया के घाटे से जूही नदी निकलती है। बाँसवाड़ा व देवलिया प्रतापगढ़ के बीच मेवाड़ के 'छप्पन' के गाँव जाना और जगनेर हैं। देवलिया और मेवल के बीच के क्षेत्र को मण्डल का देश कहते हैं जिसमें मुख्य स्थान धरियावद है लेकिन बम्बोरा भी सम्मिलित हैं। यहाँ का पानी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक माना जाता है। बड़वाल परगने का गाँव धरियावद जहाँ बड़े पहाड़ और सघन वृक्ष है।देवलिया का मेरवाड़ा भी निकट स्थित हैं।धरियावद के पश्चिम में मेवल के मगरे हैं तथा बाठरड़ा और सलूम्बर के मध्य बड़े-बड़े पहाड़ है। चीरवा से 7 कि.मी. और उदयपुर से 16 कि.मी. पर एकलिंग जी और वहाँ से 3 कि.मी. राठासण की पहाड़ी 6 कि.मी. के घेरे में है वहाँ जल नही था। मेवाड़ भू-क्षेत्र के पश्चिमी पहाड़ी भाग में दक्षिण-पश्चिमी भाग 'भोमट' (कोटड़ा और खेरवाड़ा तहसील) कहलाता हैं जिसमें सिरोही,पालनपुर और ईडर के इलाकों तक का मेवाड़ का पहाड़ी भू-क्षेत्र 'भोमट के जिलेय के रूप में प्रसिद्ध रहा हैं। भोमट के ऊपर की तरफ स्थित विशेष पहाड़ी मैदानी क्षेत्र 'गिर्वा' कहलाता है अर्थात् उदयपुर व उसका निकटवर्ती भू-भाग 'अंदरूनी गिरिवा' जो चारों ओर से पहाड़ियों से घिरा हुआ है, यह 'भीतरी गिर्वा' है और इसमें बाहर का समतल भाग 'बेरूनी गिरिवा' या बाहरी गिर्वा कहलाता है।

मेवाड़ राज्य के पूर्वी विभाग में उपजाऊ समतल क्षेत्र हैं किन्तु दक्षिणी और पश्चिमी विभाग में घने जंगलों से भरी पहाड़ियां आ गई है जिनके मध्य में स्थान-स्थान पर कृषि योग्य भूमि है। दक्षिण में डूंगरपुर की सीमा से लेकर पश्चिम में सिरोही की सीमा तक सारा प्रदेश पहाड़ी होने से 'मगरा' कहलाता हैं जबकि पूर्वी भाग 'छप्पन' कहलाता है। अनुमानत: मेवाड़ राज्य का करीब दो तिहाई भाग समतल है और शेष पहाड़ी एवं पर्वतीय। जनमानस के अनुसार 56 नदी-नालों के प्रवाह क्षेत्र या 56 गाँवों के समूह के कारण ये क्षेत्र छप्पन कहलाया।मुहनोत नैणसी के अनुसार चावंड,सेमारी,सलुम्बर और झाडोल के ताल्लुक में 56-56 गाँवों के समूह रहे।

नाल – मेवाड़ के पर्वतीय क्षेत्रों मेंसे निकलने वाले तंग रास्तोंया घाटियों या दर्रों को स्थानीय भाषा में 'नाल' कहते हैं। युद्ध के अवसर पर सैनिक आवागमन एवं व्यापार-वाणिज्य की दृष्टि से पर्वतीय क्षेत्रोंमें अवस्थितइन नालो का रास्तों के रूप में उपयोग किया जाता था। वहीं वर्षा काल में इन पर्वतों व नाल के नीचे की सतही भूमि पर जल एकत्र हो जाता था जिसका उपयोग पशु-पक्षियों, राहगीरों के साथ साथ भूमिगत जल को बढ़ाने में सहायक होता था। 'जीलवाड़ा की नाल' अर्थात् 'पगल्या नाल','सोमेश्वर की नाल'या 'देसूरी की नाल', 'हाथी गुड़ा की नाल'इत्यादि उल्लेखनीय हैं। देबारी की घाटी, केवड़ा की नाल, भाखर (पर्वत) की नाल, खमनोर का घाटा, सायरे का घाटा आदि मेवाड़ राज्य के भौगोलिक वैशिष्ट्य के भाग हैं।

वन-सम्पदा – धरातलीय संरचना ने मेवाड़ को विभिन्न प्राकृतिकवन संपदाओं के भण्डार भी दिये हैं। बांस और छोटे-छोटे वृक्षों से ढकी अरावली पर्वतीय क्षेत्र की व्यापकता मेवाड़ की विविधतायुक्त विशाल वन सम्पदा की प्रतीक है, जहाँ की घाटियों में महुवा व आम का बाहुल्य रहा,तो वनों मेंसालर, मौरवा, सेमल, गूगल, आम, इमली, महुआ, सागवान, धामण (फालसा) टीमरू (आबनूस) पीपल, चंदन, नीम, सीसम, खैर, गूलर, जामून, खजूर, खेजड़ा, बबूल, रूँजडा, आँवला, बेहड़ा द्यौ, हलदू, हिंगोटा, कचनार, कालियासिरस (शिरिष) कड़ाया, आदि वृक्ष अत्यधिक पाये जाते है। बांसों के विशाल जंगलों के अतिरिक्त बांसी व धरियावद के जंगलों में कीमती ईमारती लकड़ी सागवान के असंख्य पेड़ उपलब्ध होते हैं। पशुओं के लिए घास, कई प्रकार की जड़ी बूटियां एवं गोंद, बेहड़ा, लाख, महुआ, आम, जामून आदि है, घने जंगलों का उत्पादन आदिवासियों की आजीविका का साधन रहा है। यहाँ घने वनों के कारण वर्षाकालीन जल रूकने से भूमिगत जल स्तर में भी वृद्धि हुई है। स्थानीय जनश्रुति के अनुसार चित्तौड़ दुर्ग के सीताफल ऐतिहासिक काल से प्रसिद्ध रहे हैं।बाठेड़ा क्षेत्र में अफीम,भांग व कंसुबा भी बोया जाता था। इस प्रकार मेवाड़ वन्य सम्पदा दृष्टिकोण से हरा-भरा क्षेत्र रहा हैं।

पशु-पक्षी एवं जल-जन्तु – मेवाड़ वन्य क्षेत्र में जंगल की बहुतायत के कारण यहाँ सभी प्रकार के वन्य जीवों का अस्तित्व रहा एवं जैव-विविधता के प्रतीक रहे जंगली जानवरों में शेर, सुनहरी नाहर, जंगली सूअर, अधबेसरा(बघेरा), टीमर्या, चौफुल्या, चीता(पेंथर), भेड़िया, बंदर, रीछ, सांभर, नीलगाय (रोझ), चीतल, हिरण, जंगली कुत्तो, वन-विलाव, लोमड़ी, गीदड़ (सिंयार), लकड़ भग्गा (जरख) खरगोश आदि प्रमुख रूप से पाये जाते रहे। इनमें से कुछ आदिवासियों व गरीब जनसामान्य के जीवनयापन हेतु खाद्य पदार्थ के रूप में प्रयुक्त होते थे।

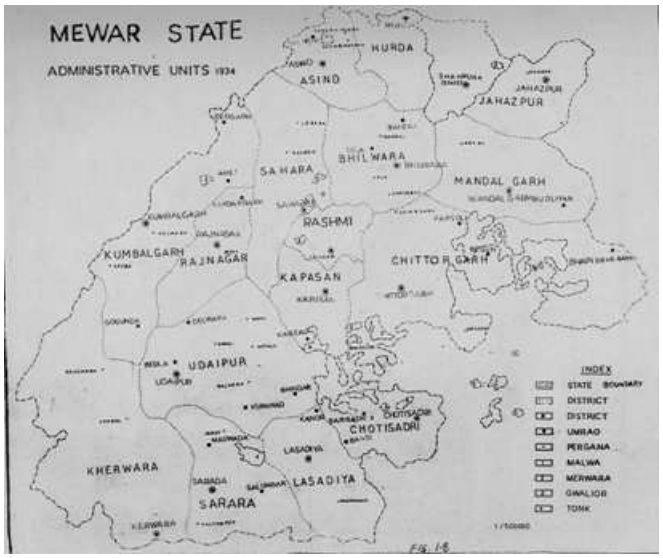
विविध प्रकार के जंगली पक्षियों में गिद्ध, चील, शिकरा, बाज, मोर, तोता, कोयल, कौआ, जंगली मुर्ग, तीतर, कबूतर, बटेर, हरियल आदि मेवाड़ में पर्याप्त थे। जल जन्तुओं में मगरमच्छ, कछुए, विभिन्न प्रकार की मछलियां, केंकड़े, जलमानस आदि झीलों व नदियों में पाये जाते थे। जल स्रोतों के करीब रहते हुए भोजन के लिए जलीय जंतुओं पर निर्भर रहने वाले पक्षियों में ढ़ींच, सारस, बगुला, हंजा, घरट, टिरहरी, बतख, जलमुर्ग आदि विशेष उल्लेखनीय थे। पर्यावरण संतुलन बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले ये वन्य जीव घने जंगलों में निचले हिस्से की तरफ भरे रहने वाले जल का उपयोग करते थे।

नदियां –मेवाड़ की अधिकांश नदियां मेवाड़ भू-क्षेत्र के पश्चिमी भाग में स्थित अरावली या आड़ावला पर्वत श्रेणियों से निकलती है जिनमें बनास(कुम्भलगढ़ के निकट उद्गम), कोठारी(कोटेसरी), खारी(दिवेर की पहाड़ियों से उद्गम), मानसी, बेड़च(आयड), बागन, वाकल, सोम, जाखम आदि प्रमुख है।मेवाड़ में कई नदियां है किन्तु इनमें वर्ष भर बहने वाली एक भी नदी नहीं है,किन्तु चम्बल नदी वर्ष भर प्रवाहित होने वाली इस क्षेत्र की एकमात्र नदी है जो कि मेवाड़ में भैंसरोड़गढ़ के समीप 9मील(14-15कि.मी.)

तक बहती है। लेकिन उद्गम व प्रवाह क्षेत्र के दृष्टिकोण से चम्बल को वास्तव में मेवाड़ की नदी नहीं कहा जा सकता हैं। इन नदियों का प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक महत्व रहा है जिन्होंने मेवाड़ के नगरीकरण में आधारभूत भूमिका निभाई। खारी, सोम आदि नदियों ने जहाँ प्राकृतिक सीमाओं का निर्धारण किया वहीं बेड़च, बनास, आहड़ आदि नदियों ने प्रागैतिहासिक काल से लेकर ऐतिहासिक काल के विभिन्न युगों में मानव सभ्यता एवं भारतीय संस्कृति के विकास में पुरातात्विक स्मारकों के निर्माण में उल्लेखनीय योगदान दिया है।

झीलें और तालाब – मेवाड़ भू–क्षेत्र में यहाँ की भौगोलिक परिस्थितियों ने कृत्रिम झीलों के निर्माण में योगदान दिया है। सन् 225 के नांदसायूप (स्तंभ) लेख में एक विशाल तालाब का जिक्र है। मेवाड़ भू–क्षेत्र में प्राकृतिक झील नहीं है लेकिन मध्यकाल से वर्तमानकाल तक कई झीलें यहाँ के गुहिलोत शासकों द्वारा बनवाई गई जिनमें पीछोला, उदयसागर, राजसमुद्र, जयसमुद्र, फतहसागर, बड़ी का तालाब, गंभीरी बांध, मेजा बाँध, राणा प्रताप सागर बाँध आदि विशेष उल्लेखनीय है। स्थापत्य स्मारक एवं जल स्थापत्य स्मारक की दृष्टि से इन झीलों का अभूतपूर्वक योगदान रहा है।मेवाड़ रियासत के तालाबों में घासा, सेंसरा, कपासन, मांडल, गुरलां, भटेवर आदि के तालाब उल्लेखनीय रहे।

जलवायु – मेवाड़ के धरातलीय स्तर के ऊँचे होने से यहाँ उष्णकाल में न तो अधिक गर्मी पड़ती है और न शीत ऋतु में अधिक सर्दी ही,इस प्रकार यहाँ के भू–भाग का जलवायु प्राय: समशीतोष्ण रहा। यहाँ सघन जंगलों एवं वृक्षों की बहुतायत से ठण्डी एवं गरम हवाओं, लहरों, वायु, बवण्डरों आदि का दौर–दौरा भी न के बराबर रहा है। यहाँ का जलवायु आरोग्यप्रद माना जाता है। किन्तु पहाड़ी क्षेत्र के जल में खनिज पदार्थ व वनस्पति के मिश्रण से भारीपन आ जाता है। यहाँ पर वर्षाकाल जून माह के मध्य से सितम्बर माह के मध्य तक का है जिसे 'चातुर्मास' अर्थात वर्षा के चार महीने के नाम से जाना जाता है। वर्षा का वार्षिक औसत 66 से.मी. से 95 से.मी. तक रहता था। अत: सघन वृक्षावली एवं घने जंगलों के कारण वर्षा का औसत अधिक रहता था परन्तु वर्तमान में वृक्षों के कट जाने व जंगलों के साफ हो जाने तथा उद्योगों के प्रदूषित प्रभाव ने मेवाड़ राज्य से सम्बद्ध भू–क्षेत्र के जलवायु व पर्यावरण संतुलन को बिगाड़ दिया है जिससे सर्दी–गर्मी का प्रभाव तो बढ़ा ही है किन्तु साथ ही वर्षा के औसत में भी कमी आई है।



मेवाड़ के प्रमुख पर्यटन स्थल – मेवाड़ के संदर्भ में मेवाड़ काम्प्लेक्स (मेवाड़ सकुल योजना–गोगुन्दा,चावंड, हल्दीघाटी,दिवेर आदि राणा प्रताप से सम्बंधित स्थल), द ग्रेट अरावली ट्रेन सफारी(उदयपुर, राजसमन्द, कामलीघाट), मेवाड़–वागड़ धार्मिक सर्किट (मेवाड़–वागड़ के जनजातीय–धार्मिक केन्द्रों का भ्रमण) आदि उल्लेखनीय हैं।

मेवाड़ के चयनित पर्यटन स्थलों (ऐतिहासिक–विरासतीय स्मारक और सांस्कृतिक धरोहर) में उदयपुर (सिटी पेलेस, सज्जनगढ़ पेलेस व फतेह सागर, पीछोला झील सहित सहेलियों की बाड़ी) चित्तौड़गढ़ दुर्ग, कुम्भलगढ़ दुर्ग, सांवरियाजी, एकलिंगजी, नाथद्वारा–कांकरोली मन्दिर आदि महत्वपूर्ण स्थल हैं।

स्वयं द्वारा किये सर्वे के अनुसार चित्तौड़गढ़ के समीप बस्सी वाइल्ड लाइफ सेंचुरी, हम्मीरगढ़ इको–पार्क, सीतामाता वाइल्ड लाइफ सेंचुरी भी भौगोलिक पर्यटन दृष्टिकोण से मौलिक महत्ता रखते हैं, सीतामाता की उड़न गिलहरिया तो सुप्रसिद्ध हैं। सीतामाता वन्य अभयारण्य का 12 बीघा में फैला हुआ बरगद भी पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र बिंदु है, साथ ही लव–कुश कुंड के जल में स्नान करने से इसके आयुर्वेदिक औषधियों से युक्त होने से चर्म रोगों के निराकरण के लिए भी ये उपयोगी हैं।

इसी प्रकार हम्मीरगढ़ ईकोपार्क में पर्यटकों के लिए रात्रि विश्राम की सुविधा भी उपलब्ध है। रात्रि विश्राम हेतु विशाल आकृति के स्विस टेन्ट यहाँ लगाए गए हैं जो कि रसोई घर और लैट–बाथ की सुविधाओं से युक्त हैं। ये टेन्ट न्यूनतम दर पर पर्यटकों को उपलब्ध कराए जाते हैं। पूर्णिमा की रात को रात्रिचर जीवों के दर्शन हेतु सर्वाधिक आदर्श मौका होता है इसीलिए पर्यटकों द्वारा प्राय: पूर्णिमा की रात के लिए ही स्विस टेन्ट बुक कराए जाते हैं।

सीतामाता–बस्सी वन्यजीव अभ्यारण्य, हमीरगढ़ ईकोपार्क शहरी चकाचौंध से दूर एक शांत और सुरम्य वातावरण में स्थित है। ये विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों और वन्यजीवों के आश्रय स्थल है। जैव–विविधता की दृष्टि से ये संवेदनशील क्षेत्र है। ये जिले की महत्त्वपूर्ण जैव विविधता युक्त ईको पर्यटन साइट है। पर्यटकों की आवाजाही को बढ़ाने हेतु इसके प्रबंधन व प्रचार–प्रसार को सही दिशा व मंच प्रदान किए जाने की आवश्यकता है। पर्यटन विभाग, राजस्थान सरकार तथा पर्यटन से जुड़ी संस्थाओं जैसे RTDC (Rajasthan Tourism Development Corporation) व RITTMAN (Rajasthan Institute of Tourism and Travel Management) आदि के सहयोग से इसे राज्य व राष्ट्र स्तरीय पहचान प्राप्त हो रही है। स्थानीय स्तर पर भी बिजयपुर, बस्सी के हेरिटेज होटल भी अपने निजी प्रबन्धन से पर्यटकों को इस क्षेत्र के भौगोलिक पर्यटन स्थलों की ओर आकर्षित कर रहे हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. घनश्याम सिंह,वर्षा चुण्डावत,शिवपाल सिंह,मेवाड़ के देवगढ–मदरिया क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति एवं ठिकाना लसाणी के अभिलेख, हिमांशु प्रकाशन, उदयपुर, 2019ई.
2. गोरीशंकर हीराचंद ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग–1, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2022ई.
3. के.डी.अर्सकिन,ए गजेटियर ऑफ दी उदयपुर स्टेट, स्कॉटिश मिशन इंडस्ट्रीज को.लिमिटेड, 1908ई.
4. प्रियदर्शी ओझा,पश्चिमी भारत में जल प्रबंधन

5. ललित पाण्डेय, मेदपाट का पुरातात्विक इतिहास
6. कविराज श्यामलदास, वीर विनोद मेवाड़ का इतिहास, भाग प्रथम, महाराणा मेवाड़ हिस्टोरिकल पब्लिकेशन ट्रस्ट एवं राजस्थानी ग्रन्थागार जोधपुर, 2017ई.
7. तेज सिंह तरुण,बिजौलियां का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2012ई.
8. अनुवादक रामनारायण दुगड़,संपादक गौरीशंकर हीराचंद ओझा, मुँहणोत नैणसी री ख्यात भाग–1, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर
9. देवीलाल पालीवाल,पानरवा का सोलंकी राजवंश, जनक प्रकाशन उदयपुर, 2000ई.
10. हेमेन्द्र सिंह सारंगदेवोत,बाठेड़ा (मेवाड़) के सारंगदेवोतों का राजनीतिक इतिहास, मेवाड़ श्री प्रकाशन, चित्तौड़गढ़ एवं नई दिल्ली, 2021
11. धायभाई तुलसीनाथ सिंह,शिकारी और शिकार (मेवाड़ संग्रहालय, मेवाड़ विश्वविद्यालय में संग्रहित)
12. जे.के.ओझा,मेवाड़ के पुरातात्विक स्मारक
13. मधु अग्रवाल, सी.पी.अग्रवाल, सांस्कृतिक पर्यटन से धरोहर का संरक्षण एवं संवर्धन, हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर व नई दिल्ली, 2017
14. साक्षात्कार राजीव जी शर्मा, उम्र 53 वर्ष निवासो बांसी, रोहित जी चौबीसा, उम्र 26वर्ष, निवासी बांसी

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

संस्कृत के आदिकवि कालिदास के साहित्य में भारतीय ज्ञान परंपरा

डॉ. अनिता पाटीदार*

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, शामगढ (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – संस्कृत साहित्य के देदीप्यमान नक्षत्रों में अद्भुत, ज्योतिस्वरूप प्रकाश पुंज, आभा से अलंकृत, मां काली एवं ज्ञानप्रदायिनी सरस्वती के वरद पुत्र, शैवधर्मावलम्बी, वैदर्भी रीति में निष्णात, अन्त: प्रकृति एवं बाह्य प्रकृति समायोजन में दक्ष, पात्र के चरित्र चित्रण के अनुकूल, जनमानस के हृदय को विडोलित करने वाले, अक्षयनिधि महाकवि कालिदास भारतीय ज्ञान परंपरा से महिमा मंडित है जिनके यशोगाथा विश्व पटल पर प्रासंगिक है। आपके महाकाव्य, दृश्यकाव्य एवं खण्डकाव्यों से संयुक्त सप्तग्रन्थमयी कृतियाँ अपने आप में उत्कृष्टता, दिव्यता को द्योतित करती है।

कालिदास के जीवन सम्बन्ध में अनेक किंवदंतियाँ प्रसिद्ध हैं। एक पारम्परिक मान्यता के अनुसार कालिदास सम्राट् विक्रमादित्य के दरबार के नवरत्नों में से एक थे, वे उच्च कोटि के एवं प्रतिभावान, महाकवि और नाटककार थे इस सन्दर्भ में एक श्लोक भी बहुचर्चित है।

धन्वन्तरिक्षपणकामरसिंहशङ्कु–
वेतालभट्टघटखर्परकालिदासा: ।
ख्यातो वराहमिहिरो नृपते: सभायां रत्नानि वै वररुचिर्नवविक्रमस्य ।।

यह विक्रमादित्य वही है जिन्होंने विक्रम संवत् आरम्भ किया।

इस प्रकार संस्कृत वाङ्मय के रचनाकारों में रामायण और महाभारत के रचयिता वाल्मीकि, व्यास का जो गौरवमय स्थान है, वही स्थान कालिदास का है। भारतीय ज्ञान परंपरा में कालिदास का स्थान अद्वितीय और अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्हें संस्कृत साहित्य का आदिकवि कहा जाता है, और उनकी कृतियाँ न केवल साहित्यिक उत्कृष्टता का प्रमाण हैं बल्कि भारतीय समाज, संस्कृति, प्रकृति और दार्शनिक विचारों का भी सजीव चित्रण प्रस्तुत करती हैं। कालिदास ने अपने साहित्य में मानवीय संवेदनाओं, सौंदर्य, और गहन जीवन–दर्शन को पिरोया, जिससे उनकी रचनाएँ आज भी प्रेरणा और मार्गदर्शन का स्रोत हैं। भारतीय साहित्य में कालिदास ने संस्कृत भाषा और उसकी काव्य परंपरा को नई ऊँचाइयों पर पहुँचाया, जो बाद के कवियों और साहित्यकारों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हुई ।

कालिदास का समय भारतीय सांस्कृतिक पुनर्जागरण का युग था। उस समय भारत में गुप्त साम्राज्य की स्थापना हो चुकी थी, जो कला, विज्ञान, और साहित्य में अनुपम उपलब्धियों के लिए प्रसिद्ध था। गुप्तकाल को 'भारत का स्वर्णिम युग' कहा जाता था और इस युग में कालिदास जैसे कवियों और लेखकों ने भारतीय साहित्य को शिखर पर पहुँचाया। कालिदास की रचनाएँ भारतीय जीवन के हर पहलू को छूती हैं उनके साहित्य में मूल्य, प्रेम, प्रकृति, वीरता, धर्म, कर्तव्य, और आत्मचिंतन का अद्वितीय संगम देखा जा सकता है। उनका साहित्य भारतीय ज्ञान परंपरा और संस्कृति का गहन अध्ययन प्रस्तुत करता है, तथा समाज और प्रकृति के प्रति संतुलित दृष्टिकोण का समर्थन करता है।

वे पश्चिमी जगत के अनुतप्त हृदयों को भी अपनी सहजता एवं आध्यात्मिकता से परितोष प्रदान करते है। भारतीय शेक्सपीयर के साहित्य में भारतीय ज्ञान परंपरा के देदीप्यमान नक्षत्रों के प्रभाव से अन्य देशों की संस्कृतियों का कम रह जाता है।

स विश्ववन्द्यो महतां कवीनां गुरुर्मनीषी कवि कालिदास: ।
यत्काव्यपीयूषरसप्रवाह: स्वादामितानन्दमयो हि लोक: ।। – रघुवंशम्

कालिदास की रचनाएँ न केवल उनके समय में, बल्कि आज भी भारतीय साहित्य और संस्कृति में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। उनकी रचनाएँ भारतीय समाज, संस्कृति, प्रेम, धर्म और प्रकृति के प्रति सम्मान को दर्शाती हैं। उनके साहित्य का अध्ययन हमें भारतीय समाज के मूलभूत आदर्शों को समझने में मदद करता है और उनकी कृतियाँ आने वाली पीढ़ियों के लिए साहित्यिक धरोहर के रूप में भारतीय ज्ञान परंपरा से जनमानस को चेतना प्रदान करते रहेंगे

गुप्तकालीन समाज में धार्मिक सहिष्णुता थी, और हिंदू धर्म के साथ–साथ बौद्ध और जैन धर्म को भी संरक्षण मिला। यह सहिष्णुता कला और साहित्य में भी झलकती है, जहाँ देवी–देवताओं के साथ–साथ मानव और प्रकृति का सुंदर चित्रण हुआ है। यह काल धर्म, संस्कृति, दर्शन, और जीवन के आदर्शों का संगम स्थल था।

कालिदास के साहित्य ने अनेकता में एकता, विश्वबन्धुत्व की चेष्टा, श्रद्धातत्त्व की प्रमुखता, सहयोग व समन्वय की सरसता के द्वारा सम्पूर्ण विश्व की संस्कृति को तिरस्कृत कर भारतीय संस्कृति की अमिट छाप स्थापित कर अद्वितीय स्थान प्राप्त कर लिया है। गुणों की खान से ही संस्कार का जन्म होता है, जो व्यक्ति को व्यक्तिगत रूप से सफलता के शिखर पर ले जाता है। उनकी रचनाओं मे नैतिक मूल्य, षोडश संस्कारों, चतुष्टयों, व चार आश्रम व्यवस्था का चित्रण है।

कालिदास की कृतियों में संस्कारों पर अधिक वर्णन है। वैदिक काल से ही सोलह संस्कार की संख्या सर्वमान्य है, कालिदास भी इसी विचारधारा से प्रभावित हैंस जिस विधान से वे अपने पात्रों का संस्कार करते हैं उससे यह स्पष्ट होता है कि कालिदास स्वयं वैदिक पुरुष हैं। उनके लिए एसा कहा जा सकता है कि 'भारतीयेषु संस्कार: संस्कर्तासु महाकवि:'।

महाकवि कालिदास की दृष्टि में पार्थिवों के राजा दिलीप श्रेष्ठ तपस्वी हैं। दिलीप ने सन्तान प्राप्ति हेतु वसिष्ठ के आश्रम में इक्कीस दिन की तपस्या की। वहाँ जिस व्रत का उपदेश एवं पालन विधि का निर्देश ऋषि ने उन्हें दिया उसका उन्होंने सम्यक् पालन किया। अथर्ववेद में भी पुत्र की कामना की गयी है जिससे व्यक्ति पितृऋण से मुक्त हो जाता है।

निर्दिष्टां कुलपतिना स पर्णशालामध्यास्य प्रयतपरिग्रह: द्धितीय:।
तच्छिष्याध्ययनिवेदितावसानां संविष्ट: कुशशयने निशां निनाय ।।'

मनुष्य दान से उपभोग और ब्रह्मचर्य से दीर्घायुष्य प्राप्त करता है तपस्या से स्वर्ग, सुयश, दीर्घायुष्य, उच्चपद, उत्तमोत्तमभोग, ज्ञान-विज्ञान, आरोग्य सम्पत्ति, सौभाग्य आदि सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है-

तपसा प्राप्यते स्वर्गस्तपसा प्राप्यते यश:।
आयु: प्रकर्षो भोगश्च लभ्यन्ते तपसाविभो ।।

अहिंसा, दीक्षा के रखने वाले को फल की प्राप्ति वहीं कंदमुल पत्ता चबाकर तप करने वाले को स्वर्ग की प्राप्ति होती है इसका वर्णन है

अहिंसाया: फलं रुपं दीक्षाया: जन्मवैकुले।
फलमूलाशिनां राज्यं स्वर्ग: पर्णाशिनां भवेत् ।।

नन्दिनी की सेवा उनका तप है। जो भारतीय ज्ञान परंपरा को दर्शाता है

ज्ञानं विज्ञानमारोग्यं रुपं सम्पत्ताथैव च।
सौभाग्यं चौव तपसा प्राप्यते भरतर्षभ ।।

अग्नि के महत्त्व से भी कालिदास प्रभावित हैं, वे कहते हैं कि-अग्नि तपस्या का स्वामी है:

हवींषि मन्त्रपूतानि हुताश ! त्वयि जुह्वत:।
तपस्विनस्तप: सिद्धिं यान्ति त्वं तपसां प्रभु: ।।

वस्तुत: अग्नि की यह महत्ता वैदिक युग के अग्नि देव का स्मरण कराती है। इसी प्रकार वरुण, सूर्य, यम, त्वष्टा, रुद्र, मरुत् आदि देवताओं तथा शची, सरस्वती, अदिति, पृथिवी, अग्निपत्नीस्वाहा आदि देवियों का अभिधान कर कालिदास भारतीय ज्ञान परंपरा का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

भारतीयता की पहचान यज्ञों से है। यहाँ तो सृष्टि का आरम्भ ही यज्ञ से हुआ। कालिदास इस भावना से बहुत प्रभावित हैंय उन्होंने अपने श्रुतिसर्वस्व रघुवंश का प्रारम्भ ही उस दिव्य नायक से किया दिलीप का पुत्र रघु पूरे विश्व पर शासन करते हैं, दिग्विजय यात्रा करते हैं और विश्वजित् यज्ञ करते हैं।

रघुवंश के 17वें सर्ग में अतिथि का अभिषेक, गौ की उपमा सम्भवत पुराणों में प्राप्त वसिष्ठ की कामधेनु के संकेत है अत: कामधेनु तथा नन्दिनी का वर्णन मूलत: गौ माता के प्रति श्रद्धा है। कालिदास ने सूर्य के अश्वों का हरित् नाम बताया है यही बात वेदों में भी है। कालिदास ने पुत्र को ज्योति कहा है और उसके जन्म से पितृऋण से मुक्ति मानी है। कालिदास के साहित्य में भारतीय ज्ञान परंपरा के दिग्दर्शन होते हैं।

कालिदास ने प्रमुख रूप से महाकाव्य, खंडकाव्य और नाटक लिखे हैं। उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं' 'रघुवंशम', 'कुमारसंभव','मेघदूत','ऋतुसंहार', 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्', 'विक्रमोर्वशीयम्', और 'मालविकाग्निमित्रम् उनकी कृतियाँ केवल अपने समय के लिए नहीं बल्कि सदियों बाद भी विश्व साहित्य में अपना विशेष स्थान बनाए हुए हैं। कालिदास की रचनाओं को पढ़ते समय ऐसा प्रतीत होता है कि वह प्रकृति को अपनी रचनाओं का एक अभिन्न हिस्सा मानते थे। उनकी कविताओं में नदियाँ, पर्वत, बादल और ऋतुएँ जीवंत हो उठती हैं हिमालय पर्वत की प्राणोपयोगी सम्पदा के उल्लेख से भारत की प्राकृतिक प्रचुर सम्पत्ति का वर्णन किया है। हिमालय पर्वत में मिलने वाली जड़ी-बूटियाँ, वन्यपशु, पुष्प प्रजातियों, रत्नधातु आदि के गीत गाते हुए कवि थकता नहीं है

अनन्तरत्नप्रभवस्य यस्य हिमं न सोभाग्यविलोपि जातम्।
एको हि दोषो गुणसन्निपाते निमज्जतीन्दो किरणेष्विवाङ्क:।।

समग्र वैदिक धर्मो के प्रति, मानवमात्र के प्रति सहनशीलता का पाठ इनके काव्य मे मिलता है 'रघुवंशम' एक महाकाव्य है जिसमें राजा रघु के वंशजों की कहानियाँ वर्णित हैं। यह काव्य 19 सर्गों में विभक्त है, जिसमें रघुवंश के महान राजाओं की वीरता, उनके नीति-नियम, आदर्श, नैतिक मूल्यों और जीवन का उत्कृष्ट चित्रण है। इस काव्य में अयोध्या के राजवंश, विशेषकर भगवान राम के वंश की कथा हैं। इसमें राम के आदर्श, चरित्र और उनके जीवन के विभिन्न पहलुओं का सुन्दर वर्णन है जो आज मानव जाति के लिए प्रेरणा स्त्रोत है ।

कुमारसंभव महाकाव्य 17 सर्गों में विभाजित है। राजा रघु के वंशजों की कथा, माता पार्वती की तपस्या, शिव का वैवाहिक जीवन, और कुमार कार्तिकेय के जन्म प्रसंगों का विस्तृत विवरण है। इस काव्य में प्रेम, भक्ति, त्याग, मर्यादा, आदर्श, नैतिकता के अद्भुत उदाहरण हैं जो मानव जीवन में प्रकाश एवं सत्तामार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करते हैं, कालिदास ने प्रकृति के माध्यम से शिव-पार्वती के उत्कृष्ट प्रेम को दर्शाने, शिव-पार्वती की प्रेमकथा को सुंदरता और गहनता से प्रस्तुत किया।

मेघदूत और ऋतुसंहार इसी प्रकार कालिदास के खंडकाव्य हैं, जिनमें प्रकृति का सौंदर्य और मानवीय भावनाओं का अद्धितीय मिश्रण मिलता है। मेघदूत जिसे भारतीय साहित्य में विशेष स्थान प्राप्त है। इस काव्य में एक यक्ष, जो अलकापुरी में अपनी पत्नी से दूर हो गया है, एक मेघ (बादल) को दूत बनाकर अपने संदेश को अपनी प्रिय के पास भेजता है। यह काव्य केवल एक प्रेम कथा नहीं है, बल्कि इसमें प्रकृति का अनुपम चित्रण भी है। ऋतुसंहार यह काव्य छ: सर्गों में विभक्त है जिसमें भारतीय ऋतुओं का वर्णन मिलता है, जिसमें ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत, शिशिर और वसंत ऋतु का अत्यंत सुन्दरता से चित्रण किया गया है। कालिदास ने प्रत्येक ऋतु की विशेषताओं और उनके प्रभावों को जीवंत रूप में प्रस्तुत किया है। यह काव्य उनकी प्रकृति के प्रति गहरी प्रेमभावना को दर्शाता है और भारतीय जनजीवन में ऋतुओं के महत्व को भी प्रतिपादित करता है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् भारतीय नाट्य परंपरा का सबसे उत्कृष्ट उदाहरण माना जाता है। जो उनके युग की सांस्कृतिक और धार्मिक मान्यताओं का प्रतिनिधित्व करता है। यह साहित्य भारत के भौतिक और आध्यात्मिक जीवन का समन्वय हैस भारतीय समाज के मूल्यों, संबंधों, और जीवन के आदर्शों को प्रस्तुत किया हैं। इस नाटक में राजा दुष्यन्त और शकुंतला की प्रेमकहानी के माध्यम से समाज में प्रचलित आदर्श प्रेम, समर्पण, और नारी सम्मान को कालिदास जी ने अभिव्यक्त किया। यह नाटक भारतीय साहित्य का एक ऐसा अनूठा अमर काव्य बन गया, इसने उस युग के दर्शकों और पाठकों पर गहरा प्रभाव डाला।

कालिदास ने इसी काल के सांस्कृतिक और धार्मिक आदर्शों को अपनी रचनाओं में समाहित किया जिसके कारण आज उनकी रचनाएं भारतीय समाज के शाश्वत मूल्यों का प्रतिनिधित्व करती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हरिओम तिवारी,'संस्कृत साहित्य का इतिहास', पृष्ठ 89–110
2. सुरेश चंद्र श्रीवास्तव, 'कालिदास: कवि और कवित्व', पृष्ठ 55–77
3. 'कालिदास का ऋतुसंहार' – सी.आर. देवधर द्वारा अनुवादित, आईएसबीएन: 9788120801624
4. 'ऋतुसंहार: ऋतुओं की माला': ए.एन.डी.द्वारा अनुवादित हक्सर, आईएसबीएन: 9780143414245
5. डॉ. भगवतीशरण उपाध्याय,'कालिदास और उनका युग',पृष्ठ 45–78
6. एस.एन.दासगुप्ता,'A History of Sanskrit Literature',पृष्ठ 123–145
7. 'कालिदास का रघुवंश' – एम.आर. काले द्वारा अनुवादित, आईएसबीएन: 812080610x
8. 'रघुवंश' – ए.एन.डी. द्वारा अनुवादित हक्सर, आईएसबीएन: 9780140447406 रघुवंश 1.95

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Human Relationships and Existential Dilemmas in the Plays of Girish Karnad

Nikhilesh Kumar*

***Ph.D. Scholar (English) Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA**

Introduction - Girish Karnad, a luminary in Indian English drama, occupies a unique place in the canon of modern Indian literature. His plays, deeply rooted in Indian mythology, history, and folklore, transcend temporal boundaries to explore universal themes and human dilemmas. Through his profound engagement with human relationships and existential crises, Karnad crafts narratives that resonate across cultures and eras.

The works of Karnad tend to explore all the intricacies of human relationships between people, within families, and through all systems in the society to show the delicate, and even conflictual nature of bonding between people. At the heart of his plays lies a probing inquiry into the human condition: the chase for identity, the conflict between personal wishes and expectations of society, and anxieties over existence, the reason why we are.

Karnad's plays such as Tughlaq, Hayavadana or Naga-Mandala shows his ability of integration of complex narratives where human relationships is used as the fulcrum for greater exploration of philosophy. Using the lives of his characters Karnad depicts the enduring conflict between fate and free will, duty and passion, tradition and modernity.These themes which are written with elements of existentialism make viewers face their reality in life and question the meaning of life and relationships in a constantly evolving world.

This paper aims at discussing the nuanced portrayal of human relationships and existential dilemmas explored in the work of Girish Karnad, dramatic oeuvre, showcasing his ability to combine the personal and the universal, the mythical and the contemporary, in his exploration of what it means to be human.

Human Relationships in Tughlaq: Girish Karnad's *Tughlaq* (1964) is a masterful exploration of Sultan Muhammad-bin-Tughlaq's relationships—with his subjects, his courtiers, and even himself.

The play portrays the Sultan as an enigmatic ruler, torn between his visionary ideals and his flawed execution. This duality affects his relationships, leading to betrayal, mistrust, and isolation.

- **Relationship with His Subjects:** Tughlaq's desire to unite Hindus and Muslims under his reign stems from an idealistic vision of justice and equality. However, this relationship deteriorates as his policies create chaos and disillusionment among his people. His decision to shift the capital from Delhi to Daulatabad exemplifies this.

"I want Delhi to represent the true spirit of India, her capacity to absorb every idea and make it her own."[1]

While the statement reflects his lofty ambitions, it also highlights his inability to anticipate the practical and emotional toll of his policies on his subjects.

- **Relationship with His Courtiers:** Tughlaq's court is rife with conspiracies, reflecting his inability to trust those around him. Aziz and Aazam, the scheming duo, embody the erosion of loyalty in his kingdom. Tughlaq's reliance on the deceitful Aziz shows his existential isolation:

"Even my closest advisors do not understand me. They see only what they want to see."[2]

This underscores his alienation, as his vision isolates him from his court and exposes the fragility of power.

- **Relationship with Himself:** The most compelling relationship in *Tughlaq* is the Sultan's internal conflict.

His idealism clashes with his pragmatism, leading to a profound existential crisis. Tughlaq's soliloquies often reveal his anguish over his perceived failure:

"My dreams have mocked me; my kingdom has betrayed me. I am a man lost in the labyrinth of my own making."[3]

This statement encapsulates his existential dilemma, where his lofty ideals become the source of his downfall.

Existential Dilemmas in Tughlaq: Tughlaq's existential struggles stem from his pursuit of perfection in an imperfect world. He grapples with the futility of his efforts and the burden of his isolation.

1. Conflict Between Ideals and Reality: Tughlaq's utopian vision for a harmonious India is marred by his inability to foresee human limitations. His dream of justice turns into tyranny, illustrating the existential dilemma of a leader burdened by his vision.

"Justice! Justice! But how can I mete out justice when

I stand accused in the eyes of my people?"[4]

Isolation and Alienation

Tughlaq's isolation is both self-imposed and circumstantial. His intellectual superiority distances him from those around him, while his failures alienate him further.

"God, why have you abandoned me? Or is it I who have abandoned myself?"[5]

This prayer-like monologue reveals his existential despair and his struggle to reconcile his ideals with his reality.

3. **Search for Meaning:** Tughlaq's existential crisis reaches its peak when he questions the purpose of his reign. His failure to connect with his subjects and fulfill his vision leads to a sense of futility.

"Is this the fate of all rulers? To be alone, misunderstood, and defeated by time?"[6]

In *Tughlaq*, Karnad masterfully intertwines the political and the personal to create a poignant exploration of human relationships and existential dilemmas. The Sultan's failed ideals, fractured relationships, and deep isolation offer a timeless commentary on the human condition.

Human Relationships in Hayavadana: Girish Karnad's *Hayavadana* (1971) is a rich tapestry of human relationships interwoven with myth, folklore, and existential questions. The play revolves around love, identity, and the complex interplay of the mind and body. Karnad uses his characters to explore how desires and societal norms shape human bonds.

- **Relationships in a Love Triangle:** The love triangle between Devadatta, Kapila, and Padmini underscores the complexities of human emotions. Devadatta represents intellect, Kapila symbolizes physical strength, and Padmini desires a union of both qualities. Her inability to reconcile her love for both men leads to tragic consequences.

"Padmini's eyes lingered on Kapila's body even while her heart reached out to Devadatta's mind."[7]

This reflects the tension in her relationships, shaped by conflicting desires for intellect and physicality.

- **Parent-Child Relationships:** Padmini's relationship with her son is also telling. After the deaths of Devadatta and Kapila, she tries to create a meaningful life for her child. However, the shadow of the past relationships continues to haunt her, reflecting how personal failures impact future bonds.

"She looked at her son as if trying to see a future beyond the ruins of her own."[8]

Friendship Turned Rivalry: The bond between Devadatta and Kapila, once a symbol of loyalty and friendship, deteriorates under the weight of romantic jealousy. Their relationships reflect the fragility of human connections in the face of competing desires.

"Kapila's laughter now had an edge—something strained, like a stretched bowstring."[9]

Existential Dilemmas in Hayavadana: The play's central themes are deeply existential, focusing on questions of identity, completeness, and the search for meaning. Karnad weaves the existential dilemmas of his characters into the broader narrative of self-discovery and transformation.

1. **Identity and the Mind-Body Dualism:** The head-swapping incident involving Devadatta and Kapila raises profound questions about identity. Who is the true Devadatta or Kapila? Is identity tied to the mind or the body?

"Can a man's body live without his mind? Or is it the other way around?"[10]

This existential dilemma is central to the narrative, emphasizing the fragmented nature of human identity.

2. **The Incompleteness of Human Existence:** The character of Hayavadana, the horse-headed man, symbolizes the existential quest for completeness. His longing to become fully human is ironically resolved when he transforms into a complete horse, questioning the very notion of perfection."What is completeness? A man who is part horse, or a horse that was once a man?"[11]

Hayavadana's journey reflects the futility of striving for an ideal in a world defined by imperfection.

3. **The Absurdity of Human Existence:** The existential absurdity in Hayavadana is heightened by its subversion of conventional logic. The goddess Kali's indifference, the head-swapping incident, and Hayavadana's transformation create a surreal world where the characters grapple with meaning in a chaotic reality.

"The goddess laughs, the world spins, and we are left to find meaning where there is none."[12]

In *Hayavadana*, Girish Karnad masterfully explores the intersections of human relationships and existential dilemmas. The fragmented identities, unfulfilled desires, and search for meaning among the characters create a profound commentary on the human condition. The play's use of myth and folklore amplifies its universality, making it a timeless exploration of what it means to be human.

Human Relationships in Naga-Mandala: In *Naga-Mandala*, Girish Karnad uses the metaphor of folklore to explore the intricacies of human relationships, particularly within marriage, and the interplay of love, fidelity, and societal expectations.

1. **Marriage and Estrangement:** The relationship between Rani and her husband, Appanna, exemplifies alienation within marriage. Appanna's neglect and infidelity create an emotional void in Rani's life, highlighting the fragility of marital bonds when based on control rather than love.

"You will stay here. I will come once a day to see if the doors are bolted. Nothing else concerns you."[13]

This line captures Appanna's dominance and indifference, underscoring the lack of emotional connection in their marriage.

2. **Fantasy and Fulfillment:** The serpent, Naga, who takes the form of Appanna, provides Rani with the love and attention she craves. This relationship blurs the lines between reality and fantasy, questioning the authenticity of love and the boundaries of human connection.

"You are not my husband. But you are the man who makes

me feel alive."[14]

This highlights Rani's search for emotional fulfillment, which transcends the conventional boundaries of marital fidelity.

3. Gender Roles and Power Dynamics: Rani's journey from a submissive wife to a figure of power in the village reflects a shift in gender dynamics. Her acceptance of Naga's love and her subsequent transformation challenge traditional notions of female obedience.

"I did nothing. The gods chose me to reveal their power."[15]

Rani's statement reveals her newfound agency, derived from the interplay of love, truth, and divine intervention.

Existential Dilemmas in Naga-Mandala: The play is imbued with existential themes, exploring questions of identity, truth, and the nature of reality.

1. Identity and Duality: The duality of Appanna and Naga raises questions about identity. Is Naga a representation of Rani's desires, or does he embody a mystical reality? This ambiguity reflects the fragmented nature of human identity and perception.

"Who is the real Appanna? The one who comes by day or the one who loves me at night?"[16]

Freedom and Confinement

Rani's life reflects the existential tension between freedom and confinement. Initially trapped in a loveless marriage, her relationship with Naga represents an escape, though it remains tied to the societal framework of her role as a wife.

"The walls of this house suffocate me, but outside lies a world I cannot claim as my own."[17]

The Search for Truth

The trial of Rani by elders of village is a symbolic existential quest for truth. The fact that she manages to hold the snake without being harmed is taken as a divine approval, however this also affects the fact of relativity of truth in a world governed by perception and power.

Truth is what you see and what you believe. But what if the gods see differently?"[18]

Girish Karnad in his Naga-Mandala uses the role of myth and reality to explore human relationships and existential dilemmas. The play steers through the complexity of love, fidelity, and identity, offering a profound critique of societal norms and individual desires. Through Rani's transformation, Karnad highlights the fluid nature of truth and the resilience of the human spirit in confronting existential challenges.

Conclusion: Naga-Mandala is a remarkable work by Girish Karnad that perfectly incorporates folklore into the modern patterns of human relations and the problem of human existence. By reflecting on Rani's journey of suppression to empowerment Karnad raises universal questions regarding love, identity and seeking truth. The uniqueness of structure of play and the thematic richness make the play be a part of the line of greatest modern Indian drama that should be compared with other important contemporary works.

Comparison with Other Contemporary Dramas:

1. Vijay Tendulkar's Sakharam Binder: Whereas Naga-Mandala explores the concepts of marriage by means of myth and fantasy, Vijay Tendulkar, in Sakharam Binder (1972), has followed a realistic approach by emphasizing the gender structure and patriarchy within a contemporary setting. Both the plays comment on patriarchal system, but in a more subtle and symbolist manner by Karnad and brutally realistic by Tendulkar.

In Sakharam Binder, the series of relationships of main character with women point to the values of transactional dominance and eventual fall, contrasts to transcendence of Rani in Naga-Mandala. The invincibility of women in oppressive situations, however, comes out in both plays.

2. Badal Sircar's Evam Indrajit: The Evam Indrajit (1965) written by Badal Sircar has existential themes, like Naga-Mandala, but it is set in a modern city environment. The characters of Sircar are dealing with the tediousness of the life and uselessness of the wishes of the society, which runs parallel to the quest of Rani to find meaning and satisfaction in her marriage.

While Evam Indrajit questions existential absurdity through alienation in a mechanized society, Naga-Mandala uses mythic motifs to address individual and communal identities.

Mahesh Elkunchwar's Garbo: Garbo by Mahesh Elkunchwar (1970) dwells on complicated feelings and affiliations of people and in particular struggle between desire and social constraints. Like Naga-Mandala, it was about love and fidelity; however, it has a nihilist sense to it. On the contrary, Karnad employs the redemptive solution by propounding the symbolical triumph of Rani and her spiritual change.

Relationships fall apart under existential desolation in Garbo, but in case of Naga-Mandala, love albeit, flawed and even unrealistic, enables the discovery of oneself and self- empowerment.

3. Karnad's Tughlaq: Karnad himself has written Tughlaq (1964), which similarly concerns people with existencially, yet addresses other theme, like political ambition and disillusionment of an ideal ruler. Naga-Mandala, on the contrary, focuses on personal and domestic world, featuring a microcosm view of existential angst.

These two plays disclose the characteristic of a human to struggle against contradictions: the idealism and practicality of Tughlaq, and the fantasy versus reality of Rani.

Closing Thought: Girish Karnad manages to establish a harmonious balance in Naga-Mandala between the myth and modernity providing a timeless reflection on the human relations and the issues of existence. The folkloric aspect of the play also offers a peculiar perspective, as most of the plays at the time were more realistic or used urban contexts. Combining the dreams of a fiction with the actual personal story, Karnad reminds us of the timeless nature of the ancient stories and their ability to help strug-

gling humans in the modern times and hence Naga-Mandala has played a pivotal role in the history of modern Indian drama.

References:-

1. Karnad, G. (1975). *Tughlaq*. Oxford University Press.
2. Karnad, G. (1975). *Tughlaq*. Oxford University Press.
3. Karnad, G. (1975). *Hayavadana*. Oxford University Press.
4. Karnad, G. (1990). *Naga-Mandala*. Oxford University Press.
5. Elkunchwar, M. (1970). *Garbo*. Oxford University Press
6. Sircar, B. (1963). *Evam Indrajit*. Seagull Books.
7. Tendulkar, V. (1972). *Sakharam Binder*. Oxford University Press.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Developing a Inventory Model by Using Innovation Diffusion with Replenishment

Shilpi Singh* **Ashish Agarwal**** **Khursheed Alam*****

*Department of Mathematics, Sharda School of Basic Sciences and Research Sharda University, Greater Noida (U.P.) INDIA
** Department of Management, School of Engineering and Technology, Indira Gandhi National Open University, New Delhi, INDIA
*** Department of Mathematics, Sharda School of Basic Sciences and Research Sharda University, Greater Noida (U.P.) INDIA

Abstract: This paper develops a dynamic inventory model that integrates the diffusion of innovation with product deterioration under constant demand. Replenishment is modeled as a function of innovation adoption, governed by the Bass diffusion model, while inventory depletion is influenced by both demand and deterioration. The study formulates a coupled system of differential equations to represent these dynamics and solves the system analytically using integrating factors, followed by numerical evaluation where closed-form solutions are not feasible. A comprehensive sensitivity analysis is performed on key parameters—deterioration rate, innovation coefficient, and replenishment capacity—to understand their effects on final inventory levels. Scenario simulations demonstrate that faster innovation adoption significantly improves inventory stability, especially in high-loss environments, whereas delayed adoption results in accelerated inventory depletion. The model provides theoretical insight and practical decision-making support for managing inventory in environments where technology adoption evolves gradually. The findings emphasize that the timing and speed of innovation adoption are as critical as replenishment capacity, especially in industries dealing with perishable or fast-moving goods.
Keywords: Innovation Diffusion, Inventory Modelling, Bass Diffusion Model, Replenishment Strategy, Deterioration Rate.

1. Introduction: In modern supply chains, inventory management faces complex challenges, including product deterioration, fluctuating demand, and rapidly evolving technologies. Traditional models, while effective under stable conditions, often fall short in capturing the dynamics introduced by gradual innovation adoption. As technologies such as AI-based demand forecasting, real-time inventory tracking, and automated replenishment systems become standard, businesses must account for the rate and impact of innovation diffusion in their inventory strategies.This paper presents a mathematical framework where replenishment policies are directly tied to the level of technology adoption over time. The model integrates inventory deterioration with innovation diffusion, using a system of differential equations to explore their combined effect on inventory behavior. It extends classical approaches by linking technology adoption (modeled using the Bass diffusion theory) with the operational dynamics of replenishment and stock decay. Inventory management has evolved from deterministic models to dynamic frameworks that incorporate real-world complexities like inflation, product decay, and technological innovation. As industries integrate technologies such as RFID, AI-based forecasting, and IoT-driven replenishment systems, the pace and effect of innovation adoption become central to operational performance.

Most existing inventory models assume fixed replenishment strategies and full adoption of technologies from the outset. However, in reality, technological innovations diffuse gradually, influenced by market forces, peer effects, and internal capabilities. This study aims to model innovation diffusion dynamically and analyze its impact on inventory systems—especially for items that are subject to deterioration over time.

2. Model Assumptions

i. Demand is constant over time(D).
ii. Inventory deteriorates at a constant rate, with no salvage value δ.
iii. Replenishment is dependent on innovation adoption $\theta(t)$, where $0 \leq \theta(t) \leq 1$.
iv. Innovation follows the Bass diffusion model.
v. Lead time is negligible.

vi. No shortages or backorders are allowed.
vii. Initial inventory level is known

3. Mathematical Model Formulation

Let:
I(t): Inventory level at time t
θ(t): Innovation adoption rate at time t
α: Maximum replenishment capacity (θ(t)=1)
D : Constant demand rate
δ : Deterioration rate
p: Coefficient of innovation (external influence)
q: Coefficient of imitation (internal influence)
3.1 Innovation Diffusion Model

3.1 Innovation Diffusion (Bass Model): The Bass model describes how a population adopts a new innovation over time andinnovation diffusion is governed by the Bass model:

$$\frac{d\theta(t)}{dt} = (p + q\theta(t))(1 - \theta(t))$$

This equation implies that the rate of adoption depends both on external marketing (p) and internal word-of-mouth or network effects (q).

3.2 Solution to the Bass Model: This is a first-order nonlinear ordinary differential equation.

To solve this, we first use separation of variables and apply the method of partial fractions. Therefore, the closed-form solution becomes

$$\theta(t) = \frac{1 - e^{-(p+qt)}}{1 + (q/p)\, e^{-(p+qt)}}$$

This S-shaped function accurately reflects how innovations are typically adopted over time—slow at first, accelerating, and eventually saturating.

Interpretation:

1. The term (1-θ(t)) represents the proportion of the population that has not yet adopted the innovation.
2. p captures external influences like media or institutional efforts.
3. qθ(t) represents internal social imitation effects (e.g., word-of-mouth).
4. The product of these terms reflects the probability that a new adopter emerges at time t.

3.3 Inventory Dynamics: The inventory level changes over time as a function of three main factors:

1. **Replenishment**, which depends on the innovation adoption rate:αθ(t)
2. **Demand**, which is constant: D
3. **Deterioration loss**, which is proportional to current inventory:δI(t)

Thus, the inventory dynamics are modeled using the following first-order linear nonhomogeneous differential equation:

4. Analytical Solution: This section presents the analytical approach used to solve the proposed inventory model. The solution involves two differential equations: one for innovation adoption (modeled using the Bass diffusion model) and the other for inventory dynamics, which accounts for replenishment, demand, and deterioration

The inventory level over time is governed by the equation:

$$\frac{dI}{dt} = \alpha\theta(t) - D - \delta I(t)$$

This equation captures how inventory is replenished as innovation is adopted (via θ(t))\, reduced due to customer demand (D), and diminished over time due to spoilage, obsolescence, or degradation (δI(t)).

Rewriting in standard linear ODE form:

$$\frac{dI}{dt} + \delta I(t) = \alpha\theta(t) - D$$

To solve this, we use the method of **integrating factors**

Let the integrating factor be:(t)

$$\mu(t) = e^{\delta t}$$

Multiply both sides of the differential equation by (t)

$$e^{\delta t}\frac{dI}{dt} + e^{\delta t}\delta I(t) = e^{\delta t}(\alpha\theta(t) - D)$$

The left-hand side is the derivative of a product:

$$\frac{dI}{dt}\, e^{\delta t} I(t) = e^{\delta t}(\alpha\theta(t) - D)$$

Now integrate both sides:

$$e^{\delta t} I(t) = \int_0^t (\alpha\theta(s) - D)\, e^{\delta s}\, ds + C$$

Assuming initial condition $I(t) = I_0$, we compute constant $C = I_0$.

$$e^{\delta t} I(t) = \int_0^t (\alpha\theta(s) - D)\, e^{\delta s}\, ds + I_0$$

This expression gives the inventory level at time t, where θ(s) is the innovation adoption rate obtained from the Bass model.

Note: The term $\int e^{\delta t}\theta(t)$ does not have a closed-form solution due to the complexity of θ(t), but it can be computed numerically methods for practical application.

Substituting θ(t) into I(t)

Now substitute the closed-form Bass solution into the integral:

$$\theta(s) = \frac{1 - e^{-(p+q)s}}{1 + (q/p)\, e^{-(p+q)s}}$$

Then the full expression becomes:

$$I(t) = e^{-\delta t}\left[\int_0^t \left(\alpha \frac{1 - e^{-(p+q)s}}{1 + (q/p)\, e^{-(p+q)s}} - D\right) e^{\delta s}\, ds + I_0\right]$$

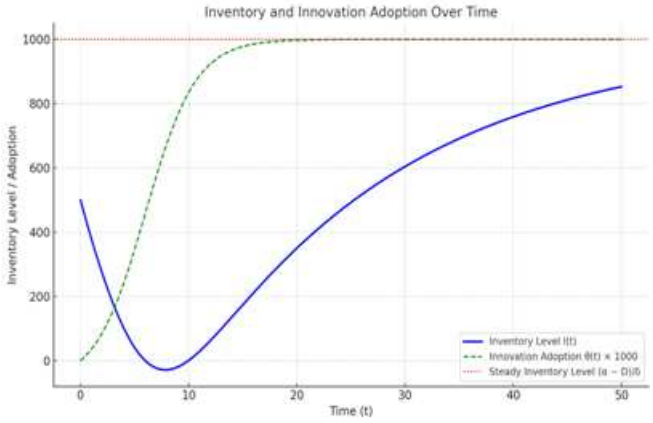
This integral cannot be solved analytically, but it **can be evaluated numerically** for given parameter values.

Interpretation of the Solution

1. Initially, when θ(t) is close to 0, replenishment is minimal. Inventory decreases due to constant demand and deterioration.
2. As θ(t) increases (i.e., innovation is adopted), replenishment increases, slowing the inventory decline.
3. If replenishment overtakes losses from demand and deterioration, inventory stabilizes or recovers.
4. The long-term inventory behavior depends critically on the rate of innovation adoption and the replenishment capacity α.

Summary

i. Early in the cycle, $\theta(t) \approx 0$, so inventory falls due to D+δI
ii. Mid-cycle, θ(t) rises and slows inventory decline
iii. Eventually, if α>D, inventory stabilizes at $\frac{\alpha - D}{\delta}$.



This completes the full analytical solution for the Bass-based inventory model.

5. Sensitivity and Numerical Analysis: The objective of this section is to analyze how different input parameters influence inventory performance, particularly under the influence of innovation diffusion. We focus on three key variables:

i. Deterioration rate
ii. Innovation coefficient
iii. Maximum replenishment rate

Each parameter is varied systematically while keeping other parameters constant, and the effect on final inventory level at time t is recorded. This provides decision-makers with a practical understanding of how sensitive the inventory system is to internal and external changes.

5.1 Base Parameter Setup

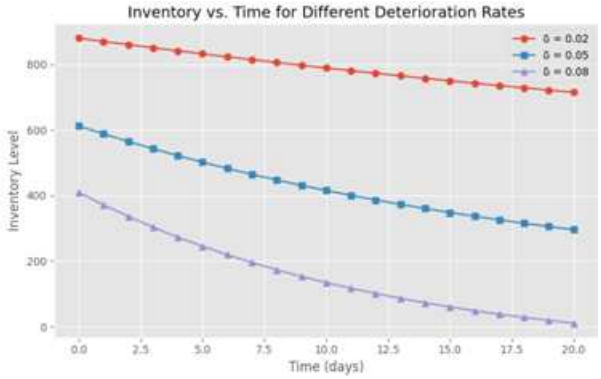
Parameter	Base Value
Demand rate	100 units/day
Max Replenishment	150 units/day
Deterioration rate	0.05
Innovation Coefficient	0.03
Imitation Coefficient	0.4
Initial Inventory	500 units
Time Horizon	20 days

5.2 Sensitivity to Deterioration Rate

Deterioration Rate	Final Inventory
0.02	879 units
0.05	612 units (Base Case)
0.08	410 units

Observation:

1. A higher deterioration rate significantly reduces inventory, even when innovation adoption is progressing.
2. Early adoption becomes more crucial when items perish or degrade faster (e.g., food, chemicals, pharmaceuticals).
3. Beyond , replenishment often cannot compensate for losses, especially in early time frames.
4. odel embedded in real-time systems to simulate inventory performance under innovation adoption.

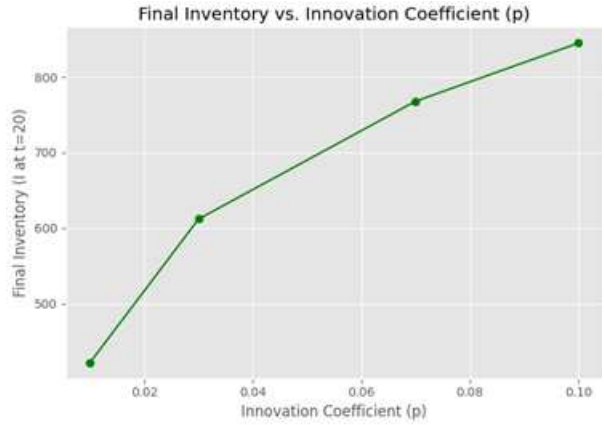


5.3 Sensitivity to Innovation Coefficient p

P	Time to reach 80% Adoption	Final Inventory I(20)
0.01	~17 days	422 units
0.03	~13 days (Base Case)	612 units
0.07	~9 days	768 units
0.10	~7 days	845 units

Observation:

1. A higher innovation coefficient (external influence) leads to quicker adoption, which accelerates replenishment.
2. Even a modest increase inp (from 0.03 to 0.07) results in a 25% increase in final inventory level.
3. For industries under competitive pressure to digitize (e.g., e-commerce), external promotion and innovation visibility directly improve operational outcomes.



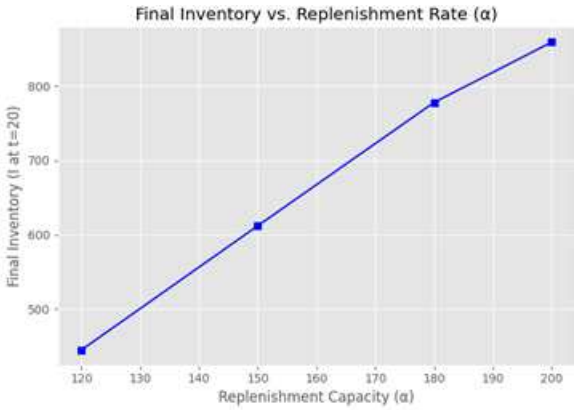
5.4 Sensitivity to Replenishment Capacity α

α	Final Inventory I(20)
120	445 units
150	612 units (Base Case)
180	778 units
200	859 units

Observation:

1. Higher replenishment capacity allows quicker recovery from initial deterioration-driven losses
2. However, after a certain point (e.g., α greater than 180), the marginal benefit declines unless innovation adoption is

also fast.



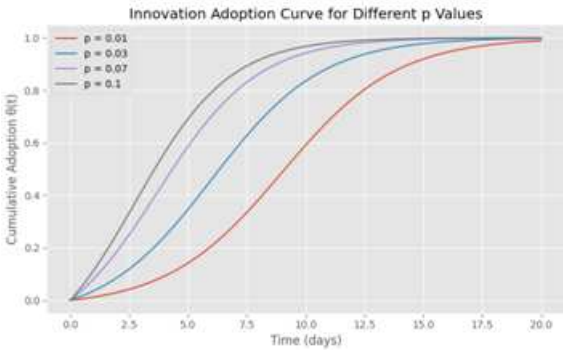
5.5 Cumulative Innovation Adoption Behavior

The cumulative innovation adoption behavior is modeled using the **Bass diffusion model** as defined earlier in Section 3.2. The adoption function θ(t)\theta(t)θ(t), already introduced in Equation (3.2), captures the proportion of the market that has adopted the innovation at time ttt, influenced by both innovation and imitation effects:

$$\theta(t) = \frac{1 - e^{-(p+q)t}}{1 + (q/p)\, e^{-(p+q)t}}$$

This formula has been reused here to analyze how varying the **innovation coefficient**p, while keeping q fixed, changes the pace and saturation level of adoption over time. Such changes directly affect inventory demand in diffusion-driven markets.

To observe how adoption behavior evolves with different values of p, we simulate the function θ(t) over a 20-day period for four distinct values of p, keeping q=0.4fixed.



Interpretation:

1. When p=0.01, adoption is slow and reaches 80% only after ~17 days.
2. When p=0.10, adoption accelerates rapidly, reaching 80% in just 7 days.
3. As p increases, the curve becomes steeper in the early stages, indicating quicker market penetration.

This behavior directly affects inventory dynamics: faster adoption increases demand in the short term, which in turn requires higher replenishment capacity and shorter lead times.

5.6 Combined Scenario Simulation: To understand how the interaction between deterioration rate, innovation speed, and replenishment capacity influences inventory dynamics, we simulate three combined scenarios. Each scenario varies the following key parameters:

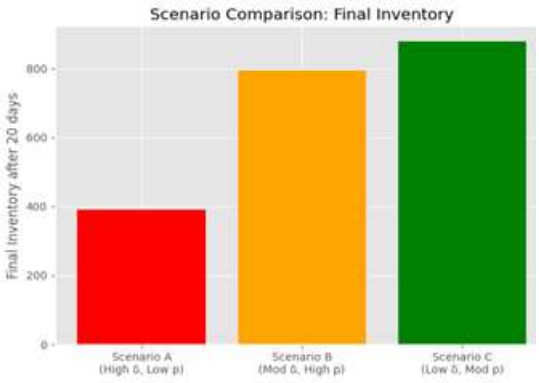
1. **Deterioration rate** δε{0.08, 0.05, 0.02}
2. **Innovation coefficient** pε{0.01, 0.07, 0.03}
3. **Replenishment capacity** αε{120,150, 180,200}

We simulate three scenarios to demonstrate realistic outcomes:

Inventory declines steadily; replenishment is delayed due to slow adoption.

Final Inventory H≈390 units

Insight: High loss environment with late innovation requires proactive investment in technology adoption strategies.



Scenario A: High Deterioration, Slow Innovation

1. **Deterioration Rate** α=0.08
2. **Innovation Coefficient** p=0.01
3. **Replenishment Capacity** α=150

Outcome:

θ(t) grows slowly; αθ(t)s<<D+δI(t)

Inventory declines steadily; replenishment is delayed due to slow adoption. Inventory decreases rapidly due to insufficient replenishment and high loss.

· Final Inventory after 20 days: **H≈390 units**

Insight: High loss environment with late innovation requires proactive investment in technology adoption strategies. Therefore In high-loss environments, **late innovation adoption** results in inventory depletion. Organizations must **invest early in technology** to minimize shrinkage and maintain supply continuity.

Scenario B: Moderate Deterioration, Fast Innovation

1. **Deterioration Rate** α=0.05
2. **Innovation Coefficient** p=0.07
3. **Replenishment Capacity** α=180

Outcome:

1. θ(t) increases rapidly; αθ(t)≥D+δI(t)
2. Replenishment ramps up early, offsetting both demand and deterioration. Inventory stabilizes quickly; early innovation boosts replenishment.
3. Final Inventory after 20 days: **H≈795 units**

Insight: When innovation is adopted **quickly**, inventory

levels stabilize. Early adoption not only avoids losses but also creates **buffer capacity** for unexpected demand. Early adoption not only recovers losses but creates service-level buffers.

Scenario C: Low Deterioration, Moderate Innovation

1. **Deterioration Rate** δ=0.02
2. **Innovation Coefficient** p=0.03
3. **Replenishment Capacity** α=180

Outcome:θ(t) reaches moderate values; low ä keeps loss minimal Inventory grows steadily as replenishment exceeds loss. Inventory remains high throughout the cycle.

Final Inventory after 20 days: **H**$\approx$ **879 units**

Insight: In **low deterioration** environments, moderate innovation suffices. **Aggressive tech adoption** provides marginal returns and may be delayed in favor of cost-efficiency. In stable environments, aggressive innovation offers diminishing returns.

5.7 Summary of Key Insights from Sensitivity Analysis

i. Deterioration sensitivity is highest early in the inventory cycle.
ii. Innovation speed (p, q) significantly influences replenishment efficiency.
iii. Replenishment capacity (α) must be scalable with innovation readiness.
iv. Timing of adoption is often more critical than capacity itself.

7. Managerial Insights:

i. Early innovation adoption offsets the effect of high deterioration.
ii. Firms must align replenishment capabilities with their innovation maturity.
iii. Digital tools and internal knowledge-sharing accelerate imitation-based adoption.

Conclusion: This research proposes a dynamic inventory model where replenishment is tied to innovation diffusion. The model integrates deterioration and adaptive innovation, solved using differential equations. It is extended with modern techniques like machine learning, stochastic modeling, and digital twins. Numerical and sensitivity analysis reveals how parameter shifts impact inventory performance, offering a tool for more responsive inventory policy design.

This research proposes a dynamic inventory model that integrates innovation diffusion with deterioration using differential equations. The analytical solution reveals how adoption timing affects replenishment and inventory decay. Numerical analysis supports the idea that early, proactive innovation adoption offers measurable operational benefits. The model is extensible into stochastic, AI-driven, and feedback-based systems, aligning with future digital supply chain trends.

References:-

1. Bass, F. M. (1969). A new product growth for model consumer durables. *Management Science*, 15(5), 215–227.
2. Mahajan, V., Muller, E., & Bass, F. M. (1990). New product diffusion models in marketing: A review and directions for research. *Journal of Marketing*, 54(1), 1–26.
3. Rogers, E. M. (2003). *Diffusion of Innovations* (5th ed.). Free Press.
4. Jain, D., Mahajan, V., & Muller, E. (1995). An approach for determining optimal product sampling for the diffusion of a new product. *Journal of Product Innovation Management*, 12(2), 124–135.
5. Nahmias, S. (2009). *Production and Operations Analysis* (6th ed.). McGraw-Hill/Irwin.
6. Kalpakam, S., &Sapna, K. P. (2004). An inventory model for deteriorating items with stock-dependent demand and partial backlogging. *International Journal of Production Economics*, 86(2), 147–155.
7. Padmanabhan, D., &Vrat, P. (1995). EOQ models for perishable items under stock dependent selling rate. *European Journal of Operational Research*, 86(2), 281–292.
8. Wu, K. J., Tseng, M. L., & Chiu, A. S. (2020). Demand forecasting and replenishment model using artificial intelligence for sustainable inventory management. *Journal of Cleaner Production*, 242, 118451.
9. Ghosh, M. K., & Chaudhuri, K. S. (2006). An order-level inventory model for a deteriorating item with time-dependent quadratic demand. *Computers & Industrial Engineering*, 51(1), 351–362.
10. Kumar, S., & Rajput, R. K. (2023). Diffusion-based inventory modeling for technology-driven supply chains. *Operations Research Perspectives*, 10, 100235.
11. Singh, R. K., & Jain, V. (2024). AI-enabled supply chain optimization: Integrating innovation diffusion and predictive analytics. *International Journal of Production Research*, 62(4), 1189–1207.
12. Sharma, N., & Agarwal, A. (2025). Multi-echelon inventory optimization using innovation adoption behavior. *Computers & Operations Research*, 158, 106201.
13. Tanwar, A., &Alam, K. (2024). Hybrid models for inventory control integrating replenishment and innovation. *Journal of Manufacturing Systems*, 63, 479–492.
14. Zhang, Y., & Zhou, L. (2022). Forecasting innovation adoption using hybrid Bass-ARIMA model. *Technological Forecasting and Social Change*, 178, 121567.
15. Verma, M., & Pathak, P. (2024). Inventory strategies under diffusion dynamics in competitive markets. *International Journal of Production Economics*, 255, 108712.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

काव्यशास्त्रीय परंपरा में श्वेतांबर जैन आचार्य नमिसाधु-परिचय

डॉ. रागिनी श्रीवास्तव*

* असिस्टेंट प्रोफेसर (संस्कृत) शशि भूषण बालिका डिग्री कॉलेज, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

प्रस्तावना – 'साहित्य समाज का दर्पण है' यह उक्ति स्वंय में विशद अर्थ समेटे है।साहित्य ज्ञान विज्ञान का विषय है,एक नवीन सोच है, और समाज की झलक है। संस्कृति के वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए, परंपरागत ज्ञान को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए साहित्य एक मजबूत स्तंभ है। साहित्य गंगा में सारे दर्शन समाहित होकर एक नवीन दृष्टि से साहित्य और समाज के हर पहलू का स्पर्श करते हैं। इसी क्रम में जैन दर्शन के आचार्यों ने भी हर पक्ष का स्पर्श किया है,चाहे वह धर्म हो,कला हो, संस्कृति हो, राजनीति हो,या साहित्य हो।

जैन धर्म अनेक संस्कृत आचार्यों से समृद्ध है, जैसे- स्वयंभू, पुष्पदंत, हेमचंद्र सूरि,शालिभद्र सूरि,आचार्य देवसेन,मुनिराम सिंह, विजयसेनसूरी, धनपाल, विनयचंद्र सूरि, सिद्धसेन, दिवाकर,महाकवि अभय, देव,अमरचंद्र सूरि,नयनचंद्र सूरी श्री आशाधर भट्ट, नमिसाधु आदि। जिन्होंने अपने ज्ञान चक्षुओं से साहित्य और उसके तत्वों का दर्शन किया और काव्यशास्त्र को नई दिशा प्रदान की। इस प्रकार एक सुदीर्घ परंपरा विद्यमान है जैन आचार्यों द्वारा साहित्य क्षेत्र में दिए गए बहुमूल्य योगदान की।

11वीं शताब्दी में जैन श्वेतांबर संप्रदाय के नमिसाधु प्रसिद्ध जैन आचार्य हैं। रुद्रट विरचित 'काव्यालंकार' पर नमिसाधु की टीका मूल पाठ के साथ प्रकाशित रूप में उपलब्ध है।काव्यालंकार के संपादकों श्री दुर्गा प्रसाद तथा श्री वासुदेव शर्मा महोदय ने ग्रंथ के प्रारंभ में नमिसाधु को श्वेतांबर जैन पंडित माना है।(काव्यालंकार रुद्रट भूमिका भाग डॉक्टर सत्यदेव चौधरी पृष्ठ 39)

नमिसाधु ने रूद्रट कृत काव्यालंकार के अंत में अपना अति संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया है-

'थारापद्रपुरीयगच्छ तिलक:
पाण्डित्यसीमाभवत्-
सूरिभूरिगुणैकमन्दिरमिह श्रीशालिभद्राभिध: ।
तत्पादाम्बुजषटपदेन नमिसा संक्षेपसंप्रेक्षिण:
पुंसो मुग्धधियोऽधिकृत्य रचितं सटिप्पणं लहवद:।'
(रुद्रट काव्य अलंकार नमिसाधु टीका पृष्ठ 430)

प्रस्तुत पद्य से ज्ञात होता है कि शालिभद्र थारापद्रपुरी के गच्छ (सम्प्रदाय) के तिलकस्वरूप, अनेक गुणों के आवास तथा पाण्डित्य की सीमा थे जिनके चरण कमलों के भ्रमर नमिसाधु ने संक्षेपप्रिय, मुग्धबुद्धि पुरुषों को लक्ष्य करके इस लघु टिप्पण की रचना की है।

नमिसाधु के विषय में उनके द्वारा उल्लिखित स्थान, आचार्यादि के विषय में भी विवेचन करना आवश्यक प्रतीत होता है।नमिसाधु ने थारापद्रपुरीयगच्छ का प्रयोग किया है जिसकी पृष्ठभूमि का विवेचन इस प्रकार है-यह प्राचीन जैन तीर्थ है जो वर्तमान में थराड़ है। इसका जैन ग्रन्थ तीर्थमाला चौत्यवंदन में इस प्रकार उल्लेख है-

'थारापद्रपुरे च वाविहपुरे कासद्रहे चेऽरे।'
(ऐति.स्थान पृष्ठ 420)

यह राधनपुर के पास है। इस नगरी के प्राचीन नाम थिरपुर, थिरादि, थरापद्र, थिरापद्र थे। यह गाँव थिरपाल धरु ने वि.सं. 1.1 में बसाया था। वि.की 7वीं सदी तक यहाँ थिरपाल धरु के वंशजों ने राज्य किया। बाद में नाडोल के चौहाण वंशजों ने राज्य किया। विक्रम की लगभग 9वीं सदी में थिरपद्रगच्छ की स्थापना हुई मानी जाती है।(तीर्थ दर्शन द्वितीय खंड)

प्राक् मध्ययुगीन तथा मध्यकालीन निर्ग्रन्थदर्शन के श्वेताम्बर आम्नाय के गच्छों में थारापद्रगच्छ का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। थारापद्र नामक स्थान से इस गच्छ का प्रादुर्भाव हुआ। थारापद्र गच्छ के 11वीं शताब्दी के प्रारम्भिक आचार्य पूर्णभद्रसूरि ने चन्द्रकुल के बटेश्वर क्षमाश्रमण को अपना पूर्वज बताया है, किन्तु इस गच्छ के प्रवर्तक कौन थे, यह गच्छ कब अस्तित्व में आया। इस विषय में कुछ नहीं कहा है। इस गच्छ में वादिवेताल शांतिसूरि शालिभद्र अपरनाम शीलभद्रसूरि (प्रथम) शांतिभद्रसूरि, पूर्वभद्र सूरि, शालिभद्र द्वितीय, नमिसाधु आदि कई प्रभावक और विद्वान आचार्य हुए हैं।(Nirgranth-Vol.1Ahemdabad 1996)

वि.सं. 1.84 / ई.स. 1.28 का रामसेन के आदिनाथ जिनालय स्थित प्रतिमाविहीन परिकर का लेख थारापद्रगच्छ का उल्लेख करने वाला सर्वप्रथम अभिलेखीय साक्ष्य है,पं.अम्बालाल शाह ने उक्त लेख की वाचना इस प्रकार की है। इस लेख में थारापद्रगच्छ के सूरिवरों की दीर्घ सूची दी गयी है जो इस प्रकार है-

वटेश्वर
↓
ज्येष्ठाचार्य
↓
शांतिभद्रसूरि (प्रथम)
↓
सिद्धान्तमहोदधि सर्वदेवसूरि
↓
शालिभद्रसूरि(प्रथम) (शीलभद्रसूरि)

↓

शांतिभद्रसूरि (द्वितीय)

↓

पूर्णभद्रसूरि

(रामसेन स्थित जिनालय में प्रतिमा प्रतिष्ठापक)

थारापद्रगच्छ से सम्बद्ध कालक्रम में द्वितीय प्रमाण है वि.सं. 111. / ई.स. 1.54 में आचार्य पूर्णमद्रसूरि द्वारा प्रतिष्ठापित अजितनाथ की प्रतिमा पर उत्कीर्ण लेख । वर्तमान में यह प्रतिमा अहमदाबाद में झवेरीबाड के एक जिनालय में है। इस लेख की वाचना एन.सी. मेहता ने की है। इन साक्ष्यों के माध्यम से थारापद्रगच्छ के मुनिजनों के गुरुपरम्परा की तालिका बनायी जा सकती है, जो इस प्रकार है–

बटेश्वरसूरि

↓

ज्येष्ठाचार्य

↓

शांतिभद्रसूरि (प्रथम)

↓

सर्वदेवसूरि

↓

शालिभद्र (प्रथम)

(शीलभद्र)

↓

शांतिभद्र (द्वितीय)

↓

पूर्णभद्रसूरि

↓

शालिभद्रसूरि (द्वितीय)

↓

नमिसाधु

(विं.सं. 1122/ई.स. 1.65 में षडावश्यकसूत्रवृत्ति तथा वि.सं. 1125 / ई.स. 1.68 में काव्यालङ्कार टिप्पण के रचनाकार)

इस प्रकार साहित्य स्रोतों के अनुसार थारापद्रगच्छ के नमिसाधु द्वारा प्रणीत दो कृतियाँ हैं–

1. षडावश्यक सूत्रवृत्ति (वि.सं. 1122 / ई.स. 1.65)
2. काव्यालङ्कार टिप्पण (वि.सं. 1125 / ई.स. 1.68)

उक्त रचनाओं की प्रशस्तियों में ग्रन्थकार ने स्वयं को थारापद्रगच्छीय शालिभद्र का शिष्य कहा है–

शालिभद्रसूरि (द्वितीय)

↓

नमिसाधु

इसी गच्छ के शालिभद्र सूरि ने सटीकबृहत्संग्रहणीप्रकरण की रचना को और अपनी गुर्वावली इस प्रकार दी है–

शालिभद्रसूरि

↓

पूर्णभद्रसूरि

↓

शालिभद्रसूरि (सटीकबृहत्संग्रहणी प्रकरण के रचनाकार)

रामसेन जिनालय में उल्लिखित पूर्णभद्रसूरि तथा सटीकबृहत्संग्रहणीप्रकरण के कर्त्ता शालिभद्रसूरि के गुरु पूर्णभद्रसूरि सम्भवत: एक ही व्यक्ति हैं। रामसेन के लेख (111.) तथा बृ.सं.प्र. की रचनामिति वि.सं. 1139 है जिनके बीच 28 वर्षों का अन्तर है। इससे भी पूर्णभद्रसूरि की अभिन्नता प्रतीत होती है। इसी प्रकार वि.सं. 1122 और वि.सं. 1125 में षडावश्यकसूत्रवृत्ति और काव्यालङ्कार टिप्पन के रचनाकार नमिसाधु के गुरु शालिभद्रसूरि भी बृहत्संग्रहणीप्रकरण के कर्त्ता शालिभद्रसूरि से अभिन्न ही प्रतीत होते हैं।

इस विवेचन से नमिसाधु की गुर्वावलि इस प्रकार प्रतीत होती है–

पूर्णभद्रसूरि

↓

शालिभद्रसूरि

↓

नमिसाधु

उपरोक्त विवेचन से यह निष्कर्ष प्रतीत होता है कि नमिसाधु ने अपने गुरु के रूप में शालिभद्र (द्वितीय) को स्वीकार किया है। इसके अतिरिक्त एक ऐसा अन्य प्रमाण भी रुद्रट कृत काव्यालङ्कार में नमिसाधु द्वारा की गयी प्रशस्ति से प्राप्त किया जा सकता है कि जहाँ नमिसाधु द्वारा प्रस्तुत शालिभद्र सम्बन्धी पद्य अजितनाथ की प्रतिमा पर उत्कीर्ण लेख से अत्यधिक साम्य रखता है तथा सम्भवत: नमिसाधु ने उसी पद्य को अपनी अपनी रुचि अनुसार प्रस्तुत किया–

थारापद्रपुरीयगच्छगगनोद्योतक भास्वान्भूत सूरि रू
सागरसीम विश्रुतगुण: श्रीशालिभद्राभिध: ।।

(अजीत नाथ प्रतिमा पर उत्कीर्ण लेख, ए.एम.जे.आई.ए. पृष्ठ 72–74)

थारापद्रपुरीयगच्छतिलक पाण्डित्यसीमाभव–
त्सूरिभूरिगुणैकमन्दिमिह श्रीशालिभद्राभिध:।।

(काव्यालंकार रुद्रट नमिसाधु टीका पृष्ठ 427)

यद्यपि इस विवेचन से नमिसाधु की गुरु परम्परा का तो ज्ञान हो जाता है तथापि साहित्य स्रोतों से भी उनके जीवन वृत्ता से सम्बन्धित अन्य कोई भी तथ्य प्राप्त नहीं हो सका है। नमिसाधु की टीका से ज्ञात होता है कि इन्होंने काव्यालंकार ग्रंथ की टीका विक्रमी संवत 1125 में वर्षा ऋतु में समाप्त की है। (काव्यालंकार रुद्रट पृष्ठ 430)

अत: नमिसाधु का स्थितिकाल 11वीं शताब्दी स्वीकार किया जाना चाहिए।

साहित्यशास्त्र की दृष्टि से नमिसाधु उच्चकोटि के पण्डित थे। उनका अलङ्कार शास्त्र पर गम्भीर अध्ययन था। उनकी टीका सङ्क्षिप्त होने पर भी अभिधेयार्थ को स्पष्ट करने में पूर्णतया सक्षम है। उनकी टीका तत्कालीन अनेक साहित्यिक ग्रन्थों, नाटकों, महाकाव्यों के उदाहरणों से संवलित है। ग्रन्थकार के मत की स्थापना के लिए पूर्व प्रचलित मतों का खण्डन भी नमिसाधु ने अत्यन्त पटुता से किया है।

नमिसाधु ने काव्यालङ्कार पर टिप्पणी करने से पूर्व जैन सम्प्रदाय में समान रूप से मान्य प्रथम तीर्थङ्कर (आदिदेव ऋषभदेव) नाभेय देव की स्तुति कर मङ्गलाचरण परिपाटी का अनुपालन किया है–

निरूशेषापि त्रिलोकी विनयफरतया.....

(काव्यालंकार,रुद्रट नमिसाधु टीका पृष्ठ–1)

काव्यालङ्कार पर अपनी टीका करने के पूर्व नमिसाधु ने पूर्वमहामतियों की वृत्ति को प्रमाण मानते हुए अपनी सक्षिप्त टीका पद्धति का भी विवेचन किया है। किसी भी टीका में यथासम्भव तीन गुणों का होना अपेक्षित है यथा– मूलपाठ को सरल रूप में प्रस्तुत किया जाये, यदि कहीं अभाव हो तो उसे पूर्ण किया जाये तथा विवेच्य आचार्य का समर्थन किया जाये अथवा कहीं वैमत्य प्रदर्शन करना हो तो तर्कसङ्गत रूप में किया जाये। इस दृष्टि से नमिसाधु की टीका निश्चित रूप से सर्वथा उपयुक्त प्रतीत होती है।

नमिसाधु ने अपनी टिप्पणी में सर्वत्र रुद्रट के आशय को स्पष्ट करने का प्रयास किया है जिसके आधारभूत तत्त्व के रूप में उन्होंने पर्यायवाची तथा विग्रह पद्धति का ग्रहण किया है यथा–'अस्य हि पौर्वापर्य पर्यालोच्यचिरेणे निपुणस्य। काव्यमलंकर्तुमलंकुर्तदारा मति भवति।।'(रुद्रट काव्य अलंकार पृष्ठ –1)

नमिसाधु ने प्रस्तुत पद्य में प्रयुक्त पदों की पर्यायवाची, विग्रहरूपेण व्याख्या कर आचार्य रुद्रट के मूल आशय को सरल रूप में स्पष्ट किया है–

अस्य काव्यालंकारस्य ।
हि शब्दोयस्मादर्थे।
यस्मात् पौर्वापर्य हेतुहेतुमद्भावम् ।
हेतुरेष ग्रन्थ: ।
हेतुमन्तोऽलंकारा: ।
हेतुकार्ययोश्च पौर्वापर्य सिद्धमेव ।
अथवाद्यन्तोदितग्रन्थार्थ पर्यालोच्यवगत्य, आचरेण शीघ्रमेव, निपुणस्य प्रवीणस्य काव्यं कविभावम्, अलंकर्तुमलंकारसमन्वितं विधातुम्, कर्तु: कर्वे, उदारा स्फारा योग्या वा, मतिर्भवति बुद्धिर्जायते। तस्मात्सप्रयोजनमिदमलंकारकरणमिति ।।
(काव्यालंकार,रुद्रट पृष्ठ –4)

नमिसाधु ने आचार्य के आशय को स्पष्ट करने में जहाँ पूर्वाचार्यों के मतों का तर्कपूर्ण खण्डन किया, वहीं परम्परा को भी प्रमाण माना । यथा – वृत्ति विवेचन में रुद्रट ने अनुप्रासगत पाँच वृत्तियों को स्वीकार किया है(काव्यालंकार रुद्रट 2/19)

जबकि रुद्रट से पूर्ववर्ती आचार्य उद्भट ने तीन वृत्तियों को स्वीकार किया तथा प्राकृत आचार्य हरि ने भी आठ वृत्तियों को स्वीकार किया है। टीकाकार की कसौटी पर खरे सिद्ध होते हुए नमिसाधु ने रुद्रट की पाँच वृत्तियों का अनुमोदन करते हुए जहाँ उद्भट के मत का खण्डन किया वहीं हरि द्वारा उक्त आठ वृत्तियों में अतिव्याप्ति को स्वीकार कर वहीं उनका भी निरास कर दिया।(काव्यालंकार रुद्रट 2/19 नमिसाधु टीका)

नमिसाधु ने अपनी टीका में पूर्वपरम्परा का भी यथासम्भव ग्रहण किया है। नमिसाधु ने रुद्रट द्वारा विवेचित अर्थ प्रसङ्ग में पूर्व महाकवियों की परम्परा को स्वीकार किया है। उनका कथन है कि यद्यपि अन्यथा वर्णन निषिद्ध होता है परन्तु यदि महाकवियों द्वारा उसका कथन किया गया है तो उसे प्रसिद्धि के कारण ही स्वीकार करना चाहिए क्योंकि महाकवियों की प्रसिद्धि ही इस विषय में प्रमाण होती है।(का.रु.7/8नमिसा.टीका पृष्ठ 189.)

इसी प्रकार नमिसाधु ने रुद्रट कृत काव्यालङ्कार की टीका करते समय पूर्वाचार्यों के मतों का निरास भी तर्कसङ्गत रूप में करते हुए आचार्य रुद्रट के मत को ही पुष्ट किया है। यथा– काव्य हेतु विवेचन प्रसङ्ग में रुद्रट का कथन है कि प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति को सुकवि के चरणों में नक्तंदिनम् अभ्यास करना चाहिए।(का.रु.1/2.)

टीकाकार नमिसाधु ने 'नक्तंदिनम्' पद की विवेचना से यह प्रश्न उठाया कि रुद्रट ने इस पद का प्रयोग क्यों किया? चिन्तन–मनन के पश्चात् समाधान रूप में नमिसाधु ने रुद्रट के पूर्ववर्ती वामन के मत 'पश्चारात्रे एव' की सत्ता इस प्रकरण में स्वीकार की और तर्कसङ्गत रूप से उनके प्रति वैमत्य प्रदर्शित करते हुए कहा कि जैसा कि कहा गया है कि रात्रि के पश्चाद् भाग में ही अभ्यास करना चाहिए, यह उचित नहीं है क्योंकि नक्तं दिन अर्थात् जब भी समय मिले और बुद्धि तीक्ष्ण हो तभी अभ्यास करना चाहिए।(का.रु.नमिसा.टी. पृष्ठ 14)

इसी प्रसङ्ग में नमिसाधु की निष्पक्षता भी प्राप्त होती है। यद्यपि यह स्वयं जैनाचार्य हैं तथापि इन्होंने रुद्रटोक्त काव्य हेतु प्रसङ्ग में जैन आचार्य जयदेव को उनके अभाव के साथ उद्धृत किया कि महाकवियों के काव्यों में ऐसे छन्द भी प्राप्त होते हैं जिनका विवेचन जयदेवादि ने नहीं किया है।(का.रु.1/2.नमिसा.टी. पृष्ठ 14)

नमिसाधु की निष्पक्ष टीका पद्धति का इसके अतिरिक्त और क्या प्रमाण हो सकता है? इसी क्रम में रुद्रटकृत रस विवेचन प्रसङ्ग में आचार्य भरत द्वारा मान्य आठ रसों का उल्लेख करते हुए नमिसाधु का कथन है कि जहाँ भरत ने सहृदय के आवर्जकत्त्व के आधार आठ या नव रसों को ही स्वीकार किया है वहीं रुद्रट ने दस रसों को स्वीकार करने के साथ ही आस्वद्यता को प्राप्त होने वाली किसी भी चित्तावृत्ति को रसरूप में मान्यता प्रदान की है।(नमिसा.टी. पृष्ठ375)

प्रस्तुत प्रसङ्ग में नमिसाधु की निष्पक्षता रुद्रट के आशय का समर्थन तथा महत्त्व प्रदान करने के परिप्रेक्ष्य में परिलक्षित होती है।

इस प्रकार नमिसाधु की टीका रुद्रट के मूल अर्थ को समझने के लिए अत्यधिक उपयोगी है। विशेषत: अनुप्रास, यमक, श्लेष, चित्र, अर्थश्लेष अलङ्कारों के उदाहरणों को समझने के लिए नमिसाधु की टीका अत्यन्त आवश्यक तथा महत्त्वपूर्ण है जहाँ उन्होंने रुद्रटोक्त कारिका के प्रत्येक पद का अत्यन्त सरस रूप में विश्लेषण किया है।

नमिसाधु को ग्रन्थ के वर्ण्यविषय का पर्याप्त ज्ञान है अत: इन्होंने आचार्य के मत को स्पष्ट करने के लिए अनेक ग्रन्थों, कवियों, आचार्यों तथा उनके उदाहरणों प्रत्युदाहरणों को प्रस्तुत किया है चाहे वो प्रसङ्ग रस(1) का हो, काव्यभेद(2)का हो अथवा काव्यहेतु(3) का हो पद।(1–का.रु.13/5, 2–वही नमिसा.टी. पृष्ठ 395, 3–वही नमिसा.टी. पृष्ठ 14)

नमिसाधु ने रुद्रट के विचारों को पुष्ट करने के लिए अनेक आचार्यों कवियों दण्डी, मेधाविरुद्ध, भामह, जयदेव, पाणिनि, भारवि, यास्क, उद्भट, कालिदास तथा माघ आदि का नामत: उल्लेख किया है।

वस्तुत: नमिसाधु ने सर्वत्र रुद्रट का अनुगमन किया है। अपनी टीका के माध्यम से उन्होंने रुद्रट को सूत्रकार कहा है, जिससे सम्भवत: स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने रुद्रट द्वारा सूत्ररूप में उक्त विचारों की व्याख्या करने के लिए विस्तृत आधार का ग्रहण किया है।(का.रु.6/9 नमिसा.टी. पृष्ठ 155) यथा– जहाँ उन्होंने कवियों, आचार्यों को प्रमाण रूप में स्वीकार किया वहीं वैयाकरणों का भी स्पष्टत: उल्लेख कर अपने व्याकरण विद्धता को भी प्रस्तुत किया है।

सङ्क्षेप में नमिसाधु ने अपनी टीका पद्धति में कुछ आधारों पर रुद्रट के मत की व्याख्या की हैकृमौनं स्वीकारं लक्षणं के आधार पर मौन समर्थन(का.रु.12/43नमिसा. टी. पृष्ठ 385)

जिस अंश से प्रभावित हैं उसका विशद विवेचन
(का.रु.1/2.नमिसा.टी पृष्ठ 14)

जैन धर्मावलम्बी होने के कारण सङ्क्षिप्त व्याख्या(का.रु.14/18नमिसा. टी. पृष्ठ संख्या399)और जो विषय पूर्वाचार्यों की मान्यताओं व रुद्रट की विचारधारा के अनुरूप तथा सुस्पष्ट हैं उनका शब्दत: समर्थन।(का.रु.7/2नमिसा.टी. पृष्ठ184)

अब यदि यह प्रश्न उठाया जाये कि नमिसाधु द्वारा जैन धर्मावलम्बी होने पर भी रुद्रट कृत 'काव्यालङ्कार' की टीका करने का क्या कारण हो सकता है? इसके समाधान रूप में कई हेतुओं को स्वीकार किया जा सकता है। यथा- रुद्रट कृत काव्यालङ्कार में संधिकाल के ऐसे विषय बीजरूप में विद्यमान थे जो परवर्ती परम्परा में विकसित हुए अथवा सम्प्रदायरूप में उदित हो गये। यथा-ध्वनि, औचित्यादि। इसके अतिरिक्त नमिसाधु ने इस ग्रन्थ में नाट्य तथा काव्यधारा का सुन्दर सामञ्जस्य भी देखा कि एक अलङ्कारवादी आचार्य द्वारा जहाँ एक ओर रस सङ्ख्या वृद्धि की गयी वहीं दूसरी ओर अर्थालङ्कारों का विभाजन भी नियमगत रूप में किया गया और सम्भवत: यही मुख्य कारण रुद्रट काव्यालङ्कार पर नमिसाधु द्वारा टीका करने के मूल हेतु के रूप में स्वीकार किया चाहिए।

अन्तत: नमिसाधु कृत टीका काव्यालङ्कारगत रुद्रट के मूल आशय को स्पष्ट करने के लिए आवश्यक साधनभूत है। नमिसाधु टीका के महत्तवपूर्ण योगदान के रूप में यह स्वीकार किया जा सकता है कि इनकी टीका से संवलित होकर काव्यालङ्कार गत वर्ण्यविषय को विशद आधार ही मिला है।

नमिसाधु ने रुद्रट द्वारा प्रस्तुत भावभूमि पर अधिष्ठित होकर उनकी विशेषताओं को हृदयङ्गम करते हुए सर्वथा सरल व ग्राह्य रूप में प्रस्तुत किया है। नमिसाधु ने अपने टीका करने के प्रयोजन का भी उल्लेख किया है कि इस प्रकार रुद्रट प्रणीत 'काव्यालङ्कार' पर टीका करने से मैंने जो पुण्यलाभ किया है, उसके फलस्वरूप मेरा मन परोपकार में अनुराग रखने वाला हो, यही मेरी अभिलाषा है-

'एवं रुद्रटकाव्यालङ्कृतिटिप्पणकविरचनात्पुण्यम।
यदवापि मया तस्मान्मन: परोपकृतिरति भूयात् ।।'
(का.रु.नमिसाधु टीका पृष्ठ 429)

नमिसाधु के इस कथन का आशय इस प्रकार माना जा सकता है कि जो विशेषताएं रुद्रट के काव्यालङ्कार में प्रच्छिन्न रूप में विद्यमान थी उनको सहृदय सामाजिक के समक्ष सरल रूप में प्रस्तुत करके नमिसाधु ने रुद्रट का उपकार ही किया है क्योंकि परोपकार ही सहृदयों का मुख्य गुण होता है और नमिसाधु की सहृदयता तो उनकी टीका पद्धति से ही सिद्ध प्रतीत होती है।

सर्वथा सरस तथा सरल टीका करने पर भी नमिसाधु ने अपनी टीका के अन्त में सहृदयता का परिचय देते हुए विद्धत्समाज से अज्ञानवश भ्रांतिपूर्ण व्याख्या के लिए क्षमा प्रार्थना की है-

अज्ञानाद् यद्धितथं विवृत्तां किमपीहतन्महामतिभि: ।
संशोधनीयमखिलं रचिताञ्जलिरेष याचेऽहम् ।।
(का.रु. पृष्ठ43.)

नमिसाधु का यह कथन उन्हें उच्चकोटि के टीकाकार की श्रेणी में स्थापित करने में पूर्णतरू सक्षम है। नमिसाधु की टीका काव्यालङ्कारगत गुणों की विवेचक, प्रकाशक तथा विश्लेषक है।

अंतत: कहना उचित ही प्रतीत होता है कि नमिसाधु काव्य शास्त्रीय परंपरा में उच्च कोटि के आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. जैन साहित्य का वृहद इतिहास- भाग 5 (पंडित अंबा शाह)
2. जैन साहित्य का वृहद इतिहास (डॉ.गुलाबचंद चौधरी)
3. जैन आचार्य का अलंकार शास्त्र में योगदान (डॉ.कमलेश जैन)
4. तीर्थ दर्शन द्वितीय खंड
5. जैनेंद्र सिद्धांत कोष (जिनेंद्र वर्णी)
6. संस्कृत काव्यशास्त्र इतिहास (डॉ. सुशील कुमार डे)
7. संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास (श्री पी.वी.काणे)
8. रुद्रट काव्यालंकार (पंडित रामदेव शुक्ल डॉक्टर सत्यदेव चौधरी)
9. Rudrata's
10. Kavyalankara-An Estimate(Dr.K. Leela Prakash)
11. तीर्थ दर्शन
12. Nirgranth volume 1
13. स्थूलिभद्र संदेश (श्री ललित कुमार नाहटा)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Desiring Girlhood: Female Sexuality and Psychosexual Development in *Claudine at School* and *The Crooked Line*

Anjali*

***PhD Scholar, Jamia Millia Islamia University, New Delhi, INDIA**

Abstract: This paper explores the way both Ismat Chughtai in *The Crooked Line* and Colette in *Claudine at School* have represented female sexuality and psychosexual development from a teenage girl's perspective. Despite setting in different periods, early twentieth-century colonial India and Belle Époque France, both novels portray the coming-of-age of young female protagonists navigating the tensions between personal desire and societal expectations.

Drawing insights from the works of Simone de Beauvoir, Kate Millett, Adrienne Rich, and Luce Irigaray, the paper examines how gender socialisation influences a young girl's relationship to her desire, identity, and agency over her body. The paper argues that these texts do not present girlhood as a passive stage on the way to adulthood, but as an active and often complex process of becoming. In doing so, Chughtai and Colette offer alternative representations of the female coming-of-age that is not shaped by conformity, but by desire, resistance, and the search for a self-defined identity within a patriarchal society.

Keywords: Female coming-of-age, female desire, gender socialisation, feminist literary criticism, female sexuality, comparative literature.

Introduction - The paper "Desiring Girlhood: Female Sexuality and Psychosexual Development in *Claudine at School* and *The Crooked Line*" attempts to examine how the writers Chughtai and Colette have represented female sexuality and desire from the perspective of a female teenager in their novels, *The Crooked Line*[1] and *Claudine at School*,[2] from *The Complete Claudine*series. Even though both stories are set in different socio-cultural and political contexts, *The Crooked Line* was written in the early twentieth century, amidst India's freedom struggle against the British Empire. At the same time, the latter is set against the backdrop of the Belle Époque (a period often known for optimism, peace, economic prosperity and significant advancement in the arts, literature, and technology) of early twentieth-century France. However, the aim behind studying these two works is to compare and analyse the way both writers represent female sexuality and desire from the perspective of a female teenager. In addition, the way both writers critique the way the patriarchal system dictates a woman's sexuality, attempts to suppress it from childhood, and the adverse effects of it on their psychosexual development.

Overview of the Primary Texts: *The Crooked Line* traces the struggle of Shaman who finds herself in a subordinate position and struggles to find her voice and place in an oppressive patriarchal society. Through the character of Shaman, Chughtai discusses how young women are conditioned since their birth and the way it eventually impairs their understanding of what is their role in the society and their own identity.*The Complete Claudine* is a series of four novels *Claudine at School*, *Claudine in Paris*, *Claudine Married*, and *Claudine and Annie*, written by Colette.The novel follows the life of Claudine from a schoolgirl in a boarding school to a married woman who feels lost after getting married and wants to escape and explore more than what her married life has to offer. The paper focuses only on *Claudine at School*, as similar to *The Crooked Line* that depicts the psychosexual development of a young girl, a similar thread runs through *Claudine at School*. Both protagonists of the two texts struggle for creating their identity and experience desire outside the prescribed norms set by the society. Claudine is bolder and more expressive while Shaman passive. However, both teenagers navigate their sexual awakening in a society that conditions them to be sexually available but not act upon their desire.

Cultural Conditioning and Female Sexuality: Female sexuality and desire have always been taboo and contentious subjects. There is an inherent stigma surrounding a woman seeking and acting upon her sexuality and desire. The issue not only has to do with how society has considered women as 'objects of lust or love,' always "the desired one" and never the "desiring one." Kate Millett, in her seminal work *Sexual Politics*[3], describes this kind of relationship between men and women not as that of equals

but rather that of "dominance and subordination."[4] She stresses that there is an "interior colonisation"[5] which has been highly institutionalised, and due to which men seem to sexually dominate women's bodies and decide how sex should be performed as an activity.

Therefore, a woman's pleasure has always been treated as secondary, and what and how she desires is shaped by oppressive gender norms. These gender norms dictate how women should be modest and passive, while men are encouraged to be assertive and sexually active. However, when a woman rejects these norms and seeks sexual pleasure, she is shamed for it, as if it is a 'sin.' Men, however, are often exempt from these restrictions. Simone de Beauvoir reflects upon this double standard of society when it comes to men and women exploring their sexuality and opines that "Patriarchal civilisation condemned woman to chastity; the right of man to relieve his sexual desires is more or less openly recognised… for her the act of the flesh, if not sanctified by the code, by a sacrament, is a fault, a fall, a weakness; she is obliged to defend her virtue, her honour; if 'she gives in' or 'if she falls,' she arouses disdain, whereas even the blame inflicted on her vanquisher brings him admiration."[6]

This is even true now, as a woman, since childhood is conditioned to believe that premarital sex is against the culture and if she seeks sexual pleasure or acts upon her desire before marriage. She is bringing shame to her character and therefore her 'family,' or her 'community.' So, it is not surprising that young girls are always rebuked when they appear or behave in a particular 'sexual manner.' Though, quite ironically, the girl is encouraged to be seductive or more open about her sexuality when it comes to pleasing a man, while at the cost of ignoring her pleasure, whether sexual or emotional. This disparity is further highlighted in literature, wherein plenty of coming-of-age stories are centred on teenage boys going on adventures, falling in love, or getting to explore their desires and sexuality. Female desire, by contrast, simply isn't up for discussion in these works: women can be "the object or the victim of someone else's desire."[7] but rarely be recognised as someone with sexual feelings of her own. In most narratives, the teenage girl is on the periphery of the larger story, where the boy 'hero' goes on adventures, falls in love, and gets to be with her.

However, with characters like Shaman, Rasul Fatima, and Najma in *The Crooked Line*, and Claudine, Aimee, and Luce in *Claudine at School*, Chughtai and Colette dispel the traditional conventions about sexuality and desire that celebrate sexual exploration by men as an integral part of male psychosexual development and eventually self-development. In contrast to the narratives of teenage girls who are depicted as decorous, desexualised, and over-achieving' deer,' we have Shaman, who, with her 'pulls and tugs of the flesh,' is often labelled a "witch."

Then we have Claudine, a school-going girl who is aware of her sexuality, beauty, and the effect of it on others as she decides to seduce her male teacher to make her female teacher jealous and knows all she has to do is to "open my eyes innocently wide and to droop my head so that my hair fell lose all about my face. He swallowed the bait at once."[8] Therefore, both writers depart from the decorum that most writers, not just those of the 20th century, but also those of today, seem to maintain regarding childhood narratives.

The Modern Teenage Girl: A Comparative Lens: Let's examine a few notable teenage narratives in Indian and French fiction from the early 20th century. One can notice how, whether it is Swami in *Swami and Friends*[9] or François Lepic in *Little What's-His-Name*,[10] both trade within the conventions of romanticised, sentimentalised, and idealised childhood or coming-of-age narratives. And in a narrative about a teenage girl (though there are not many), we meet Durga from *Pather Panchali*[11]. She is an impoverished, quirky, motherly figure to her younger brother and often lies and steals food to make ends meet. We see the daily lives of Swami, Nicholas, Durga, and their idyllic and innocent childhoods, but there is no focus on their dreams, desires, or inner minds. But Chughtai and Colette digress from the depiction of deroticsed teenagers through Claudine, Shaman, and their peers. Their works not only focus on young girls' journey to self-development, but also reveal the inner workings of their minds in a patriarchal world that does not allow them to dream and desire. It also shows how they perceive female sexual awakening as a crucial aspect of female coming-of-age, and therefore, the paper also considers the selected works by Chughtai and Colette as coming-of-age narratives for Shaman and Claudine.

The characteristics of a female coming-of-age can be identified in the novels *The Crooked Line* by Ismat Chughtai and *The Complete Claudine*, written by Colette, as both narratives focus on Shaman's and Claudine's journey from childhood to adulthood. It shows how their social, psychological, and even psychosexual conditioning shapes their perception of the world and their own identities. Since growing awareness of self-identity and sexuality is also a part of self-actualisation, both writers have, by exploring a young woman's femininity and sexuality from a young female perspective, provided us with a unique representation of a young modern female teenager's coming of age.

However, these works are not, per se, a coming-of-age story for a queer character because, by the end of the novel and series, both Shaman and Claudine are married and enter a heterosexual relationship. What intrigued me about reading these works on young female queer desire is how the writers, by presenting a young female protagonist who refuses to conform to many of the conventions of conventional heroines in plots with heterosexual resolutions, especially in young adult fiction, particularly resonated with me. For instance, reflecting upon the psychosexual

development of Shaman, who wakes up after dreaming about Unna, her wet nurse, where she sees Unnas all around her and finds her "fleshy and ripe like a mango… her soft, warm Unna… burrowed herself into the rounded softness, her lips moving, the veins in her throat throbbing as if she were gulping down great quantities of milk."[12] Later on, after watching a wedding ritual of the groom happily licking kheer (Indian sweet dish) from the bride's palm makes Shaman "in the grip of a strange longing,"[13] while Noori, her cousin, "insisted that they go to the storage room and play wedding games right away."[14]

But one should notice that neither of the writers has defined or labelled their protagonists as lesbian or bisexual. Claudine or Shaman's sexual and romantic attractions and desires occur organically throughout their childhood to adulthood, but are never gender specific. However, one can see their journey of sexual awakening as that of a queer character, and precisely of a bisexual woman. For instance, at first, Shaman is repelled by Rasul Fatima, her classmate and roommate's, relentless adoration and physical advances. Only a short time later, she experiences similar feelings for her teacher, Ms. Charan and Najma, her friend. Then, the Shaman moves to college and gradually develops intense feelings for her classmates Satil and Iftiqaar, and eventually gets married to Ronnie Taylor, an Irish army man. Similarly, Claudine's endless fawning and pitiful adoration for her teacher Aimee is one-sided. However, when Claudine receives the same treatment from her teacher's sister, Luce, it ironically irritates and angers her.Her discomfort at Luce's physical advances, when she shows a desire to kiss Claudine, she behaves aggressively at the idea, "Good Heavens no, I don't want to![15]—exposes a deeper internalisation of patriarchal conditioning. Later, when she is married, Claudine has an intense desire for Rezi, Renaud's friend. Still, throughout their courtship, she is constantly plagued by her shame and the constant reminder that she is not allowed to act upon her desires. The patriarchal construction of female (homo) sexual desire is discussed by Adrienne Rich when she explains how patriarchal society, "asserts that primary love between the sexes is 'normal,' that women need men as social and economic protectors, for adult sexuality, and psychological completion; that the heterosexually constituted family is the basic social unit; that women who do not attach their primary intensity to men must be, in functional terms, condemned to an even more devastating outsiderhood than their outsiderhood as women."[16] As a result, women who do not attach their primary emotional and sexual intensity to men are positioned as doubly outside the dominant order first as women, and again as deviant women. Even though Renaud himself orchestrates Claude's affair with Rezi, it is her own shame and guilt that prevents her from experiencing or acting upon her desires.

Therefore, both writers not only depict the fluidity of Shaman and Claudine's sexuality but also challenge the broader ideological norms that seek to restrict female desire. Neither of these protagonists are considered queer, yet their psychosexual development journey is filled with instances that extend beyond heterosexual norms. Their erotic experiences whether homoerotic or heteronormative are not isolated moments, but part of their evolving engagement with self. These moments exist alongside other significant events in their lives and together they shape how each woman navigates the search for her own identity. In this sense, Claudine's and Shaman's experiences show that female desire is not something that can be categorised into 'abnormal,' or 'marginal,' but an important and complex part of how they form their understanding of what it means to be a woman, even when that understanding involves confusion, inner conflict of condition.

Social Morality and Cultural Restraint: Chughtai and Colette not only represent and celebrate female sexuality and desire from a female teenager's perspective but also draw out a very crucial argument regarding the negative impact of cultural restraint on a woman's psychosexual development. There are still cultures across various religions, ethnicities, or communities which have compelled women to suppress their sexuality and sexual desires, making it a shameful act and something against cultural, societal morals and values. Women who do not abide by this notion are often labelled as morally loose characters. In such environments, a young girl grows up to internalise the idea that having sexual desires or acting upon them is something against culture or tradition. So, the girl grows up to be someone who stifles her sexuality; she feels trapped in her own body. As Beauvoir opines, a woman "does not admit this feeling to herself: but it is there, it distorts all her best efforts, it sets up limits, boundaries that are more than often hard to cross."[17]

Also, regardless of the age we live in, both writers demonstrate that a woman will always be subjected to a different, and more often than not, an irrational moral code than a man when it comes to dictating the ways in which she should live and behave in society. However, the primary focus of both Colette and Chughtai is not only to depict female sexuality from the lens of young girls but also on the significance of women gaining sexual agency. As the conditioning of a girl child begins at home, it is there that she is taught how to live her life in a way that doesnot bring shame or dishonour to the family. Throughout her upbringing, a girl is continuously put after a male member in the family or school, etc. She is taught, time and again, that she is the 'secondary sex.' Even when it comes to sexual gratification, she learns that she can only discover her own body or desires through a male. But through their teenage female characters and their coming of age, Chughtai and Colette created an environment for young girls where they not only learn about their sexualities but also can explore them without being judged or made to feel ashamed about thinking them.

Conclusion: Therefore, Chughtai and Colette provided us with works that highlight the fluidity of female sexuality and how social constructs of femininity distort a woman's psyche regarding her sexuality and desires. They also focus on the exploration of women and their sexuality in and excluded from public and private spheres. *The Crooked Line* and *Claudine at School*, by depicting teenage female sexuality and desire, also helped invent the twentieth century's first modern adolescent girl. This teenage girl is rebellious, self-centred, erotically reckless, sexually fluid, and determined to create an identity different from what she was given at birth. This modern teen girl is also confused about how, or if, one can actually 'become a woman' without losing the 'person' she wants to create for herself. But no matter what, we as readers root for them and hope that 'girls on adventures' explore the world, their sexual desires, and get the boy or girl of their dreams, if that is what they want.

References:-

1. Ismat Chughtai, *The Crooked Line*, trans. Tahira Naqvi (New Delhi: Kali for Women, 1995).
2. Colette, *The Complete Claudine: Claudine at School; Claudine in Paris; Claudine Married; Claudine and Annie*, trans. Antonia White (New York: Farrar, Straus and Giroux, 2001).
3. Kate Millett, *Sexual Politics* (New York: Columbia University Press, 2016), 111.
4. Ibid., 23
5. Ibid.
6. Simone de Beauvoir, *The Second Sex*, trans. Constance Borde and Sheila Malovany-Chevallier (Dublin: Random House Ireland, 2010), 89.
7. Deborah L. Tolman, *Dilemmas of Desire: Teenage Girls Talk About Sexuality* (Cambridge, MA: Harvard University Press, 2005), 39.
8. Colette, The Complete Claudine, 74.
9. R. K. Narayan, *Swami and Friends* (Chennai: Indian Thought Publications, 2008).
10. Alphonse Daudet, *Little What's-His-Name*, ed. Andrew Moore, trans. W. P. Trent (New York: Mondial, 2008).
11. Bibhutibhushan Bandopadhyay, *Pather Panchali: Song of the Road*, trans. T. W. Clark and Tarapada Mukherji (New Delhi: HarperCollins, 2003).
12. Chughtai, *The Crooked Line,* 3.
13. Ibid., 34.
14. Ibid.
15. Colette, *Claudine at School*, 111.
16. Adrienne Rich, *Compulsory Heterosexuality and Lesbian Existence*, *Signs* 5, no. 4 (1980): 631–660, https://www.jstor.org/stable/3173834.
17. Beauvoir, *The Second Sex*, 207.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

प्रवासी जनजातीय श्रमिकों को प्रेरित करने वाले कारकों का समाजकार्य अध्ययन (मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में)

कपिल डामर*

* पीएच.डी. शोधार्थी (समाजकार्य) डॉ. बी. आर. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, डॉ. अम्बेडकर नगर, महू (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – आधुनिक भारत में बढ़ती हुई जनसंख्या व बेरोजगारी के कारण लोग अपनी आजीविका चलाने के लिए ग्रामिण क्षेंत्रों से शहरी की और रोजगार की तलाश में जा रहें है जिसमें रोजगार, प्रवास सबसे बड़ा कारण है। ग्रामिण क्षैत्रों में निवास करने वाले अधिकतर जनजातीय लोंगो के पास आय के संसाधन न होने तथा मूल स्थान पर रोजगार की सुविधाएँ न मिलने के कारण अपने घर को छोड़कर शहरों की ओर मजदूरी करने जा रहे है। इस प्रकार से देश में असंगठित क्षेंत्रों में 42 करोड़ श्रमिक मजदूर प्रवास मजदूरी के रूप में संलग्न है। जिसकी आयु 18–40 वर्ष आयु समुह के श्रमिक सिर पर बोझढ़ोना ईट–भट्टा, रिक्शा चालक, भूमिहीन मजदूर, भवन–निर्माण मजदूर आदि सम्मलित है।

2011 की जनगणना के अनुसार भारत में 6.4 लाख गांव है, जंहा देश की जनसंख्या का 68 प्रतिशत हिस्सा ग्रामिण क्षेत्रों में निवास करता है। इस प्रकार से ग्रामिण अर्थव्यवस्था का राष्ट्रीय आय में 46 प्रतिशत योगदान है और 70 प्रतिशत श्रमिक गांव में रहते है जिनका मुख्य व्यवसाय कृषि कार्य है, जो कि पूर्णत: वर्षा पर निर्भर है तथा उनको कृषि कार्य से उत्पादित फसल से अधिक आमदानी न होने से बुनियादी ढ़ाँचा सुविधाओं का न मिलना है। अधिकतर जनजातीय लोग सीमांत कृषक (छोटे कृषक)व भूमिहीन श्रमिक होने के कारण अपने परिवार में बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ है। इसलिए उन्हें उभरने, बच्चों की शिक्षा, उन्नत कृषि व्यवस्था और मूलभूत सुविधाएं जुटाते है।

ग्रामिण जनजातीय परिवारों में जनसंख्या के वृद्धि होने से उनके परम्रागत कृषि व्यवसाय पीढ़ी–दर–पीढ़ी परिवार के भाईयों में विभाजित होती है, जिसके कारण कृषि जोतों के आकार भी छोटे–छोटे होते जा रहे है जिसके फलस्वरूप उनकी कृषि उपज में कमी व परिवार में औसत सदस्यों की संख्या अधिक होने के कारण जनजातीय परिवारों के सदस्यों का पालन–पोषण पूर्ण रूप से नही हो पा रहा है। एसी परिस्थिति में जनजातीय लोगों को अपने परिवार चलाने में कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है जैसे – खाद्य पदार्थ जुटाने, पारिवारिक खर्च चलाने, कृषि सिंचाई, बीमारी के उपचार, आवास बनानें, स्वरोजगार स्थापित करने, शिक्षा प्राप्त करनें, उपयागी संसाधनों को खरीदनें, शादी–विवाह जैसे सामाजिक त्योहार व सांस्कृतिक कार्यक्रमों को सम्पन्न करने के लिए अधिक रूपयों की जरूरत होती है। इसलिए जनजातीय लोग अपने घर से मौसम के अनुसार शहरों की और मजदूरी करने जाते है।

मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले की विशेषत: भील, भिलाला, बारेला, पटलिया, जनजातीय अंचल भी एक ऐसा ही क्षेत्र है, जहां से हजारों की संख्या में जनजातीय समाज के लोग मजदुरी की तलाश में अंत:राज्यीय व अंतर्राज्यीय प्रकार के प्रवास कर रहे है। यहां के अधिकांश ग्रामिण जनजातीय लोग अपने मूल स्थान से अपने पड़ोसी राज्यों गुजरात, महाराष्ट्र और राजस्थान के शहरों में भवन–निर्माण कार्यो तथा कृषि मजदूरी कार्य के लिए जाते है। इस प्रकार से प्रवास लोगों के जीवन में एक अवधारणा ही नही बल्कि स्थान परिवर्तन का चक्रीय क्रम बना हुआ है। यह प्रवास आपातकालीन प्रवास न होकर आजीविका कमाने का एक महत्वपूर्ण आधार बन गया है। प्रो. बेब ने अपने 'जनसंख्या परिवर्तन का प्रवासन सिद्धांत' में जनसंख्या के स्थानांतरण को ध्यान में रखकर जनसंख्या विकास का विश्लेषण किया गया है जिसमें किसी देश की जनसंख्या को प्रभावित करने वाले तीन बताये गये है– 1. जन्म दर 2. मृत्यु दर और 3. प्रवास।

प्रवास का अर्थ एवं परिभाषाएँ – प्रवास अंग्रेजी शब्द का हिन्दी रूपान्तर है। प्रवास का अर्थ एक मूल स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान पर जाना, यहां–वहां अस्थायीय तौर पर निवास करना और अपने मूल स्थान से संपर्क बनाएं रखना है।

प्रस्तुत शोध–प्रबंध का प्रयोग मध्यप्रदेश के ग्रामीण जनजातीय क्षेत्रों के संदर्भ में किया गया है। वास्तव में प्रवास शब्द पलायन का पर्यायवाची है। प्रवास शब्द से स्वत: ही स्पष्ट होता है कि इन क्षेत्रों से जो ग्रामीणजन प्रवास कर रहे है, वे आकर्षक तत्वों के प्रभाव से नही कर रहे अपितु उन्हें उनकी परिस्थितियाँ व समस्याएँ (जैसे– ऋणग्रस्तता, गरीबी, बेरोजगारी) अपना मूल स्थान छोड़ने को विवष कर रहे है। प्रवास को सामान्यत: दो प्रकार के अंतर्राज्यीय प्रवास व अंत:राज्यीय प्रवास के संदर्भ में किया गया है, जिसमें वे ग्रामीण श्रमिक है, जो या तो भूमिहीन हो या सीमांत कृषक हो, जो आय के स्त्रोत न होने व रोजगार के अभाव में मध्यप्रदेश के भीतर ही औद्योगिक क्षेत्रों की ओर प्रवास करते है तथा राज्य के बाहर गुजरात, महाराष्ट्र, व राजस्थान राज्य में प्रवास करने वाले जनजातीय श्रमिक को सम्मिलित किया गया है, जो प्रवास स्थल कृषि मजदूरी व साझेदारी में कृषि तथा भवन–निर्माण कार्य करने वाले अकुशल, अर्द्धकुशल व कुशल श्रमिक या कारीगारी का कार्य कर रहे है। खासकर मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के

ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय क्षेत्रों व पड़ोसी राज्यों की और प्रवास करने वाले जनजातीय श्रमिक(भील, भीलाला, व पटलिया जनजाति व उपजाति) को शामिल किया गया है।

प्रवास शब्द का अर्थ स्थान परिवर्तन करने के संदर्भ में किया गया है, जिसमें व्यक्ति किसी कार्य के लिए अपने मूल स्थान को छोड़कर कही दूसरे स्थान पर अस्थायी रूप से बस जाते है या बार-बार आते-जाते रहते है उसे प्रवास कहा गया है।

प्रवासी शब्द का अर्थ मजदूरी के लिए मौसम के अनुसार जगह-जगह पर जाने वाले श्रमिकों के संदर्भ में किया गया है, जो रोजगार की तलाश में दूसरें शहरों व राज्यों में निवास कर प्रवासी मनदूरी कार्य करते है उसे प्रवासी कहा गया है।

श्रमिक का अर्थ- अधिनियम की धारा 2 (ई) के अनुसार -'श्रमिक ऐसे व्यक्ति को कहां गया है, जो किसी भवन या निर्माण कार्य में कुशल, अर्द्ध कुशल या अकुशल श्रमिक के रूप में शारीरिक या पारिश्रमिक वेतन के लिए कार्य करता है उसे श्रमिक कहां जाता है।

प्रवासी श्रमिक उन लोगों को कहा जाता है, जो मजदूरी करने के लिए अपने घर से साठ-गाठ के साथ शहरों की ओर अधिक समय के लिए मजदूरी की तलाश में निकल जाते है, वहां प्रवास स्थल पर कुछ महिने रहकर प्रतिदिन प्रवासी के रूप मजदूरी कार्य करते है उसे प्रवासी श्रमिक कहा गया है।

प्रवास की परिभाषाएँ – बर्गेल के अनुसार-'प्रवास मानवीय जनसंख्या में स्थानांतरण के लिए प्रयुक्त नाम है। प्रवास की प्रक्रिया मानवीय जनसंख्या को उपलब्ध सुविधाओं की ओर जाने हेतु आजीविका कमाने हेतु रोजगार प्राप्त करने हेतु शहरों की चकाचौंध की ओर आकर्षित करने हेतु प्रेरित करती है।

वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार देश के 102.9 करोड़ लोगों में से 30.7 करोड़ (30 प्रतिशत) जनसंख्या प्रवासी थे, जो अपने जन्म स्थान से अलग रह रहे थे।

'इकोनॉमिक सर्वे ऑफ इण्डिया', 2017 के अनुमानित आंकडे यह दर्शाते है कि 2011 और 2016 के बीच भारत में आंतरिक प्रवास करने वाले लोगों की वार्षिक संख्या 9 मिलियन के करीब थी, जबकि 2011 में भारत आंतरिक प्रवासियों की कुल जनसंख्या में एक-चोथाई देने वाला 139 मिलियन पर रहा है जिसमें उत्तरप्रदेश, और बिहार सबसे बडें स्त्रोत राज्य है, जहां से लोग सबसे अधिक संख्या में प्रवास करते है। इसके बाद मध्यप्रदेश, पंजाब, राजस्थान, उत्तराखण्ड, जम्मू-कश्मीर और पश्चिम बंगाल से प्रमुख रहे है तथा आकर्षित करने वाले राज्यों में दिल्ली , महाराष्ट्र, तमिलनाडू, गुजरात, आन्ध्रप्रदेश, और केरल है।

संयुक्त राष्ट्र रिपोर्ट, 'द इंटरनेशल माइग्रेंट स्टॉक 2019' में यह कहा गया है कि विदेशों में 1.75 करोड़ भारतीय प्रवासी है। उनके प्रवास करने के मुख्य कारण नौकरी, उद्योग, शिक्षा, व व्यापार करने के लिए अपने देश को छोड़कर दूसरे देशों में जाकर रहने लगे है, जिसमें भारतीय प्रवासियों की आबादी दुनिया में सबसें अधिक है और दुनियाभर में प्रवासियों की संख्या करीब 27.2 करोड़ पर पहुंच गई है। इस रिर्पोट में अंतराष्ट्रीय प्रवासियों की उम्र, लिंग और मूल देश तथा दुनिया के सभी हिस्सों के आधार पर संख्या बताई गई है। कुल प्रवासियों की संख्या दुनिया की आज की आबादी का 3.5 फीसदी है। अंतराष्ट्रीय प्रवासियों को अपने यहां जगह देने वाले देशों में सबसे ऊपर यूरोप और उत्तरी अमेरिका है।

शोध समस्या का चयन – प्रस्तुत शोध-प्रबंध में जनजातीय लोगों परिवारिक एवं आर्थिक समस्याओं के देखते हुए झाबुआ जिले को शोध अध्ययन क्षेत्र के रूप में चयन किया गया है। ग्रामीण जनजातीय क्षेंत्रो के अधिकांश लोगों के पास रोजगार के आवश्यक संसाधन न होने के कारण रोजगार या मजदूरी की प्राप्ति हेतु दूसरे स्थान पर बार-बार स्थानांतरित होते रहते है, क्योंकि उन्हें अपने मूल स्थान पर पूर्ण रोजगार की व्यवस्था नही हो पाती है। ऐसी स्थिति में उन्हें दूसरे क्षेत्रों या पड़ोसी राज्यों में रोजगार प्राप्त करने हेतु प्रवास करना अति आवश्यक हो जाता है जिससे कि वे अपने परिवार के बुजूर्ग एवं बच्चों का पालन-पोषण कर दैलिक दिनचर्या का गुजारा कर सकें। जनजातीय समुदाय में सदैव यह देखा गया है कि परिवार में किसी सदस्य के अचानक बीमार होने या किसी सामाजिक व सांस्कृतिक कार्यक्रम को संचालित करने के किए लिए वे अपने स्थानीय साहूकारों से ऋण उधार लेते है जिसे में निनिश्च समयावधि में भुगतान नही कर पाते है ऐसी परिस्थिति में साहूकारों जनजातीय श्रमिकों में अज्ञानता व जागरूकता की कमी का फायदा उठाते है। अत: यह ज्ञात करना आवश्यक हो जाता है कि इनकी पारिवारिक आर्थिक एवं शैक्षिणक विकास के मार्ग में आने वाली बाधाओं का अध्ययन करने हेतु शोधार्थी द्वारा प्रवासी जनजातीय श्रमिकों को प्रेरित करने वाले कारकों का समाजकार्य अध्ययन करने हेतु इस समस्या का चयन किया गया है।

शोध अध्ययन का महत्व – प्रस्तुत शोध-प्रबंध में प्रवासी जनजातीय श्रर्मिक रोजगार पाने हेतु अपने भूल स्थान से दूसरे स्थान पर अधिक मजदूरी के लिए श्रमिकों के रूप श्रमिकों के रूप प्रभावित हुई है तथा प्रवास के दौरान भी उनके आर्थिक विकास में परिवर्तन की गति दिखाई नही देती है। उनकी पारिवारिक समस्याओं में कमी आने की बजाय निरतंर बढ़ती ही जाती है। सरकार के द्वारा प्रवास को रोकने के लिए कई शासकीय योंजनाओं को लागू किया गया है, लेकिन फिर भी प्रवास की गति में कमी नही हुई है। वर्तमान में प्रवास एक अवधारणा न होकर एक सामाजिक समस्या के रूप में उभरकर सामने आ रही है। इसलिए शोधार्थी को इस समस्याओं पर शोध करना आवश्यक हो जाता है।

शोध कार्य के उद्देश्य –'जनजातियों के प्रवास के कारण और प्रभावों का अध्ययन' करना मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में निम्न उदेश्यों को ध्यान में रखकर किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र का परिचय – झाबुआ एक प्राचिन और ऐतिहासिक महत्व रखने वाला स्थान है। यह स्थान कालांतर में भारतीय इतिहास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यहां प्राचिन काल में नागवंशी राजाओं का शासन था, जो विभिन्न आदिवासी जनजातियों के साथ सम्बन्धित थे। झाबुआ का ऐतिहासिक प्रमुख भाग विंध्याचल पहाड़ियों में स्थित है, जहां विभिन्न आदिवासी समुदायों में बसा रहा है। यहां का नाम प्राचिन काल में 'जवाईबुआ' था, जिसका अर्थ होता था,'निजी राज्य के बाहर'। यह इसलिए कहा जाता है क्योंकि यहां के जनजातियाँ अपने आप में एक स्वतंत्र संगठन और शासन प्रणाली रखती है।

झाबुआ जिले का भौगोलिक स्वरूप :

मिट्टी – झाबुआ जिले की मिट्टी पथरीली, भूरी, काली एवं अनोपयोगी है। क्षेत्र का अधिकांश भू-भाग ऊबड-खाबड व कटा होने के कारण कृषि कार्य का विस्तार के साथ आधुनिक दृष्टि से कृषि का अभाव पाया जाता है।

जलवायु – इस क्षेत्र की जलवायु महाद्वीपीय दृष्टि से दो जलवायु के

अन्तर्गत निम्न घटकों में रखी जा सकता है जिसके आधार पर अन्य क्षेत्रों का वर्णन किया जा सकता है।

वर्षा – झाबुआ जिले में औसतन वर्षा 750.45 मि.मी. होती है। वर्षा मुख्यतया जून-जुलाई माह से होती है। सामान्यता भारत में वर्षाकाल 15 जून से 15 सितम्बर तक माना जाता है। वर्षा की अधिकतम मात्रा इसी अवधि में प्राप्त होती है।

तापमान – जलवायु को निर्धारित करने वाला महत्वपूर्ण घटक तापमान होता है। किसी भी क्षेत्र में कृषि व्यवसाय एवं मानवीय क्रियाकलाप पर जलवायु की विशेष छाप देखी जा सकती है। जिसमें तापमान काफी अधिक प्रभावी होता है। अलिराजपुर में औसतन वार्षिक तापमान मई मध्य जून तक तापमान32.8 से 42.3 से अधिक या कम रहता है।

हवाएं – झाबुआ क्षेत्र में हवाओं का प्रवाह पछुआ रहता है इस क्षेत्र में वर्ष के अधिकांश दिनों में पछुआ हवांए चलती है। यही हवांए मौसम के अनुसार अपना रूप बदलती है। जिसमें गर्मी में यह लू का रूप भी लेती है। शीत हवाओं का प्रवाह भी इन्हीं हवाओं के कारण होता है।

फसलें – झाबुआ जिला मुख्यतया कृषि प्रधान है। इस क्षेत्र में मक्का, उड़द, तुवर, मूंगफली, ज्वार, बाजरा, कपास, गेहूँ, चना आदि की फसलों की कृषि का कार्य किया जाता है।

वन – प्रदेश में झाबुआ जिला पिछडे जिलों में शामिल होने के बाद भी वन सम्पदा की दृष्टि से प्रदेश में अपना उचित स्थान रखता है। इन क्षेत्रों में सागोन, साल, शीशम, बांस, हरडा, बेहडा, ताड़, महुंए, आम आदि वृक्षों की बहुलता है। जिस कारण इस क्षेत्र की आदिम जातियों के लिए वन से वनोपज, आखेट, खाद्य संग्रहण कर अपना आर्थिक जीवन निर्वाह करने में महत्वपूर्ण भूमिका वनों की रहती है।

शोध प्रविधि

शोध प्रारूप – प्रस्तुत शोध प्रबंध में अध्ययन हेतु विवरणात्मक शोध प्रारूप का प्रयोग किया गया है।

1. **शोध का अध्ययन क्षेत्र –** शोध-प्रबंध में अध्ययन हेतु मध्यप्रदेश का झाबुआ जिला अध्ययन क्षेत्र के रूप में चयनित किया गया है ।

2. **अध्ययन का समग्र –** मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के प्रवास करने वाली समस्त जनजातिय परिवारों को शोध के समग्र के रूप में सम्मिलित किया गया है।

3. **अध्ययन की इकाई –** झाबुआ जिले के समस्त विकासखण्ड (झाबुआ, मेंघनगर, थांदला, पेटलावद, रानापुर, एवं रामा) के प्रवास करने वाले जनजातिय उत्तरदाताओं को शोध की इकाई के रूप में सम्मिलित किया गया है।

4. **निदर्शन विधि –** प्रस्तुत शोध-प्रबंध में झाबुआ जिले के छ: विकासखण्ड झाबुआ, मेंघनगर, थांदला, पेटलावद, रानापुर, एवं रामा के भील, भीलाला, व पटेलिया जनजातीय व उपजाति के परिवारों का चयन किया गया है, जिन परिवार के सदस्य मजदूरी के लिए दूसरे स्थानों पर प्रवास करते है। उनका चयन सौद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति के द्वारा किया गया है। प्रत्येक विकासखण्ड से 5-5 गाँव व प्रत्येक गाँवों से 10-10 उत्तरदाताओं को सम्मिलित किया गया है। इस प्रकार कुल 300 प्रवासित जनजातिय को उत्तरदाताओं के रूप में शामिल किया गया है।

5. **तथ्य संकलन के स्त्रोत –** किसी भी सर्वेक्षण या अनुसंधान के लिए सामग्री या तथ्यो का संकलन अत्यंत आवयश्क है। जब तक शोध विषय के संबंधित तथ्यो को निश्चत प्रविधियों के काम में लेते हुए एकत्रित नहीं किया जायेगा तब तक शोध के आधार पर कोई निष्कर्ष नही निकाल सकते है, और नही किसी भी प्रकार के नियमों का प्रतिपादन किया जाता है। तथ्य संकलन शोध प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण चरण है। किसी वैज्ञानिक को निष्कर्ष तक पहुंचने एवं सामान्यीकरण तथा सैद्धांतिकरण के लिए सूचना प्राप्त करना, तथ्य एकत्रित करना, संख्यात्मक एवं गुणात्मक बाते मालूम करना आवश्यक है। अत: तथ्य संकलन के निम्न स्त्रोत है-

1. प्राथमिक स्त्रोत
2. द्धितीयक स्त्रोत

1. प्राथमिक स्त्रोत – प्राथमिक स्त्रोत वे मौलिक तथ्य, सुचनाए या आंकडे होते है। जो कि शोधकर्ता वास्तविक अध्ययन स्थल पर जाकर समस्या से संबंधित व्यक्तियों से साक्षात्कार करके, प्रश्नावली या अनुसूची के माध्यम से एकत्रित करता है।

शोधकर्ता ने स्वयं अध्ययन क्षेत्र में जाकर प्रवासित जनजातियों से वार्तालाप कर साक्षात्कार लिखा एवं प्रवास के कारणों एवं प्रभावों, सामाजिक, आर्थिक और स्वास्थ्य स्थिति के अध्ययन हेतु प्राथमिक आंकडो को प्रश्नावली के माध्यम से एकत्रित किया है।

प्राथमिक समंक प्राप्त करने के स्त्रोत :

1. **साक्षात्कार अनुसूची –** अनुसंधानकर्ता द्धारा निर्मित प्रश्नों के समुहों से है जिससे वह जानकारियां प्राप्त करने के उद्देश्य से बनाता है।

2. **अवलोकन** – तथ्यों को एकत्रित करने का एक प्राथमिक स्त्रोत प्रत्यक्ष निरीक्षण है अर्थात् अनुसंधानकर्ता स्वयं अध्ययन स्थल पर जाकर अपने विषय से संबंधित घटनाओं, वस्तुओं तथा व्यवहारों का स्वयं निरीक्षण या अवलोकन करके सूचना एकत्रित करता है।

3. **साक्षात्कार –** प्राथमिक सूचनाओं को प्राप्त करने का एक और उल्लेखनीय साधन संबंधित स्थानीय व्यक्तियों से स्वयं मिलकर व उनसे बातचीत करके विषय से संबंधित तथ्यों को एकत्रित करना है।

4. **समूह चर्चा शोध –** अध्ययन के दौरान शोधार्थी द्धारा मैने वहां प्रवासी लोगों से उनकी स्थिति एवं पूर्व स्थिति के बारे में जानकारी लेने हेतु सामुहिक चर्चा की।

2. द्धितीयक स्त्रोत – द्धितीय स्त्रोत के लक्ष्य जो अनुसंधानकर्ता को प्रकाशित आलेखों, रिपोर्ट, पत्र-पत्रिकाओं से प्राप्त होते है, ये वे आंकड़े होते है जो अन्य व्यक्ति या संस्था द्धारा पहले किसी उद्देश्य के लिए अपने उद्देश्य हेतु प्रयोग करता है।

द्धितीय समंक प्राप्त करने के स्त्रोत :

1. समाचार पत्र
2. पत्र-पत्रिकाएं
3. संबंधित साहित्य
4. इंटरनेट
5. पुस्तकालय
6. सांख्यकीय कार्यालय झाबुआ

समंक संकलन की विधियां – संमक संकलन या एकत्रित करने हेतु निम्नलिखित प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है जिसमें साक्षात्कार, समूह चर्चा, अवलोकन एवं फोटोग्राफी प्रमुख है, जो शोध समस्या के वास्तविक और व्यावहारिक स्थिति को भलीभांति प्रकट करते है। इस प्रकार से शोधकर्ता में निम्न प्रविधियों का प्रयोग करके समंको को एकत्रित किया है।

1. **साक्षात्कार –**साक्षात्कार को व्यवस्थित और क्रमबद्ध रूप से संचालित करने के लिए इस प्रकार की अनुसूची का प्रयोग किया गया है कि जिसके द्वारा क्षेत्र में जाकर उत्तरदाता से जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

शोधार्थी द्वारा शोध कार्य के दौरान अध्ययन क्षेत्र में पलायन महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और स्वास्थ्य स्थिति का अध्ययन करने के लिए साक्षात्कार प्रविधि का प्रयोग किया। पलायन महिलाओं से जानकारी प्राप्त करते समय उन्हें अपनी समस्या सुनाने का पुरा अवसर दिया।

2. **अवलोकन प्रविधि –** शोधकर्ता ने शोध क्षेत्र में जाकर साक्षात्कार पूर्व वहां का वातावरण, पारिवारिक, पृष्ठभूमि, भौगोलिक स्थिति, जलवायु वहां की बसाहट एवं रहवासी समस्याएं आदि का अवलोकन करके प्रश्न अनुसूची तैयार की जो कि शोध अध्ययन में सहायक हुई।

3. **समूह चर्चा –** शोध अध्ययन के दौरान शोधकर्ता द्वारा शोध समस्या से संबंधित जानकारी प्राप्त करने के लिए पलायन महिलाओं से समूह चर्चा की जो कि शोध अध्ययन में काफी सहायक हुई।

4. **तथ्यों का विश्लेषण –** समंको का विश्लेषण शोध का महत्वपूर्ण भाग होता है। शोध कार्य में केवल तथ्यों को प्राथमिक स्त्रोतों से एकत्रित कर लेने से अध्ययन का वास्तविक अर्थ स्पष्ट नहीं होता है जबकि प्राप्त एकत्रित तथ्यों को सुव्यवस्थित करके उनका विश्लेषण एवं व्याख्या नहीं किया जावे। अत: शोध से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण निम्नांकित चरणों में प्रदर्शित कर सकते है।

1. **मास्टर चार्ट –** साक्षात्कार अनुसूचित के आधार पर सर्वप्रथम मास्टर चार्ट का निर्माण किया जाता है, जिसमें उत्तरदाताओं द्वारा उनके प्रश्नानुसार उत्तर को कोड के माध्यम से प्रदर्शित किया गया।

2. **सारणीयन –** मास्टर चार्ट के अनुसार प्राप्त जानकारी के माध्यम से सारणीयन किया गया एवं विभिन्न सारणीयन के माध्यम से तथ्यों का तुलनात्मक एवं विश्लेषण किया। इस प्रकार सारणीयन द्वारा वास्तविक स्थिति का अध्ययन में सरलता हुई।

3. **क्षेत्रीय निरीक्षण –** शोधार्थी द्वारा शोध कार्य के दौरान अध्ययन क्षेत्र का निरीक्षण किया तथा तथ्यों को देखकर निष्कर्ष निकालने में सरलता हुई और वास्तविक तथ्यों का विश्लेषण किया गया।

तथ्यों का विश्लेंषण – प्रस्तुत शोध–प्रबंध में शोध अध्ययन से प्राप्त प्राथमिक तथ्यों का एस.पी.एस.एस. के माध्यम से सारणीयन, वर्गीकरण एवं विश्लेषण किया गया है।

तालिका क्रमांक –1 : प्रेरितहोकर प्रवास करने से सम्बन्धित विवरण

क्र.	विवरण	आवृति	प्रतिशत
1	मित्र	78	26.0
2	रिश्तेदार	14	4.6
3	पड़ोसी	132	44.0
4	ठेकेदार	76	25.3
	कुल	300	100.0

प्राथमिक स्त्रोंत–क्षेत्र सर्वेक्षण 2022

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 26.0 प्रतिशत उत्तरदाता अपने मित्र से प्रेरित होकर प्रवास करते है, 4.6 प्रतिशत उत्तरदाता अपने रिश्तेदार से प्ररित होकर प्रवास करते है, 44.0 प्रतिशत उत्तरदाता अपने पड़ोसी से प्ररित होकर प्रवास करते है और 25.3 प्रतिशत उत्तरदाता ठेकेदार के द्वारा प्रेरित होकर प्रवास करते है। इसलिए वह स्पष्ट होता है कि जनजातीय परिवारों से प्रवास करने वाले अधिकांश 44.0 प्रतिशत उत्तरदाता पड़ोसी से प्रेंरित होकर प्रवास कर रहे है तथा सबसें कम 4.6 प्रतिशत उत्तरदाता अपने रिश्तेदार से प्रेरित होकर प्रवास कर रहे है।

तालिका क्रमांक –2: प्रवास हेतु प्रेरित करने वालें कारक से सम्बन्धित विवरण

क्र.	विवरण	आवृति	प्रतिशत
1	अधिक मजदूरी	127	42.3
2	अधिक पैसें कमाने	173	57.7
	कुल	300	100.0

प्राथमिक स्त्रोंत–क्षेत्र सर्वेक्षण

उक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 42.3 प्रतिशत उत्तरदाता अधिक मजदूरी (अधिक समय) के लिए प्रवास करते है तथा 57.7 प्रतिशत उत्तरदाता प्रवासी मजदूरी कर अधिक पैसे की बचत की आशा में प्रवास करते है । इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण जनजातीय परिवारों से प्रवास करने वाले अधिकांश 57.7 प्रतिशत उत्तरदाता अधिक पैसे कमाने (बचत) के लिए प्रवास करते है।

प्रवास हेतु प्रेरित करने वाले कारकों से सम्बन्धित विवरण :

1. सर्वेक्षित शोध अध्ययन से स्पष्ट ज्ञात हुआ है कि 132 (44.0) उत्तरदाता अपने परिवार में आय के संसाधन न होने के कारण अपने पड़ोसी के साथ प्रवास कर रहे है। 78 26.0 उत्तरदाता अपने मूल स्थान पर रोजगार न मिलने के कारण मित्र के साथ प्रवास करते है 76 25.3 उत्तरदाता अपने घर पर कार्य कृषि सिंचाई में खाद–पानी देना पिताजी या दूसरे को देकर ठेकेदारों के साथ प्रवास करते है तथा 14 4.6 प्रतिशत उत्तरदाता अपनी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए रिश्तेदारों के साथ प्रवास करते है। अत: इससे यह स्पष्ट हुआ है कि प्रवास जनजातीय श्रमिकों में अपने आप नही हुआ बल्कि अपनी पारिवारिक स्थिति व आर्थिक समस्याओं के कारण हुआ है। उनके पास आय के स्त्रोंत का अभाव व मूल स्थान पर रोजगार न मिलना रहा है। इसलिए जनजातीय समुदाय के लोग समूह के रूप में प्रवास करते है।

2. ग्रामीण जनजातीय क्षेंत्रों से प्रवास करने वाले 57.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा है कि अपने मूल स्थान पर पूर्ण रोजगार नही मिलता है इसलिए दूसरे शहरों की ओर अधिक मनदूरी के लिए प्रवास करते है। 42.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कहा है कि परिवार में आय के संसाधन होने कारण पैसों की समस्यायें रहती है। इसलिए शहरों में प्रवासी मजदूरी कर अधिक पैसें कमाने के उद्देश्य से प्रवास करते है। अत: इससे यह स्पष्ट होता है कि गांव में निवास करने वाले जनजातीय लोग बिना प्रवास किये मजदूरी व पैसे नही प्राप्त कर पा रहे है अर्थात अपनी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति नही कर रहे है। इस कारण जनजातीय लोग शहरों की ओ निरंतर प्रवास कर रहे है।

निष्कर्ष– अध्ययन के आधार पर प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार है – प्रस्तुत शोध में प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष दिये गये है। जो निम्नानुसार है–

1. शोध क्षेत्रों में ग्रामिण जनजातिय परिवारों से पुरूष वर्ग अधिक संख्या में रोजगार के लिए अपने मूल गांव से शहरों व पड़ोसी राज्यों (गुजरात, महाराष्ट्र, व राजस्थान) में प्रवास करते है। जिन पर परिवार के पालन–पोषण करने का दायित्व अधिक होता है।

2. शोध क्षेत्रों में भील जनजाति के श्रमिक अधिक संख्या में प्रवास करते है। यह बाहुल्य जनजातीय क्षेत्र है, जहाँ पर जनजातिय लोग अधिक संख्या में निवास करते है। इसमें सर्वाधिक प्रवास करने वाले जनजातिय श्रमिकों की आयु 30-40 वर्ष के मध्य हैं।

3. शोध क्षेत्रों में विवाहित श्रमिक अधिक संख्या में मजदूरी कार्य के लिए दूसरे स्थानों पर प्रवास करते है, जो कि शादी-विवाह के अवसरों पर अपने स्थानीय साहुकारो से अधिक मात्रा में ऋण लेकर करते है, उस ऋण को चुकाने व परिवार की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मजदूरी कार्य करते है। यह अपनी जागरूकता की कमी व उचित जानकारी के अभाव में शासन द्वारा संचालित सामूहिक विवाह समारोह कार्यक्रमों में सम्मिलित नही हो पाते है।

4. शोध क्षेत्रों में जनजाति का मुख्य व्यवसाय कृषि कार्य है, परंतु कृषि जोतों के आकर छोटे होने, असमतलीकरण, बिखरी हुई एवं पठारी अवस्था में होने के कारण केवल वर्षा ऋतु में कृषि भूमि को सिंचित कर पाते है, जिसके परिणास्वरूप कृषि उपज में कमी होती है।

5. शोध क्षेत्रों के जनजातिय परिवारों में औसत सदस्यों की संख्या अधिक है। इस कारण उनके परिवारों में खाद्यान्न पदार्थ वर्ष भर नही चल पाता है। ऐसी स्थिति में अपने परिवार के सदस्यों का पालन-पोषण करने तथा अन्य पारिवारिक कार्य सम्पन्न करने में असमर्थ हो जाते है। उनके पास आय उपार्जन के संसाधन की कमी है।

सुझाव :

1. बुनियादी ढॉचे को विकसित करने की जरूरत - जनंसख्या का शहरी क्षेत्रों पर लगातार दबाव बढ़ने की वजह से देश बुनियादी ढॉचे और रीयल एस्टेट क्षेत्र पर ध्यान देने की नितान्त आवश्यकता है, ताकि सत्त और समावेशी विकास के लक्ष्य को हासिल करने में मद्द मिलेगी। ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन के पारिवारिक बंटवारे से खेती की जमीन घटती जा रही है, जिसकी वजह से ग्रामीण अंचल में आय भी कम हो रही है और इसका असर वहॉ के आर्थिक और सामाजिक जीवन पर पड़ रहा है। आज हर व्यक्ति शहरों की तरफ रूख कर रहा है, जिसे देखते हुए शहरी नियोजन की आवश्यकता है। इस लिहाज से बुनियादी ढॉचे को विकसित करने की जरूरत है और इसके लिए निजी भागीदारी बहुत आवश्यक है।

2. सरकार और निजी क्षेत्र मिलकर करें पहल - बुनियादीढॉचे के विकास से जुड़े पेशेवरों की देश में कमी का असर अंचल संपत्ति क्षेत्र पर पड़ रहा है। पेशेवरों की कमी को पूरा करने के लिए सरकार और निजी क्षेत्र को मिलकर पहल करना चाहिए।

3. गांवों की अर्थव्यवस्था को मजबूत करना जरूरी -प्रवास रोकने और रोजगार पैदा करने के लिए ग्रोथ की जरूरत है। लेकिन मौजूदा ग्रोथ जॉब लेस है। हमें छोटे व मध्यम उद्योगो पर ध्यान देना होगा। कृषि में रोजगार की ज्यादा गुंजाइश नही है। अभी सबसे ज्यादा ध्यान बडे शहरो के आर्गेनाइज्ड सेक्टरों की तरफ है। उससे रोजगार तो पैदा होता है, लेकिन प्रवासपर रोक नही लगती। प्रवास रोकने के लिए गांवो का दुरूस्त करना ही चाहिए। फल, सब्जी जैसे राँ मटिरियल को लंबे समय बचाने के लिए उद्योग बनाने होंगे। उत्तर भारत में पर्यटन और खनन दो बडे सेक्टर है, जो प्रवास रोकने में सहायक है।

4. भारतीय संविधान में सभी नागरिकों को भ्रमण एवं जीविकोपार्जन की स्वतंत्रता है। इस आधार पर व्यक्ति भारत के किसी भी स्थान पर अपने निश्चित उद्देश्यों जैसे जीविकापार्जन आदि की पूर्ती के लिए प्रवास करते है। अतएव सरकार द्वारा इन प्रवास व्यक्तियों के लिए जीविकोपार्जन के संसाधन की उपलब्धता को बढ़ाना चाहिए।

5. भारत में प्रवास की प्रवृत्ति मुख्यत: ग्रामीण से शहरी होती है, जो कि कम खेती योग्य भूमि एवं रोजगार अवसरों के अभाव के कारण शहरी क्षेत्रों में होती है, तब ग्रामीण क्षेत्रों में खेती योग्य भूमि का उचित प्रबंधन एवं रोजगार अवसरों की उपलब्धता बढ़ानी चाहिए।

6. ग्रामीण कृषकों को कृषि की नई तकनीकी का प्रशिक्षण एवं जानकारी प्रदान की जाए, ताकि उत्पादन में वृद्धि हो और उन्हें प्रवृजन के लिए मजबूर न होना पड़े।

7. विकास की योजनाओं को सरलतम ढंग से प्रस्तुत किया जाना चाहिए, ताकि अशिक्षित लोग भी इन्हें समझ सके और योजनाओं का लाभ ले सके।

8. कृषकों को कृषि कार्य के लिए सस्ते से सस्ता ऋण उपलब्ध करवाना चाहिए, जिससे उनके उत्पादन में सुधार हो।

9. प्रवास के दौरान स्थानीय शासन द्वारा कुछ एसे नियम या कानून लागू करने चाहिए, जिससे स्थानीय जमीदार, पूंजीपति एवं साहूकारों द्वारा प्रवास करने वाले लोगों का सामाजिक, आर्थिक और शारीरिक शोषण न हो।

10. प्रवास करने वाले लोगों द्वारा विभिन्न बीमारियों का भी उनके साथ उस स्थान विशेष पर आगमन होता है। अतएव प्रवास नीतियों में स्वास्थ्य परीक्षण जैसे कोई उपबंध होने चाहिए।

11. किसी भी स्थान पर प्रवास से उस क्षेत्र का तो विकास होता है, परन्तु जहां से प्रवास होता है, वहां पर कई प्रकार का विकास अवरूद्ध होता है। अत: सरकार द्वारा इस दिशा को ध्यान में रखते हुए उचित कदम उठाना चाहिए।

12. प्रवास बाबद राष्ट्रीय नीति एवं इसके क्रियान्वयन हेतु राज्यों में केन्द्रो की स्थापना होनी चाहिए। जिससे प्रवास करने वाले व्यक्तियों के उचित मार्गदर्शन की उपलब्धता सामजस्यपूर्ण बनी रहे।

उपरोक्त सुझाव यदि अमल में लाए जाते है तो परिणाम प्रवासी जनजातियों के लिए अनुकूल हो सकेंगे, जिससे इन प्रवासी जनजातियों का उत्थान हो सकेगा।

संदर्भ गृन्थ सूची :-

1. बघेल डी.एस. (1993), नगरीय समाजशास्त्र, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ आकदमी, भोपाल।
2. भगत राम बाबु, डिपार्टमेंट एण्ड माईग्रेशन एंण्ड अर्बन स्टडिज, इंटरनेशनल इस्टिच्यूट ऑफ। पापुलेशन साइंस, मुंबई, दैनिक भास्कर, 2011
3. भूगोल और आप, (मार्च 2010), मानव भूगोल।
4. डेहरिया बेनी प्रसाद (2008-09) 'गौंड जनजाति कृषि श्रमिक परिवारों में पलायन का बदलता स्वरूप एवं कारणों का अध्ययन'।
5. गुप्ता एम.एल. एवं शर्मा डी.डी., समाजशास्त्र, (UGC:NET/SLET)
6. www.interstatemigration.com
7. जेम्स, के.एस. पापुलेशन रिसर्च सेंटर इंस्टिच्यूट फॉर सोशल एण्ड इकॉनामिक चेंज, बैगलुरू, दैनिक भास्कर 2011।
8. कुरूक्षेत्र, (दिसम्बर 2010), ग्रामीण नगरीय प्रवृजन।

9. पाण्डेय प्रेम प्रकाश (1990) 'अप्रवासी श्रमिक', नार्दन बुक सेंटर, नई दिल्ली।
10. पाण्डेय मलिक (1991), 'नगरीय आवृजन', मित्तल पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
11. पाटकर सुमन (1998-99) 'पृवासी आदिवासी महिलाओं की समस्या एवं समाधान'।
12. राय, सरोज (1993) 'महिला श्रमिक', रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
13. भारत में प्रवृजन, जनगणना 2001
14. सक्सेना आर.सी. (1998) 'श्रमिक समस्याएं एवं समाज कल्याण', प्रकाशन के.नाथ एण्ड कम्पनी, मेरट।
15. सफदरी एस.एच., सी.ई.ओ. जिला पंचायत झाबुआ, पत्रिका 2011
16. शर्मा पी.के. (1924) 'आन्तरिक प्रवास और सामाजिक परिवर्तन' श्री पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।
17. व्यास बी.एस. प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद् के सदस्य और अर्थशास्त्री, दैनिक भास्कर 2011
18. वासनिक नीरज कुमार (2007-08) 'प्रवासी मजदूरों का सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का अध्ययन'।
19. यंग पी.वी. (1998), आन्तरिक प्रवास और सामाजिक परिवर्तन।
20. बहल, विम्मी एवं शिवानी, अनिल सितम्बर 2017,'ग्रामिण भारत विकास की और' एन इन्टरनेशनल जर्नल लिंक- 162 वॉल्यूम
21. जिला सांख्यिकीय पुस्तिका अलीराजपुर।
22. जुयाल, शिक्षा एवं प्रियदर्शिनी, जया (मार्च, 2018), ग्रामिण ढॉचें की मजबूत होती नींव, प्रकाशन विभाग सुचना भवन, सी.जी.ओ. लोधी रोड़ नई दिल्ली योजना पृष्ठ क्र. 42-43
23. पटेल, वर्षा (2010) असंगठित क्षेत्र में कार्यरत प्रवासी महिला श्रमिंको के जीवन स्तर एवं कार्यकर्ताओं से संबंधित समस्याओं का अध्ययन मध्यप्रदेश के इन्दौर शहर में निर्माण कार्य के विशेष संदर्भ में (अप्रकाशित) शोध-प्रबंध, देवी अहिल्या विवि इन्दौर पृष्ठ क्र. 5

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

जयसमंद झील : परंपरा की रक्षा बनाम आधुनिकता की चुनौती : एक अध्ययन

मोनिका आमेटा* डॉ. पंकज आमेटा**

* शोधार्थी (इतिहास) भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोध निर्देशक (इतिहास) भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – जयसमंद झील, जिसे एशिया की सबसे बड़ी कृत्रिम मीठे पानी की झील माना जाता है, न केवल मेवाड़ की जलवायु और कृषि व्यवस्था की धुरी रही है, बल्कि इसकी सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विरासत का भी प्रतीक रही है। यह अध्ययन जयसमंद झील के पारंपरिक महत्व और वर्तमान में उस पर पड़ रही आधुनिक प्रभावों की चुनौतियों की समीक्षा करता है। विगत कुछ दशकों में पर्यटन, नगरीकरण, जल प्रबंधन तकनीकों और स्थानीय जनसंख्या की बदलती आवश्यकताओं ने झील की पारिस्थितिकी, सामाजिक–सांस्कृतिक संरचना और आर्थिक उपयोग को प्रभावित किया है। परंपरागत जल संरक्षण प्रणालियाँ, धार्मिक अनुष्ठान, स्थानीय लोककथाएँ और जीवनशैली अब आधुनिक विकास के दबाव में कमजोर होती जा रही हैं। दूसरी ओर, आधुनिकता ने रोजगार, कनेक्टिविटी और पर्यटन को बढ़ावा भी दिया है। यह अध्ययन विभिन्न स्रोतों, क्षेत्रीय सर्वेक्षण, जनसाक्षात्कार और तुलनात्मक विश्लेषण के माध्यम से यह समझने का प्रयास करता है कि किस प्रकार परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन स्थापित कर झील की सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखा जा सकता है। निष्कर्षत:, शोध यह प्रस्तावित करता है कि यदि स्थानीय समुदाय, प्रशासन और विशेषज्ञ मिलकर नीति–निर्माण करें, तो जयसमंद झील को एक 'सांस्कृतिक रूप से सतत विकास मॉडल' में परिवर्तित किया जा सकता है।

शब्द कुंजी –जयसमंद झील, परंपरा, आधुनिकता, सांस्कृतिक विरासत, पर्यावरणीय प्रभाव, सतत विकास।

शोध प्रविधि– प्रस्तुत शोध पत्र वर्णात्मक और विश्लेष्णात्मक द्रष्टिकोण पर आधारित है। शोध सामग्री को प्रमुख इतिहास पुस्तको तथा ऐतिहासिक लेखन से लिया गया है स प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक आंकड़ो पर आधारित है।

शोध के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र निम्न उद्देश्यो पर आधारित है :

1. जयसमंद झील के सांस्कृतिक पहलुओं की पहचान करना।
2. आधुनिक समय जयसमंद झील का सांस्कृतिक संरक्षण और चुनौतियाँ।

भारतवर्ष की संस्कृति अनेक रंगों, ध्वनियों और विविधताओं का संगम है। यहां की नदियाँ, पर्वत, वन और झीलें केवल भौगोलिक इकाइयाँ नहीं, अपितु सांस्कृतिक चेतना की वाहक भी रही हैं। राजस्थान के उदयपुर जिले में स्थित जयसमंद झील, जिसे एशिया की सबसे बड़ी कृत्रिम मीठे पानी की झीलों में गिना जाता है, न केवल एक अद्भुत जल संसाधन है, बल्कि यह मेवाड़ की सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक संरचना का अभिन्न अंग भी है। इसकी निर्मिति, परिवेश और प्रभाव ने सदियों से समाज के विभिन्न वर्गों के जीवन, रीति–रिवाजों, परंपराओं, लोक–कथाओं और धार्मिक विश्वासों को गहराई से प्रभावित किया है।

जयसमंद झील न केवल भव्य जलाशय है, बल्कि यह मेवाड़ अंचल की सांस्कृतिक आत्मा है। युगों तक यह झील जनजातियों, ग्रामीणों, कस्बाई समाज और तीर्थयात्रियों के लिए श्रद्धा, परंपरा और जीविका का स्रोत रही है। परंतु वर्तमान समय में जिस गति से पर्यटन, नगरीकरण, तकनीकी विकास और सामाजिक बदलाव हुए हैं, उसी गति से सांस्कृतिक संरचना पर भी प्रभाव पड़ा है। यह प्रभाव कहीं संरक्षण की आवश्यकता बनकर उभरा है, तो कहीं चुनौतियों की गंभीरता लेकर।

इस खंड में हम देखेंगे कि जयसमंद झील से जुड़ी संस्कृति को आधुनिक समय में किन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, और उसे कैसे संरक्षित किया जा सकता है।

1. सांस्कृतिक विरासत पर आधुनिक प्रभाव – जयसमंद झील के चारों ओर जिस प्रकार होटल, रिसॉर्ट्स, जल क्रीड़ा केंद्र, पर्यटन वाहनों और व्यवसायों का विस्तार हुआ है, उसने लोक परंपराओं और सांस्कृतिक मूल्यों को प्रभावित किया है:

1. कई स्थानों पर पारंपरिक पूजा स्थलों को आधुनिक ढंग से बदला गया, जिससे मूल भाव नष्ट हो रहा है।
2. जनजातीय नृत्य और गीत अब व्यावसायिक मंचन बनते जा रहे हैं – भावनात्मक गहराई के स्थान पर प्रदर्शनवाद हावी हो रहा है।
3. युवाओं में शहरीकरण और सोशल मीडिया का प्रभाव उन्हें अपनी परंपरा से दूर ले जा रहा है।

2. पर्यावरणीय संकट और सांस्कृतिक संकट का संबंध – जयसमंद झील के जलस्तर में गिरावट, प्रदूषण, और अवैध निर्माण केवल पर्यावरण के लिए नहीं, बल्कि संस्कृति के लिए भी खतरा हैं:

1. झील सूखने पर वहाँ होने वाले पवित्र स्नान, मेलों, पूजा स्थलों और धार्मिक अनुष्ठानों पर सीधा असर पड़ता है।
2. जब झील की जैव विविधता समाप्त होती है, तो संगीत, चित्रकला और लोक कथाएँ भी कंटेंट–विहीन हो जाती हैं।

अत: 'सांस्कृतिक संरक्षण केवल मन की बात नहीं, जल की रक्षा से शुरू होती है।'

3. स्थानीय परंपराओं में गिरती सहभागिता– पहले जहाँ ग्रामवासी, जनजाति, स्त्रियाँ और बालक–बालिकाएँ झील से जुड़े हर आयोजन में भाग लेते थे, अब:

1. अधिकांश युवा शहरों की ओर पलायन कर गए हैं।
2. आयोजनों में संख्या कम और सजावटीपन अधिक हो गया है।
3. बहुत सी पुरानी लोक विधाएँ अब केवल बुजुर्गों की याद में सीमित हैं।

यह गिरती सहभागिता सांस्कृतिक निरंतरता के लिए चुनौती है।

4. सांस्कृतिक व्यवसायीकरण बनाम वास्तविकता– पर्यटन ने जहाँ एक ओर स्थानीय कलाकारों को रोजगार दिया, वहीं दूसरी ओर:

1. कई स्थानों पर ष्मंचीय प्रस्तुतिष ने परंपरा की आत्मा को चोट पहुँचाई।
2. पर्यटक–प्रेरित बदलावों में असली लोकगीतों की जगह तात्कालिक मनोरंजन ने ले ली।

यानी अब संस्कृति संपर्क का नहीं, उत्पाद का रूप लेने लगी है।

5. संरक्षण हेतु प्रयास: सकारात्मक पहल – इन चुनौतियों के बीच कई सकारात्मक कदम भी उठाए गए हैं:

1. **स्थानीय स्वयंसेवी संगठन –** झील के किनारे 'झील मित्र समिति', 'जन संस्कृति मंच' जैसे समूहों ने सांस्कृतिक पुनर्जीवन का बीड़ा उठाया है। वे मेले, लोकगायन प्रतियोगिता, पारंपरिक व्यंजन उत्सव का आयोजन कर रहे हैं।
2. **शिक्षण संस्थानों की भूमिका –** विद्यालयों में झील पर आधारित पाठ्यक्रम, चित्रकला, निबंध लेखन और लोकसभा नाट्य करवाए जा रहे हैं।
3. **सरकारी योजना –** राजस्थान पर्यटन विभाग और पुरातत्व विभाग ने झील क्षेत्र के मंदिरों और सांस्कृतिक स्थलों के जीर्णोद्धार की योजनाएँ बनाई हैं।

6. डिजिटल मीडिया का उपयोग– आज के डिजिटल युग में सांस्कृतिक संरक्षण और प्रचार के नए माध्यम खुले हैं:

1. स्थानीय युवा झील पर डॉक्यूमेंट्री, शॉर्ट फिल्म्स और सोशल मीडिया अभियान चला रहे हैं।
2. फेसबुक पेज, यूट्यूब चौनल और इंस्टाग्राम अकाउंट्स के जरिए झील के गीत, रीतियाँ, फोटो और कहानियाँ साझा की जा रही हैं।

इससे संस्कृति नवीन पीढ़ी से जुड़ पा रही है।

7. महिला नेतृत्व और सांस्कृतिक पुनरुत्थान– जयसमंद क्षेत्र की स्त्रियाँ अब सांस्कृतिक संरक्षण की अग्रिम वाहक बन रही हैं:

1. वे हस्तशिल्प, पारंपरिक पाक कला, गीत–गायन और होमस्टे संस्कृति के जरिए झील संस्कृति को जीवंत बनाए हुए हैं।
2. कई स्वयं–सहायता समूह 'पानी री पायली', 'झील संगिनी' आदि के नाम से कार्य कर रहे हैं।

8. युवाओं को जोड़ना – प्राथमिक जरूरत– संस्कृति को जीवित रखने के लिए युवा पीढ़ी को प्रेरित करना सबसे जरूरी है:

1. उन्हें लोकगाथाओं, गीतों, संस्कारों और सांस्कृतिक आयोजनों में भागीदार बनाना होगा।
2. विद्यालयों और कॉलेजों में संस्कृति आधारित प्रोजेक्ट अनिवार्य करना चाहिए।
3. 'संस्कृति से गर्व' की भावना को पुनर्जीवित करना होगा।

9. सांस्कृतिक पर्यटन का सतत मॉडल– आवश्यक है कि जयसमंद झील के पर्यटन को केवल व्यापारिक दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक–संवेदनशीलता के साथ विकसित किया जाए:

1. पर्यटन गाइड को स्थानीय सांस्कृतिक इतिहास की जानकारी होनी चाहिए।
2. आयोजनों में स्थानीय भाषा, पहनावा, संगीत और परंपराओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।
3. झील के किनारे सांस्कृतिक केंद्र या ष्लोक संग्रहालयष की स्थापना की जानी चाहिए।

10. भविष्य की ओर दृष्टि – जयसमंद झील की संस्कृति केवल बीते समय की स्मृति नहीं, बल्कि भविष्य की प्रेरणा है। इसके संरक्षण हेतु:

1. सामूहिक चेतना,
2. प्रशासनिक सहयोग,
3. स्थानीय सहभागिता,
4. और शैक्षणिक नवाचार की जरूरत है।

यह झील जल और संस्कृति दोनों की मातृभूमि है – इसकी रक्षा में ही हमारी पहचान सुरक्षित है।

निष्कर्ष – जयसमंद झील की सांस्कृतिक विरासत धरोहर नहीं, धड़कन है। आधुनिकता की दौड़ में यह आवश्यक हो गया है कि हम अपने मूल्य, परंपराएँ और लोक चेतना को खोने न दें। सांस्कृतिक संरक्षण केवल अतीत की पूजा नहीं, भविष्य के निर्माण की प्रक्रिया है। यदि झील को उसके सांस्कृतिक स्वरूप में जीवित रखना है, तो जन भागीदारी, नवाचार और संवेदनशीलता को एकसाथ लाना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. **Sharma, Dasharatha.** *Early History of Mewar*. Rajasthan Oriental Research Institute, Udaipur.
2. **Somani, Ram Vallabh.** *History of Mewar from Earliest Times to 1751 A.D.*
3. **Gupta, R.K. & Bakshi, S.R.** *Studies in Indian History: Rajasthan through the Ages*.
4. **Mehta, Jodh Sinha.** *Mewar and the Mughal Emperors*.
5. **Paliwal, R.S.** *Traditional Water Management Systems in Rajasthan*.
6. **Hardgrove, Anne.** *Community and Public Culture: The Marwaris in Calcutta*. (for comparative traditional-modern transitions)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

बाँदा जिले में ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन का भौगोलिक अध्ययन

अंकिता चौरसिया*

* शोधार्थी, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी (उ.प्र.) भारत

शोध सारांश – बाँदा केन नदी के दाएँ तट पर स्थित महर्षि वामदेव की तपोभूमि है और चित्रकूटधाम मंडल का मुख्यालय है। ऐतिहासिक तौर पर यह बुंदेलखंड का हिस्सा है। बाँदा जिले का इतिहास मुगलकालीन और ब्रिटिश शासन से जुड़ा है। यह क्षेत्र यमुना एवं केन नदियों के संगम पर स्थित होने के कारण प्राचीन काल से ही रणनीतिक और आर्थिक दृष्टि से महत्व रखता है।यहाँ केन नदी में मिलने वाला शजर पत्थर तथा चित्रकूट व कालिंजर जैसे पर्यटन स्थलों का अत्यधिक महत्व है जो जनसंख्या वितरण और कृषि पर भी असर डालता है।वर्ष 1858 में ब्रिटिश शासन के दौरान जिले का पुनर्गठन हुआ, जिसने इसके प्रशासनिक ढाँचे को मजबूती प्रदान की।इस शोध पत्र का उद्देश्य बाँदा जिले के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का विश्लेषण करना है, ताकि इस क्षेत्र की गतिशील सामाजिक संरचना और उस पर पड़ने वाले बाह्य प्रभावों को समझा जा सके।

शब्द कुंजी – तिहासिक पृष्ठभूमि, जनसंख्या, संस्कृति, पर्यटन स्थल तथा आर्थिक विकास।

प्रस्तावना – बाँदा जिला, उत्तर प्रदेश के बुन्देलखण्ड क्षेत्र में स्थित एक ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से समृद्ध क्षेत्र है, जिसका इतिहास प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक विविध सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का साक्षी रहा है। यह क्षेत्र न केवल अपने भौगोलिक महत्व के कारण, बल्कि साम्राज्यों, संघर्षों और सांस्कृतिक संश्लेषण के केंद्र के रूप में भी पहचाना जाता है। ऐतिहासिक रूप से, बाँदा मध्यकालीन भारत में चंदेल शासकों, मुगलों, मराठों और अंग्रेजों जैसे विविध शक्तियों का प्रभावक्षेत्र रहा है। इन शासनकालों ने न केवल यहाँ की राजनीतिक व्यवस्था, बल्कि जनसंख्या के स्वरूप और सांस्कृतिक प्रथाओं को भी गहराई से प्रभावित किया। मुगलकालीन नगरीय विकास और ब्रिटिश काल में कृषि आधारित अर्थव्यवस्था ने जनसंख्या के विस्तार को नई दिशा दी। साथ ही, स्थानीय लोक संस्कृति, भाषा, त्योहारों और धार्मिक प्रथाओं में समय के साथ आए परिवर्तनों ने इस क्षेत्र की पहचान को निरंतर पुनर्परिभाषित किया है।

बाँदा जिले में औपनिवेशिक काल से लेकर स्वतंत्रता के बाद के दशकों में जनसांख्यिकीय परिवर्तनों का गहरा संबंध आर्थिक संसाधनों, प्रवासन और सामाजिक नीतियों से रहा है। 20वीं सदी के उत्तरार्ध में स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार और कृषि उत्पादन में वृद्धि ने जनसंख्या वृद्धि को गति प्रदान की जबकि शहरीकरण और औद्योगीकरण के अभाव ने ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या दबाव की चुनौतियों को जन्म दिया।

बाँदा की संस्कृति बुंदेली परंपराओं और आधुनिक प्रभावों का मिश्रण है। यहाँ हिंदी और बुंदेली भाषाएँ प्रमुख हैं। बाँदा की लोक कलाएँ, बोलियाँ, रीति-रिवाज और सामुदायिक जीवन में तकनीकी प्रगति, शिक्षा के प्रसार और मीडिया के प्रभाव ने नए आयाम जोड़े हैं। इसके साथ ही, राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर हो रहे सांस्कृतिक आदान-प्रदान ने यहाँ की युवा पीढ़ी की मानसिकता और जीवनशैली में महत्वपूर्ण बदलाव लाए हैं।केन नदी में पाए जाने वाले 'शजर पत्थर' ने जिले को वैश्विक पहचान दिलाई है। साथ ही, चित्रकूट (70 किमी), कालिंजर किला (65 किमी) और खजुराहो (140 किमी) जैसे पर्यटन स्थल सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देते हैं। मुगल और ब्रिटिश काल के प्रभाव ने स्थानीय वास्तुकला, त्योहारों और कला-रूपों में विविधता लाई है।

बाँदा जिले का इतिहास प्राकृतिक संसाधनों, राजनीतिक परिवर्तनों, और सांस्कृतिक समृद्धि से गहराई से जुड़ा है। जनसंख्या वृद्धि ने शहरीकरण और आधुनिक अवसंरचना को प्रेरित किया है, जबकि सांस्कृतिक पहचान बुंदेली परंपराओं और पर्यटन के माध्यम से जीवित है। भविष्य में जल संसाधन प्रबंधन और सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण इस क्षेत्र के विकास की कुंजी होगी।

साहित्य समीक्षा

बाँदा जिले का इतिहास प्राचीन काल से विविध शासकों और सांस्कृतिक प्रभावों से जुड़ा है। प्रागैतिहासिक युग के अवशेष एवं आर्य कालीन उल्लेख दर्शाते हैं कि यह क्षेत्र 'चेदी-देश' का हिस्सा था। मध्यकालीन शासन व्यवस्था में नाग, गुप्त, चंदेल, मुगल, मराठा तथा ब्रिटिश शासन का योगदान स्पष्ट हैजिसने यहाँ की सामाजिक-राजनीतिक संरचना को आकार दिया।मुगलकालीन नगरीय विकास और ब्रिटिश काल की कृषि-आधारित नीतियों ने जनसंख्या के वितरण और आर्थिक गतिविधियों को नई दिशा दी। ब्रिटिश काल में किसानों का शोषण और नई भू-राजस्व प्रणाली ने ग्रामीण जनसंख्या पर दबाव, कृषि उत्पादन और रेलवे नेटवर्क के विस्तार ने शहरीकरण को बढ़ावा दिया, जिससे जनसंख्या का पलायन और केन्द्रीकरण हुआ। 20वीं सदी में स्वास्थ्य सुविधाओं के सुधार और कृषि उत्पादकता में वृद्धि ने जनसंख्या वृद्धि को तेज किया। हालाँकि,

औद्योगीकरण के अभाव ने ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार की कमी और जनसंख्या दबाव को जन्म दिया।

संत-कवि गोस्वामी तुलसीदास का जन्म राजापुर गाँव (वर्तमान चित्रकूट जिला) में हुआ था। उनकी रचनाएँ, जैसे रामचरितमानस, ने इस क्षेत्र की सांस्कृतिक पहचान को गहराई से प्रभावित किया।म यहाँ के लोकजीवन में रामकथा का प्रसार उनके योगदान का प्रमुख उदाहरण है।मुगलकाल में उर्दू पर फारसी शब्दावली के प्रभाव और हिंदी शब्दों के ह्रास ने स्थानीय संस्कृति में बदलाव लाया। तुलसीदास की अवधी भाषा में रचनाएँ इस क्षेत्र की भाषाई विविधता को दर्शाती हैं।बाँदा में रामभक्ति आंदोलन और सूफी परंपराओं का समन्वय देखा जा सकता है। तुलसीदास के रामचरितमानस ने धार्मिक एकता को बढ़ावा दिया, जो आज भी स्थानीय त्योहारों और लोककथाओं में प्रतिबिंबित होता है।

सांस्कृतिक दृष्टि से पारंपरिक लोकगीत, लोकनृत्य एवं नाट्यशैली आज भी ग्रामीण जीवन का अभिन्न अंग हैं, परंतु शहरों में महोत्सव एवं कला संरक्षण प्रयासों ने आधुनिकता के साथ-साथ विरासत को संरक्षित भी किया है।भविष्य के अध्ययनों में मौखिक इतिहास, स्थानीय अभिलेखों और जनगणना डेटा के समन्वय से जनसंख्या प्रवृत्तियों और सांस्कृतिक गतिशीलता को गहराई से समझा जा सकता है।

इस शोध पत्र में ऐतिहासिक अभिलेखों, जनगणना आँकड़ों और मौखिक इतिहास के माध्यम से बाँदा जिले के विकासक्रम को समझने का प्रयास किया गया है। साथ ही, यह विश्लेषण किया गया है कि कैसे जनसंख्या की गतिशीलता और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ एक-दूसरे से अंतर्संबंधित हैं तथा किस प्रकार ये तत्व समाज के वर्तमान स्वरूप को आकार देते हैं।शिक्षा, मीडिया और प्रवासन ने युवा पीढ़ी की जीवनशैली और सांस्कृतिक प्राथमिकताओं को बदल दिया है। डिजिटल संसाधनों ने लोककलाओं के प्रसार को नए आयाम दिए हैं। मौजूदा साहित्य में बाँदा के सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों का विस्तृत विश्लेषण सीमित है। विशेष रूप से, स्वतंत्रता के बाद के ग्रामीण विकास और महिलाओं की भूमिका पर अधिक शोध की आवश्यकता है।इस अध्ययन से न केवल क्षेत्रीय इतिहास के प्रति जागरूकता बढ़ेगी, बल्कि भविष्य की नीतिगत योजनाओं के लिए भी एक आधार प्राप्त होगा।

शोध पद्धति – इस शोध अध्ययन में बाँदा जिले के ऐतिहासिक, जनसांख्यिकीय और सांस्कृतिक पहलुओं को समझने के लिए एक बहु-विषयक (Interdisciplinary) शोध पद्धति अपनाई गई है।यह अध्ययन वर्णनात्मक (Descriptive) और विश्लेषणात्मक (Analytical) दोनों दृष्टिकोणों पर आधारित है जिसमें ऐतिहासिक अभिलेख, मौखिक इतिहास, सांस्कृतिक प्रथाओं और समकालीन जनगणना आँकड़ों का सांख्यिकीय अध्ययन शामिल है।इसके अतिरिक्त ब्रिटिश गजेटियर्स, मुगलकालीन दस्तावेज और स्थानीय राजपत्रों का अध्ययन भी शामिल है।तुलसीदास से संबंधित पांडुलिपियाँ और साहित्यिक स्रोत,लोकगीत, नृत्य एवं मेले पर विषय-वस्तु विश्लेषण कर सांस्कृतिक परिवर्तन एवं संरक्षण रणनीतियों का अध्ययन किया गया है। भारतीय जनगणना (1901-2021), NSSO रिपोर्ट्स और उत्तर प्रदेश सरकार के आर्थिक सर्वेक्षण के आँकड़ों की सहायता ली गई है।पूर्व शोध पत्र, पुस्तकें और समकालीन लेख जो बुन्देलखण्ड के इतिहास और संस्कृति पर केंद्रित हैं।विषयगत विश्लेषण (Thematic Analysis) में ऐतिहासिक घटनाओं और सांस्कृतिक प्रथाओं में पुनरावृत्ति वाले विषयों की पहचान की गई है।तुलनात्मक अध्ययन (Comparative Study) के माध्यम से विभिन्न कालखंडों में जनसंख्या वृद्धि और सांस्कृतिक परिवर्तनों की तुलना की गई है।सांस्कृतिक डेटा का विश्लेषण में लोकगीतों, कथाओं और स्थानीय बोलियों में सांस्कृतिक परिवर्तनों की पहचान की गई है।यह शोध पद्धति बाँदा जिले के बहुआयामी अध्ययन के लिए एक संरचित ढाँचा प्रदान करती है। ऐतिहासिक विश्लेषण, मात्रात्मक डेटा और सांस्कृतिक अवलोकन का संयोजन इस अध्ययन को समग्र और प्रामाणिक बनाता है। भविष्य में, इस पद्धति को अन्य क्षेत्रीय अध्ययनों के लिए भी अनुकूलित किया जा सकता है।

परिणाम एवं विश्लेषण – बाँदा जिले में पाषाण और नवपाषाण काल के अवशेष मिले हैं, जो यहाँ मानव बस्तियों की प्राचीनता को प्रमाणित करते हैं। चौथी शताब्दी ईसा पूर्व में यह क्षेत्र मगध साम्राज्य का हिस्सा रहा और बाद में चंदेल शासकों ने कालिंजर दुर्ग जैसी भव्य संरचनाएँ बनवाईं। मुगलकाल में कालिंजर दुर्ग का सामरिक महत्व बढ़ा, जबकि ब्रिटिश काल में कृषि-आधारित भू-राजस्व प्रणाली ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया।

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार, बाँदा की जनसंख्या 17,99,410 है, जिसमें 15.32 प्रतिशत शहरी और 84.68 प्रतिशत ग्रामीण आबादी निवास करती है। वर्ष 2001-2011 के बीच जनसंख्या वृद्धि दर 17.05 प्रतिशत रही, जो कृषि पर निर्भरता और स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार से जुड़ी है। औद्योगीकरण के अभाव में ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार की कमी ने युवाओं का शहरों की ओर पलायन बढ़ाया, जिससे जनसंख्या वितरण असंतुलित हुआ।

बाँदा में होली, कजरी, आल्हा गीत, और नौटंकी जैसी लोक कलाएँ प्रमुख हैं। ये कलाएँ सामुदायिक जीवन और धार्मिक उत्सवों का अभिन्न अंग हैं। रामभक्ति और सूफी परंपराओं का समन्वय देखा जा सकता है। तुलसीदास की रचनाओं ने सांस्कृतिक एकता को मजबूती दी। शिक्षा और डिजिटल मीडिया के प्रसार ने युवाओं की जीवनशैली में बदलाव लाया है, जिससे पारंपरिक बोली (बुंदेली) और लोककथाओं का प्रभाव कम हो रहा है।

बाँदा का इतिहास विविध साम्राज्यों के प्रभाव को दर्शाता है। चंदेलों की वास्तुकला (जैसे कालिंजर दुर्ग) और मुगलों की नगरीय योजनाओं ने यहाँ के सामाजिक ढाँचे को आकार दिया। सांस्कृतिक परिवर्तनों में धार्मिक एकीकरण का उदाहरण रामचरितमानस का प्रभाव है, जो आज भी त्योहारों और लोकगीतों में दिखाई देता है। ब्रिटिश काल की कृषि नीतियों ने जनसंख्या के ग्रामीण केन्द्रीकरण को बढ़ावा दिया, लेकिन स्वतंत्रता के बाद स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार ने जनसंख्या विस्फोट को जन्म दिया। वर्तमान में, कृषि पर अत्यधिक निर्भरता और औद्योगिक विकास के अभाव ने गरीबी और प्रवासन की समस्या को गहराया है। आधुनिक शिक्षा और मीडिया ने युवाओं को वैश्विक संस्कृति से जोड़ा है, लेकिन इसके साथ ही स्थानीय बोली (बुंदेली) और लोककलाओं के संरक्षण की चुनौती उभरी है। उदाहरण के लिए, शजर पत्थरों की कलात्मकता अब पर्यटन तक सीमित हो गई है, जबकि पहले यह स्थानीय अर्थव्यवस्था का हिस्सा थी।

बाँदा जिले की जनसंख्या 2001 से 2011 के दशक में 15,37,334 से बढ़कर 17,99,410 हो गई, जो 17.06 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाती है। जिले का लिंगानुपात 863 महिला प्रति 1000 पुरुष है जबकि साक्षरता दर 68.11 प्रतिशत दर्ज की गई है जिसमें शहरी साक्षरता 79.85 प्रतिशत और ग्रामीण साक्षरता 64.16 प्रतिशत शामिल है।नगरीकरण 2011 में

15.32 प्रतिशत था, जो वर्तमान में लगभग 18 प्रतिशत हो गया है।

साँस्कृतिक दृष्टि से बाँदा 'One District One Product' पहल के अंतर्गत शजर पत्थर (Dendritic Agate) के लिए प्रसिद्ध है यह केन नदी से प्राप्त डेंड्रिटिक अगेट, गहनों व सजावटी वस्तुओं में प्रयोग होता है। शजर पत्थर की सौंदर्यात्मक विविधता और एकरूपता न होने के कारण इसका बाजार मूल्य उच्च है। प्राचीन काल से ही यह उद्योग क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था में योगदान कर रहा है।कालिंजर महोत्सव जैसी सांस्कृतिक गतिविधियाँ लोककला एवं पर्यटन को बढ़ावा दे रही हैं। जिसने ऐतिहासिक किलों तथा लोकगीत-नृत्य को नए दर्शकों तक पहुँचाया है।

जनसंख्या वृद्धि और शहरीकरण ने शिक्षा, स्वास्थ्य एवं बुनियादी सुविधाओं पर दबाव बढ़ाया है, किन्तु इससे रोजगार के अवसर भी सृजित हुए हैं। साक्षरता दर में सुधार, विशेषरूप से ग्रामीण महिलाओं के साक्षीकरण में वृद्धि, ने लैंगिक असमानता को कम किया है एवं सामाजिक सशक्तिकरण को बल दिया है। पारंपरिक लोकगीत-फाग, मल्हार, कजरीऔर नृत्य आल्हा-ऊदल आज भी ग्रामीण उत्सवों का केंद्र हैं परंतु शहरीकरण के चलते इन कलाओं का स्वरूप बदल रहा है। महोत्सव एवं ODOP पहल ने इन कलाओं को संरक्षित किया है, लेकिन दीर्घकालीन संरक्षण एवं व्यावसायिक सफलता के लिए व्यापक विपणन एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों की आवश्यकता है।

चर्चा – कृषि विविधीकरण और स्थानीय हस्तशिल्प को बढ़ावा देकर रोजगार सृजन किया जा सकता है। मौखिक इतिहास और लोक-कलाओं को डिजिटल माध्यमों से दस्तावेजीकृत करना आवश्यक है। ग्रामीण-शहरी असंतुलन को दूर करने के लिए बुनियादी ढाँचे और शैक्षणिक संस्थानों का विस्तार जरूरी है।ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा केंद्रों का विस्तार एवं डिजिटल साक्षरता कार्यक्रम जरूरी है।स्वास्थ्य, शिक्षा एवं आवासीय सुविधाओं का नियोजन जनसंख्या आंकड़ों के आधार पर किया जाना चाहिए।कलिंजर दुर्ग एवं शजर पत्थर उद्योग के लिए संरक्षण योजनाएँ बनाकर पर्यटन एवं रोजगार को जोड़ा जाए।शजर पत्थर तथा लोक कलाओं के लिए स्थिर विपणन चैनलों और कौशल विकास कार्यक्रमों का निर्माण आवश्यक है। सतत विकास योजनाओं के माध्यम से पर्यावरणीय संरक्षण को प्राथमिकता देते हुए बाँदा क्षेत्र की पारिस्थितिकी पर ध्यान देना होगा।खनन गतिविधियों के पर्यावरणीय प्रभाव को सीमित करने एवं नदी पारिस्थितिकी को संरक्षित करने के लिए नियामक ढाँचे सख्त किए जाएँ।इस प्रकार, बाँदा जिले में जनसांख्यिकीय व सांस्कृतिक दोनों ही क्षेत्रों में संतुलित विकास के प्रयास को बढावा देना होगा परन्तु दीर्घकालिक समग्र प्रगति हेतु शहरीकरण के साथ-साथ सांस्कृतिक विरासत एवं पर्यावरण संरक्षण को भी महत्व देना अनिवार्य है।बाँदा जिले में जनसांख्यिकीय परिवर्तनों ने सामाजिक-आर्थिक विकास को गति दी है, जबकि सांस्कृतिक पहचानों को बनाए रखने के लिए सामूहिक प्रयासों और नीतिगत समर्थन की आवश्यकता बनी हुई है।

निष्कर्ष – बाँदा जिले का ऐतिहासिक, जनसांख्यिकीय और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य एक-दूसरे से गहराई से जुड़े हुए हैं। तुलसीदास जैसे व्यक्तित्वों की विरासत, औपनिवेशिक नीतियों के प्रभाव और आधुनिकीकरण की प्रक्रिया ने इस क्षेत्र को एक गतिशील सामाजिक ताने-बाने में ढाला है। चंदेल और मुगल काल की विरासत, ब्रिटिश नीतियों के प्रभाव, और आधुनिक तकनीकी बदलावों ने इस क्षेत्र को एक गतिशील सामाजिक परिदृश्य प्रदान किया है। स्थानीय संसाधनों के समन्वय और बहु-विषयक शोध के माध्यम से इन चुनौतियों का समाधान संभव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तिवारी, गोरेलाल (2024): 'बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास'।
2. जिला बाँदा आधिकारिक पोर्टल (2025): 'संस्कृति और विरासत'। भारत सरकार।
3. अग्रवाल, वासुदेव शरण (2024):'जनपद के रूप में बुंदेलखंड की सांस्कृतिक इकाई','भारतीय संस्कृति पत्रिका'।
4. उपरोक्त।
5. उत्तर प्रदेश पर्यटन विभाग (2024): 'बुंदेलखंड पर्यटन मानचित्र'।
6. बुंदेलखंड सांस्कृतिक अभिलेखागार (2025): 'बुंदेलखंड की लोक संस्कृति का इतिहास'।
7 तिवारी, गोरेलाल (2024): 'बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास'।
8 इंडिया कल्चर पोर्टल (2024): 'मौखिक इतिहास परियोजना: बाँदा के सन्त-कवि'।
9 द्विवेदी, हरिहर निवास (2023): 'मध्य भारत का इतिहास'। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास।
10. जिला बाँदा आधिकारिक पोर्टल (2025): 'संस्कृति और विरासत'। भारत सरकार।
11 तिवारी, गोरेलाल (2024): 'बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास'।
12. बाँदा जिला सांख्यिकीय पुस्तिका 2011

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Impact of Corporate Retailing on Consumers of Small Cities & Towns : A Study in Economic Sociology (with special reference to Chhatarpur District)

Suyash Sagar Bajpai* **Dr. Shashikant Awasthi****

***Research Scholar (Sociology) Maharaja Chhatrasal Bundelkhand Vishwavidyalaya, Chhatapur (M.P.) INDIA**
****Asst. Professor (Sociology) Govt. Girls P. G. College, Chhatapur (M.P.) INDIA**

Abstract - The present study explores the changing consumption patterns, economic behaviors, and social preferences of consumers in response to the growth of corporate retail and online marketplaces in small cities of India. Grounded in the theoretical framework of economic sociology, this research investigates how socio-economic variables such as income, education, age, and access to digital infrastructure influence consumer choices in the context of traditional versus modern retail formats.

Using both quantitative and qualitative methods, the study draws data from 300 randomly selected consumers in Chhatarpur District, Madhya Pradesh. The research reveals that while corporate retail and e-commerce offer consumers convenience, competitive pricing, and product variety, they also pose challenges to traditional retail relationships and community-based consumption ethics. Findings indicate a gradual but significant shift in consumer trust and behavior, especially among the younger and more digitally literate population, with growing preference for digital transactions and branded products.

The study concludes that the rise of organized retail and digital commerce is not merely an economic transformation but a sociological phenomenon reshaping the consumer landscape of India's small cities. It recommends policy interventions aimed at balancing modernization with the protection of traditional retail systems and suggests further research on long-term socio-economic impacts of retail corporatization in context to small cities and towns.

Keyword: Economic Sociology, Consumer Behaviour, Corporate Retail, Consumption Patterns, Digital Economy, Retail Transformation.

Corporate Retailing: Corporate retailing refers to the operations of large retail chains that are typically owned and managed by corporations. These businesses often have multiple outlets or stores, and they operate under a centralized management structure. Corporate retailing contrasts with smaller, independently-owned retail businesses. Some key features of corporate retailing are Centralized Management, Economies of Scale, Brand Consistency, Extensive Reach, Advanced Technology and Data Analytics, Marketing Power, Product Diversity, and Supply Chain Management. Examples of corporate retailers include Flipkart Wholesale (earlier known as Best Price), Reliance Smart Point, Big Bazar, V-Mart, Vishal Mega Mart etc. These companies have established themselves as major players in the retail industry through their scale, efficiency, and ability to meet diverse consumer demands.

Corporate retailers in India have started focusing on small cities and towns for several reasons like market saturation in metros, rising disposable income in smaller cities, less competition in smaller markets, improved internet penetration and digital infrastructure. These factors collectively make small cities and towns in India attractive destinations for corporate retailers looking to expand their footprint and tap into new customer bases.

Objective of the Study: To know about all socio-economic impacts of corporate retailing on the consumers of small cities & towns.

Hypotheses of the Study: Based on aforementioned objective following null hypotheses are framed.

1. There is no significant association in the satisfaction level of consumers belonging to different socio-economic profiles towards working of corporate retail outlets in small cities and towns.
2. There is no significant difference between the average amount spent per purchase by consumers at unorganised retail outlets and corporate retail outlets in small cities and towns.
3. There is no significant difference among the acceptance level of consumers belonging to different demographic profiles towards the corporate retail

outlets in small cities and towns.

All hypotheses will be tested at a minimum of the .05 level of significance.

Integrative Theoretical Framework: To synthesize, we conceptualize a theoretical framework linking these elements. Digital transformation and platform economy theories posit that smartphone and internet adoption (bolstered by government and private initiatives) are pushing consumer behavior toward convenience, variety and speed. **Weberian rationalization** manifests as organized retail and online platforms offering calculable efficiency. **Polanyian market society theory** suggests that as markets penetrate small-town life, they reorder social institutions (e.g. commerce replacing local patronage). **Durkheimian solidarity theory** highlights the changing basis of social cohesion: new divisions of labor and impersonal contracts replace some traditional relations. **Bourdieu's habitus concept** reminds us that people's class-based dispositions and capitals mediate how they engage with these changes. These theoretical strands intersect around three themes:

1. Consumer behavior change: driven by digital media, reflecting new tastes and rational choices;
2. Impact on informal retail: where corporate e-commerce challenges traditional vendors but also creates new niches; and
3. Urbanization effects: where small towns as social spaces evolve under these market pressures.

Research Design: This study adopts an Explanatory Concurrent Embedded Mixed Methods Design.

Universe and of the Study: Consumers residing in Chhatarpur City (Territorial Limits of Chhatarpur Nagar Palika Parishad) of Chhatarpur District, Madhya Pradesh, who have access to both traditional and modern retail formats.

Sampling and Data Collection: A total of 300 individuals from 40 wards of Chhatarpur Municipal Council were randomly selected from 40 wards of Chhatarpur. Data was collected using a questionnaire.

Results of Hypothesis Testing:

Hypothesis 1: There is no significant association in the satisfaction level of consumers belonging to different socio-economic profiles towards working of corporate retail outlets in small cities and towns.

1. Statistical Hypothesis 1:

H_0: Gender and Level of Satisfaction towards working of corporate retail outlets in small cities and towns are independent in the population.

H_1: Gender and Level of Satisfaction towards working of corporate retail outlets in small cities and towns are dependent (or associated) in the population.

Result: A chi square test of independence was conducted to examine whether there exists a statistically significant association between gender of respondents and level of satisfaction towards corporate retail outlets.

The p-value obtained is more than 0.05, we accept the null hypothesis at 5 percent level of significance. It means that there is no significant association among the satisfaction levels of the respondents belonging to different genders towards working of corporate retail outlets in Chhatarpur district.

The average satisfaction score reveals that the male respondents have higher satisfaction (2.98) than the female respondents (2.83). Therefore, the male respondents are highly satisfied with the working of corporate retail outlets in Chhatarpur district.

2. Statistical Hypothesis 2:

H_0: Age and Level of Satisfaction towards Corporate Retail Outlets in small cities and towns are independent in the population.

H_1: Age and Level of Satisfaction towards Corporate Retail Outlets in small cities and towns are dependent (or associated) in the population.

Result: A chi square test of independence was conducted to examine whether there exists a statistically significant association between age of respondents and level of satisfaction towards corporate retail outlets.

The p-value obtained is more than 0.05, we accept the null hypothesis at 5 percent level of significance. Therefore, no significant association is found in the satisfaction levels of the respondents belonging to different age groups towards working of corporate retail outlets. The average satisfaction score reveals that the respondents in the age groups 26-35 years have the highest satisfaction (3.23), followed by the respondents in the age group up to 25 years (3.12). Therefore, respondents in the age up to 35 years are highly satisfied with the working of corporate retail outlets in Chhatarpur district.

3. Statistical Hypothesis 3:

H_0: Education and Level of Satisfaction towards working of corporate retail outlets in small cities and towns are independent in the population

H_1: Education and Level of Satisfaction towards working of corporate retail outlets in small cities and towns are dependent (or associated) in the population.

Result: A chi square test of independence was conducted to examine whether there exists a statistically significant association between educational level of respondents and level of satisfaction towards corporate retail outlets.

The p-value obtained is more than 0.05, we accept the null hypothesis at 5 percent level of significance. Therefore, there is no significant association between the satisfaction levels of the respondents having different educational qualifications towards working of corporate retail outlets in Chhatarpur district. The average satisfaction score of the Primary Educated respondents is (3.30) high, followed by the respondents having 12th pass (3.20), and it is low among the respondents having post graduation and above qualifications (2.92).

4. Statistical Hypothesis 4:

H_0: Occupation and Level of Satisfaction towards working of corporate retail outlets in small cities and towns are independent in the population

H_1: Occupation and Level of Satisfaction towards working of corporate retail outlets in small cities and towns are dependent (or associated) in the population.

Result: A chi square test of independence was conducted to examine whether there exists a statistically significant association between occupation of respondents and level of satisfaction towards corporate retail outlets.

The p-value obtained is less than 0.05, we reject the null hypothesis at 5 percent level of significance. Therefore, significant association is found among the satisfaction levels of the respondents belonging to different occupations towards working of corporate retail outlets in Chhatarpur district. The average satisfaction score of the businessmen and professionals, and others (students and housewives) is the highest(3.12) among various occupation groups, followed by the employees (2.94), and it is lowest among the agriculturists.

5. Statistical Hypothesis 5:

H_0: Monthly Household Income and Level of Satisfaction towards working of corporate retail outlets in small cities and towns are independent in the population

H_1: Monthly Household Income and Level of Satisfaction towards working of corporate retail outlets in small cities and towns are dependent (or associated) in the population.

Result: A chi square test of independence was conducted to examine whether there exists a statistically significant association between monthly household income of respondents and level of satisfaction towards corporate retail outlets.

The p-value obtained is more than 0.05, we accept the null hypothesis at 5 percent level of significance. Therefore, no significant association is found among the satisfaction levels of the respondents belonging to diverse income groups towards working of corporate retail outlets in Chhatarpur district. The average satisfaction score of the respondents who have monthly household income up to ¹ 35001-¹ 45000 is (3.22) highest among various groups, followed by the respondents who have monthly household income up to ¹ 15000 (3.12).

Hypothesis 2: There is no significant difference between the average amount spent per purchase by consumers at unorganised retail outlets and corporate retail outlets in small cities and towns.

1. Statistical Hypothesis 6:

H_0: The average amount spent for food articles in a Corporate Retail Outlet is equal to the average amount spent in a Unorganised Retail Outlet.

H_1: The average amount spent for food articles in a Corporate Retail Outlet is not equal to the average amount spent in a Unorganised Retail Outlet.

Result: A paired t-test was conducted to examine whether there exists a statistically significant difference between average amount spent for food articles by respondents at unorganised retail outlets and corporate retail outlets in small cities and towns.

The p-value obtained is less than 0.05, we reject the null hypothesis at 5 percent level of significance. This leads to the acceptance of the alternative hypothesis (H_1). There is a significant difference in the average amount spent by consumers for food articles at unorganised and corporate retail outlets. Food Articles show the highest difference in essential spending, with respondents spending 533.49 more, on average, at corporate outlets—likely due to bulk buying, packaging, and branding.

2. Statistical Hypothesis 7:

H_0: The average amount spent for personal care products in a Corporate Retail Outlet is equal to the average amount spent in a Unorganised Retail Outlet.

H_1: The average amount spent for personal care products in a Corporate Retail Outlet is not equal to the average amount spent in a Unorganised Retail Outlet.

Result: A paired t-test was conducted to examine whether there exists a statistically significant difference between average amount spent for personal care products by respondents at unorganised retail outlets and corporate retail outlets in small cities and towns.

The p-value obtained is less than 0.05, we reject the null hypothesis at 5 percent level of significance. This leads to the acceptance of the alternative hypothesis (H_1). There is a significant difference in the average amount spent by consumers for personal care products at unorganised and corporate retail outlets.

Personal Care shows moderate differences of about 61 more at corporate retail outlets, possibly due to quality assurance and brand loyalty.

3. Statistical Hypothesis 8:

H_0: The average amount spent for household cleaning products in a Corporate Retail Outlet is equal to the average amount spent in a Unorganised Retail Outlet.

H_1: The average amount spent for household cleaning products in a Corporate Retail Outlet is not equal to the average amount spent in a Unorganised Retail Outlet.

Result: A paired t-test was conducted to examine whether there exists a statistically significant difference between average amount spent for household cleaning products by respondents at unorganised retail outlets and corporate retail outlets in small cities and towns.

The p-value obtained is less than 0.05, we reject the null hypothesis at 5 percent level of significance. This leads to the acceptance of the alternative hypothesis (H_1). There is a significant difference in the average amount spent by consumers for household cleaning products at unorganised and corporate retail outlets.

Cleaning Products also shows moderate differences of about [1] 66 more at corporate retail outlets, possibly due to quality assurance and brand loyalty.

4. Statistical Hypothesis 9:

H_0: The average amount spent for clothing and apparels in a Corporate Retail Outlet is equal to the average amount spent in a Unorganised Retail Outlet.

H_1: The average amount spent for clothing and apparels in a Corporate Retail Outlet is not equal to the average amount spent in a Unorganised Retail Outlet.

Result: A paired t-test was conducted to examine whether there exists a statistically significant difference between average amount spent for clothing and apparels by respondents at unorganised retail outlets and corporate retail outlets in small cities and towns.

The p-value obtained is less than 0.05, we reject the null hypothesis at 5 percent level of significance. This leads to the acceptance of the alternative hypothesis (H_1). There is a significant difference in the average amount spent by consumers for clothing and apparels at unorganised and corporate retail outlets.

Clothing & Apparels shows substantial gaps, indicating that consumers prefer corporate retail for aspirational, branded, or high-value goods.

5. Statistical Hypothesis 10:

H_0: The average amount spent for medicines in a Corporate Retail Outlet is equal to the average amount spent in a Unorganised Retail Outlet.

H_1: The average amount spent for medicines in a Corporate Retail Outlet is not equal to the average amount spent in a Unorganised Retail Outlet.

Result: A paired t-test was conducted to examine whether there exists a statistically significant difference between average amount spent for medicines by respondents at unorganised retail outlets and corporate retail outlets in small cities and towns.

The p-value obtained is less than 0.05, we reject the null hypothesis at 5 percent level of significance. This leads to the acceptance of the alternative hypothesis (H_1). There is a significant difference in the average amount spent by consumers for medicines at unorganised and corporate retail outlets.

6. Statistical Hypothesis 11:

H_0: The average amount spent for electronics in a Corporate Retail Outlet is equal to the average amount spent in a Unorganised Retail Outlet.

H_1: The average amount spent for electronics in a Corporate Retail Outlet is not equal to the average amount spent in a Unorganised Retail Outlet.

Result: A paired t-test was conducted to examine whether there exists a statistically significant difference between average amount spent for electronics by respondents at unorganised retail outlets and corporate retail outlets in small cities and towns.

The p-value obtained is less than 0.05, we reject the null hypothesis at 5 percent level of significance. This leads to the acceptance of the alternative hypothesis (H_1). There is a significant difference in the average amount spent by consumers for electronics at unorganised and corporate retail outlets.

Electronics also show substantial gaps, indicating that consumers prefer corporate retail for aspirational, branded, or high-value goods.

Hypothesis 3: There is no significant difference among the acceptance level of consumers belonging to different demographic profiles towards the corporate retail outlets in small cities and towns.

1. Statistical Hypothesis 12:

H_0: There is no significant difference in the level of acceptance between male and female consumers towards working of corporate retail outlets in small cities and towns.

H_1: There is a significant difference in the level of acceptance between male and female consumers towards working of corporate retail outlets in small cities and towns.

Result: An independent sample t-test was conducted to examine whether there exists a statistically significant difference between level of acceptance of male and female respondents towards corporate retail outlets.

The p-value obtained is more than 0.05, we accept the null hypothesis at 5 percent level of significance. It means that there is no significant difference in the level of acceptance between male and female consumers towards working at corporate retail outlets in small cities and towns.

2. Statistical Hypothesis 13:

H_0: There is no significant difference in the level of acceptance between consumers of different age groups towards working of corporate retail outlets in small cities and towns.

H_1: There is a significant difference in the level of acceptance between consumers of different age groups towards working of corporate retail outlets in small cities and towns.

Result: A one-way ANOVA test was conducted to examine whether there exists a statistically significant difference between respondents' level of acceptance belonging to different age groups towards corporate retail outlets.

The ANOVA result further confirmed this pattern, with an F-value of 0.116 and a significance level (p-value) of 0.977, which is well above the threshold of 0.05. This indicates that there is no statistically significant difference in the level of acceptance toward corporate retail outlets across the various age groups. In other words, we fail to reject the null hypothesis that assumes equal means.

3. Statistical Hypothesis 14:

H_0: There is no significant difference in the level of acceptance between consumers of different educational level towards working of corporate retail outlets in small cities and towns.

H_1: There is a significant difference in the level of acceptance between consumers of different educational level towards working of corporate retail outlets in small cities and towns.

Result: A one-way ANOVA test was conducted to examine whether there exists a statistically significant difference between respondents' level of acceptance belonging to different educational levels towards corporate retail outlets. The ANOVA results produced an F-value of 1.273 with a significance (p-value) of 0.276, which is well above the threshold of 0.05. This means the difference in acceptance levels among the different educational groups is not statistically significant, and thus, the null hypothesis is retained.

4. Statistical Hypothesis 15:

H_0: There is no significant difference in the level of acceptance between consumers of different occupation towards working of corporate retail outlets in small cities and towns.

H_1: There is a significant difference in the level of acceptance between consumers of different occupation towards working of corporate retail outlets in small cities and towns.

Result: A one-way ANOVA test was conducted to examine whether there exists a statistically significant difference between respondents' level of acceptance belonging to different occupations towards corporate retail outlets.

The ANOVA results produced an F-value of 0.823 with a significance (p-value) of 0.482, which is well above the threshold of 0.05. We can infer that the variation in acceptance across occupational groups is not likely to be statistically significant. Thus, we would fail to reject the null hypothesis (H_0), which states that there is no significant difference in the level of acceptance between consumers of different occupations.

5. Statistical Hypothesis 16:

H_0: There is no significant difference in the level of acceptance between consumers of different monthly household income towards working of corporate retail outlets in small cities and towns.

H_1: There is a significant difference in the level of acceptance between consumers of different monthly household income towards working of corporate retail outlets in small cities and towns.

Result: A one-way ANOVA test was conducted to examine whether there exists a statistically significant difference between respondents' level of acceptance belonging to different monthly household income towards corporate retail outlets.

The ANOVA results produced an F-value of 1.943 with a significance (p-value) of 0.103, which is well above the threshold of 0.05. We can infer that the variation in acceptance across Monthly Household Income groups is not likely to be statistically significant. Thus, we would fail to reject the null hypothesis (H_0), which states that there is no significant difference in the level of acceptance between consumers of different Monthly Household Income.

Findings:

1. Consumer Satisfaction and Socio-Economic Variables:

i. There is no significant association between gender, age, education, and income levels of consumers and their satisfaction with corporate retail outlets. However, males and younger consumers (especially those aged 26–35) showed relatively higher satisfaction scores.

ii. Occupation was the only socio-economic factor that showed a significant association with satisfaction. Businessmen, professionals, students, and housewives were more satisfied compared to agriculturists.

2. Spending Behavior: Organised vs Unorganised Retail: The study found a statistically significant difference in the amount spent per purchase across different categories of goods between unorganised and corporate retail outlets.

a. Food articles: Consumers spent significantly more (¹ 533.49 on average) in corporate outlets—likely due to bulk buying and branding.

b. Personal care products: 61 higher spending was recorded in corporate retail, indicating brand preference and perceived quality.

c. Household cleaning products: 66 more was spent in corporate stores.

d. Clothing & apparels: A substantial difference was observed, suggesting a preference for aspirational and branded products from organised outlets.

e. Medicines and electronics: Spending was significantly higher at corporate retail, showing trust in quality and authenticity of products.

These patterns reflect a shifting consumer preference toward branded and packaged goods, possibly due to perceived reliability, quality assurance, and promotional offers.

3. Acceptance Level of Corporate Retail:

i. No significant differences were found in the acceptance level of corporate retail outlets across gender, age groups, education levels, occupations, or income groups.

ii. This suggests a widespread acceptance of organised retail formats among all demographic segments of consumers in Chhatarpur, indicating the deepening influence of corporate retail across class and social lines.

4. Changing Consumer Behaviour:

i. The data indicates a gradual shift in consumer preferences from unorganised to organised retail formats.

ii. The young, digitally literate population especially shows a stronger inclination toward e-commerce and corporate retail chains, valuing product variety, convenience, digital payments, and standardised service.

5. Sociological Implications: The findings support the notion that the retail transformation is not merely an economic change but also a sociological transition. The

changing consumption patterns signify an evolving consumer identity, aspirations, and relationship with market structures.

6. Impacts on Traditional Retail: While consumers benefit from cost-efficiency and convenience, traditional retailers may face threats of revenue loss and displacement, especially in the absence of regulatory safeguards or integration into digital ecosystems.

References:-

1. Bourdieu, P. (1986). The forms of capital. In J. G. Richardson (Ed.), *Handbook of theory and research for the sociology of education* (pp. 241–258). Greenwood.
2. Durkheim, É. (1897/1951). Suicide: A study in sociology (J. A. Spaulding & G. Simpson, Trans.). Routledge
3. Polanyi, K. (1944). *The great transformation: The political and economic origins of our time*. Beacon Press.
4. Weber, M., & Roth, G. (1978). Economy and society: An outline of interpretive sociology. University of California Press.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

बैंकिंग में आईसीटी की भूमिका और डिजिटल बैंकिंग का ग्राहक अनुभव पर प्रभाव

गुरप्रीत सिंह* डॉ. नेहा गिरधर**

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

प्रस्तावना – आज के समय में ऑनलाइन बैंकिंग ने बैंकिंग के तरीके को पूरी तरह से बदल दिया हैय हम इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग और सेवाओं का उपयोग करके आसानी से अधिक गति और सुविधा के साथ भुगतान कर सकते हैं। भारतीय बैंकिंग क्षेत्र ने हाल के वर्षो में डिजिटल तकनीकों की आवश्यकता को पहचाना है और इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग को अपनाने के लिए तेजी से आगे बढ़ा है। मोबाइल बैंकिंग, ई–वॉलेट और इलेक्ट्रॉनिक कार्ड आदि जैसी विभिन्न सेवाएँ प्रदान करने के लिए डिजिटल बुनियादी ढाँचे के विकास में भारी निवेश किया गया है। डिजिटल बैंकिंग में वे नवाचार वर्चुअल बैंकिंग, बायोमेट्रिक तकनीक, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और ब्लॉकचेन तकनीक, बिटकॉइन, आइरिस तकनीक और रोबोटिक्स हैं।

सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (ICT) में प्रगति और इंटरनेट के बढ़ते उपयोग का आम लोगों द्वारा अपनाई गई बैंकिंग गतिविधि पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ रहा है। यद्यपि भारत जैसे विकासशील देशों में इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग को अपनाना और उसका उपयोग करना विकसित और पश्चिमी देशों से बहुत पीछे है। जबकि हमारे देश में प्रौद्योगिकी को अपनाने और उपयोग करने वाले लोगों को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारण निम्न शिक्षा और बुनियादी ढांचे की दरें हैं, ऐसे अन्य आवश्यक और विशिष्ट मनोवैज्ञानिक व व्यवहारिक कारक हैं जो इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग सेवाओं के उपयोग को अपनाने के प्रति लोगों के व्यवहार को निर्धारित करने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हालाँकि प्रौद्योगिकी आधारित आधुनिक युग की बैंकिंग सेवाएँ ग्राहकों को डिजीटल बैकिंग अपनाने ऑनलाईन बैकिंग का आदी बनाने और डिजीटल बैकिंग की गोपनीयता को बनाये रखने में सक्षम रही है।

सूचना और संचार प्रौद्योगिकी ने बैंकिंग क्षेत्र को और अधिक प्रतिस्पर्धी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आईसीटी बैंकों को अपने आंतरिक नियंत्रण ढांचे को मजबूत करके ग्राहकों की जरूरतों को पूरा करने में मदद करता है, जिसे तब प्रभावी संचार चैनलों द्वारा सहायता प्रदान की जाती है। एटीएम, इंटरनेट बैंकिंग, टेलीफोन बैंकिंग, दिन–प्रतिदिन प्रशासन के व्यापक उपयोग ने बैकों की कार्य क्षमता को बढाया है जिससे ग्राहकों की संतुष्टी में वृद्धि हुई है। एटीएम पहले महत्वपूर्ण तकनीकी निकासों में से एक थे क्योंकि उन्होंने बैंकिंग ग्राहकों को उनके नकदी तक अधिक पहुंच प्रदान की। अब उन्हें अपना पैसा निकालने के लिए बैंकों में कतार में नहीं लगना पड़ता और वे दिन के किसी भी समय ऐसा कर सकते है, क्योंकि कैश मशीनें 24 घंटे और सप्ताह के सातों दिन उपलब्ध हैं।

इंटरनेट और टेलीफोन बैंकिंग के आगमन ने बैंकिंग के लिए इसे और भी सुविधाजनक बना दिया है। ग्राहक अब अपने घर से बाहर निकले बिना ही ऑनलाइन अपना बैलेंस चेक कर सकते हैं और बिलों का भुगतान कर सकते हैं। ग्राहक ओवरड्राफ्ट भी ले सकते हैं, लोन और क्रेडिट कार्ड के लिए आवेदन कर सकते हैं और कई पेज एक्सेस कर सकते हैं जो कार्ड धोखाधड़ी से बचने या बचाव के लिए सुझाव देते हैं। यह ग्राहकों को अपने पैसे पर नजर रखने और अपने मुनाफे और आउटपुट को और अधिक स्पष्ट रूप से देखने में भी मदद करता है। फोन बैंकिंग हमें सलाहकार से बात करने और किसी भी जरूरी मुद्दे को त्वरित और कुशल तरीके से हल करने में सक्षम बनाती है। बैंकों ने ऑनलाइन बचत खाते, ऋण खाता, FD सुविधा, बिल भुगतान सुविधा, कर रिटर्न सुविधा और कई अन्य उत्पादों की पेशकश करके अपने ग्राहकों को अधिक त्वरित बैंकिंग सेवाएं प्रदान करने में सफलता हासिल की है।

बैंकिंग क्षेत्र के विकास में आईसीटी की महत्वपूर्ण भूमिका है। आईसीटी बैंकों को आंतरिक नियंत्रण ढांचे को सुदृढ़ करके खरीदारों की आवश्यकताओं को पर्याप्त रूप से ध्यान में रखने की अनुमति देता है, जिसे व्यवहार्य पत्राचार घटकों द्वारा बनाए रखा जाता है। स्मार्ट कार्ड, एटीएम, मोबाइल बैंकिंग, इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग, टेलीफोन बैंकिंग, 24 घंटे सेवा संचालन, समग्र सेवा प्रदर्शन, उत्पाद और सेवा रेंज में वृद्धि, उन्नत उपकरणों और विभिन्न प्रकार के उत्पादों के उपयोग से ग्राहक संबंधों को मजबूत करने के बढ़ते उपयोग ने बैंकों को आईसीटी के आगमन के साथ अपने ग्राहकों को बेहतर सेवा देने की अनुमति दी है।

बैंकिंग सेवाएँ, सभी हितधारकों को सूचना प्राप्त करने, संचालित करने और वितरित करने की प्रवृत्ति रखती हैं। आज के 21वीं सदी के कारोबारी माहौल में, जिसमें हर तरफ गतिशील और तेज बदलाव हो रहे हैं और पारंपरिक कार्य–पैटर्न वाले संगठनों के लिए गंभीर खतरा पैदा हो रहा है, बैंकिंग संगठनों के लिए आज के सूचना आधारित युग में प्रभावी और प्रतिस्पर्धी बने रहने के लिए तकनीकी प्रगति को अपनाना एक बड़ी जरूरत बन गई है। इसलिए बैंकिंग सेवाओं में आईसीटी आधारित तकनीकों की शुरूआत सभी बैंकों के लिए एक बड़ी चुनौती खड़ी करती है और स्थानीय और वैश्विक प्रतिस्पर्धा का मुकाबला करने के लिए बैंकिंग प्रणाली का डिजीटलाईजेशन करना अनिवार्य हो गया है। आईसीटी का अब इस बात पर सीधा प्रभाव

पड़ता है कि बैंक दुनिया भर में अपने ग्राहकों और क्लाइंट के साथ कैसे व्यवहार करते हैं और कितनी त्वरित व गुणवतापूर्ण सेवाएं प्रदान करते है। हेरोल्ड और जेफ (1995) ने इस बात पर जोर दिया कि वित्तीय सेवाएँ प्रदान करने वालों को अपनी रूढ़िवादी प्रथाओं को समायोजित करना चाहिए ताकि वे 1990 और आने वाले दशकों में व्यवहार्य बने रह सकें।

वोहेरेम (2000) ने जोर देकर कहा कि ऐसे बैंकिंग संगठन जो अपनी प्रक्रियाओं और तंत्रों को नया आकार देते हैं और अपने संचालन में आईसीटी को लागू करते हैं, वे निश्चित रूप से नई सहस्राब्दी में जीवित रहने और फलने-फूलने में सक्षम होंगे। उन्होंने सुझाव दिया कि बैंकों को सूचना और संचार प्रौद्योगिकी की गतिशीलता के तहत डोमेन के भीतर मजबूत आधार हासिल करने के लिए अपनी प्रक्रियाओं और प्रणालियों की फिर से जांच करनी चाहिए।

डिजिटल बैंकिंग की अवधारणा डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से बैंकिंग करना है, जिसमें चेक, पे-इन-स्लिप, डिमांड ड्राफ्ट आदि जैसे सभी कागजी कामों को हटा दिया जाता है। यह सुनिश्चित करता है कि सभी बैंकिंग ऑपरेशन ऑनलाइन उपलब्ध हों। डिजिटल बैंकिंग हमें 24*7 सभी पारंपरिक बैंकिंग गतिविधियों को स्वतंत्र रूप से एक्सेस करने और निष्पादित करने की सुविधा देती है, बिना किसी व्यक्तिगत रूप से बैंक शाखा में जाकर अपना काम करवाने के। डिजिटल बैंकिंग आपके लैपटॉप, टैबलेट या मोबाइल फोन के माध्यम से की जा सकती है।

भारत में, ई-बैंकिंग हाल ही में शुरू हुई है।पिछले दशक में, भारत के बैंकिंग क्षेत्र ने आईसीटी आधारित सेवाओं पर उल्लेखनीय प्रगति की है। चाहे वह सार्वजनिक क्षेत्र का बैंक हो या निजी क्षेत्र का बैंक, इनमें से अधिकांश बैंकों को कंप्यूटर और सूचना प्रौद्योगिकी की सहायता से पूरी तरह से बदल दिया गया है। इसने ग्राहकों के बैंकिंग करने के तरीके को बदल दिया है। अब बैंक में घंटों कतार में खड़े होकर पैसे निकालना, चेक का भुगतान करना, क्लेम ड्राफ्ट बनाना और कर्मचारी को पहले दूसरे खाते में धनराशि स्थानांतरित करने के लिए कहना पुरानी बात हो गई है।

फिर भी, भारतीय आबादी का बड़ा हिस्सा अभी भी इन सुधारों को पूरी तरह से नहीं समझ पाया है। अर्ध शहरी क्षेत्रों एवं ग्रामीण तबके की अधिकांश आबादी जो वित्तीय विशेषज्ञता और बैंकिंग सेवाओं की आवश्यकताओं के बारे में जानकारी की कमी के कारण मुख्यधारा की बैंकिंग प्रणाली से बाहर हैं। यद्यपि भारत सरकार ने जनधन योजना के तहत सभी नागरिकों के बैंक खाते खोलने का सफल प्रयास किया है और हर नागरिक तक बैंक की पंहुत करते हुए वित्तीय समावेशन को बढावा दिया है और 140 करोड़ लोगों को बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध करवाने का प्रयास किया है। परन्तु फिर भी अभी तक बड़ी आबादी बैंकिंग सेवाओं का लाभ उठाने की आदी नहीं है। हाल ही में विश्व बैंक ने भी कहा है कि भारत की बैंकिंग प्रणाली में 35 प्रतिशत खाते निषक्रिय है।

बैंकिंग क्षेत्र में डिजिटल प्रौद्योगिकी का उपयोग एटीएम, इंटरनेट बैंकिंग और मोबाइल बैंकिंग जैसी बैंकिंग सेवाएँ प्रदान करने के लिए किया जाता है। ऐसी सेवाओं का लाभ उठाने के लिए, ग्राहकों से कुछ कार्य करने की अपेक्षा की जाती है, जिसके लिए संचालन की बुनियादी जानकारी की आवश्यकता होती है। उपभोक्ता के दृष्टिकोण से, डिजिटल प्रौद्योगिकी कहीं भी, कभी भी और किसी भी तरह से उनके बैंकिंग विजन की पूर्ति है। प्रौद्योगिकी न केवल बैंकों के लिए उच्च दक्षता प्राप्त करने, प्रक्रियाओं, उत्पादकता और लाभप्रदता का प्रबंधन करने के लिए एक रणनीतिक संसाधन के रूप में उभरी है, बल्कि अस्तित्व के साधन के रूप में भी उभरी है। बैंकों को प्रौद्योगिकी को अपनाने के लिए मजबूर होना पड़ा है, यह पहचानते हुए कि यह उन्हें ग्राहकों की बढ़ती अपेक्षाओं को पूरा करने में सक्षम बनाएगा और उन्हें अत्यधिक प्रतिस्पर्धी बैंकिंग वातावरण में एक मजबूत स्थिति लेने के लिए तैयार करेगा।

भारत में डिजीटल बैंकिंग की सेवाओं को और अधिक विश्वसनीय, त्वरित, गुणवतापूर्ण बनाने के साथ-साथ आम तबके तक वित्तीय साक्षरता की पंहुच करना भी आवश्यक है ताकि देश के अंतिम पायदान पर खड़ा व्यक्ति भी बैंकिंग सेवाओं का लाभ उठा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. www.rbi.org.in
2. www.pib.gov.in
3. योजना मैगजीन - भारत सरकार द्वारा प्रकाशित।
4. कुरूक्षेत्र मैगजीन - भारत सरकार द्वारा प्रकाशित।
5. करमाकर, के. जी., बनर्जी, जी. डी., और महापात्रा, एन. पी., भारत में वित्तीय समावेशन की ओरब SAGE प्रकाशन भारत, ई-आईएसबीएन: 9788132119180, वर्ष 2011.
6. सेठी, एस.के., वित्तीय समावेशन एक अवलोकन: समावेशी विकास के लिए एक रोड मैप, पहला संस्करण, भारती प्रकाशन, आईएसबीएन 978-81-933172-4-2, त्रिवेदी, आई.वी., नागर, अशोक, जिंगर, ए.एल., भट्ट, के. अनिल, मनी एंड बैंकिंग सिस्टम, आरबीडी पब्लिशिंग हाउस 2016.
7. कोठारी, सी.आर. (2009), रिसर्च मेथोडोलॉजी: मेथड्स एंड टेक्निक्स, न्यू एज इंटरनेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
8. देसाई, वसंत भारतीय वित्तीय प्रणाली, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, 2005.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Integrating Skill Development in Commerce Curriculum: A NEP 2020 Perspective

Dr. D.C. Rathi* Dr. M.S. Dawar Dr. Sudha Agarwal*****

*Associate Professor, Govt. College, Rau (M.P.) INDIA
** Associate Professor, Govt. College, Rau (M.P.) INDIA
*** Professor, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.) INDIA

Abstract: The National Education Policy (NEP) 2020 envisions a transformative shift in India's education system by placing a strong emphasis on skill-based learning, multidisciplinary education, and employability enhancement. Commerce, as a pivotal academic discipline, needs to be recalibrated in alignment with the skill development goals outlined by NEP 2020. This research paper explores the conceptual framework and strategic integration of skill development into the commerce curriculum, evaluates the current gaps, and offers actionable recommendations to align commerce education with the demands of the 21st-century workforce. The paper also reflects on policy implications, pedagogical reforms, industry-academia collaboration, and the role of digital learning in fostering employability through skill integration.

Introduction - Commerce education in India has traditionally focused on theoretical knowledge with limited emphasis on practical skills. However, the global economy, driven by digitalization, innovation, and entrepreneurship, demands a workforce that is not only academically sound but also skill-efficient. NEP 2020 calls for a fundamental shift from rote learning to a more holistic, experiential, and skill-oriented approach.

This paper investigates how the commerce curriculum can be enriched by integrating skill development in accordance with the objectives of NEP 2020. It discusses curriculum design, pedagogy, assessment reforms, and the need for interlinkages with vocational education, internships, and real-world exposure.

Objectives of the Study:

1. To analyze the vision and mandates of NEP 2020 related to skill development.
2. To examine the existing gaps in the current commerce curriculum regarding skill orientation.
3. To identify key skills relevant to commerce graduates in the contemporary job market.
4. To propose a framework for integrating skill development into the commerce curriculum.
5. To suggest policy recommendations for effective implementation and monitoring.

NEP 2020 and the Vision for Skill Development: The National Education Policy (NEP) 2020, introduced by the Ministry of Education, Government of India, marks a watershed moment in the country's educational reform agenda. Designed to meet the demands of the 21st-century knowledge economy, the policy focuses extensively on transforming India's education system from one rooted in rote learning to a dynamic ecosystem that nurtures critical thinking, innovation, creativity, and above all, employability through skill development.

The Paradigm Shift in Higher Education: NEP 2020 recognizes that the current model of higher education has remained largely content-driven and examination-centric, leading to a mismatch between academic outputs and industry expectations. The policy, therefore, proposes a shift towards a more application-oriented, learner-centric, and multidisciplinary education system. This is especially significant for commerce education, which plays a crucial role in shaping the workforce for sectors like finance, business, trade, banking, entrepreneurship, and digital services.

The policy outlines the following key areas of transformation with direct implications for skill development:

a. Multidisciplinary and Holistic Education: NEP advocates for dismantling rigid boundaries between disciplines, encouraging universities and colleges to offer multidisciplinary programs that include both academic and vocational components. For commerce education, this implies integration with subjects like data science, psychology, public policy, and technology, enabling students to acquire diverse skill sets.

b. Integration of Vocational Education: A major highlight of NEP 2020 is its focus on integrating vocational

education and skill development into all stages of education. It emphasizes that by 2025, at least 50% of all learners at the school and higher education levels should have exposure to vocational education and skill training. Commerce curricula are thus expected to embed short-term and long-term vocational modules such as:

1. Financial modeling
2. Digital accounting tools (Tally, Zoho, SAP)
3. GST and e-filing practices
4. Retail and supply chain management
5. Business analytics and fintech applications

c. Flexibility and Credit-Based Learning: NEP promotes the Choice-Based Credit System (CBCS), Academic Bank of Credits (ABC), and flexible entry-exit points in undergraduate programs. These features enable students to accumulate credits for skill-based courses, certifications, internships, and MOOCs, enhancing the practical value of a commerce degree.

d. Internships and Experiential Learning: To enhance employability, NEP mandates the inclusion of internships, on-the-job training, and experiential learning opportunities as integral components of higher education. For commerce students, this may take the form of:

1. Internships with CA firms, corporate finance departments, and banks
2. Industry projects in marketing and supply chain management
3. Hands-on experience with taxation and accounting platforms
4. Community-based projects in microfinance, SHGs, and entrepreneurship

Such exposure allows students to develop soft skills, understand business environments, and apply theoretical concepts in real-world scenarios.

e. Industry-Academia Linkages: NEP 2020 calls for the establishment of strong partnerships between educational institutions, industry bodies, and skilling agencies. This aims to ensure that curricula remain updated with industry trends and that students receive mentorship, training, and placement support. In the context of commerce education, this may involve:

1. Advisory boards comprising industry professionals and academicians
2. Joint curriculum development with corporates and skill councils (like NSDC)
3. Faculty development programs in collaboration with industry experts

Higher education institutions must reorient their governance, pedagogy, and evaluation systems to support the seamless integration of skill development within the commerce curriculum.

Current State of Commerce Curriculum: Gaps and Challenges: Despite reforms, many Indian universities still follow outdated curricula that:

1. Lack integration of practical skills such as data analysis, digital accounting, taxation software, business analytics, and communication.
2. Do not include mandatory internships or industry exposure.
3. Have limited use of technology-enhanced learning or interdisciplinary modules.
4. Focus more on content than competencies.

Moreover, there is often a disconnect between what students learn and what the job market demands.

Key Skills for Commerce Graduates in the 21st Century

NEP 2020 encourages the development of a wide range of cognitive, technical, and socio-emotional skills. For commerce students, the key skills include:

Skill Category	Specific Skills
Cognitive Skills	Critical thinking, quantitative reasoning, problem-solving
Technical Skills	Accounting software (Tally, SAP), data analysis (Excel, SPSS), taxation tools, blockchain basics
Communication Skills	Business communication, report writing, presentation skills
Digital Literacy	E-commerce platforms, digital marketing, fintech knowledge
Entrepreneurial Skills	Business planning, innovation, startup incubation
Professional Skills	Ethics, teamwork, adaptability, leadership

Strategies for Integrating Skill Development in Commerce Curriculum

1. Curriculum Re-design:

i. Introduction of modular courses with embedded skill components.
ii. Offering electives on digital finance, fintech, data analytics, and entrepreneurship.
iii. Incorporating NEP-recommended vocational modules such as retail management, financial services, and e-accounting.

2. Project-Based and Experiential Learning:

i. Integration of real-life business problems as case studies.
ii. Live projects with companies and NGOs.
iii. Encouraging student-led ventures and simulations.

3. Internship and Industry Exposure:

i. Mandatory internships in commerce programs (minimum 4–6 weeks).
ii. MoUs with industries and chartered firms for regular student engagement.

4. Use of Technology and Digital Platforms:

i. Leveraging MOOCs, SWAYAM, Coursera, and Khan Academy for supplemental skill courses.
ii. Use of LMS for blended learning models.
iii. Virtual labs and accounting practice software for hands-on experience.

5. Faculty Training and Capacity Building:

i. Faculty development programs (FDPs) in emerging

areas like data analytics, AI in accounting, and digital business models.

ii. Incentivizing faculty-industry collaborations.

Case Studies and Best Practices: The successful integration of skill development in commerce education, as envisioned under NEP 2020, can be observed through various innovative initiatives undertaken by academic institutions and government platforms. These case studies highlight how diverse models are being implemented to bridge the gap between academic knowledge and employable skills.

1. Delhi University – Curriculum Innovation in Digital Commerce: Delhi University has made significant strides in aligning its commerce curriculum with the needs of the digital economy. The B.Com (Hons) program now includes papers on:

i. Digital Accounting Tools (Tally, SAP)
ii. Business Data Analytics using Excel and Python
iii. E-filing of GST and Income Tax Returns

This initiative provides students with exposure to industry-relevant software and practical assignments, encouraging experiential learning alongside traditional classroom instruction.

2. Indian Institutes of Management (IIMs) and Institute of Chartered Accountants of India (ICAI) – Certification Programs: Premier institutions such as IIM Bangalore and IIM Calcutta, along with ICAI, have launched short-term certification programs aimed at upskilling commerce and finance graduates in specialized domains. These include:

1. FinTech and Blockchain Applications in Finance
2. Forensic Accounting and Fraud Detection
3. Strategic Financial Management and AI in Business

Such certifications are often delivered through hybrid or online modes, promoting flexible and modular learning in alignment with NEP's emphasis on lifelong and continuous learning.

3. Shri Vishwakarma Skill University (Haryana) – Apprenticeship-Based Commerce Education: As India's first skill university, Shri Vishwakarma Skill University (SVSU) has pioneered a unique dual-education model wherein students pursuing B.Voc programs in commerce and business administration undergo:

1. Apprenticeships in industries for 6–12 months
2. Live training in digital marketing, e-retail, and logistics
3. Skill certifications recognized by Sector Skill Councils (SSCs)

This model is closely aligned with NEP 2020's recommendation of integrating vocational education with general education and provides students with both academic degrees and employable skill credentials.

4. SWAYAM Portal – Democratizing Skill-Based Education: The SWAYAM (Study Webs of Active–Learning for Young Aspiring Minds) platform, developed by the Ministry of Education, is a flagship initiative under NEP to provide free online courses across disciplines, including commerce and skill development.

Key highlights include:

1. Courses in Tally Accounting, GST Practices, E-Business, Financial Markets, and Excel for Business offered by institutions such as IITs, IIMs, IGNOU, and NPTEL.
2. Integration of 4-quadrant approach (video lectures, reading material, self-assessment, and discussion forum).
3. Courses aligned with National Skills Qualifications Framework (NSQF), enabling credit transfer under the Academic Bank of Credits (ABC).
4. Certification on successful completion, which is recognized by UGC and many universities.

Example courses relevant to commerce and skills:

1. *"Introduction to GST"* by Dr. Bhavana G. (Mumbai University)
2. *"Accounting for Managers"* by Prof. Anil Kumar (IGNOU)
3. *"Digital Marketing"* by IIT Roorkee faculty
4. *"Financial Accounting and Analysis"* by IIM Bangalore

SWAYAM enables self-paced, cost-effective, and inclusive skill acquisition, especially for students in Tier-II and rural institutions who may not have access to elite faculty or infrastructure.

Policy and Institutional Recommendations:

1. National Curriculum Framework for Commerce: Aligning with NEP's curriculum design principles.

2. UGC and AICTE Collaboration: To standardize skill benchmarks across commerce disciplines.

3. Industry-Academia Boards: Setting up advisory boards for curriculum and internship planning.

4. Assessment Reform: Moving from memory-based exams to competency-based evaluations.

5. Credit Recognition for Skill Courses: As proposed in the Academic Bank of Credits (ABC).

Expected Outcomes: If skill development is effectively integrated, the outcomes will include:

1. Increased employability and self-employment opportunities among commerce graduates.
2. Better alignment between academic learning and industry needs.
3. Promotion of innovation and entrepreneurship.
4. Achievement of NEP 2020's vision for a robust, relevant, and dynamic higher education system.

Conclusion: Integrating skill development into the commerce curriculum is not merely a policy directive under NEP 2020—it is a necessity for India's socio-economic transformation. The commerce discipline must evolve into a practice-oriented, skill-enhancing academic stream that empowers students with the competencies required in a rapidly changing world. Through strategic curriculum reforms, industry engagement, digital integration, and faculty training, commerce education in India can truly become a catalyst for national development and global

competitiveness.

References:-

1. Ministry of Education (2020). *National Education Policy 2020*. Government of India.
2. University Grants Commission (2021). *Guidelines for Higher Education Institutions for Implementation of NEP 2020*.
3. AICTE (2023). *Model Curriculum for Undergraduate Programs*.
4. KPMG & FICCI (2020). *Future of Jobs in India: A 2022 Perspective*.
5. World Economic Forum (2023). *The Future of Jobs Report*.
6. National Skill Development Corporation (NSDC) Reports.
7. Academic journal articles and empirical studies from *Indian Journal of Commerce*, *Higher Education Quarterly*, and *Journal of Skill Development*.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Study on Role of Panchayati Raj and Financial Management in Strengthening Rural Development : A Study of Madhya Pradesh

Aadarsh Singh Dawar* Dr. P. Gautam Dr. Pritibala Bhargava*****

* Research Scholar, Devi Ahilya University, Indore (M.P.) INDIA
** Ex- Professor (Commerce) Maharani Laxmibai Arts and Commerce College, Gwalior (M.P.) INDIA
*** Govt. Mata Jija Bai Girls PG College, Indore (M.P.) INDIA

Introduction - Given that a sizable section of the population lives in villages, rural development has long been a top priority for India's national development strategy. By establishing the Panchayati Raj System as a three-tiered framework of self-government at the village, intermediate, and district levels, the 73rd Constitutional Amendment Act of 1992 signaled a sea change in rural governance. This clause in the constitution sought to give local organizations the financial and administrative capacity to create and carry out development initiatives that are suited to the unique requirements of rural communities.

One of the biggest and most rural states in India, Madhya Pradesh, has led the way in putting the Panchayati Raj system into practice. The state has put a lot of effort into giving local governments more authority and financial responsibility. Nonetheless, a key element affecting the success of rural development projects continues to be the efficiency of finance administration at the Panchayat level. Rural communities in M.P. nevertheless suffer enduring issues like poor infrastructure, insufficient healthcare, low literacy, and unemployment despite a number of reforms and government initiatives. The effectiveness and accountability of local governing institutions are seriously called into doubt by these problems. It becomes crucial to assess how Panchayati Raj Institutions (PRIs) contribute to successful financial planning, resource use, participatory governance, andservice delivery.

Table 1: Geographical Features

Total Population in crore as per Census 2011	7.27
Rural Population (cr.)	5.25
% of rural population to total population	72.21%
Urban Population (cr.)	2.02
% of urban population to total population	27.79
Male (cr.)	3.76
Female (cr.)	3.51
Scheduled Castes (cr.)	1.13
% of SC population to total population	15.54%

(Source: https://www.slbcmadhyapradesh.in/geographical-map.aspx)

Evolution of Panchayati Raj Institutions in India : India's Panchayati system predates independence by a significant margin. Gram panchayats have been the main political organization in rural India for decades. Panchayats were typically elected bodies with both executive and judicial authority in ancient India. The significance of the village panchayats was weakened by natural and imposed socioeconomic changes, as well as foreign rule, particularly Mughal and British. The panchayats, however, served as tools of upper caste domination over the rest of the village before to independence, which exacerbated socioeconomic or caste-based divisions.However, the creation of the Constitution following independence marked the pinnacle of the Panchayati Raj System's development. "The state shall take steps to organize village panchayats and endow them with such powers and authority as may be necessary to enable them to function as units of self-government," according to Article 40 of the Indian Constitution. The Indian government established a number of committees to research rural self-governance implementation and suggest ways to accomplish this objective. The following committees have been appointed: the Ashok Mehta Committee, the Balwant Rai Mehta Committee, the G. V. K. Rao Committee, and the L. M. Singhvi Committee.

Table 2: Administrative Features

No. of Districts	55
No. of Division	10
No. of Villages	54903
No. of Gram Panchayats	23043
No. of Block/Janpad Panchayats	313
No. of Tehsils	369

(Source:https://www.slbcmadhyapradesh.in/geographical-map.aspx)

Review of Literature

It had a lengthy history before becoming the 73rd

Amendment to the Indian Constitution in 1992. The world's largest democratic process is found in India. One of the strategies and effective instruments of Indian democracy is the Panchayati Raj system. There are 664,369 villages in India as of 2019. Thus, the primary goal of the Indian government is to provide efficient services for village-level infrastructure development. Competition between nations has been growing in the age of globalization in a variety of domains, including economic, social, political, and technological. The development paradigm is now posing a threat to the democratic system in India(**Roy, Moumita Saha, 2024).**

With an emphasis on its administrative duties and development scheme execution, the paper examines the development and effects of the three-tier system since the 73rd Constitutional Amendment Act. The study looks at how local self-governance and rural development work by analyzing financial structures and operational procedures. The study identifies the major issues that impede PRIs' efficacy: monetary limitations, ineffective administrative practices, and social impediments. The results indicate that, in spite of their drawbacks, PRIs have made a substantial contribution to grassroots development by means of decentralized planning and the execution of numerous rural development initiatives.The study ends with suggestions for bolstering these organizations to improve their contribution to rural development, highlighting the necessity of increased financial independence, capacity building, and technology integration for better governance**kumar, A.S. Naveen and Dar, Showkat Ahmad (2020).**

This journal focuses on the effective operation of good governance and the development of all components of panchayati raj institutions**(Sinha, 2017).**In conclusion Local governments' self-interest in protecting the environment, democratic local self-government is a state-of-the-art mode of governance. Under the Panchayati Raj system, information about public welfare and well-being can be disseminated to the villagers through a variety of channels and entities, including state governments, local bodies managed by non-officials, villager-led organizations, and governing bodies free from corruption**(Vaishnav and Dhiva, 2018).**

A Study on Panchayati Raj Establishments This study concludes and highlights the importance of women's involvement as a result of the MNREGA, which has improved tribal villages and led to new programs that have eradicated poverty through Self-Help Groups**(Benni, 2017).**

The Structure and Function of Indian Panchayat Raj Institutions and Rural Development, Reverend the ancient Indian text known as the Rigveda talks about panchayats as "Sabhas" and "Samities." An assembly of five elders chosen and approved by their rural community. However, the active involvement would be necessary for the PRI to operate these organizations effectively and meaningfully. It is impossible to exaggerate the significance of these institutions for rural development**(Kadam, 2017).**

The involvement of the regionally based private construction industry significantly enhanced this capacity, according to the 2016. It has been demonstrated that local administrators and engineers are able to offer some training. Everything that needed to be physically created was and still is completed in advance. After work started in 1998, 600 kilometers of rural roads, markets, and other infrastructure were constructed and renovated, all of which were completed well within the original budget estimates. As part of the road construction, 98 small bridges and 988 culverts were also constructed.

Decentralization has been widely recognized in India as a factor in the country's GDP growth. To draft and audit Panchayats' annual plans, State Account Service officials may be hired at the District and Mandal levels. The Gram Sabha's Social Audit should be staffed by qualified personnel**(Soans and Kaluraya, 2015).**Indian government must aid states and provide accounting software, technical support, and supervision as part of the fiscal responsibility regime**(Kalyan, 2014).**

Research Methodology Overview: The study used a descriptive methodology and a qualitative lens to investigate how financial management and Panchayati Raj Institutions (PRIs) support rural development in Madhya Pradesh. To give a thorough grasp of the development, administrative roles, and effects of PRIs, secondary data was gathered from government papers, policy documents, government reports, Panchayat budgets, records from the Rural Development Ministry, audit reports, and existing literature. In order to investigate institutional practices and development outcomes and to pinpoint important issues that impact PRI efficacy, including budgetary limitations, administrative inefficiencies, and social impediments, the study used descriptive analysis. Methods made it possible to conduct a thorough analysis of how PRIs operate, the challenges they encounter, and possible ways to strengthen their contribution to rural development.

Under the ethical considerations, data used only for academic purposes

(kumar, A.S. Naveen and Dar, Showkat Ahmad, 2020).

Significance of the topic: This study seeks to explore the role of Panchayati Raj system, combined with sound financial management practices, can contribute to sustainable and inclusive rural development in Madhya Pradesh. The findings will provide insights into existing gaps, best practices, and potential policy interventions needed to strengthen the rural development framework.

Objectives : It becomes essential to evaluate the role of Panchayati Raj Institutions (PRIs) not only in participatory governance but also in effective financial planning, resource utilization, and service delivery.

Scope: This study focuses on examining the role of Panchayati Raj Institutions (PRIs) and financial management practices in promoting rural development in

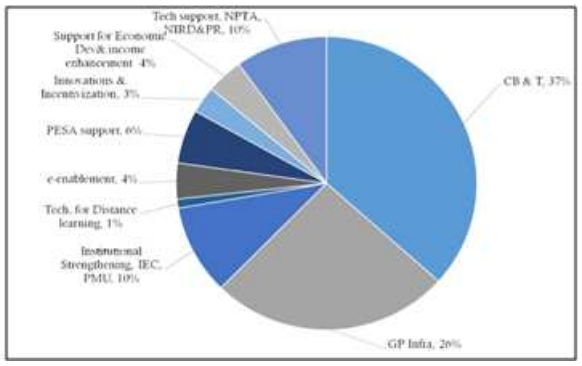
Madhya Pradesh. It covers the functioning of the three-tier Panchayati Raj system. The impact of financial management on key rural development indicators such as infrastructure, education, health, and livelihoods.

Limitations: The study is geographically limited to selected areas/districts of Madhya Pradesh and may not reflect the condition of PRIs in other states. The availability of accurate and updated financial data at the Panchayat level may be limited. Time and resource constraints may restrict the number of field visits or interviews. The study relies on government records, secondary data, and/or self-reported responses, which may include biases or inconsistencies.

Structure and Role of Panchayati Raj in Rural Development: Three-tiered Panchayati Raj system includes Gram Panchayat (village level), Janpad Panchayat (block level), and Zila Panchayat (district level. The Madhya Pradesh Panchayati Raj Act, 1993, which was passed after the 73rd Amendment to the Constitution, gives these entities authority. Three-level structure: The three-tiered Panchayati Raj system (Village, Intermediate, and District level) would be established in the states as a result of this Act. States that have fewer than 20 lakh people cannot be considered intermediate(**Roy, Moumita Saha, 2024).**

PRIs are democratic local government organizations that promote economic growth, social inclusion, gender equality, and good governance. The 73rd Amendment to the Indian Constitution has delegated local planning and development responsibilities to the Panchayats and envisioned grassroots, people-led development. The Panchayati Raj System was established with the dual goals of guaranteeing social justice and economic growth for rural residents. State governments determine the degree of devolution of power, funds, functions, and functionaries (3Fs), and it varies from one state to another. (https://rgsa.gov.in/resources/files/FrameworkRGSA.pdf).

Figure 01 :Budget for State Component (in Crores)



(Source:https://rgsa.gov.in/resources/files/Framework RGSA.pdf)

Contributions observed

Decentralized Governance*:* Empowers local communities to make decisions tailored to their needs.***Inclusive Participation****:* Gram Sabhas ensure that marginalized groups like women, SC/STs, and economically weaker sections have a voice.***Local Planning****:* Panchayats prepare micro-level development plans, integrating them into district-level strategies.***Service Delivery****:* They manage basic services like water supply, sanitation, education, and health at the grassroots level.***Empowerment Initiatives****:* Madhya Pradesh pioneered the concept of *Gram Swaraj*, encouraging self-governance and transparency.

Financial Management and Inclusion: Effective financial management is crucial for implementing rural development schemes and ensuring accountability.

Accountability Mechanisms

State Finance Commission Recommendations*:* Allocate a share of state revenue to Panchayats for local development.

Madhya Pradesh Gramin Bank (MPGB)*:* Operates in 39 districts, providing banking services to rural populations and supporting financial inclusion.

Microfinance & SHGs*:* Self-Help Groups linked to banks enable access to credit, savings, and insurance for rural households.

Samruddhi Scheme*:* A financial inclusion model praised by UNDP for improving access to finance among the poor in MP.

MGNREGA & Livelihood Programs*:* Financially managed by Panchayats to ensure employment and asset creation.

Incentivization of Panchayats: In order to foster a spirit of competition amongst PRIs and States, the top-performing Panchayats (District, Intermediate, and Gram Panchayats) and States/UTs will receive awards and financial incentives in appreciation of their efforts to improve the delivery of public goods and services. The best panchayats will be chosen using a number of factors, such as Mission Antyodaya's criteria and indicators for reporting on trainings, creating GPDPs, and using FFC money. PRIs and States/UTs currently receive honors in the following categories: ·

Gaurav, Nanaji Deshmukh Rashtriya Gram Sabha Puraskar (NDRGGSP): To Gram Panchayats for their exceptional involvement of Gram Sabhas in socio-economic development. States get the e-Panchayat Puraskar in appreciation of notable advancements made in the rollout and implementation of the e-Panchayat Mission mode initiative. (There isn't any money involved.) GPDP awards: Three of the nation's top-performing Gram Panchayats will get this brand-new honor, which was launched in 2017–18. This has been done in an effort to support general practitioners who have created their GPDPs in accordance with State/UT-specific guidelines that were created in accordance with the model guidelines published by MoPR(**https://rgsa.gov.in/resources/files/Framework RGSA.pdf).**

Figure 02 (see in last page)

Role of State Component : The main State component of the plan will be the capacity building of PRIs, which will comprise GP buildings, administrative and technological assistance, including e-enablement of GPs, trainings, and

workshops. Allowed activities list states are supposed to create plans for central financing to undertake activities according to their needs and priorities.

Figure 03: Structure Layout of Responsibilities



(Source: kumar, A.S. Naveen and Dar, Showkat Ahmad, 2020).

Obstacles and Suggestions

Difficulties:

- **Low Awareness:** A large number of Panchayat members are not properly trained in financial procedures.
- **Elite Capture:** When local elites control decision-making, transparency is diminished.
- **Infrastructure Gaps:** In rural locations, financial services are hampered by inadequate connectivity and digital access.

Recommendations:

- **Capacity Building**: Regular training for Panchayat representatives on budgeting and governance.
- **Technology Integration**: Use digital platforms for fund tracking and service delivery.
- **Community Monitoring**: Strengthen Gram Sabhas to oversee financial decisions and ensure accountability.

Conclusion on Impact Assessment

Evaluation of PRI-led initiatives are: MGNREGA, the Central Ministry of Rural Development Land development, flood control, rural connection, irrigation, drought proofing (including afforestation), water collection and conservation, restoration of traditional water bodies, and government-notified operations are all deemed acceptable. Both public and private property can be used for horticultural cultivation. Inland fishing, pond construction, and other activities are also possible.

The National Livelihood Mission, or Aajeevika: Women are encouraged by Central to launch producer businesses, participate in kitchen gardening or communal farming, try out new, efficient methods, and get training.

Interest Subvention to Farmers : plan for interest subsidies to give farmers short-term credit.

Rural industrialization: Support is available for the construction and upkeep of goat sheds, cattle sheds, poultry bird night shelters, and other structures under the scheme's terms.

Rural industrialization Aajeevika: funding for organizations that establish remote industrial units, provide training and other managerial assistance, and establish connections.

Rural industrialisation Village Entrepreneurship Start-up Programme Central Ministry of Rural Development To offer village business owners incubator services.

Deen Dayal Upadhyaya Gram Kaushalya Yojana : All qualified young people's skills are developed for self-employment and placement, and assistance is given to rural workers in big cities. Give the impoverished and marginalized access to demand-driven skill training at no cost to them in rural areassocially disadvantaged groups (women 33%, minorities 15%, and SC/ST 50%) be covered.

Mukhya Mantri Yuva Swarozgar Yojana : Young entrepreneurs are given financial support under the program. For projects up to Rs. 50,000, the State Government contributes 20% of the total cost as Margin Money, or a maximum of Rs. 10,000 all at once. These business owners have access to loan facilities. As long as the account is covered by CGTMSE, no collateral security is required. Otherwise, 100% of the approved loan amount is pledged as collateral.

Suggestions: The following are suggestions for tactical methods to enable these institutions to optimize their influence on rural development.

1. Greater Financial Autonomy: Give organizations more fiscal decentralization and the ability to create and oversee their own income in order to guarantee prompt and sufficient financing for initiatives aimed at rural development.
2. Capacity Building Programs: To enhance governance, project management, and service delivery, regularly arrange training sessions and seminars for institutional staff and local representatives.
3. Technology Integration: Encourage the effective planning, monitoring, and provision of rural services by utilizing Information and Communication Technology (ICT) tools such mobile applications, e-governance portals, and GIS mapping.
4. Transparent Fund Allocation: Put in place strong procedures to guarantee accountability and transparency in the distribution and use of funds, reducing leaks and abuse.
5. Strengthen Panchayati Raj Institutions (PRIs): Give local self-governments the autonomy to make decisions and the ability to carry out development initiatives that are suited to the needs of rural areas.
6. Public-Private Partnerships (PPP): Encourage cooperation with private sector organizations to gather more funds, knowledge, and creative ideas for rural services and infrastructure.
7. Monitoring and Evaluation Mechanisms: To ensure ongoing improvements, put in place regular monitoring and impact assessment frameworks to review program results and institutional performance.

8. Resource Allocation Policy Reforms: Revise and simplify regulations to distribute funds according to rural priorities unique to a region, hence lowering disparities in development projects.
9. Community Awareness and Participation: Promote rural communities' active involvement in decision-making procedures so they can hold institutions responsible and make sure initiatives meet their requirements.
10. Digital Literacy and Accessibility: Encourage digital literacy among institutional employees and rural residents to guarantee broad access to e-governance platforms and the instantaneous distribution of information (**kumarand Dar, 2020).**

References:-

1. Alagh, Y.K. 2005.Panchayati Raj and Planning in India: Participatory Institutions and Rural Roads Mimeo.
2. Alok V. N. (2011) Role of Panchayat Bodies in Rural Development since 1959.
3. Banashankari, J.L (2017) A Study on Recent Rural Development Programmes of Government of India
4. Banerjee, R. (2013). What Ails Panchayati Raj. Economic and Political Weekly, 48(30), 172-176.
5. Datta, P. 2009. "Democratic Decentralization through Panchayati Raj in Contemporary India: The Changes and Challenges", Working Paper No. 49, South Asian Institute, Department of Political Science, Heidelberg University.
6. Decentralisation in India: Challenges & Opportunities. Discussion Paper Series- 1. UNDP.
7. Government of India (2011), Report of Task Force on Panchayati Raj Institutions, Planning Commission, New Delhi (Available at http://india.gov.in/.
8. kumar, A.S. Naveen and Dar, Showkat Ahmad (2020). Role Of Panchayati Raj Institutions In Rural Development In India. Ilkogretim Online - Elementary Education Online, 19 (2), pp. 2485-2497, doi: 10.17051/ilkonline.2020.02.696838.
9. Kumar, D., Kumar, D., and Singh, B. K. (2018). Training needs assessment of Gram Panchayatmukhiya regarding health and family welfare programmes in Bihar state. International Journal for Advance Research and Development, 3(7), 9-16.
10. Roy, Moumita Saha (2024). Panchayati Raj Institutions in India: An Overview. International Journal of Research and Review, 11(12), December, E-ISSN: 2349-9788; P-ISSN: 2454-2237, DOI: https://doi.org/10.52403/ijrr.20241252.
11. Sharma, A., and Chakravarty, D. (2018). Two Decades of the Panchayati Raj. In Integrating the Third Tier in the Indian Federal System (pp. 83-121). Palgrave Macmillan, Singapore.

Website:-

1. https://www.slbcmadhyapradesh.in/geographical-map.aspx.

Figure 02: Financial Facilities Available for M.P.

KEY BANKING PARAMETER of the State

Amount in crore

Sr.	Parameters	Outstanding				Y-o-Y Variation			Y-o-Y Variation %		
		Mar'22	Mar'23	Mar'24	Mar'25	Mar'23	Mar'24	Mar'25	Mar'23	Mar'24	Mar'25
1	Total number of Branches	8,120	8,319	8,464	8779	199	145	315	2.45	1.74	3.72
2	Total number of ATMs	9,200	9,294	9,156	8,882	94	-138	-274	1.02	-1.48	-2.99
3	**Total Deposits**	**545,918**	**584,111**	**656,101**	**714,336**	**38,193**	**71,990**	**58,235**	7.00	12.32	8.88
4	**Total Advances**	**396,652**	**455,195**	**529,951**	**596,554**	58,543	74,756	66,603	14.76	16.42	12.57
5	Credit Deposit Ratio	72.66	77.93	80.77	83.51	5	3	3			
6	**Total Business**	**942,570**	**1,039,306**	**1,186,052**	**1,310,890**	**96,736**	**146,746**	**124,838**	10.26	14.12	10.53
7	Agriculture	128,430	143,712	163,077	178,745	15,282	19,365	15,668	11.90	13.47	9.61
8	crop Loans out of total agriculture	92,767	104,359	108,493	113,779	11,592	4,134	5,286	12.50	3.96	4.87
9	MSME	75,769	88,467	106,612	120,082	12,698	18,145	13,470	16.76	20.51	12.63
10	Education	2,697	2,881	3,629	4,180	184	748	551	6.82	25.96	15.18
11	Housing	45,882	56,703	72,255	81,709	10,821	15,552	9,454	23.58	27.43	13.08
12	**Priority Sector Advances**	**239,887**	**269,665**	**312,671**	**343,705**	**29,778**	**43,006**	**31,034**	12.41	15.95	9.93
13	Non-Priority Sector Advances	156,765	185,530	217,280	252,680	28,765	31,750	35,400	18.35	17.11	16.29
14	Total NPA	36,372	32,604	35,639	37,130	-3,768	3,035	1,491	-10.36	9.31	4.18

(https://www.slbcmadhyapradesh.in/docs/key_banking_parameter_05-05-2025.pdf)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

जनजातिय महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति

हेमलता डांगी*

* शोधार्थी, पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – देश में जनजातिय महिलाओं की स्थिति आजादी के 75 साल पहले हो जाने के दौरान भी आज वर्तमान समय में बहुत दयनीय स्थिति है। शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक स्थिति और सामाजिक मान्यताओं के प्रति परिवर्तन की आवश्यकता है। लेकिन इस विशाल और अनगिनत विविधता वाले देश में परिवर्तन का अंश नगण्य है। संविधान के अनुच्छेद 342 के तहत भारतीय जनजातिय महिलाओं को पुरूषों के समान ही अधिकार दिये हैं, अत्याचारों में दबी उनकी दयनीय जीवन स्थिति को रूपान्तरित करने और सामाजिक, आर्थिक और विधिक पहचान बनाने के लिए कल्याणकारी मान्यताएँ दी है फिर भी उनकी विकास की स्थिति चिंतनीय है।समय के साथ-साथ प्रत्येक समाज में परिवर्तन हुये लेकिन जनजातिय महिलाओं की स्थिति में दिन-प्रतिदिन गिरावट हो रही है। उनमें गरीबी, अंधविश्वास, अशिक्षा, यौन उत्पीड़न, ऋणी, पारिवारिक, सामाजिक, बुराई, वेश्यापन की स्थिति आज भी मौजुद है, इसका मुख्य बिंदु अंधविश्वास निर्धनता है। किसी भी समाज के निर्माण में महिलाओं की भूमिका मुख्य होती है। महिलाओं को संपत्ति का अधिकार नहीं मिलता जनजातिय क्षेत्र में डाकन प्रथा, डायन प्रथा प्रचलित है। जनजातिय समाज में महिला और पुरूष असमानता पायी जाती है। जनजातिय महिलाएँ प्रकृति पूजक होती है। पुरूष खेत में हल चलाता है जिसमें महिलाएँ भाग लेती है। घर के सभी कार्यों में महिलायें महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

किसी भी समाज का सर्वांगीण विकास तभी संभव होगा जब उस समाज के स्त्री एवं पुरूष आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक एवं राजनैतिक दृष्टि से समान रहे क्योंकि व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास एंव मनोवृत्तियों के निर्धारण में व्यक्ति की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का महत्वपूर्ण स्थान है।

जनजातिय क्षेत्र में विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक संस्थाओं जैसे- आंगनबाड़ी, ग्रामीण बैंक, सरकारी समिति, किसान सेवा केन्द्र, पंचायत की उपलब्धता ओर इनमें कार्यरत कर्मचारियों से अंत: ने जनजातिय पुरूषों को प्रभावित किया और इन संस्थाओं के प्रभाव से महिलायें भी अछूती नहीं है। ग्रामीण प्रभाव के विभिन्न पहलू हैं जिनमें प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना, तालाब, रोड़ निर्माण, आशा कार्यकर्ता, महिला बाल विकास में जनजातिय महिलायें जो 8 से 12 कक्षा तक की पढ़ाई की है काम में लगी हुई है। वर्तमान समय में शिक्षा से जागरूकता लगभग सभी भागों में पहुंच रही है। जनजातिय क्षेत्रों में बैंक के बारे में जानकारी होना, राशन कार्ड से लाभ प्राप्त करना आदि के प्रति जागरूकता है।

भारत में अनुसूचित जन जाति की जनसंख्या 2011

क्र.	राज्य/केन्द्र शासित	व्यक्ति	पुरूष	महिला
1	जम्मू और कश्मीर	1493229	776257	717072
2	हिमाचल प्रदेश	392126	196118	196008
3	पंजाब	0	0	0
4	चण्डीगढ़	0	0	0
5	उत्तराखण्ड	291903	148669	143234
6	हरियाणा	0	0	0
7	दिल्ली	0	0	0
8	राजस्थान	9238534	4742943	4495591
9	उत्तर-प्रदेश	1134273	581083	553190
10	बिहार	1336573	682516	654057
11	सिक्किम	206360	105261	101099
12	अरूणाचल प्रदेश	951821	468390	483431
13	नागालैण्ड	1710973	866027	844946
14	मणिपुर	1167422	588279	579143
15	मिजोरम	1036115	516294	519821
16	त्रिपुरा	1166813	588327	578486
17	मेघालय	2555861	1269728	1286133
18	असम	3884371	1957005	1927366
19	पश्चिम बंगाल	5296953	2649974	2646979
20	झारखण्ड	8645042	4315407	4329635
21	उड़ीसा	9590756	4727732	4863024
22	छत्तीसगढ़	7822902	3873191	3949711
23	मध्यप्रदेश	15316784	7719404	7597380
24	गुजरात	8917174	4501389	4415785
25	दमन और दीव	15363	7771	7592
26	दादर नगर हवेली	178564	88844	89720
27	महाराष्ट्र	10510213	5315025	5195188
28	आन्ध्र प्रदेश	5918073	2969362	2948711
29	कर्नाटक	4248987	2134754	2114233
30	गोवा	149275	72948	76327
30	लक्ष्यद्वीप	61120	30515	30605
31	केरल	484839	238203	246636
32	तमिलनाडु	794697	401068	393629

33	पांडिचेरी	0	0	0
34	अण्डमान निकोबार द्वीप समूह	28530	17731	13799
	भारत कुल	104545716	52547215	51998501

स्त्रोत: भारत की जनगणना 2011

जनगणना 2021 के अनुसार भारत में अनुसूचित जनजातिय की संख्या 104281034 है। यह कुल जनसंख्या का 8.6 प्रतिशत है। अनुसूचित जनजातियों के कुल 93919162 लोग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते हैं।जबकि शहरी क्षेत्रों में 10461872 लोग निवास करते हैं। अनुसूचित जनजाति ग्रामीण क्षेत्रों की कुल जनसंख्या का 11.3 प्रतिशत और शहरी क्षेत्र का 2.8 प्रतिशत है। भारत में लगभग 550 जनजातियाँ हैं। 2001 और 2011 के दौरान भारत की जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर 17.64 प्रतिशत थी। इस अवधि के दौरान अनुसूचित जनजातियों की दशकीय वृद्धि दर 23.7 प्रतिशत थी। ग्रामीण क्षेत्रोंमें अनुसूचित जनजातियों की दशकीय वृद्धि 21.3 प्रतिशत थी जबकि शहरी क्षेत्रों में यह अधिक 49.7 प्रतिशत थी। आदिवासी व्यक्तियों में लिंगानुपात प्रति 1000 पुरूषों पर स्त्रियों की संख्या 972 है।

जनजातिय महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति: जनजातिय महिलाओं की स्थिति वर्तमान में भी अत्यधिक दयनीय संविधान में महिलाओं के शोषण एवं अत्याचार, उत्पीड़न से संबंधित अनेक प्रावधानकिए गए हैंपरन्तु जनजातिय क्षेत्रों में आज भी विभिन्न प्रथाएँ, आडम्बर मौजूद हैंजैसे-

(1) अस्पृश्यता (2) वैश्यावृत्ति यौन रोगों का पनपना
(3) आर्थिक असमानताएँ (4) विधवा प्रवृत्ति
(5) बाल विवाह (6) विधवा विवाह
(7) रूढ़ीवादिता (8) स्वास्थ्य समस्या
(9) ऋण ग्रस्तता (10) निर्धनता
(11) बंधुआ मजदूरी की समस्या (12) विस्थापन
(13) अशिक्षा आदि प्रचलित है (14) पर्दाप्रथा एवं सत्तीप्रथा

(1) अस्पृश्यता या छुआछूत:- जनजाति समाज में रूढ़िवादी परम्परा आज भी जिंदा है। इस समाज में लोगों के द्वारा छुआछुत भी किया जाता है। जब किसी महिला को मासिक धर्म आता है तब परिवार के लोगों के द्वारा खान-पान में परहेज भी किया जाता है। कोई महिला को बच्चा पैदा होता है तब उसे अलग-अलग कोठरी में रखा जाता है खासकर बैगा जनजाति मेंकिया जाता है। साथ ही मासिक धर्म के दौरान मंदिर प्रवेश व घर के बाहर सोना, घर के जल व अन्य वस्तुओं को छूने नहीं दिया जाता है। प्रत्येक समाज में शिक्षा, तकनीक, आयुर्वेदिक, दवाईयाँ और परिवार नियोजन संबंधी जानकारी देकर प्रचार-प्रसार करके आदिवासी महिलाओं में उच्च स्थिति में लाया जा सकता है।

(2) आर्थिक असमानताएँ:- भारत के लोगों में आर्थिक असमानताएँ भिन्न-भिन्न पाई जाती है। गरीबी, निर्धनता, आर्थिक रूप से कमजोर धन सम्पत्ति से आदियहसब भारतीय जनजातिय लोगों में पाई जाती है। इन सभी स्थितियों को दुर करने के लिए जनजाति में कृषि कार्य, खनन कार्य में मजदूरी, अपने घर से बाहर काम करने के लिए प्रवास भी होते हैं। परिवार का भरण-पोषण आजीविका चलाने के लिए पुरूष एवं महिलाएँ मेहनती होती हैं। वे चाहती हैं कि उच्च गुणवत्ता का जीवन स्तर हो, उनके बच्चे सही ढंग से पढ़ाई-लिखाई कर सके। इस उद्देश्य से आदिवासी परिवार परिश्रमी, मेहनती होते हैं।

(3) विधवा प्रवृत्ति:- जब किसी महिला के पति की आकस्मिक मृत्यु हो जाती है तब वह विधवा हो जाती है। महिला को समाज से दुर रहने के लिए कहा जाता है। जनजाति में यह नियम लागू नहीं है। विधवा महिला दुसरा विवाह कर सके उसे अनुमति नहीं होती है।

(4) वैश्यावृत्ति यौन रोगों का पनपना:- जनजातिय महिलाओं की यह गंभीर समस्या है, लोग पर्याप्त मात्रा में जागरूक नहीं होते, शिक्षा की कमी के कारण उन्हें यौन उत्पीड़न का शिकार होना पड़ता है। कोई भी व्यक्ति कुछ पैसे का लालच देकर उसे किसी भी बड़े शहर जाकर बेच देता है। महिलाओं व कम उम्र की बच्चियों के साथ अवैध संबंध बनवाने पर मजबुर किया जाता है। अवैध कारोबार करवाया जाता है जबरन शिक्षा की कमी के कारण यौन से संबंधित रोग एच.आई.वी., एड्स (HIV, AIDS) जैसी बिमारियों का उन्हें पता नहीं होता है। इस समस्या से निपटने के लिए महिलाओं को जागरूक किये जाने की आवश्यकता है।

(5) बाल विवाह:- जनजातिय क्षेत्रों में बाल विवाह के मुख्य कारण यह माने जाते हैं कि लड़की की शादी माता-पिता द्वारा अपने उपर एक बोझ समझना, शिक्षा का अभाव, रूढ़िवादिता का होना, अंधविश्वास निम्न आर्थिक स्थिति। बाल-विवाह के दुष्परिणाम घातक शिशु व माता की मृत्युदर में वृद्धि होती है। शारीरिक और मानसिक विकास पूर्ण नहीं होता है। महिलाएँ अपनी-अपनी जिम्मेदारियों का पूर्ण निर्वहन नहीं कर पाती है।बाल-विवाह, कम उम्र में लड़की की शादी करवाना है। बाल-विवाह निषेध अधिनियम 2006 जो 1 नवम्बर 2006 से लागू है। इस अधिनियम के अनुसार लड़के की उम्र 21 वर्षसे कम या लड़की की उम्र 18 वर्ष से कम हो ऐसे विवाह को बाल-विवाह निषेध अधिनियम 2006 द्वारा प्रतिबंधित किया जाता है।

(6) रूढ़िवादिता:- रूढ़िवादी मानसिकता के कारण स्त्री चाहे जिस भी वर्ग, समूह, जाति में जन्मी हो रूढ़िवादिता परम्परा के दबाव का शिकार हो रही है। झारखण्ड, बिहार, मध्य-प्रदेश, राजस्थान आदि राज्यों रूढ़ीवादी परम्परा आज भी विद्यमान है। बलात्कार, लैंगिक असमानता, कार्यस्थल पर भेदभाव, यौन शोषण, अशिक्षा आदि का भेदभाव किया जाता है। जनजातिय महिलाएँ रूढ़िवादी परम्परा का शिकार अधिक होती हैं, जागरूकता व शिक्षा की कमी के कारण।

(7) स्वास्थ्य समस्या:- ग्रामीण दुरस्थ क्षेत्र में जनजातिय लोग नशे, यौन, कैंसर तथा मलेरिया, क्षय रोग, पीलिया, कुपोषण, उच्च शिशु मृत्यु दर, प्रजनन, अपर्याप्त भोजन आदि के शिकार हो जाते हैं। चिकित्सा सेवाएँ पर्याप्त उपलब्ध नहीं होने के कारण कई महिलाओं, बच्चों को इनका शिकार होना पड़ता है। कई ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य केन्द्र तक नहीं खुल पाये हैं। गरीब व निर्धन लोगों के संबंध में यह स्थिति काफी चिन्ताजनक बनी हुई है।

(8) ऋणग्रस्तता:- ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धन किसान मजदुर द्वारा अपनी आवश्यकताओं के कारण कर्ज लिया जाता है, आदिवासी व्यक्ति अपने कर्ज को चुकाने के लिए महिलाओं एवं बच्चों को भेजता है। जिसमें महिलाओं एवं बच्चों को शिकार होना पड़ता है।

(9) निर्धनता:-अधिकतर जनजातिय क्षेत्रों में लोगों के पास जमीन की कमी होती है, जिसमें वह अपनी आजीविका का साधन जुटा पाने में असमर्थ होने को मजबूर हो जाते हैं।

(10) बंधुआ मजदुरी की समस्या:- आदिवासी महिलाओं में बंधुआ मजदुरी एक गंभीर समस्या है, जिसमें महिलाएं कर्ज या ऋण को चुकाने के लिए जबरदस्ती काम करने के लिए बाध्य होती है, भूमिहीनता, गरीबी और कर्ज के जाल केकारण यह होता है। जो महिलाओं को इस स्थिति में धकेल देता है।

(11) विस्थापन:-जनजाति क्षेत्रों में महिलाओं को स्थानांतरित खेती बसे हुए कृषि और गैर-लकड़ी उत्पादों तक पहुंच के आधारपर निर्वाह करती है। विस्थापन और भूमि के नुकसान के साथ, महिलाएं आर्थिक स्वायत्तता खो देती है। पुरूष वर्चस्व के अधीन हो जाती है।

(12) अशिक्षा:-जनजातिय महिलाओं में अशिक्षा के कई कारण होते हैं। गरीबी, दुरस्थ स्थान, सामाजिक रूढ़ीवादीयाँ हैं। भाषा की बाधा, पारम्परिक रीति-रिवाज आदि प्रमुख कारण है।

जनजाति जनसंख्या की साक्षरता दर

वर्ष	अनुसूचित जनजाति			समस्त जनसंख्या		
	पुरूष	महिला	कुल	पुरूष	महिला	कुल
2001	59.17	34.76	47.10	75.26	53.67	64.84
2021	68.50	49.40	59.00	80.90	64.66	73.00

स्त्रोत: महारजिस्ट्रार एवं जनगणना आयुक्त कार्यालय

(13) पर्दाप्रथा एवं सतीप्रथा:-पर्दाप्रथा एक इस्लामी शब्द है जो अरबी भाषा में फारसी से आया है जिसका अर्थ होता है 'ढकना', या 'घूंघट'। पुरूषों की नजरों से दुर रखने के लिए यहप्रथा अपनायी जाती है। 20वीं सदी के उत्तारार्द्ध में इस प्रथा के विरोध के फलस्वरूप इसमें कमी आयी है, यह प्रथा राजस्थान, हरियाणा आज भी प्रचलित है। जनजातियों में पर्दाप्रथा ग्रामीण क्षेत्रों में मौजूद रहती है।

निष्कर्ष: भारतीय समाज में महिलाओं की भूमिका के समस्त पक्षों एवं उनको प्रदान संवैधानिक अधिकारों का अवलोकन करने के बाद निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि समाज में महिलाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। देश का समग्र विकास महिलाओं की भागीदारी के बिना संभव नहीं है क्योंकि देश की आधी जनसंख्या महिलाओं की है। महिलाओं की स्थिति को बदलने के लिए सरकार एवं कानूनी प्रयास तभी कारगर होंगे जब स्त्रियों को अपने अस्तित्व की सुरक्षा के लिए स्वंय को जागरूक होकर आगे आना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उदयसिंह राजपुत: आदिवासी विकास गैर सरकारी संगठन, रावत पब्लिकेशन्स, पृ.1
2. प्रो.गुप्ता शर्मा: सामाजिक मानवशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, पृ.190, 192
3. "Wikipidia:- India - Velling and the Seclusion of Women" 2021-08-02
4. मिढ़ ताला रानी (2009) Problems of Trible Education in India, नई दिल्ली।
5. डॉ. के.एस.नेत्तम और विनोद कुमार वर्मा 'आदिवासी समाज में महिलाओं की स्थिति एवं भूमिका'।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Reimagining Indian Schooling: An Analytical Study of the National Education Policy (2020) and Its Impact on School Education

Khushboo*

***Lecturer (Geography) Shaheed Colonel J. P. Janu PM Shree Senior Secondary School, Jhunjhunu (Raj.) INDIA**

Introduction - The National Education Policy (NEP) 2020 marks the dawn of a new era in the Indian educational landscape. Approved after 34 years of the 1986 policy, it attempts to address systemic challenges and align the nation's education with global standards. This policy envisions an education system rooted in Indian ethos, yet oriented toward the future needs of the 21st century. It focuses on holistic development, flexibility of learning, inclusivity, and critical thinking. The NEP is not only a policy document but also a vision statement, offering pathways for India to become a knowledge superpower. In school education specifically, NEP 2020 introduces radical reforms that redefine structures, curricula, pedagogy, assessments, and the role of teachers. This research paper critically explores these reforms and their usefulness.

Historical Background: India's previous National Policy on Education was framed in 1986 and modified in 1992. Since then, Indian society and the economy have transformed drastically. The rapid spread of technology, demographic shifts, globalization, and changes in labor markets highlighted the inadequacy of the old system. Education had become examination-oriented, rigid, and largely inaccessible to marginalized communities. Dropout rates were high, learning outcomes were low, and rote memorization overshadowed creativity and innovation. Against this backdrop, NEP 2020 emerged as a holistic reform to revitalize the entire system.

Structural Reforms: 5+3+3+4: The introduction of the 5+3+3+4 system replaces the conventional 10+2 structure. This acknowledges the psychological and developmental needs of children at various ages. The Foundational Stage (ages 3–8) integrates early childhood education with primary schooling, emphasizing play-based, discovery-oriented learning. The Preparatory Stage (8–11) builds on this foundation with light textbooks, interactive classrooms, and exploration. The Middle Stage (11–14) brings in subject specialization, while the Secondary Stage (14–18) offers depth, flexibility, and choice. This design is a departure from rigid chronological models and instead offers adaptive pathways to match children's cognitive growth. The policy also advocates for school complexes, where smaller schools share resources—labs, libraries, counselors—ensuring equity and efficiency.

Language Policy and Multilingualism: Language has long been central to Indian education debates. NEP 2020 proposes the medium of instruction to be the mother tongue or local language until Grade 5, and preferably till Grade 8. This addresses comprehension challenges faced by first-generation learners. The three-language formula is maintained but reinterpreted with flexibility: one local language, Hindi (or another Indian language), and English. Multilingual education has proven cognitive advantages such as improved problem-solving and critical thinking. Furthermore, by emphasizing Sanskrit and other classical languages, the policy seeks to strengthen cultural roots. Foreign languages may also be introduced at the secondary stage, balancing rootedness with global citizenship.

Foundational Literacy and Numeracy (FLN): A key highlight of NEP 2020 is its prioritization of foundational literacy and numeracy (FLN). The policy acknowledges that without these basic skills, students cannot progress meaningfully in higher education. To achieve this, the government launched the NIPUN Bharat Mission. It encourages activity-based learning, story-telling, peer mentoring, and community involvement to ensure every child achieves reading and numeracy skills by Grade 3. This is critical because research shows that gaps in early literacy, if unaddressed, compound over time, leading to dropouts and failures in higher classes. FLN is therefore positioned as the foundation of India's educational pyramid.

Curriculum and Pedagogy: Curricular reforms in NEP 2020 emphasize competency, creativity, and flexibility. Instead of overburdening students with content-heavy syllabi, the policy calls for a focus on core concepts, critical thinking, and experiential learning. Integration of arts, sports, and vocational training seeks to make learning joyful and

holistic. Students will no longer be forced into rigid streams like 'science' or 'arts'; instead, they may choose combinations such as Physics with Music or History with Mathematics. This multidisciplinary approach breaks barriers between vocational and academic subjects, elevating the dignity of labor and creating versatile learners.

Assessment Reforms: Examinations have been the Achilles heel of Indian education, criticized for causing stress and promoting rote learning. NEP 2020 reforms assessments to become competency-based, focusing on application of knowledge rather than recall. Board exams will be redesigned to test conceptual clarity. Students will also be allowed multiple attempts, reducing high-stakes pressure. The introduction of the Holistic Progress Card (HPC) ensures a 360-degree evaluation of the child, including academic, socio-emotional, and extracurricular domains. Peer and self-assessment will be integrated, fostering reflection and accountability among learners.

Technology Integration: Technology is recognized as an enabler in NEP 2020. Platforms like DIKSHA and PM e-VIDYA provide digital content in regional languages. Blended learning models allow students to access resources beyond classrooms. The policy also calls for teacher training in digital pedagogy, online assessments, and inclusive tools for children with disabilities. During crises like the COVID-19 pandemic, such integration ensures continuity of learning. However, the policy warns against over-dependence, emphasizing that teachers remain central to education, while technology supplements their efforts.

Equity and Inclusion: NEP 2020 is deeply conscious of India's socio-economic inequalities. It proposes targeted strategies for socio-economically disadvantaged groups (SEDGs), including scholarships, hostel facilities, remedial classes, and flexible schooling options. Children from rural, tribal, and marginalized communities will benefit from school complexes, transportation support, and community participation. Gender-sensitive curricula and inclusive pedagogy for children with disabilities are highlighted. The policy envisions education as a tool of social justice, empowering every child irrespective of caste, gender, or geography.

Teacher Empowerment: The NEP views teachers as the linchpins of educational success. It recommends four-year integrated teacher education programs that combine subject knowledge with pedagogy. Teachers are expected to undergo 50 hours of continuous professional development each year. The policy also emphasizes autonomy, recognition, and career progression for teachers. By motivating and equipping teachers with modern pedagogical tools, NEP 2020 aims to transform classrooms into spaces of creativity and innovation.

Implementation Challenges: Despite its visionary scope, NEP 2020 faces several challenges. Implementation requires enormous financial investment, estimated at 6% of GDP—a target India has historically struggled to meet. There is also the challenge of training millions of teachers, creating bilingual textbooks, and bridging the digital divide in rural areas. Additionally, education being a concurrent subject, state-level adoption may vary, creating uneven progress. Political will, inter-governmental cooperation, and active involvement of civil society will be key to overcoming these hurdles.

Conclusion: The National Education Policy 2020 is not merely a reform but a reimagination of schooling in India. By prioritizing foundational learning, promoting multilingualism, restructuring curricula, reforming assessments, and empowering teachers, it lays the groundwork for a robust, inclusive, and future-ready system. Its usefulness for school education lies in its ability to transform classrooms into hubs of creativity, curiosity, and critical thinking. However, its true impact will depend on consistent implementation, adequate funding, and the commitment of all stakeholders—government, teachers, parents, and communities. If realized effectively, NEP 2020 could be the foundation of an educational renaissance in India.

References:-

1. Government of India, Ministry of Education. National Education Policy 2020.
2. NCERT. "About PARAKH."
3. NCERT/Department of School Education & Literacy. "Holistic Progress Card (HPC) Resources."
4. Press Information Bureau (PIB), Government of India. "Salient Features of NEP, 2020." 1 Aug. 2022.
5. Ministry of Education. NIPUN Bharat Guidelines: National Mission on Foundational Literacy and Numeracy. 11 July 2021.
6. Ministry of Education. "PM e VIDYA."

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का अध्ययन

डॉ. निरुपमा शर्मा* श्रीमती माया सुथार**

* एसोसिएट प्रोफेसर, आरएमटीटीसी, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, शिक्षा विभाग, एमएलएसयू, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का अध्ययन किया गया है। अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। यह शोध उदयपुर जिले तक सीमित रखा गया है। उदयपुर जिले की घरेलू व कामकाजी माताओं के 400 बालको का चयन सोउद्देश्य विधि से किया गया। 400 बालकों मे से 200 बालक घरेलू माताओं के व 200 बालक कामकाजी माताओं के चयन किये गये। स्वनियमित अधिगम के मापन हेतु डॉ. मधु गुप्ता द्वारा निर्मित स्वनियमित अधिगम मापनी का प्रयोग किया गया। टी टेस्ट द्वारा परिकल्पना परीक्षण करने पर परिकल्पना अस्वीकृत हुई। घरेलू माताओं के बालकों व कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम मे सार्थक अन्तर पाया गया। घरेलू माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का स्तर औसत से कम तथा कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का स्तर औसत से अधिक पाया गया।घरेलू माताओं के बालकों का स्वनियमित अधिगम कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम की तुलना में निम्न पाया गया।

शब्द कुंजी – घरेलू माता, कामकाजी माता, स्वनियमित अधिगम।

प्रस्तावना – मनुष्य की प्रकृति में आदिकाल से ही सीखने की प्रवृत्ति रही है। आदिकाल से अब तक मनुष्य ने निरन्तर विकास किया हैं। इस विकास की प्रक्रिया में शिक्षा ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। एक शिक्षित व्यक्ति के लिए जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति के मार्ग खुले हुए है क्योंकि शिक्षा ज्ञान प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से हमें सफल व्यक्ति बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। 'शिक्षा जीवनपर्यनत चलने वाली प्रक्रिया है औपचारिक तथा अनौपचारिक साधनों से जीवन भर शिक्षा प्राप्त करता है। वह अपने दैनिक जीवन में अपने पर्यावरण के साथ अन्त: क्रिया करते हुए अनेक अनुभव प्राप्त करता है। इस अनुभवों से ज्ञान प्राप्त होता है वही व्यापक अर्थ मे शिक्षा है।'[1] शिक्षा सीखने का वह स्वरूप है जिसमें ज्ञान, कौशल और आदतों का एक पीढी से दूसरी पीढी में स्थानान्तरण होता है। शिक्षा ही वह माध्यम है जो बालक के व्यक्तित्व का विकास कर सामाजिक प्रकिया के सुचारू संचालन मे योगदान देती है। प्लेटो के अनुसार 'शिक्षा द्वारा युवक उस उचित तर्क की ओर प्रेरित होते है, जो नियमानुमोदित है तथा जो वयोवृद्ध एवं उत्तम व्यक्तियों के अनुभवों द्वारा सच्चे अर्थ में समर्थित हैं।'[2]

हमें शिक्षित करने में हमारे परिवार, समाज एवं राष्ट्र का भी योगदान है। बालक जिस राष्ट्र में रहता है वहा की शिक्षा व्यवस्था उसे षिक्षित होनें के अवसर प्रदान करती है। पर परिवार एक ऐसी इकाई है जिसकी यह जिम्ममेदारी होती है कि उन अवसरों से अपने बालकों को लाभान्वित करें। परिवार में बालक सभी सदस्यों से कुछ न कुछ सीखता है परन्तु बालक सबसे अधिक अपनी माता से सीखता है। बालक की प्रथम गुरू माता को माना गया है। माता का बालक के जीवन के सभी पहलुओं पर प्रभाव पडता है जैसे शारीरिक पक्ष, सामाजिक पक्ष, मानसिक पक्ष, भावात्मक पक्ष, क्रियात्मक पक्ष आदि। वर्तमान समय में माता के स्वरूप व कार्यो में बदलाव आया है, क्योकिं वर्तमान में मनुष्य की आवश्यकताएँ बढ गई है। इसके फलस्वरूप महिलाएँ भी अर्थोपार्जन हेतु कार्य कर रही है। कुछ माताएँ घर से तो कुछ घर के बाहर जाकर अर्थोपार्जन कर रही है। अत:कार्य स्तर के आधार पर माताएँ घरेलू व कामकाजी माताएँ होती है। घरेलू व कामकाजी महिलाओं की दिनचर्या में अन्तर होता है। घरेलू महिलाएँ घर, परिवार व बच्चों को अपना पूरा समय देती है, परन्तु कामकाजी महिलाएँ घर, परिवार, बच्चों के साथ अपने कार्य–क्षेत्र में भी समय देती हैं। इससे उनके परिवार व बच्चों को मिलने वाले समय व अवधान में घरेलू महिलाओं की तुलना में अन्तर हो सकता है।

उद्देश्य :

1 घरेलू माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का अध्ययन करना।
2 कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का अध्ययन करना।
3 घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम की तुलना करना।

परिकल्पना– घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

पारिभाषिक शब्दावली

घरेलू माता – कॉलिन डिक्शनरी के अनुसार 'घरेलू या गैरकर्यरत शब्द से तात्पर्य वेतन, फीस या मजदूरी के लिए नियोजित न होना; आय या उत्पादन का सृजन न करना।'[3] प्रस्तुत शोध मे घरेलू माताओं से तारत्पर्य उन माताओ से है जो केवल पारिवारिक जिम्मेदारियों का वहन करती है तथा आर्थिक सहायतार्थ कोई कार्य नही करती है।

कामकाजी माता:–वेब्स्टर कॉलेज डिक्शनरी के अनुसार' एक महिला जो आमतौर पर घर के बाहर नियमित रोजगाार के माध्यम से वेतन, मजदूरी या अन्य आय अर्जित करती है।'[4] प्रस्तुत शोध मे कामकाजी माताओं से तारत्पर्य उन माताओ से है जो विभिन्न क्षेत्रों में कार्य कर वेतन प्राप्त कर परिवार को आर्थिक सहयोग देती है।

गृह वातावरण – एम. एच. मेहता के अनुसार 'घरेलू वातावरण से तात्पर्य घर की भौतिक, सामाजिक, बौद्धिक तथा भावात्मक स्थितियों से है, जो बालक के सर्वांगीण विकास को प्रभावित करती है।'[5]

परिसीमन – प्रस्तुत शोध उदयपुर जिले की घरेलू व कामकाजी माताओं के माध्यमिक स्तर के बालको तक सीमित रखा गया है।

शोध विधि – शोध विधि शोध की प्रकृति पर निर्भर करती है। प्रस्तुत शोध में घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम की वर्तमान स्थिति का अध्ययन किया गया है अत: शोधार्थी द्वारा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यादर्श – शोध कार्य मे उदयपुर जिले के विद्यालयो का यादृच्छिक विधि से चयन किया गया। चयनित विद्यालयों से उद्देश्यपूर्ण प्रतिचयन विधि से माध्यमिक स्तर के 200 घरेलू माताओं तथा 200 कामकाजी माताओं के बालकों का चयन किया गया।

उपकरण – प्रस्तुत शोध में स्वनियमित अधिगम के मापन हेतु डॉ. मधु गुप्ता द्वारा निर्मित स्वनियमित अधिगम मापनी (मानकीकृत उपकरण) का प्रयोग किया गया।

दत्त विश्लेषण

उद्देश्य 1 : घरेलू माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का अध्ययन करना।

सारणी–1: घरेलू माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का अध्ययन

क्षेत्र	N	मध्यमान	जेड़ स्कोर	ग्रेड	स्तर
आत्म जागरूकता	200	21–54	–0.683	E	औसत से कम
योजना एवं लक्ष्य निर्धारण	200	15–26	–0.679	E	औसत से कम
आत्मप्रेरणा	200	26–15	0.692	C	औसत से अधिक
आत्मनियन्त्रण	200	31–63	0.634	C	औसत से अधिक
आत्म मूल्यांकन	200	23–50	–0.602	E	औसत से कम
आत्म संशोधन	200	19–96	–0.725	E	औसत से कम
योग	200	138–03	–0.544	E	औसत से कम

घरेलू माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म जागरूकता' का मध्यमान 21.54 व जेड़ स्कोर –0.683 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (–1.25 ls –0.51= औसत से कम) के आधार पर घरेलू माताओं के बालकों की आत्म जागरूकता का स्तर औसत से कम पाया गया।

घरेलू माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम के** क्षेत्र 'योजना एवं लक्ष्य निर्धारण' का मध्यमान 15.26 व जेड़ स्कोर –0.679 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (–1.25 to –0.51= औसत से कम) के आधार पर घरेलू माताओं के बालकों की आत्म जागरूकता का स्तर औसत से कम पाया गया।

घरेलू माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम के** क्षेत्र 'आत्म प्रेरणा' का मध्यमान 26.15 व जेड़ स्कोर 0.692 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (+0.51 से +1.25 =औसत से अधिक) के आधार पर घरेलू माताओं के बालकों की आत्म प्रेरणा का स्तर औसत से अधिक पाया गया।

घरेलू माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म नियन्त्रण' का मध्यमान 31.63 व जेड़ स्कोर 0.634 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (+0.51 to +1.25 =औसत से अधिक) के आधार पर घरेलू माताओं के बालकों के आत्म नियन्त्रण का स्तर औसत से अधिक पाया गया।

घरेलू माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म मूल्यांकन' का मध्यमान 23.50 व जेड़ स्कोर –0.602 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (–1.25 to –0.51= औसत से कम) के आधार पर घरेलू माताओं के बालकों के आत्म मूल्यांकन का स्तर औसत से कम पाया गया।

घरेलू माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म संशोधन' का मध्यमान 19.96 व जेड़ स्कोर –0.725 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (–1.25 to –0.51= औसत से कम) के आधार पर घरेलू माताओं के बालकों के आत्म संशोधन का स्तर औसत से कम पाया गया।

घरेलू माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगमका मध्यमान 138.03 व जेड़ स्कोर –0.544 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (–1.25 to –0.51= औसत से कम) के आधार पर घरेलू माताओं के बालकों का स्वनियमित अधिगम औसत से कम पाया गया।

उद्देश्य 2: कामकाजी माताओं के बालकों केस्वनियमित अधिगम का अध्ययन करना।

सारणी–2: कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का अध्ययन

क्षेत्र	N	मध्यमान	जेड़ स्कोर	ग्रेड	स्तर
आत्म जागरूकता	200	27–21	0.683	C	औसत से अधिक
योजना एवं लक्ष्य निर्धारण	200	19–52	0.679	C	औसत से अधिक
स्व प्रेरणा	200	20–54	–0.692	E	औसत से कम
स्व नियन्त्रण	200	26–11	–0.634	E	औसत से कम
स्व मूल्यांकन	200	27–95	0.602	C	औसत से अधिक
स्व संशोधन	200	25–69	0.725	C	औसत से अधिक
योग	200	147–01	0.544	C	औसत से अधिक

कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म जागरूकता' का मध्यमान 27.21 व जेड़ स्कोर 0.683 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (+0.51 to +1.25 =औसत से अधिक) के आधार पर कामकाजी माताओं के बालकों की आत्म जागरूकता का स्तर औसत से अधिक पाया गया।

कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम के** क्षेत्र 'योजना एवं लक्ष्य निर्धारण' का मध्यमान 19.52 व जेड़ स्कोर 0.679 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (+0.51 to +1.25 =औसत से अधिक) के आधार पर कामकाजी माताओं के बालकों के योजना एवं लक्ष्य निर्धारण का स्तर औसत से अधिक पाया गया।

कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म प्रेरणा' का मध्यमान 20.54 व जेड़ स्कोर –0.692 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (–1.25 to –0.51= औसत से कम) के आधार पर कामकाजी माताओं के बालकों की आत्म प्रेरणा का स्तर औसत से कम पाया गया।

कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म नियन्त्रण' का मध्यमान 26.11 व जेड़ स्कोर –0.634 प्राप्त हुआ। जेड़

स्कोर (-1.25 to -0.51=औसत से कम) के आधार पर कामकाजी माताओं के बालकों के आत्म नियन्त्रण का स्तर औसत से कम पाया गया।

कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'स्व मूल्याकंन' का मध्यमान 27.95 व जेड़ स्कोर 0.602 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (+0.51 to +1.25=औसत से अधिक) के आधार पर कामकाजी माताओं के बालकों के स्व मूल्याकंन का स्तर औसत से अधिक पाया गया।

कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म संशोधन' का मध्यमान 25.69 व जेड़ स्कोर 0.725 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (+0.51 to +1.25=औसत से अधिक) के आधार पर कामकाजी माताओं के बालकों के आत्म संशोधन का स्तर औसत से अधिक पाया गया।

कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का मध्यमान 147.01 व जेड़ स्कोर 0.544 प्राप्त हुआ। जेड़ स्कोर (+0.51 to +1.25= औसत से अधिक) के आधार पर कामकाजी माताओं के बालकों का स्वनियमित अधिगम औसत से अधिक पाया गया।

उद्देश्य 3- घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम की तुलना करना।

परिकल्पना

घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम में सार्थक अन्तर नहीं होता है।

सारणी-3

घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म जागरूकता' का मध्यमान क्रमश: 21.54 व 27.21 तथा माध्य विचलन 2.893 व 3.166 प्राप्त हुआ। मध्यमान अन्तर 5.670 तथा टी मान 18.697 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक हैं। (P=0.000:P<0.01) तात्पर्य है कि घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म जागरूकता' में सार्थक अन्तर है। मध्यमान अंकों को देखने पर यह स्पष्ट होता घरेलू माताओं के बालकों की आत्म जागरूकता कामकाजी माताओं के बालकों की तुलना में कम होती है।

घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'योजना एवं लक्ष्य निर्धारण' का मध्यमान क्रमश:15.26 व 19.52 तथा माध्य विचलन 2.003 व 2.566 प्राप्त हुआ। मध्यमान अन्तर 4.255 व टी मान 18.487 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। (P=0.00:P,0.01) तात्पर्य है कि घरेलू एवं कामकाजी माताओं के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'योजना एवं लक्ष्य निर्धारण' में सार्थक अन्तर होता है। मध्यमान अंकों को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि घरेलू माताओं के बालकों की 'योजना एवं लक्ष्य निर्धारण' कामकाजी माताओं के बालकों की अपेक्षा अधिक होती है।

घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म प्रेरणा' का मध्यमान क्रमश: 26.15 व 20.54 तथा माध्य विचलन 2.517 व 3.288 प्राप्त हुआ। मध्यमान अन्तर 5.610 तथा टी मान 19.159 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक हैं। (P=0.000:P<0.01) तात्पर्य है कि घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म प्रेरणा' में सार्थक अन्तर है। मध्यमान अंकों को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि घरेलू माताओं के बालकों की आत्म प्रेरणा कामकाजी माताओं के बालकों तुलना में अधिक होती है। घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म नियन्त्रण' का मध्यमान क्रमश: 31.63 व 26.11तथा माध्य विचलन 3.408 व 3.335 प्राप्त हुआ। मध्यमान अन्तर 5.520 व टी मान 16.372 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है।(P=0.00:P,0.01) तात्पर्य है कि घरेलू एवं कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म नियन्त्रण' में सार्थक अन्तर होता है। मध्यमान अंकों को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि घरेलू माताओं के बालकों का आत्म नियन्त्रण कामकाजी माताओं के बालकों की अपेक्षा अधिक होता है।

घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म मूल्याकंन' का मध्यमान क्रमश: 23.50 व 27.95 तथा माध्य विचलन 2.579 व 3.280 प्राप्त हुआ। मध्यमान अन्तर 4.450 तथा टी मान 15.081 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक हैं। (P=0.000:P<0.01) तात्पर्य है कि घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म मूल्याकंन' में सार्थक अन्तर है। मध्यमान अंकों को देखने पर यह स्पष्ट होता घरेलू माताओं के बालकों का आत्म मूल्याकंन कामकाजी माताओं के बालकों तुलना में कम होता है।

घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म संशोधन' का मध्यमान क्रमश: 19.96 व 25.69 तथा माध्य विचलन 2.470 व 2.958 प्राप्त हुआ। मध्यमान अन्तर 5.730 व टी मान 21.031 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है।(P=0.00:P,0.01) तात्पर्य है कि घरेलू एवं कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** के क्षेत्र 'आत्म संशोधन' में सार्थक अन्तर होता है। मध्यमान अंकों को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि घरेलू माताओं के बालकों का आत्म संशोधन कामकाजी माताओं के बालकों की अपेक्षा कम होता है।

घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** का मध्यमान क्रमश: 138.03 व 147.01 तथा माध्य विचलन 6.44 व 7.384 प्राप्त हुआ। मध्यमान अन्तर 8.975 तथा टी मान 12.952 प्राप्त हुआ जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक हैं। (P=0.000:P<0.01) तात्पर्य है कि घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के **स्वनियमित अधिगम** में सार्थक अन्तर है। इस आधार पर परिकल्पना **'घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम में सार्थक अन्तर नहीं होता है' अस्वीकृत होती है।** मध्यमान अंकों को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि घरेलू माताओं के बालकों का **स्वनियमित अधिगम** कामकाजी माताओं के बालकों तुलना में कम होता है।

शोध निष्कर्ष

1 घरेलू माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का अध्ययन करना।

घरेलू माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम के क्षेत्र आत्म जागरूकता, योजना एवं लक्ष्य निर्धारण, आत्म मूल्याकंन और आत्म संशोधन का स्तर औसत से कम पाया गया। घरेलू माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम के क्षेत्र आत्म प्रेरणा और आत्म नियन्त्रण का स्तर औसत से अधिक पाया गया। समग्र रूप से घरेलू माताओं के बालकों का स्वनियमित अधिगम औसत से कम पाया गया।

2 कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम का अध्ययन करना।

कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम के क्षेत्र आत्म जागरूकता, योजना एवं लक्ष्य निर्धारण, स्व मूल्याकंन और आत्म संशोधन

का स्तर औसत से अधिक पाया गया और आत्म प्रेरणा व आत्म नियन्त्रण का स्तर औसत से कम पाया गया। समग्र रूप से कामकाजी माताओं के बालकों का स्वनियमित अधिगम औसत से अधिक पाया गया।

3 घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम की तुलना करना।

घरेलू माताओं के बालकों का स्वनियमित अधिगम का क्षेत्र आत्म जागरूकता, स्व मूल्याकंन और स्व संशोधन कामकाजी माताओं के बालकों की तुलना में निम्न पाया गया। घरेलू माताओं के बालकों का स्वनियमित अधिगम का क्षेत्र सुरक्षा, स्व प्रेरणा और स्व नियन्त्रण कामकाजी माताओं की अपेक्षा उच्च पाया गया। घरेलू माताओं के बालकों का **स्वनियमित अधिगम** कामकाजी माताओं के बालकों तुलना में निम्न होता है।

शैक्षिक निहितार्थ व सुझाव – विद्यार्थियों की दृष्टि से यह शोध उनकी सीखने की प्रक्रियाओं, व्यावहारिक अनुशासन और आत्म नियन्त्रण को समझने मे सहायक सिद्ध होगा। माता की भूमिका बालक के मानसिक विकास एवं शैक्षिक विकास पर गहरा प्रभाव डालती है। माता का कामकाजी होना या घरेलू होना दोनो ही स्थितियाँ बालकों के लिए भिन्न –भिन्न अधिगम परिस्थितियाँ निर्मित करती है। यह अध्ययन बालकों की सीखने की प्रवृत्तियों, आत्म अनुशासन और आत्म निर्भरता के निर्माण की प्रक्रिया को गहराई से समझने मे मदद करता है। बालकों मे उत्तरदायित्व, समय प्रबन्धन, आत्म प्रेरणा, निर्णय लेने जैसे गुण पारिवारिक वातावरण से ही विकसित होते है। यह शोध बालको के लिए अपनी माताओं के कार्य–स्तर व निवास क्षेत्र के साथ अपने अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाने मे सहायक होगा। शोध से प्राप्त तथ्यों की जानकारी होने से एक अध्यापक बालक की विशेष आवश्यकताओं को ध्यान मे रख सकते हैं। यह शोध घर के वातावरण में माता की उपस्थिति या अनुपस्थिति मे बालको के नियन्त्रण सुरक्षा दण्ड, सामाजिक एकान्तता, सीखने की आदतों, आत्म अनुशासन आदि की व्याख्या करता है। भविष्य में यह अनुसंधान अन्य जिले के बालकों पर किया जा सकता है। यह शोध सामान्य व आरक्षित वर्ग के बालकों पर भी किया जा सकता है। माताओं के कार्य स्तर का **स्वनियमित अधिगम** पर प्रभाव का अध्ययन किया जा सकता है। भविष्य मे यह शोध सरकारी व निजी विद्यालयों के बालकों व बालिकाओं पर भी किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सिंह, रामपाल (2012/293), शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी, अग्रवाल पब्लिकेशन, पृ.सं.30
2. शर्मा,आर.ए.(2015):'शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया', आर.लाल बुक डिपो,पृ.सं. 3
3. www.collinsdictionary.com/dictionary/english/nonworkingwoman#:-text=adjective
4. www.collinsdictionary.com/dictionary/english/workingwoman#google_vignettee
5. मेहता, मधु एवं मेहता डिम्पल.,(2013) गृह वातावरण अनुसूची, नेशनल साइकोलोजी कारपोरेशन, आगरा
6. कपिल,एच.के.,सांख्यिकी के मूल तत्व, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा
7. गैरेट, हेनरी ई.,(1995)शिक्षा और मनोविज्ञान सांख्यिकी, कल्याणी पब्लिशर्स लुधियाना
8. www.researchgate.net

सारणी–3: घरेलू व कामकाजी माताओं के बालकों के स्वनियमित अधिगम की तुलना

स्वनियमित अधिगम		N	Mean	Std. Deviation	Mean Difference	't' score	p value
आत्म जागरूकता	घरेलू	200	21.54	2.893	5.670	18.697	0.000
	कामकाजी	200	27.21	3.166			
योजना एवं लक्ष्य निर्धारण	घरेलू	200	15.26	2.003	4.255	18.487	0.000
	कामकाजी	200	19.52	2.566			
आत्म प्रेरणा	घरेलू	200	26.15	2.517	5.610	19.159	0.000
	कामकाजी	200	20.54	3.288			
आत्म नियन्त्रण	घरेलू	200	31.63	3.408	5.520	16.372	0.000
	कामकाजी	200	26.11	3.335			
आत्म मूल्याकंन	घरेलू	200	23.50	2.579	4.450	15.081	0.000
	कामकाजी	200	27.95	3.280			
आत्म संशोधन	घरेलू	200	19.96	2.470	5.730	21.031	0.000
	कामकाजी	200	25.69	2.958			
योग	घरेलू	200	138.03	6.443	8.975	12.952	0.000
	कामकाजी	200	147.01	7.384			

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

ग्रामीण महिलाओं पर विकास योजनाओं का सामाजिक प्रभाव

डॉ. जितेन्द्र कुशवाहा*

* अतिथि विद्वान (समाजशास्त्र) म.गा.चि.ग्रा.वि.वि., चित्रकूट, सतना (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – योजनाओं के माध्यम से महिलाओं को रोजगार और स्वरोजगार के अवसर प्राप्त हुए हैं, जिससे आर्थिक आत्मनिर्भरता बढ़ी है। जननी सुरक्षा योजना और आयुष्मान भारत जैसी योजनाओं ने मातृ एवं शिशु मृत्यु दर में कमी लाई है। और स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच बेहतर की है। योजनाओं से जुड़ी ट्रेनिंग और प्रचार प्रसार से महिलाओं में शिक्षा और अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी है महिलाओं की पंचायत और स्वयं सहायता समूह में भागीदारी बढी है, जिससे वे सामाजिक निर्णय में सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। महिलाओं के विकास हेतु योजनाओं का निरंतर मूल्यांकन एवं जागरूकता और स्थानीय सहभागिता आवश्यक है।

प्रस्तावना – किसी भी राष्ट्र का उत्थान नारी शक्ति के बिना संभव नहीं है। दिशा जब तक समावेशी नही होगी तब तक वास्तविक प्रगति संभव नही है। ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं के उत्थान एवं भागीदारी के बगैर कोई भी विकास योजना सफल नही मानी जा सकती है। ग्रामीण महिला न केवल परिवार की रीढ़ होती है। बल्कि समाज की आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरचना की भी महत्वपूर्ण आधार शिलाएं धुरी होती है।

नारी स्वयं सृष्टा है, यह सर्वभौमिक सत्य है। भारत देश में शुरू से ही नारी के इस मातृरूप को आदर एवं सम्मान से देखा गया है

ग्रामीण विकास हेतु संचालित विकास योजनाएँ– ग्रामीण महिलाओं हेतु विकास योजनाओं का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं को सशक्त बनाना एवं आर्थिक स्थिति सुधारना है।

1. राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन
2. प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना
3. प्रधानमंत्री मुद्रा योजना
4. सुकन्या समृद्धि योजना
5. लाडली लक्ष्मी योजना

अध्ययन की आवश्यकता– म.प्र. में विशेष रूप से समाजशास्त्रीय मापदण्डों के संदर्भ में महिलाओं के स्थिति पर ग्रामीण विकास योजनाओं के प्रभाव पर कोई व्यवस्थित अध्ययन नही किया गया है। इसलिए महिलाओं की स्थिति में सुधार की आवश्यकता है।

शोध के उद्देश्य :

- ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति की जानकारी प्राप्त करना।
- हितग्राही महिलाओं पर विकास योजनाओं के प्रभाव का अध्ययन करना।
- विकास से जुड़ी ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक गतिशीलता का अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनाएँ:

- विकास योजनाओं से जुड़ी ग्रामीण महिलाओं में सामाजिक गतिशीलता एवं परिवर्तन पाया जाता है।
- ग्रामीण महिलाओं में विकास योजनाओं से जुड़ाव के कारण उनमें असमानता का प्रभाव कम पाया गया।

शोध विधि– शोधकार्य हेतु म.प्र. के पन्ना जिले का चयन उद्देश्य पूर्ण पद्धति से किया गया है।

अध्ययन हेतु पन्ना जिले के पांच विकासखण्ड में पन्ना विकासखण्ड का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन द्वारा किया गया है।

उपकरण– साक्षात्कार, अनुसूची, प्रश्नावली।

तालिका–1: आय के आधार पर उत्तरदाताओं का वर्गीकरण

क्र.	आयु वर्ग	संख्या	प्रतिशत
1.	युवक वर्ग (18-30)	45	22.50
2.	मध्यम वर्ग (31-45)	75	37.50
3.	वृद्ध वर्ग (46-60)	80	40.00
	कुल	200	100.00

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वाधिक महिला उत्तरदाता 46-60 वर्ष से संबंधित हैं। इस प्रकार आयु वर्गों के आधार पर यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि अध्ययन में भागीदारी आयु के साथ-साथ व्यक्तिगत कारकों से प्रभावित हो सकती है।

तालिका–2: शासन द्वारा चलाई जा रही महिला विकास योजना के बारे में जानकारी का वर्गीकरण

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	120	60.0
2.	नहीं	80	40.00
	कुल	200	100.00

उपयुक्त तालिका से स्पष्ट है कि 60 प्रतिशत महिलाओं को योजना के बारे में जानकारी है। 40 प्रतिशत महिलाओं को विकास योजनाओं की जानकारी नहीं है।

तालिका–3: शासन द्वारा चलाई जा रही योजनाओं से महिला उत्तरदाता को प्राप्त होने वाले लाभ वर्गीकरण

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	आर्थिक सहायता	120	60.0
2.	स्वरोजगार का अवसर	51	25.50
3.	प्रशिक्षण/कौशल विकास	30	15.00
4.	स्वास्थ्य सुविधाएं	100	50.00
5.	शिक्षा/छात्रवृत्ति	40	20.00
6.	आवास/गैस/राशन	129	64.50
7.	सामाजिक सम्मान/पहचान	60	30.00

उपयुक्त तालिका से स्पष्ट है कि आर्थिक सहायता स्वरोजगार के अवसर एवं प्रशिक्षण कौशल एवं स्वास्थ्य सुविधाएं और आवास का लाभ प्राप्त हो रहा है।

सुझाव– पन्ना जिले की ग्रामीण महिलाओं पर विकास योजनाओं का अध्ययन करने के पश्चात निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत हैं–

1. ग्राम स्तर पर जागरूकता शिविर, दीवार लेखन, महिला समूह बैठकों और पंचायतों के माध्यम से योजनाओं की जानकारी पहुँचाई जाए।
2. योजनाओं से जुड़ी गतिविधियों में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु उन्हें कौशल विकास का प्रशिक्षण दिया जाए।
3. स्वयं सहायता समूहों को वित्तीय संसाधनों, बैंकिंग सुविधाओं को दिया जाए।

निष्कर्ष– योजनाओं के माध्यम से महिलाओं को रोजगार और स्वरोजगार के अवसर प्राप्त हुए जिससे आर्थिक आत्म निर्भरता बझी है। जननी सुरक्षा योजना और आयुष्मान भारत जैसी योजनाओं मातृ एवं शिशु मृत्युदर में कमी आयी है और स्वासथ्य सोवाओं की पहुँच बेहतर हुयी है योजनाओं से जुडे प्रशिक्षण से महिलाओं की शिक्षा एवं अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. योजना, अंक अप्रैल 2019
2. कुरूक्षेत्र, जनवरी, 2016
3. दैनिक भास्कर समाचार पत्र।
4. बंग ठाकुरदास, 1997 हमारे गाँव में हम सरकार, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

पंचायतीराज अधिनियम के द्वारा जनजातीय महिलाओं में राजनीतिक जागरूकता का विकास (सतना जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. राजेश त्रिपाठी* कृष्णपाल सिंह परमार**

* एसो. प्रोफेसर (समाजशास्त्र) म.गा.चि.ग्रा.वि.वि., चित्रकूट, सतना (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (समाजशास्त्र) म.गा.चि.ग्रा.वि.वि., चित्रकूट, सतना (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारत गाँव का देश है भारत की अधिकतर जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है। देश में तीन तरह का समाज पाया जाता है जनजातीय समाज, ग्रामीण समाज एवं शहरी समाज। जनजातीय समाज अत्यंत पिछड़ा एवं अविकसित होने के कारण विकास की मुख्य धारा से नहीं जुड़ पाता है। अत: जनजातीय समाज को पंचायतीराज अधिनियम के माध्यम से जागरूक करने का प्रयास किया जा रहा है। इसी का परिणाम है कि जनजातीय समाज में सकारात्मक बदलाव देखने को मिल रहे हैं। जनजातीय महिलाओं में राजनीतिक जागरूकता का विकास। किसी ने कल्पना नहीं की होगी कि पंचायत में महिला आरक्षण उन्हें सशक्त बना देगा। जनजातीय समाज की महिलाओं में क्षमता और ऊर्जा का कोई अभाव नहीं है अगर समाज उनका साथ दे तो जनजातीय महिलाएं पंच और सरपंच से अधिक विकास कर वे अपने अनुभव के आधार पर अपने आप को विधान सभाओं और लोकसभा में जाने के लिए तैयार कर सकेंगी।

प्रस्तावना – भारत देश में प्राचीन काल से पंचायतों का किसी न किसी रूप में अस्तित्व रहा है। पंचायत को स्वशासन की इकाई माना जाता है स्वायत्तशासी संस्थाएं लोकतंत्र का मूलाधार है सही लोकतंत्र की स्थापना तभी मानी जा सकती है जब देश के निचले स्तरों पर लोकतांत्रिक संस्थाओं का प्रसार किया जाए और उन्हें स्थानीय विषयों का प्रशासन चलाने की स्वतंत्रता प्राप्त हो। ये संस्थाएं ही लोकतंत्र की सर्वश्रेष्ठ पाठशाला एवं लोकतंत्र की सर्वश्रेष्ठ प्रत्याभूति हैं। पंचायती राज की स्थापना का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण जीवन का सर्वांगीण विकास करना है।

प्राचीन काल में भारत में पंचायती राज व्यवस्था का विकास हुआ उसका राजनीतिक स्वरूप कम और सामाजिक अधिक था। ग्राम पंचायत गांव के संपूर्ण जीवन को दिशा देती थी तथा भारतीय ग्रामीण जीवन स्वावलंबी था। स्वतंत्रता के बाद गांधी जी के ग्राम स्वराज के स्वप्न को साकार करने के लिए संविधान निर्माता ने संविधान में अनुच्छेद 40 को सम्मिलित किया। 24 अप्रैल 1993 को राष्ट्रपति के हस्ताक्षर होने के बाद यह विधेयक 73वां संविधान संशोधन अधिनियम बना और पंचायतीराज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया। भारत में पंचायतीराज के स्तर पर महिलाओं की व्यापक भागीदारी को दुनिया के सामने सही ढंग से प्रस्तुत करना होगा।

अध्ययन के उद्देश्य – इस शोध अध्ययन के निम्नलिखित महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं:

1. पंचायती राज अधिनियम के द्वारा जनजातीय महिलाओं में राजनीतिक जागरूकता के विकास की जानकारी प्राप्त करना।
2. इस अध्ययन के माध्यम से पंचायतीराज अधिनियम के कारण पंचायत में जनजातीय महिलाओं की भागीदारी की जानकारी प्राप्त करना।
3. निर्वाचित जनजातीय महिला जनप्रतिनिधियों द्वारा प्राप्त अधिकारों एवं उनके द्वारा किए जाने वाले दायित्वों के निर्वहन की सही जानकारी प्राप्त करना।

अध्ययन क्षेत्र – म.प्र. प्रस्तुत शोध जनजातीय बहुल सतना जिले के संदर्भ में किया गया है। अत: जिले के सभी विकासखण्डों को इस अध्ययन में शामिल किया गया है।

न्यादर्श का चयन – न्यादर्श शोध का आधार होता है न्यादर्श से प्रदत्तों का संकलन कर उनका विश्लेषण एवं व्याख्या की जाती है फिर परिणाम और निष्कर्ष पर पहुंचा जाता है। शोधार्थी शोध अध्ययन हेतु न्यादर्श का चयन यादृच्छिक चयन पद्धति के आधार पर जिले के विकासखण्डों को समान प्रतिनिधित्व देते हुए प्रत्येक विकास खंड से 4-4 प्रतिनिधि कुल 20 जनप्रतिनिधि, 10-10 जनजातीय नागरिक कुल 50 जनजातीय नागरिक, 4-4 समाजसेवी कल 20 समाजसेवी एवं 2-2 अधिकारी कुल 10 अधिकारियों को न्यादर्श में चयनित किया गया

परिकल्पना – पंचायतीराज अधिनियम द्वारा लोकतंत्र के विकेन्द्रीकरण कि दिशा में जनजातीय महिलाओं में राजनीतिक जागरूकता के विकास की जानकारी कई स्रोतों एवं आकड़ों को सत्यापित करके ही ज्ञात की जा सकती हैं।

शोधार्थी की परिकल्पना इस प्रकार है:

1. शोध क्षेत्र के पंचायतों के चुनाव में जनजातीय महिलाएं बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रही हैं।
2. शोध क्षेत्र की निर्वाचित जनजातीय महिलाअपने दायित्वों का निवर्हन ठीक ढंग से कर रही हैं।

शोध प्रविधि– अनुसंधान कार्य में पंचायतीराज अधिनियम के कारण एस.टी. महिला में सही एवं विश्वसनीय जानकारी हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। उपकरण के रूप में साक्षात्कार, अनुसूची के माध्यम से

प्रदत्तों का संकलन किया गया। संग्रहण व्याख्या विश्लेषण द्वारा वस्तु स्थिति की जानकारी प्राप्त की।

जनजातीय महिलाओं के राजनीतिक जागरूकता के विकास की जानकारी-

उपकरण- साक्षात्कार, अनुसूची, प्रश्नावली।

तालिका क्रमांक-1: क्या पंचायतीराज अधिनियम के कारण पंचायतों के चुनाव में जनजातीय महिलाएं बढ़-चढकर भाग ले रही हैं?

उत्तरदाता -ओं का वर्ग	उत्तरदाता -ओं की संख्या	हाँ		नहीं		नहीं पता	
		संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
जनप्रतिनिधि	20	13	65%	05	25%	02	10%
जनजातीय नागरिक	50	29	58%	08	16%	13	26%
समाजसेवी	20	14	70%	04	20%	02	10%
अधिकारी	10	06	60%	03	30%	01	10%
कुल योग	100	62	62%	20	20%	18	18%

उपरोक्त तालिका क्रमांक-01 स्पष्ट है कि चयनित 100 उत्तरदाताओं में जनप्रतिनिधि, जनजातीय नागरिक, समाजसेवी एवं अधिकारी शामिल हैं, जिनमें 60 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार पंचायतीराज अधिनियम के कारण जनजातीय महिलाएँ पंचायत चुनाव में बढ़-चढ़कर भाग ले रही हैं। जबकि 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने माना है कि पंचायतीराज अधिनियम के कारण जनजातीय महिलाएँ पचायत चुनाव में बढ़-चढकर भाग नहीं ले रही हैं तथा 18 प्रतिशत ने कहा कि उन्हें इस संबंध में जानकारी नहीं है।

तालिका क्रमांक-2: क्या पंचायतीराज अधिनियम के कारण निर्वाचित जनजातीय महिला जनप्रतिनिधि अपने दायित्वों का निवर्हन ठीक ढंग से कर रही हैं?

उत्तरदाता -ओं का वर्ग	उत्तरदाता -ओं की संख्या	हाँ		नहीं		नहीं पता	
		संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
जनप्रतिनिधि	20	14	70%	05	25%	01	05%
जनजातीय नागरिक	50	13	66%	14	28%	03	06%
समाजसेवी	20	15	75%	04	20%	01	05%
अधिकारी	10	06	60%	03	30%	01	10%
कुलयोग	100	68	68%	26	26%	06	06%

उपयुक्त तालिका क्रमांक 02 से स्पष्ट है कि न्यादर्श में चयनित कुल 100 उत्तरदाताओं में जनप्रतिनिधि, जनजातीय नागरिक, समाजसेवी एवं अधिकारी शामिल हैं, जिनमें 68 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि पंचायतीराज अधिनियम के कारण निर्वाचित एस.टी. महिला जनप्रतिनिधि अपने दायित्वों का निवर्हन ठीक ढंग से कर रही है। जबकि 26 प्रतिशत का मानना है कि जनजातीय महिला जनप्रतिनिधि अपने दायित्वों का निवर्हन ठीक ढंग से नहीं कर रही है तथा 06 प्रशित उत्तरदाताओं ने कहा कि उन्हें इस संबंध में जानकारी नहीं है।

निष्कर्ष- उपरोक्त तालिकाओं के विश्लेषण से स्पष्ट है कि पंचायतीराज अधिनियम के कारण पंचायतों के चुनाव में जनजातीय महिलाएं बढ़-चढ़कर भाग ले रही हैं और अपने दायित्वों का निवर्हन भी ठीक ढंग से कर रही हैं तथा जनजातीय महिलाओं में राजनीतिक जागरूकता का विकास हुआ है।

सुझाव:

1. स्वार्थी राजनैतिक तत्वों को जनजातीय समाज से दूर रखा जाए।
2. समय-समय पर जागरूक अभियान चलाया जाए।
3. स्वयंसेवी संगठनों की सहभागिता सुनिश्चित की जाए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. दत्स विजय रंजन (1997), पंचायतीराज संकल्पना और वर्तमान स्वरूप, वाराणसी।
2. योजना, अंक जनवरी, (2014)
3. बंग ठाकुरदास, (1997) हमारे गाँव में हम सरकार, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

युवा मतदाता व्यवहार को प्रभावित करने वाले तत्व एवं वर्तमान राजनीति पर उसके परिणाम का अध्ययन

बाथूसिंह डावर* डॉ. मनीष चौधरी**

*शोधार्थी, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, डॉ. अम्बेडकर नगर (महूँ) इन्दौर भारत
** शोध निर्देशक, माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – भारत एक लोकतांत्रिक देश है, भारत के संविधान में कहा गया है कि भारतीय संसद में निर्वाचन हेतु जनप्रतिनिधित्व कानून सन 1950 – 1951 ई. में पारित हुआ जनप्रतिनिधित्व कानून पारीत करके मतदाताओं की मतदान सूचियों के निर्माण निर्वाचन क्षेत्रो का निर्धारण संसद तथा राज्य विधानसभाओं की सदस्य संख्या का निर्धारण निर्वाचन प्रबंध संचालन की प्रशासनिक व्यवस्था का गठन निर्वाचन एवं उपनिर्वाचन आदि की व्यवस्था का प्रबंध किया गया है। पिछले 35 वर्षो की अवधि में आवश्यकतानुसार कानून एवं इनके अंतर्गत निर्मित उपनियमों का संशोधन भी किया गया। इन सभी संशोधन या परिवर्तनो का लक्ष्य निर्वाचन की विशुद्धता की रक्षा करना और निर्वाचनों में होने वाले भ्रष्टाचार को कम करना है।

भारतीय संविधान में कहा गया है कि भारत में निष्पक्ष और स्वतंत्र निर्वाचनों को महत्व देते हुए जिनका अनुसरण कनाडा राज्य से लिया गया है। उन्हौने संवैधानिक मान्यता प्रदान की गई, और संविधान के भाग 15 के ख. 6 में अनुच्छेद 324 से 329 में इनका विस्तृत वर्णन किया गया है निर्वाचन व्यवस्था को स्थाई बनाया गया ताकि भारत में चुनाव समय–समय पर हो सके। आज भारत का हर युवा मतदाता जागरूक होता जा रहा है। युवा वर्ग के राजनीतिक मतदान व्यवहार की जागरूकता का अध्ययन करना।

मतदान व्यवहार प्रत्येक देश की राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, मतदाताओं का मतदान व्यवहार किसी देश की राजनीति दशा या दिशा तय करता है, मतदान व्यवहार विभिन्न कारकों पर निर्भर है, जो समय, स्थान व परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहता है, मतदान व्यवहार में भारत को विभिन्न विद्वानो ने अलग–अलग मत व्यक्त किये है।

उल्लेखनीय है कि भारत में सर्वभौमिक (मतदान व्यवहार) व्यस्क मताधिकार की अवधारणा को अपनाया गया है, इसका अर्थ है कि भारत के नागरिकों को मतदान करने के लिए किसी विशेष योग्यता की आवश्यकता नही होगी, बल्कि एक निश्चित आयु पूर्ण कर लेने के बाद उन्हे मतदान करने के लिए पात्र माना जाएगा। पहले भारत में मतदान की न्यूनतम आयु 21 वर्ष निर्धारित की गई थी लेकिन 61 वे संविधान संशोधन अधिनियम के माध्यम से मतदान करने की न्यूनतम उम्र 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर दी गई। यानी अब 18 वर्ष की आयु पूरी कर लेने वाला प्रत्येक भारतीय नागरिक मतदान करने के लिए पात्र होता है। मतदान व्यवहार का सामान्य अर्थ मतदाताओं की उस मन:स्थिति से होता है, जिसमें प्रभावित होकर मतदाता मतदान करता है, यानि मतदान व्यवहार इस बात को इंगित करता है कि लोगो ने क्या सोचकर मतदान किया है। मतदाताओ का मतदान व्यवहार सार्वजनिक चुनावों के परिणाम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, मतदाता व्यवहार एक राजनीतिक के साथ–साथ मनोवैज्ञानिक अवधारणा है।

धार जिले की अधिकांश जनसंख्या अनुसूचित जनजाति वर्ग की है और अनुसूचित जनजाति वर्ग में इस जिले में भील, भीलालों की संख्या सबसे ज्यादा हैं और सबसे ज्यादा कुक्षी तहसील में निवास करते है।

धार जिला मध्यप्रदेश राज्य का एक जिला हैं तथा ऐतिहासिक शहर के साथ ही जिले का प्रशासनिक मुख्यालय है। जिले का क्षेत्रफल 8153 वर्ग किलोमीटर है। यह पश्चिम में झाबुआ, उत्तर में रतलाम, पूर्वोत्तर में उज्जैन, पूर्व में इन्दौर, दक्षिण में बड़वानी जिले से घिरा है। यह मध्यप्रदेश के इन्दौर संभाग का हिस्सा है। 2011 की जनगणना के अनुसार इस जिले की कुल जनसंख्या 21,85,793 हैं। सन 2001 में जिले की आबादी 17,40,577 थी। जिसमें 25.60 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इसमें अनुसूचित जनजाति का प्रतिशत 55.94 है। तथा अनुसूचित जाति का प्रतिशत 66.5 है।

पीथमपुर एक बड़ा औद्योगिक क्षेत्र है जो धार जिले के अंतर्गत आता है। इस जिले के पूर्व और पश्चिम में विंध्य पर्वतमाला स्थित है जिले के उत्तरी भाग में मालवा पठार स्थित हैं, जिसके उत्तर पश्चिम भाग में माही नदी और उनकी सहायक नदियां बहती है। जबकि जिले के पूर्वोत्तर भाग में चम्बल नदी है, जो यमुना नदी के माध्यम से गंगा नदी में मिलती है जिले की विंध्य पर्वतमाला के दक्षिण भाग में नर्मदा नदी है, जो जिले की दक्षिणी सीमा के रूप में कार्य करती है।

मध्यप्रदेश के धार जिले के अंतर्गत मुख्यत: चार जनजातियां – भील, भीलाला, बरेला, पटलियां निवास करते है। भील जनजाति के संबंध में भारत के प्राचिन साहित्यों में उल्लेख मिलता है। रामायण में शबरी भील, महाभारत में एकलव्य भील सर्व विदित हैं कुछ विद्वानों का मत हैं कि यह शब्द संस्कृत भाषा के भील शब्द का तद्भव रूप हैं जिसका अर्थ भेदने की प्रक्रिया से है। मध्यप्रदेश के पर्वतीय वन मण्डलों में भीलों का विस्तार अधिक हैं मध्यप्रदेश में अनुसूचित जनजाति में गोड़ जनजाति की जनसंख्या सर्वाधिक है। इसके बाद भील जनजाति का दुसरा स्थान है। भील जनजाति झाबुआ, थांदला, अलिराजपुर, पेटलावद, धार, बड़वानी, खरगोन, कुक्षी, आमझेरा एवं रतलाम के क्षेत्र में निवास करते है।

शोध का चयन – उपरोक्त शोध में यह जानने का प्रयास किया जायेगा कि अध्ययन क्षेत्र धार जिले के अनुसूचित जनजाति वर्ग में राजनीतिक जागरूकता का क्या स्तर है? वर्तमान में निर्वाचन पर उसके परिणाम क्या है? निर्वाचन में मताधिकार के रूप में किस हद तक उनकी वे जागरूक है। शासन की कल्याणकारी योजनाओं के द्वारा अनुसूचित जनजाति वर्ग के लाभार्थियों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन में क्या बदलाव आया हैं ? इस योजना द्वारा रोजगार की समस्या का कहां तक निवारण हो पाया हैं ? तथा शासन की कल्याणकारी योजना कहा तक सफल रही है ? और उनसे अनुसूचित जनजाति वर्गो में विकास हुआ हैं इसका अध्ययन किया जावेगा।

शोध का महत्व – शोध के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया जावेगा कि अनुसूचित जनजाति वर्ग में राजनैतिक चेतना की वृद्धि क्यों नहीं हो पा रही है। तथा उनके बीच नेतृत्व उभरकर क्यों नहीं आया हैं।

लेकतंत्र में निर्वाचन के प्रति उनकी अभीरूचि को किस प्रकार बढ़ाया जा सकता है। और उनकी सहभागिता में कैसे वृद्धि कि जा सकेगी इनत तथ्यों का अध्ययन किया जायेगा।

शासन की कल्याणकारी योजनाओं द्वारा उनके रोजगार की वृद्धि तथा उनकी निर्धनता कैसे दूर की जाये। उनके स्वास्थ्य के प्रति कैसे तीव्र सुधार किया जा सकें। उनके लिए स्वच्छ पेय–जल की कैसे व्यवस्था की जायें। उनकी साक्षरता विशेष कर लड़कियों की साक्षरता में वृद्धि की जाए इन उपर्यूक्त तथ्यों को जानने का प्रयास किया जायेगा।

परिकल्पना :

1. शहरी क्षैत्र मे मतदान व्यवहार सहज होती है।
2. धार जिले के युवा मतदाता के मतदान व्यवहार में सुधार हुआ है।
3. जिलें में युवा मतदाता के कल्याणकारी योजनाओं से अत: मतदान व्यवहार प्रभावित होता है।
4. ग्रामीण समाज में मतदान के लिए जागरूकता की आवश्यकता है।
5. शहरी क्षैत्र में मतदाता अधिक जागरूक होते है।
6. राजनैतिक दल जाति विशेष को खड़ा करके प्रभावित करते है।
7. राजनैतिक दलों द्वारा प्रतिलोभन देकर मतदान व्यवहार को प्रयास किया जाता है।
8. युवा वर्गो को मतदान करते समय वह जाति, धर्म, हिंसा, संप्रदाय वाले युवा व्यक्तियों को अलग करके उसे मतदान के द्वारा बाहर किया जाता है और उसी प्रकार के सुधार प्रक्रिया कि उपलब्धता और खामियों का परिक्षण करने में मदद मिलेगी।
9. राजनीतिक प्रचार से प्रभावित करते है
10. ग्रामीण क्षेत्र में राजनीतिक दल का प्रभाव।
11. धार जिले में युवा मतदाता व्यवहार में आर्थिक सुधार हुआ।

उद्देश्य:

1. स्थानीय अथवा राष्ट्रीय चुनाव में मतदान के लिए रूझान।
2. किसी राजनैतिक दल एवं दबाव समूह के प्रति उनकी सक्रीय सदस्यता।
3. युवा मतदाता व्यवहार के समग्र विकास हेतु शासन द्वारा बनाई गई योजनाओं का अध्ययन करना।
4. युवा मतदाता के विकास हेतु शासन द्वारा स्वीकृत किये गयें बजट से कियें गये विकास की जानकारी प्राप्त करना।
5. युवा मतदाता के शैक्षणिक तथा सामाजिक विकास के लिए प्रारंभ किये गयें विभिन्न कार्यक्रमों के क्रियांवयन की जानकारी प्राप्त करना।
6. युवा मतदाता के आर्थिक उत्थान हेतु प्रारंभ कि गई कल्याणकारी योजनाओं से लाभांवित वर्गो का पता लगाना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दूबे श्यामचरण, आदिवासी भारत, राजकमल, प्रकाशन देहला पृ 3।
2. शेषन टी.एन. और हाजारिका संजय : (1995) 'भारत पतन की और' राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली।
3. सूद जे.पी. : (1956) 'भारत का राष्ट्रीय आंदोलन एवं संवैधानिक विकास' प्रकाशक जयप्रकाश एण्ड कंपनी, मेरठ।
4. गुरूमुख निहालसिंह – (1961) 'भारत का संवैधानिक एवं राष्ट्रीय विकास' भाग आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली।
5. जयनारायण पाण्डेय – (1969) 'भारत का संविधान' सेंट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद।
6. सुभाष कश्यप – (1969) 'निर्वाचन पूर्व चुनाव आयोग की अपील भारत में निर्वाचन समस्याएं एवं सुधार', दिल्ली।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Analysis of Adolescent Girls Health and Wellbeing Status in Rajasthan

Dr. Babita*

***Assistant Professor (Sociology) S.K. Govt.Girls College, Sikar (Raj.) INDIA**

Abstract: Based on recent research, the health and well-being of adolescent girls in Rajasthan remain a critical public health concern, with interconnected challenges stemming from socio-cultural norms and systemic issues. A prominent finding across studies is the high prevalence of child marriage, which directly correlates with early pregnancy, maternal mortality, and limited educational opportunities. Research indicates a significant proportion of young women are married before the legal age, with marriage decisions often made without their consent.

Malnutrition and anemia are also widespread, with a majority of adolescent girls suffering from iron deficiency. A study in western Rajasthan found over half of school-going adolescent girls was anemic, highlighting inadequate dietary intake and limited knowledge about nutrition. Furthermore, access to sexual and reproductive health (SRH) services is a major barrier. Despite awareness of contraception, girls often hesitate to seek services due to social stigma, shyness, and a fear of judgment. While government initiatives like Adolescent Friendly Health Clinics (AFHCs) exist, their effectiveness is hampered by issues of privacy, lack of awareness, and inconsistent quality of care. Research suggests that while there has been some progress, a comprehensive, multi-sectoral approach is needed to address the persistent challenges of child marriage, malnutrition, and limited SRH access, ultimately empowering adolescent girls to make informed decisions about their health and future.

Keywords: Adolescent, Health, Malnutrition, Anemia, Child Marriage.

Introduction - Adolescence is a transitional stage of life from puberty to adulthood which ranges between 10 to 19 years of age (WHO, 2014). A spectrum of physical, psychological, and social and development occurs during this period. There are more than 1.2 billion adolescents worldwide, constituting 18 percent of the total global population. India is home to more than 243 million adolescents, which is nearly one fifth of its total population (UNICEF, 2011) Rajasthan has 15.7 million adolescents, which is 23 percent of the state's total population (Census, 2011).

Adolescents' health can be impacted by transitional conditions and social determinants of health, even if they are not typically at risk for infectious diseases (Laski, 2015). During this stage of life, individuals may experience or worsen critical health issues such as substance misuse, depression, anxiety, mood disorders, eating disorders, and more (Sunitha and Gururaj, 2014). These health concerns can impact adolescent development, leading to increased disease rates and economic burdens for individuals, caregivers, families, and communities. While many adolescent issues are universal, some are more prevalent in developing nations. One such issue is child marriage.

Globally, over 700 million women marry before the age of 18, with the majority living in low- and middle-income countries (UNICEF, 2014). report that the number is increasing by 37,000 each day and nearly 15 million annually. Child marriage affects almost one-third of girls in poor countries, leading to various health and socioeconomic implications (UNICEF, 2014). Child marriage has a significant impact on adolescent girls' scholastic and economic chances, in addition to health concerns. Early marriage can lead to teenage pregnancy, increasing fertility and population increase (Wodon et al., 2017). It impacts maternal health outcomes to varied degrees. Adolescent females under 15 have a roughly five times higher risk of dying during childbirth than women in their 20s (IWHC, 2017). They are more likely to experience pregnancy-related injuries such as obstetric fistula, unsafe sexual practices, unsafe abortions, and sexually transmitted diseases, among other issues. Teenage pregnancies can lead to higher infant mortality and morbidity rates, posing a significant risk to public health. According to Raj A et al. (2010), children born to adolescent mothers are at risk for low birthweight, stunting, and other nutritional problems. A research by Presler-Marshall and Jones (2017) found that child marriage

causes 6.3% of under-five stunting, highlighting its long-term impact. According to Shekar, Dayton Eberwein, and Kakietek (2016), undernutrition can result in a loss of over 10% of GDP in sub-Saharan Africa and South Asia due to decreased productivity.

Child marriage has long-term effects on offspring's brain development and cognitive capacities (Wodon, 2016). Early marriage can lead to maldistribution of power and intimate partner violence, negatively impacting both the victim and their offspring and increasing the risk of violence in adulthood (UNFPA, 2014, WHO, 1997).

According to NFHS-3 (2006), around 47% of married women aged 20-24 were married before the legal marriageable age in India, which is 18. A decade later, approximately 27% of women in the same age group reported getting married before the legal age (NFHS-4). Child marriage is more prevalent among rural populations. Education plays a significant role in reducing child marriages, as women with 12 or more years of schooling had a median age at first marriage of 22.7 years, compared to 17.2 years for those without. The rate of child marriage in Rajasthan is significantly higher than the national average. 35.4 percent of respondents in the same age group married before reaching the legal marriage age. In rural Rajasthan, the frequency is much greater, at 40.5% (NFHS-4).

Anemia is a significant health issue among adolescents, particularly in developing nations. Reduced hemoglobin concentration, red cell count, or packed cell volume can decrease oxygen transport in tissues. Anemia is defined by the World Health Organization as varying levels of hemoglobin in different demographic groupings. Anemia is defined as having a hemoglobin concentration of less than 12 gm/dL in children aged 12-15 years and non-pregnant women over 15 years. Children under 5 years and pregnant women have a level of less than 11 gm/dL. Men over 15 years old have a level of less than 13 gm/dL indicating anemia.

In 2015-16, 53% of women aged 15 to 49 years in India had anemia (hemoglobin level <12 gm/dl), with 40% having mild anemia (hemoglobin level between 10 to 11.9 gm/dl), 12% having moderate anemia (hemoglobin level between 7 to 9.9 gm/dl), and 1% having severe anemia (hemoglobin level less than 7 gm/dl) (NFHS-4). In India, the prevalence is significantly higher among those with lower wealth indexes (58.6 percent) than those with higher wealth indexes (48.1 percent). Rural women had a higher prevalence (54.2%) than their urban counterparts (50.8%).

In Rajasthan, 47 percent of women aged 15 to 49 are anemic as of 2015-16. This includes 35% mild anemia, 11% moderate anemia, and 1% severe anemia (NFHS-4). Anemia is more common in children aged 6 to 59 months, accounting for 60% of cases. Adolescent girls may suffer from anemia due to decreased food intake and increased blood loss during menstruation. According to the 2014 Annual Health Survey, 81.4 percent of adolescent females in Rajasthan suffer from anemia. Anemia is more prevalent in vulnerable populations, including those living in rural or tribal areas, with poor wealth and education, even within the national situation (NFHS-4:Rajasthan, 2016b).

Adolescent mental health is a major public health concern that impacts their development, quality of life, and future productivity. Neuropsychiatric diseases are a prominent cause of impairment among young people worldwide (WHO, 2018). Many mental health illnesses emerge in late childhood or early adolescence (13). According to WHO (2018), mental health disorders affect 10-20% of children and adolescents, with half developing by the age of 14 and the other three-quarters by mid-20s.

The prevalence of various psychiatric diseases has been estimated in India by a number of psychiatric epidemiology researches. Poor access to mental health care is frequently caused by a lack of knowledge about mental health and related problems in the nation. Only patients with severe mental illnesses are typically identified and treated, depriving those with less serious mental illnesses of prompt diagnosis and care (Math and Srinivasaraju, 2010). Many of these conditions start in adolescence and, if untreated, can persist into adulthood, raising the illness burden and making treatment more challenging and expensive.

Research on the precise frequency of various mental health conditions among Indian teenagers is severely lacking . Epidemiological data from nations with comparable circumstances, however, demonstrate the prevalence of mental and developmental illnesses and their effects on health-seeking behavior as well as other aspects of their lives. Previous epidemiological research, which took into account the entire range of child and adolescent age groups, i.e., 0–19 years, have shown the prevalence of mental problems in children and adolescents in the Indian context. The total prevalence from seven school-based research on 5687 children and adolescents and sixteen community-based studies on 14594 children and adolescents was obtained by a systemic review and metaanalysis (Savita Malhotra, 2014). It was shown that the frequency of mental health issues in children and adolescents was 6.7% in the general population and 23% in schools.

In addition to these studies, national research revealed that 7.3% of youth between the ages of 13 and 17 suffer from mental illnesses (MoHFW, 2016). Children in urban metro areas have a prevalence that is almost twice as high (13.5%) as children in rural areas (6.9%). Depressive disorders (2.6 percent), intellectual disability (1.7 percent), agoraphobia (2.3 percent), autism (1.6 percent), psychotic disorders (1.3 percent), and phobic anxiety disorders (1.3 percent) are among the major ailments. In a study based on the state of Himachal Pradesh, the survey also calculated the prevalence of alcohol consumption at 7.2 percent, anxiety at 15.5%, depression at 6.9 percent, and tobacco addiction at 7.6–14 percent (MoHFW, 2016). Although there

is a lack of evidence to determine the true prevalence of mental health issues among Rajasthan's teenagers, their high prevalence in other states highlights the importance of assessing and managing these diseases in the state.

Adolescent girls in Rajasthan face a unique set of challenges that impact their health and overall well-being. A combination of socio-cultural factors, economic conditions, and a lack of access to information and services creates a complex web of issues that require targeted interventions.

Data: The authors gathered the necessary data for their investigation from a variety of sources. The researchers analyzed census data, government publications, and large-scale surveys like the National Family Health Survey. The authors searched Pub Med and Google Scholar for relevant keywords and reviewed published literature without a time frame. They studied published reports and documentation from development agencies in Rajasthan. They also gathered administrative data from the Department of Women and Child Development, Government of Rajasthan.

Review of Literature

Child marriage has economic and social implications that affect individuals and the population as a whole. According to Wodon et al. (2017), child marriage promotes early childbearing, negatively impacting reproductive health and raising lifelong expenses. Indirect costs of adolescent motherhood include healthcare expenditures for their children, missing educational opportunities, decreased productivity, and lower quality of life (UNFPA, 2013). According to Parsons et al. (2015), the societal costs of child marriage include intimate partner abuse, lack of autonomy and decision-making, inadequate awareness of healthcare and rights, under-utilization of services, and poverty at the household level. Child marriage has negative consequences for society, including increased childbearing, population growth, illiteracy, bad health, and poverty. Ending child marriage can provide significant benefits to the nation (UNFPA, 2012). Education benefits not just individuals, but also their family members and future generations. According to Vikram, Vanneman, and Desai (2012), children of educated mothers are more likely to obtain schooling, immunizations, and other benefits in their futures. This reduces healthcare expenditures, social expenses, and improves overall economic outcomes. Field et al. (2016) concluded that providing cooking oil to unmarried women in Bangladesh was a cost-effective intervention. It's important to understand the societal environment, as girls are generally viewed as an expense in comparison to boys who are seen as future earners.

This view contributes to higher incidence of child marriage among poor individuals.

In India, both the state and central governments have the authority to pass legislation on education. The Indian government's flagship program, Sarva Shiksha Abhiyan (SSA), aims to achieve Universal Elementary Education (UEE) in phases (NIC-RJ, 2018). The 86th amendment to the Indian Constitution mandates compulsory schooling for children aged 6-14 years. SSA prioritizes assisting vulnerable girls and boosting technical education to address the digital divide in the country.Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan, begun in 2009, aims to improve access to high-quality secondary education (GoI, 2016). The goal was to increase enrollment to 75%, up from 52.26 percent in 2005-06. This program aims to improve education standards and eliminate inequality based on gender, disability, and socioeconomic status.

In 2010-11, the centrally-sponsored 'Rajiv Gandhi Scheme for Empowerment of Adolescent Girls (RGSEAG) SABLA' was piloted in 205 districts across all States and UTs. The program aimed to improve the dropout rate of girl students, increase literacy rates among women, decrease the number of girls marrying before the age of 18, and promote female work participation (GoI, 2015b). Similar schemes like as Kishori Shakti Yojana, Beti Bachao Beti Padhao, and Aapki Beti Yojana aim to empower women via education and life skills training (GoI, 2015a).

Government of Rajasthan has created its own initiative called Mukhyamantri Rajshree Yojana which gives cash incentives for parenting and educating daughters who are defined as Lakshmi (goddess of prosperity) of the households (GoRJ, 2018a). This plan was launched in June 2016. From birth till class XII, parents can receive up to Rs. 50,000 in incentives to ensure their girl child's education, health, and care. Other state schemes, such as Palanhar Yojana and Mukhya Mantri Hunar Vikash Yojana, attempt to enhance the educational and economical situation of disadvantaged adolescents who are orphaned or living in institutions (GoRJ, 2018b).

The Government of India launched the Rashtriya Kishor Swasthya Karyakram (RKSK) program on January 7, 2014, with a focus on adolescent participation and leadership, equity and inclusion, and strategic partnerships with other sectors and stakeholders (NHM, 2013). This program aims to promote gender equity and empower teenagers to make educated and responsible decisions about their health and well-being. Initiatives aim to improve adolescent girls' autonomy and delay their first marriage (NHM, 2015a).

Key Health and Wellbeing Indicators

Child Marriage and Early Pregnancy: Rajasthan has historically had a high prevalence of child marriage. The National Family Health Survey (NFHS) data indicates a significant percentage of women in the 20-24 age group were married before the legal age of 18. This has severe consequences, including a higher risk of maternal mortality, which is three to five times higher for adolescent mothers than for women in their twenties. Early marriage also often leads to early and repeated pregnancies, posing significant health risks to both the mother and the child.

Offering incentives to Rajasthan in order to postpone

child marriage: State governments use conditional cash transfers to prevent child marriage among girls at all stages of their lives, from institutional delivery to marriage at the legal age of 18. These projects try to break the idea that girls are a burden to the household.

1. In 1994, the Haryana government launched Apni Beti Apna Dhan (ABAD), often known as "Our Daughter, Our Wealth." The project aimed to promote girls' education and increase their marriage age by changing family attitudes towards girls.
2. In a research on the cycle distribution program in Bihar to close the gender gap in secondary education, females' enrollment increased by 30%. The cycle distribution program increased females' enrollment more than other conditional cash transfer schemes in similar situations. transferring non-cash items or consumables generates externalities that outweigh the cash value of similar initiatives, making them more likely to succeed.

The suggested intervention aims to improve the effectiveness and efficiency of incentives for girls to delay marriage by applying lessons learned from previous schemes.

Analysis of data: The child marriage rate is typically measured as the percentage of women aged 20-24 who were married before the age of 18. The baseline child marriage rate in Rajasthan is 35.4% (NFHS-4). The number of females marrying before the age of 18 is expected to be around 2.4 lakh over the next four years, or approximately 60,000 per year. According to data from the National Family Health Survey (NFHS), the child marriage rate in Rajasthan has shown a decline between NFHS-4 and NFHS-5.

Here are the specific figures for Rajasthan:

NFHS-4 (2015-16): The percentage of women aged 20-24 who were married before the age of 18 was 35.4%.

NFHS-5 (2019-21): The percentage of women aged 20-24 who were married before the age of 18 decreased to 25.4%.

This represents a significant decrease of 10 percentage points over the period. Despite this reduction, Rajasthan's child marriage rate remains higher than the national average.

Malnutrition and Anemia: Anemia is a widespread problem among adolescent girls in Rajasthan and India as a whole. Studies have shown that a large proportion of girls in the 15-19 age group are anemic. This is often linked to inadequate dietary choices, lack of access to nutritious food, and a need for better iron and folic acid supplementation.

NFHS-4 (2015-16): The prevalence of anemia among adolescent girls was 54.1%.

NFHS-5 (2019-21): The prevalence of anemia among adolescent girls increased to 59.1%.

This indicates a concerning rise of 5 percentage points in a short period. Anemia is a significant public health issue in India, and adolescent girls are particularly vulnerable due to factors like menstruation, poor nutrition, and early marriage and pregnancy. The data highlights the need for more effective public health interventions to address this issue.

Adolescent girls are more prone to anemia for many reasons. Adolescent girls endure chronic blood loss from monthly menstrual cycles (NHLBI, 2014). Adolescent girls, especially those who marry before 18 and reside in rural regions, typically begin having children in late adolescence and frequently have several pregnancies. According to Masukume et al. (2015), moms who have had multiple pregnancies and births are more likely to acquire chronic anemia. Adolescent females are more likely to suffer from chronic iron deficiency anemia due to hormonal changes during pregnancy and lactation (WHO, 2006). According to MoHFW (2013), adolescent females often neglect nutrition, which is crucial for their growth and development. Adolescent girls are more likely to experience recurring infections, including urinary tract infections, which can lead to anemia. Adolescent girls tend to contribute more to home tasks than boys. Iron-deficiency anemia is a risk for those who work hard and eat poorly. The proposed intervention will specifically target adolescent females due to their increased prevalence and severity of anemia. The intervention can be scaled up with design tweaks to include all adolescents, regardless of gender.

The strategy aims to provide weekly iron and folic acid supplements, as well as biannual deworming, to all females aged 10-19 in Rajasthan. Beneficiaries will participate in a monthly one-hour awareness building exercise to improve their compliance with timely drinking. This initiative will involve trained instructors in schools and community healthcare providers, with an emphasis on out-of-school adolescent girls. To ensure timely delivery of supplements and materials, providers both within and outside the school will create a demand chart at least two months before distribution.

Sexual and Reproductive Health (SRH): Adolescent girls often have limited knowledge and access to sexual and reproductive health information and services. Surveys have found that while a majority of adolescent girls may be aware of methods to delay pregnancy, many are hesitant to seek services due to social stigma, shyness, and fear of judgment. This can lead to a high unmet need for contraception and a lack of agency in making decisions about their own bodies.

Menstrual Hygiene: Menstruation is often surrounded by stigma, taboos, and misconceptions. A significant number of adolescent girls, especially in rural areas, do not have access to or use hygienic menstrual products. This can lead to health problems, including reproductive tract infections (RTIs).

Mental Health: The mental health of adolescents is an emerging concern. While data is limited, studies suggest that mental health problems, such as depression, are present among adolescent populations in the state. Factors

like gender discrimination, pressure to marry early, and lack of opportunities contribute to this issue.

Education and Opportunities: Child marriage and early motherhood often force girls to drop out of school, limiting their educational and economic opportunities. This perpetuates a cycle of poverty and vulnerability, as girls with less education are more likely to have less agency and decision-making power in their lives.

Government Initiatives and Interventions: The Government of Rajasthan, along with the central government, has implemented various schemes and programs to address these challenges:

Rashtriya Kishor Swasthya Karyakram (RKSK): This is a national program aimed at improving the health and well-being of adolescents. It focuses on nutrition, sexual and reproductive health, mental health, injuries and violence, and substance abuse. Initiatives under this program include Adolescent Friendly Health Clinics (AFHCs) and "Adolescent Health and Wellness Days."

Scheme for Adolescent Girls (SAG): This centrally sponsored scheme targets out-of-school adolescent girls in the 11-14 age group. It provides supplementary nutrition, health check-ups, and life skills education, with the goal of mainstreaming these girls back into formal schooling or skill training.

Mukhyamantri Rajshri Yojana: This state-level scheme provides financial assistance to families on the birth of a girl child to improve her health and educational status and encourage a positive mindset towards girls. The assistance is provided in installments from birth until she completes her higher secondary education.

Mukhya Mantri Hamari Betiyan Yojana: This scheme provides financial assistance to meritorious girl students to pursue their studies up to the postgraduate level, with the aim of promoting girls' education.

Challenges to Implementation: Despite these initiatives, several challenges hinder the effective implementation of these programs:

Societal Barriers: Deep-rooted socio-cultural norms, such as gender discrimination and the pressure for early marriage, are significant obstacles.

Lack of Awareness: Many adolescents and their parents are unaware of the available health services, resources, and government schemes, which limits their utilization.

Limited Access to Services: While initiatives like AFHCs exist, there can be a lack of privacy, limited availability of female providers, and inadequate infrastructure, which discourages adolescents from seeking help, especially for sensitive issues.

Geographic and Economic Disparities: The challenges are often more pronounced in rural and tribal areas, where poverty, limited infrastructure, and cultural practices further exacerbate the issues.

Decision and conclusion: Adolescence allows youngsters to become responsible and productive citizens, leading to meaningful lives in the future. To address health concerns for millions of adolescents in Rajasthan, families, communities, cultures, and the nation must work together. Child marriage and anemia are major barriers to adolescent females' growth.

Adolescents, regardless of gender, have mental health challenges due to many risk factors, including their age and sociobehavioral characteristics.

This analysis shows that child marriage, anemia in adolescent girls, and juvenile mental diseases have significant economic and social implications for both individuals and the economy. The indirect costs of disease on families and the state's economy often outweigh the direct expenses to the affected adolescent. Policymakers must prioritize ensuring the health of adolescents and the general community.

Incentives for child marriage prevention, both conditional and unconditional, have been demonstrated to reduce rates, improve educational attainment, and lead to increased production. Transferring incentives to households can delay the marriage age for girls in Rajasthan, but it's crucial to shift societal attitudes towards girl children. Efforts are underway at both the state and national levels to address gender disparities, but there is still more work to be done.

Referances:-

1. WHO (2014) *Adolescence: a period needing special attention - recognizing-adolescence*.Available at: http://apps.who.int/adolescent/second decade/section2/page1/recognizingadolescence.html (Accessed: 30 March 2018).
2. UNICEF (2011a) *Adolescence - An Age of Opportunity | UNICEF*. Available at:http://unicef.in/PressReleases/87/Adolescence-An-Age-of-Opportunity (Accessed: 30 March 2018).
3. Census of India (2011) *Single Year Age Return by Residence and Sex: Census of India : Officeof the Registrar General & Census Commissioner, India*. Available at: http://www.censusindia.gov.in/2011 census/C-series/C-13.html (Accessed: 30 March 2018).
4. Laski, L. and Expert Consultative Group for Every Woman Every Child on Adolescent Health(2015) 'Realising the health and wellbeing of adolescents.', *BMJ (Clinical research ed.)*. British Medical Journal Publishing Group, 351, p.h4119. doi: 10.1136/BMJ.H4119
5. Sunitha, S. and Gururaj, G. (2014) 'Health behaviours & problems among young people in India: cause for concern & call for action.', *The Indian journal of medical research*. Wolters Kluwer — Medknow Publications, 140(2), pp. 185–208. Available at:http://www.ncbi.nlm.nih.gov/pubmed/25297351 (Accessed: 30 March 2018).
6. Wodon, Q. *et al.* (2017) 'ECONOMIC IMPACTS OF CHILD MARRIAGE: GLOBAL SYNTHESIS BRIEF

OVERVIEW'. Available at: https://www.icrw.org/wpcontent/uploads/2018/02/ICRW_Brief_Global Synthesis.pdf (Accessed: 30 March 2018).
7. IWHC (2017) *The Facts on Child Marriage - International Women's Health Coalition*. Availableat: https://iwhc.org/resources/facts-child-marriage/ (Accessed: 21 April 2018).
8. Raj, A. *et al.* (2010) 'The effect of maternal child marriage on morbidity and mortality of children under 5 in India: cross sectional study of a nationally representative sample.', *BMJ (Clinical research ed.)*, 340, p. b4258. Available at:http://www.ncbi.nlm.nih.gov/pubmed/20093277 (Accessed: 21 April 2018).
9. Presler-Marshall, E. and Jones, N. (2017) 'The adolescent imperative Policy briefing Shapingpolicy for development odi.org'. Available at:https://www.odi.org/sites/odi.org.uk/files/resource-documents/11646.pdf (Accessed: 21April 2018).
10. Shekar, M., Dayton Eberwein, J. and Kakietek, J. (2016) 'The costs of stunting in South Asiaand the benefits of public investments in nutrition', *Maternal & Child Nutrition*.Wiley/Blackwell (10.1111), 12, pp. 186–195. doi: 10.1111/mcn.12281.
11. Wodon, Q. (2016) 'Early Childhood Development in the Context of the Family: The Case of Child Marriage', *Journal of Human Development and Capabilities*. Routledge, 17(4), pp. 590–598. doi: 10.1080/19452829.2016.1245277
12. UNFPA, W. (2014) *Causes of gender-based violence | The response to Gender-Based Violencein Eastern Europe and Central Asia*. Available at: http://www.healthgenderviolence.org/guidance-for-health-care-professionals-in-strengthening-health-systemresponses-to-gender-based-vi-0 (Accessed: 21 April 2018).
13. WHO (1997) 'Violence against women Health consequences'. Available at:http://www.who.int/gender/violence/v8.pdf (Accessed: 21 February 2018).
14. NFHS-3 (2006) 'NFHS 3 Report: Key Indicators for India'. Available at:http://rchiips.org/NFHS/pdf/India.pdf (Accessed: 30 March 2018).
15. NFHS-4:India (2016a) 'India National Family Health Survey (NFHS-4) Government of India'.Available at: http://rchiips.org/NFHS/NFHS-4Reports/India.pdf (Accessed: 30 March 2018).
16. NFHS-4:Rajasthan (2016a) 'Ministry of Health and Family Welfare State Fact Sheet Rajasthan'.Available at: http://rchiips.org/NFHS/pdf/NFHS4/RJ_FactSheet.pdf (Accessed: 30 March2018).
17. WHO (2018) 'Child and adolescent mental health', *WHO*. World Health Organization.Available at: http://www.who.int/mental_health/maternal-child/child_adolescent/en/(Accessed: 30 March 2018).
18. Math, S. B. and Srinivasaraju, R. (2010) 'Indian Psychiatric epidemiological studies: Learning from the past.', *Indian journal of psychiatry*. Medknow Publications and Media Pvt. Ltd.,52(Suppl 1), pp. S95–S103. doi: 10.4103/0019-5545.69220.
19. Savita Malhotra, B. N. P. (2014) 'Prevalence of child and adolescent psychiatric disorders in India: a systematic review and meta-analysis', *Child and Adolescent Psychiatry and Mental Health*. BioMed Central, 25(2), pp. 251–259. doi: https://doi.org/10.1186/1753-2000-8-22.
20. MoHFW, G. (2016) *National Mental Health Survey of India*, *National Mental Health Survey of India*. Available at: http://indianmhs.nimhans.ac.in/Docs/Summary.pdf (Accessed: 23September 2017).
21. UNFPA (2013) 'Motherhood in Childhood'. Available at:https://www.unfpa.org/sites/default/files/pub-pdf/EN-SWOP2013.pdf (Accessed: 21 April 2018).
22. Parsons, J. *et al.* (2015) 'Economic Impacts of Child Marriage: A Review of the Literature', *The Review of Faith & International Affairs*. Routledge, 13(3), pp. 12–22. doi:10.1080/15570274.2015.1075757
23. UNFPA (2012) 'Marrying too young end child marriage'. Available at:https://www.unfpa.org/sites/default/files/pub-pdf/MarryingTooYoung.pdf (Accessed: 21April 2018).
24. Vikram, K., Vanneman, R. and Desai, S. (2012) 'Linkages between maternal education and childhood immunization in India.', *Social science & medicine (1982)*. NIH Public Access, 75(2), pp. 331–9. doi: 10.1016/j.socscimed.2012.02.043.
25. GoI (2016) *Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan (RMSA) | Government of India, Ministry of Human Resource Development*. Available at: http://mhrd.gov.in/rmsa (Accessed: 30 March2018).
26. GoI (2015a) *Kishori Shakti Yojana | Ministry of Women & Child Development | GoI*.Available at: http://wcd.nic.in/kishori-shakti-yojana (Accessed: 30 March 2018).
27. GoI (2015a) *Kishori Shakti Yojana | Ministry of Women & Child Development | GoI*.Available at: http://wcd.nic.in/kishori-shakti-yojana (Accessed: 30 March 2018).
28. GoRJ (2018a) *Mukhya Mantri Rajshree Yojana*. Available at:http://suraaj.rajasthan.gov.in/hi/rajshree-yojana (Accessed: 30 March 2018).
29. GoRJ (2018b) *Palanhar Yojana*. Available at:http://sje.rajasthan.gov.in/schemes/Palanhar.html (Accessed: 30 March 2018).
30. NHM (2013) *Rashtriya Kishor Swasthya Karyakram - Governnment of India*. Available at:http://nhm.gov.in/rashtriya-kishor-swasthya-karyakram.html (Accessed: 30 March 2018).
31. NHM (2015a) *RKSK Guidelines - Governnment of India*. Available at:http://nhm.gov.in/nhm/nrhm/guidelines/nrhm-guidelines/arsh.html (Accessed: 31 December 2017).

32. NHLBI (2014) 'Iron-Deficiency Anemia'. National Heart, Lung, and Blood Institute, NIH (US).Available at: https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pubmedhealth/PMH0063057/ (Accessed: 21 April2018).
33. Masukume, G. *et al.* (2015) 'Risk factors and birth outcomes of anaemia in early pregnancy in a nulliparous cohort.', *PloS one*. Public Library of Science, 10(4), p. e0122729. doi:10.1371/journal.pone.0122729.
34. WHO (2006) 'A Review of the Situation in Selected South-East Asian Countries'. Available at:http://apps.searo.who.int/pds_docs/B0239.pdf (Accessed: 21 April 2018).
35. MoHFW (2013) *Adolescent Anaemia*. Available at:http://pib.nic.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=93467 (Accessed: 21 April 2018).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Analytical Study of Social and Economic Factors of Deforestation in Chhattisgarh State

Dr. Kajal Moitra* Sharmistha Manna**

*Professor and Head (Geography) Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Research Scholar (Geography) Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.) INDIA

Abstract : Forests are among the most vital natural resources that sustain ecological stability and human survival. They perform a wide range of ecological functions such as regulating climate, conserving soil and water, maintaining biodiversity, and sequestering carbon. Beyond their environmental importance, forests also provide food, fuel, fodder, and raw materials for millions of people, particularly in regions where local communities remain heavily dependent on natural resources for daily subsistence. In India, and specifically in Chhattisgarh, forests hold an even deeper significance because of their socio-cultural connection with tribal communities, who view them not merely as economic resources but as integral elements of their cultural and spiritual life.

Chhattisgarh, often referred to as the "rice bowl of India" and the "heart of tribal India," is characterized by a dense forest cover, rugged plateaus, and mineral-rich lands. The state accounts for nearly 44 percent of its geographical area under forest cover, making it one of the most forested states in the country. Forests in Chhattisgarh are home to diverse flora and fauna, some of which are rare and endangered. These landscapes serve as the ecological backbone of the state and contribute significantly to India's overall biodiversity.

Keywords : Local communities, its geographical area, forest cover.

Introduction - Yet, despite these ecological and cultural values, Chhattisgarh has been experiencing steady deforestation over the past decades. Rapid changes in land use patterns, industrial growth, mining expansion, and infrastructural development have exerted increasing pressure on forest resources. This deforestation has far-reaching implications, not only for the environment but also for the livelihoods of millions, especially the tribal populations who constitute more than 30 percent of the state's population.

Understanding deforestation requires distinguishing between two levels of causality. The **proximate causes** are the immediate human activities that directly result in forest clearance or degradation, such as agricultural expansion, logging, mining, and settlement growth. On the other hand, the **underlying forces** represent the broader socio-economic, political, and institutional structures that indirectly drive these proximate actions. These include population dynamics, poverty, governance failures, market pressures, and policies favoring extractive development. A comprehensive analysis of deforestation in Chhattisgarh must therefore consider both levels, since proximate causes are often symptoms of deeper systemic issues.

Review of Literature

Deforestation in India has been a widely discussed subject in academic and policy research, particularly in states like Chhattisgarh where forest cover plays a central role in the livelihood of indigenous and rural populations. Several studies emphasize that both social and economic factors act as major drivers of forest degradation.Scholars have highlighted the role of population growth and demographic pressure in increasing the demand for cultivable land and forest resources. Expansion of agriculture through shifting cultivation, clearing of forest patches, and encroachment on reserve forests has been identified as a major cause of forest loss (Sharma, 2019). In Chhattisgarh, where tribal communities depend heavily on forest products, such practices become more pronounced due to limited alternative livelihood opportunities.

From the economic perspective, industrialization and mining activities have significantly contributed to large-scale deforestation. Chhattisgarh, being rich in minerals like iron ore, coal, and bauxite, has witnessed extensive clearance of forests for mining leases and industrial corridors (Verma & Singh, 2020). Several reports suggest that the economic policies encouraging industrial expansion often overlook the ecological costs, resulting in biodiversity loss and displacement of local populations.The dependence on forest-based livelihoods such as fuelwood collection, grazing, and minor forest produce has also been recognized as an important factor (Patel, 2021). These subsistence activities, while small-scale individually, collectively exert

enormous pressure on forest ecosystems, leading to gradual degradation.

Cultural and social dimensions are equally significant. Studies point out that traditional beliefs, customary rights over land, and shifting cultivation practices of tribal groups often clash with formal forest conservation policies (Das, 2018). The enforcement of protected areas without adequate participation of local communities sometimes intensifies illegal extraction, as livelihood needs remain unmet.Government initiatives and forest policies in Chhattisgarh have been evaluated in past research. While Joint Forest Management (JFM) and community forestry programs have shown potential in reducing forest degradation, their success largely depends on community participation and equitable benefit-sharing (Kumar, 2022). However, gaps remain in effectively balancing economic development with ecological conservation.

Overall, the literature suggests that deforestation in Chhattisgarh is not the result of a single factor, but rather the outcome of the interaction of social, economic, and cultural processes. While population growth, agricultural expansion, and livelihood dependence form the proximate causes, underlying forces include poverty, inadequate policy implementation, and market-driven demand for resources.

Objectives of the study:

1. To analyse social factors of deforestation in Chhattisgarh state.
2. To analyse Economic factors of deforestation in Chhattisgarh state.

Research Methodology: The presented research paper is based on primary and secondary data. Observation and interview method has been used for collection of primary data and for secondary data, relevant data has been obtained from offices.

Analysis

A. Social factors for deforestation: Chhattisgarh, often referred to as the “Rice Bowl of India,” is one of the most resource-rich states in the country, endowed with dense forests, rich biodiversity, and vast mineral reserves. Forests cover a significant portion of its geographical area, forming the backbone of tribal culture, livelihoods, and ecological balance. However, deforestation in Chhattisgarh has emerged as one of the most critical environmental challenges of the last few decades. While ecological and economic reasons are widely studied, the **social factors driving deforestation** remain deeply influential. Human behavior, lifestyle patterns, social structures, demographic shifts, poverty, cultural practices, and institutional dynamics together shape the way forests are used and misused. Understanding these social factors is crucial to address deforestation in a state where forest and people share such a long-standing symbiotic relationship.

1. Population Growth and Pressure on Land: The population of Chhattisgarh has been rising steadily, and with it, the pressure on land resources. A large share of the population lives in rural areas, where people directly depend on forests for subsistence. The expansion of villages, construction of housing, demand for firewood, and small-scale farming all exert pressure on forest lands. In tribal-dominated districts like Bastar, Dantewada, Kanker, and Korba, communities traditionally practiced shifting cultivation and collected forest produce for survival. While these practices were once sustainable due to lower population densities, today they have become unsustainable because the same forests are required to meet the needs of a much larger population. Thus, demographic expansion directly contributes to forest degradation.

2. Dependence on Firewood and Biomass: One of the major social factors responsible for deforestation in Chhattisgarh is the heavy reliance on firewood for cooking, heating, and household energy needs. Even in recent decades, a large section of rural and tribal households continue to use traditional biomass energy rather than cleaner alternatives like LPG or electricity. This dependence results in large-scale daily extraction of wood from nearby forests. In areas with limited income, purchasing alternative fuels is either unaffordable or inaccessible. Women and children often spend hours collecting fuelwood, reflecting both the economic and social dimensions of this dependence. The cumulative effect of thousands of families collecting firewood every day has drastically reduced forest density in several regions of the state.

3. Poverty and Livelihood Dependency: Poverty is deeply linked with deforestation in Chhattisgarh. Many rural households have limited income opportunities beyond agriculture and forest produce collection. For poor families, forests are not just a source of food and firewood but also provide income through minor forest products like tendu leaves, sal seeds, mahua flowers, lac, honey, and medicinal herbs. These products are often collected in unsustainable quantities, sometimes involving cutting of branches or burning of undergrowth to increase yield. Similarly, the collection of timber for household construction or for selling illegally is often driven by immediate financial needs. The cycle of poverty pushes people into overexploitation of resources, and at the same time, the destruction of forests deepens poverty by reducing the availability of forest products in the long run.

4. Agricultural Expansion and Shifting Cultivation: Agricultural practices are another important social driver of deforestation. In tribal areas of Chhattisgarh, shifting cultivation (locally known as “bewar” or “podu”) was once carried out on a small scale, with long fallow periods that allowed forests to regenerate. However, with population growth and reduction in available land, the fallow period has shortened drastically. Families are compelled to clear more forested areas each year, leading to permanent deforestation rather than regenerative cycles. Additionally, subsistence farmers frequently extend cultivation into forest margins to meet food needs. The expansion of paddy

cultivation, especially in low-lying forest-rich areas, has resulted in the clearing of large tracts of forest land, thereby accelerating deforestation.

5. Grazing Pressure and Livestock Rearing: Animal husbandry is central to rural and tribal livelihoods in Chhattisgarh. Cattle, goats, and buffaloes are often grazed freely in forest lands. With the increasing livestock population, grazing pressure on forests has become unsustainable. Overgrazing prevents natural regeneration of young plants and causes compaction of soil, leading to further degradation. Communities often cut young saplings for fodder, undermining reforestation efforts. Social practices such as maintaining large herds for status or traditional reasons also add to this pressure. In this way, grazing emerges as a subtle but powerful social factor in the deforestation process.

6. Cultural Practices and Religious Traditions: Tribal communities of Chhattisgarh share deep cultural bonds with forests. Rituals, festivals, and local traditions often involve the use of wood, flowers, leaves, and animal sacrifices. For example, large quantities of wood are required for traditional marriage ceremonies, cremation practices, and village festivals. While these activities are part of the cultural identity of tribal life, their cumulative demand on forest resources is significant. Furthermore, hunting, though declining, remains a traditional practice in some areas, contributing to disturbance of forest ecosystems. Thus, cultural traditions—while deeply valuable—sometimes indirectly contribute to forest exploitation.

7. Urbanization and Social Aspirations: With the spread of education, communication, and exposure to urban lifestyles, rural and tribal populations are increasingly aspiring for modern facilities. This has created new social demands such as the need for permanent housing, furniture, and consumer goods. As a result, timber extraction for household construction or sale has increased. Migration to towns for work has also altered consumption patterns, with families spending more on market goods that require packaging, firewood, and raw materials derived from forests. Social aspirations, therefore, influence the scale and type of forest resource use in both direct and indirect ways.

8. Social Exclusion and Weak Institutional Integration: Another important social factor behind deforestation in Chhattisgarh is the limited integration of tribal communities with formal governance structures. Many forest dwellers are either unaware of or excluded from schemes meant to regulate forest use and provide alternatives such as subsidized fuel, fertilizers, or irrigation. Weak participation in local institutions, lack of negotiating power, and fear of external authorities often push communities to rely exclusively on forest resources. At the same time, the intrusion of non-tribal groups into tribal areas for logging or land grabbing further alienates indigenous people from their traditional habitats, causing conflict and unregulated exploitation.

9. Illiteracy and Lack of Environmental Awareness: Low literacy rates in many tribal-dominated areas of Chhattisgarh have contributed to the persistence of unsustainable practices. Without adequate knowledge about long-term ecological consequences, people continue to overexploit forests. For example, cutting green trees for firewood or clearing steep slopes for cultivation may provide short-term benefits but cause long-term damage through soil erosion and reduced fertility. Lack of awareness also means that communities often fail to adopt alternative practices like agroforestry, fuel-efficient stoves, or sustainable harvesting methods. This absence of awareness, combined with poverty, accelerates forest degradation.

10. Social Conflicts and Displacement: Chhattisgarh has been affected by conflict situations, particularly in tribal belts like Bastar and Dantewada, due to insurgency and counter-insurgency operations. Displacement of villagers from their homes, either due to conflict or development projects like mining, roads, and industries, has a major social impact on forests. Displaced communities are often resettled in new areas, where they clear forests to build homes and cultivate land. Social unrest also weakens community institutions that traditionally regulated forest use, leaving forests more vulnerable to exploitation.

11. Gender Dimensions of Forest Use: In tribal society, women are the primary collectors of firewood, medicinal plants, and edible forest products. Their daily survival needs directly depend on forest resources. However, their limited decision-making power in formal institutions means that their voices are often unheard in forest governance. This gendered social structure results in overdependence on forests for household needs without adequate institutional support for sustainable alternatives. In this way, gender roles, combined with lack of empowerment, become a social factor that indirectly fuels deforestation.

12. Migration and Changing Social Relations: Seasonal and permanent migration from rural areas to cities in search of work has also reshaped forest use. When men migrate, women and elderly people are left to manage households, leading to greater dependence on nearby forests for fuel and fodder. At the same time, remittances from migration sometimes lead to new consumption patterns—construction of bigger houses, buying of livestock, or investment in farming—that increase pressure on forests. Thus, migration creates both direct and indirect social pathways that contribute to deforestation.The problem of deforestation in Chhattisgarh cannot be explained solely in terms of economic or ecological pressures. It is deeply rooted in social structures, traditions, lifestyles, and community needs. Population growth, poverty, dependence on firewood, cultural rituals, agricultural practices, and weak institutional integration together drive the exploitation of forests. The issue is further complicated by gender roles,

illiteracy, social exclusion, and conflict-related displacement. Addressing deforestation in Chhattisgarh therefore requires not just technical or legal interventions but a holistic social approach—one that recognizes the dependence of people on forests, respects their cultural practices, provides sustainable alternatives, and strengthens local institutions. Conservation policies must be people-centric, ensuring that tribal communities are active participants rather than victims of forest governance. Only by acknowledging and addressing these social dimensions can Chhattisgarh strike a balance between ecological preservation and human well-being.

Table 1: factor of Deforestation

Social Factor	Link to Deforestation
Population Growth	Expanding villages, increased demand for land, firewood, and cultivation leads to forest clearance.
Dependence on Firewood	Daily extraction of wood for cooking and heating reduces forest density.
Poverty & Livelihood Needs	Overharvesting of timber and NTFPs to meet income and survival needs depletes forest resources.
Agricultural Expansion	Shifting cultivation and paddy farming push into forest areas, reducing forest cover.
Grazing Pressure	Overgrazing by cattle and goats prevents regeneration and damages saplings.
Cultural & Religious Practices	Rituals, festivals, and traditional ceremonies demand wood, plants, and animals from forests.
Urbanization & Aspirations	Increased demand for timber, furniture, and construction materials accelerates deforestation.
Social Exclusion	Weak integration with institutions and intrusion by outsiders cause unregulated forest use.
Illiteracy & Lack of Awareness	Unsustainable practices like green tree felling and slope farming degrade forests.
Conflict & Displacement	Villager displacement due to insurgency and development projects leads to fresh clearing of forests.
Gender Roles	Women's heavy dependence on forests for household needs, without institutional support, fuels overuse.
Migration	New consumption patterns and land clearing in resettled areas increase forest pressure.

Source: Primary Data.

Economical factors of deforestation : Deforestation in Chhattisgarh is not merely an ecological issue but also a deeply rooted economic phenomenon. The state, known as the "Rice Bowl of Central India" and endowed with nearly **44 percent forest cover**, is also one of the richest in terms of mineral and forest resources. Its economic activities—ranging from mining and industrialization to agriculture and fuelwood extraction—have created enormous pressures on forests. While forests sustain the tribal economy, they also serve as the backbone of formal industries, creating a paradox in which economic growth often comes at the expense of ecological stability. Analyzing the economic factors behind deforestation is thus essential to understanding the broader development trajectory of Chhattisgarh.

1. Mining and Mineral Extraction: Chhattisgarh is endowed with abundant mineral wealth, including coal, iron ore, bauxite, limestone, and dolomite. Districts like Dantewada, Korba, Raigarh, Bastar, and Bilaspur are major centers of mining operations. The extraction of these minerals requires large-scale clearance of forests for open-cast mining, road building, and associated infrastructure. Iron ore mining in Dantewada's Bailadila hills and coal mining in Korba are prime examples where dense forests have been destroyed to meet industrial demand.

Economically, mining contributes significantly to the state's Gross State Domestic Product (GSDP), creates employment opportunities, and generates revenue through royalties and taxes. However, the environmental cost is immense. Mining operations not only lead to direct deforestation but also cause soil erosion, water pollution, and loss of biodiversity. The dependence of the state on mineral revenues has often tilted the balance in favor of granting mining leases, even in ecologically sensitive areas. For local tribal communities, the economic benefits are negligible compared to the loss of land, displacement, and disruption of their traditional forest-based livelihoods.

2. Industrialization and Infrastructure Growth: Industrial expansion has been another crucial driver of deforestation in Chhattisgarh. The state has several steel plants, thermal power stations, and cement factories, many of which are located near forest areas for easy access to raw materials. For example, Bhilai Steel Plant, one of India's largest, depends heavily on iron ore extracted from forest-rich Bastar and Dantewada. Thermal power plants in Korba and Raigarh consume vast quantities of coal, again extracted from forest zones.

Additionally, the setting up of industrial townships, transport corridors, and power transmission lines demands forest clearance. Roads connecting mining areas to industrial hubs cut through dense forests, fragmenting ecosystems. While these developments are justified in the name of economic progress, the immediate effect is large-scale forest degradation. The challenge lies in balancing the short-term industrial gains with the long-term ecological costs.

3. Agriculture and Shifting Cultivation: Agriculture is the backbone of Chhattisgarh's rural economy, employing more than 70 percent of its population. The pressure to expand agricultural land is one of the oldest and most

persistent causes of deforestation. With rising population and food demand, farmers often encroach upon forest areas to cultivate crops like paddy, maize, and millets. In tribal-dominated districts, shifting cultivation (locally known as "Podu" or "Jhum") still continues, albeit in a reduced form. This practice involves clearing forest patches for temporary farming, which contributes to forest loss when fallow cycles are shortened due to population growth.

Economically, agriculture ensures subsistence for rural households, but the expansion into forest lands comes with trade-offs. Soil fertility is often low in newly cleared areas, leading to unsustainable farming and further forest encroachment. The lack of irrigation facilities also forces farmers to depend on rainfed agriculture, increasing their vulnerability and dependency on more land. In the absence of adequate agricultural reforms and alternative livelihood options, forests remain the easiest and cheapest resource for expansion.

4. Fuelwood and Energy Needs: One of the most direct economic reasons for deforestation in Chhattisgarh is the dependence of rural households on fuelwood. For cooking, heating, and small-scale industries such as brick kilns and lime production, wood remains the primary source of energy. In tribal areas, where access to LPG and electricity is limited or unaffordable, forest wood is collected daily in large quantities.

This fuelwood demand, although appearing small at the household level, becomes massive when aggregated across villages. Small industries such as dhabas, roadside eateries, jaggery-making units, and pottery kilns also thrive on firewood. The lack of alternative energy infrastructure, coupled with the economic affordability of free wood from forests, creates a cycle of dependency that continues to degrade forest resources.

5. Timber Extraction and Illegal Logging: Timber, bamboo, and other forest products have long been integral to the economy of Chhattisgarh. Timber is used for construction, furniture, agricultural implements, and infrastructure projects. Bamboo is vital for paper mills, handicrafts, and construction. While the government regulates timber extraction through forest departments, illegal logging and smuggling remain rampant.

The black-market value of teak, sal, and bamboo creates strong incentives for forest encroachment and over-exploitation. Corruption, weak enforcement, and the involvement of contractors exacerbate the problem. For local villagers, timber extraction also provides seasonal income, making it economically attractive despite its long-term destructive impact.

6. Non-Timber Forest Products (NTFPs) and Market Pressures: Chhattisgarh is often called the "Herbal State" because of its rich variety of medicinal plants, tendu leaves, mahua, tamarind, and lac. Collection of these products forms a substantial part of tribal livelihoods. For instance, tendu leaves are used for bidi-making and provide employment to thousands of tribal families. However, commercial pressures and market-driven exploitation of NTFPs often result in unsustainable harvesting practices, indirectly contributing to forest degradation.

Contractor-based collection systems frequently exploit tribal collectors by offering low prices, pushing them to extract more in order to increase their income. This over-harvesting disturbs the regenerative capacity of forests. Mahua flowers, used for food and local liquor, are another major source of income, but extensive collection can reduce the natural reproduction of mahua trees. Thus, the commercialization of NTFPs, while providing cash income, simultaneously threatens the sustainability of the resource bases.

7. Population Growth and Settlement Expansion: The population of Chhattisgarh has been steadily increasing, with tribal and rural populations expanding into forest fringes. The establishment of new villages, expansion of old settlements, and increasing demand for housing materials directly lead to deforestation. Migration from other states for industrial jobs and mining work also adds to settlement pressure in forest areas.

Economically, population growth translates into more mouths to feed, more land required for agriculture, and greater energy consumption. This cumulative demand places immense stress on forest lands. In the absence of proper urban planning and land-use regulations, unregulated settlements often emerge on forest land, leading to long-term encroachment.

8. Infrastructure Development: Roads, railways, power lines, irrigation dams, and canals are critical for economic growth in Chhattisgarh. However, such projects often require clearing large areas of forests. The construction of the Dudhawa Dam, Hasdeo Bango Dam, and other irrigation projects submerged forest tracts, leading to displacement of villages and loss of biodiversity.

Roads built to connect mining zones to industrial towns pass through dense forests, fragmenting wildlife habitats. Railways and transmission lines also cut across ecologically sensitive areas. While infrastructure boosts connectivity and economic opportunities, it leaves behind scars of deforestation that are often ignored in cost-benefit analyses.

9. Poverty and Livelihood Dependence: Ironically, poverty itself is an economic factor driving deforestation in Chhattisgarh. For the poor and marginalized, especially tribal households, forests are the most accessible source of food, fuel, fodder, and income. Collection of firewood, bamboo, mahua, honey, and medicinal herbs forms their safety net in times of economic distress. However, over-dependence due to lack of alternative livelihood options often leads to unsustainable exploitation of resources.

The cycle of poverty and deforestation is self-reinforcing: poverty pushes people to exploit forests, while deforestation reduces the resource base, further aggravating poverty. Government schemes for alternative

livelihoods and skill development are often weakly implemented in remote forest regions, keeping people locked in forest dependency.

10. Market and Globalization Pressures: The integration of Chhattisgarh's forest economy into national and global markets has amplified pressures on forests. The demand for iron ore, coal, bamboo, and tendu leaves extends beyond the state to national and international buyers. With globalization, forest products are not merely local subsistence goods but commodities traded for profit.

This commercial orientation increases the scale of extraction, often beyond sustainable limits. Mining exports, industrial supply chains, and corporate contracts create economic incentives that prioritize short-term gains over long-term forest conservation. Tribal communities, instead of benefiting proportionately, often find themselves marginalized in this market economy.

Conclusion : Government policies also contribute indirectly to deforestation when economic priorities outweigh ecological considerations. Industrial corridors, Special Economic Zones (SEZs), and mining leases are granted in forest areas to attract investment. While compensatory afforestation is mandated, it rarely matches the ecological value of original forests.

Subsidies for mining and industrial projects further tilt economic incentives towards resource extraction. Weak enforcement of environmental clearances and inadequate rehabilitation of displaced people deepen the problem. In effect, the state's development model, centered on industrial growth, directly competes with the goal of forest conservation.

Deforestation in Chhattisgarh cannot be understood in isolation from its economic drivers. Mining, industrialization, agriculture, fuelwood demand, timber extraction, and market pressures are all rooted in the state's economic structure. While these activities generate revenue and employment, they simultaneously degrade the ecological foundation upon which millions of people—especially tribal communities—depend. The challenge lies in designing economic policies that balance growth with sustainability. Unless alternative livelihoods, renewable energy options, and stricter resource management practices are adopted, the cycle of deforestation will continue to erode both the ecological wealth and cultural heritage of Chhattisgarh.

In sum, deforestation in Chhattisgarh is not simply an environmental concern; it is an economic dilemma, reflecting the contradictions between development and sustainability. Recognizing and addressing these economic factors is essential if the state is to pursue a path of inclusive and ecologically balanced development.

References :-

1. Deepak, & Choudhary, V. K. (2025). *Assessing socio-economic impact and land use changes in Gangrel dam command areas, Chhattisgarh*. *International Journal of Agriculture Extension and Social Development, 8*(7), 638–643.https://doi.org/10.33545/26180723.2025.v8.i7i.2195 (Extension Journal)
2. Nandi, S., & Garg, S. (2017). Indigenous women's struggles to oppose state-sponsored deforestation in Chhattisgarh, India. *Gender & Development, 25*(3), 387–403.https://doi.org/10.1080/13552074.2017.1379781 (ResearchGate)
3. Jhariya, M. K., Bargali, S. S., & Raj, A. (2015). Possibilities and perspectives of agroforestry in Chhattisgarh. In *Precious Forests – Precious Earth* (pp. 237–257). Intech. https://doi.org/10.5772/60841 (ResearchGate, IntechOpen)
4. Singh, D. N., &Madguni, O. (2017). Assessment of rate of deforestation and change of forest cover for the implication of REDD+ in Chhattisgarh over the two decades. *Climate Change, 3*(12), 878–888. (ResearchGate)
5. Geist, H. J., & Lambin, E. F. (2001). *What drives tropical deforestation; a meta-analysis of proximate and underlying causes of deforestation based on subnational case study evidence*. LUCC Report Series 4 (Vol. 1). CIACO. (ResearchGate)
6. Paul, R., Patra, S., & Banerjee, K. (2020). Socio-economic impact on vulnerability of tropical forests of Eastern Ghats using hybrid modelling. *Tropical Ecology, 61*, 475–486. https://doi.org/10.1007/s42965-020-00106-5 (SpringerLink)
7. Chakravarty, S., Ghosh, S. K., Suresh, C. P., & Dey, A. N. (2012). *Deforestation: Causes, Effects and Control Strategies*. In *Global Perspectives on Sustainable Forest Management* (pp. X–X). https://doi.org/10.5772/33342 (ResearchGate)
8. FAO. (n.d.). Institutional, social and economic factors behind deforestation: A cross-country examination. In *World Development*. (FAOHome)
9. Scroll.in. (2025). Iron ore mining is driving deforestation in Chhattisgarh and hurting its Adivasis. *Scroll.in*. (Scroll.in)
10. Mongabay-India. (2021). Iron ore mining in Chhattisgarh drives deforestation. *Mongabay-India*. (Mongabay-India)
11. *Hasdeo Arand*. (2024). In *Wikipedia*. Retrieved from Wikipedia entry for Hasdeo Arand forest of Chhattisgarh. (Wikipedia)
12. *Compensatory Afforestation*. (2016/2017). In *Wikipedia / Economic & Political Weekly*. (Wikipedia)
13. *Chipko movement*. (n.d.). In *Wikipedia*. (Wikipedia)
14. Time. (2023, October 16). As the future of India's coal is decided, life in a mining district hangs in the balance. *TIME Magazine*. (TIME)
15. *CG now tops GSDP share from mining, leads in forest gain.* (2025, July 29). *The Times of India*. (The Times of India)

16. *Deforestation & tribal displacement in CG as BJP favouring select industrialists*. (2025, July). *The Times of India*. (The Times of India)
17. *Massive tree felling begins in Raigarh for a private company's coal mine project*. (2025, June). *The Times of India*. (The Times of India)
18. *Chhattisgarh govt gives nod to Hasdeo forest land diversion, Cong, activists cry foul*. (2025). *The Times of India*. (The Times of India)
19. Ge, X., Brown, S. E., Rana, P., Varshney, L. R., & Miller, D. C. (2023). Network analysis as a tool for shaping conservation and development policy: A case study of timber market optimization in India. *arXiv*. (arXiv)
20. Tripathy, S., & Das, S. (2020). Impact of crop diversification on tribal farmer's income: A case study from Eastern Ghats of India. *arXiv*. (arXiv)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Witness Protection and its Need in India

Gyanendra Kumar Pandey* **Dr. Harish Chandra Pandey****

*PhD Scholar, Deen Dayal Upadhyay Gorakhpur University, Gorakhpur (U.P.) INDIA
** Assistant Professor, Deen Dayal Upadhyay Gorakhpur University, Gorakhpur (U.P.) INDIA

Abstract: In the law enforcement framework, witnesses and their declarations assume a definitive part in arriving at the end of the case. Witnesses, being the most urgent members in the technique, are undermined or actuated by the gatherings associated with the case to change or withdraw their assertions. In this manner, cases don't arrive at an honest and reasonable end. The victims' quest for justice is hampered by the judicial system. The privileges given to witnesses and casualties are very restricted in contrast with the large number of freedoms of the denounced. Thus, safeguarding the observers becomes imperative for accomplishing the principal objective of the law enforcement framework. Considering these considerations, the author will discuss the significance of witnesses to the rule of law in the criminal justice system in his paper. The creator will likewise bring up the lacunae in our current standards and regulations which have nearly underestimated the obligations of the observer and his well-being and security.
Keywords: Witness, Protection, Human Rights, India, Law, Judicial System.

Introduction - Triangulation is used in India's criminal justice system. It includes three appendages - denounced, casualty and witness. Since old times denounced has been viewed as the 'focal point of mass in the law enforcement framework and offered more consideration than the other two appendages. We have been discussing the freedoms of the charged, their day-to-day environments in jail, and their honesty except if demonstrated blameworthy. In any case, zeroing in just one appendage won't go to further our damaged law enforcement framework. Presently the time has come to zero in onedifferent two. There is a requirement for a change in perspective in our way to deal with the law enforcement framework, the significance of casualties and witnesses should be perceived and given equivalent significance as the blamed. Continuing further, this paper will explicitly manage the significance of witnesses, the issues they face in the law enforcement situation, and their freedoms.

A witness is one who sees, knows or vouches for something and gives testimony under oath or affirmation in person, by oral or written deposition or by affidavit.[1] In a criminal justice system, the conviction of a guilty accused depends primarily on the testimonies given by witnesses. Thus, a witness turning hostile is a major problem which plagues the criminal justice system. The term Witnesses are defined in both the Criminal Procedure Code, 1908 or Evidence Act, 1872 as "Witness is the person who gives or is to give evidence in a cause, a person sworn to speak the truth in a trial, one who attest a document, one who cognizant of something by direct experience" and according to *Black Law Dictionary* "In the primary sense of the word, a witness is a person who knows the event". "As the most direct mode of acquiring an event is by seeing it, the witness has acquired the sense of a person who is present at and observes a transaction."[2]India is a country that has an enormous number of forthcoming cases whether common or criminal when an observer is called to the court for any case, he must be there despite the fact that he has no cash or has family, work, and so on. There is likewise a thing that assuming it is truth that a specific observer is essential for the crook case to be settled, so first and foremost the call is given to the individual to be available in the court yet on the off chance that an individual isn't showing up under the steady gaze of the courtroom then after the couple of summonses on the off chance that the observer has not offered any sensible response as far as not showing up then in such cases the capture warrant can be given for the sake of such observer.

Role Of Witnesses: Witness is any individual who is familiar with current realities and conditions, or is in control of any data or has information fundamental with the end goal of examination, request or preliminary of any wrongdoing including an offense and who is or might be expected to give data or say something or produce any report during examination, request or preliminary of such case and incorporates a casualty of such offense.[3]Without the observer's dynamic help, the examination of a wrongdoing may not reach an obvious end result. Underlining the meaning of witnesses, Wadhwa J. in *Swaran Singh* v. *State of Punjab*[4] said, "*A criminal case*

is built on the edifice of evidence, evidence that is admissible in law. For that, witnesses are required whether it is direct evidence or circumstantial evidence"

Additionally, while emphasizing the importance of witness, the Delhi High court in *Neelam Katara* v. *Union of India*[5] has observed that, *"The edifice of administration of justice is based upon witness coming forward and deposing without fear or favor, without intimidation or allurement in Courts of Law. If witnesses are deposing under fear or intimidation or for favor or allurement, the foundation of the administration of justice not only gets weakened but in cases, it may even get obliterated."*

Consequently, from the above assertions, we can reach the resolution that the observers are an indispensable piece of the preliminary or legal procedure separated from the complainant as well as the blamed. The idea of talking only about reality requires the observer to make a vow. Then, at that point, witnesses need to go for playing out the public obligation by helping and further he submits himself for the interrogation and thus can't decline to respond to the inquiries posed while questioning. The significance of witnesses has been principally recognized in the fear monger classification of offenses, drug dealing and different wrongdoings perpetrated by a few coordinated sorts of gatherings.

Need For Protection Of Witness: Witnesses are really the foundation of the case, however, nowadays witnesses waver in approaching and give the declaration from when they come to realize that the state doesn't have a legitimate component for guaranteeing the wellbeing of them and considering that trepidation, witnesses turn threatening. The term unfriendly means, when the observer realizes reality however isn't willing to tell it to the court, it is a result of the simple truth of dread or by the impact of the contrary party. It is additionally simple for the observer to turn threatening because no court can drive the observer to give the declaration. The court can also decide whether to allow a hostile witness to be cross-examined. In the case of *Ravindra Kumar Ray* v. *State of Orissa*[6], it was held by the Hon'ble that, "The testimony of a witness is not necessarily be rejected, in whole or in part just because is declared to be a Hostile Witness"

No principles, guidelines or regulations have been authorized by Parliament to safeguard observers. Nonetheless, different resolutions have arrangements for witnesses. Sections 151 and 152 of the Indian Evidence Act, 1872 safeguard the observers from being asked profane, shameful, hostile endlessly questions which plan to disturb or affront them. Under Section 312 of CrPC. A Court might arrange installment of sensible costs of any complainant or witness going to for the motivations behind any request, preliminary or other procedure under the steady gaze of such Court. Area 195A of the Indian Penal Code punishes undermining or prompting any individual to give misleading proof.

The "Witness Protection Scheme, 2018" was developed by the Government of India in collaboration with the National Legal Services Authority (NALSA) based on recommendations from law commissions, directions from the Supreme Court, and reports from several States and UTs. In this way, the High Court vide its judgment dated 05.12.2018 featured the earnest requirement for planning an observer security component conspire for our country. By virtue of the extensive powers granted by Article 141 of our Constitution, the Apex Court has approved the plan and declared it to be law. Nonetheless, the plan has not been given space in the legal book to date. The Witness Protection Scheme, 2018 visualizes implies in this manner guaranteeing the wellbeing of witnesses. Accompanying the observer up to the Court or help of sound video implies recording the assertion of the observer to keep up with privacy, giving transitory home in a protected house, giving new personality, witnesses movement, and so on., some of these measures can be used in extreme cases. The plan characterizes observers into three classifications, viz. Class A incorporates bunches where danger stretches out to the existence of the observer or his relatives, during examination/preliminary or from there on. Class B incorporates bunches where the danger reaches out to the wellbeing, notoriety or property of an observer or his relatives, during examination/preliminary or from there on and Class C integrates bunches where the danger is moderate and stretches out to badgering or terrorizing of an observer or his relative's, the standing of property, during examination/preliminary or from that point, and accommodates the foundation of State Observer Security Asset.

In the year 1958, the fourteenth Regulation Commission report which was alluded to as the 'witness security' appeared with the imperative element of the arrangement of a wide range of satisfactory game plans which are required to have been made for the comfort of the observer inside the court field. The witness's timely and uninterrupted arrival at the court will be facilitated by these provisions. Nonetheless, this regulation commission report neglected to give actual security to the observers. The Security, as well as different offices to the observer, were given under the 154th report of the law commission. One of the essential proposals made by the report expressed that "witnesses ought to be safeguarded from the fury of the blamed in any possibility". Nonetheless, the commission's report neglected to recommend any action concerning the actual insurance of the observers. The presentation of area 195A alongside different other significant changes into the Corrective code, 1860 had been made under the Criminal Regulation Revision Act, 2005 which made compromising or initiating somebody to offer any sort of misleading expressions under the steady gaze of the official courtroom culpable. Other significant changes made under this Act incorporate area 154 and Section 195

of the Proof Demonstration and the CrPC separately.

Witness Protection Scheme, 2018: Introduction, Issues And Suggestion: Before 2018, there was no proper arrangement for witness security, in any case, there exist a few roundabout arrangements for the insurance of witnesses. Section 436 and 437 of CrPC discuss giving bail in bailable and non-bailable offenses on the state of bail bond which fundamentally incorporates harmless of observers by the blamed. Different arrangements for the insurance of witnesses incorporate area 195 IPC, Juvenile Justice (Care and Protection of Children) Act, 2015, Whistleblowers Protection Act, 2011, Protection of Children from sexual offences (POSCO) Act, 2012, National Investigation Agency Act, 2008 and Schedule caste and Tribes (Prevention of Atrocities) Act, 1989, etc. The fourteenth, fifteenth, 178th, and 198th Regulation commission report additionally referenced the security of observers in high-profile cases. These large numbers of backhanded arrangements were not proficient in that frame of mind from being dispensed with. All things being equal, there had been a rising frequency of witnesses becoming unfriendly, hence expanding their end.

Notwithstanding, the situation after 2018 is exceptionally clear. Following rising instances of unfriendly observers and after the terrible episode against observers in the Asaram Bapu case, the pitch to present an observer security conspire made progress. Service of Home Undertakings in meeting with different states and Government bodies, presented Witness Protection Scheme, in 2018. The scheme was approved by the Supreme Court on 05/12/2018, by Justice A.K. Sikri in *Mahender Chawla* v. *Union of India*.[7]

The plan gives assurance considering danger discernment and examination reports ready by the head of police in the Locale exploring the case. The plan gives three classifications of witnesses considering danger discernment during the preliminary examination, and from that point —

Category A: when threat extends to limb and life

Category B: when threat extends to safety, reputation, and property

Category C: when threat extends to intimidation and harassment

The Witness Protection Scheme of India is the preeminent step towards compelling assurance of witnesses anyway there are different limits in something very similar. First and foremost, the period of safeguarding observers is restricted to a time of 90 days just, which means keeping an impermanent cap on span which no place gets the fate of the observer, and the chance of danger doesn't end following three months of insurance. Furthermore, the observers have been ordered according to the discernment as well as the chance of the risk they experience the ill effects of. In such an order, no plans will succeed ever. Correspondence will win in the security of observers too. Ultimately, even though the plan of witness security points towards the insurance of the personality of the observers, in any case, no data with respect to punishment has been given assuming that there is an infringement of the equivalent. The strength of safeguarding the observers through this plan is from now on decreased and neither can this assistance in the avoidance of witnesses turning antagonistic.

Witness Security Plan2018 is a right positive development, yet at the same time, we can't presume that it has filled the need for which it is made. In high-profile cases, such as the high-profile cruise drug case in 2021, the PIL filed disclosed the attempt to bribe the witness. However, even after the scheme was implemented, there has been no stoppage in the chain of elimination of witnesses. In this way, the inquiry emerges of the ampleness of the observer assurance plot, 2018 in the counteraction of the disposal of witnesses. The scheme itself is the problem; first, even though it is legally binding on government agencies, violating it will not result in punishment. Furthermore, there is no distinct wellspring of subsidizing, the middle has no commitment to financing the plan, and it is left at kindness of the state reserves. Thirdly, the scant assets of subsidizing and labor will make the execution of the plan troublesome. Fourthly, the police faculty accused of the security of witnesses may themselves be bad and can pass the data of the whereabouts of witnesses. The head of police accused of the planning of a danger discernment report, under political tension, may not play out his obligation appropriately in high-profile cases. The removal of witnesses will continue while all these issues remain in the scheme. These determined issues show that the observer security conspire 2018, isn't satisfactory in that frame of mind of the end of witnesses.

The best arrangement is to deal with and work on the lacunae currently called attention to in the observer assurance conspire 2018 however what is more significant is to chip away at the underlying drivers of these issues. The issue of hauled prosecution methodology and postpone in conviction needs serious consideration, this issue can be tackled by taking care of the issue of foundation and staff smash in the Indian legal executive and expanding the labor supply by filling the opening of Judges. The utilization of innovation is like a logical technique for examination utilizing DNA and fingerprints and so on. could adequately resolve the issue of antagonistic observers. Yet, the legitimate progress to a logical examination can be conceivable simply by expanding exceptionally prepared labor supply to deductively explore the case. These extraordinarily prepared cops should be not quite the same as 'beat constables'. Given these arrangements we should likewise remember that innovation can't totally supplant the observer and their significance in the law enforcement framework. Witness protection laws must be strengthened because technology can only reduce witness dependence.

Conclusion: The aggression of witnesses is a significant

test in the law enforcement organization of our country. Impacts and tensions frequently bring about going threatening to key observers and in this manner, they become hesitant to affirm before the adjudicators. The frequently talked about cases like the Jessica Lal murder case, Best Pastry shop case and so forth. are proof of a similar which features the earnest need to manage this aspect of the law enforcement framework which has flopped pitiably. The American model would serve as a torchbearer at this point. It should be noticed that there is no finished void, a portion of the arrangements are set up. However, in the absence of a legally binding written law with stringent penalties, the entire mechanism is adopted by judicial pronouncements. Witness security is the need of great importance. Absence of assets and HR will not be the reason for its appropriate execution. The time has come for the parliament to become aware of the witness's situation, pass comprehensive legislation to protect the witness and punish those who break the law. Underscoring the significance of observers in the Law Enforcement Framework, Equity Malimath Panel Report 2003 expressed that the "Opportunity has arrived for a complete regulation being sanctioned for the security of the observer and his relatives". This will support the certainty of the observer to dismiss current realities of the case with practically no apprehension or favor fair-mindedly.

References:-

1. Black's Law Dictionary (6th ed. 1995)
2. Garner, Bryan A. Black, Henry Campbell, Black's Law Dictionary (9th ed, 2009)
3. Section 3(ed), The Scheduled Castes and The Scheduled Tribes (Prevention of Atrocities) Amendment Act, 2015.
4. Swaran Singh v. State of Punjab, (2000) 5 SCC 668
5. Mrs. Neelam Katara v. Union of India, (2003) 2 Del 377
6. Ravindra Kumar Ray v. State of Orissa, 1976 SCC (Cri) 566.
7. Mahendra Chawla v. Union of India, Writ Petition (Criminal) No. 156/2016

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

बलिया जिले की महिलाओं में स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता का अध्ययन

डॉ. तृप्ति तिवारी *

* सहायक प्राध्यापक (गृह विज्ञान) जननायक चन्द्रशेखर विश्वविद्यालय, बलिया (उ.प्र.) भारत

शोध सारांश – स्वास्थ्य किसी भी समाज के विकास का प्रमुख आधार है और महिलाओं का स्वास्थ्य तो परिवार तथा समाज दोनों की समग्र प्रगति से सीधा जुड़ा हुआ है। भारत जैसे विकासशील देश में महिलाओं को गुणवत्तापूर्ण और समय पर स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध कराना आज भी एक बड़ी चुनौती है। महिलाओं की विशेष आवश्यकताओं – जैसे प्रजनन स्वास्थ्य, प्रसव पूर्व और प्रसवोत्तर देखभाल, बाल स्वास्थ्य और पोषण संबंधी सेवाएँ – समयबद्ध और प्रभावी ढंग से उपलब्ध न होने पर मातृ मृत्यु दर (MMR) तथा शिशु मृत्यु दर (IMR) में वृद्धि देखी जाती है।

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य महिलाओं के लिए स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता (Timeliness) और प्रभावशीलता (Effectiveness) का आकलन करना तथा ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों की तुलना करना था। इसके लिए 18–49 वर्ष आयु वर्ग की 300 महिलाओं पर सर्वेक्षण किया गया, जिनमें से 150 ग्रामीण एवं 150 शहरी क्षेत्र से थीं। डेटा संग्रह हेतु संरचित प्रश्नावली, व्यक्तिगत साक्षात्कार एवं फोकस ग्रुप चर्चा (FGD) का प्रयोग किया गया। विश्लेषण के लिए प्रतिशत, तुलनात्मक तालिकाएँ तथा गुणात्मक विवेचन का प्रयोग किया गया।

परिणामों से स्पष्ट हुआ कि ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता शहरी क्षेत्रों की तुलना में काफी कमजोर है। उदाहरण के लिए, ग्रामीण क्षेत्र की केवल 48 प्रतिशत महिलाओं को समय पर प्रसव पूर्व जांच (ANC) मिल पाई जबकि शहरी क्षेत्रों में यह प्रतिशत 72% था। आपातकालीन परिस्थितियों में एम्बुलेंस सेवा की उपलब्धता शहरी क्षेत्रों में 65% रही, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में मात्र 38 प्रतिशत महिलाओं को समय पर यह सुविधा मिली।

प्रभावशीलता के संदर्भ में भी स्पष्ट असमानता देखी गई। ग्रामीण क्षेत्र की 41 प्रतिशत महिलाओं ने दी गई स्वास्थ्य सेवाओं से पूर्ण संतोष व्यक्त किया, जबकि शहरी क्षेत्रों में यह प्रतिशत 68 प्रतिशत था। दवा एवं जाँच की उपलब्धता, स्वास्थ्यकर्मियों का व्यवहार तथा स्वास्थ्य शिक्षा जागरूकता कार्यक्रम शहरी क्षेत्रों में तुलनात्मक रूप से अधिक प्रभावी पाए गए।

सामाजिक–आर्थिक स्थिति, शिक्षा स्तर और जागरूकता का स्वास्थ्य सेवाओं के उपयोग पर प्रत्यक्ष प्रभाव देखा गया। उच्च शिक्षा प्राप्त और मध्यम–उच्च आय वर्ग की महिलाओं में सेवाओं की समयबद्धता एवं प्रभावशीलता का अनुभव अपेक्षाकृत बेहतर था।

शोध से यह भी स्पष्ट हुआ कि सरकारी योजनाएँ – जैसे प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना, जननी सुरक्षा योजना और आयुष्मान भारत – तभी सफल हो सकती हैं जब उनकी सेवाएँ समय पर और प्रभावी ढंग से अंतिम पंक्ति की महिला तक पहुँचें।

निष्कर्षत:, महिलाओं के स्वास्थ्य की सुरक्षा हेतु केवल सेवाएँ उपलब्ध कराना पर्याप्त नहीं है, बल्कि उनकी समयबद्धता और प्रभावशीलता सुनिश्चित करना अनिवार्य है। ग्रामीण स्वास्थ्य अवसंरचना को मजबूत करना, आपातकालीन सेवाओं की उपलब्धता बढ़ाना, महिलाओं में स्वास्थ्य शिक्षा एवं जागरूकता का प्रसार करना और तकनीक (टेलीमेडिसिन, ई–हेल्थ) का उपयोग बढ़ाना इस दिशा में अत्यंत उपयोगी होगा।

यह शोध नीति–निर्माताओं और योजनाकारों को इस बात की ओर ध्यान दिलाता है कि महिलाओं की स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार समाज के संपूर्ण स्वास्थ्य स्तर को ऊँचाई तक ले जा सकता है और सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) की प्राप्ति में योगदान दे सकता है।

प्रस्तावना – भारत जैसे विकासशील और विशाल देश में महिलाओं का स्वास्थ्य न केवल परिवार और समाज की भलाई से जुड़ा है, बल्कि यह संपूर्ण आर्थिक एवं सामाजिक विकास का आधार भी है। महिलाओं का स्वास्थ्य विशेष महत्व रखता है क्योंकि वे न केवल स्वयं जीवन जीती हैं बल्कि गर्भधारण, प्रसव और बाल–पालन के माध्यम से नई पीढ़ी के स्वास्थ्य की भी वाहक होती हैं। यदि महिलाएँ स्वस्थ हैं तो उनका परिवार, समुदाय और आने वाली पीढ़ियाँ भी स्वस्थ होंगी। लेकिन दुर्भाग्यवश भारत में महिलाओं को स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँचने में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

महिलाओं के स्वास्थ्य का मूल्यांकन करने के दो मुख्य मानदंड हैं – समयबद्धता (Timeliness) और प्रभावशीलता (Effectiveness)। समयबद्धता का अर्थ है कि स्वास्थ्य सेवाएँ जरूरत के समय, सही समय पर उपलब्ध हों। उदाहरण के लिए, यदि गर्भवती महिला को प्रसव पूर्व जांचें (ANC Checkups) समय पर न मिलें या आपातकालीन स्थिति में एम्बुलेंस देर से पहुँचे तो गंभीर जटिलताएँ उत्पन्न हो सकती हैं। दूसरी ओर प्रभावशीलता का संबंध इस बात से है कि उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाएँ कितनी गुणवत्तापूर्ण और परिणामकारी हैं। यदि उपचार मिलने के बाद भी महिला को अपेक्षित सुधार नहीं होता, या दवाएँ, टीकाकरण एवं परामर्श पर्याप्त नहीं

होते, तो स्वास्थ्य सेवाओं को प्रभावी नहीं कहा जा सकता।

भारत में महिलाओं को स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच में कई सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक बाधाएँ हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य केंद्रों की दूरी अधिक होती है, परिवहन सुविधाएँ सीमित होती हैं और योग्य डॉक्टरों की कमी बनी रहती है। शहरी क्षेत्रों में अस्पतालों और क्लीनिकों की संख्या अधिक है, लेकिन वहाँ भीड़ और खर्च जैसी चुनौतियाँ महिलाओं के सामने आती हैं। सामाजिक–सांस्कृतिक कारण भी समयबद्धता और प्रभावशीलता पर प्रभाव डालते हैं, जैसे – पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं के स्वास्थ्य को अक्सर प्राथमिकता नहीं दी जाती, आर्थिक निर्भरता के कारण महिलाएँ समय पर उपचार नहीं करा पातीं, और स्वास्थ्य के बारे में जागरूकता का अभाव होता है।

सरकार ने मातृ और शिशु मृत्यु दर को कम करने के लिए कई योजनाएँ लागू की हैं, जैसे – जननी सुरक्षा योजना (JSY), प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना (PMMVY), आयुष्मान भारत योजना और जननी शिशु सुरक्षा कार्यक्रम (JSSK)। इन योजनाओं का उद्देश्य महिलाओं को समय पर, नि:शुल्क और प्रभावी स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध कराना है। परंतु इन योजनाओं के वास्तविक प्रभाव का आकलन तभी संभव है जब यह देखा जाए कि महिलाएँ कितनी जल्दी स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच रही हैं और सेवाओं की गुणवत्ता कितनी संतोषजनक है।

इस प्रकार, महिलाओं में स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता का अध्ययन केवल एक शैक्षणिक शोध नहीं है, बल्कि यह एक सामाजिक आवश्यकता भी है। यह अध्ययन नीतिगत सुधार, अवसंरचना विकास और महिला स्वास्थ्य जागरूकता अभियानों के लिए उपयोगी दिशा प्रदान करेगा।

महिलाओं का स्वास्थ्य किसी भी राष्ट्र की प्रगति और विकास का मूल आधार है। स्वस्थ महिला न केवल अपने परिवार को बेहतर जीवन प्रदान करती है, बल्कि वह भावी पीढ़ियों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की आधारशिला भी रखती है। इसलिए महिलाओं को समय पर और प्रभावी स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध कराना किसी भी समाज की प्राथमिक जिम्मेदारी होनी चाहिए। भारत में महिलाओं के स्वास्थ्य को लेकर अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। इनमें सामाजिक मान्यताएँ, आर्थिक निर्भरता, शिक्षा का अभाव, स्वास्थ्य केंद्रों की अपर्याप्तता, और योजनाओं के क्रियान्वयन में कमजोरियाँ प्रमुख हैं। इन परिस्थितियों में महिलाओं के लिए स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता का अध्ययन अत्यंत प्रासंगिक हो जाता है।

पहला औचित्य यह है कि भारत में मातृ मृत्यु दर और शिशु मृत्यु दर अभी भी विकासशील देशों की तुलना में अधिक है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्टें इस ओर इशारा करती हैं कि समय पर स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता और गुणवत्तापूर्ण देखभाल से मातृ मृत्यु दर को काफी हद तक कम किया जा सकता है। यदि गर्भवती महिलाओं को प्रसव पूर्व देखभाल, प्रसव के दौरान कुशल स्वास्थ्यकर्मी, और प्रसवोत्तर देखभाल समय पर उपलब्ध हो, तो कई जानें बचाई जा सकती हैं। अत: समयबद्धता का आकलन इस अध्ययन का महत्वपूर्ण कारण है।

दूसरा औचित्य स्वास्थ्य सेवाओं की प्रभावशीलता है। केवल स्वास्थ्य केंद्रों का होना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि वहाँ दी जाने वाली सेवाएँ गुणवत्तापूर्ण और परिणामदायी भी होनी चाहिए। उदाहरणस्वरूप, यदि स्वास्थ्य केंद्र पर दवाइयाँ उपलब्ध नहीं हैं, जांच सुविधाएँ सीमित हैं, या स्वास्थ्यकर्मियों का व्यवहार असंवेदनशील है, तो महिलाएँ स्वास्थ्य सेवाओं का उपयोग करने से कतराती हैं। इस प्रकार स्वास्थ्य सेवाओं का प्रभावशील न होना महिलाओं के स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।

तीसरा औचित्य ग्रामीण और शहरी असमानता है। शहरी क्षेत्रों में भले ही अस्पतालों और डॉक्टरों की संख्या अधिक हो, लेकिन वहाँ भीड़भाड़ और खर्च जैसी समस्याएँ हैं। वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य केंद्रों की संख्या सीमित है, दूरी अधिक है, परिवहन साधन उपलब्ध नहीं हैं और प्रशिक्षित स्वास्थ्यकर्मी भी अक्सर अनुपस्थित रहते हैं। यह असमानता महिलाओं के लिए समय पर और प्रभावी स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच को कठिन बना देती है। इस अंतर को समझना और उसका विश्लेषण करना इस अध्ययन का एक और औचित्य है।

चौथा औचित्य सामाजिक और आर्थिक कारकों का प्रभाव है। कम शिक्षा स्तर, गरीबी, और पितृसत्तात्मक व्यवस्था महिलाओं को स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँचने से रोकती है। कई बार महिलाएँ बीमार होने पर भी उपचार में देरी करती हैं क्योंकि परिवार में उनकी प्राथमिकता कम होती है। ऐसे में स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता का अध्ययन इन सामाजिक बाधाओं को उजागर कर सकता है।

अंतत: यह अध्ययन नीति निर्माताओं और योजनाकारों के लिए उपयोगी दिशा प्रदान करेगा। जब यह स्पष्ट हो जाएगा कि किन क्षेत्रों में सेवाएँ समय पर नहीं पहुँच रहीं और किन परिस्थितियों में वे प्रभावी नहीं हैं, तब ही उपयुक्त नीतियाँ बनाई जा सकती हैं। यह अध्ययन सरकार और समाज को यह समझने में मदद करेगा कि महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति सुधारने के लिए किन स्तरों पर कार्य करने की आवश्यकता है।

संक्षेप में, महिलाओं में स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता का अध्ययन एक सामयिक और आवश्यक शोध है। यह न केवल मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य में सुधार करेगा, बल्कि भारत के समग्र सामाजिक–आर्थिक विकास की दिशा में भी सहायक सिद्ध होगा।

किसी भी शोध कार्य का सफल संचालन तभी संभव है जब उसके उद्देश्य स्पष्ट, सुस्पष्ट और शोध समस्या से सीधे जुड़े हुए हों। महिलाओं में स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता (Timeliness) और प्रभावशीलता (Effectiveness) के अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह समझना है कि महिलाओं को उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाएँ कितनी समय पर और कितनी गुणवत्तापूर्ण हैं, तथा इन सेवाओं का उनके स्वास्थ्य पर कैसा प्रभाव पड़ रहा है। इस शोध के उद्देश्यों को निम्नलिखित बिंदुओं में विभाजित किया जा सकता है –

1. महिलाओं को उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता का आकलन करना।
2. महिलाओं द्वारा प्राप्त स्वास्थ्य सेवाओं की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना।
3. ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं की तुलना करना।
4. महिलाओं के स्वास्थ्य पर सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक कारकों का प्रभाव समझना।
5. स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

इस अध्ययन के उद्देश्य महिलाओं के स्वास्थ्य की समग्र स्थिति को समझने, समयबद्धता और प्रभावशीलता का तुलनात्मक विश्लेषण करने, और व्यावहारिक समाधान सुझाने पर केंद्रित हैं। इन उद्देश्यों की पूर्ति से

शोध केवल अकादमिक महत्व का ही नहीं रहेगा, बल्कि यह नीति निर्माण, स्वास्थ्य योजनाओं के क्रियान्वयन और महिलाओं के जीवन स्तर को सुधारने में भी उपयोगी सिद्ध होगा।

किसी भी शोध कार्य में साहित्य समीक्षा एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है, क्योंकि इसके माध्यम से यह समझा जाता है कि पूर्व में इस विषय पर क्या कार्य हुआ है, किन-किन पहलुओं पर ध्यान दिया गया है, और वर्तमान अध्ययन का नवाचार या विशिष्ट योगदान क्या होगा। महिलाओं के स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता से संबंधित अनेक राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अध्ययन किए गए हैं, जिनका संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत है।

1. मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य संबंधी अध्ययन

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO, 2018) की रिपोर्ट में यह पाया गया कि मातृ मृत्यु दर और शिशु मृत्यु दर को कम करने में सबसे महत्वपूर्ण कारक है समय पर स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच। यदि गर्भवती महिलाओं को समय पर प्रसव पूर्व देखभाल और संस्थागत प्रसव की सुविधा मिलती है, तो मातृ मृत्यु दर में उल्लेखनीय कमी आती है। इसी प्रकार UNICEF (2019) के अनुसार, विकासशील देशों में 40 प्रतिशत महिलाएँ समय पर अछ्छ सेवाएँ प्राप्त नहीं कर पातीं।

2. भारत में महिला स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति

भारत सरकार के राष्ट्रीय स्वास्थ्य परिवार सर्वेक्षण (NFHS-5, 2019-21) में यह स्पष्ट हुआ कि ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में शहरी महिलाओं को स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच अपेक्षाकृत अधिक है। हालाँकि, ग्रामीण क्षेत्रों में समयबद्धता की समस्या अधिक गंभीर है। प्रसव के दौरान एम्बुलेंस सेवाओं की अनुपलब्धता और स्वास्थ्य केंद्रों तक दूरी प्रमुख बाधाएँ पाई गईं।

3. सामाजिक-आर्थिक कारकों का प्रभाव

देसी और सहयोगी (2017) के अध्ययन में पाया गया कि महिलाओं की शिक्षा और आर्थिक स्थिति सीधे तौर पर स्वास्थ्य सेवाओं की प्रभावशीलता से जुड़ी हुई है। अशिक्षित और आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग की महिलाएँ न केवल स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँचने में पिछड़ी रहती हैं, बल्कि वे उपलब्ध सेवाओं का लाभ भी समय पर नहीं ले पातीं।

4. स्वास्थ्यकर्मियों और अवसंरचना की भूमिका

शर्मा एवं अग्रवाल (2020) ने अपने शोध में उल्लेख किया कि ग्रामीण स्वास्थ्य केंद्रों में प्रशिक्षित डॉक्टरों और नर्सों की कमी, दवाओं का अभाव, और जाँच सुविधाओं की अनुपलब्धता सेवाओं की गुणवत्ता को प्रभावित करती है। परिणामस्वरूप, महिलाओं का स्वास्थ्य उपचार अधूरा रह जाता है या अपेक्षित परिणाम नहीं देता।

5. नीतिगत एवं योजनागत पहल

भारत सरकार ने महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य सुधार हेतु जननी सुरक्षा योजना, प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना और आयुष्मान भारत योजना जैसी योजनाएँ चलाई हैं। सिंह (2021) के अध्ययन में पाया गया कि इन योजनाओं ने संस्थागत प्रसव को बढ़ावा दिया है, परंतु अभी भी सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता सुनिश्चित करने में चुनौतियाँ मौजूद हैं।

6. अंतरराष्ट्रीय तुलनात्मक अध्ययन

अफ्रीकी देशों में किए गए अध्ययनों (WHO, 2020) से यह सामने आया कि भारत जैसी स्थिति वहाँ भी है, जहाँ स्वास्थ्य अवसंरचना की कमी, सामाजिक बाधाएँ, और आर्थिक असमानताएँ महिलाओं के स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच को प्रभावित करती हैं। वहीं विकसित देशों जैसे अमेरिका और यूरोप में महिलाओं को समय पर स्वास्थ्य सेवाएँ मिलती हैं और प्रभावशीलता अधिक होती है, क्योंकि वहाँ स्वास्थ्य अवसंरचना सुदृढ़ और सुलभ है।

साहित्य समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि महिलाओं की स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता पर अनेक अध्ययन हुए हैं, परंतु अधिकांश अध्ययन केवल मातृ स्वास्थ्य या शिशु स्वास्थ्य तक सीमित हैं। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों की तुलनात्मक स्थिति, महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि, और सरकारी योजनाओं की वास्तविक प्रभावशीलता पर अभी भी गहन शोध की आवश्यकता है। यही इस शोध का विशिष्ट योगदान होगा।

किसी भी शोध कार्य की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उसमें अपनाई गई कार्यविधि कितनी संगठित, वैज्ञानिक और अनुसंधान के उद्देश्यों के अनुकूल है। महिलाओं में स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता का अध्ययन करने हेतु इस शोध में वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक दोनों प्रकार की शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है।

1. **अध्ययन क्षेत्र का चयन –** इस शोध के लिए एक विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र के रूप में बलिया जिले का चयन किया जाएगा, ताकि ग्रामीण और शहरी दोनों परिवेश की तुलना की जा सके। उदाहरणस्वरूप, उत्तर प्रदेश के बलिया जिले को अध्ययन क्षेत्र के रूप में लिया जा सकता है। इस जिले में स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच, महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक विविधता और सरकारी योजनाओं की क्रियान्वयन स्थिति को समझने के लिए पर्याप्त अवसर उपलब्ध हैं।

2. **अध्ययन जनसंख्या –** इस अध्ययन की जनसंख्या में 18 से 49 वर्ष आयु वर्ग की महिलाएँ शामिल होंगी। इस आयु वर्ग की महिलाएँ प्रजनन एवं स्वास्थ्य संबंधी सेवाओं की सबसे अधिक आवश्यकता रखती हैं, अत: इन्हें चुनना तार्किक है।

3. **नमूना चयन –** नमूना चयन हेतु स्तरीकृत यादृच्छिक पद्धति (Stratified Random Sampling) का उपयोग किया जाएगा।
कुल नमूना आकार – 300 महिलाएँ
ग्रामीण क्षेत्र – 150 महिलाएँ
शहरी क्षेत्र – 150 महिलाएँ
इस प्रकार दोनों क्षेत्रों की तुलनात्मक स्थिति का गहन अध्ययन किया जा सकेगा।

4. **डेटा संग्रह की विधि –** डेटा संग्रह के लिए निम्नलिखित तकनीकों का प्रयोग होगा।

1. **प्रश्नावली** – इसमें स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता, प्रभावशीलता, प्रतीक्षा समय, दवाओं की उपलब्धता, स्वास्थ्यकर्मियों का व्यवहार आदि पर प्रश्न होंगे।
2. **साक्षात्कार –** चयनित महिलाओं से व्यक्तिगत साक्षात्कार लेकर उनकी वास्तविक समस्याओं एवं अनुभवों को जाना जाएगा।
3. **फोकस ग्रुप डिस्कशन –** समूह चर्चा के माध्यम से सामूहिक अनुभवों और धारणाओं को समझा जाएगा।
4. **द्वितीयक स्रोत –** सरकारी रिपोर्ट, NFHS डेटा, WHO और UNICEF की रिपोर्ट्स, तथा पूर्व प्रकाशित शोध पत्रों का उपयोग किया जाएगा।

5. चर

स्वतंत्र चर – आयु, शिक्षा स्तर, आय, वैवाहिक स्थिति, निवास स्थान (ग्रामीण/शहरी)।

निर्भर चर – स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता।

6. डेटा विश्लेषण की तकनीक – संग्रहित आँकड़ों का विश्लेषण प्रतिशत, माध्य, मानक विचलन जैसे सांख्यिकीय तरीकों से किया जाएगा। तुलनात्मक अध्ययन हेतु क्रॉस-टैबुलेशन और Chi-square परीक्षण का उपयोग होगा। गुणात्मक डेटा का विश्लेषण विषयवस्तु (Content Analysis) विधि से किया जाएगा।

7. नैतिक विचार :

- सभी प्रतिभागियों की सहमति ली जाएगी।
- एकत्र किए गए आँकड़े केवल शोध प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होंगे।
- प्रतिभागियों की पहचान गोपनीय रखी जाएगी।

यह कार्यविधि न केवल महिलाओं के स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता का मूल्यांकन करने में सहायक होगी, बल्कि ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों की तुलनात्मक स्थिति को समझने का अवसर भी प्रदान करेगी। इस प्रकार यह शोध परिणाम नीतिगत सुधार एवं स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता वृद्धि में व्यावहारिक योगदान कर सकता है।

परिणाम एवं विश्लेषण – परिणाम से स्पष्ट होता है कि प्रसव पूर्व देखभाल (ANC) सेवाएँ शहरी क्षेत्रों में ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा कहीं अधिक समय पर उपलब्ध होती हैं। शहरी क्षेत्र में 68 प्रतिशत महिलाएँ समय पर ANC सेवाएँ प्राप्त करती हैं, जबकि ग्रामीण क्षेत्र में यह प्रतिशत केवल 42 प्रतिशत है। इसके विपरीत ग्रामीण क्षेत्रों में 20 प्रतिशत महिलाएँ ऐसी हैं जिन्हें ANC सेवाएँ प्राप्त ही नहीं हो सकीं। यह अंतर ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य अवसंरचना की कमी, दूरी, परिवहन सुविधाओं के अभाव, और महिलाओं की सीमित जागरूकता को दर्शाता है।

शहरी क्षेत्रों में अपेक्षाकृत बेहतर अस्पताल, प्रशिक्षित स्वास्थ्यकर्मी और सरकारी-निजी साझेदारी की वजह से सेवाएँ अधिक समय पर उपलब्ध होती हैं। वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में अक्सर आशा और आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं पर निर्भर रहना पड़ता है, जिनकी पहुँच सभी तक समय पर नहीं हो पाती।

यह परिणाम यह संकेत देता है कि समयबद्ध स्वास्थ्य सेवाएँ मातृ मृत्यु दर को कम करने में अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। यदि ग्रामीण महिलाओं तक ANC सेवाएँ समय पर नहीं पहुँचेंगी तो गर्भावस्था जटिलताओं की संभावना बढ़ जाएगी।

वहीं आपातकालीन सेवाओं (जैसे प्रसव, रक्तस्राव, उच्च रक्तचाप) की उपलब्धता ग्रामीण क्षेत्रों में अत्यधिक सीमित है। केवल 36 प्रतिशत ग्रामीण महिलाएँ ही समय पर आपातकालीन सेवा प्राप्त कर पाईं, जबकि शहरी क्षेत्रों में यह प्रतिशत 72 प्रतिशत है।

ग्रामीण महिलाओं के लिए सबसे बड़ी चुनौती समय पर एम्बुलेंस और डॉक्टर की अनुपलब्धता है। अक्सर मरीज को जिला अस्पताल तक पहुँचने में कई घंटे लग जाते हैं, जिससे जटिल परिस्थितियों में मातृ और शिशु मृत्यु का खतरा बढ़ जाता है।

शहरी क्षेत्रों में बहुस्तरीय अस्पताल व्यवस्था, निजी क्लीनिकों की मौजूदगी, और बेहतर परिवहन व्यवस्था के कारण आपातकालीन सेवाएँ तुलनात्मक रूप से समय पर उपलब्ध हो जाती हैं।

यह विश्लेषण यह बताता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में आपातकालीन सेवाओं की समयबद्धता सुनिश्चित करना सबसे बड़ी प्राथमिकता होनी चाहिए।

जबकि स्वास्थ्य सेवाओं की प्रभावशीलता के मामले में भी शहरी क्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र से आगे है। शहरी क्षेत्र की 34 प्रतिशत महिलाएँ स्वास्थ्य सेवाओं से अत्यधिक संतुष्ट हैं, जबकि ग्रामीण क्षेत्र में यह केवल 18 प्रतिशत है।

ग्रामीण क्षेत्र की 36 प्रतिशत महिलाएँ असंतुष्ट पाई गईं, जो यह इंगित करता है कि सेवाएँ न तो गुणवत्तापूर्ण हैं और न ही उपचार प्रभावी है। इसके कारणों में डॉक्टरों और नर्सों की कमी, दवाओं का अभाव, और जांच सुविधाओं की सीमित उपलब्धता प्रमुख हैं।

शहरी क्षेत्रों में प्रभावशीलता का स्तर अधिक है क्योंकि वहाँ उपचार के विकल्प और विशेषज्ञ डॉक्टरों तक पहुँच आसान है। साथ ही, महिलाओं में स्वास्थ्य संबंधी जागरूकता का स्तर भी अपेक्षाकृत ऊँचा है, जिससे वे उपचार का सही तरीके से पालन कर पाती हैं।

इस परिणाम से स्पष्ट है कि केवल समयबद्ध सेवा ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि सेवा की गुणवत्ता और प्रभावशीलता भी उतनी ही महत्वपूर्ण है।

इसी तरह दवाओं और जाँच सुविधाओं की उपलब्धता ग्रामीण क्षेत्रों में काफी कमजोर है। केवल 40 प्रतिशत ग्रामीण महिलाओं को समय पर दवाएँ और जाँच सुविधाएँ उपलब्ध हो पाती हैं, जबकि शहरी क्षेत्रों में यह आँकड़ा 70 प्रतिशत है। ग्रामीण क्षेत्रों में 24 प्रतिशत महिलाओं को बिल्कुल भी दवाएँ या जाँच उपलब्ध नहीं हो पातीं, जिससे उन्हें निजी दवाखानों पर निर्भर होना पड़ता है।

शहरी क्षेत्र में सरकारी अस्पतालों के साथ-साथ निजी क्लीनिकों और डायग्नोस्टिक सेंटरों की मौजूदगी दवाओं व जाँचों की उपलब्धता सुनिश्चित करती है। वहीं ग्रामीण क्षेत्र में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों पर अक्सर दवाओं का स्टॉक खत्म हो जाता है और जाँच मशीनें या तो होती नहीं हैं या खराब पड़ी रहती हैं।

इससे स्पष्ट है कि यदि ग्रामीण महिलाओं को सही समय पर दवाएँ व जाँच न मिलें तो उनका उपचार अधूरा रह जाता है और बीमारियाँ गंभीर रूप धारण कर लेती हैं। अत: यह आवश्यक है कि ग्रामीण स्वास्थ्य केंद्रों को दवाओं और जाँच सुविधाओं से सशक्त किया जाए।

ऐसे ही ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को स्वास्थ्य केंद्रों पर अधिक प्रतीक्षा करनी पड़ती है। ग्रामीण क्षेत्र में 36 प्रतिशत महिलाएँ बताती हैं कि उन्हें 60 मिनट से भी अधिक इंतजार करना पड़ता है, जबकि शहरी क्षेत्रों में यह प्रतिशत केवल 18% है। इसके विपरीत, शहरी क्षेत्रों में 48 प्रतिशत महिलाएँ 30 मिनट से कम समय में ही स्वास्थ्य सेवाएँ प्राप्त कर लेती हैं।

प्रतीक्षा समय का यह अंतर कई कारणों से उत्पन्न होता है – ग्रामीण स्वास्थ्य केंद्रों में डॉक्टर और नर्सों की संख्या कम होती है, एक ही दिन में अधिक मरीज आते हैं, और कभी-कभी डॉक्टर अनुपस्थित रहते हैं। इसके अलावा, प्रशासनिक प्रक्रियाएँ और दवाएँ लेने की लाइन भी लंबी होती है।

लंबे प्रतीक्षा समय का परिणाम यह होता है कि कई महिलाएँ समय पर इलाज नहीं करा पातीं और निराश होकर घर लौट जाती हैं। दूसरी ओर, शहरी क्षेत्रों में डॉक्टरों की उपलब्धता, निजी क्लीनिकों की संख्या और बेहतर प्रबंधन व्यवस्था के कारण प्रतीक्षा समय अपेक्षाकृत कम रहता है।

यह विश्लेषण यह दर्शाता है कि यदि ग्रामीण स्वास्थ्य केंद्रों पर स्टाफ और सुविधाएँ बढ़ाई जाएँ तो महिलाओं का समय बचेगा और वे सेवाओं का अधिक प्रभावी ढंग से लाभ उठा पाएँगी।

वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में रेफरल प्रणाली समयबद्ध नहीं है। केवल 32

प्रतिशत महिलाओं को समय पर रेफरल मिल पाता है, जबकि 44 प्रतिशत को देरी से रेफरल दिया गया और 24 प्रतिशत को रेफरल की सुविधा ही उपलब्ध नहीं हुई।

शहरी क्षेत्रों में स्थिति बेहतर है जहाँ 64 प्रतिशत महिलाओं को समय पर रेफरल मिल जाता है। इसका कारण यह है कि शहरी अस्पतालों में विशेषज्ञ डॉक्टर और नेटवर्क अस्पताल अधिक हैं। वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में कई बार स्वास्थ्यकर्मी समस्या को देर से पहचानते हैं, परिवहन का अभाव होता है, और रेफरल की औपचारिकताएँ लंबी खिंच जाती हैं।

रेफरल प्रणाली का समय पर होना जीवन-मृत्यु का प्रश्न बन सकता है, विशेषकर प्रसव या गंभीर बीमारियों की स्थिति में। देरी से रेफरल मिलने पर जटिलताओं के बढ़ने और मृत्यु तक की संभावना होती है।

यह परिणाम यह संकेत देता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में रेफरल प्रणाली को तेज और सरल बनाने के लिए तकनीक (जैसे मोबाइल हेल्थ एप्स, टेलीमेडिसिन) और परिवहन (एम्बुलेंस) सेवाओं को मजबूत करने की आवश्यकता है।

निष्कर्षत: प्रस्तुत शोध अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से सामने आया कि महिलाओं के स्वास्थ्य से जुड़ी सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता दोनों ही ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में अलग-अलग स्वरूप में दिखाई देती हैं। शहरी क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच अपेक्षाकृत अधिक है, जहाँ महिलाएँ प्रसव पूर्व देखभाल, दवाओं और जाँच सुविधाओं का समय पर लाभ उठा लेती हैं। वहीं, ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाएँ अब भी अनेक चुनौतियों का सामना करती हैं, जैसे - लंबा प्रतीक्षा समय, आवश्यक दवाओं की अनुपलब्धता, आपातकालीन सेवाओं में विलंब और स्वास्थ्यकर्मियों की संवेदनशीलता की कमी।

अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि समयबद्धता की कमी अक्सर स्वास्थ्य जटिलताओं को जन्म देती है। उदाहरणस्वरूप, गर्भवती महिलाओं में समय पर जाँच न हो पाने से उच्च रक्तचाप, रक्ताल्पता या अन्य जोखिम कारक देर से पहचान में आते हैं, जो माँ और शिशु दोनों के जीवन को खतरे में डाल सकते हैं। इसी प्रकार, प्रभावशीलता की कमी-जैसे अधूरी दवाएँ, कम प्रशिक्षित स्वास्थ्यकर्मी और अपर्याप्त परामर्शकृमहिलाओं के स्वास्थ्य लाभ को कम कर देती है।

एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी सामने आया कि महिलाओं का संतोष स्तर सीधे-सीधे सेवाओं की गुणवत्ता और समयबद्धता से जुड़ा हुआ है। शहरी महिलाओं का संतोष स्तर अपेक्षाकृत अधिक था, जबकि ग्रामीण महिलाएँ असंतोष और निराशा व्यक्त करती पाई गईं। इसका अर्थ है कि यदि सेवाओं को समय पर और प्रभावी ढंग से उपलब्ध कराया जाए, तो महिलाओं का भरोसा स्वास्थ्य तंत्र पर बढ़ेगा।

अंतत: यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि महिलाओं का स्वास्थ्य केवल उनके व्यक्तिगत जीवन का नहीं, बल्कि पूरे परिवार और समाज के स्वास्थ्य का प्रतिबिंब है। मातृ एवं शिशु मृत्यु दर को घटाने और महिलाओं की जीवन गुणवत्ता सुधारने के लिए स्वास्थ्य सेवाओं को समान रूप से सुलभ, समय पर और प्रभावी बनाना आवश्यक है। ग्रामीण-शहरी अंतर को कम करना ही आने वाले समय की सबसे बड़ी प्राथमिकता होनी चाहिए।

सुझाव - अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं, जो महिलाओं के लिए स्वास्थ्य सेवाओं की समयबद्धता और प्रभावशीलता बढ़ाने में सहायक हो सकते हैं -

- **ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य अवसंरचना का सुदृढ़ीकरण** प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों (PHCs) को आधुनिक सुविधाओं से सुसज्जित किया जाए। आवश्यक दवाओं, जाँच उपकरणों और प्रशिक्षित स्वास्थ्यकर्मियों की उपलब्धता सुनिश्चित हो।
- **आपातकालीन सेवाओं में सुधार** ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में 24x7 एम्बुलेंस सुविधा उपलब्ध कराई जाए ताकि गर्भवती महिलाएँ और गंभीर रोगी समय पर अस्पताल पहुँच सकें।
- **स्वास्थ्यकर्मियों की संवेदनशीलता और प्रशिक्षण** डॉक्टरों, नर्सों और आशा कार्यकर्ताओं को महिला-हितैषी दृष्टिकोण, परामर्श कौशल और तकनीकी दक्षता पर नियमित प्रशिक्षण दिया जाए। इससे स्वास्थ्य सेवाओं की प्रभावशीलता में वृद्धि होगी।
- **दवाओं और जाँच सेवाओं की समय पर उपलब्धता** ग्रामीण स्तर पर दवा वितरण केंद्रों और मोबाइल जाँच प्रयोगशालाओं की स्थापना की जाए। इससे महिलाएँ अनावश्यक देरी और आर्थिक बोझ से बच सकेंगी।
- **स्वास्थ्य शिक्षा और जागरूकता** महिलाओं को स्वास्थ्य संबंधी अधिकारों, सरकारी योजनाओं (जैसे आयुष्मान भारत, जननी सुरक्षा योजना) और स्वच्छता संबंधी जानकारियों से अवगत कराने के लिए नियमित अभियान चलाए जाएँ।
- **तकनीक का प्रयोग** टेलीमेडिसिन और ई-हेल्थ सेवाओं के माध्यम से विशेषज्ञ डॉक्टरों की सलाह दूर-दराज क्षेत्रों तक पहुँचाई जा सकती है।
- **निगरानी और मूल्यांकन प्रणाली** स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता और समयबद्धता की नियमित मॉनिटरिंग हो तथा लापरवाही पर कड़े कदम उठाए जाएँ।

इन सुझावों के कार्यान्वयन से न केवल महिलाओं का स्वास्थ्य सुधरेगा बल्कि समाज की समग्र स्वास्थ्य स्थिति में भी उल्लेखनीय सुधार आएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Government of India. (2022). National Family Health Survey (NFHS-5), 2019–21: India Fact Sheet. Ministry of Health and Family Welfare. https://nhfsindia.org
2. Gupta, N., & Shukla, R. (2019). Accessibility and barriers to healthcare services for women in India. Journal of Health Management, 21(4), 478–492. https://doi.org/10.1177/0972063419882389
3. International Institute for Population Sciences (IIPS). (2021). District Level Household Survey on Reproductive and Child Health (DLHS-4). Ministry of Health and Family Welfare.
4. Kaur, H., & Das, S. (2018). Effectiveness of healthcare programs in reducing maternal mortality in India: A systematic review. Global Journal of Medicine and Public Health, 7(5), 1–9.
5. Kumar, R., & Singh, A. (2020). Timeliness and effectiveness of maternal health services in rural India: A comparative study. Indian Journal of Public Health, 64(3),245–251.https://doi.org/10.4103/ijph.IJPH_459_19
6. Ministry of Health and Family Welfare (MoHFW). (2020). Ayushman Bharat: Comprehensive primary health care through Health and Wellness Centers. Government of India.

7. Patel, V., & Desai, S. (2020). Women's access to healthcare in India: Challenges and prospects. Asian Journal of Social Sciences and Humanities, 9(1), 35–47.
8. Sharma, P., & Verma, S. (2021). Maternal health care utilization among women in urban and rural areas of Uttar Pradesh. Journal of Family Welfare, 67(2), 56–69.
9. United Nations Population Fund (UNFPA). (2020). State of World Population 2020: Against my will—Defying the practices that harm women and girls and undermine equality. UNFPA. https://www.unfpa.org
10. World Health Organization. (2021). Improving access to quality health services for women and children. WHO Regional Office for South-East Asia. https://www.who.int

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

A Comparative Study of Customer Satisfaction in Online and Traditional Shopping : A Case Study of Ujjain Division

Neha Singh* **Dr. L. N. Sharma****

*Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
** Research Guide, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

Abstract: In today's rapidly evolving retail ecosystem, customer behavior is being reshaped by digital accessibility, technological innovation, and shifting societal trends. This study explores the differences in customer satisfaction between online and traditional shopping within the Ujjain Division, India. Using both quantitative and qualitative methods, the research evaluates demographic influences, challenges in digital retail, and consumer expectations. The findings reveal a dynamic, hybrid consumer base influenced by trust, convenience, and infrastructure availability. The study emphasizes the need for integrated omnichannel strategies and improved post-purchase services to enhance satisfaction across both platforms. It concludes with actionable recommendations and potential future research directions.

Introduction - The commercial landscape has undergone a significant transformation due to the growth of digital platforms, technological innovation, and changing consumer lifestyles. One of the most notable shifts is the rapid rise of online shopping, which has challenged the traditional brick-and-mortar model. Consumers today enjoy the flexibility to shop from anywhere, anytime, and access a wider range of products and services. In India, this shift is visible, although traditional retail still holds strong in areas with limited digital access or where in-person interaction is valued more. This paper studies these evolving consumer behaviors, focusing specifically on the Ujjain Division of Madhya Pradesh, India.

Review of Literature

Ishita Verma (2023) conducted a study titled "A Study on Customer Satisfaction with Omnichannel Retailing in India", where she evaluated customer experiences across integrated retail platforms. Her findings revealed that well-coordinated online and offline channels significantly improve customer satisfaction, while inconsistencies in pricing and stock availability often cause frustration.

Noah Johnson & Mia Thompson (2024) examined *"Sustainability and Customer Satisfaction in Online vs Offline Retailing"* in the US and Australia. Their cross-national study highlighted that eco-friendly practices, such as carbon-neutral delivery and ethical sourcing, boost satisfaction, especially among younger demographics.

Objectives of the Study:

1. To analyze the demographic profile of consumers in the Ujjain Division and its influence on shopping preferences.
2. To provide strategic recommendations for retailers to improve customer satisfaction across channels.

Hypotheses of the Study:

H_0 (Null Hypothesis): There is no significant relationship between demographic factors and preference for online or traditional shopping.

H_1 (Alternative Hypothesis): There is a significant relationship between demographic factors and shopping preference.

Research Methodology

This study adopts a descriptive research design. Data was collected through structured questionnaires distributed to consumers in Ujjain Division, covering both urban and semi-urban areas. The total sample size was 420.

1. Data Analysis Tools:

Independent t-test
One-way ANOVA
Mean, Standard Deviation, p-value (significance level set at 0.05)

2. Data Analysis:

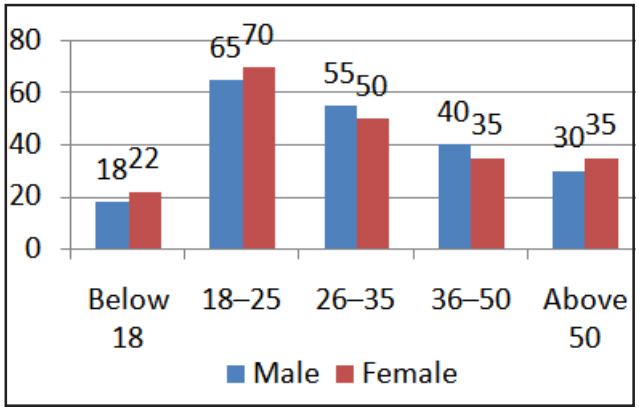
2.1 On the basis of Age Group: The table below presents the age-wise distribution of the 420 respondents from the Ujjain Division who participated in the study. This demographic segmentation helps understand the age diversity of the sample and allows further analysis of how age impacts satisfaction levels in both online and traditional shopping.

Table 1: Age-wise Distribution of Respondents

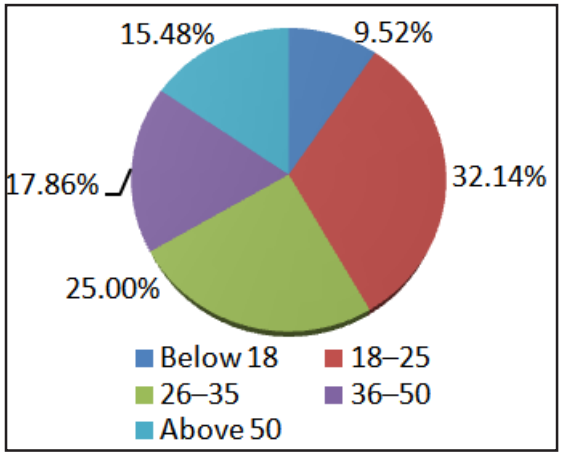
Age Group	Male	Female	Total	% of Total
Below 18	18	22	40	9.52%
18–25	65	70	135	32.14%
26–35	55	50	105	25.00%
36–50	40	35	75	17.86%
Above 50	30	35	65	15.48%
Total	**208**	**212**	**420**	**100**

Source: Survey work

Graph 1 : Age-wise Distribution of Respondents



Graph 2 : Age-wise Distribution of Total Respondents



Interpretation of Data: The table presents the percentage distribution of individuals across different age groups within a total population of 420. The data shows that the largest segment of the population, 32.14%, falls within the 18–25 age group. This indicates a predominantly young adult demographic, possibly consisting of students or early-career professionals.

Reason for the Difference: The significant gap between the highest and lowest age group percentages reflects both behavioral trends and structural realities. The 18–25 age group actively engages with both online and offline shopping platforms and is digitally empowered, making them highly visible and accessible for research. In contrast, the below 18 group lacks autonomy, financial capacity, and in some cases, access to participate meaningfully in shopping-related activities.This age-wise disparity emphasizes the importance of targeting age-appropriate strategies in marketing, product design, and educational outreach. It also highlights the need for researchers to consider demographic balance when interpreting consumer behavior, as different age groups bring unique perspectives and limitations to the study of satisfaction and preferences in the evolving retail environment.

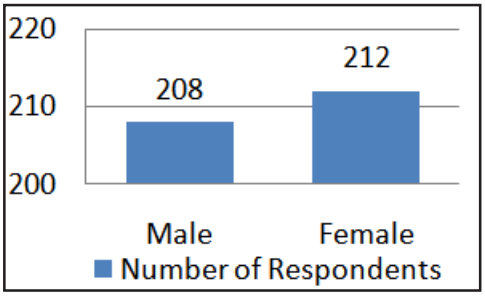
2.2 On the Basis of Gender: The gender-wise distribution of the 420 respondents from Ujjain Division provides a balanced overview of male and female participation in the study. This demographic breakdown is essential for analyzing variations in shopping behavior and satisfaction levels across genders, particularly when comparing experiences in online and traditional shopping modes.

Table 2: Gender-wise Distribution of Respondents

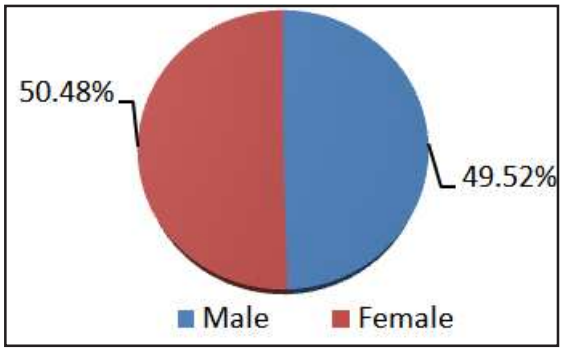
Gender	Number of Respondents	Percentage (%)
Male	208	49.52%
Female	212	50.48%
Total	**420**	**100%**

Source: Primary Survey

Graph 3: Gender-wise Distribution of Respondents



Graph 4: Gender-wise Distribution of Total Respondents



Interpretation of Data: The gender-wise distribution shows a nearly equal representation of male and female respondents, with females slightly outnumbering males by a small margin (50.48% compared to 49.52%). This almost equal split offers a reliable basis for conducting comparative analysis of shopping satisfaction and behavioral tendencies across both genders.

Reason for Equal Representation: The balanced participation of both genders may be attributed to several

factors:

- **Equal access to educational and professional environments** in Ujjain Division, enhancing awareness and digital exposure.
- **Rising smartphone and internet penetration** among women, even in semi-urban or rural regions.
- **Shift in family and social dynamics**, enabling more women to make independent decisions regarding shopping and finance.
- **Survey Methodology**, which ensured convenience sampling across varied age groups and settings, allowing equal opportunity for both genders to respond.

Hypothesis 1 – Demographics And Shopping Behavior
Hypothesis Statement

Null Hypothesis (H_0): There is no significant relationship between demographic factors and preference for online or traditional shopping.

Alternative Hypothesis (H_1): There is a significant relationship between demographic factors and preference for online or traditional shopping.

3. Statistical tools used include: Independent t-test for comparing means across two groups (e.g., Gender).
One-way ANOVA (Analysis of Variance) for variables with more than two categories (e.g., Age Group, Income Level, etc.).
Mean, Standard Deviation, test statistic, and p-value were computed to evaluate statistical significance at a 5% level ($p < 0.05$).

Table 3: Summary of Hypothesis Testing Using t-test and ANOVA

Variable	Test Type	Test Statistic	p-value
Gender	t-test	1.922	0.0553
Age Group	ANOVA	0.082	0.9878

Interpretation of the Table

Gender: The p-value (0.0553) is slightly above 0.05, indicating no statistically significant difference in shopping preference between male and female respondents, although the result is marginal and may warrant further exploration.

Key Findings:

1. Logistical Limitations: Many respondents from semi-urban areas (Khachrod, Nagda, Mahidpur) faced frequent delays or failed deliveries.

2. Gender and Age: No significant difference in preferences was observed across gender or age groups, but rural consumers were more inclined toward traditional shopping.

Suggestions and Recommendations:

1. Embrace Omnichannel Retailing
2. Improve Trust in Online Shopping

Future Scope of the Study

1. Regional Expansion: Future research could expand to include multiple divisions or states to analyze cultural and infrastructural impacts on shopping behavior.

2. Longitudinal Studies: A time-based study could measure the evolving preferences post-pandemic, inflation, or government initiatives like ONDC.

3. Product-Specific Analysis: Further research could focus on specific product categories such as groceries, electronics, or luxury items to understand category-based consumer behavior.

Conclusion: The study highlights the evolving nature of consumer shopping preferences in the Ujjain Division. While online platforms offer convenience and variety, traditional retail continues to hold value, especially in trust and post-sale service. A hybrid, omnichannel model is increasingly becoming the preferred choice. Retailers must adapt to this blended approach by addressing digital literacy gaps, improving logistics, and building consumer trust to enhance satisfaction across the board.

References:-

(A) Books

National Books:-

1. **Agarwal, R.C.** (2017). *Consumer Behaviour and Marketing Strategy*. New Delhi: Himalaya Publishing House.
2. **Bansal, V.K.** (2018). *E-Commerce in India: Emerging Issues and Challenges*. Jaipur: RBSA Publishers.

International Books:-

1. **Armstrong, G., & Kotler, P.** (2019). *Marketing: An Introduction* (13th Ed.). New York: Pearson.
2. **Blackwell, R.D., Miniard, P.W., & Engel, J.F.** (2006). *Consumer Behavior* (10th Ed.). Mason: Thomson South-Western.

(B) Journals

National Journals (India):-

1. **Bansal, S. & Yadav, A.** (2020). "Consumer Satisfaction Trends in Indian Retail Sector." *Journal of Business Studies*, 15(1), 23–30.
2. **Bhatnagar, R.** (2020). "A Study on Consumer Preferences Towards Online Shopping in India." *Indian Journal of Marketing*, 50(4), 14–21.

International Journals:-

1. **Blythe, J.** (2016). "Online Shopping and Consumer Behavior in the Digital Age." *International Journal of E-Commerce Studies*, 9(3), 115–124.
2. **Constantinides, E.** (2004). "Influencing the Online Consumer's Behavior: The Web Experience." *Internet Research*, 14(2), 111–126.

(C) Magazines And Newspapers:-

1. **Business India** (2022). *India's Digital Retail Ecosystem: From Apps to Adoption*. Business India Magazine, July Edition.
2. **Business Standard** (2021). *E-Commerce Sales in Non-Metro Cities Surpass Metros for the First Time*. Retrieved from https://www.business-standard.com

(D) Websites:-

1. https://www.amazon.in – *Official e-commerce site; used for case analysis and user reviews*
2. https://www.business-standard.com – *Business news and data on consumer trends*

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Bank Mergers in India and Their Effect on Performance: A Public Sector Bank Perspective

Dr. George Thomas* Ms. Sharda Sethia**

*Director, Shri Vaishnav Institute of Management, Indore (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, GSIMR, Indore (M.P.) INDIA

Abstract: Mergers and acquisitions (M&A) represent a strategic approach to business consolidation, wherein companies seek to enhance their market position, operational efficiency, and financial strength through structural integration. A merger typically involves the unification of two entities into a single, jointly governed organization, often with the aim of achieving mutual growth and synergy. In contrast, an acquisition entails one company assuming control over another, either through asset purchase or equity transfer, thereby absorbing its operations and resources.At the core of M&A strategy lies the principle of value creation—where the combined entity is expected to generate greater economic and strategic benefits than the individual firms could achieve independently. This includes realizing economies of scale, expanding market reach, optimizing resource allocation, and improving competitive advantage. The overarching objective is to maximize shareholder wealth, not merely through short-term financial gains, but by fostering long-term sustainability, innovation, and resilience in a dynamic business environment.

Introduction - Indian banking industry has witnessed a wave of mergers and amalgamations, driven by strategic imperatives aimed at strengthening institutional resilience, expanding market reach, and enhancing financial performance. Mergers and acquisitions (M&A) are increasingly employed as tools for rapid consolidation, allowing banks to achieve scale economies, diversify product portfolios, and enter new geographic markets. While the theoretical rationale behind M&A is largely financial centred on improving profitability, operational efficiency, and shareholder valuethe practical motivations often extend to regulatory compliance, competitive positioning, and long-term sustainability.

The growing use of mergers as a swift and effective consolidation strategy reflects broader shifts in India's economic landscape, particularly in response to globalization, digital transformation, and policy reforms. Indian banks are not only consolidating domestically but also exploring cross-border opportunities to expand their global footprint.

Major Public Sector Bank Mergers in 2020

Punjab National Bank (PNB), Oriental Bank of Commerce (OBC), and United Bank of India (UBI):

1. On **1**st April 2020, Punjab National Bank acquired OBC and UBI, forming India's second-largest public sector lender in terms of business volume and branch network.
2. The merger created a next-generation banking entity with over 11,000 branches, significantly enhancing its geographical reach and customer base.
3. A unified brand identity was introduced, incorporating distinctive visual elements from all two legacy institutions to reflect their shared heritage and future vision.
4. The synergy from this amalgamation aimed to improve operational efficiency, reduce duplication, and position the bank for global competitiveness.

Canara Bank and Syndicate Bank:

1. Also effective from 1st April 2020, Syndicate Bank was merged into Canara Bank, elevating the latter to the position of India's fourth-largest public sector bank.
2. The integration led to a reduction in operating costs, primarily due to the elimination of overlapping branch networks and streamlined administrative functions.
3. Post-merger, the combined entity operated approximately 10,342 branches and 12,289ATMs, enhancing service delivery and customer access.
4. Shareholders of Syndicate Bank received 158 shares for every 1,000 shares of Canara Bank, reflecting the agreed swap ratio and valuation terms.

Review Of Literature

Mergers in the banking sector are strategic tools aimed at enhancing competitiveness, expanding market reach, and improving operational efficiency (Patel, 2018).

Public Sector Banks (PSBs) in India have undergone significant consolidation, especially post-2019, with the government's push to create stronger, more resilient institutions (Hosapeti& Rathi, 2023).

A systematic review by Poojari & Hebbar (2023) highlights that most merger studies focus on efficiency gains, shareholder value, and financial performance, but often lack granularity in operational metrics.

Prabhu & Mahesha (2025) conducted a pre- and post-merger analysis of five major PSBs, revealing mixed outcomes. While some banks showed improvement in asset quality and operational metrics, others struggled with integration challenges.

Gaps And Limitations In Existing Literature:

1. Many studies rely on financial ratios without dissecting operational processes such as IT integration, HR restructuring, and service delivery changes.
2. There is limited longitudinal data on post-merger operational efficiency beyond 5 years, making it difficult to assess sustained impact.
3. Comparative studies between merged and non-merged PSBs are scarce, which could help isolate merger effects from broader sectoral reforms.

Research Gap Identified: While existing literature provides insights into financial performance and asset quality post-merger, there is a clear gap in:

1. Granular operational metrics (e.g., turnaround time, service quality, digital adoption).
2. Comparative efficiency analysis across merged vs. non-merged PSBs.
3. Longitudinal studies capturing medium- to long-term operational outcomes.

Objective Of Study : To Evaluate the Effects of Bank Mergers on Operational Efficiency: A Study of Selected public sector banks.

Hypothesis

H_0 (Null Hypothesis)

Statement: The financial performance of the chosen banks did **not** significantly change before and after the mergers.

Interpretation: Suggests that mergers had no measurable impact on financial metrics.

H_1• (Alternative Hypothesis)

Statement: The financial performance of the chosen banks **significantly changed** before and after the mergers.

Interpretation: Indicates that mergers led to statistically significant changes in performance.

Research Methodology: This study is entirely grounded in secondary data sources. Relevant information has been systematically gathered from a range of credible platforms, including academic journals, financial periodicals, industry reports, books, and banking-related publications. Key data repositories such as Prowess, Yahoo Finance, and the official websites of the selected banks—particularly their annual reports—have been utilized to ensure comprehensive and reliable coverage of financial performance indicators.

Sample Composition And Merger Timeline: This study focuses on evaluating the impact of mergers on operational efficiency across selected public sector banks in India. The sample includes two major acquiring banks: Punjab National Bank (PNB), Canara Bank, alongside their respective merger counterparts.study focuses on a selected sample of public sector banks involved in major consolidation initiatives undertaken by the Government of India. The sample includes:

Acquiring Banks	Acquired Banks	Effective Date of Merger
Punjab National Bank (PNB)	United Bank of India, Oriental Bank of Commerce	April 1, 2020
Canara Bank	Syndicate Bank	April 1, 2020

The study utilizes a set of key efficiency indicators to assess the operational performance of the selected public sector banks. These include Return on Equity (ROE), Operating Profit Ratio, Gross Profit Margin, Earnings Per Share (EPS), and Asset Turnover Ratio. To evaluate changes in performance, financial ratio analysis has been employeda widely recognized technique that establishes quantitative relationships between financial variables, offering insights into operational efficiency and profitability.

To statistically validate the impact of mergers on the acquiring banks' efficiency, a paired t-test has been conducted. This test compares pre- and post-merger performance metrics to determine whether the observed differences are statistically significant. By applying this method, the study aims to rigorously assess whether mergers have led to measurable improvementsor declinesin operational efficiency over time.

Limitation Ofthe Study:

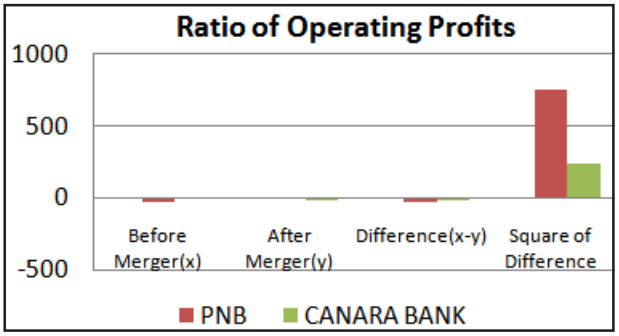
1. **Restricted Sample Scope**: The analysis is confined to two selected public sector bank mergers, which may not fully represent the broader spectrum of consolidation activities across the Indian banking sector. As such, the results may not be extrapolated to private banks or other merger contexts without caution.
2. **Temporal Boundaries**: The study relies on pre- and post-merger financial data from a defined time window. While this allows for focused comparison, it may overlook long-term integration effects or delayed operational shifts that emerge beyond the immediate post-merger period.
3. **Dependence on Secondary Data**: All data utilized in the study are sourced from secondary platforms such as financial databases, annual reports, and institutional websites. This introduces inherent limitations, including potential inconsistencies in reporting standards, data availability gaps, and lack of access to internal operational metrics or qualitative insights.
4. **Lack of Qualitative Dimensions**: The study emphasizes quantitative efficiency ratios and statistical testing, which may not capture softer dimensions of merger success—such as cultural integration, employee morale, or customer satisfaction—that also influence operational outcomes.
5. **External Influences Not Isolated**: Broader economic

factors, regulatory changes, and sector-wide reforms occurring concurrently with the mergers may also affect bank performance, making it challenging to attribute observed changes solely to the merger event.

Analysis And Findings

Ratio of Operating Profits: Operating Profit/ Netsales* 100 is the Operating Profit Ratio.It typically measures the operating performance and the efficiency o fthe company.

Bank name	Before Merger(x)	After Merger(y)	Difference (x-y)	Square of Diffe -rence
PNB	-31.71	-15.51	16.2	262.44
CANARA BANK	-12.4	-19.42	-7.02	49.28

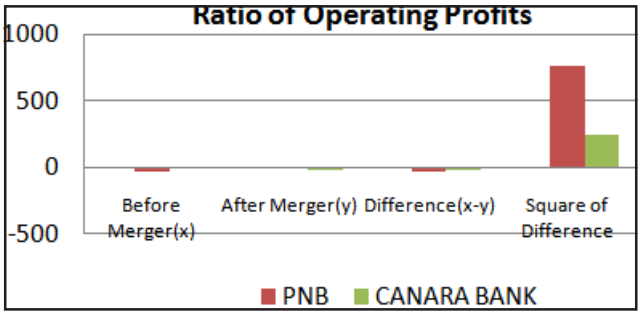


PNB has the ratio (-31.71) before merger and it has lower ratio after merger (16.21). Canara Bank has the ratio(-1240) after merger and it has lower ratio (-19.42) before the merger.

Return on Equity Ratio

Income from equity is calculated by= Net income/ shareholder's equity It measures the profitability. Higher the number, higher the return

Bank name	Before Merger(x)	After Merger(y)	Difference (x-y)	Square of Diffe -rence
PNB	-22.31	0.41	-21.9	471.61
CANARA BANK	1.18	-5.42	-4.24	17.97



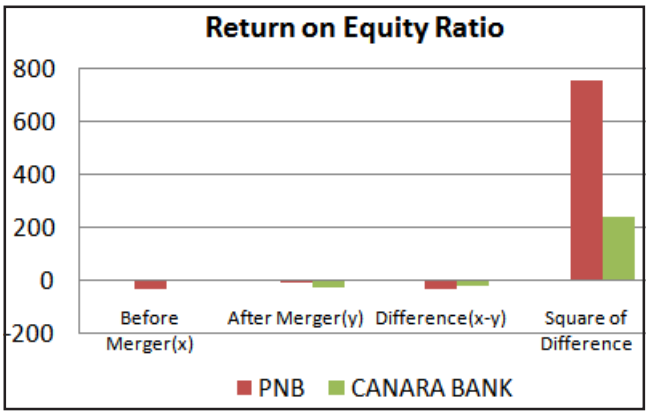
There turn equity ratio of Punjab National Bank increased following the merger from- 22.31 to 0.41 from-24.20. Canara Bank has a lower ratio following the merger from1.18 to-5.42.

Ratio of Earnings per Share (EPS Ratio)

Ratio of Earnings per share is the net income of the company divided by the weighted average number of outstanding shares.

It also serves as an indicator of the company's profitability.

Bank name	Before Merger(x)	After Merger(y)	Difference (x-y)	Square of Diffe -rence
PNB	-29	1.5	-27.5	756.25
CANARA BANK	8.29	-23.8	-15.51	240.56



Punjab National Bank has a higher ratio following the merger as compared to the ratio before the merger. Canara Bank has a lower EPSratio followingthe merger as compared tobefore themerger. Other ratios were also calculated such as the ratio of asset turnover which takes into account both the fixed as well as the current assets to measure the overall financial performance of the company. Punjab National bank has an equal ratio (0.07) both before to and following the merger. Canara Bank has an equal ratio (0.07) both before to and following the merger

Analysis of t-test in selected units under the study of Net Profit Ratio

N	Mean		SD		DF	t-test	p-values	Result
	X	Y	X	Y				
10	-8.17	-4.01	6.98	10.03	5	-1.29	0.24	H_0

Statistical Interpretation

In this analysis, the t-statistic was calculated as **t = -1.29**, with a corresponding **p-value of 0.24**. Since the absolute value of the t-statistic is less than the p-value ($|t| < p$), we fail to reject the null hypothesis ($\mathbf{H_0}$). This implies that there is **no statistically significant difference** in the mean scores of the selected banking units before and after the merger. In other words, the mergers did not lead to a measurable change in the overall profitability ratios of these banks.

Conclusion: The Indian banking sector has undergone a wave of mergers and acquisitions (M&A) in recent years, driven by regulatory reforms, strategic consolidation, and the entry of global financial players. This study examined the financial performance of selected Indian banks pre- and post-merger, focusing on key profitability indicators.

Profitability Ratios: The comparative analysis revealed that the pre- and post-merger profitability ratios of the selected banks did not exhibit statistically significant variation. This suggests that, on average, mergers did not drastically alter the financial outcomes in the short term.

Earnings Per Share (EPS): Notably, Punjab National Bankincreasein EPS following their respective mergers. This improvement may reflect enhanced operational efficiency, better asset utilization, or successful integration strategies.

Cost Efficiency: The post-merger institutions appeared to benefit from greater cost efficiency, likely due to economies of scale, streamlined operations, and reduced redundancies.

Shareholder Value: Despite gains in EPS, the Return on Equity (ROE) ratios declined across the board after the mergers. This indicates that while earnings may have improved, the overall return generated on shareholders' equity diminished—possibly due to increased capital bases or transitional inefficiencies.

Strategic Implications: In the broader context of the banking industry, mergers often serve as a mechanism for strengthening weaker banks by aligning them with more robust institutions. This not only stabilizes the financial system but also enhances competitiveness and resilience.

References:-

1. Hosapeti, G. S., & Rathi, R. (2023). *Impact of Merger and Acquisition on Financial Performance of Public Sector Banks: A Case Study on Bank of Baroda*. International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR), 5(5).
2. Srivastava, D., & Devi, S. (2023). *Mergers of Public Sector Banks in India: Outcome and Challenges Faced with Big Private Banks – A Comparative Study*. International Journal of Creative Research Thoughts (IJCRT).
3. Reserve Bank of India. (2020). *Report on Trend and Progress of Banking in India*.
4. Ministry of Finance, Government of India. (2019). *Press Release: Consolidation of Public Sector Banks*.
5. Kumar, S. (2021). *Post-Merger Financial Performance of Indian Public Sector Banks: A CAMEL Model Analysis*. Journal of Banking and Finance Research, 10(2), 45–60.

Webliography:-

1. Academia.edu – M&A in Indian PSBs.
2. IJFMR – Bank of Baroda Case Study.
3. IJCRT – Comparative Study of PSB Mergers.
4. RBI Official Website.
5. Ministry of Finance – PSB Consolidation.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मध्यप्रदेश के बुर्हानपुर जिले में एकीकृत बाल विकास सेवा (ICDS) का मूल्यांकन : पोषण एवं सेवा कवरेज का अध्ययन

सुमन कुमार पिल्लई* डॉ. दीपक गर्ग **

* शोधार्थी, रवींद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** प्रोफेसर (मानविकी एवं उदार कला) रवींद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह शोध पत्र बुर्हानपुर (मध्यप्रदेश) जिले में Integrated Child Development Services (ICDS) के प्रभाव और पोषण संबंधित परिणामों का द्वितीयक-डेटा विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन में District Nutrition Profile (Burhanpur) NFHS-5 के जिला-तथ्यपत्र, तथा राज्य/राष्ट्रीय स्तर के मूल्यांकन/लेखों का उपयोग किया गया। परिणामों से पता चलता है कि बुर्हानपुर में पाँच वर्ष से कम उम्र के बच्चों में स्टंटिंग (~38.7%), वेस्टिंग (~27.9%), अंडरवेट (~47.2%) और एनीमिया (~70.0%) का बोझ उल्लेखनीय है – जो कि सार्वजनिक स्वास्थ्य हेतु चिंता का विषय है। अध्ययन में ICDS की सेवाओं (पोषण पूरक, हेल्थ चेकअप, प्री-स्कूल) की कवरेज में कुछ सुधार देखे गए हैं परंतु आहार विविधता, महिला शिक्षा, स्वच्छता तथा सेवा-गुणवत्ता में कमी रुकावटें बनी हुई हैं। अंततः सुधार के लिए लक्षित सिफारिशें दी गई हैं।

शब्द कुंजी – ICDS, बुर्हानपुर, स्टंटिंग, वेस्टिंग, पोषण, NFHS, Anganwadi, NITI Aayog.

प्रस्तावना – भारत सरकार ने ICDS कार्यक्रम 1975 में शुरू किया था, जिसका मुख्य उद्देश्य बच्चों व माताओं के पोषण और स्वास्थ्य में सुधार करना है। भारत में Integrated Child Development Services (ICDS) का उद्देश्य गर्भवती महिलाओं, स्तनपान कराने वाली माताओं और पाँच वर्ष से कम उम्र के बच्चों को पोषण, स्वास्थ्य एवं शिक्षा-सम्बंधी सेवाएं उपलब्ध कराकर बाल विकास और मातृ स्वास्थ्य में सुधार करना है। मध्यम और दीर्घकालिक परिणामों का आकलन करने हेतु जिले-स्तरीय डेटा महत्वपूर्ण है। बुर्हानपुर जिले का चयन इसलिए किया गया क्योंकि यहाँ पोषण की स्थिति अभी भी गंभीर है। यह अध्ययन ICDS कवरेज और पोषण-स्थिति के आकलन के लिए द्वितीयक डेटा पर आधारित है। इस अध्ययन का उद्देश्य बुर्हानपुर जिले में ICDS से जुड़ी उपलब्ध सेवाओं, पोषण स्थिति और संबंधित सामाजिक-आर्थिक निर्धारकों का विश्लेषण करना है, तथा कार्यक्रम के सुधार हेतु सिफारिशें देना है।

साहित्य समीक्षा

1. **ICDS के वितरण व उपयोग पर शोध:** राष्ट्रीय व राज्य स्तरीय अध्ययनों ने बताया है कि ICDS की उपयोगिता और कवरेज में राज्यों व जिलों के बीच व्यापक भिन्नता है, कुछ स्थानों पर सेवाओं का उपयोग बढ़ा है पर पोषण परिणामों में सुधार धीमा रहा। उपयोगिता व पोषण परिणामों के बीच जटिल सम्बन्ध हैं- सेवा कवरेज बढ़ने पर भी आहार विविधता, स्वास्थ्य सेवा पहुँच और माता-पिता की जागरूकता महत्वपूर्ण मध्यस्थ कारक बने रहते हैं।
2. कई शोधों ने दर्शाया है कि ICDS का प्रभाव केवल सेवाओं की उपलब्धता पर नहीं, बल्कि सेवा-गुणवत्ता, महिला शिक्षा, आहार विविधता और स्वास्थ्य व्यवहार पर निर्भर करता है (Sachdev 2011)।
3. IFPRI (2022) के अनुसार बुर्हानपुर जिले में बच्चों में अंडरवेट और एनीमिया का स्तर उच्च है। NFHS-5 (2019-21) के तथ्यपत्र भी यही संकेत देते हैं।Relifweb(2015) द्वारा किए गए खकनार ब्लॉक पोषण-कारण अध्ययन में पाया गया कि भोजन विविधता और स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच मुख्य बाधाएँ हैं।
4. **जिले-स्तर के पोषण प्रोफाइल का महत्व:** IFPRI द्वारा विकसित District Nutrition Profile जैसा जिला-विशिष्ट विश्लेषण नीतिगत निर्णयों को लक्षित करने में मदद करता है। बुर्हानपुर के DNP ने 2019-2020 के डेटा के आधार पर जिले के पोषण बोझ और निर्धारित प्राथमिकता वाले क्षेत्रों (जैसे आहर, स्वच्छता, महिला शिक्षा) को उजागर किया है।
5. **स्थानीय अध्ययन एवं विश्लेषण:** बुर्हानपुर के कुछ ब्लॉक्स पर किए गए क्षेत्र-विशेष पोषण कारण-विश्लेषणों ने स्थानीय खाद्य व्यवहार, सफाई/जल सुविधाएँ और सेवाओं की विश्वसनीयता को प्रमुख चुनौतियाँ बताया है। ऐसी नीतिगत जानकारी से लक्षित हस्तक्षेप संभव हैं।
6. **ऑडिट व अनुपालन रिपोर्टें:** राज्य स्तरीय ऑडिट रिपोर्टें कार्यक्रम की क्रियान्वयन गुणवत्ता (जैसे पूरक आहार वितरण, रिकॉर्ड-कीपिंग, भोजन मानक) में कमजोरी की ओर इशारा करती हैं, जो सेवा-प्रदर्शन और नतीजों को प्रभावित कर सकती हैं।

उपरोक्त साहित्य दर्शाता है कि ICDS का प्रभाव केवल कवरेज तक सीमित नहीं है कृ सेवा-गुणवत्ता, पूरक प्रणालियाँ और सामाजिक-आर्थिक कारक मिलकर आउटकम्स तय करते हैं।

उद्देश्य :

1. बुर्हानपुर जिले के ICDS संबंधित पोषण संकेतकों (स्टंटिंग, वेस्टिंग, अंडरवेट, एनीमिया) का विश्लेषण करना।
2. ICDS सेवाओं की कवरेज और गुणवत्ता का मूल्यांकन करना।
3. सामाजिक-आर्थिक निर्धारकों (महिला शिक्षा, स्वच्छता, आहार

विविधता) की भूमिका को समझना।
4. नीति और कार्यक्रम सुधार हेतु व्यावहारिक सुझाव देना।

शोध प्रक्रियावली

1. शोध प्रकार: द्वितीयक-डेटा विश्लेषण एवं दस्तावेज-आधारित समीक्षा।

2. डेटा स्रोत:

1. District Nutrition Profile — Burhanpur (IFPRI / DNP) 2022)- NITI Aayog
2. National Family Health Survey (NFHS-5) — Madhya Pradesh / district factsheets
3. प्रासंगिक वैज्ञानिक लेख (ICDS मूल्यांकन, उपयोगिता अध्ययन)।
4. क्षेत्र-विशेष रिपोर्ट (Khaknar block nutrition causal analysis) व राज्य-स्तरीय ऑडिट रिपोर्ट।

3. विश्लेषण पद्धति:

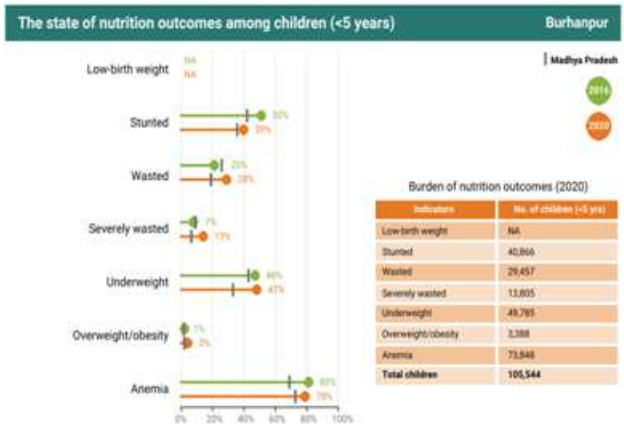
1. DNP और NFHS-5 के जिले-स्तरीय संकेतकों का प्रतिशत व बोझ (absolute numbers) निकाला गया।
2. संकेतकों के ट्रेंड-विवेचन हेतु 2015-16 और 2019-21 की तुलना पर ध्यान दिया गया (जहाँ उपलब्ध)।
3. साहित्य समीक्षात्मक रूप से ICDS कवरेज, सेवा-गुणवत्ता व स्थानीय स्वास्थ्य-सामाजिक निर्धारकों का समन्वित विश्लेषण किया गया।

परिणाम

जनसांख्यिकीय सारांश (District summary)

1. कुल 0-5 वर्ष के बच्चों की संख्या (अनुमानित, 2019): 105,544.

मुख्य पोषण संकेतक (Key nutrition indicators - Burhanpur) 2019/2020)



संकेतक	संख्या (No. of children)	प्रतिशत (≈)
Stunted (ऊँचाई-अनुपात में कमी)	40,866	38.7%
Stunted (तुरंत दुर्क्यवस्था)	29,457	27.9%
Severe wasting	13,805	13.08%
Underweight (वजन-कमी)	49,785	47.2%
Anemia (एनीमिया)	73,848	70.0%
कुल 0-5 वर्ष बच्चे	105,544	100%

(स्रोत: District Nutrition Profile - Burhanpur)

गणना: प्रतिशत = (संख्या / कुल बच्चों) x 100. (उपरोक्त प्रतिशत Round किया गया है)।

ये आँकड़े दर्शाते हैं कि बुर्हानपुर में वजन, लंबाई और हीमोग्लोबिन सम्बंधी समस्याएँ व्यापक हैं कृ विशेषकर अंडरवेट व एनीमिया का भार बहुत अधिक है।

2. ICDS-सेवा कवरेज व बदलाव : DNP में बताए गए संकेतकों के अनुसार कुछ इंटरवेंशनों (जैसे आहार सम्पूरक, टीकाकरण, प्री-स्कूल) की कवरेज में सुधार दिखाई देता है (उदा. स्वास्थ्य-चेकअप/वजन-मापन व प्रीसकूल उपस्थिति में वृद्धि)। परन्तु आहार विविधता, अंडरन्युट्रिशन के इमर्जेंसी रूप (Serve Wasting) और मातृ-एनीमिया में अभी भी उच्च स्तर मौजूद हैं - यह संकेतित करता है कि मात्र सेवाओं की उपलब्धता पर्याप्त नहीं, उनकी गुणवत्ता, निरंतरता तथा पूरक कार्यक्रम (जैसे स्वच्छता, महिला शिक्षा) भी आवश्यक हैं। खकनार ब्लॉक के पोषण कारण-विश्लेषण जैसी फील्ड-रिपोर्टों ने स्थानीय स्तर पर निम्न बिंदुओं की पहचान की है: खाद्य सुरक्षा की असमानता, पोषण संबंधी व्यवहार (कमीशन/विविधता), स्वास्थ्य-सेवाओं तक पहुँच के बाधक, तथा संसाधन/सप्लाई-चौन में व्यवधान। ये कारण सीधे ICDS के आउटपुट व आउटकम्स पर प्रभाव डालते हैं।

राज्य ऑडिट रिपोर्टों ने संदर्भित वर्षों में ICDS के कुछ अनुपालन विषयों (रिकॉर्ड-कीपिंग, मानक खाद्य राशन के अनुपालन, भुगतान और निगरानी) में कमियों की रिपोर्ट दी है कृ जो स्थानीय क्रियान्वयन-क्षमता और सेवा-गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकती हैं।

चर्चा:

1. उच्च एनीमिया व अंडरवेट का रुब-रुकी चुनौती: बुर्हानपुर में लगभग 70% बच्चों में एनीमिया का बोझ अत्यधिक हैय यह केवल पूरक आहार से हल नहीं होगा - आयरन-समृद्ध आहार, आईपीसी-संचार, डीपीएचटी (IFA वितरण) की विश्वसनीयता और माताओं की पोषण शिक्षा पर जोर आवश्यक है।

2. सेवा-कवरेज बनाम परिणाम: NFHS और DNP के संयुक्त विश्लेषण से पता चलता है कि सेवा कवरेज बढ़ने के बावजूद (उदा. वजन-मापन, प्री-स्कूल) पोषण परिणामों में उल्लेखनीय सुधार सीमित रहाय इसका कारण सेवा-गुणवत्ता, निरंतरता, तथा सामाजिक-आर्थिक निर्धारकों की उपेक्षा है। यह अन्य अध्ययनों के निष्कर्षों से मेल खाता है कि ICDS-जैसे प्रोग्राम में क्वालिटी और इंटीग्रेशन तय करने वाली होती है।

3. लक्षित हस्तक्षेपों की आवश्यकता: उच्च गंभीर दुर्क्यवस्था (Serve Wasting ~13%) की उपस्थिति दर्शाती है कि आपातकालीन पोषण हस्तक्षेप (Therapeutic feeding, रेफरल नेटवर्क) भी मजबूत होने चाहिए कृ न कि केवल सामान्य पूरक आहार कार्यक्रम।

4. निगरानी व ऑडिट सुधार: राज्य-स्तरीय ऑडिट में बताई गई कमियों का निवारण कर के आपूर्ति-श्रृंखला, रिकॉर्डिंग और समयबद्ध भुगतान सुनिश्चित किए जा सकते हैं, जिससे आंगनवाड़ी स्तर पर सेवाएँ बेहतर

सिफारिशें

1. गुणवत्ता-केंद्रित ICDS हस्तक्षेप: केवल कवरेज न बढ़ाकर आंगनवाड़ी स्तर पर सेवा-गुणवत्ता (पोषण-माप, आहार गुणवत्ता,

काउंसलिंग क्षमता) पर प्रशिक्षण व मानकीकरण लागू करें।

2. लक्षित उपचारात्मक सेवाएँ: Serve Wasting के मामलों के लिए रेफरल प्रणाली और THR/TPM (Therapeutic Management) को मजबूत करें।

3. मजबूत निगरानी व ऑडिट-टूल्स: डिजिटल रिकॉर्डिंग, वास्तविक समय फीडबैक और वित्तीय अनुपालन की पारदर्शिता बढ़ाएँ। ऑडिट सुझावों के आधार पर सुधारात्मक कार्रवाई अनिवार्य करें। सह-क्षेत्रीय समन्वय: स्वास्थ्य, शौचालय/जल, शिक्षा तथा कृषि विभागों के साथ समन्वित कार्यक्रम (विंडो-ऑफ-ऑपर्चुनिटी: First 1000 days) लागू किए जाएँ।

4. समुदाय-आधारित संचार: माता-पिता/सामुदाय को पोषण, आरोग्य और आहार विविधता पर लक्षित बीईसी (Behaviour change Communication) अभियान चलाएँ।

निष्कर्ष- बुर्हानपुर जिले में ICDS कवरेज में सुधार हुआ है, लेकिन पोषण परिणाम अभी भी कमजोर हैं। उच्च अंडरवेट और एनीमिया दर्शाते हैं कि लक्षित और गुणवत्ता-केंद्रित हस्तक्षेप की आवश्यकता है। बुर्हानपुर जिले में ICDS कार्यक्रम ने सेवा-कवरेज के कुछ संकेतकों में सुधार किया है, परन्तु पोषण परिणामों (विशेषकर अंडरवेट व एनीमिया) पर इसका प्रभाव सीमित रहा है। जिला-विशिष्ट डेटा (District Nutrition Profile) दर्शाता है कि बहु-आयामी हस्तक्षेपों कृ सेवा-गुणवत्ता, आपूर्ति-श्रृंखला, मातृ-शिक्षा, स्वच्छता और लक्षित उपचारात्मक सेवाओं कृ की आवश्यकता है। नीति-निर्माताओं को DNP व NHFS-जैसी जिले-स्तरीय सूचनाओं का उपयोग कर के अधिक लक्षित, समयबद्ध और गुणवत्ता-केंद्रित ICDS नीतियाँ लागू करनी चाहिए।

सुझाव :

1. आंगनवाड़ी भवनों एवं सुविधाओं का सुदृढ़ीकरण।
2. कार्यकर्ताओं के लिए नियमित प्रशिक्षण और प्रोत्साहन।
3. गुणवत्तापूर्ण पूरक पोषण आहार की आपूर्ति सुनिश्चित करना।
4. सामुदायिक सहभागिता और मातृ शिक्षा कार्यक्रम को बढ़ावा देना।
5. नियमित निगरानी एवं पारदर्शिता हेतु डिजिटल ट्रैकिंग प्रणाली।

सीमाएँ – अध्ययन प्राथमिक डेटा संकलन पर आधारित नहीं है, इसलिए क्षेत्र-स्तर पर हाल की गतिविधियों/नवीन हस्तक्षेपों का प्रत्यक्ष मूल्यांकन नहीं हुआ, तथापि उपलब्ध सरकारी व संस्थागत रिपोर्टें विश्वसनीय आधार प्रदान करती हैं। आगे का अनुसंधान आंगनवाड़ी-स्तर सेवा-गुणवत्ता मूल्यांकन, घर-आधारित डाइटराइटी अध्ययन तथा इंटरवेंशन-आधारित रैंडमाइज्ड तुलनात्मक अध्ययन कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंह, एन., गुयेन, पी. एच., जांगिड, एम., सिंह, एस. के., सरवाल, आर., भाटिया, एन., जॉनस्टन, आर., जो, डब्ल्यू., एवं मेनन, पी. (2022). जिला पोषण प्रोफाइल: बुरहानपुर, मध्य प्रदेश. अंतर्राष्ट्रीय खाद्य नीति अनुसंधान संस्थान (IFPRI) कृ जिला पोषण प्रोफाइल. नीति आयोग।
2. अंतर्राष्ट्रीय जनसंख्या विज्ञान संस्थान (IIPS) एवं स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय (MoHFW). (2021). राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-5), भारत 2019-21 - मध्य प्रदेश राज्य एवं जिला तथ्यपत्र DHS प्रोग्राम।
3. सचदेव, वाई. (2011). एकीकृत बाल विकास सेवाएं (ICDS): कार्यक्रम की संरचना और चुनौतियाँ. पी.एम.सी. लेख।
4. रिलीफवेब/ए.सी.एफ. (2015). पोषण कारण विश्लेषण: खकनार ब्लॉक, बुरहानपुर, मध्य प्रदेश. स्थानीय कुपोषण निर्धारकों पर क्षेत्रीय रिपोर्ट. रिलीफवेब।
5. भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (CAG)- (2024). अनुपालन अंकेक्षण रिपोर्ट - मध्य प्रदेश सरकार (ICDS क्रियान्वयन पर टिप्पणियाँ सहित). भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक।
6. https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC4925843/\utm_source=chatgpt.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Potential of Enforceable 'Directive Principles of State Policy (DPSPs)'

Dr. S. K. Talware*

***Research Scholar, RTM Nagpur University, Nagpur (MH.) INDIA**

Introduction - ***"We must make our 'Political Democracy' a 'Social and Economic Democracy' – Dr B.R. Ambedkar***
The Directive Principles of State Policy (DPSPs) in the Indian Constitution (Articles 36–51) are non-justiciable guidelines directing the state to promote social, economic, and political justice through welfare, equitable resource distribution, and protections for marginalized groups. Had these principles been enforceable, they could have significantly transformed the economic life of people by mandating state accountability in implementing policies like equitable resource distribution, living wages, and welfare programs, potentially reducing poverty and inequality more effectively. Dr. B.R. Ambedkar's vision of state socialism in States and Minorities (1945), which influenced the DPSPs, advocated enforceable economic reforms, suggesting a more robust impact on economic life if enforceability was in place. However, challenges like resource constraints and political resistance could have limited outcomes.

Potential Impact of Enforceable DPSPs on Economic Life: If the DPSPs were enforceable, they would have had a legally binding effect, compelling the state to implement policies ensuring economic equity, welfare, and protections for weaker sections. Keer argues that enforceable DPSPs would have realized Ambedkar's state socialism, ensuring economic equity (Keer, 1971, pp. 368–370).Zelliot argues that enforceable DPSPs would have enhanced SC economic conditions, aligning with Ambedkar's socialism (Zelliot, 2013, pp. 166–169).Omvedt argues that enforceable DPSPs would have advanced Ambedkar's socialist goals, reducing poverty (Omvedt, 1994, pp. 178–181).Had the DPSPs been enforceable, they could have transformed the economic life of people by mandating state-led welfare, equitable resource distribution, and protections for marginalized groups, aligning with Ambedkar's state socialism (Ambedkar, 1979, pp. 408–425)

Below, is the analysis of the potential impacts on the economic life of people, focusing on key DPSPs and their alignment with Ambedkar's state socialism:

1. Article 38: Promotion of Welfare and Reduction of Inequalities:

Provision: Article 38 directs the state to secure a social order promoting welfare and minimizing inequalities in income, status, and opportunities (Constitution of India, Article 38).

Potential Impact if Enforceable: Enforceability would have mandated the state to implement comprehensive welfare programs and reduce income disparities, potentially lifting millions out of poverty. Ambedkar's state socialism, emphasizing state-led welfare (Ambedkar, Vol. 1, 1979, pp. 408–412), would have supported enforceable policies like universal income support or robust public services. This could have ensured better access to healthcare, education, and housing, improving economic conditions for the poor.

Likely Outcomes: Enforceable welfare could have reduced India's Gini coefficient (a measure of income inequality) faster than historical trends (e.g., India's Gini was 0.35 in 2011, per World Bank data). Programs like MGNREGA might have been scaled up earlier, ensuring stable incomes (Thorat, 2007, pp. 56–58).

Challenges: Resource constraints and bureaucratic inefficiencies could have hindered implementation, as seen in historical welfare programs (Teltumbde, 2016, pp. 88–90).

2. Article 39: Equitable Distribution of Resources and Prevention of Wealth Concentration:

Provision: Article 39 directs the state to ensure equitable distribution of material resources, prevent wealth concentration, provide adequate livelihoods, and ensure equal pay (Constitution of India, Article 39).

Potential Impact if Enforceable: Enforceability would have compelled the state to implement Ambedkar's vision of nationalization of industries and agriculture (Ambedkar, 1979, pp. 409–411), potentially reducing wealth disparities. For example, enforceable land reforms could have redistributed land to landless SCs and STs, enhancing their economic status. Keer highlights Article 39's potential for resource distribution (Keer, 1971, pp. 369–371).

Equal pay mandates would have improved wages for low-income workers, particularly women and marginalized groups.

Likely Outcomes: Policies like bank nationalization (1969) and land reforms could have been more widespread and effective, reducing rural poverty (e.g., 50% of India's population was below the poverty line in the 1970s, as per Planning Commission data). Enforceable equal pay could have narrowed the gender wage gap (Austin, 1999, pp. 51–53).

Challenges: Resistance from landed elites and industrialists, as seen in historical land reform failures, could have limited outcomes (Teltumbde, 2016, pp. 88–90).

3. Article 41: Right to Work, Education, and Public Assistance:

Provision: Article 41 directs the state to secure the right to work, education, and public assistance for unemployment, old age, and disability (Constitution of India, Article 41).

Potential Impact if Enforceable: Enforceability would have mandated universal access to employment and education, aligning with Ambedkar's welfare programs (Ambedkar, 1979, pp. 415–418). This could have ensured job guarantees for the unemployed and free education for all, significantly improving economic mobility for SCs and other weaker sections.

Likely Outcomes: A legally binding right to work could have led to a nationwide employment guarantee scheme earlier than MGNREGA (2005), reducing rural unemployment (e.g., 8.3% in 1983, per NSSO data). Universal education could have increased literacy rates (e.g., 52% in 1991, per Census data) and economic opportunities (Rodrigues, 2002, pp. 43–45).

Challenges: Fiscal constraints and administrative inefficiencies could have delayed implementation, as seen in education schemes (Teltumbde, 2016, pp. 88–90).

4. Article 43: Living Wage and Decent Working Conditions:

Provision: Article 43 directs the state to secure a living wage, decent working conditions, and social security for workers (Constitution of India, Article 43).

Potential Impact if Enforceable: Enforceability would have ensured minimum wages and better working conditions, aligning with Ambedkar's protections against economic exploitation (Ambedkar, 1979, pp. 400–402, 415–417). This could have improved the economic life of laborers, particularly in the unorganized sector (e.g., 90% of India's workforce in the 1990s).Baxi highlights Article 43's role in labour rights (Baxi, 2006, pp. 35–37).

Likely Outcomes: Enforceable living wages could have reduced income poverty for workers, as seen in partial successes of the Minimum Wages Act (1948). Social security could have provided safety nets, improving economic stability (Baxi, 2006, pp. 34–36).

Challenges: Resistance from employers and economic liberalization post-1991 could have undermined enforcement (Teltumbde, 2016, pp. 88–90).

5. Article 46: Promotion of Educational and Economic Interests of Weaker Sections:

Provision: Article 46 directs the state to promote the educational and economic interests of SCs, STs, and weaker sections, protecting them from exploitation (Constitution of India, Article 46).

Potential Impact if Enforceable: Enforceability would have compelled the state to prioritize SC/ST upliftment, aligning with Ambedkar's safeguards (Ambedkar, 1979, pp. 420–424). This could have ensured widespread access to education and jobs, reducing economic disparities for marginalized groups.Rodrigues,Omvedt and Zelliot highlights Article 46's role in SC upliftment (Rodrigues, 2002, pp. 44–46;Omvedt, 1994, pp. 180–182;Zelliot, 2013, pp. 167–170).

Likely Outcomes: Enforceable reservations and scholarships could have increased SC/ST literacy (e.g., 37% for SCs in 1991, as per Census data) and employment, narrowing economic gaps. Anti-exploitation measures could have reduced bonded labour (Jaffrelot, 2005, pp. 94–96).

Challenges: Social resistance from upper castes and resource limitations could have slowed progress (Teltumbde, 2016, pp. 88–90).

6. Article 39A: Free Legal Aid:

Provision: Article 39A directs the state to provide free legal aid to ensure equal access to justice (Constitution of India, Article 39A).

Potential Impact if Enforceable: Enforceability would have ensured access to justice for the poor, aligning with Ambedkar's emphasis on state accountability (Ambedkar, 1979, pp. 422–425). This could have empowered marginalized groups to challenge economic exploitation legally.

Likely Outcomes: Legal aid programs could have reduced economic injustices, as seen in cases like Hussainara Khatoon v. State of Bihar (1979), ensuring better enforcement of labour and land rights (Jain, 2018, pp. 125–127).

Challenges: Limited judicial infrastructure could have constrained implementation(Teltumbde, 2016, pp. 88–90).

Broader Implications for Economic Life: If DPSPs were enforceable, the economic life of people, particularly the marginalized, could have been transformed as follows:

Reduced Poverty and Inequality: Enforceable welfare, resource distribution, and wage policies could have accelerated poverty reduction (e.g., from 45% in 1993 to 22% in 2011, per Planning Commission data) (Thorat, 2007, pp. 56–58).

Empowerment of Marginalized Groups: Enforceable Article 46 could have enhanced SC/ST access to education and jobs, reducing economic disparities (Jaffrelot, 2005, pp. 94–96).

Strengthened Welfare State: Enforceable DPSPs could have expanded public services, improving living standards (Rodrigues, 2002, pp. 43–45).

Judicial Enforcement: Courts could have mandated compliance, as seen with Fundamental Rights under Article

32, ensuring economic justice (Jain, 2018, pp. 126–129).

Challenges: Fiscal constraints, bureaucratic inefficiencies, and resistance from elites could have limited outcomes, as seen in historical policy implementation (Teltumbde, 2016, pp. 88–90).

Integration with Ambedkar's State Socialism: Ambedkar's state socialism, emphasizing nationalization, welfare, and safeguards (Ambedkar, 1979, pp. 408–425), would have been more fully realized if DPSPs were enforceable:

Nationalization and Resource Distribution: Enforceable Articles 38–39 would have mandated Ambedkar's nationalization proposals (Ambedkar, 1979, pp. 409–411).

Welfare Programs: Enforceable Articles 41 and 43 would have ensured Ambedkar's welfare schemes (Ambedkar, 1979, pp. 415–418).

SC/ST Upliftment: Enforceable Article 46 would have prioritized Ambedkar's safeguards (Ambedkar, 1979, pp. 420–424).

Accountability: Enforceable Article 39A and Ambedkar's proposed Minority Commission (Ambedkar, 1979, pp. 424–425) would have ensured state accountability.

Conclusion: Dr. B.R. Ambedkar's doctrine of state socialism, as enumerated States and Minorities (1945) and which influenced the DPSPs, advocated enforceable economic reforms, suggesting a more robust impact on economic life if enforceability was in place. With the force of enforceability, they would have had a legally binding effect, compelling the state to implement policies ensuring economic equity, welfare, and protections for weaker and marginalised sections.

References:-

1. Ambedkar, B.R. Dr. Babasaheb Ambedkar: Writings and Speeches, Vol. 1. Edited by Vasant Moon, Education Department, Government of Maharashtra, Bombay, 1979.
2. Keer, Dhananjay. Dr. Ambedkar: Life and Mission. Popular Prakashan, Bombay, 1971.
3. Zelliot, Eleanor. Ambedkar's World: The Making of Babasaheb and the Dalit Movement. Navayana, New Delhi, 2013.
4. Omvedt, Gail. Dalits and the Democratic Revolution: Dr. Ambedkar and the Dalit Movement in Colonial India. Sage Publications, New Delhi, 1994.
5. Constitution of India, Govt of India.
6. Thorat, Sukhadeo. Ambedkar's Perspective on Economic Development. Oxford University Press, New Delhi, 2007.
7. Planning Commission, Govt of India, 1965-70
8. Austin, Granville. The Indian Constitution: Cornerstone of a Nation. Oxford University Press, New Delhi, 1999.
9. Teltumbde, Anand. Dalits: Past, Present and Future. Routledge, New Delhi, 2016.
10. NSSO.
11. Rodrigues, Valerian. The Essential Writings of B.R. Ambedkar. Oxford University Press, New Delhi, 2002.
12. Baxi, Upendra. "Ambedkar and Human Rights." In Human Rights, Democracy and Governance, edited by C. Raj Kumar, Oxford University Press, New Delhi, 2006, pp. 34–38.
13. Jaffrelot, Christophe. Dr. Ambedkar and Untouchability: Analysing and Fighting Caste. Permanent Black, New Delhi, 2005.
14. Jain, M.P. Indian Constitutional Law. 7th ed., Lexis Nexis, New Delhi, 2018.
15. World Development Report 2014: Risk and Opportunity - Managing Risk for Development, World Bank.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सीकर जिले में जल संसाधन और कृषि सिंचाई

सुनील कुमार ढाका* डॉ. एल. सी. अग्रवाल**

* शोधार्थी, राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राज.) भारत
** आचार्य (भूगोल) राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राज.) भारत

शोध सारांश – सीकर जिला अर्द्ध शुष्क प्रदेश में स्थित है। इसके उत्तर-पश्चिमी भाग में शुरू से ही पानी की कमी रही है।जिससे वैयक्तिक और सामुदायिक दोनों स्तर पर ही परम्परागत जल संरक्षण पद्धतियाँ प्रचलित रही हैं। जलवायु परिवर्तन, बदलती जीवन शैली, बढ़तीहुई जनसंख्या का दबाव और तीव्र औद्योगीकरण के कारण जल संसाधनों पर भी दबाव बढ़ता ही जा रहा है। समाप्त होते सतही जल संसाधन और भू-जल के अंधाधुंध दोहन करने से जिले की भू-जल निष्कर्षण की दर भू-जल पुनर्भरण की तुलना में अधिक आगे निकल गई। यह दर जिले के भू-जल ब्लॉकों में अलग-अलग पाई जाती है। पिछले दो दशकों से जिले में इस तीव्र जल निष्कर्षण की दर ने कृषि में सिंचाई को भी प्रभावित किया है। घटते हुए जल संसाधन और बढ़ती हुई नलकूपों की संख्या के कारण जिले के विभिन्न क्षत्रों में कृषि सिंचाई में भी परिवर्तन आया है। पानी की कमी के चलते फसल प्रतिरूप में भी बदलाव आया है। इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र सीकर में कम होते जल संसाधनों से विभिन्न क्षेत्रों में कृषि सिंचाई में आए हुए बदलावों का अध्ययन करना है।
शब्द कुंजी – भू-जल, निष्कर्षण, सिंचाई, दोहन, फसल प्रतिरूप इत्यादि।

प्रस्तावना – सीकर जिला राजस्थान के उत्तर-पश्चिमी भाग में स्थित है। यह अर्द्ध शुष्क प्रदेश में अवस्थित है। यहाँ प्राचीन अरावली पर्वतमाला दक्षिण से उत्तर की ओर जिले को लगभग दो समान भागों में विभाजित करती है। इस प्रकार एक तरफ पहाड़ियों से घिरा हुआ भू-भाग है तो दूसरी तरफ मरुस्थलीय मैदानी प्रदेश स्थित है। अर्द्ध शुष्क प्रदेश में स्थित होने के कारण यहाँ पर कठोर जलवायु पाई जाती है। गर्मियों में तापमान की अधिकता देखने को मिलती है तो सर्दियों में शून्य डिग्री के आस-पास। इस प्रकार यहाँ पर तापान्तर अधिक देखने को मिलता है। यहाँ पर लगभग समस्त वर्षा दक्षिण-पश्चिमी मानसून से ही प्राप्त होती है। जिले की सामान्य वर्षा 45.88 सेमी है। इससे पहले सामान्य वर्षा इससे ज्यादा पाई जाती थी। पिछले दो दशकों के दौरान ही इसमें ज्यादा कमी देखने को मिली है। जिले के उत्तरी-पूर्वी और मध्यवर्ती पहाड़ी क्षेत्र में बलुई चिकनी मिट्टी एवं भूरी चट्टानी मिट्टी तथा उत्तरी-पश्चिमी भाग में रेतीली मिट्टी मिलती है। इसका उत्तरी-पश्चिमी भाग शुरू से ही पानी की कमी वाला क्षेत्र रहा है। यहाँ पर पानी खारा मिलता है, जिसमे फ्लोराइड की मात्रा बहुत अधिक मिलती है। मानसून के समय पहाड़ी क्षेत्र में कांटली, दोहन, मैंढ़ा, साबी, कसावती, रानोली जैसी मौसमी नदियाँ और कुछ नदी-नाले भी बहते हैं। परम्परागत जल संरक्षण विधियों के स्थान पर किसान अब नवीन जल संचयन विधियों का सहारा ले रहे हैं। जिले में अब परम्परागत खेती के साथ-साथ जायद फसल और उद्यानिकी में भी रकबा बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार इन दो दशकों में पानी कम होने के साथ-साथ कृषि सिंचाई साधनों और फसल प्रतिरूप में भी परिवर्तन देखने को मिल रहा है।

अध्ययन क्षेत्र – अध्ययन क्षेत्र में समस्त सीकर जिला लिया गया है। यह जयपुर के उत्तर-पश्चिम में अवस्थित है। आँकड़ों की उपलब्धता के अनुसार 10 तहसीलों को लिया गया है, शेष नई तहसील हैं। भू-जल ब्लॉक भी लगभग तहसीलवार ही मिलते हैं। अत: जिले में उपलब्ध सतही जल संसाधन, भू-जल संसाधनों का ब्लॉकवार विस्तारपूर्वक वर्णन करने के साथ-साथ पूरे जिले में इन दो दशकों में कृषि सिंचाई में आए परिवर्तनों का अध्ययन करेंगे।

सीकर जिले का तहसीलवार मानचित्र- 2022



नोट : नेछवा तहसील की सीमा राजस्व ग्रामों के अनुसार अंकित करके बनाई गई है।

अनुसंधान विधि – अनुसंधान क्षेत्र में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों ही आंकड़ों को लिया गया है। क्षेत्र सर्वेक्षण के समय जिले की समस्त तहसीलों से प्राथमिक आँकड़ों को संकलित किया गया है। द्वितीयक आँकड़े पुस्तकालय, विभिन्न विभागों के प्रकाशित प्रतिवेदन और कार्यालयों में उपस्थित होकर संकलित किए गए हैं। इस प्रकार अध्ययन में प्राथमिक

आँकड़े, द्वितीयक आँकड़े और क्षेत्र सर्वेक्षण तीनों को ही शामिल किया गया है ताकि वस्तुस्थिति का पता लगाया जा सके।

जिले में पिछले दो दशकों से जल संसाधनों की स्थिति – जैसा कि विदित है अध्ययन क्षेत्र अर्द्ध शुष्क प्रदेश में स्थित होने से इसके उत्तर-पश्चिमी भाग में भू-जल खारा होने एवं वर्षा की मात्रा भी कम होने से यहाँ पर खेती हमेशा से ही मानसून पर निर्भर रही है। पहाड़ी क्षेत्रों में कुछ मौसमी नदियाँ कांटली, साबी, दोहन, मैंढ़ा, कसावती, रानोली, सौभाग्यवती और नाले मानसून के दौरान ही बहते है। मानसून के अच्छा रहने से इन नदी-नालों पर बनाये गए सिंचाई बाँधों में पानी भर जाता है। इसके बाद रबी की फसल में सिंचाई की जाती है। जिले में 300 हैक्टेयर से अधिक सिंचाई क्षमता के कुल 7 बाँध बनाए गए हैं। इनमे से केवल कोटड़ी बाँध ही अभी बना है। शेष बाँध 2000 से पहले के बने हुए हैं। इनसे छोटे 36 बाँध भी हैं जिनसे लघु पैमाने पर सिंचाई की जाती है। इन बाँधों की कुल भण्डारण क्षमता 21.301 एम.सी.एम है। जिले में केन्द्रीय भू-जल बोर्ड के प्रतिवेदन 2004 के अनुसार कुल 8 भू-जल ब्लॉकों में से 7 ब्लॉक अति दोहित श्रेणी में और एक ब्लॉक फतेहपुर शेखावाटी ही सुरक्षित श्रेणी में था। अभी 9 ब्लॉकों में से 8 ब्लॉक अति दोहित श्रेणी में और फतेहपुर ब्लॉक अर्द्ध विषम श्रेणी है।

चित्र 1: क्षेत्र सर्वेक्षण के दौरान संकलित रायपुर सिंचाई बाँध की छवि

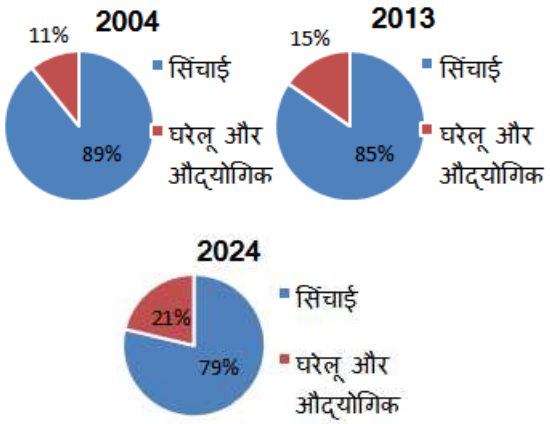


तालिका 1: सीकर जिले में भू-जल संसाधनों की उपलब्धता, उपयोग और जल निष्कर्षण की दर (वर्ष 2004, 2009, 2013, 2017 – 2024)

वर्ष	निष्कर्षण योग्य भू-जल (MCM)	सिंचाई में निष्कर्षित भू-जल (MCM)	घरेलू और औद्योगिक कार्यों में निष्कर्षित भू -जल (MCM)	भू-जल निष्कर्षण की दर (प्रतिशत)
2004	312.02	372.11	45.21	134
2009	302.12	392.80	69.52	153
2013	297.04	380.40	69.13	151
2017	278.93	410.95	84.36	178
2024	338.95	517.82	140.14	194

स्रोत : केन्द्रीय भू-जल बोर्ड के विभिन्न वर्षों के प्रतिवेदन।

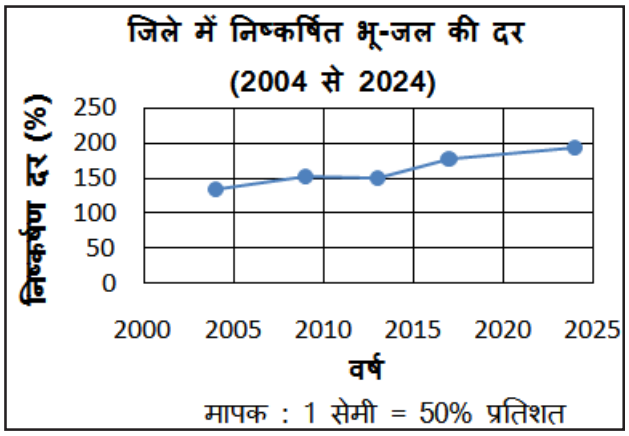
आरेख 1: सीकर जिले में भू-जल संसाधनों की उपलब्धता, उपयोग और जल निष्कर्षण की दर (2004, 2013– 2024)



नोट : उपरोक्त आरेख में केन्द्रीय भू-जल बोर्ड से प्रकाशित संदर्भित वर्ष 2004, 2013, 2024 के आँकड़ों को प्रदर्शित किया गया है। यहाँ पिछले लगभग दो दशकों में कृषि, औद्योगिक और घरेलू कार्यों में निष्कर्षित भू-जल के परिवर्तनों को समझने के लिए इस अध्ययन में संदर्भित वर्षों को आधार लिया गया है।

उपरोक्त तालिका में केन्द्रीय भू-जल बोर्ड के विभिन्न वर्षों के प्रतिवेदनों से प्राप्त आँकड़ों को शामिल किया गया है। सिंचाई, घरेलू और औद्योगिक कार्यों में भू-जल निष्कर्षण की मात्रा लगातार बढ़ती जा रही है। सर्वाधिक भू-जल निष्कर्षण सिंचाई में हो रहा है। इसी को उपरोक्त के माध्यम से भी समझ सकते हैं।

आरेख 2: सीकर जिले में निष्कर्षित भू-जल की दर (2004 से 2024)



उपरोक्त आरेख में पिछले दो दशकों में भू-जल निष्कर्षण की दर को प्रदर्शित किया गया है। केवल संदर्भित वर्ष 2013 में यह थोड़ी नीचे आयी है, क्योंकि इससे पहले वाले वर्षों में बरसात सामान्य से कई गुणा अधिक हुई थी। इसलिए भू-जल पुनर्भरण की दर निष्कर्षण की तुलना में अधिक रही।

इस प्रकार पिछले दो दशकों में सतही जल संसाधनों से कोई सिंचाई नहीं हुई। भू-जल से सिंचाई में निष्कर्षण की मात्रा भी लगातार बढ़ती ही जा रही है। जिले में भू-जल दोहन की दर (194%), राज्य (150%) की तुलना में बहुत अत्यधिक बनी हुई है।

जिले में पिछले दो दशकों से कृषि में सिंचाई की स्थिति – बढ़तेजनसंख्या दबाव के कारण कृषि पर भी दबाव बढ़ता ही जा रहा है। जिले मेंसिंचाई के

साधन बाँध और नलकूप ही प्रमुख रूप से हैं। जिले में कुल 7 लघु सिंचाई बाँधों का कृषियोग्य सिंचित क्षेत्र 5774 हेक्टेयर है, लेकिन वर्तमान में किसी भी बाँध से सिंचाई नहीं हो रही है। बढ़ती माँग की पूर्ति के लिए जिले में पिछले दो दशकों में नलकूपों की संख्या में लगातार वृद्धि हुई है। अब जिले में नलकूप ही एक मात्र सिंचाई के साधन हैं।भू-जल का इनके माध्यम से अत्यधिक दोहन किया गया और यह पाताल में चला गया, जिससे नीमकाथाना, खंडेला, श्रीमाधोपुर, दाँतारामगढ़ और धोद के कुछ क्षेत्रों में भू-जल लगभग खत्म हो गया। इन क्षत्रों में सिंचित क्षेत्र अन्य की अपेक्षा बहुत अधिक था, लेकिन अब बहुत कम रह गया है। सन् 2004-05 में जिले में कुल सिंचित क्षेत्रफल 302926 हैक्टेयर था, जो कि सन् 2019-20 में 261537 हैक्टेयर रह गया है। अब परम्परागत खेती के साथ-साथ जायद फसल, सब्जी उत्पादन, फलोत्पादन का रकबा बढ़त जा रहा है। सन् 2010-11 में इसके अंतर्गत कुल 26,068 हैक्टेयर क्षेत्रफल था, जो कि 2022-23 में बढ़कर 33,456 हैक्टेयर हो गया है। अब खेती में नवीन जल संचयन संरचनाओं का उपयोग भी होने लगा है। इस कारण भी सिंचित क्षेत्रफल में गिरावट कम ही देखने को मिली है।

तालिका 2:कुए एवं नलकूप के अनुसार तहसीलवार कुल सिंचित क्षेत्रफल (है.)

तहसील	वर्ष			
	2013 -14	2016 -17	2017 -18	2019 -20
रामगढ़ शेखावाटी	1917	1842	2087	3782
फतेहपुर	2071	2263	2371	3676
लक्ष्मणगढ़	35660	36898	41667	44918
सीकर	30673	31224	32427	33293
धोद	64824	66904	70992	62707
दाँतारामगढ़	66821	57022	54134	51634
श्रीमाधोपुर	41841	34919	30151	29803
खंडेला	21664	17836	15853	13542
नीमकाथाना	26906	17928	14436	18182

स्रोत: विभिन्न वर्षों की जिला सांख्यिकी रूपरेखा, सीकर।

उपरोक्त तालिका में आँकड़ों की उपलब्धता के अनुसार संदर्भित वर्ष 2013-14, 2016-17, 2017-18 और 2019-20 के आँकड़ों को लिया गया है। इन आँकड़ों के विश्लेषण से पता चलता है कि कुछ तहसीलों में कुल सिंचित क्षेत्रफल लगातार कम हो रहा है और कुछ में बढ़ता ही जा रहा है। रामगढ़ शेखावाटी, फतेहपुर, लक्ष्मणगढ़ और सीकर में सिंचित क्षेत्रफल बढ़ता ही जा रहा है। इस क्षेत्र में पहले नलकूपों की संख्या नगण्य थी, लेकिन अब संख्या में तीव्र वृद्धि होने से सिंचित क्षेत्रफल में अभिवृद्धि हुई है। नीमकाथाना, खंडेला, श्रीमाधोपुर, दाँतारामगढ़ और धोद में भू-जल के अत्यधिक दोहन होने से सिंचित क्षेत्रफल में कमी आ रही है। नवीन जल संचयन संरचनाओं का उपयोग करने से इन तहसीलों में कुछ हद तक क्षेत्रफल बढ़ा है।

चित्र 2: क्षेत्र सर्वेक्षण के दौरान संकलित खेत तालाब (नारायणा का बास) की छवि



जल संसाधन और सिंचाई – जिले में पिछले दो दशकों से पहले सतही और भू-जल दोनों ही प्रचुर मात्रा में उपलब्ध थे। जलववायु परिवर्तन, जनसंख्या का बढ़ता हुआ दबाव, बढ़ता हुआ खनन और कम होती हुई वर्षा के कारण सतही जल संसाधन लगभग खत्म हो गए। जगह-जगह खनन और अतिक्रमण होने से इनमे पानी की आवक भी कम हो गई है। जिले में नहरी पानी से सिंचाई की सुविधा अभी तक उपलब्ध नहीं हो पाई है। सारा दबाव भू-जल संसाधनों पर ही आ गया है। इनका अत्यधिक दोहन करने से लगभग पाँच तहसीलों में भू-जल खत्म हो गया है। शेष कुछ में खत्म होने वाला है।

विदित है कि जल संसाधन में कमी होती है तो कृषि क्षेत्र में भी सिंचाई की सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाती है। पहले जिन क्षेत्रों में अधिक सिंचाई होती थी वहाँ पर आज नहीं के बराबर हो रही है। नवीन जल संचयन संरचनाओं के बनने के बाद इन्ही में से कुछ क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होने से सिंचित क्षेत्रफल में भी वृद्धि हुई है। धोद और दाँतारामगढ़ के लोग कृषि योजनाओं के बारे में अधिक जागरूक हैं। इसलिए इस क्षेत्र के लोग नवीन योजनाओं का अधिक लाभ उठाते हैं। अत: यहाँ पर पानी कम होने के बावजूद भी सिंचित क्षेत्रफल पर अन्य जगहों की तरह अभी तक ज्यादा प्रभाव नहीं पड़ा है। नीमकाथाना क्षेत्र के पाटन में लोग अभी भी पशुपालन और खनन में लगे हुए हैं। पचलंगी के आस-पास के क्षेत्र में लोग नौकरी में हैं। अत: यहाँ पर कृषि करने में लोगों की रुचि भी नहीं है। आज की युवा पीढ़ी खेती करना ही नहीं चाहती है। इसलिए खेत खाली ही पड़े रहते हैं। वे कृषि को घाटे का सौदा मानते हैं। फतेहपुर, रामगढ़, लक्ष्मणगढ़ और सीकर में अभी पानी कुछ साल ही दोहन के लिए बचा है। मावठ अच्छी होने से भी सिंचित क्षेत्रफल का रकबा बढ़ता है। अत: सिंचित क्षेत्रफल के कम होने का पानी ही एक मात्र कारण नहीं है।

निष्कर्ष – जल है तो कल है। यह कहावत वर्तमान समय में सही चरितार्थ होती है। आज विश्व की लगभग आधी आबादी या 4 अरब से अधिक लोग हर साल कम से कम एक महीने के लिए पानी की कमी का सामना करते हैं। 2.2 अरब लोगों के पास सुरक्षित पेयजल की सुविधा नहीं है, जबकि 703 मिलियन लोग स्वच्छ जल से पूरी तरह वंचित हैं। जब पेयजल के लिए ही इतना संकट है तो सिंचाई तो बहुत दूर की बात है। विकसित सिंचाई का अधिकतम उपयोग जल दक्षता के साथ करना चाहिए। लोगों को नवीन जल संरक्षण योजनाओं और नीतियों के बारे में अधिक जागरुक होने की

आवश्यकता है। पानी के स्रोतों और इनके आसपास अतिक्रमण पर प्रशासन को कड़ी कार्यवाही करनी चाहिए। कृषि क्षेत्र में कम पानी वाली फसलों का बीज तैयार करने की आवश्यकता है। सिंचाई की नवीन पद्धतियाँ सभी के लिए अनिवार्य रूप से लागू कर देनी चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Central Ground Water Board (2006). *Dynamic Ground Water Resource of India (As on March, 2004).* Faridabad : Ministry of Water Resources, Government of India.
2. Central Ground Water Board (2014, July). *Dynamic Ground Water Resource of India (As on 31 March, 2011).* Faridabad : Ministry of Water Resources, River Development & Ganga Rejuvenation, Government of India.
3. Central Ground Water Board (2024, December). *National Compilation on Dynamic Ground Water Resources of India, 2024.* Faridabad : Department of Water Resources, River Development & Ganga Rejuvenation, Ministry of Jal Shakti, Government of India.
4. जिला – सीकर (2023).जिला सांख्यिकीय रूपरेखा 2023.जयपुर : आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय।
5. जिला – सीकर (2005).जिला सांख्यिकीय रूपरेखा 2005.जयपुर : आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय।
6. जिला – सीकर (2013).जिला सांख्यिकीय रूपरेखा 2013.जयपुर : आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय।
7. उद्यान निदेशालय (2017). प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (सूक्ष्म सिंचाई)– कार्यक्रम क्रियान्वयन मार्गदर्शिका. जयपुर : उद्यान निदेशालय राजस्थान, पृ. 2–4.
8. सीकर जिला. (2016). संदर्शिका. सीकर: जिला प्रशासन।
9. सीकर जिला (2023).सीकर जिला आपदा प्रबंधन योजना 2023.सीकर : जिला कलक्टर एवं जिला मजिस्ट्रेट।
10. कार्यालय, अधिशाषी अभियन्ता, जल संसाधन खण्ड, सीकर।
11. कार्यालय, अतिरिक्त निदेशक कृषि (विस्तार) सीकर, खण्ड सीकर।
12. मणि दि. (2020, जनवरी–दिसंबर). भू–जल का पुनर्भरण और संरक्षण जरूरी है. भगीरथ,46 (1–4), पृ. 4–7.
13. https://www.unwater.org/publications/un-world-water-development-report-2024.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सोशल मीडिया के प्रभाव का अध्ययन: उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों के सामाजिक एवं नैतिक मूल्य

श्रीमती योगिता गौर* डॉ. राखी शर्मा **

*शोधार्थी (शिक्षाशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** सह-प्राध्यापक (शिक्षाशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – सोशल मीडिया आज के युग की एक अपरिहार्य सामाजिक एवं शैक्षिक आवश्यकता बन चुका है। फेसबुक, इंस्टाग्राम, यूट्यूब, ट्विटर, व्हाट्सऐप जैसे सोशल नेटवर्किंग प्लेटफॉर्म न केवल संवाद एवं मनोरंजन के साधन हैं, बल्कि यह किशोरों के 'सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों' को भी प्रभावित कर रहे हैं। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य हरदा (मध्यप्रदेश) जिले के सरकारी एवं गैर-सरकारी विद्यालयों में अध्ययनरत उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों के बीच सोशल मीडिया के प्रभाव का अध्ययन करना है।

शोध में '200 विद्यार्थियों' (सरकारी एवं निजी विद्यालय, छात्र एवं छात्राएँ) को नमूने के रूप में चुना गया। 'सर्वेक्षण विधि' अपनाई गई तथा आँकड़ों के विश्लेषण हेतु 'प्रतिशत, t test, ANOVA एवं Chi square परीक्षणों का उपयोग किया गया। निष्कर्षत: यह पाया गया कि छात्रों की अपेक्षा छात्राओं पर सोशल मीडिया के सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों का प्रभाव अधिक है। साथ ही कला संकाय के विद्यार्थियों में नैतिक सजगता व सामाजिक उत्तारदायित्व का स्तर विज्ञान एवं वाणिज्य संकाय की तुलना में अधिक पाया गया।

शब्द कुंजी – सोशल मीडिया, उच्च माध्यमिक विद्यार्थी, सामाजिक मूल्य, नैतिक मूल्य, शिक्षा।

प्रस्तावना – इंटरनेट और सोशल मीडिया ने सूचना एवं संचार की दुनिया में क्रांतिकारी परिवर्तन किए हैं। 20वीं शताब्दी के अंतिम दशक में जब वेब 2.0 की अवधारणा विकसित हुई, तभी से उपयोगकर्ता-जनित सामग्री का महत्व बढ़ने लगा। इसने परंपरागत मीडिया की एकतरफा सूचना-प्रवाह व्यवस्था को बदलकर एक 'इंटरएक्टिव' और 'भागीदारी-आधारित' प्रणाली में परिवर्तित कर दिया। फेसबुक (2004), यूट्यूब (2005), ट्विटर (2006), इंस्टाग्राम (2010) और स्नैपचेट (2011) जैसे प्लेटफॉर्म ने युवाओं को संवाद, आत्म-अभिव्यक्ति, सहयोग और सांस्कृतिक आदान-प्रदान के असीम अवसर दिए।

सोशल मीडिया का प्रभाव विशेषकर 'किशोरावस्था के विद्यार्थियों' पर अधिक देखा जाता है, क्योंकि यही वह अवस्था है जब 'व्यक्तित्व का निर्माण' होता है और 'सामाजिक-नैतिक मूल्य' आकार लेते हैं। इस उम्र में विद्यार्थी नई-नई सामाजिक भूमिकाओं को अपनाते हैं, आत्म-परिचय की खोज करते हैं और अपने व्यवहार के मानक तय करते हैं। अत: यह समझना आवश्यक हो जाता है कि सोशल मीडिया किस प्रकार उनकी सोच, आचरण और मूल्य-प्रणाली को प्रभावित कर रहा है।

कई शोधकर्ताओं ने यह बताया कि इंटरनेट आधारित संवाद माध्यम समाज में मूल्यों के संरक्षण के साथ-साथ उनके विघटन का भी कारण बन सकते हैं। उदाहरणार्थ, जहाँ एक ओर यह प्लेटफॉर्म विद्यार्थियों को वैश्विक ज्ञान, सहयोगात्मक अधिगम, सामाजिक सरोकार और लोकतांत्रिक मूल्यों की ओर प्रेरित करते हैं, वहीं दूसरी ओर 'समय की बर्बादी, अनुशासनहीनता, सतही संबंध, आक्रामकता और सांस्कृतिक विचलन' जैसी प्रवृत्तियाँ भी बढ़ा सकते हैं।

आज के समय में विद्यार्थी अपने अधिकांश समय का बड़ा भाग मोबाइल और सोशल मीडिया पर व्यतीत कर रहे हैं। शिक्षा, मनोरंजन, समाचार, राजनीति, सामाजिक संवाद और व्यक्तिगत संबंध-सभी का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से उनके व्यवहार, दृष्टिकोण और मूल्यों पर पड़ रहा है। 'समय-प्रबंधन की कमी', 'निजी अध्ययन की उपेक्षा' तथा 'मानसिक तनाव' जैसी समस्याएँ सामने आ रही हैं। दूसरी ओर, कई विद्यार्थी इन माध्यमों का उपयोग 'ऑनलाइन लर्निंग, प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी, कौशल-विकास और व्यक्तित्व-निर्माण' में भी कर रहे हैं।

इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि सोशल मीडिया एक 'द्वि-धारी तलवार' है, जिसका प्रभाव सकारात्मक भी हो सकता है और नकारात्मक भी। यह विद्यार्थियों के जीवन को किस दिशा में ले जाएगा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि वे इसका 'उपयोग कितनी सजगता, अनुशासन और नैतिकता के साथ करते हैं'।

यही कारण है कि आज के शोधकर्ताओं और शिक्षा-विदों के लिए यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न बन गया है कि सोशल मीडिया का प्रयोग विद्यार्थियों के 'सामाजिक और नैतिक मूल्यों' पर किस प्रकार का प्रभाव डाल रहा है? क्या सरकारी एवं गैर-सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों में इसके प्रभाव में कोई अंतर है? क्या लड़के और लड़कियाँ, तथा विभिन्न संकायों के छात्र-छात्राएँ इसे समान रूप से प्रभावित होकर उपयोग करते हैं?

समीक्षा साहित्य :

1. यंग, पी वी (1956) – अपने शोध Methods in Social Research में यंग ने यह स्पष्ट किया कि नए संचार माध्यम समाज के मूल्यों पर द्वि-दिशात्मक प्रभाव डालते हैं। ये माध्यम एक ओर सामाजिक

जुड़ाव एवं संवाद को मजबूत करते हैं, वहीं दूसरी ओर सांस्कृतिक विघटन और अनुशासनहीनता को जन्म देते हैं।

2. कपूर, रशीम (1989) – अपनी पुस्तक Value Education: Theory and Practice में कपूर ने यह बताया कि इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल मीडिया विद्यार्थियों की सामाजिक भूमिकाओं को पुन: परिभाषित करता है। इससे मूल्य शिक्षा को नई दिशा मिलती है, लेकिन पारंपरिक नैतिक आदर्शों के संरक्षण में चुनौतियाँ भी सामने आती हैं।

3. बॉयड और एलिसन (2007)– Social Network Sites: Definition, History and Scholarship शीर्षक से किए गए अध्ययन में उन्होंने निष्कर्ष दिया कि फेसबुक एवं अन्य सोशल नेटवर्किंग साइट्स किशोरों की पहचान निर्माण और आत्म–अभिव्यक्ति में सहायक होती हैं, किंतु आभासी संबंध वास्तविक सामाजिक रिश्तों को कमजोर कर देते हैं।

4. मित्तल एवं अरोड़ा (2013)–Impact of Facebook on Indian Youth विषय पर किए गए अध्ययन में पाया गया कि फेसबुक भारतीय युवाओं के सामाजिक जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है। यह सामाजिक सहभागिता को तो बढ़ाता है, लेकिन वास्तविक पारिवारिक और सामुदायिक संबंधों को कमजोर करता है।

5. जैन एवं सिंह (2016) – उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों पर किए गए अध्ययन में यह निष्कर्ष सामने आया कि लड़के, लड़कियों की तुलना में सोशल मीडिया पर अधिक समय व्यतीत करते हैं। साथ ही विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों की पढ़ाई पर इसका नकारात्मक प्रभाव अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई दिया।

6. कस और ग्रिफिथ्स (2015) –अपने मेटा–विश्लेषण Social Networking Sites and Addiction में यह बताया कि सोशल मीडिया का अत्यधिक प्रयोग किशोरों में मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ, एकाग्रता की कमी और नैतिक निर्णय क्षमता में गिरावट उत्पन्न करता है।

7. एनसीईआरटी रिपोर्ट (2018) – इस राष्ट्रीय रिपोर्ट में कहा गया कि सोशल मीडिया विद्यार्थियों के लिए अवसर और चुनौती दोनों प्रस्तुत करता है। यदि इसका प्रयोग शिक्षा, अधिगम और अनुसंधान में किया जाए तो यह उपयोगी सिद्ध होता है, अन्यथा यह तनाव और समय–नाश का कारण बनता है।

8. गुप्ता (2020) – अपने अध्ययन में गुप्ता ने कहा कि सोशल मीडिया ने विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्यों में व्यावहारिकता को बढ़ाया है, लेकिन पारंपरिक नैतिक मूल्यों –जैसे ईमानदारी, सहयोग, सहानुभूति और अनुशासन में कमी देखी जा रही है।

9. ब्राउन और लार्सन (2020) – Adolescents and Time Use शीर्षक से किए गए अध्ययन में यह पाया गया कि किशोर प्रतिदिन औसतन 3–4 घंटे सोशल मीडिया पर व्यतीत करते हैं। इसका सीधा असर उनकी पढ़ाई, नींद और दिनचर्या पर पड़ता है।

उपरोक्त अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि सोशल मीडिया का विद्यार्थियों पर प्रभाव द्वि–आयामी है। एक ओर यह उन्हें संवाद, शिक्षा और सामाजिक जुड़ाव के नए अवसर देता है, वहीं दूसरी ओर यह नैतिक मूल्यों में गिरावट, समय–नाश, मानसिक तनाव और वास्तविक संबंधों की कमजोरी का भी कारण बनता है। अधिकांश अध्ययनों ने इस तथ्य को रेखांकित किया है कि अनुशासित और नियंत्रित उपयोग से सोशल मीडिया विद्यार्थियों के लिए लाभकारी सिद्ध हो सकता है, जबकि अतिरेक और अनियंत्रित प्रयोग उनके सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों को प्रभावित करता है।

शोध के उद्देश्य:

1. सरकारी विद्यालय के उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्यों पर सोशल मीडिया के प्रभाव का अध्ययन करना।
2. गैर–सरकारी विद्यालय के उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्यों पर सोशल मीडिया के प्रभाव का अध्ययन करना।
3. सरकारी एवं निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों पर सोशल मीडिया के प्रभाव की तुलना करना।
4. छात्र एवं छात्राओं के बीच सोशल मीडिया प्रभाव में अंतर का अध्ययन करना।
5. कला, विज्ञान एवं वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों में सोशल मीडिया के प्रभाव का तुलनात्मक विश्लेषण करना।

परिकल्पनाएँ:

H_1: सरकारी एवं गैर–सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्यों में सोशल मीडिया के प्रभाव में कोई अंतर नहीं है।

H_2: सरकारी एवं गैर–सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों में सोशल मीडिया के प्रभाव में कोई अंतर नहीं है।

H_3: छात्र और छात्राओं के बीच सोशल मीडिया प्रभाव में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं है।

H_4: कला, विज्ञान और वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों में सोशल मीडिया प्रभाव में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं है।

शोध पद्धति

शोध विधि: सर्वेक्षण विधि

जनसंख्या: हरदा (मध्यप्रदेश) जिले के उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत छात्र व छात्राएँ

नमूना:200 विद्यार्थी (100 विद्यालय: 50 ग्रामीण 50 शहरीय प्रत्येक विद्यालय से 2 विद्यार्थी)

उपकरण: स्वनिर्मित प्रश्नावली (सामाजिक एवं नैतिक मूल्य मापन हेतु)

सांख्यिकीय तकनीक: प्रतिशत, t test, ANOVA,Chi square

आँकड़ों का विश्लेषण एवं विवेचना

H_1: सरकारी एवं गैर–सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्यों में अंतर नहीं है

सारणी–1 ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्य (t-test)

समूह	N	माध्य	S.D.	t– मूल्य	निष्कर्ष
ग्रामीण विद्यालय	100	76.3	11.8	2.05	0.05 स्तर पर
शहरी विद्यालय	100	80.4	10.9		महत्वपूर्ण

व्याख्या– शहरी विद्यालयों के विद्यार्थियों के सामाजिक मूल्यों पर सोशल मीडिया का प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक पाया गया।

H_2: सरकारी एवं गैर–सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों में अंतर नहीं है

सारणी–2 सरकारी एवं निजी विद्यालय के नैतिक मूल्य (t-test)

समूह	N	माध्य	S.D.	t– मूल्य	p– मूल्य	निष्कर्ष
सरकारी विद्यालयों	100	73.5	12.4	2.72	0.05	महत्वपूर्ण
गैर–सरकारी विद्यालयों	100	79.8	11.2			अंतर पाया गया

व्याख्या– निजी विद्यालय के विद्यार्थियों में नैतिक सजगता सरकारी विद्यालय से अधिक है।

H_3 : छात्र और छात्राओं के बीच सोशल मीडिया प्रभाव में अंतर नहीं है

सारणी–3–छात्र/छात्रा के नैतिक मूल्य (t Test)

समूह	N	माध्य	S.D.	t– मूल्य	निष्कर्ष
छात्र	90	73.5	12.4	2.72	0.01 स्तर पर
छात्राएँ	110	79.8	11.2		महत्वपूर्ण

व्याख्या– छात्राओं में नैतिक मूल्यों और सामाजिक संवेदनशीलता अधिक पाई गई।

H_4 : कला, विज्ञान और वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों में सोशल मीडिया प्रभाव में अंतर नहीं है

सारणी–4 संकायवार अंतर (ANOVA)

स्रोत	df	SS	MS	f- मूल्य	निष्कर्ष
समूहों के बीच	2	420.65	210.32	3.84	0.05 स्तर पर
समूहों के भीतर	197	10780.42	54.71		महत्वपूर्ण

व्याख्या:कला संकाय के विद्यार्थियों में नैतिक सजगता व सामाजिक मूल्यबोध अधिक पाया गया।

सारणी–5 लिंग एवं विद्यालय प्रकार (Chi square Test)

चर	X-value	df	p-value	निष्कर्ष
लिंग एवं सोशल मीडिया उपयोग	6.42	1	0.05	महत्वपूर्ण संबंध पाया गया
विद्यालय प्रकार एवं मूल्य	4.15	1	0.05	

व्याख्या– लिंग (छात्र–छात्रा) और विद्यालय प्रकार (ग्रामीण–शहरी) दोनों ही सोशल मीडिया के प्रभाव से जुड़े पाए गए।

शोध परिणामों से स्पष्ट हुआ कि 'छात्राओं पर सोशल मीडिया का प्रभाव अधिक गहरा है', क्योंकि वे सामाजिक और नैतिक गतिविधियों के प्रति अधिक सजग हैं। t test के अनुसार छात्राओं के नैतिक मूल्यों का माध्य छात्रों की तुलना में अधिक पाया गया ($t = 2.72$, $p< 0.01$), जो यह संकेत देता है कि छात्राएँ सोशल मीडिया का प्रयोग अधिकतर 'शैक्षिक, सामाजिक और रचनात्मक उद्देश्यों' के लिए करती हैं। इसके विपरीत, छात्र सोशल मीडिया का उपयोग मनोरंजन और अनौपचारिक संवाद के लिए अधिक करते हैं, जिससे उनके सामाजिक और नैतिक मूल्य अपेक्षाकृत कम प्रभावित होते हैं।

सांख्यिकीय विश्लेषण (ANOVA) से यह भी पता चला कि 'कला संकाय के विद्यार्थी' वाणिज्य और विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों की तुलना में अधिक नैतिक सजगता और सामाजिक मूल्यबोध प्रदर्शित करते हैं ($F = 3.84$, $p< 0.05$)। इसका कारण यह माना जा सकता है कि कला संकाय के विषय समाज, संस्कृति और मानवीय मूल्यों से सीधे जुड़े हैं, जबकि अन्य संकाय अधिक तकनीकी और व्यावसायिक गतिविधियों में व्यस्त रहते हैं।

Chi square परीक्षण के परिणामों से यह भी स्पष्ट हुआ कि 'लिंग और विद्यालय प्रकार' सोशल मीडिया के प्रभाव के महत्वपूर्ण निर्धारक हैं ($X= 6.42, 4.15$; $p< 0.05$)। विशेष रूप से 'शहरी छात्राएँ' सोशल मीडिया के प्रति अधिक सक्रिय और संवेदनशील पाई गईं। शहरी क्षेत्र में तकनीकी पहुँच अधिक होने और डिजिटल प्लेटफॉर्म की व्यापक उपलब्धता के कारण उनके सामाजिक और नैतिक मूल्य पर सोशल मीडिया का प्रभाव तीव्र रूप से परिलक्षित हुआ।

इसके अतिरिक्त, सरकारी और निजी विद्यालयों की तुलना से यह पाया गया कि 'निजी विद्यालय के विद्यार्थी सामाजिक और नैतिक जागरूकता में अधिक सजग' हैं। इसका कारण यह हो सकता है कि निजी विद्यालयों में शिक्षण पद्धति, शैक्षिक संसाधन और डिजिटल शिक्षा की सुविधाएँ अधिक होती हैं, जिससे विद्यार्थी सोशल मीडिया का सकारात्मक और नियंत्रित उपयोग करने में सक्षम होते हैं।

इन परिणामों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सोशल मीडिया न केवल विद्यार्थियों के सामाजिक और नैतिक मूल्य पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है, बल्कि यह प्रभाव 'लिंग, विद्यालय प्रकार और संकाय' जैसे कारकों से भी प्रभावित होता है।

निष्कर्ष – सोशल मीडिया ने उच्च माध्यमिक विद्यार्थियों के सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है, जिसमें सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पहलू शामिल हैं। छात्राओं में नैतिक और सामाजिक सजगता अधिक पाई गई, क्योंकि वे सोशल मीडिया का अधिकतर शैक्षिक, सामाजिक और रचनात्मक उद्देश्यों के लिए उपयोग करती हैं। निजी विद्यालयों के विद्यार्थी सरकारी विद्यालयों की तुलना में अधिक जागरूक और संवेदनशील पाए गए। कला संकाय के विद्यार्थी वाणिज्य और विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों से अधिक नैतिक और सामाजिक सजगता प्रदर्शित करते हैं। सांख्यिकीय परीक्षण (t test,ANOVA,Chi square) से यह स्पष्ट हुआ कि लिंग, विद्यालय प्रकार और संकाय सोशल मीडिया प्रभाव के महत्वपूर्ण निर्धारक हैं।

सुझाव – सोशल मीडिया साक्षरता–विद्यालय पाठ्यचर्या में सोशल मीडिया साक्षरता शामिल की जाए, ताकि विद्यार्थी इसका 'जिम्मेदार और सुरक्षित उपयोग' सीखें। शिक्षक प्रशिक्षण– अध्यापकों को सोशल मीडिया के 'शैक्षिक और मूल्य निर्माण उपयोग' हेतु प्रशिक्षण दिया जाए। कार्यशालाएँ एवं सेमिनार– डिजिटल नैतिकता, साइबर सुरक्षा और जिम्मेदार सोशल मीडिया उपयोग पर नियमित कार्यशालाएँ आयोजित की जाएँ। अभिभावक मार्गदर्शन– अभिभावकों को बच्चों के ऑनलाइन व्यवहार पर 'सकारात्मक निगरानी' हेतु प्रशिक्षित किया जाए। मल्टीमीडिया शिक्षण परियोजना–आधारित और मल्टीमीडिया शिक्षण अपनाया जाए, ताकि सोशल मीडिया का उपयोग 'शैक्षिक और रचनात्मक' उद्देश्य के लिए हो। समय प्रबंधन– विद्यार्थियों को सोशल मीडिया का संतुलित उपयोग और समय प्रबंधन सिखाया जाए। सामाजिक–सांस्कृतिक गतिविधियाँ– ऑनलाइन और ऑफलाइन सामाजिक जुड़ाव के बीच संतुलन बनाए रखने हेतु कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कपूर, रशिम (1989). 'वैल्यू एजुकेशन: थ्योरी एंड प्रैक्टिस' अजमेर: कृष्णा ब्रदर्स पब्लिकेशन्स।
2. मैक्लोम, कारी टॉरजिशन (1982).'वुमन एट द क्रॉसरोड्स'।
3. मूरे, निक (1983). 'हाउ टू डू रिसर्च' लंदन: द लाइब्रेरी एसोसिएशन।
4. मिल, जॉन स्टुअर्ट (1970). 'एस्से ऑन सेक्स इक्वलिटी'।
5. रमल, जे.एफ.एम. (1968). 'इंट्रोडक्शन टू रिसर्च इन एजुकेशन' न्यूयॉर्क :हार्पर ब्रदर्स।
6. सरीन एवं सरीन (2005). 'शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली',

नई दिल्ली: विकास पब्लिशिंग हाउस।
7. शर्मा, विरेन्द्र प्रकाश (2001). 'रिसर्च मेथडोलॉजी', जयपुर– पंचशील प्रकाशन।
8. यंग, पी.वी. (1956). 'मेथड्स इन सोशल रिसच', न्यूयॉर्क:मैक्ग्रा–हिल।
9. Brown, J. & Larson, R. (2020). Adolescents and time use. Journal of Youth Studies, 23-(4), 112–128.
10. Pew Research Center (2019). Teens, Social Media & Technology. Washington DC.
11. Sharma, Saurabh, Impact of Social Media on Student's Academic Performance: A Study on Indian Education System. ResearchGate.
12. Shukla, Harsh (2025) Social Media and Academic Engagement: Its Effects on Indian Higher Education Students*. ResearchGate
13. Jyoti, Depanti.Positive Impact of Social Media on Youth: An Empirical Study in Ahmedabad City. ResearchGate

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Towards Sustainable Energy Access: Descriptive Insights on Clean Fuel Adoption in Rajasthan Using NFHS-5 (2019-21)

Kunal Ramchandani* **Dr. Rameshwar Jat****

*Research Scholar (Economics) University of Rajasthan, JLN Marg, Jaipur (Raj.) INDIA
** Professor (Economics) University of Rajasthan, JLN Marg, Jaipur (Raj.) INDIA

Abstract - Access to clean cooking fuel is a cornerstone of India's energy transition, with strong implications for health, gender equality, and sustainable development (SDG 7). While national-level studies highlight progress through initiatives such as the *Pradhan Mantri Ujjwala Yojana (PMUY)*, micro-level variations remain underexplored. This paper provides a district-wise descriptive analysis of clean cooking fuel adoption in Rajasthan using data from the National Family Health Survey (NFHS-5, 2019–21)

The adoption of clean cooking fuel is a pivotal aspect of India's energy transformation, carrying significant implications for public health, gender equity, and sustainable development. While national studies indicate progress driven by initiatives like the Pradhan Mantri Ujjwala Yojana (PMUY), a granular understanding of micro-level variations remains limited. This paper presents a district-specific analysis of clean cooking fuel adoption patterns within Rajasthan, utilizing data from the National Family Health Survey.

The analysis indicates that expanding connections alone, as accomplished through PMUY, is insufficient for a sustainable transition. Rajasthan necessitates interventions tailored to specific districts, integrating financial assistance for affordability, enhancing LPG distribution infrastructure, and aligning with gender and tribal welfare programs. For districts facing geographical challenges, renewable energy sources such as solar and biogas present viable alternatives. By establishing the inaugural district-level descriptive baseline for clean fuel adoption in Rajasthan, this research contributes to the existing body of literature on household energy transitions within India. It strongly advocates the implementation of localized, multifaceted policies to achieve universal access to clean cooking fuel, ensuring equitable progress for all communities.

Keywords: Clean cooking fuel, Energy transition, Household energy choice, Rajasthan, NFHS-5(2019-21).

Introduction - "Access to clean and affordable energy by 2030" is a key objective for developing nations within the UN Sustainable Development Agenda. This ambitious goal, articulated in Sustainable Development Goal 7, highlights the critical role of sustainable energy in fostering economic development, improving public health, and mitigating climate change (Narula & Raj, 2023). Energy transitions in the household sector have become a cornerstone of sustainable development debates. This is particularly relevant for India, where a substantial portion of the population still relies on traditional biomass for cooking and heating, posing significant health and environmental challenges (Waleed & Mirza, 2022). Globally, around 2.1 billion people use solid fuels and other unclean fuel sources in inefficient stoves and open fires, with most belonging to poor households in low- and middle-income nations (World Health Organization, 2024).

India has made significant strides in promoting clean cooking energy access over the past decade, most notably through the Pradhan Mantri Ujjwala Yojana launched in 2016, which aimed to provide subsidized LPG connections to women in economically vulnerable households. Subsequent policies have sought to expand LPG penetration, improve refill affordability, and complement the infrastructure with improved distribution networks. These interventions have contributed to a rapid increase in LPG ownership across the country, as demonstrated in national household surveys like the National Family Health Survey. While impressive, these efforts still contend with challenges such as consistent refill rates and the persistence of fuel stacking behaviors, where households use both clean and traditional fuels concurrently (Bajpayee et al., 2024). The ongoing reliance on biomass, despite increased access to modern fuels, highlights complex interactions between affordability, cultural practices, and fuel accessibility, particularly in rural areas where biomass remains a cost-

effective option for some households (Davi-Arderius et al., 2023).

This persistence necessitates a deeper examination of socioeconomic factors influencing fuel choice, especially in regions like Rajasthan, which exhibits diverse demographic and economic characteristics (Gould et al., 2019). Rajasthan provides a critical case for examining these dynamics. The state is marked by significant socio-economic and ecological diversity, which substantially impacts patterns of household energy use. On one hand, Rajasthan shares India's broader developmental challenges, with nearly three-quarters of its population residing in rural areas and a considerable proportion of households belonging to marginalized Scheduled Castes and Scheduled Tribes. These groups often face heightened energy poverty, characterized by limited access to clean, affordable, and reliable energy sources, which subsequently impacts health, education, and economic well-being. Furthermore, the arid and semi-arid climate, coupled with a high dependence on agriculture, directly influences the availability and cost of traditional biomass fuels, thereby shaping household energy choices and amplifying the challenges associated with energy transition in the state.

Although national surveys and reports provide valuable overviews of LPG adoption and clean energy transitions at the state and country level, they often overlook the fine-grained spatial heterogeneity that shapes adoption patterns. Rajasthan, with its 33 districts, encompasses wide variations in socio-economic profiles, tribal concentration, agricultural practices, and fuel markets. This heterogeneity necessitates a district-level analysis to uncover the specific barriers and facilitators of clean fuel adoption, thereby informing targeted policy interventions.

This research aims to analyze the current state of clean fuel adoption in Rajasthan, leveraging data from the National Family Health Survey, and identifying the key socio-economic determinants influencing household energy choices within the region.The objective is not to establish causality but to provide a systematic and nuanced description that can inform district-focused policy interventions. Such a granular approach is crucial for identifying pockets of energy poverty, tailoring interventions to local realities, and ultimately advancing the broader agenda of sustainable and inclusive development.

Literature Review

Global Perspectives on Clean Cooking Energy Adoption: The transition from traditional biomass fuels to modern cooking energy has been a focal point of global development research for several decades. Scholars have highlighted that energy poverty is not only a technical issue of supply but also a socio-economic and behavioral challenge (Kumar et al., 2017). This transition is critical for alleviating household air pollution, which disproportionately affects women and children and contributes significantly to respiratory and other chronic diseases (Gould et al., 2019). Furthermore, the persistence of fuel stacking, where households concurrently utilize traditional and clean fuels, underscores the complex interplay of economic constraints, cultural practices, and availability of resources, which collectively impedes a complete transition to modern energy sources (Farah et al., 2023).

At the global level, reliance on solid fuels remains widespread, particularly in Sub-Saharan Africa and South Asia, where access to modern energy services has lagged despite rapid economic growth. The health consequences of household air pollution from burning solid fuels are profound, contributing to millions of premature deaths annually, primarily from respiratory infections, heart disease, stroke, and lung cancer.

The drivers of clean fuel adoption globally encompass three main categories: economic, infrastructure, and socio-cultural. Economic elements, such as household income, prevailing fuel prices, and the affordability of clean energy technologies, play a significant role in shaping domestic energy choices (Farah et al., 2023). For instance, Waweru et al. highlights the "energy ladder hypothesis", which posits that households tend to transition to cleaner fuels as their income increases. However, in practice, many households adopt a "fuel stacking" approach, using both clean and traditional fuels simultaneously, indicating that the adoption of clean fuels is rarely a straightforward or uniform process.

Indian Context: Energy Transition and Policy Interventions: India has historically been a global hotspot for traditional fuel use, with large rural populations dependent on firewood, dung, and crop residues. The health burden of indoor air pollution has been severe, with studies linking biomass use to respiratory illnesses, low birth weights, and child mortality (Gupta et al., 2020). Despite this, the country has made significant strides in promoting clean energy, notably through initiatives like the Pradhan Mantri Ujjwala Yojana, which aims to provide liquefied petroleum gas connections to rural and deprived households (Malakar, 2018). Evaluations of PMUY find significant improvements in LPG penetration but also highlight constraints such as affordability of refills, irregular supply, and persistence of traditional cooking practices (Vyas et al., 2021). These challenges suggest that sustained use of clean cooking fuels requires more than just initial adoption, emphasizing the need for broader rural development and targeted interventions beyond initial provision (Mani et al., 2020).

Rajasthan-Specific Studies and Regional Context: Compared to national-level research, the evidence base on Rajasthan remains limited and scattered. Government reports and program documents indicate improvements in LPG connections under PMUY, yet adoption and sustained use vary significantly across the state's districts. Existing studies often focus on macro-level policy evaluations or micro-level case studies in specific villages, leaving a gap in comprehensive, district-level analyses that account for

Rajasthan's unique socio-cultural and environmental context (Kelkar & Nathan, 2021) (Yadav et al., 2024). Studies on tribal communities suggest that traditional cooking practices persist due to cultural preferences and the free availability of fuelwood, especially in forested areas (Gould & Urpelainen, 2018). This persistence necessitates a deeper investigation into the specific drivers and barriers influencing clean fuel adoption within Rajasthan's diverse socio-economic landscape.

The Research Gap: Synthesizing the existing literature reveals three clear gaps. First, while global and Indian studies have firmly established the health, gender, and environmental benefits of clean cooking energy, district-level disparities within states remain underexplored. Second, in Rajasthan, available insights are fragmented, often based on program reports rather than systematic household survey data. Third, the NFHS-5 dataset provides a unique opportunity to conduct a spatially disaggregated, district-wise analysis of clean fuel adoption across Rajasthan's 33 districts, yet this potential remains underutilized.

Thus, the present study fills an important gap by providing a comprehensive, district-level descriptive analysis of clean fuel adoption in Rajasthan using NFHS-5 data. By focusing on intra-state variation, the study contributes to both academic literature and policy practice, offering evidence that can guide more localized, context-specific interventions.

Data and Methodology

Data Source: National Family Health Survey-5 (NFHS-5, 2019–21) : The current research utilizes the National Family Health Survey, which represents the latest iteration of India's Demographic and Health Survey program. This survey, managed by the Ministry of Health and Family Welfare and overseen by the International Institute for Population Sciences in Mumbai, encompasses all Indian states and union territories. Employing a stratified two-stage sampling methodology to ensure robust representation at national, state, and district levels, NFHS-5 conducted interviews in over 31,000 households across Rajasthan's 33 districts. This extensive data collection provides a comprehensive dataset for examining household demographics, health metrics, and living standards, inclusive of cooking fuel usage patterns.

The National Family Health Survey-5 is exceptionally well-suited for investigating the adoption of clean cooking fuels, as it includes direct inquiries about households' primary cooking fuel sources, encompassing both traditional and modern types. The NFHS-5's district-level representativeness offers a distinct advantage for analysing spatial variations within Rajasthan, a granularity not achievable with datasets such as NSSO consumption surveys, which primarily focus on expenditure patterns.

Defining Clean Cooking Fuel: Following the classification adopted by both NFHS and the World Health Organization (WHO), clean cooking fuels in this study include:

1. Liquefied Petroleum Gas (LPG)
2. Piped Natural Gas (PNG)
3. Biogas
4. Electricity

Conversely, polluting fuels encompass firewood, crop residues, dung cakes, coal, lignite, and kerosene. The primary outcome indicator for this analysis is the proportion of households within each district that report clean fuel as their main source of cooking energy. While NFHS-5 also gathers data on secondary fuel sources, this research concentrates solely on the principal fuel utilized to ensure consistency across districts and to emphasize the predominant cooking energy source.

Methodological Approach: The paper employs a descriptive statistical approach to map patterns and disparities in clean fuel adoption.

Key presentation methods include:

1. Summary Statistics: This involves presenting the proportions of households using clean fuel, broken down by district, residence type, and socio-economic groups.

2. Ranking and Classification: Districts are ranked by their clean fuel adoption rates to identify high and low performing areas. Districts are also categorized to facilitate comparison.

3. Visualization:

i. Choropleth maps illustrate the spatial distribution of clean fuel adoption across Rajasthan's districts.
ii. Bar and column charts highlight differences between rural and urban areas, as well as socio-economic disparities.
iii. Tables offer detailed figures for reference.

This multi-faceted descriptive approach ensures a thorough examination of both the extent of adoption and its distribution across space and socio-economic strata.

4. Descriptive Profile of Clean Fuel Adoption in Rajasthan: This section delineates the empirical findings regarding the adoption of clean cooking fuels within Rajasthan, drawing upon data from the National Family Health Survey-5. The examination commences with a statewide perspective, subsequently delving into district-specific trends, disparities between rural and urban populations, and variations attributable to socio-economic factors. Collectively, these analyses illuminate the intra-state heterogeneity in access to clean fuels. Despite significant differentials in household income, the energy mixes across various income strata often shows no substantial difference, suggesting that affordability alone is not the sole determinant of clean fuel adoption.

Table1: Rural vs. Urban Cooking Fuel Usage

Residence	Unclean	Clean	Total
Urban	12.08	87.92	100
Rural	73.79	26.21	100
Total	58.58	41.42	100

Source: Author's calculations using NFHS-5 unit-level data,

2019–21

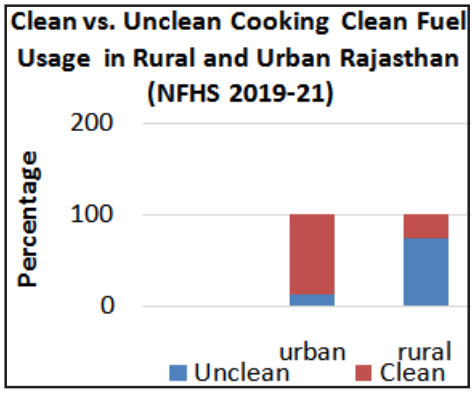


Figure1: Rural vs. Urban Cooking Fuel Usage
Source: Author's calculations using NFHS-5 unit-level data, 2019–21

1. State-Level Overview: Analysis of the National Family Health Survey-5 data for Rajasthan indicates that a mere 41.42% of households utilize clean cooking fuels, such as liquefied petroleum gas, piped natural gas, biogas, or electricity. The remaining 58.58% predominantly rely on traditional, polluting fuels like firewood, dung cakes, and crop residues. As table 4.2 shows This disparity is exacerbated by a significant urban-rural divide: 87.92% of urban households have adopted clean fuels, whereas only 26.21% of rural households have done so, with the latter largely dependent on unclean alternatives. Given that Rajasthan's population is predominantly rural, this imbalance substantially impacts the state average, resulting in a clean fuel penetration rate below 50%. Consequently, while urban centers are largely part of the clean energy transition, rural areas of Rajasthan face considerable energy poverty, underscoring the necessity for targeted policy interventions tailored to these specific contexts.

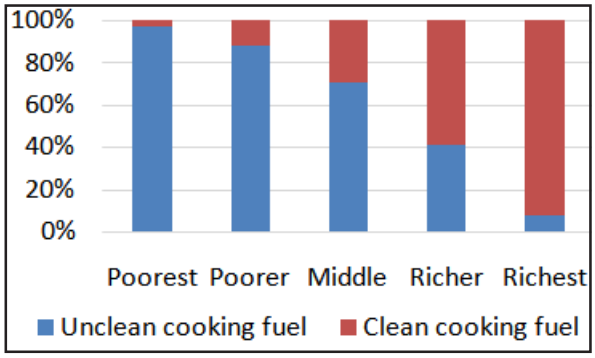
Table 2 as well as Figure 2 illustrate the distribution of clean and unclean cooking fuel usage across different wealth quintiles, as determined by the NFHS-5 wealth index. This index, a composite measure of household living standards based on asset ownership, housing characteristics, and essential amenities, categorizes households into five groupspoorest, poorer, middle, richer, and richestto reflect their relative economic standing within Rajasthan. A significant and consistent correlation is evident between wealth status and energy source selection. The poorest households exhibit a near-total dependence on unclean fuels, with 96.99% utilizing them and only 3.01% reporting clean fuel use. Clean fuel adoption progressively increases with wealth, reaching 11.88% in the poorer quintile and 29.71% among middle-income households. This trend becomes more pronounced in the richer quintile, where 58.96% use clean fuels, outnumbering unclean fuel users. Finally, clean fuel adoption is almost universal at 92.07% in the richest group, with only 7.93% continuing to use unclean fuels. This socio-economic gradient clearly indicates a diminishing reliance on unclean fuels as household wealth increases, visually supporting the "**energy ladder hypothesis"**, whereby households ascend from traditional biomass to cleaner cooking fuels with rising economic status. The data further underscores the critical role of affordability and economic capacity in shaping household energy choices in Rajasthan, suggesting that financial ability, alongside infrastructure and access, is the most influential factor in clean fuel adoption across districts.

Table 2: Clean vs. Unclean Cooking Fuel Usage by Wealth Index

Clean fuel	Poorest	Poorer	Middle	Richer	Richest	Total
Unclean	96.99	88.12	70.29	41.04	7.93	58.58
Clean	3.01	11.88	29.71	58.96	92.07	41.42
Total	100	100	100	100	100	100

Source: Author's calculations using NFHS-5 unit-level data, 2019–21

Figure 2: Clean vs. Unclean Cooking Fuel Usage by Wealth Index



Source: Author's calculations using NFHS-5 unit-level data, 2019–21

The link between financial means and energy choices, as previously discussed, is further supported by considering household education levels (Table 3). Education, much like wealth, shows a strong positive connection to clean fuel adoption. Households with no formal education use clean fuels at a rate of only 25.13%, with the majority (74.87%) still relying on unclean sources. As education levels increase, so does clean fuel use: 34.7% for primary education, 48.84% for secondary education, and a notable 76.22% for higher education. Even among those who reported "don't know," clean fuel use (40.59%) was higher than the state average.

Collectively, the findings from wealth and education profiles indicate a dual trend in the energy transition. The wealth index highlights the importance of affordability and economic status, while the education gradient emphasizes awareness and the ability to adopt modern energy sources. Both suggest that barriers to clean fuel adoption in Rajasthan are not just economic but also socio-cultural. This means the energy ladder hypothesis is influenced not only by income but also by knowledge and awareness, as better-educated households are more likely to recognize

the health, convenience, and efficiency benefits of clean fuels. Consequently, future policies must address both affordability and behavioral aspects to speed up the clean energy transition for rural and disadvantaged populations.

Table 3: Clean vs. Unclean Cooking Fuel Usage in by Education Level

Clean fuel	No Education	Primary	Secondary	higher	Don't know	Total
Unclean	74.87	65.3	51.16	23.78	59.41	58.58
Clean	25.13	34.7	48.84	76.22	40.59	41.42
Total	100	100	100	100	100	100

Source: Author's calculations using NFHS-5 unit-level data, 2019–21

Beyond wealth and educational attainment, an individual's social identity significantly influences energy consumption patterns in Rajasthan. Data indicates a notably high prevalence of unclean fuel use among Scheduled Tribes (85.54%), with clean fuel adoption at a mere 14.46%, the lowest observed across all caste classifications. This disparity can be attributed to the compounded disadvantages faced by tribal communities, often situated in remote areas with limited resources. Conversely, households identifying with no caste affiliation or those categorized as "don't know" exhibit the highest clean fuel adoption rates, at 61.25% and 67.51% respectively. Households belonging to Scheduled Castes and Other Backward Classes (captured under the 'Enter caste' category here) demonstrate intermediate adoption levels, with approximately 44% utilizing clean fuels, closely aligning with the state average.

When analyzed in conjunction with wealth and education gradients, caste-based disparities highlight how interconnected economic, educational, and social disadvantages contribute to energy poverty. Tribal households, frequently experiencing lower incomes, reduced educational opportunities, and greater geographical isolation, represent the most marginalized segment in Rajasthan's clean energy transition. In contrast, socially advantaged groups display substantially higher clean fuel adoption, suggesting an inequitable distribution of benefits from initiatives like the Pradhan Mantri Ujjwala Yojana across different social strata.

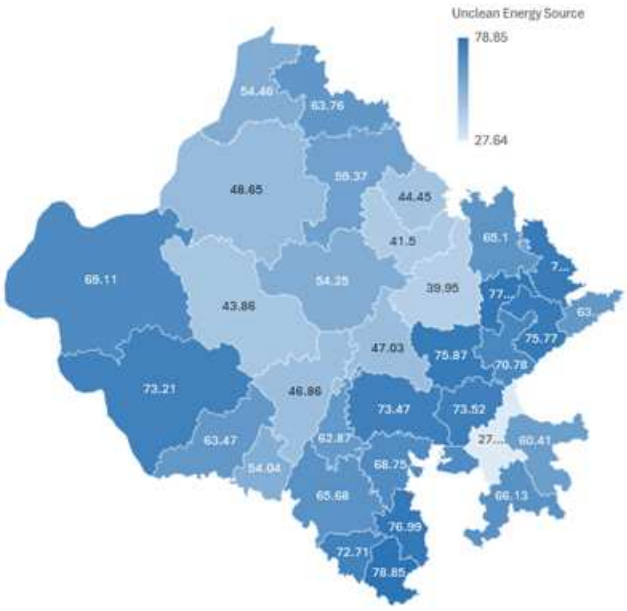
Therefore, while economic capacity enables the procurement of clean fuels and education fosters awareness of their advantages, caste position reflects deeper systemic inequalities that impede access to energy infrastructure. These three dimensions collectively illustrate that clean fuel adoption in Rajasthan is influenced not only by affordability but also by social stratification and exclusion, factors that necessitate specific attention within policy frameworks aimed at achieving universal clean energy access.

2. District-Wise Patterns of Clean Fuel Adoption: The district-wise distribution of dependence on unclean cooking fuels in Rajasthan reveals marked spatial disparities (Figure 3) The district-wise patterns of reliance on unclean cooking fuels in Rajasthan exhibit significant spatial variations. The proportion of households continuing to use polluting fuels ranges from under 30 percent in districts such as Jaipur, Ajmer, and Jhunjhunun, to over 70 percent in southern tribal districts including Dungarpur, Banswara, Pratapgarh, and Udaipur. This uneven distribution is a consequence of the combined effects of geography, socio-economic standing, and demographic composition. Districts characterized by tribal populations and hilly terrains show the highest dependence on unclean fuels, whereas urbanized and economically developed districts report considerably lower reliance.

A more detailed perspective emerges when the rural-urban divide is examined (Table4). In virtually all districts, urban households demonstrate substantially less dependence on unclean fuels compared to their rural counterparts, mirroring the state-level trend previously discussed. For instance, Barmer reports an unclean fuel dependence of 4.57 percent in rural areas versus only 0.65 percent in urban areas. Similarly, Jaipur shows figures of 5.45 percent for rural areas and 12.8 percent for urban areas, although this latter figure represents an anomaly where rapid urbanization and in-migration might have inflated the denominator of biomass-using households in peripheral settlements. Tribal districts like Dungarpur and Banswara continue to reflect a predominantly rural pattern of unclean energy dependence, underscoring structural limitations in access, affordability, and awareness.

Table 4 (See in alst page)

Figure 3: Rajasthan: District-wise Dependence on Unclean Cooking Fuel



Source: Author's calculations using NFHS-5 unit-level data, 2019–21

Discussion, and Policy Implications: The examination

of clean cooking fuel adoption within Rajasthan, one of India's largest and most varied states, offers critical insights into how socio-economic, cultural, and infrastructural elements influence energy transitions. Despite significant national progress in expanding access to modern energy sources, notably through programs like the Pradhan Mantri Ujjwala Yojana, the Rajasthan data indicates that mere access does not guarantee sustained utilization. The continued prevalence of unclean fuel use among substantial population segments underscores the intricate interplay of affordability, prevailing social structures, and geographical inequities. This analysis reveals that the transition to clean fuels is a multi-dimensional challenge, extending beyond simple provision to encompass behavioral, economic, and systemic factors (Bajpayee et al., 2024).

Socio-economic structure and its influence on adoption: Rajasthan's energy landscape mirrors a national trend of gradual migration from traditional biomass to modern cooking fuels. However, the extent and speed of this transition exhibit significant disparities across districts, communities, and income strata. Urban centers such as Jaipur, Ajmer, and Alwar demonstrate high clean fuel utilization, contrasting with the substantial reliance on biomass in rural tribal and desert regions. This divergence reflects Rajasthan's dual economic structure, characterized by an urban sector driven by services and industry, and a rural sector predominantly engaged in subsistence agriculture and traditional practices.

Tribal concentration and cultural determinants: Tribal populations significantly influence Rajasthan's energy choices. Districts like Dungarpur, Banswara, Udaipur, and Pratapgarh, with large tribal communities, show much higher use of unclean fuels. This is due to poverty, cultural habits, and easy access to resources like firewood. People are used to traditional cooking methods and often see fuelwood as free. Collecting fuelwood can also be a shared community or women's activity. Studies show that when biomass is easily available, just offering money incentives isn't enough to change behavior. Rajasthan's tribal areas are a clear example of how cultural and environmental factors keep people using fuelwood. This underscores the necessity of culturally sensitive interventions that acknowledge and integrate existing practices, rather than solely focusing on the provision of cleaner alternatives (Gould et al., 2019).

Rural poverty and affordability constraints: Affordability is a major hurdle to continued LPG use. Although PMUY successfully provided more LPG connections in Rajasthan, many rural households find the cost of refills prohibitive. In poorer districts, the need to cover essential expenses often forces households to return to using biomass instead of buying a gas cylinder. This situation aligns with national research, which indicates that the ongoing expense of clean fuels, rather than the initial availability, is the primary factor determining their sustained use. This cost barrier is particularly significant in rural Rajasthan, where household earnings fluctuate, work is seasonal, and money is mostly spent on food. Consequently, the use of clean fuels in these areas is vulnerable to financial setbacks, making adoption inconsistent and precarious.

Comparisons with national findings: National surveys, such as the National Family Health Survey and the India Human Development Survey, show steady progress in adopting clean fuels. While urban areas are close to universal coverage, rural areas are gradually improving. Rajasthan's progress aligns with this national trend, but with two key differences:

1. **A wider rural-urban gap:** The difference between rural and urban households in Rajasthan is larger than the national average, indicating deeper inequalities.
2. **More varied within the state:** National surveys often hide the disparities seen at the district level. Rajasthan shows extremes, with districts like Ajmer and Alwar achieving significant clean fuel adoption, while Banswara, Barmer, and Dungarpur lag far behind.

These differences suggest that state- or national-level averages cannot fully capture the complexity of energy transitions. Rajasthan's situation highlights the need for local analyses that consider local conditions, cultural practices, and geographical challenges.

Policy interpretation: Ujjwala Yojana and beyond: Thus, while Ujjwala has succeeded in improving *access*, it has not addressed sustained affordability and reliability. In Rajasthan, the limitations of PMUY are especially stark because of the state's socio-economic diversity and challenging geography. The main bottlenecks are:

1. **Affordability of refills**, which discourages regular use.
2. **Distributional gaps**, especially in tribal and desert areas.
3. **Cultural inertia**, where households perceive biomass as sufficient.

Intra-state inequality: lagging districts and marginalized groups: One of the most striking findings is the persistence of intra-state inequality. Urbanized districts such as Jaipur and Alwar enjoy better infrastructure and higher incomes, enabling sustained clean fuel use. In contrast, tribal districts in the south and desert districts in the west remain far behind. Moreover, caste and social identity play an important role. The analysis shows that Scheduled Tribes and marginalized caste groups disproportionately rely on unclean fuels. This intersection of poverty, geography, and social exclusion creates overlapping disadvantages, reinforcing the cycle of energy poverty.

Such inequalities underline the inadequacy of "one-size-fits-all" policies. Without district-sensitive strategies, state-level averages risk obscuring the fact that certain regions and groups are systematically left behind.

Conclusion: The evidence shows that Rajasthan faces significant challenges in providing clean cooking fuel to everyone, despite national progress. Key issues include:

1. Continued use of unclean fuels, especially in rural, tribal, and desert areas.
2. There is a large gap between rural and urban areas due to cost and infrastructure problems.
3. Unequal progress within the state, with marginalized groups still relying heavily on biomass.

This study provides a detailed look at individual districts, going beyond general statistics to show the variety in Rajasthan's shift to cleaner energy. This local view highlights that adopting clean energy is tied to social, economic, cultural, and environmental factors, requiring flexible and varied policy solutions.

From a policy perspective, it's clear that one-size-fits-all plans for Rajasthan won't work. Instead, strategies tailored to each district are needed. These should include help with the cost of fuel refills, better infrastructure, renewable energy options, and links to programs for women and tribal communities.

Future research should build on this descriptive analysis with studies that track changes over time and explore cause-and-effect relationships in household behavior. Understanding why people continue to use multiple types of fuel, the influence of cultural habits, and the long-term effects of financial support will be important. Additionally, qualitative studies on gender roles and community practices can add richer insights to quantitative surveys about adoption trends.

In summary, Rajasthan reflects both the successes and the limitations of India's clean energy efforts. While large programs have increased access, deep-rooted inequalities continue to leave many people behind. A more inclusive, district-focused, and sustainable approach is necessary to ensure that everyone gains access to clean cooking fuel.

References:-

1. Bajpayee, P. M., Mohanty, P. C., & Yadav, M. K. (2024). Breathing in danger: unveiling cooking fuel transitions in India and alarming effect of household air pollution on under-five children's health. *Journal of Biosocial Science*, 1. https://doi.org/10.1017/s002193202400035x.
2. Daví-Arderius, D., Obaco, M., &Pontarollo, N. (2023). Spillover Effects and Regional Determinants in the Ecuadorian Clean-Cooking Program: A Spatiotemporal Econometric Analysis. *SSRN Electronic Journal*. https://doi.org/10.2139/ssrn.4643776.
3. Farah, N., Siddiqui, S., Dilawaiz, D., &Touseef, M. (2023). Exploring Fuel Stacking And Clean Fuel Access In Rural Areas Of Pakistan: A Comprehensive Review [Review of *Exploring Fuel Stacking And Clean Fuel Access In Rural Areas Of Pakistan: A Comprehensive Review*]. *Journal of Survey in Fisheries Sciences*, 6716. Green Wave Publishing of Canada. https://doi.org/10.53555/sfs.v10i3.1557.
4. Gould, C., & Urpelainen, J. (2018). LPG as a clean cooking fuel: Adoption, use, and impact in rural India. *Energy Policy*, *122*, 395. https://doi.org/10.1016/j.enpol.2018.07.042.
5. Gould, C., Urpelainen, J., & SAIS, J. H. (2019). The role of education and attitudes in cooking fuel choice: Evidence from two states in India. *Energy Sustainable Development/Energy for Sustainable Development*, *54*, 36. https://doi.org/10.1016/j.esd.2019.09.003.
6. Gupta, A., Vyas, S., Hathi, P., Khalid, N., Srivastav, N., Spears, D., & Coffey, D. (2020). Persistence of Solid Fuel Use in Rural North India. *PubMed*, *55*(3), 55. https://pubmed.ncbi.nlm.nih.gov/38405178.
7. International Energy Agency. (2020). World energy outlook 2020. Paris: IEA.
8. Kelkar, G., & Nathan, D. (2021). Cultural and Economic Barriers in Switching to Clean Cooking Energy: Does Women's Agency Make a Difference? *Energies*, *14*(21), 7242. https://doi.org/10.3390/en14217242.
9. Kumar, P., Dhand, A., Tabak, R. G., Brownson, R. C., &Yadama, G. N. (2017). Adoption and sustained use of cleaner cooking fuels in rural India: a case control study protocol to understand household, network, and organizational drivers. *Archives of Public Health*, *75*(1). https://doi.org/10.1186/s13690-017-0244-2.
10. Malakar, Y. (2018). Studying household decision-making context and cooking fuel transition in rural India. *Energy Sustainable Development/Energy for Sustainable Development*, *43*, 68. https://doi.org/10.1016/j.esd.2017.12.006.
11. Mani, S., Jain, A., Tripathi, S., & Gould, C. (2020). Sustained LPG use requires progress on broader development outcomes. *Nature Energy*, *5*(6), 430. https://doi.org/10.1038/s41560-020-0635-4.
12. Narula, S. A., & Raj, S. P. (2023). *Sustainable Food Value Chain Development*. https://doi.org/10.1007/978-981-19-6454-1.
13. Vyas, S., Gupta, A., & Khalid, N. (2021). Gender and LPG use after government intervention in rural north India. *World Development*, *148*, 105682. https://doi.org/10.1016/j.worlddev.2021.105682.
14. Waleed, K., & Mirza, F. M. (2022). Examining fuel choice patterns through household energy transition index: an alternative to traditional energy ladder and stacking models. *Environment Development and Sustainability*, *25*(7), 6449. https://doi.org/10.1007/s10668-022-02312-8.
15. Waweru, D., Mose, N., & Otieno, S. (2022). Household energy choice in Kenya: An empirical analysis of the energy ladder hypothesis. Journal of Energy Research and Reviews, *10*(4), 12–19. https://papers.ssrn.com/sol3/papers.cfm?abstract_id=4072276.
16. World Health Organization. (2024, March 7). *Household air pollution and health*. World Health Organization. https://www.who.int/news-room/fact-sheets/detail/household-air-pollution-and-health.

17. Yadav, A. K., Nair, V. K., Viswanathan, P. K., Manoj, P. K., & Raman, R. (2024). Analyzing the journey and future trajectories of clean cooking research in India: a bibliometric analysis and case study research. *Discover Sustainability*, *5*(1). https://doi.org/10.1007/s43621-024-00779-1.

Table 4: Rural vs. Urban District-wise Unclean Cooking Fuel Usage

S.	District	Rural	Urban	S.	District	Rural	Urban	S.	District	Rural	Urban
1	Ganganagar	2.8	2.83	**12**	Jaipur	5.45	12.8	**23**	Bundi	2.19	2.23
2	Hanumangarh	2.84	5.72	**13**	Sikar	2.63	3.68	**24**	Bhilwara	2.93	3.78
3	Bikaner	2.7	0.66	**14**	Nagaur	4.65	4.24	**25**	Rajsamand	2.07	1.45
4	Churu	3.02	3.53	**15**	Jodhpur	3.9	5.3	**26**	Dungarpur	2.99	0.12
5	Jhunjhunun	2.28	5.14	**16**	Jaisalmer	1.18	0.38	**27**	Banswara	4.19	0.69
6	Alwar	5.71	4.97	**17**	Barmer	4.57	0.65	**28**	Chittaurgarh	2.99	3.22
7	Bharatpur	4.16	6.21	**18**	Jalor	3.35	1.43	**29**	Kota	1.4	3.76
8	Dhaulpur	1.85	1.93	**19**	Sirohi	1.5	1.42	**30**	Baran	2.09	0.78
9	Karauli	2.77	2.47	**20**	Pali	2.72	0.59	**31**	Jhalawar	2.64	1.52
10	Sawai Madhopur	2.39	3.17	**21**	Ajmer	2.95	3.81	**32**	Udaipur	5.52	3.88
11	Dausa	3.02	2.38	**22**	Tonk	2.56	4.75	**33**	Pratapgarh	1.99	0.51

Source: Author's calculations using NFHS-5 unit-level data, 2019–21

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

ग्रामीण महिलाओं में स्वास्थ्य जागरूकता का अध्ययन (ग्राम –अमकुई, जिला सतना के विशेष संदर्भ में)

डॉ. राजेश त्रिपाठी* अमृतांशु मिश्रा**

* एसो. प्रोफेसर (समाजशात्र) म.गा.चि.ग्रा.वि.वि., चित्रकूट, सतना (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (समाजशास्त्र) म.गा.चि.ग्रा.वि.वि., चित्रकूट, सतना (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र में ग्रामीण महिलाओं में स्वास्थ्य जागरूकता का अध्ययन किया गया है। जिसमें ग्रामीण महिलाओं के एक छोटे से ग्राम अमकुई को चुनकर महिलाओं की स्वास्थ्य जागरूकता का अवलोकन करके 50 महिलाओं का साक्षात्कार के माध्यम से एवं प्रश्न द्वारा तथ्य एकत्रित किए गए हैं। शोधार्थी द्वारा जानकारी प्राप्त करके तालिका बनाकर वर्गीकरण एवं विश्लेषण कर निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तावना – गाँव में अधिकांश महिलायें किस प्रकार से अनेक रोगों एवं पारिवारिक दबाव से पीड़ित रहती हैं। पीड़ित महिलाओं के समस्याओं के संबंध में अध्ययन किया जाना आवश्यक है ताकि गाँव में महिलाएं अपने स्वास्थ्य के प्रति जाग्रत रहें और अपने शरीर को स्वस्थ बनायें तथा यदि परिवार के दबाव में महिला अपना कार्य कर रही हैं।वह महिलाएं अपने स्वासथ्य सम्बन्धित क्रिया–प्रतिक्रिया को नहीं समझ पाती हैं।

स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुँच – हमें अपने गाँव में इस बात का ध्यान देना चाहिए कि स्वास्थ्य की उपलब्ध सभी सुविधायें जैसे– दवाईयां, सुइयां गरीब एवं निर्धन व्यक्तियों तथा दलितों को मुफ्त में उपलब्ध करवा सकें।

गर्भवती महिलाओं के सम्बन्ध में – हम यह सुनिश्चित करें कि गाँव की गर्भवती महिलाओं के मेटरनिटी बेनिफट योजना या अन्य योजनाओं का लाभ मिल पा रहा है या नहीं।

आँगनवाड़ी केन्द्र में पोषण आहार वितरण – गांव में यह प्रावधान है कि गांव में सभी बच्चों को आंगनवाड़ी में दलिया मिलना चाहिये। सभी साथ ही साथ यह भी प्रावधान है कि कुपोषण बच्चों को दुगना दलिया मिलना चाहिए। अगर यह नहीं हो रहा है तो उसे सुनिश्चित करना हमारी जिम्मेदारी हैं।

महिलाओं के साथ होने वाले व्यवहार – इतने अधिक काम और जिम्मेदारियाँ निभाने पर भी महिलाओं के द्वारा किये जाने वाले काम को काम नहीं समझा जाता। परिवार के जरिए किये जाने वाले किसी भी फैसले में उनकी राय नहीं ली जाती हैं, और नही उस महिला को परिवार के कमाने वाले और घर चलाने वाले सदस्य के रूप में माना जाता हैं।

शोध प्रारूप

समस्या का स्वरूप– ग्रामीण स्तर पर प्राय: महिलाओं की स्थिति प्रारम्भ से दयनीय बनी है। उन पर सुधार करने की अत्यन्त आवश्यकता है, वहाँ पर लड़का–लड़की में भेद किया जाता है, लड़को को जितनी सुविधायें एवं खान–पान पर जितना ध्यान दिया जाता है। उतना लड़कियों पर नही जिसके कारण उनके स्वास्थ्य हमेशा खराब बना रहता है।

क्षेत्र का चयन एवं परिचय– ग्राम अमकुई में सभी जातियों तथा धर्म के लोग निवास करते हैं। कृषि कार्य करने वाले मजदूर वर्ग भी तथा नौकरी पेशे वाले सभी वर्ग के लोग निवास करते हैं।

क्षेत्र की सामान्य जानकारी– ग्राम अमकुई म.प्र. के सतना जिले की नागौद तहसील में स्थित है यह नागौद से 20 किमी. दूर दक्षिण में स्थित है।

उद्देश्य:

1. ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों का अध्ययन करना।
2. महिलाओं में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता के स्तर को मालूम करना।
3. गर्भवती महिलाओं के स्वास्थ्य संबंधी कठिनाइयों का अध्ययन करना

शोध प्रविधि– अध्ययन हेतु ग्राम अमकुई से 50 महिला उत्तरदाताओं का चयन उद्देश्य पूर्ण निदर्शन विधि द्वारा किया गया है। उत्तरदाताओं के चयन में विभिन्न जाति, धर्म एवं आर्थिक परिस्थिति की महिलाओं के चयन पर विशेष ध्यान दिया गया। तथ्यों के संकलन हेतु एक अनुसूची का निर्माण किया गया है, इस अनुसूची को क्षेत्र में जाकर उत्तरदाताओं से संपर्क कर इसकी फील्ड टेस्टिंग की गई है।

तालिका क्रमांक–1: जाति के आधार पर वर्गीकरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	सामान्य	11	22
2	पिछड़ा वर्ग	32	64
3	अनुसूचित जाति	07	14
	योग	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वधिक 64 प्रतिशत उत्तरदाता पिछडा वर्ग से हैं 22 प्रतिशत सामान्य वर्ग और 14 प्रतिशत अनुसूचित जाति के पाये गये हैं।

तालिका क्रमांक–2: ग्रामीण महिलाओं की बीमारियों का वर्गीकरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	खांसी	22	44
2	यौन रोग	03	06
3	संक्रामक रोग	15	30
4	अन्य	10	20
	योग	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वधिक 44 प्रतिशत उत्तरदाता खांसी रोग

से 30 प्रतिशत संक्रामक रोग से 6 प्रतिशत यौन रोग और 20 प्रतिशत अन्य रोग से पीड़ित हैं।

तालिका क्रमांक–3: स्वास्थ्य के उपचार के आधार पर वर्गीकरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	घर में	12	24
2	स्वास्थ्य केन्द्र	37	76
	योग	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वधिक 76 प्रतिशत उत्तरदाता स्वास्थ्य उपचार हेतु नजदीकी स्वास्थ्य केन्द्र जाते हैं और 24 प्रतिशत उत्तरदाता गाँव में ही अपना उपचार करवाते हैं।

तालिका क्रमांक–4: प्रसव कराने के आधार पर वर्गीकरण

क्र.	विकल्प	संख्या	प्रतिशत
1	घर में	6	12
2	स्वास्थ्य केन्द्र	44	88
	योग	**50**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वधिक 88 प्रतिशत उत्तरदाता प्रसव हेतु स्वास्थ्य केन्द्र जाते हैं और 12 प्रतिशत उत्तरदाता प्रसव घर में ही करवाते हैं।

अत: विश्लेषण से यह ज्ञात है कि गाँव के सर्वाधिक उत्तरदाता प्रसव स्वास्थ्य केन्द्र में करवाती हैं।

निष्कर्ष:

1. क्षेत्र में स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं में पिछड़े वर्ग की महिलाएं अधिक प्रभावित पाई गई।
2. गाँव में यौन रोग से पीड़ित महिलाएं कम पाई गई।
3. गाँव में अधिकांश महिलाओं का मानना है कि वह अपना इलाज स्वास्थ्य केंद्र पर करवाती हैं।
4. गाँव की अधिकांश महिलाओं का कहना है कि वह अपना प्रसाद स्वास्थ्य केंद्र पर करवाती हैं।

सुझाव:

1. गाँव में पिछड़े एवं अनुसूचित जाति की महिलाओं को स्वास्थ्य के प्रति अधिक जागरूक करने की आवश्यकता है।
2. कृषि कार्य में कार्यरत एवं मजदूरी करने वाली महिलाओं को स्वास्थ्य के प्रति जागरूक करने की विशेष आवश्यकता है।
3. गाँव में महिला स्वास्थ्य हेतु विशेष योजना चलाई जाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. डॉ. गणेश पाण्डेय–सामाजिक समस्यायें।
2. डॉ. अखिलेश एस. परिहार कल्याण गायत्री पब्लिकेशन, रीवा, म.प्र.।
3. डॉ. आशु रानी – महिला विकास कार्यक्रम।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

जन्मकुण्डली में शिक्षाविद् एवं प्रोफेसर बनने के योग – एक अध्ययन

महामहोपाध्याय डॉ. गोविन्द गन्धे* डॉ. कुलदीप श्रीवास्तव**

* शोध निर्देशक, कालिदास संस्कृत अकादमी, उज्जैन (म.प्र.) भारत
**सेवानिवृत्त वरिष्ठ चिकित्साधिकारी एवं ज्योतिषाचार्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – ज्योतिष शास्त्र के मान्य सिद्धांतों द्वारा व्यवसाय चयन में सहायता प्राप्त होती है। इस अध्ययन का उद्देश्य जन्मकुण्डली द्वारा व्यवसाय चयन के सिद्धांतों की व्यवहारिकता प्रमाणित करना है। इस अध्ययन में महाविद्यालय के प्राध्यापकों की कुण्डलियों का अध्ययन एवं विश्लेषण किया गया है। इन कुण्डलियों के विश्लेषण से पाया गया है कि शिक्षा, ज्ञान के कारक ग्रहों एवं भावों का अत्यधिक प्रभाव इस व्यवसाय की सफलता में पड़ता है। शिक्षाविदों व प्राध्यापकों में गुरू ग्रह, शुक्र ग्रह तथा पंचमेश, नवमेश का बली होना आवश्यक होता है। इनका दशम् व्यवसाय भाव से भी सम्बन्ध होता है।

प्रस्तावना – ज्योतिर्विज्ञान प्राचीनकाल में एक स्थापित विद्या रही है तथा उसका उपयोग, खगोलीय घटनाओं को समझने तथा उनके प्रभाव से जनमानस को भविष्य की घटनाओं के शुभाशुभ बताने के लिये किया जाता था। वर्तमाान में इसके पुर्नस्थापन की आवश्यकता है ताकि भविष्य में पूर्वानुमान से, जनसाधारण भविष्य की योजनायें बना सकें।

वर्तमान में हर किसी को, अपने एवं परिवार के जीवनयापन हेतु कुछ न कुछ व्यवसाय करना होता है। विद्याध्ययन काल में ही यह मार्गदर्शन प्राप्त हो जाये कि किस व्यवसाय में सफलता प्राप्त होगी तो जीवन में सफलता की संभावना बढ़ जाती है।

ज्योतिषशास्त्र में, कारक भावों, कारक ग्रहों तथा विभिन्न ग्रहयोगों से व्यवसाय की प्रकृति का निर्धारण निर्देशित कियाहै। व्यवसाय किसप्रकार काहोगा, यह निर्णय व्यवसाय कारकग्रहों के स्वरूप, ग्रहबलआदि एवं व्यवसाय भाव के भावेशों पर निर्भर करता है, जो ग्रह बलवान होकर लग्न, लग्नेश एवं अन्य आजीविका के स्वरूप अथवा प्रकार को प्रदर्शित करने वाला होता है, उसी के अनुसार व्यवसाय निर्धारित होताहै।

बृहतपाराशरहोराशास्त्र में अथ वृत्ति निर्णयाध्याय में,

लग्नादिन्दोश्च दशमं प्रबलं वृत्तिदायकम्।
तदिशात् तत्रगात् खेटात्तदंशेशाच्च चिन्तयेत्।।
तद्दृष्टुश्च तद्राशेः स्वाभावोत्थं वदेत्पुमान्।
तेषां वृद्ध्या भवेद् वृद्धिरन्यथान्यत् फलं स्मृतम्।।[1]

उक्त उल्लेखित श्लोकों में बलवान लग्न या चन्द्रमा से दशम स्थान से मनुष्य की जीविका एवं व्यवसाय का विचार करने का लेख है।

इसी प्रकार विचारणीय दशम भाव में स्थित राशि, दशमेश, दशमगत्, नवांशेश ग्रह, दशमस्थ ग्रह इनमें से बलवान ग्रह या राशि के स्वभाव अनुसार व्यक्ति की वृत्ति कहें। यदि उक्त राशि या ग्रह बलवान हो तो उत्तम व्यवसाय फल तथा मध्यम बली हो तो मध्यम फल तथा साधारण या हीन बली हो तो क्रमशः साधारण या नाममात्र फल कहें।

इसी आशय का फलादेश श्रीकल्याण वर्मा विरचित सारावली के कर्मचिन्ताध्याय के निम्न श्लोकों में भी उल्लेखित है,

लग्नाद्दशमे राशौ कर्मफलं यत्प्रकीर्तितं मुनिभिः।
राशिग्रहणस्वभावैर्ग्रहदृष्ट्या तदहमपि वक्ष्ये।।
होरेन्द्वोर्बलयोगाद्यो दशमस्तत्भावजं कर्म।
तस्याधिपपरिवृद्ध्या वृद्धिर्ज्ञेयाऽन्यथा हानिः।।[2]

श्रीवैद्यनाथ विरचित जातक पारिजात के दशम भाव फल में निम्नलिखित श्लोक में,

आज्ञामानविभूषणानि वसनव्यापारनिद्राकृषि –
प्रव्रज्यागमकर्मजीवनयशोविज्ञानविद्याः क्रमात्।
कर्मस्वामिदिनेशबोधनगुरुच्छायासुतैश्चिन्तये –
दुक्तानि प्रविहाय पूर्वमशुभे मानी विमानो भवेत्।।[3]

उक्त श्लोक में दशमेश, सूर्य, बुध, गुरु और शनि से निम्नलिखित बातों का विचार करना चाहिये :–

आज्ञा, सम्मान, भूषण, वस्त्र, व्यापार, निद्रा, खेती–बाड़ी, प्रव्रज्या, आगम, कर्म या कार्य, जीवन निर्वाह, यश, विज्ञान, विद्या, इन सब का क्रम से विचार करें।

इसके अतिरिक्त शिक्षा विद् के लिए पंचमेश एवं नवमेश का दशमेश, धनेश व लाभेश से सम्बन्ध होना भी वांछनीय होता है।

उद्देश्य – ज्योतिषशास्त्र के अनेकानेक उपयोगों में से एक महत्वपूर्ण उपयोग व्यवसाय चयन में सहायता प्रदान करना भी है। वर्तमान में कैरियर मार्गदर्शन एवं परामर्श का प्रचलन है। कैरियर मार्गदर्शन करते समय यदि फलित ज्योतिषशास्त्र के सिद्धान्तों के अनुसार व्यवसाय के विषय का चुनाव किया जाये तो व्यक्ति विशेष की सफलता के अवसर बढ़ जाते हैं।

प्रस्तुत शोधपत्र मेंज्योतिषशास्त्र की इस उपयोगिता को दृष्टिगत् कोरखतेहुए **'जातक की कुण्डली में शिक्षाविद् एवं प्रोफेसर बनने के योग का अध्ययन'** किया गयाहै।

प्रविधि– उक्त अध्ययन के लिए निम्नलिखित प्रक्रिया अपनाई गई :

1. सर्वप्रथम प्राध्यापकों एवं शिक्षाविदों की नौ कुण्डलियों का संग्रह किया गया।
2. प्रत्येक कुण्डली का अध्ययन एवं विश्लेषण किया गया –

ज्योतिषशास्त्र में शिक्षाविद् एवं प्रोफेसर के व्यवसाय चयन में सहायक विभिन्न ग्रह योगों का अध्ययन किया गया तथा उन ग्रह योगों के परिप्रेक्ष्य में समस्त कुण्डलियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया।

3. प्रत्येक कुण्डली से प्राप्त निष्कर्ष एवं उनका विश्लेषण सामूहिक रूप से किया गया।
4. विश्लेषण करने के उपरांत निष्कर्षों का निर्धारण किया गया।

विश्लेषण एवं निष्कर्ष–जातक की कुण्डली में शिक्षाविद् एवं प्रोफेसर बनने के योग के अध्ययन का निष्कर्ष– शिक्षा के क्षेत्र में कई प्रकार के तकनीकी एवं गैर तकनीकी, मानविकी आदि विभिन्न विधाओं का विकास हो गया है जिसमें कई प्रकार की योग्यताओं वाले प्राध्यापक अथवा शिक्षकों की आवश्यकता होती है। उक्त अध्ययन में नौ प्राध्यापकों एवं शिक्षाविदों की कुण्डलियों का अध्ययन किया गया, जिसमें निम्नांकित प्रकार के ग्रह योगों एवं कारकों का पाया जाना सुनिश्चित हुआ:

1. अध्ययन के लिए चयनित कुण्डलियों में गुरु और शुक्र जो दोनों शिक्षा से सम्बन्ध रखते हैं, उनका प्रभाव सभी कुण्डलियों में पायागया एवं यह ग्रह बली पाये गये।
2. बुध वाणी एवं बुद्धि का कारक ग्रह है। प्राध्यापकों की कुण्डलियों में से पॉच कुण्डलियों में बुधादित्य योग पाया गया एवं अन्य में धनेश, लाभेश अथवा पंचमेश से संबंध पाया गया।
3. शुक्र, गुरु के साथ सम्बन्ध बनाता हो तथा लग्न, लग्नेश, पंचम एवं पंचमेश से भी संबंध हो या प्रभाव डालता हो तो प्राध्यापक बनाता है यह पुष्टि भी कुण्डलियों के अध्ययन से हुई है।
4. विद्या स्थान का स्वामी अर्थात् पंचमेश की नौ मे से छः कुण्डलियों में धन स्थान, पराक्रम स्थान, दशम स्थान एवं लाभ स्थान से युति अथवा संबंध किसी न किसी रूप में पाया गया। अतः विद्या व्यवसाय से आय प्राप्ति का योग बना।
5. यदि कर्म भाव अथवा दशम भाव का संबंध गुरु, बुध, शुक्रसात कुण्डलियों में पाया गया एवं अन्य दो कुण्डलियों में लग्न अथवा लग्नेश से संबंध पाया गया।

उपसंहार – भारतीय ज्योतिषशास्त्र मानव के भाग्य, भविष्य, आयु, सन्तान तथा जीवन में घटने वाली घटनाओं की जानकारी देने वाला ऐसा विज्ञान है, जिसे हजारों वर्षों से मान्यता प्राप्त है। वर्तमान में भी दिन प्रतिदिन ज्योतिषशास्त्र में लोकाभिरुचि की वृद्धि हो रही है। नवीन शिक्षा–दीक्षा से सम्पन्न नवयुवक, समुदाय भी दिनानुदिन ज्योतिषशास्त्र की ओर आकृष्ठ हो रहा है।

फलित ज्योतिष में ग्रहों का फल विचारने के लिये ग्रहस्पष्ट, भावस्पष्ट, ग्रहबल, ग्रहस्थिति आदि जानकर ग्रहों के गुण, धर्म, दृष्टि, स्थान आदि अनेक बातों पर पूर्णरुप से विचार कर ग्रहों की स्थिति आदि द्वारा बनने वाले अनेक योगों पर ध्यान देकर, देश, काल, अवस्था के अनुसार फलादेश किया जाता है।

ज्योतिष शास्त्र के अनेकानेक उपयोगों में एक उपयोग व्यवसाय चयन में सहायता प्रदान करना भी है। वर्तमान में कैरियर मार्गदर्शन एवं परामर्श का प्रचलन है।कैरियर मार्गदर्शन करते समय यदि फलित ज्योतिषशास्त्र के सिद्धान्तों के अनुसार व्यवसाय के विषय का चुनाव किया जाये तो व्यक्ति विशेष की सफलता के अवसर बढ़ जाते हैं।

प्रस्तुत अध्ययन व्यवसायों के चयन से संबंधित है, इसमें शिक्षा व्यवसाय को आधार बनाकर उससे सम्बन्धित ज्योतिषीय योगों का विवेचन किया गया है। इसी को आधार बनाकर अन्य व्यवसायों के लिए भी उन व्यवसायों से संबंधित ज्योतिषीय अध्ययन कर हम विद्यार्थियों की कुण्डलियों का अध्ययन कर उनको यह परामर्श उपलब्ध करा सकते हैं कि किस जातक को कौन सा व्यवसाय अपनाना चाहिये।

संदर्भ ग्रन्थों की सूची :–

1. बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम्, पाराशर डॉ. सुरेशचन्द्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली 2008.
2. श्रीमत्कल्याणवर्म–विरचरिता सारावली, डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी, मोतीलाल बनारसीदास इंटरनेशनल, नई दिल्ली, 2025.
3. जातकपारिजातः, वैद्यनाथ पण्डित गोपेश कुमार ओझा, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी 2008.
4. बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम्, पाराशर डॉ. सुरेशचन्द्र मिश्र, रंजन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली 2008.
5. भारतीय ज्योतिष, डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली 2008.
6. लघुपाराशरी, पाराशर डॉ. सुरकान्त झा, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी 2007.
7. जातकाभरणम्, दुण्डिराज श्री सीताराम झा, ठाकुर प्रसाद पुस्तक भंडार, वाराणसी 1982.
8. सचित्र ज्योतिष–शिक्षा, बी0एल0 ठाकुर, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1998.
9. भृगु संहिता महाशास्त्र, आचार्य भृगु पण्डित केवल आनन्द जोशी, राधा पॉकेट बुक्स, मेरठ, 1998.
10. चमत्कार चिन्तामणिः, भट्टनारायण ब्रजबिहारीलाल शर्मा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1994.
11. ग्रह–फल चन्द्रिका, जगदीश पण्डित, सुमित प्रकाशन, आगरा, 1991.
12. फलदीपिका, श्री गोपेश कुमार ओझा, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 2015.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

स्वापक औषधी और पुलिस प्रशासन की भूमिका

मनुदेव पाटीदार* डॉ. बालासाहेब गर्जे**

* शोधार्थी, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (लॉ) पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – स्वापक औषधी और पुलिस प्रशासन मादक पदार्थों के निर्माण, वितरण और उपयोग को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पुलिस प्रशासन मादक पदार्थों की तस्करी और उपयोग के मामलों की जांच करता है, मादक पदार्थों को जब्त करता है और अपराधियों के खिलाफ कार्रवाई करता है। इसके अलावा, पुलिस प्रशासन जागरूकता बढ़ाने और शिक्षा प्रदान करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिससे लोगों को मादक पदार्थों के दुष्प्रभावों के बारे में जानकारी मिल सके। प्रभावी पुलिसिंग और सामुदायिक सहयोग से मादक पदार्थों के दुरुपयोग को रोकने और समुदाय की सुरक्षा और स्वास्थ्य को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण योगदान मिलता है। सामुदायिक सहयोग से प्रभावित व्यक्तियों को पुनर्वास और समर्थन प्रदान करने में भी सहायता मिलती है। नारकोटिक्स एक्ट का प्रभावी क्रियान्वयन और पुलिस प्रशासन की सक्रिय भूमिका समाज को मादक पदार्थों के खतरों से बचाने में महत्वपूर्ण साबित होती है। एक समग्र दृष्टिकोण अपनाकर हम मादक पदार्थों के खिलाफ लड़ाई में सफल हो सकते हैं और एक स्वस्थ और सुरक्षित समाज का निर्माण कर सकते हैं। यह सामूहिक प्रयास समाज के सभी वर्गों के लिए सुरक्षा और कल्याण को बढ़ावा देगा। मादक पदार्थों के खिलाफ लड़ाई में पुलिस और समुदाय का सहयोग अत्यंत महत्वपूर्ण है।

शब्द कुंजी –स्वापक औषधी, एनडीपीएस निषेध।

प्रस्तावना – स्वापक औषधी के खिलाफ लड़ाई में पुलिस की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। पुलिस प्रशासन स्वापक औषधी की तस्करी और उपयोग के मामलों की जांच करता है, अपराधियों के खिलाफ कार्रवाई करता है और मादक पदार्थों को जब्त करता है। पुलिस जागरूकता बढ़ाने और शिक्षा प्रदान करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जिससे लोगों को नार्कोटिक ड्रग्स के दुष्प्रभावों के बारे में जानकारी मिल सके। प्रभावी पुलिसिंग और सामुदायिक सहयोग से नार्कोटिक ड्रग्स के खिलाफ लड़ाई में सफलता प्राप्त की जा सकती है। पुलिस और समुदाय के संयुक्त प्रयास से नार्कोटिक ड्रग्स के दुरुपयोग को रोकने और प्रभावित व्यक्तियों को समर्थन प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान मिलता है, जिससे एक स्वस्थ और सुरक्षित समाज का निर्माण होता है। इस प्रकार, पुलिस की सक्रिय भूमिका और सामुदायिक सहयोग से हम नार्कोटिक ड्रग्स के खतरों से निपट सकते हैं और समाज को सुरक्षित बना सकते हैं। यह सामूहिक प्रयास न केवल नार्कोटिक ड्रग्स के दुरुपयोग को कम करेगा, बल्कि समाज के सभी वर्गों के लिए सुरक्षा और कल्याण को भी बढ़ावा देगा।

साहित्य समीक्षा

- **मादक पदार्थों की तस्करी: एक गंभीर समस्या राजीव एस. घिरनिकर** द्वारा लिखित इस लेख में मादक पदार्थों की तस्करी की समस्या पर चर्चा की गई है। मादक पदार्थों की तस्करी एक अवैध व्यापार है जिसमें मादक पदार्थों को एक राज्य से दूसरे राज्य या देश में तस्करी की जाती है। यह समस्या न केवल व्यक्तिगत स्वास्थ्य के लिए खतरनाक है, बल्कि यह समाज और देश की सुरक्षा के लिए भी बड़ा खतरा है।

मादक पदार्थों की तस्करी एक जटिल समस्या है जिसमें आर्थिक और सामाजिक कारक शामिल हैं। अपराधी नेटवर्क मादक पदार्थों की तस्करी के लिए नए और नवीन तरीकों का उपयोग करते हैं। मादक पदार्थों की तस्करी को रोकने के लिए कानूनी एजेंसियों की भूमिका महत्वपूर्ण है। एनडीपीएस अधिनियम, 1985 के तहत कानूनी एजेंसियों को मादक पदार्थों की तस्करी के खिलाफ कार्रवाई करने के लिए सशक्त बनाया गया है।

- **भारती ठाकुर और नीरू मित्तल के विश्लेषण में भारत के नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस (एनडीपीएस) अधिनियम 1985** को उजागर किया गया है, जो नशीली दवाओं को नियंत्रित करता है और चिकित्सा उपयोग के लिए सख्त प्रावधानों के तहत अनुमति देता है। यह अधिनियम साइकोट्रोपिक दवाओं की ओवर-द-काउंटर बिक्री को प्रतिबंधित करता है, उल्लंघन के लिए दंड लगाता है, और नियंत्रण और दंड को बढ़ाने के लिए संशोधित किया गया है, जो चिकित्सा महत्व और सख्त नियमन के बीच संतुलन बनाता है।

स्वापक औषधी में पुलिस की भूमिका के उद्देश्य हैं:

1. स्वापक औषधी की तस्करी और उपयोग को रोकना।
2. अपराधियों के खिलाफ कार्रवाई करना और मादक पदार्थों को जब्त करना।
3. जागरूकता बढ़ाना और शिक्षा प्रदान करना।
4. समुदाय की सुरक्षा और स्वास्थ्य को बढ़ावा देना।
5. स्वापक औषधी के दुरुपयोग के मूल कारणों को समझना और उन्हें संबोधित करना।
6. प्रभावित व्यक्तियों को पुनर्वास और समर्थन प्रदान करना।

साहित्यक परिकल्पना – स्वापक औषधी दुरुप्रयोग नियंत्रण में पुलिस

की भूमिका को और मजबूत बनाने से स्वापक औषधियों के दुरुप्रयोग में कमी आएगी। पुलिस की सक्रियता और सामुदायिक सहयोग से स्वापक औषधियों के प्रति जागरूकता बढ़ेगी और इसके दुष्प्रभावों के बारे में लोगों को जानकारी मिलेगी, जिससे समाज में स्वापक औषधियों के दुरुप्रयोग को कम करने में मदद मिलेगी।

स्वापक औषधि क्या है?

स्वापक औषधि (या नारकोटिक औषधि) का अर्थ है एक ऐसा पदार्थ जो शरीर में जाने पर व्यक्ति की सामान्य कार्यप्रणाली को प्रभावित करता है और नींद उत्पन्न कर सकता है. ये मनोसक्रिय पदार्थ होते हैं, जिनका सेवन करने पर व्यक्ति की चेतना और गतिविधियों में बदलाव आता है, या नींद आती है, या फिर शरीर के अंगों की कार्यप्रणाली प्रभावित होती है।

नारकोटिक ड्रग एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट (एनडीपीएस एक्ट) के अनुसार:

1. नारकोटिक ड्रग की परिभाषा: एनडीपीएस एक्ट की धारा 2(xiv) के अनुसार, 'नारकोटिक ड्रग' का अर्थ है:

1. कोका पत्ता
2. कैनाबिस (भांग)
3. अफीम
4. पोस्ता चारा,और इसमें सभी निर्मित दवाएं भी शामिल हैं।

2. साइकोट्रोपिक सब्सटेंस की परिभाषा: एनडीपीएस एक्ट की धारा 2(xxiii) के अनुसार, 'साइकोट्रोपिक सब्सटेंस' का अर्थ है:

कोई भी पदार्थ, प्राकृतिक या सिंथेटिक, या कोई प्राकृतिक सामग्री या उस पदार्थ या सामग्री का कोई नमक या तैयारी जो साइकोट्रोपिक पदार्थों की सूची में शामिल है।

एनसीबी – नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो भारत में नशीली दवाओं से संबंधित अपराधों से निपटने वाली एक कानून प्रवर्तन एजेंसी है। इस ब्यूरो की स्थापना 1988 में नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1985 के तहत की गई थी। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है। ब्यूरो का मुख्य उद्देश्य मादक पदार्थों से संबंधित अपराधों को रोकने के लिए नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1985 और अन्य संबंधित कानूनों के प्रावधानों को लागू करना है।

ब्यूरो का नेतृत्व एक महानिदेशक करता है, जो भारतीय पुलिस सेवा का एक अधिकारी होता है। नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो में लगभग 500 कर्मचारी हैं, जिनमें नारकोटिक्स नियंत्रण अधिकारी, नारकोटिक्स अन्वेषक, नारकोटिक्स विश्लेषक और प्रशासनिक कर्मचारी शामिल हैं। ब्यूरो पाँच क्षेत्रीय कार्यालयों में विभाजित है, जो मुंबई, कोलकाता, चेन्नई, दिल्ली और गुवाहाटी में स्थित हैं।

नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो, संयुक्त राष्ट्र मादक पदार्थ एवं अपराध कार्यालय (यूएनओडीसी) का सदस्य है। यह दक्षिण एशियाई नारकोटिक्स नियंत्रण आयोग (एसएएनएसीसी) का भी हिस्सा है, जो एक क्षेत्रीय निकाय है जिसमें सात सदस्य देश शामिल हैंरू भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका, बांग्लादेश, भूटान, नेपाल और अफगानिस्तान।

नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो (एनसीबी) के कार्य निम्नलिखित हैं:

1. मादक दवाओं और मन: प्रभावी पदार्थों के अवैध व्यापार को रोकना है – एनसीबी मादक दवाओं और मन: प्रभावी पदार्थों के अवैध व्यापार को रोकने के लिए काम करती है। इसमें तस्करी के मार्गों की पहचान करना, तस्करों को पकड़ना और उनके खिलाफ कार्रवाई करना शामिल है।

2. मादक पदार्थों की तस्करी से संबंधित जानकारी एकत्र करना और उसका विश्लेषण करना – एनसीबी मादक पदार्थों की तस्करी से संबंधित जानकारी एकत्र करती है और उसका विश्लेषण करती है। इससे तस्करी के तरीकों और तस्करों के नेटवर्क को समझने में मदद मिलती है।

3. मादक पदार्थ विरोधी अभियान चलाना – एनसीबी मादक पदार्थ विरोधी अभियान चलाती है, जिसमें तस्करों के खिलाफ कार्रवाई करना, मादक पदार्थों को जब्त करना और तस्करी के नेटवर्क को तोड़ना शामिल है।

4. मादक पदार्थों की तस्करी से निपटने में राज्य और केंद्रीय कानून प्रवर्तन एजेंसियों के प्रयासों का समन्वय करना – एनसीबी राज्य और केंद्रीय कानून प्रवर्तन एजेंसियों के साथ समन्वय करती है ताकि मादक पदार्थों की तस्करी के खिलाफ प्रभावी कार्रवाई की जा सके।

5. मादक पदार्थों की तस्करी से निपटने के लिए कानून प्रवर्तन कर्मियों को प्रशिक्षण प्रदान करना – एनसीबी कानून प्रवर्तन कर्मियों को मादक पदार्थों की तस्करी से निपटने के लिए प्रशिक्षण प्रदान करती है, जिससे वे तस्करी के मामलों में प्रभावी ढंग से कार्रवाई कर सकें।

6. मादक पदार्थों की तस्करी से निपटने के लिए कड़े कानून बनाने की वकालत करना – एनसीबी मादक पदार्थों की तस्करी से निपटने के लिए कड़े कानून बनाने की वकालत करती है, जिससे तस्करों के खिलाफ प्रभावी कार्रवाई की जा सके और मादक पदार्थों की तस्करी को रोका जा सके।इन कार्यों के माध्यम से, एनसीबी मादक पदार्थों की तस्करी को रोकने और समाज को सुरक्षित बनाने के लिए काम करती है।

एनसीबी की शक्तियां – नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो (एनसीबी) भारत सरकार के गृह मंत्रालय के अधीन एक ब्यूरो है। एनसीबी का प्राथमिक उद्देश्य 1985 के नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट को लागू करना है। एनसीबी नारकोटिक्स नियंत्रण के लिए भारत और विदेशों में अन्य कानून प्रवर्तन एजेंसियों के साथ संपर्क और समन्वय का भी काम करता है।

1. मादक दवाओं और मन: प्रभावी पदार्थों को जब्त करना – एनसीबी को मादक दवाओं और मन: प्रभावी पदार्थों को जब्त करने की शक्ति प्राप्त है। जब एनसीबी को किसी मादक पदार्थ की तस्करी की जानकारी मिलती है, तो वे उस पदार्थ को जब्त कर सकते हैं और अपराधी के खिलाफ कार्रवाई कर सकते हैं।

2. बिना वारंट के अपराधियों को गिरफ्तार करना – एनसीबी को बिना वारंट के अपराधियों को गिरफ्तार करने की शक्ति प्राप्त है। यदि एनसीबी के पास किसी व्यक्ति के मादक पदार्थों की तस्करी में शामिल होने का पर्याप्त सबूत है, तो वे उस व्यक्ति को बिना वारंट के गिरफ्तार कर सकते हैं।

3. बिना वारंट के किसी भी परिसर में प्रवेश करना और तलाशी लेना – एनसीबी को बिना वारंट के किसी भी परिसर में प्रवेश करने और तलाशी लेने की शक्ति प्राप्त है। यदि एनसीबी के पास किसी परिसर में मादक पदार्थों की तस्करी की जानकारी है, तो वे उस परिसर में प्रवेश कर सकते हैं और तलाशी ले सकते हैं।

4. किसी भी वाहन को रोककर उसकी तलाशी लेना – एनसीबी को किसी भी वाहन को रोककर उसकी तलाशी लेने की शक्ति प्राप्त है। यदि एनसीबी के पास किसी वाहन में मादक पदार्थों की तस्करी की जानकारी है, तो वे उस वाहन को रोक सकते हैं और उसकी तलाशी ले सकते हैं।

5. **किसी भी ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार करना जिसने स्वापक औषधि और मन: प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 के अंतर्गत दंडनीय अपराध किया हो –** एनसीबी को किसी भी ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार करने की शक्ति प्राप्त है जिसने स्वापक औषधि और मन: प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 के अंतर्गत दंडनीय अपराध किया हो। यह शक्ति एनसीबी को मादक पदार्थों की तस्करी के खिलाफ प्रभावी कार्रवाई करने में मदद करती है।

6. **स्वापक औषधियों और मन: प्रभावी पदार्थों के परिवहन का व्यवसाय करने वाले व्यक्तियों से दस्तावेजों की मांग –** एनसीबी स्वापक औषधियों और मन: प्रभावी पदार्थों के परिवहन का व्यवसाय करने वाले व्यक्तियों से संबंधित दस्तावेजों की मांग कर सकती है। इससे एनसीबी को यह जानने में मदद मिलती है कि क्या व्यक्ति के पास आवश्यक अनुमति और दस्तावेज हैं या नहीं।

7. **वाहनों में पाए गए मादक पदार्थों को जब्त करना –** यदि एनसीबी किसी वाहन में मादक पदार्थ पाती है, तो वह उन्हें जब्त कर सकती है। इससे एनसीबी मादक पदार्थों की तस्करी को रोकने में मदद कर सकती है और अपराधियों के खिलाफ कार्रवाई कर सकती है।

8. **मादक पदार्थों के नमूने लेना –** एनसीबी मादक पदार्थों के नमूने ले सकती है ताकि उनकी जांच की जा सके और यह पता लगाया जा सके कि वे वास्तव में मादक पदार्थ हैं या नहीं। इससे एनसीबी को मादक पदार्थों की तस्करी के मामलों में कार्रवाई करने में मदद मिलती है।

9. **व्यक्तियों से जांच के लिए मादक पदार्थ प्रस्तुत करने की अपेक्षा करना –** एनसीबी किसी भी व्यक्ति से जांच के लिए मादक पदार्थ प्रस्तुत करने की अपेक्षा कर सकती है। इससे एनसीबी को यह जानने में मदद मिलती है कि व्यक्ति के पास मादक पदार्थ हैं या नहीं और यदि हां, तो क्या उनके पास इसके लिए आवश्यक अनुमति है या नहीं।

10. **मादक पदार्थों के अवैध व्यापार की रोकथाम के लिए कार्रवाई करना –** एनसीबी मादक पदार्थों के अवैध व्यापार की रोकथाम के लिए कार्रवाई कर सकती है। इसमें मादक पदार्थों की तस्करी के मामलों में अपराधियों के खिलाफ कार्रवाई करना और मादक पदार्थों के अवैध व्यापार को रोकने के लिए आवश्यक उपाय करना शामिल है।

11. **स्वापक औषधियों और मन: प्रभावी पदार्थों के विनाश के लिए आवश्यक उपाय करना –** एनसीबी स्वापक औषधियों और मन: प्रभावी पदार्थों के विनाश के लिए आवश्यक उपाय कर सकती है। इससे मादक पदार्थों की तस्करी को रोकने में मदद मिलती है और समाज को मादक पदार्थों के दुष्प्रभावों से बचाया जा सकता है।इन शक्तियों और जिम्मेदारियों के साथ, एनसीबी मादक पदार्थों की तस्करी के खिलाफ लड़ाई में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है और समाज को सुरक्षित बनाने में मदद करती है।

12. **मादक पदार्थों के दुरुपयोग की रोकथाम –** एनसीबी मादक पदार्थों के दुरुपयोग की रोकथाम के लिए आवश्यक उपाय करती है। इसमें जागरूकता अभियान चलाना, मादक पदार्थों के दुष्प्रभावों के बारे में जानकारी देना और लोगों को मादक पदार्थों के दुरुपयोग से बचने के लिए प्रेरित करना शामिल है।

13. **नशे के आदी लोगों के उपचार और पुनर्वास –** एनसीबी नशे के आदी लोगों के उपचार, पुनर्वास और सामाजिक पुन: एकीकरण के लिए आवश्यक उपाय करती है। इसमें नशे के आदी लोगों को उपचार और पुनर्वास केंद्रों में भेजना और उन्हें समाज में पुन: एकीकृत करने में मदद करना शामिल है।

14. **अंतर्राष्ट्रीय सहयोग –** एनसीबी मादक पदार्थ नियंत्रण में संयुक्त राष्ट्र और उसकी एजेंसियों के साथ सहयोग करती है। इससे एनसीबी को मादक पदार्थों की तस्करी के खिलाफ लड़ाई में वैश्विक स्तर पर सहयोग करने में मदद मिलती है।

15. **केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्धारित कार्य –** एनसीबी ऐसे अन्य कार्य करती है जो केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। इससे एनसीबी को मादक पदार्थों की तस्करी के खिलाफ लड़ाई में अपनी भूमिका निभाने में मदद मिलती है और समाज को सुरक्षित बनाने में मदद मिलती है।

एनसीबी का मिशन – नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो (एनसीबी) भारत में मादक पदार्थों की तस्करी से लड़ने के लिए जिम्मेदार एक सरकारी एजेंसी है। एनसीबी का मिशन 'भारत में मादक पदार्थों की तस्करी को रोकना और वैध दवाओं के इस्तेमाल पर नियंत्रण रखना' है। एनसीबी अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सीमा शुल्क विभाग और खुफिया ब्यूरो जैसी अन्य सरकारी एजेंसियों के साथ मिलकर काम करता है।

स्वापक औषधी के दुरुप्रयोग को नियंत्रित करने के लिए पुलिस निम्नलिखित कदम उठा सकती है:

1. **जागरूकता अभियान चलाना –** पुलिस स्वापक औषधियों के दुष्प्रभावों के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए अभियान चला सकती है, जिससे लोगों को इसके खतरों के बारे में पता चले और वे इसके दुरुप्रयोग से बच सकें।

2. **मादक पदार्थों की तस्करी को रोकना –** पुलिस मादक पदार्थों की तस्करी को रोकने के लिए प्रभावी कार्रवाई कर सकती है, जिसमें तस्करों को पकड़ना और मादक पदार्थों को जब्त करना शामिल है।

3. **अपराधियों के खिलाफ कार्रवाई करना –** पुलिस स्वापक औषधियों के दुरुप्रयोग में शामिल अपराधियों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई कर सकती है, जिसमें उन्हें गिरफ्तार करना और उनके खिलाफ मुकदमा चलाना शामिल है।

4. **सामुदायिक सहयोग बढ़ाना –** पुलिस सामुदायिक सहयोग बढ़ाने के लिए काम कर सकती है, जिसमें लोगों को स्वापक औषधियों के दुष्प्रभावों के बारे में जानकारी देना और उन्हें इसके दुरुप्रयोग के खिलाफ लड़ने के लिए प्रेरित करना शामिल है।

5. **पुनर्वास और उपचार केंद्रों के साथ सहयोग करना –** पुलिस पुनर्वास और उपचार केंद्रों के साथ सहयोग कर सकती है, जिसमें नशे के आदी लोगों को उपचार और पुनर्वास के लिए भेजना और उन्हें समाज में पुन: एकीकृत करने में मदद करना शामिल है।

6. **मादक पदार्थों की बिक्री और वितरण पर निगरानी रखना –** पुलिस मादक पदार्थों की बिक्री और वितरण पर निगरानी रख सकती है, जिसमें अवैध रूप से मादक पदार्थों की बिक्री करने वालों के खिलाफ कार्रवाई करना शामिल है।

7. **स्कूलों और कॉलेजों में जागरूकता कार्यक्रम चलाना है –** पुलिस स्कूलों और कॉलेजों में जागरूकता कार्यक्रम चला सकती है, जिसमें छात्रों को स्वापक औषधियों के दुष्प्रभावों के बारे में जानकारी देना और उन्हें इसके दुरुप्रयोग से बचने के लिए प्रेरित करना शामिल है।

इन कदमों के माध्यम से, पुलिस स्वापक औषधी के दुरुप्रयोग को

नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है और समाज को सुरक्षित बनाने में मदद कर सकती है।

निष्कर्ष – स्वापक औषधी दुरुप्रयोग नियंत्रण में पुलिस की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। पुलिस प्रशासन स्वापक औषधियों के अवैध व्यापार को रोकने, अपराधियों के खिलाफ कार्रवाई करने और मादक पदार्थों को जब्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके अलावा, पुलिस जागरूकता बढ़ाने और शिक्षा प्रदान करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जिससे लोगों को स्वापक औषधियों के दुष्प्रभावों के बारे में जानकारी मिल सके और वे इसके खतरों से बच सकें।

प्रभावी पुलिसिंग और सामुदायिक सहयोग से स्वापक औषधी दुरुप्रयोग को रोकने और समाज को सुरक्षित बनाने में मदद मिल सकती है। जब पुलिस और समुदाय मिलकर काम करते हैं, तो वे मादक पदार्थों के अवैध व्यापार को रोकने और अपराधियों को न्याय के दायरे में लाने में अधिक प्रभावी हो सकते हैं।

इसके अलावा, पुलिस की भूमिका न केवल मादक पदार्थों के अवैध व्यापार को रोकने में है, बल्कि यह भी सुनिश्चित करने में है कि समाज में मादक पदार्थों के दुष्प्रभावों के बारे में जागरूकता बढ़े और लोग इसके खतरों से बचने के लिए प्रेरित हों। इस प्रकार, पुलिस की भूमिका स्वापक औषधी दुरुप्रयोग नियंत्रण में एक महत्वपूर्ण स्तंभ के रूप में कार्य करती है, जो समाज को सुरक्षित और स्वस्थ बनाने में मदद करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. टैक्समैन का नार्कोटिक ड्रग्स और साइकोट्रोपिक सब्सटेंस कानून बिद्युत कुमार बनर्जी।
2. नार्कोटिक्स ड्रग्स और साइकोट्रोपिक सब्सटेंस कानून के एम शर्मा और एस पी मागो।
3. नार्कोटिक ड्रग्स और साइकोट्रोपिक सब्सटेंस कानून बिद्युत कुमार बनर्जी और श्रीनिवासन गोपाल।
4. व्हाइट्समैन का नार्कोटिक ड्रग्स और साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1985 पर टिप्पणी योगेश वी नैय्यर।
5. नार्कोटिक ड्रग्स और साइकोट्रोपिक सब्सटेंस: समस्या और कानून की समझ डॉ. श्रद्धा पांडे।
6. कस्टम्स एक्ट, 1962 पी एल मलिक।
7. भारतीय न्याय संहिता, 2023 डी गौर।
8. भारतीय न्याय संहिता, 2023 बसंती लाल बाबेल।
9. समाचार पत्र और पत्रिका स्रोत: दैनिक भास्कर, टाइम्स ऑफ इंडिया, पत्रिका।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मुक्त शिक्षा में माध्यमिक स्तर के शिक्षार्थियों की सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीक सम्बन्धी समस्याओं एवं सुझावों का अध्ययन

डॉ. दिनेश कुमार*

*ऐसोसिएट प्रोफेसर (शिक्षाशास्त्र) गुलाब देवी महिला स्नातकोत्तार महाविद्यालय, बलिया (उ.प्र.) भारत

प्रस्तावना – अनेक शहरी अथवा ग्रामीण बालक आर्थिक तंगी के कारण अपनी पढ़ाई बीच में छोड़ देते हैं और अर्थोपार्जन में लग जाते हैं अथवा सामाजिक, पारिवारिक या व्यक्तिगत समस्याओं के कारण अपनी पढ़ाई पूरी नहीं कर पाते है। शहरी अथवा ग्रामीण अंचल की अनेक बालिकाएं घर के काम–काज, शादी या सामाजिक बन्धनों के कारण से अपनी पढ़ाई पूरी नहीं कर पाती हैं। इन वर्गों के अनेक बच्चे अपनी पढ़ाई जारी रखना चाहते हैं। ऐसे बालकों और बालिकाओं के लिए मुक्त या दूरस्थ शिक्षा एक स्वर्णिम अवसर प्रदान कर रही है। इस शिक्षा पद्धति में प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी संस्थान की भूमिका उल्लेखनीय है।इसमे प्राथमिक से उच्चतर माध्यमिक स्तर तक की सामान्य व व्यावसायिक पाठ्यक्रम की शिक्षा, शिक्षार्थियों की सुविधा व आवश्यकता के अनुरूप प्रदान की जाती है। यहां माध्यमिक पाठ्यक्र के शिक्षार्थियों कोसूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकि सेहोने वाली समस्याओं एवं उन समस्याओं के समाधान हेतु सुझावों का अध्ययन प्रस्तुत है।

अध्ययन की आवश्यकता – औपचारिक शिक्षा के विकल्प एवं पूरक के रूप में उभरी यह शिक्षा पद्धति आज के युवाओं में अपनी लोक प्रियता स्थापित करते हुए प्राथमिक स्तर से उच्च शिक्षा स्तर तक विस्तृत रूप में फैली हुई है। इसके अन्तर्गत सामान्य एवं व्यावसायिक दोनों प्रकार के पाठ्यक्रम चलते हैं। दोनों ही क्षेत्रों में अनेक अध्ययन सम्पादित हो चुके हैं।गौतम(1990), सिंह(1983), साहू(1985), बालसुब्रामण्यम (1986), सुदामें एवं पुगाजहेन्ती(1986), यू.जी.सी. (1986), सिंह, मल्लिक एवं चौधरी(1994), राठौर(1993), राना(1994), श्रीवास्तव(1995), मुछाल(2006), सत्यवीर(2006), विश्नोई (2008), कुमार(2010) आदि सम्पन्न किये गये।क्योकि व्यावसायिक पाठ्यक्रम के क्षेत्र में नित नये क्षेत्र व पाठ्यक्रम जुडते जा रहे हैं चाहे वह लघु कालिक हो या फिर दीर्घकालिक पाठ्यक्रम। इन नये पाठ्यक्रमों में अध्ययनरत छात्र एवं छात्राओं की समस्याओं और उन समस्याओं के समाधान हेतु उपाय को अध्ययन का विषय बनाने की आवश्यकता महसूस हुई, इसलिए इसे अध्ययन का विषय बनाया गया है।

उद्देश्य– प्रस्तुत प्रपत्र के शोध उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

1. राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय द्वारा संचालित माध्यमिकपाठ्यक्रम के शिक्षार्थियों की सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकि सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन करना।
2. राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय द्वारा संचालित माध्यमिकपाठ्यक्रमके शिक्षार्थियों कीसूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकि सम्बन्धी समस्याओं के समाधान हेतु सुझावों का अध्ययन करना।

परिकल्पना:

1. सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकि के सन्दर्भ में ग्रामीण तथा शहरी अध्ययन केन्द्रों के विद्यार्थियों की समस्याओं में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकि के सन्दर्भ में पुरुष तथा महिला विद्यार्थियों की समस्याओं में सार्थक अन्तर नहीं है।
3. सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकि के सन्दर्भ में ग्रामीण एवं शहरी अध्ययन केन्द्रों के विद्यार्थियों के सुझावों में सार्थक अन्तर नहीं है।
4. सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकि के सन्दर्भ में पुरुष तथा महिला विद्यार्थियों के सुझावों में सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध प्रविधि – यह एक सर्वेक्षण प्रकार का अध्ययन है जिसमेंउत्तार प्रदेश के राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय के 10 अध्ययन केन्द्रों से यादृच्छिक विधि द्वारा न्यादर्श में 200 शिक्षार्थियों को चयनित किया गया हैं।उत्तार प्रदेश के राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय में अध्ययनरत माध्यमिक पाठ्यक्रम के सभी विद्यार्थी जनसंख्या हैं।प्राप्त आंकड़ो के विश्लेषण के लिए प्रतिशतता एवं(2 परीक्षण का प्रयोग किया गया है। इसमें अध्ययनरत 105 ग्रामीण एवं 95 शहरी, 80 महिला एवं 120 पुरूष माध्यमिक पाठ्यक्रम के अधिगमकर्ताओं को इस शिक्षा व्यवस्थाएवं अध्ययन केन्द्रों पर होने वाली समस्याओं का अध्ययन किया गया है और उनके द्वारा अनुभूति उन समस्याओं के लिए दिये गये सुझावों का अध्ययन किया गया है जो निम्नलिखित हैं–

विश्लेषण एवं व्याख्या

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की समस्याएं एवं सुझाव – न्यादर्श के रूप में लिए गये राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी संस्थान में अध्ययनरत विद्यार्थियों में 71% ग्रामीण तथा 57% शहरी अध्ययन केन्द्र के विद्यार्थी एक से दो वर्ष के मध्य, 25% ग्रामीण तथा 36% शहरी अध्ययन केन्द्र के विद्यार्थी दो से चार वर्ष के मध्य एवं 4% ग्रामीण तथा 7% शहरी अध्ययन केन्द्र के विद्यार्थी चार वर्ष से अधिक अवधि से पढ़ाई कर रहे हैं। इन्हीं विद्यार्थियों का लिंग के सन्दर्भ में अध्ययन से पाया गया कि 63% पुरुष तथा 66% महिलाएं एक से दो वर्ष के मध्य, 31% पुरुष तथा 29% महिलाएं दो से चार वर्ष के मध्य और 6% पुरुष तथा 5% महिलाएं चार वर्ष से अधिक समय से केवल माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम में नामांकित हैं। एक और आंकड़े के अध्ययन से पता

चलता है कि इस पाठ्यक्रम के 33% ग्रामीण तथा 20% शहरी व 23% पुरुष तथा 34% महिलाएं राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी संस्थान में पढ़ाई के साथ-साथ किसी अन्य संस्था या विभाग से नियमित या अनियमित रूप से सम्बद्ध हैं। 21% ग्रामीण तथा 36% शहरी अध्ययन केन्द्रों के 33% पुरुष तथा 20% महिलाएं नौकरी पाने के उद्देश्य से, 44% ग्रामीण तथा 37% शहरी अध्ययन केन्द्रों के व 35% पुरुष तथा 49% महिलाएं शैक्षिक योग्यता बढ़ाने के लिए, 12% ग्रामीण तथा 8% शहरी अध्ययन केन्द्रों व 15% पुरुष तथा 16% महिलाएं इसके लचीलेपन के कारण और 13% ग्रामीण तथा 19% शहरी अध्ययन केन्द्रों व 17% पुरुष तथा 15% महिलाएं परिवार की आर्थिक स्थिति के कारण इस शिक्षण संस्थान में पढ़ाई कर रही हैं। इन विद्यार्थियों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अत: इनकी समस्याओं तथा उनके द्वारा बताए गये सुझावों का अध्ययन आगे X^2 परीक्षण द्वारा किया जा रहा है।

तालिका-1,2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका-1 से यह स्पष्ट होता है कि संयोजक के आवश्यकतानुसार उपल्ब्ध न होने, अध्ययन केन्द्र के पुस्तकालय में एनआईओएस की सामग्री उचित मात्रा में न होने, व्यक्तिगत सम्पर्क शिक्षण आवश्यकता से कम होने, विषय-वस्तु समझने में कठिनाई, सम्बन्धित सूचना समय से न मिलने, प्रयोगशाला में आवश्यक उपकरण की कमी से समस्या, ऑडियो/वीडियो कैसेट का मूल्य अंकित मूल्य से अधिक लेने, ऑडियो/वीडियो कैसेट अध्ययन केन्द्र पर उपलब्ध न रहने की समस्या, सहपाठियों के साथ अंत:क्रिया कम होने, ऑडियो/वीडियो कांफ्रेसिंग न होने, शिक्षण शुल्क अधिक होने तथा एड्यू-सैटशैक्षिक कार्यक्रम केन्द्र में उपलब्ध न होने सम्बन्धी समस्याओं पर परिगणित X^2 मान क्रमश: 0.17, 4.57, 0.16, 2.47, 1.6, 2.35, 1.23, 1.1, 4.71, 1.6 तथा 3.65 हैं, जो कि मुक्तांश (*df*)-2 के .05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 5.99 से कम है। अत: उपरोक्त समस्याओं के सन्दर्भ में शून्य परिकल्पना कि 'अध्ययन केन्द्रों की स्थिति और उसमें पढ़ने वाले माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की समस्याएं एक-दूसरे पर आश्रित नहीं हैं, अर्थात् ग्रामीण तथा शहरी अध्ययन केन्द्रों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की समस्याओं में सार्थक अन्तर नहीं है' को स्वीकार किया जाता है।

तालिक-1 के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण तथा शहरी अध्ययन केन्द्रों पर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के लिए प्रमुख समस्याएं निम्नलिखित हैं-

1. सम्बन्धित सूचना समय से न मिलने,
2. ऑडियो/वीडियो कैसेट का मूल्य अंकित मूल्य से अधिक लेने,
3. ऑडियो/वीडियो कैसेट अध्ययन केन्द्र पर उपलब्ध न रहने की समस्या,
4. ऑडियो/वीडियो कांफ्रेसिंग न होने तथा
5. एड्यू-सैट शैक्षिक कार्यक्रम अध्ययन केन्द्र में उपलब्ध न होना।

2. लिंगवार माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की समस्याएं

तालिका-2 से यह स्पष्ट होता है कि ऑडियो/वीडियो कैसेट अध्ययन केन्द्र पर उपलब्ध न रहने सम्बन्धी समस्याओं पर परिगणित X^2 मान 7.86 हैं, जो कि मुक्तांश (*df*)-2 के .05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 5.99 से अधिक है। अत: उपरोक्त समस्या के सन्दर्भ में शून्य परिकल्पना कि 'माध्यमिक स्तर के पुरुष तथा महिला विद्यार्थियों की समस्याएं एक-दूसरे पर आश्रित नहीं हैं, अर्थात् माध्यमिक स्तर के पुरुष तथा महिला विद्यार्थियों की समस्याओं में सार्थक अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है।

माध्यमिक स्तर के महिला विद्यार्थियों की तुलना में पुरुष विद्यार्थियों की समस्याएं है- ऑडियो/वीडियो कैसेट अध्ययन केन्द्र पर उपलब्ध न रहने की समस्या (83.75%)। सम्बन्धित सूचनाएं समय से न मिलने, ऑडियो/विडियो कैसेट का मूल्य अंकित मूल्य से अधिक लेने, ऑडियो/वीडियो कांफ्रेसिंग न होने, शिक्षण शुल्क अधिक होने तथा एड्यू-सेट शैक्षिक कार्यक्रम केन्द्र में उपलब्ध न होने सम्बन्धी समस्याओं पर परिगणित X^2 मान क्रमश: 3.57, 2.06, 1.02, 0.19 तथा 0.91 हैं, जो कि मुक्तांश (*df*)-2 के .05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 5.99 से कम है। अत: उपरोक्त समस्याओं के सन्दर्भ में शून्य परिकल्पना कि 'माध्यमिक स्तर के पुरुष तथा महिला विद्यार्थियों की समस्याएं एक-दूसरे पर आश्रित नहीं हैं, अर्थात् माध्यमिक स्तर के पुरुष तथा महिला विद्यार्थियों की समस्याओं में सार्थक अन्तर नहीं है' को स्वीकार किया जाता है।

माध्यमिक स्तर के पुरुष तथा महिला दोनों ही विद्यार्थियों की प्रमुख समस्याएं निम्नलिखित हैं-

1. सम्बन्धित सूचनाएं समय से न मिलने,
2. ऑडियो/विडियो कैसेट का मूल्य अंकित मूल्य से अधिक लेने,
3. ऑडियो/वीडियो कांफ्रेसिंग न होने तथा
4. एड्यू-सैट शैक्षिक कार्यक्रम केन्द्र में उपलब्ध न होना।

तालिका-3,4 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका-3 से यह स्पष्ट होता है कि मोबाइल फोन के द्वारा विद्यार्थियों को आवश्यक सूचना दिए जाने सम्बन्धी सुझावों पर परिगणित X^2 मान 11.02 हैं, जो कि मुक्तांश (*df*)-2 के .01 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 9.21 से अधिक है। अत: उपरोक्त सुझाव के सन्दर्भ में शून्य परिकल्पना कि 'अध्ययन केन्द्रों की स्थिति और उसमें पढ़ने वाले माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सुझाव एक-दूसरे पर आश्रित नहीं हैं, अर्थात् ग्रामीण तथा शहरी अध्ययन केन्द्रों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सुझाव में सार्थक अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है।

शहरी अध्ययन केन्द्रों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की तुलना में ग्रामीण अध्ययन केन्द्रों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सुझाव हैं- मोबाइल फोन के द्वारा विद्यार्थियों को आवश्यक सूचना दिए जाने (92.38%)।

रेडियो के शैक्षिक कार्यक्रम के प्रसारण की अवधि बढ़ाने सम्बन्धी सुझावों पर परिगणित X^2 मान 8.25 हैं, जो कि मुक्तांश (*df*)-2 के .05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 5.99 से अधिक है। अत: उपरोक्त सुझाव के सन्दर्भ में शून्य परिकल्पना कि 'अध्ययन केन्द्रों की स्थिति और उसमें पढ़ने वाले माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सुझाव एक-दूसरे पर आश्रित नहीं हैं, अर्थात् ग्रामीण तथा शहरी अध्ययन केन्द्रों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सुझावों में सार्थक अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है।

ग्रामीण अध्ययन केन्द्रों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की तुलना में शहरी अध्ययन केन्द्रों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सुझाव है- रेडियो के शैक्षिक कार्यक्रम के प्रसारण की अवधि बढ़ाने (84.76%) सम्बन्धी सुझाव अपेक्षित हैं।

कम खर्च पर ही ऑडियो/वीडियो कैसेट सदैव उपलब्ध कराने,

ज्ञानदर्शन (टी0वी0) शैक्षिक कार्यक्रम का प्रसारण समय बढ़ाने तथा ई-पाठ्यक्रम का आयोजन करने सम्बन्धी सुझावों पर परिगणित X^2 मान क्रमश: 4.4, 4.4 तथा 3.31 हैं, जो कि मुक्तांश (df)-2 के .05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 5.99 से कम है। अत: उपरोक्त सुझावों के सन्दर्भ में शून्य परिकल्पना कि 'अध्ययन केन्द्रों की स्थिति और उसमें पढ़ने वाले माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सुझाव एक-दूसरे पर आश्रित नहीं हैं, अर्थात् ग्रामीण तथा शहरी अध्ययन केन्द्रों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सुझाव में सार्थक अन्तर नहीं है' को स्वीकार किया जाता है।

ग्रामीण तथा शहरी दोनों ही अध्ययन केन्द्रों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के प्रमुखतर सुझाव निम्नलिखित हैं-

1. काम खर्च पर ही ऑडियो/वीडियो कैसेट सदैव उपलब्ध कराने,
2. ज्ञानदर्शन (टी0वी0) शैक्षिक कार्यक्रम का प्रसारण समय बढ़ाने तथा
3. ई-पाठ्यक्रम का आयोजन करने सम्बन्धी सुझाव अपेक्षित हैं।

4. लिंगवार माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सुझाव

तालिका-4 से यह स्पष्ट होता है कि मोबाइल फोन के द्वारा विद्यार्थियों को आवश्यक सूचना देने सम्बन्धी सुझाव पर परिगणित X^2 मान 6.01 हैं, जो कि मुक्तांश (df)-2 के .05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 5.99 से अधिक है। अत: उपरोक्त सुझाव के सन्दर्भ में शून्य परिकल्पना कि 'माध्यमिक स्तर के पुरुष तथा महिला विद्यार्थियों के सुझाव एक-दूसरे पर आश्रित नहीं हैं, अर्थात् माध्यमिक स्तर के पुरुष तथा महिला विद्यार्थियों के सुझाव में सार्थक अन्तर नहीं है' को अस्वीकार किया जाता है।

माध्यमिक स्तर के पुरुष विद्यार्थियों की तुलना में महिला विद्यार्थियों का सुझाव है-मोबाइल फोन के द्वारा विद्यार्थियों को आवश्यक सूचना समय से दिये जाने सम्बन्धी सुझाव (90%) अपेक्षित है।कम खर्च पर ही आडियो/वीडियो कैसेट सदैव उपलब्ध कराये जाने, रेडियो के 'ज्ञानवाणी' एवं टेलीविजन के 'ज्ञानदर्शन' शैक्षिक कार्यक्रमों के प्रसारण की अवधि बढ़ायी जाने तथा ई-पाठ्यक्रम का आयोजन किये जाने सम्बन्धी सुझावों पर परिगणित X^2 मान क्रमश 3.6, 4.84, 3.88 तथा 4.19 हैं। जो कि मुक्तांश (df)-2 के .05 सार्थकता स्तर के सारणिक मान 5.99 से कम है। अत: उपरोक्त सुझावों के सन्दर्भ में शून्य परिकल्पना कि 'माध्यमिक स्तर के पुरुष तथा महिला विद्यार्थियों के सुझाव एक-दूसरे पर आश्रित नहीं हैं, अर्थात् माध्यमिक स्तर के पुरुष तथा महिला विद्यार्थियों के सुझाव में सार्थक अन्तर नहीं है' को स्वीकार किया जाता है।

माध्यमिक स्तर के पुरुष तथा महिला दोनों ही विद्यार्थियों के प्रमुख अपेक्षित सुझाव निम्नलिखित है-

1. कम खर्च पर ही आडियो/वीडियो कैसेट सदैव उपलब्ध कराया जाये,
2. घर के लिए पर्याप्त मात्रा में पुस्तकें पुस्तकालय से बिना किसी अधिभार के दिया जाये,
3. दूर के छात्रों को आवासीय सुविधा दिया जाये,
4. रेडियो एवं टेलीविजन 'ज्ञानदर्शन' के शैक्षिक कार्यक्रमों के प्रसारण की अवधि बढ़ायी जाने तथा
5. ई-पाठ्यक्रम का आयोजन किया जाये।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. हरिचन्दन, डी0 (1991). *ए स्ट्रडी ऑफ डिस्टेंस लर्नर्स एण्ड दियर एट्टीच्यूड टुआर्ड्स पापुलेशन रिलेटेड इस्सूज*, एम0फिल0, डिजर्टेशन, इण्टरनेशनल इंस्टीट्यूट फॉर पापुलेशन साइंस, बाम्बे.
2. पासी, बी0के0, गोयल, डी0आर0 एण्ड जायसवाल, के0 (1991). *ऐजुकेशनल टेलीविजन*. आगरा : नेशनल साइकोलॉजिकल कॉर्पोरेशन
3. मुखोपाध्याय, एम0 एण्ड फिलिप, एस0 (एड्स) (1994). *ओपन स्कूलिंग : सेलेक्टेड एक्सपीरियन्सेस*. वैंकुवर : कॉमनवेल्थ ऑफ लर्निंग.
4. साहू, पी0के0 (1999). *एजुकेशनल टेक्नोलॉजी इन डिस्टेंस एजूकेशन*. न्यू देलही : आरावली.
5. मोहन्ती, जे0 (2000). *स्टडीज इन डिस्टेंस एजूकेशन*, न्यू देलही : दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन.
6. साहू पी0के0 एवं मुछाल एम0के0 (2000). राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय के दूरस्थ शिक्षण अधिगम उपगमों की उपयुक्तता का अध्ययन, *भारतीय आधुनिक शिक्षा*, वर्ष 19, अंक 2, अक्टूबर.
7. सांगबिन, जेड0 (2004). ए सर्वे ऑफ ऑटोनॉमस लर्निंग कंडीशन्स इन ओपन एण्ड डिस्टेंस एजुकेशन खान बिंग (एड0), *डिस्टेंस एजूकेशन इन चाइना 2004*. पी-195
8. साहू, बी0 (2005). *ए स्ट्डी ऑफ द डिस्टेंस एजूकेशन सिंस्टम इन ओरिसा ऐज ऐन ऑल्टरनेटिव चैनल*, अनपब्लिश्ड डॉक्टरल थेसिस, उत्कल यूनिवर्सिटी, भुवनेश्वर.
9. झेनफैंग, डब्ल्यू. (2005). *ए स्टडी ऑन द इम्पॉर्टेंस ऑफ असेस्मेंट बुक इन डिस्टेंस एजूकेशन*. एब्सट्रेक्ट ऑफ पेपर आईसीडीई इण्टरनेशनल कांफ्रेंस ऑन ओपन लर्निंग एण्ड डिस्टेंस एजूकेशन, इग्नू, इण्डिया, 19-23 नवम्बर.
10. यांग, जे0एफ0 (2007). *ब्लेंडिंग लर्निंग सपोर्ट फॉर टीचिंग एण्ड लर्निंग इम्प्रूवमेंट*, एब्सट्रेक्ट ऑफ पेपर, टवेंटी फर्स्ट एएओयू एनुअल कांफ्रेंस क्वालालम्पुर. मलेशिया, 29-31 अक्टूबर.
a. विवरणिका (2007-08), व्यावसायिक पाठ्यक्रम, कैलाश कालोनी, नई दिल्ली : राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी संस्थान.
b. विवरणिका (2008-09), माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक पाठ्यक्रम, कैलाश कालोनी, नई दिल्ली : राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी संस्थान.
c. कुमार,दिनेश (2009),*राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी संस्थान में छात्र सहायता सेवाओं की कार्यप्रणाली एवं प्रभावशीलता का अध्ययन*, अप्रकाशित पी-एच0डी0 शोधग्रन्थ, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद.
d. www.nos.org/www.nios.ac.in

तालिका–1: ग्रामीण एवं शहरी अध्ययन केन्द्रों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की समस्याओं में सार्थक अन्तर का X^2 परीक्षण

समस्या	अधिक सीमा तक		कम सीमा तक		बिल्कुल नहीं		X^2मान
	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1. सम्बन्धित सूचना समय से न मिलने की समस्या,	32 (30.48%)	29 (30.53%)	44 (41.9%)	31 (32.63%)	29 (27.62%)	35 (36.84%)	**2.47**
2. ऑडियों/वीडियो कैसेट का मूल्य अंकित मूल्य से अधिक लेने की समस्या	42 (40%)	36 (37.89%)	31 (29.52%)	37 (28.95%)	32 (30.48%)	22 (23.16%)	**2.35**
3. ऑडियो/वीडियो कैसेट अध्ययन केन्द्र पर उपलब्ध न रहने की समस्या	49 (46.67%)	37 (38.95%)	36 (34.29%)	38 (40%)	20 (19.05%)	20 (21.05%)	**1.23**
4. ऑडियो/वीडियो कांफ्रेंसिंग न होने की समस्या	65 (61.9%)	45 (47.37%)	26 (24.76%)	29 (30.53%)	14 (13.33%)	21 (22.11%)	**4.71**
5. EDU-SAT द्वारा शैक्षिक कार्यक्रम केन्द्र में उपलब्ध न होने की समस्या	60 (57.14%)	41 (43.16%)	28 (26.67%)	35 (36.84%)	19 (18.1%)	19 (20%)	**3.65**

तालिका–2: माध्यमिक स्तर के पुरुष तथा महिला विद्यार्थियों की समस्याओं में सार्थक अन्तर का X^2 परीक्षण

समस्या	अधिक सीमा तक		कम सीमा तक		बिल्कुल नहीं		X^2 मान
	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला	
1. सम्बन्धित सूचना समय से न मिलने की समस्या,	32 (26.67%)	29 (36.25%)	51 (42.5%)	24 (30%)	37 (30.83%)	27 (33.75%)	3.57
2. ऑडियों/वीडियो कैसेट का मूल्य अंकित मूल्य से अधिक लेने की समस्या	42 (35%)	36 (45%)	44 (36.67%)	24 (30%)	34 (28.33%)	20(25%)	2.06
3. ऑडियो/वीडियो कैसेट अध्ययन केन्द्र पर उपलब्ध न रहने की समस्या	42 (35%)	44(55%)	51 (42.5%)	23 (28.75%)	27(22.5%)	13 (16.25%)	7.86✻
4. ऑडियो/वीडियो कांफ्रेंसिंग न होने की समस्या	63 (52.5%)	47 (58.75%)	36 (30%)	19 (23.75%)	21(17.5%)	14 (17.5%)	1.02
5. EDU-SAT द्वारा शैक्षिक कार्यक्रम केन्द्र में उपलब्ध न होने की समस्या	62 (51.67%)	39 (48.75%)	38 (31.67%)	25 (31.25%)	20 (16.67%)	18 (22.5%)	0.91

नोट:✻0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक

तालिका–3. माध्यमिक स्तर के ग्रामीण एवं शहरी अध्ययन केन्द्रों के विद्यार्थियों के सुझावों में सार्थक अन्तर का X^2 परीक्षण

सुझाव	अधिक सीमा तक		कम सीमा तक		बिल्कुल नहीं		X^2मान
	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	शहरी	
1. कम खर्च पर ही आडियो/वीडियो कैसेट सदैव उपलब्ध कराये जाये	62 (59.05%)	42 (44.21%)	27 (25.71%)	33 (34.74%)	16 (15.24%)	20 (21.05%)	4.4
2. रेडियों के शैक्षिक कार्यक्रम के प्रसारण की अवधि बढ़ायी जाये	54 (51.43%)	31 (32.63%)	35 (33.33%)	38 (40%)	16 (15.24%)	26 (27.37%)	8.25✻
3. 'ज्ञानदर्शन' (टी.वी.) के शैक्षिक कार्यक्रमों के प्रसारण की अवधि बढ़ायी जाये	35 (33.33%)	36 (37.89%)	53 (50.48%)	35 (36.84%)	17 (16.19%)	24 (25.26%)	4.4
4. ई–पाठ्यक्रम का आयोजन किये जाये	44 (41.9%)	52 (54.74%)	39 (37.14%)	28 (29.47%)	22 (20.95%)	15 (15.79%)	3.31
5. मोबाइल फोन के द्वारा विद्यार्थियों को आवश्यक सूचना दी जाये	65 (61.9%)	42 (44.21%)	32 (30.48%)	31 (32.63%)	8 (7.62%)	22 (23.16%)	11.02✻✻

नोटः✻ 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक, ✻✻ 0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक

तालिका–4: माध्यमिक स्तर के पुरुष तथा महिला विद्यार्थियों के सुझावों में सार्थक अन्तर का X^2 परीक्षण

सुझाव	अधिक सीमा तक		कम सीमा तक		बिल्कुल नहीं		X^2मान
	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला	
1. कम खर्च पर ही आडियो/वीडियो कैसेट सदैव उपलब्ध कराये जाये	56 (46.67%)	48 (60%)	39 (32.5%)	21 (26.25%)	25 (20.83%)	11 (13.76%)	3.60
2. रेडियों के शैक्षिक कार्यक्रम के प्रसारण की अवधि बढ़ायी जाये	54 (45%)	31 (38.75%)	47 (39.17%)	26 (32.5%)	19 (15.83%)	23 (28.75%)	4.84
3. ज्ञानदर्शन (टी.वी.) के शैक्षिक कार्यक्रमों के प्रसारण की अवधि बढ़ायी जाये	39 (32.5%)	32 (40%)	51 (42.5%)	37 (46.25%)	30 (25%)	11 (13.75%)	3.88
4. ई–पाठ्यक्रम का आयोजन किये जाये	56 (46.67%)	40 (50%)	46 (38.33%)	21 (26.25%)	18 (15%)	19 (23.75%)	4.19
5. मोबाइल फोन के द्वारा विद्यार्थियों को आवश्यक सूचना दी जाये	56 (46.75%)	51 (63.75%)	42 (35%)	21 (26.25%)	22 (18.33%)	8 (10%)	6.01*

नोट।* 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Impact of the Information Technology (Intermediary Guidelines and Digital Media Code) Rules, 2021 on OTT Content

Hemant Gangawat* **Dr. Kalpesh Nikawat****

*Research Scholar (Law) Mohanlal Sukhadia University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Assistant Professor (Law) Mohanlal Sukhadia University, Udaipur (Raj.) INDIA

Abstract: The Information Technology (Intermediary Guidelines and Digital Media Ethics Code) Rules, 2021 mark a pivotal development in India's regulation of digital streaming services. This article critically examines the impact of these rules on OTT (Over-The-Top) content platforms, analyzing the implications for creative freedom, accountability, user protection, and censorship. By establishing a three-tier grievance redressal mechanism and mandating compliance measures, the IT Rules aim to balance innovation and consumer interests with legal and cultural sensitivities. Legal debates persist regarding proportionality, content control, and privacy, making this regulatory shift a focal point in India's evolving digital policy landscape.
Keywords: IT Rules 2021, OTT platforms, content regulation, censorship, creative freedom, digital media, grievance mechanism, India

Introduction - The rapid growth of Over-The-Top (OTT) platforms in India has revolutionized how media content is consumed, offering audiences instant, on-demand access to a vast array of audio-visual entertainment. Major international players such as Netflix, Amazon Prime, and Disney+ Hotstar, along with dynamic Indian startups, have played a pivotal role in reshaping cultural narratives through these platforms. By enabling diverse storytelling and facilitating creative innovations, OTT services have democratized content creation, allowing a wider spectrum of voices and perspectives to emerge in India's media landscape.

However, this explosion in content availability and diversity sparked increasing concern and debate about the nature of material being streamed. Critics have voiced apprehension about the presence of content that some consider offensive, obscene, or in conflict with prevailing social and legal standards. These apprehensions created pressure on regulators to address the challenges posed by a largely unregulated digital media ecosystem, which previously operated with minimal oversight compared to traditional print and broadcast media.

In response, the Indian government introduced the Information Technology (Intermediary Guidelines and Digital Media Ethics Code) Rules in 2021, commonly referred to as the IT Rules. These rules aim to bring digital media platforms, especially OTT services, under a structured regulatory framework to ensure accountability and protect user interests. The IT Rules set forth specific obligations for intermediaries—including platform operators—and publishers of online curated content. They establish mechanisms meant to promote transparency in content dissemination and provide safeguards for users while attempting to uphold the creative freedoms integral to the industry's growth.

The IT Rules require OTT platforms to self-regulate through content classification, age-based ratings, and parental controls. Furthermore, they mandate the appointment of grievance redressal officers to handle complaints on content, instituting a three-tier complaint redressal process that ranges from platform-level responses to government oversight. This mechanism aims to balance users' rights to access diverse content with protections against material that could violate laws or offend societal norms.

India's regulatory approach under the IT Rules echoes broader global trends, where many democracies grapple with how to govern digital platforms without stifling innovation or infringing on freedom of expression. While inspired by international best practices, India's framework incorporates unique challenges stemming from its socio-cultural diversity, linguistic plurality, and complex political environment. The formulation of these rules hence represents an effort to tailor global regulatory principles to local contexts, walking a fine line between safeguarding societal interests and nurturing the burgeoning digital

creative economy.

Ultimately, the IT Rules mark a significant policy intervention to bring formality and oversight to India's OTT sector. The success of this regulatory experiment will depend on how well it manages to foster an environment that encourages creative experimentation and expression while safeguarding users and upholding the rule of law in the rapidly evolving digital media landscape.

Framework and Provisions: The IT Rules 2021 represent a significant departure from earlier regulatory approaches. For OTT platforms, the most salient features include:

A code of ethics for all digital publishers, modeled on cinematic certification standards and requiring self-classification of content into categories such as U (Universal), U/A 7+, U/A 13+, U/A 16+, and A (Adult). Platforms must display content descriptors (e.g., violence, language, nudity) and implement parental controls. A three-tier grievance redressal mechanism facilitates user complaints regarding content. The first tier is self-regulation by the platform; the second involves a self-regulatory body of industry experts; and the third tier provides for government oversight and ultimate appeal. Appointment of a grievance officer, chief compliance officer, and nodal officer resident in India ensures effective redressal, liaison with law enforcement, and regulatory compliance. Obligations to respond swiftly to content complaints, especially those alleging violation of law, with timelines for acknowledgment and action set out under the rules.

These provisions collectively aim to foster responsible content production, prevent the dissemination of illegal or harmful material, and safeguard users' interests, especially minors and vulnerable groups.

Impact on Creative Freedom and Censorship: The Information Technology (Intermediary Guidelines and Digital Media Ethics Code) Rules, 2021 dramatically altered the regulatory landscape for OTT content in India, sparking intense debates about censorship and creative freedom. Previously, OTT platforms served as havens for bold, boundary-pushing content free from the strictures of mainstream cinema or television, enabling storytelling across the spectrum of India's cultural, social, and political realities. Producers and viewers experienced what could be termed a 'golden age' of creative diversity—shows explored taboo subjects, critiqued politics, and amplified marginalized voices, benefitting from the lack of a formal censorship regime.

The introduction of the IT Rules 2021, with its three-tier grievance redressal mechanism and expanded government oversight, marked a decisive shift. Now, OTT platforms are required not only to self-classify and rate content by age-appropriateness but also to respond swiftly to user complaints and implement corrective action as directed by regulatory or government bodies. Platforms must appoint a Chief Compliance Officer, a Grievance Officer, and a Nodal Contact Person for effective stakeholder interaction. The self-regulation mechanism first allows platforms to respond to complaints, then permits escalation to a self-regulatory body and, finally, to a government-appointed authority. This third tier, in particular, is often interpreted as state-sanctioned censorship under the guise of regulatory oversight.

Concerns have rapidly escalated regarding the chilling effect of these rules on creative expression. The controversy surrounding series like "Tandav" is emblematic: after its release in January 2021, the show triggered a public furor over alleged religious and political sensitivities. Multiple FIRs were filed, and law enforcement intervened. In response, both Amazon Prime and the show's creators issued public apologies and edited their content to mollify complainants, but even these actions did not fully stem the backlash. The Supreme Court, while refusing interim relief to the platform, affirmed that OTT services must comply with local legal and regulatory frameworks, signaling judicial support for heightened scrutiny and compliance.

Such incidents have fostered a climate of apprehension among OTT creators and platforms, leading to what critics term 'pre-emptive self-censorship.' Producers are increasingly wary of tackling controversial themes for fear of criminal prosecution or platform bans, and are more likely to dilute or sanitize artistic work to avoid regulatory or political heat. Rather than pushing creative boundaries, they lean towards 'safe' material, which inevitably saps the diversity and critical edge of India's digital content ecosystem. This phenomenon also undermines the role of OTT platforms as alternative spaces for social critique, democratic dialogue, and artistic innovation.

Moreover, the subjective nature of complaints and the ease of triggering content takedowns exacerbate risks of arbitrary censorship. Political or religious groups can use the grievance process to file strategic complaints, effectively pressuring platforms to remove or alter material deemed offensive to their interests. Since the government-appointed body in the third tier of redressal wields significant power over content classification, censorship, and compliance recommendations, creators worry about indirect state control over narrative, dissent, and cultural plurality. The self-regulation model, initially intended to empower viewers, may thus morph into a weapon for stifling controversial views and minority perspectives.

These developments raise foundational constitutional concerns, particularly regarding the right to freedom of speech and expression under Article 19(1)(a). Critics contend that the IT Rules, by creating new pathways for censorship outside the well-established grounds for restriction under Article 19(2), contradict the Supreme Court's consistent stance that limits on speech must be absolutely circumscribed and justified in public interest. Judicial precedents emphasize that 'reasonable restrictions' must not become a blanket for suppression of dissent, artistic experimentation, or political critique—the hallmarks

of a healthy democratic society.

Additionally, creators and civil society highlight the lack of procedural safeguards for defending contentious content before it is taken down. With short timelines for compliance, high-stakes liability, and ambiguous standards for what constitutes 'offensive' material, platforms often err on the side of caution, censoring first and asking questions later. The fear of legal action and reputational damage breeds risk aversion and conformity, which dilutes the power of digital media to hold institutions accountable, represent uncomfortable truths, and spark necessary debates.

In sum, while the IT Rules 2021 seek to balance accountability and user protection, they have inadvertently fostered conditions of over-censorship and creative retreat. The regulatory apparatus, particularly its government-controlled elements, risks suppressing India's vibrant OTT ecosystem and curtailing the free expression of ideas that digital media makes possible. Unless checks are introduced to prevent abuse, and unless procedure is made fair and transparent, the promise of India's digital content revolution may remain unfulfilled, overshadowed by censorship and self-censorship in the name of regulatory compliance.

Legal Accountability and User Protection: Supporters of the IT Rules argue that greater accountability is essential for curbing hate speech, misinformation, cyberbullying, and exploitation. The formal grievance redressal process empowers viewers to challenge offensive content, while mechanisms for age-rating and parental controls help shield minors from inappropriate material. The appointment of compliance officers in India facilitates law enforcement access to records and enables more responsive resolution of security or criminal matters.

Yet, questions remain on proportionality and procedural fairness. Some provisions require quick content takedown without sufficient opportunity for defense or judicial review, potentially violating due process. Legal challenges have been mounted by civil rights groups, OTT platforms, and individual creators, arguing the rules exceed the government's powers under the IT Act and impinge on constitutional rights.

Conclusion and Suggestions: The IT Rules 2021 have redefined the compliance terrain for OTT platforms in India. While attempts to address legitimate concerns regarding harmful or illegal content, user safety, and national security are commendable, the regulatory architecture presents challenges for creative autonomy and procedural justice. The tension between censorship and expression, user protection and freedom, corporate responsibility and individual rights is at the heart of contemporary digital media governance.

The ongoing legal debates and litigation over the rules will determine how these competing interests are reconciled and whether India's regulatory regime evolves toward a balanced approach—enabling creative diversity while upholding accountability.

To optimize the impact of the IT Rules and foster a healthy digital media environment, several recommendations can be made:

Regulatory provisions should be narrowly tailored, with clear definitions and precise application, to avoid misuse or overreach. Platforms and government should ensure procedural fairness by providing adequate notice, opportunity for appeal, and time for defense before content removal. Independent oversight bodies comprised of civil society and domain experts can help arbitrate disputes and safeguard creative freedoms while ensuring compliance. Public education campaigns to build awareness of digital rights, responsibilities, and grievance processes can empower viewers and creators alike. Transparency in reporting complaints and takedowns, and periodic review of the rules in consultation with stakeholders, will foster trust and adaptability.

References:-

1. "Media Law: Impact of IT Rules, 2021 on OTT Platforms," IP & Legal Filings, 2024.
2. "Regulation of Over-the-Top (OTT) Platforms - Information Technology (Intermediary Guidelines and Digital Media Ethics Code) Rules, 2021," Bhatt & Joshi Associates, 2024.
3. "Analysis Of The Information Technology (Intermediary Guidelines And Digital Media Ethics Code) Rules, 2021," SFLC.in, 2023.
4. "IT RULES, 2021: A Regulatory Impact Assessment Study," IAMAI, 2023.
5. "critical-analysis-of-proposed-digital-media-ethics-code-and-governance,"Hilari Publisher, 2021.
6. "The Information Technology (Intermediary Guidelines and Digital Media Ethics Code) Rules, 2021," MeitY, 2023
7. "Protection from Malicious Content or Chilling Free Speech under IT Rules 2021," SSRN, 2021.
8. "OTT Regulation in India: Turf Wars & Definitional Ambiguities," Internet Governance Project, 2024.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

ग्रामीण एवं शहरी विद्यालयों के एकाकी तथा संयुक्त परिवारों के विद्यार्थियों के अभिभावक अकादमिक सहभागिता का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. सुनीता मुर्डिया* सीमा कुमावत**

*सह आचार्य (शिक्षा) लोकमान्य तिलक शिक्षा महाविद्यालय, डाबोक (उदयपुर) (राज.) भारत
** शोधार्थी, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ (डीम्ड टू बी विश्वविद्यालय) उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – बालक में व्यक्तित्व के गुण जैसे सहभागिता संवेगात्मक या बौद्धिक स्तर सभी कुछ उसकी माँ सिखाती है। तब एक प्रश्न मानस में क्रोध जाता है कि क्या वे अभिभावक जो शिक्षित नहीं है, अपने बच्चों के व्यक्तितव के वे गुण जो शिक्षित अभिभावक विकसित कर पाते है करने में असमर्थ है? इस प्रश्न को लेकर यह शोध किया जा रहा है तथा ग्रामीण तथा शहरी विद्यालय में अध्ययनरत 400 छात्र 200, छात्राऐं (200,200) न्यादर्श पर अभिभावक अकादमिक सहभागिता उपकरण प्रशासित किया गया। सर्वेक्षण विधि का उपयोग करते हुउ प्रदत्तों पर मध्यमान, मानक विचलन, टी-मान ज्ञात कर तुलनात्मक विश्लेषण इस लेख में किया गया है।

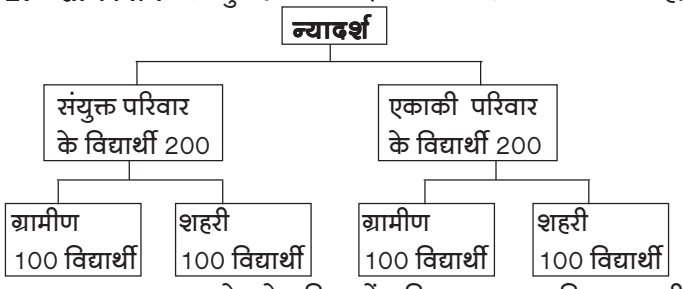
प्रस्तावना – महात्मा गाँधी की माँ बहुत शिक्षित नहीं थी। स्वामी विवेकानन्द के अभिभावक ने उच्च शिक्षा ग्रहण नहीं की थी। सर्वपल्ली राधाकृष्णन के माता-पिता इतिहास के पन्नों में शिक्षित होने की उल्लेख नहीं मिलता। अब्दुल कलाम सर के अभिभावक ने उच्च शिक्षा प्राप्त नहीं की थी। फिर ये महान हस्तियों ने अपना दुनिया में मशहूर किया था। अभिभावक सहभागिता बच्चों की शिक्षा में, उच्च स्तर प्राप्त करने में आवश्यक है? क्या एकल एवम् संयुक्त परिवारों के ग्रामीण तथा शहरी अभिभावकों की विद्यार्थियों के उच्च स्तर की ख्याति प्राप्त करने में सहायक है?

शोध उद्देश्य – प्रस्तुत शोध/लेख निम्न उद्देश्यों को लेकर बनाया गया:

1. शहरी विद्यालयों की एकाकी एवम् संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के अभिभावक अकादमिक सहभागिता प्रमापनी का क्षेत्रवार तुलनात्मक विश्लेषण।
2. ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवम् संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के अभिभावक अकादमिक सहभागिता के क्षेत्रवार तुलनात्मक विश्लेषण।

1.2 शोध विधि शास्त्र

1. **न्यादर्श –** प्रस्तुत लेख हेतु शोध न्यादर्श इस प्रकार था।
2. **शोध विधि –** प्रस्तुत शोध में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।



3. **उपकरण –** इस शोध लेख विषय में अभिभावक अकादमिक प्रमापनी के क्षेत्रवार निष्कर्ष निकालने हेतु शोधकर्त्री ने अभिभावक अकादमिक प्रमापनी का निर्माण किया है। जिसमें 13 क्षेत्र तथा 150 कथनों का निर्माण किया गया प्रमापनी की विश्वसनीयता 827 प्राप्त हुई।

1.3 दत्त विश्लेषण – शोध लेख के उद्देश्यानुसार गणना से पहले अभिभावक अकादमिक सहभागिता प्रमापनी को ग्रामीण तथा शहरी विद्यार्थियों के संयुक्त तथा एकाकी परिवारों को विद्यार्थियों पर प्रशासित किया गया। क्षेत्रवार मध्यमान मानक विचलन तथा टी-मान ज्ञात कर तुलनात्मक विश्लेषण एवम् विवेचना/व्याख्या की गयी।

1.4 उद्देश्य 1

ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के अभिभावक अकादमिक सहभगिता का अध्ययन करना।

सारणी 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

सारणी 1 से प्राप्त आँकड़ों के क्षेत्रवार विश्लेषण से निम्न परिणाम परिलक्षित होते हैं-

क्षेत्रवार विश्लेषण-

1. **संज्ञानात्मक पक्ष –** ग्रामीण विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (N=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 9.78, 11.13 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.12, 1.98 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी-मान ज्ञात किया गया। जिसका मान 3.75 प्राप्त हुआ, जो कि 198. (df=198) के .01 स्तर के सारणी मान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के संज्ञात्मक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि संज्ञानात्मक पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार सतोषपद्र है।
2. **सामाजिक पक्ष –** ग्रामीण विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के 100, 100 विद्यार्थियों (N=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त

राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 9.60, 11.50 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.08, 1.89 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी-मान ज्ञात किया गया। जिसका मान 5.50 प्राप्त हुआ, जो कि 198 df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि राजकीय विद्यालय के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों में सामाजिक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि सामाजिक पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार ठीक है।

3. मनोवैज्ञानिक पक्ष- ग्रामीण विद्यालयों में (100, 100) के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 13.55, 15.75 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.81, 2.30 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी-मान ज्ञात किया गया। जिसका मान 4.75 प्राप्त हुआ, जो कि 198 df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता ग्रामीण है कि ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों में मनोवैज्ञानिक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि मनोवैज्ञानिक पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार संतोषप्द्र है।

4. संवेगात्मक पक्ष – ग्रामीण विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 7.70, 9.20 तथा मानक विचलन क्रमश: 0.72, 1.45 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी-मान ज्ञात किया गया। जिसका मान 5.84 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता गण है कि ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों में संवेगात्मक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है । मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि संवेगात्मक पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार ठीक है।

5. सृजनात्मक पक्ष – राजकीय विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 9.68, 11.35 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.54, 1.89 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी-मान ज्ञात किया गया। जिसका मान 4.34 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के, सृजनात्मक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि सृजनात्मक पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार संतोषप्द्र है।

6. अनुशासनात्मक पक्ष- ग्रामीण विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 9.65, 11.45 तथा मानक विचलन क्रमश: 0.86, 1.71 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी-मान ज्ञात किया गया। जिसका मान 5.94 प्राप्त हुआ, 198 जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के अनुशासनात्मक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि संयुक्त परिवार, एकाकी परिवार की अपेक्षा अनुशासनात्मक पक्ष की दृष्टि से अधिक उपयुक्त है।

7. मनोरंजनात्मक पक्ष – ग्रामीण विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 9.73, 11.45 तथा मानक विचलन क्रमश: 0.99, 1.84 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी-मान ज्ञात किया गया। जिसका मान 5.22 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के 01 स्तर के सारणीयन 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के मनोरंजनात्मक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि संयुक्त परिवार, मनोरंजनात्मक पक्ष की दृष्टि से ठीक है।

8. नेतृत्व – ग्रामीण विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 7. 83, 9.10 तथा मानक विचलन क्रमश: 0.68, 1.48 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी-मान ज्ञात किया गया। जिसका मान 4.95 प्राप्त हुआ, जो कि 198 df=198 के .01 स्तर के सारणीयन 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विद्यालय के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के नेतृत्व पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि संयुक्त परिवार, नेतृत्व पक्ष की दृष्टि से अधिक उपयुक्त है।

9. आधारभूत आवश्यकता एवं सुविधाओं की पूर्ति- ग्रामीण विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=40,40) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 9.68, 11.50 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.07, 1.89 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी-मान ज्ञात किया गया। जिसका 198 मान 5.30 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीयन 2.60 से अधिक पाया के स्तर गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विद्यालय के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के आधारभूत आवश्यकता एवं सुविधाओं की पूर्ति के पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है । मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि आधारभूत आवश्यकता एवं सुविधाओं की पूर्ति की दृष्टि से संयुक्त परिवार उपयुक्त है।

10. उपलब्धि- ग्रामीण विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 7. 78, 9.15 तथा मानक विचलन क्रमश: 0.66, 1.48 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी-मान ज्ञात किया गया। जिसका मान 5.37 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के 01 स्तर के सारणीयन 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के उपलब्धि क्षेत्र में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि उपलब्धि क्षेत्र की दृष्टि से संयुक्त परिवार प्रभावी है।

11. बालक के प्रत्येक कार्य के प्रति चिंतित ग्रामीण विद्यालय में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 9.90, 11.45 तथा मानक विचलन क्रमश: 0.81, 1.74 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी-मान ज्ञात किया गया। जिसका मान 5.11 198 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीयन 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विद्यालय के एकाकी एवं संयुक्त परिवार

के विद्यार्थियों के बालक के प्रत्येक कार्य के प्रति चिंतित क्षेत्र में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि क्षेत्र की दृष्टि में एकाकी परिवार की अपेक्षा, संयुक्त परिवार अधिक प्रभावी है।

12. विद्यालय एवं परिवार के मध्य संबंध– ग्रामीण विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 9.63, 11.50 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.13, 1.89 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी–मान ज्ञात किया गया। जिसका मान 5.38 198 प्राप्त हुआ जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीयन 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के विद्यालय एवं परिवार के मध्य संबंध क्षेत्र में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि संयुक्त परिवार, विद्यालय एवं परिवार के मध्य संबंध की दृष्टि से एकाकी परिवार से अधिक प्रभावी है।

13. पर्यावरणीय चेतना– ग्रामीण विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 7.70, 8.85 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.36, 1.55 प्राप्त हुआ। मध्यमान के अन्तर की सार्थकता के लिए टी–मान ज्ञात किया गया। जिसका मान 3.53 प्राप्त हुआ जो कि 198 df=198 के .01 स्तर के सारणीयन 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विद्यालय के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के पर्यावरणीय चेतना के पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि संयुक्त परिवार, पर्यावरणीय चेतना की दृष्टि से एकाकी परिवार से अधिक जागरूक है।

समग्र क्षेत्रों के विश्लेषण से यह परिणाम प्राप्त होता है कि ग्रामीण विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के समग्र क्षेत्रों पर 100, 100 व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 122.18, 143.38 तथा मानक विचलन क्रमश: 7.81, 20.19 प्राप्त हुआ। समग्र क्षेत्रो का टी–मान 6.19 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के 01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक प्राप्त हुआ। इससे स्पष्ट होता है कि ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के अभिभावक अकादमिक सहभागिता के मध्य सार्थक अन्तर पाया जाता है। ग्रामीण विद्यालयों के संयुक्त परिवार अभिभावक अकादमिक सहभागिता एकाकी परिवार से अधिक प्रभावी पायी गयी है। अत: परिकल्पना 3 'ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के अभिभावक अकादमिक सहभागिता में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।' अस्वीकृत की जाती है।

उद्देश्य 2 शहरी विद्यालयों के एकाकी एवम् संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के अभिभावक अकादमिक सहभागिता का तुलनात्मक अध्ययन

सारणी 2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

सारणी 2 से प्राप्त आँकड़ों के क्षेत्रवार विश्लेषण से निम्न परिणाम परिलक्षित होते है–

क्षेत्रवार विश्लेषण–

1. संज्ञानात्मक पक्ष– शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N=**100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 11.13.33 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.57, 1.21 प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र का टी–मान 7. 198 42 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि शहरी विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के संज्ञात्मक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है । मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि संज्ञानात्मक पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार, एकाकी परिवार से अधिक प्रभावी है।

2. सामाजिक पक्ष– शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 10.78, 13.05 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.27, 1.50 प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र का टी–मान 7.31 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.61 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि शहरी विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के सामाजिक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि सामाजिक पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार, एकाकी परिवार से अधिक प्रभावी है।

3. मनोवैज्ञानिक पक्ष– शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 14. 95, 17.95 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.65, 1.89 प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र का टी–मान 7.55 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि शहरी विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के मनोवैज्ञानिक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि मनोवैज्ञानिक पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार, एकाकी परिवार से अधिक प्रभावी है।

4. संवेगात्मक पक्ष– शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 8.65, 10.43 तथा मानक विचलन क्रमश: 0.95, 1.38 प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र का टी–मान 6.71 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि निजी विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों में संवेगात्मक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है । मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि संवेगात्मक पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार ठीक है।

5. सृजनात्मक पक्ष– शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 10.98, 13.03 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.62, 1.51 प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र का टी–मान 5.84 प्राप्त हुआ, जो कि df =198 .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि शहरी विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों में सृजनात्मक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि सृजनात्मक पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार संतोषप्द्र है।

6. अनुशासनात्मक पक्ष – शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 10.85, 12.93 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.21, 1.59 प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र का टी–मान 6.56 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है।

अत: इससे स्पष्ट होता है कि निजी विद्यालय के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों में अनुशासनात्मक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि अनुशासनात्मक पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार प्रभावी है।

7. मनोरंजनात्मक पक्ष – शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 10.93, 12.93 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.56, 1.51 प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र का टी–मान 5.83 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि शहरी विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों में मनोरंजनात्मक पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि मनोरंजनात्मक पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार प्रभावी है।

8. नेतृत्व – शहरी विद्यालय में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 8.75, 10.73 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.06, 0.96 प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र का टी–मान 8.75 प्राप्त हुआ जो कि कत्रि198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि शहरी विद्यालय के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के नेतृत्व क्षेत्र में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि संयुक्त परिवार, नेतृत्व पक्ष की दृष्टि से अधिक प्रभावी है।

9. आधारभूत आवश्यकता एवं सुविधाओं की पूर्ति शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 10.78, 13.15 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.31, 1.73 प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र का टी–मान 6.91 प्राप्त हुआ, जो कि df=78 के .01 स्तर के. सारणीमान 2.61 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि शहरी विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के आधारभूत आवश्यकता एवं सुविधाओं की पूर्ति के पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि आधारभूत आवश्यकता एवं सुविधाओं की पूर्ति की दृष्टि से संयुक्त परिवार उपयुक्त है।

10. उपलब्धि – शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: df=198 8.68, 10.48 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.00, 1.24 प्राप्त हुआ। जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि निजी विद्यालय के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के उपलब्धि क्षेत्र में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि उपलब्धि पक्ष की दृष्टि से संयुक्त परिवार संतोषपद्र है।

11. बालक के प्रत्येक कार्य के प्रति चिंतित – शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 10.85, 13.40 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.12, 1.45 प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र का टी–मान 8.81 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि शहरी विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के बालक के प्रत्येक कार्य के प्रति चिंतित क्षेत्र में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि इस क्षेत्र की दुष्टि से एकाकी परिवार की अपेक्षा, संयुक्त परिवार अधिक प्रभावी है।

12. विद्यालय एवं परिवार के मध्य संबंध – शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 10.83, 13.28 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.32, 1.58 प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र का टी–मान 7.51 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि शहरी विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के विद्यालय एवं परिवार के मध्य संबंध में सार्थक अन्तर पाया गया है । मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि संयुक्त परिवार, विद्यालय एवं परिवार के मध्य संबंध की दृष्टि से ए से, एकाकी परिवार से अधिक प्रभावी है।

13. पर्यावरणीय चेतना– शहरी विद्यालय में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 08.48, 09.80 तथा मानक विचलन क्रमश: 1.58, 1.42 प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र का टी–मान 3.94 प्राप्त हुआ, जो कि df=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि निजी विद्यालय के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के पर्यावरणीय चेतना के पक्ष में सार्थक अन्तर पाया गया है। मध्यमान के अन्तर से स्पष्ट होता है कि संयुक्त परिवार, पर्यावरणीय चेतना की दृष्टि से एकाकी परिवार से अधिक जागरूक है।

समग्र क्षेत्रों के विश्लेषण से यह परिणाम प्राप्त होता है कि शहरी विद्यालयों में अध्ययनरत एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (**N**=100,100) के इस क्षेत्र पर व्यक्त राय के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 136.48, 164.45 तथा मानक विचलन क्रमश: 12.83, 13.31 प्राप्त हुआ। समग्र क्षेत्रों का टी–मान 9.57 प्राप्त हुआ, जो कि वष=198 के .01 स्तर के सारणीमान 2.60 से अधिक पाया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि शहरी विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के अभिभावक अकादमिक सहभागिता के मध्य सार्थक अन्तर पाया जाता है । शहरी विद्यालयों के संयुक्त परिवार अभिभावक अकादमिक सहभागिता एकाकी परिवार से अधिक प्रभावी पायी गयी है। अत: परिकल्पना 4 'शहरी विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों के अभिभावक अकादमिक सहभागिता में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।' अस्वीकृत की जाती है।

उपसंहार – प्रस्तुत लेख में उदयपुर जिले के ग्रामीण तथा शहरी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत संयुक्त तथा एकाकी परिवार के अभिभावकों के अकादमिक सहभागिता का तुलनात्मक अध्ययनु प्रस्तुत किया गया है। मध्यमान, मानकविचलन तथा टी–मान सांख्यिकी की उपयोग सर्वेक्षण विधि से प्राप्त प्रदतों पर गणना कर निष्कर्ष प्रत्येक सारणी के बाद प्रस्तुत किये गये है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. H. Witmer& R.Kotinsky:"Personality in the making", New York, Harper and Row Publisher.
2. Hurlock:"Child Psychology", McGraw Hill Book Co.Inc., 1956
3. Hurlock:"Child Psychology", MC Graw Hill Book Co.Inc. 1956

4. Michael Romance:"Parental cognitive modes and teaching styles with pre-school children", Diss- Abst. Int., 1970
5. V. Fischman:"The influence of educational patterns on the socialization of children", Psycho- Abot- 68 (Sept) 1982
6. Brend Mack:"Anxiety in school children with special reference parental educational methods", Psychol- Abst- 68 (Nov) 1982.
7. A.K. Gupta :"Study of parental preference in relation to adolescents, Personality and achievement", Third Survey of Research in Edu., 1984.
8. Keithtz& P-B- Krith :"Does parental involvement affect eight-grade student achievement? Structural Analysis of National Data School Psychology Review 22(3), 1993.
9. डॉ. मधु गुप्ता :'परिवार की प्रकृति, गृह वातावरण एवं माता–पिता की सहभागिता का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव', शिक्षा की पत्रिका, नया शिक्षक, दिसम्बर–जनवरी, 2005
10. भटनागर आर.पी., 1992 :'आर्गेनाइजेशन एण्ड एडमीनीस्ट्रेटीव कान्सन्ट्रेन्ट्स ऑफ क्वालिटी रिसर्च इन एजुकेशन' (शोध लेख) युनिवर्सिटी न्युज, जून 2000 पृष्ठ सं. 6
11. गुड तथा स्केट्स, 1945 :'मेथडस ऑफ एजुकेशन रिसर्च' पृष्ठ सं. 40
12. गुड तथा स्केट्स, 1959 :'इन्ट्रोडक्शन टू एजुकेशन रिसर्च' पृष्ठ सं. 95
13. ढोढ़ियाल एवं 1973 फाटक:'शैक्षिक अनुसंधान का विधि शास्त्र' राजस्थान ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1982

सारणी 1 ग्रामीण विद्यालयों के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (N=200) के अभिभावक अकादमिक सहभागिता का तुलनात्मक अध्ययन

क्र.	क्षेत्र	समूह	ग्रामीण विद्यालय के विद्यार्थी के मध्यमान	ग्रामीण विद्यालय के विद्यार्थी के मानक विचलन	टी–मान	.05/.01 स्तर पर सार्थकता
1	संज्ञानात्मक पक्ष	एकाकी	9.78	1.12	3.75	.01 स्तरपर सार्थक
		संयुक्त	11.13	1.98		
2	सामाजिक पक्ष	एकाकी	9.60	1.08	5.50	.01 स्तर पर
		संयुक्त	11.50	1.89		
3	मनोवैज्ञानिक पक्ष	एकाकी	13.55	1.81	4.75	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	15.75	2.30		
4	संवेगात्मक पक्ष	एकाकी	9.68	1.54	5.84	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	11.35	1.89		
5	सृजनात्मक पक्ष	एकाकी	9.68	1.54	4.34	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	11.35	1.89		
6	अनुशासनात्मक पक्ष	एकाकी	9.65	0.86	5.94	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	11.45	1.71		
7	मनारेंजनात्मक पक्ष	एकाकी	9.73	0.99	5.22	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	11.45	1.84		
8.	नेतृत्व	एकाकी	7.83	0.68	4.95	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	9.10	1.48		
9.	आधारभूत आवश्यकताओं एवं सुविधाओं की पूर्ति	एकाकी	9.68	1.07	5.30	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	11.50	1.89		
10.	उपलब्धि	एकाकी	7.78	0.66	5.37	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	9.15	1.48		
11.	बालक के प्रत्येक कार्य के प्रति चिन्तित	एकाकी	9.90	0.81	5.11	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	11.45	1.74		
12.	विद्यालय व परिवार के मध्य संबंध	एकाकी	9.63	1.13	5.38	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	11.50	1.89		
13.	पर्यावरणीय चेतना	एकाकी	7.70	1.36	3.53	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	8.85	1.55		
	समग्र क्षेत्र	एकाकी	122.18	7.81	6.19	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	143.38	20.19		

स्वतंत्रता के अंश (df=198) पर .05 स्तर का सारणीमान = 1.97 .01 स्तरका सारणीमान = 2.60

सारणी 2: शहरी विद्यालय के एकाकी एवं संयुक्त परिवार के विद्यार्थियों (N=200) के अभिभावक अकादमिक सहभागिता का तुलनात्मक अध्ययन

क्र.	क्षेत्र	समूह	ग्रामीण विद्यालय के विद्यार्थी के मध्यमान	ग्रामीण विद्यालय के विद्यार्थी के मानक विचलन	टी-मान	.05/.01 स्तर पर सार्थकता
1	संज्ञानात्मक पक्ष	एकाकी	11.00	1.57	7.42	.01 स्तरपर सार्थक
		संयुक्त	13.33	1.21		
2	सामाजिक पक्ष	एकाकी	10.78	1.27	7.31	.01 स्तर पर
		संयुक्त	13.05	1.50		
3	मनोवैज्ञानिक पक्ष	एकाकी	14.95	1.65	7.55	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	17.95	1.89		
4	संवेगात्मक पक्ष	एकाकी	8.65	0.95	6.71	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	10.43	1.38		
5	सृजनात्मक पक्ष	एकाकी	10.98	1.62	5.84	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	13.03	1.51		
6	अनुशासनात्मक पक्ष	एकाकी	10.85	1.21	6.56	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	12.93	1.59		
7	मनारेंजनात्मक पक्ष	एकाकी	10.93	1.56	5.83	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	12.93	1.51		
8.	नेतृत्व	एकाकी	8.75	1.06	8.75	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	10.73	0.96		
9.	आधारभूत आवश्यकताओं एवं सुविधाओं की पूर्ति	एकाकी	10.78	1.31	6.91	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	13.15	1.73		
10.	उपलब्धि	एकाकी	8.68	1.00	7.15	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	10.48	1.24		
11.	बालक के प्रत्येक कार्य के प्रति चिन्तित	एकाकी	10.85	1.12	8.81	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	13.40	1.45		
12.	विद्यालय व परिवार के मध्य संबंध	एकाकी	10.83	1.32	7.51	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	13.28	1.58		
13.	पर्यावरणीय चेतना	एकाकी	8.48	1.58	3.94	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	9.80	1.42		
	समग्र क्षेत्र	एकाकी	136.48	12.83	9.57	.01 स्तर पर सार्थक
		संयुक्त	164.45	13.31		

स्वतंत्रता के अंश (df=198) पर
.05 स्तर का सारणीमान = 1.97
.01 स्तर का सारणीमान = 2.60

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मध्यप्रदेश में रोजगार मूलक योजनाओं का प्रभाव: उज्जैन एवं रतलाम जिलों के संदर्भ में विश्लेषणात्मक अध्ययन

पूजा झाला* डॉ. एल. एन. शर्मा **

*शोधार्थी (वाणिज्य) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोध निर्देशक (वाणिज्य) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – यह शोध-पत्र मध्य प्रदेश सरकार की रोजगार मूलक योजनाओं के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है, विशेषकर उज्जैन एवं रतलाम जिलों के संदर्भ में। इन योजनाओं का उद्देश्य युवाओं, महिलाओं तथा कमजोर वर्गों को स्वरोजगार के अवसर प्रदान कर आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर करना है। अध्ययन में मुख्यमंत्री युवा उद्यमी योजना, मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना तथा मुख्यमंत्री कृषक उद्यमी योजना के अंतर्गत प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण किया गया। परिणाम बताते हैं कि उज्जैन जिले में लाभार्थियों की संख्या और योजनाओं की पहुँच अपेक्षाकृत अधिक रही है, जबकि रतलाम जिले में सहभागिता अपेक्षाकृत कम रही। इससे स्पष्ट होता है कि योजनाओं का प्रभाव जिलों की स्थानीय परिस्थितियों, जागरूकता एवं प्रशासनिक सहयोग पर भी निर्भर करता है।

शब्द कुंजी – रोजगार मूलक योजनाएँ, उद्यमिता, स्वरोजगार, प्रशिक्षण, आर्थिक विकास।

प्रस्तावना – भारत जैसे विकासशील देश में बेरोजगारी एक गंभीर समस्या है। इसे दूर करने के लिए सरकार द्वारा समय-समय पर विभिन्न रोजगार मूलक योजनाएँ लागू की जाती रही हैं। उद्यमिता को बढ़ावा देकर न केवल नए रोजगार अवसर उत्पन्न होते हैं, बल्कि ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में आर्थिक गतिविधियों को भी प्रोत्साहन मिलता है।

मध्य प्रदेश सरकार ने युवाओं एवं समाज के कमजोर वर्गों को स्वरोजगार से जोड़ने के लिए विशेष पहल की है। इन योजनाओं का लक्ष्य केवल ऋण प्रदान करना ही नहीं है, बल्कि प्रशिक्षण, मार्गदर्शन और प्रोत्साहन देकर स्थायी आर्थिक विकास सुनिश्चित करना भी है।

इस शोध में उज्जैन और रतलाम जिलों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। दोनों जिलों की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि में अंतर है, जिससे योजनाओं के परिणामों में भी भिन्नता पाई जाती है। उज्जैन एक प्रमुख धार्मिक एवं शैक्षणिक केंद्र है, जबकि रतलाम अपने औद्योगिक और व्यापारिक गतिविधियों के लिए जाना जाता है।

साहित्य समीक्षा

1. Gupta & Singh (2021) के अनुसार, मध्य प्रदेश की स्वरोजगार योजनाओं ने स्थानीय अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन दिया है, लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में इनका क्रियान्वयन जागरूकता की कमी और बैंकिंग प्रक्रियाओं की जटिलता के कारण सीमित रहा।
2. Joshi (2022) ने अपने अध्ययन में पाया कि महिला उद्यमियों की भागीदारी योजनाओं के माध्यम से बढ़ रही है, परंतु सामाजिक बाधाएँ और वित्तीय जोखिम की आशंका अभी भी बड़ी चुनौती बनी हुई हैं।

अध्ययन का उद्देश्य:

1. उज्जैन एवं रतलाम जिलों में युवा वर्ग उद्यमिता तथा स्टार्ट-अप की ओर आकर्षित होने का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. उद्यमिता विकास की ओर सरकार की भूमिका की जानकारी प्राप्त करना।

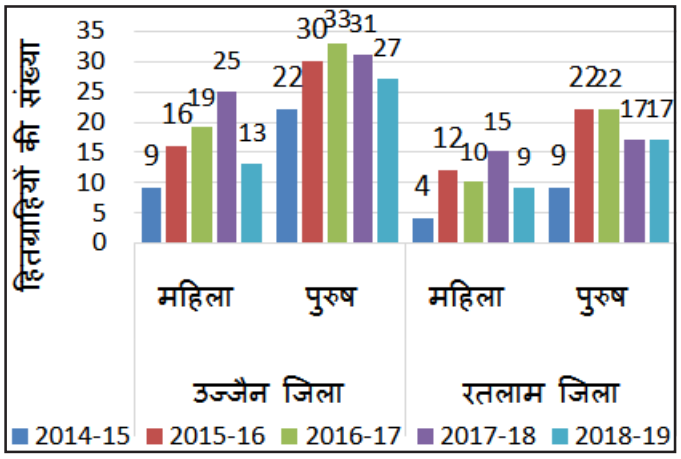
समंक विश्लेषण एवं विवेचना – प्रस्तुत शोध-पत्र में उपरोक्त योजनाओं का उज्जैन एवं रतलाम जिले के मध्य एक तुलनात्मक अध्ययन किया गया है, जो की निम्नानुसार है : -

1. मुख्यमंत्री युवा उद्यमी योजना का लिंग के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन।
2. मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना का लिंग के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन।
3. मुख्यमंत्री कृषक उद्यमी योजना का लिंग के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन।

तालिका 1: उज्जैन एवं रतलाम जिले में मुख्यमंत्री युवा उद्यमी योजना कालिंग के आधार पर तुलनात्मक अध्ययनवर्ष 2014-15 से 2018-19

	उज्जैन जिला					रतलाम जिला			
क्रं	वर्ष	महिला	पुरुष	कुल हित ग्राही	क्रं	वर्ष	महिला	पुरुष	कुल हित ग्राही
1	2014-15	9	22	31	1	2014-15	4	9	13
2	2015-16	16	30	46	2	2015-16	12	22	34
3	2016-17	19	33	52	3	2016-17	10	22	32
4	2017-18	25	31	56	4	2017-18	15	17	32
5	2018-19	13	27	40	5	2018-19	9	17	26
	कुल	82	143	225		कुल	50	87	137

आरेख 1:उज्जैन एवं रतलाम जिले में मुख्यमंत्री युवा उद्यमी योजना कालिंग के आधार पर तुलनात्मक अध्ययनवर्ष 2014-15 से 2018-19



सर्वेक्षित तालिका क्रं. 1 के आधार पर उज्जैन एवं रतलाम जिले के मध्य मुख्यमंत्री युवा उद्यमी योजना का लिंग (महिला एवं पुरुष) के आधार पर, वर्ष 2014-15 से 2018-19 तक, तुलनात्मक अध्ययन करने पर निम्नलिखित बिन्दु ज्ञात हुए हैं-

1.1 उज्जैन एवं रतलाम जिले के मध्य महिला हितग्राहियों की तुलना करने पर:

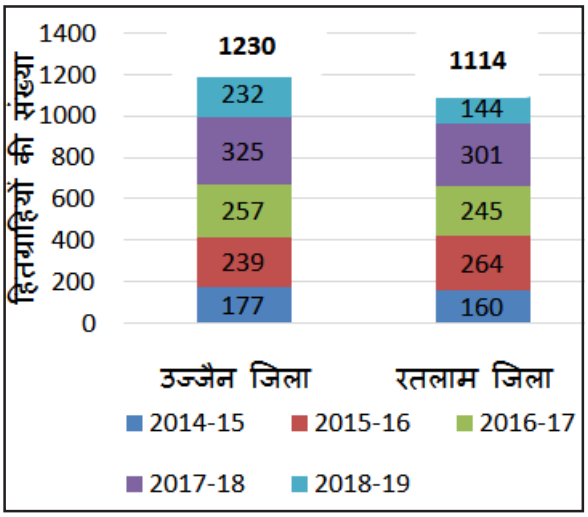
1. वर्ष 2014-15 में योजना के अंतर्गत उज्जैन जिले में 09 महिला हितग्राही है, जबकि रतलाम जिले में 04 महिला हितग्राही है अर्थात उक्त वर्ष में उज्जैन जिले में 05 महिला हितग्राही अधिक हैं।
2. वर्ष 2015-16 में योजना के अंतर्गत उज्जैन जिले में 16 महिला हितग्राही है, जबकि रतलाम जिले में 12 महिला हितग्राही है अर्थात उक्त वर्ष में उज्जैन जिले में 04 महिला हितग्राही अधिक हैं।
3. वर्ष 2016-17 में योजना के अंतर्गत उज्जैन जिले में 19 महिला हितग्राही है, जबकि रतलाम जिले में 10 महिला हितग्राही है अर्थात उक्त वर्ष में उज्जैन जिले में 09 महिला हितग्राही अधिक हैं।
4. वर्ष 2017-18 में योजना के अंतर्गत उज्जैन जिले में 25 महिला हितग्राही है, जबकि रतलाम जिले में 15 महिला हितग्राही है अर्थात उक्त वर्ष में उज्जैन जिले में 10 महिला हितग्राही अधिक हैं।
5. वर्ष 2018-19 में योजना के अंतर्गत उज्जैन जिले में 13 महिला हितग्राही है, जबकि रतलाम जिले में 09 महिला हितग्राही है अर्थात उक्त वर्ष में उज्जैन जिले में 04 महिला हितग्राही अधिक हैं।

वर्ष 2014-15 से 2018-19 तक के पाँच वर्षों में उज्जैन जिले में कुल 82 महिला तथा वर्ष 2014-15 से 2018-19 तक के पाँच वर्षों में रतलाम जिले में कुल 50 महिला हितग्राही हुई हैं। अत: यह स्पष्टतया कहा जा सकता है कि रतलाम जिले की तुलना में उज्जैन जिले में 32 महिला हितग्राहियों ने अधिक संख्या में योजना का लाभ उठाया है तथा उज्जैन एवं रतलाम जिले में कुल 132 महिला हितग्राहियों में उज्जैन जिले में 62.12 प्रतिशत तथा रतलाम जिले में 37.88 प्रतिशत युवा उद्यमी हैं। इस प्रकार उज्जैन जिले में 24.24 प्रतिशत हितग्राही अधिक हैं।

तालिका 2: उज्जैन एवं रतलाम जिले के मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना कालिंग के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन वर्ष 2014-15 से 2018-19

	उज्जैन जिला				रतलाम जिला				
क्रं	वर्ष	महिला	पुरुष	कुल हितग्राही	क्रं	वर्ष	महिला	पुरुष	कुल हितग्राही
1	2014-15	177	369	546	1	2014-15	160	242	402
2	2015-16	239	447	686	2	2015-16	264	316	580
3	2016-17	257	483	740	3	2016-17	245	357	602
4	2017-18	325	580	905	4	2017-18	301	437	738
5	2018-19	232	436	668	5	2018-19	144	211	355
	कुल	1230	2315	3545	कुल		1114	1563	2677

आरेख 2 : उज्जैन एवं रतलाम जिले के मध्य महिला हितग्राहियों का अध्ययन वर्ष 2014-15 से 2018-19



सर्वेक्षित तालिका क्रं. 2 के आधार पर उज्जैन एवं रतलाम जिले के मध्य मुख्यमंत्री युवा उद्यमी योजना का लिंग (महिला एवं पुरुष) के आधार पर, वर्ष 2014-15 से 2018-19 तक, तुलनात्मक अध्ययन करने पर निम्नलिखित बिन्दु ज्ञात हुए हैं-

2.1 उज्जैन एवं रतलाम जिले के मध्य महिला हितग्राहियों की तुलना करने पर:

1. वर्ष 2014-15 में योजना के अंतर्गत उज्जैन जिले में 177 महिला हितग्राही है, जबकि रतलाम जिले में 160 महिला हितग्राही है अर्थात उक्त वर्ष में उज्जैन जिले में 17 महिला हितग्राही अधिक हैं।
2. वर्ष 2015-16 में योजना के अंतर्गत उज्जैन जिले में 239 महिला हितग्राही है, जबकि रतलाम जिले में 264 महिला हितग्राही है अर्थात उक्त वर्ष में रतलाम जिले में 25 महिला हितग्राही अधिक हैं।
3. वर्ष 2016-17 में योजना के अंतर्गत उज्जैन जिले में 257 महिला हितग्राही है, जबकि रतलाम जिले में 245 महिला हितग्राही है अर्थात उक्त वर्ष में उज्जैन जिले में 12 महिला हितग्राही अधिक हैं।
4. वर्ष 2017-18 में योजना के अंतर्गत उज्जैन जिले में 325 महिला हितग्राही है, जबकि रतलाम जिले में 301 महिला हितग्राही है अर्थात उक्त वर्ष में उज्जैन जिले में 24 महिला हितग्राही अधिक हैं।
5. वर्ष 2018-19 में योजना के अंतर्गत उज्जैन जिले में 232 महिला

हितग्राही है, जबकि रतलाम जिले में 144 महिला हितग्राही है अर्थात उक्त वर्ष में उज्जैन जिले में 88 महिला हितग्राही अधिक हैं।

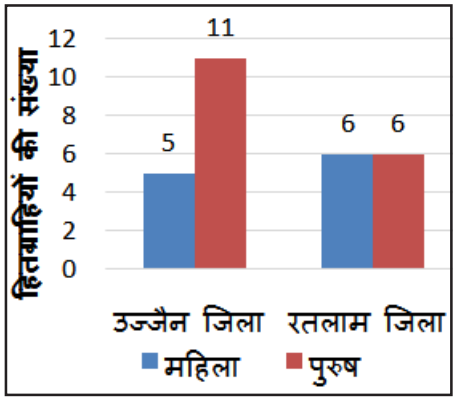
वर्ष 2014-15 से 2018-19 तक के पाँच वर्षों में उज्जैन जिले में कुल 1230 महिला तथा वर्ष 2014-15 से 2018-19 तक के पाँच वर्षों में रतलाम जिले में कुल 1114 महिला हितग्राही हुई हैं। अत: यह स्पष्टतया कहा जा सकता है कि रतलाम जिले की तुलना में उज्जैन जिले में 116 महिला हितग्राहियों ने अधिक संख्या में योजना का लाभ उठाया है तथा उज्जैन एवं रतलाम जिले में कुल 2344 महिला हितग्राहियों में उज्जैन जिले में 52.47 प्रतिशत तथा रतलाम जिले में 47.53 प्रतिशत युवा उद्यमी हैं। इस प्रकार उज्जैन जिले में 4.94 प्रतिशत हितग्राही अधिक हैं।

तालिका 3: उज्जैन एवं रतलाम जिले में मुख्यमंत्री कृषक उद्यमी योजना का लिंग के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन वर्ष 2018-19

उज्जैन जिला					रतलाम जिला				
क्रं	निकाय का नाम	महिला	पुरुष	कुल	क्रं	निकाय का नाम	महिला	पुरुष	कुल
1	2018-2019	5	11	16	1	2018-2019	6	6	12
	कुल	5	11	16		कुल	6	6	12

स्रोत: - जिला व्यापार एवं उद्योग केंद्र, उज्जैन एवं रतलाम

आरेख 3 : उज्जैन एवं रतलाम जिले में मुख्यमंत्री कृषक उद्यमी योजना का लिंग के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन वर्ष 2018-19



सर्वेक्षित तालिका क्रं. 3 के आधार पर उज्जैन और रतलामजिले के मध्य मुख्यमंत्री कृषक उद्यमी योजना का लिंग (महिला एवं पुरुष) के आधार पर, वर्ष 2018-19 का, तुलनात्मक अध्ययन करने पर निम्नलिखित बिन्दु ज्ञात हुए है-

3.1 वर्ष 2018-19 में उज्जैन जिले में कुल 05 महिला हितग्राही तथा रतलाम जिले में कुल 06 महिला हितग्राही हुए है। अत: यह स्पष्टतया कहा जा सकता है कि उज्जैन जिले की तुलना में रतलाम जिले में 01 महिला हितग्राही अधिक रही है तथा उज्जैन एवं रतलाम जिले में कुल 11 हितग्राहियों में उज्जैन जिले में 45.45 प्रतिशत तथा रतलाम जिले में 54.55 प्रतिशत महिला हितग्राही है। इस प्रकार रतलाम जिले में 9.10 प्रतिशत महिला हितग्राही अधिक है।

3.2 वर्ष 2018-19 में उज्जैन जिले में कुल 11 पुरुष हितग्राही है तथा रतलाम जिले में कुल 6 पुरुष हितग्राही हुए है। अत: यह स्पष्टतया कहा जा सकता है कि रतलाम जिले की तुलना में उज्जैन जिले में 05 पुरुषों ने अधिक संख्या में योजना का लाभ उठाया है तथा उज्जैन एवं रतलाम जिले में कुल 17 पुरुष हितग्राहियों में उज्जैन जिले में 64.71 प्रतिशत तथा रतलाम जिले में 35.29 प्रतिशत पुरुष हितग्राही है। इस प्रकार उज्जैन जिले में 29.42 प्रतिशत पुरुष हितग्राही अधिक है।

3.3 वर्ष 2018-19 में उज्जैन जिले में कुल 16 एवं रतलाम जिले में कुल 12 हितग्राही हुए है। अत: यह स्पष्टतया कहा जा सकता है कि रतलाम जिले की तुलना में उज्जैन जिले में 04 हितग्राहियों ने अधिक संख्या में इस योजना का लाभ उठाया है तथा उज्जैन एवं रतलाम जिले में कुल 28 हितग्राहियों में उज्जैन जिले में 57.14 प्रतिशत तथा रतलाम जिले में 42.86 प्रतिशत हितग्राही कृषक उद्यमी है। इस प्रकार उज्जैन जिले में 14.28 प्रतिशत हितग्राही अधिक है।

शोध परिकल्पना

H_1: युवा वर्ग उद्यमिता तथा स्टार्ट-अप की ओर आकर्षित हो रहा है।

H_{01}: जिलेवार विभिन्न आयु वर्ग के हितग्राहियों के मध्य कोई सार्थक अंतर नहीं है।

H_{01}:जिलेवार विभिन्न आयु वर्ग के हितग्राहियों के मध्य कोई सार्थक अंतर है।

तालिका क्रमांक 4: चयनित योजनाओं का आयु वर्ग के आधार पर विश्लेषण

योजनाओं के नाम	आयु वर्ग	उज्जैन जिला		रतलाम जिला	
		आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
मुख्यमंत्री युवा उद्यमी योजना	18-25	19	38	12	24
	26-30	15	30	13	26
	31-35	11	22	16	32
	36-40	5	10	9	18
मुख्यमंत्री स्वरोजगार योजना	18-25	20	40	14	28
	26-30	14	28	11	22
	31-35	10	20	18	36
	36-40	6	12	7	14
	41-45	0	0	0	0
मुख्यमंत्री कृषक उद्यमी योजना	18-25	6	33.33	5	35.71
	26-30	4	22.22	3	21.43
	31-35	5	27.78	4	28.57
	36-40	3	16.67	2	14.29
	41-45	0	0	0	0

स्त्रोत - व्यक्तिगत सर्वेक्षण के आधार पर

तालिका (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका से स्पष्ट है की F Value = 5.021 (Sig. .001) है जो और 0.05 Level और df1 = 27पर सार्थक है। अत: यह स्पष्ट है की युवा वर्ग उद्यमिता तथा स्टार्ट-अप की ओर आकर्षित हो रहा है। अत: उपकल्पनाH1स्वीकार होती है।

मुख्य निष्कर्ष - यह तुलनात्मक अध्ययन दर्शाता है कि उज्जैन और रतलाम दोनों जिलों में रोजगार मूलक योजनाओं का सकारात्मक प्रभाव पड़ा है, लेकिन उज्जैन जिले की प्रगति अपेक्षाकृत अधिक रही। इसका कारण वहाँ की जागरूकता, प्रशासनिक सहयोग और संसाधनों की उपलब्धता है। रतलाम जिले में सुधार की संभावना है, विशेषकर महिला उद्यमियों और

पिछड़े वर्गों की भागीदारी बढ़ाने में।

समग्र रूप से कहा जा सकता है कि यदि योजनाओं का क्रियान्वयन और अधिक प्रभावी बनाया जाए, तो ये न केवल बेरोजगारी कम करने में सहायक होंगी, बल्कि प्रदेश की अर्थव्यवस्था को भी सशक्त बनाएंगी।

1. उज्जैन जिले में योजनाओं का लाभ लेने वाले लाभार्थियों की संख्या रतलाम जिले से अधिक रही।
2. महिला उद्यमियों की भागीदारी दोनों जिलों में बढ़ रही है, परंतु पुरुषों की तुलना में अभी भी कम है।
3. बैंकों द्वारा स्वीकृत और वितरित राशि दोनों जिलों में लक्ष्य के अनुरूप रही, किंतु उज्जैन जिले को अपेक्षाकृत अधिकवित्तीय सहयोग प्राप्त हुआ।
4. शिक्षा के आधार पर देखा गया कि स्नातक और स्नातकोत्तार वर्ग के युवाओं ने योजनाओं का सर्वाधिक लाभ उठाया।
5. लाभार्थियों ने योजनाओं को भविष्य में भी अपनाने की इच्छा व्यक्त की, जो योजनाओं की स्वीकार्यता को दर्शाता है।

सुझाव :

1. ग्रामीण क्षेत्रों में योजनाओं के प्रचार-प्रसार को और प्रभावी बनाया जाए।
2. महिला उद्यमियों को विशेष प्रशिक्षण और वित्तीय सहायता प्रदान की जाए।
3. बैंकिंग प्रक्रियाओं को सरल और पारदर्शी किया जाए।
4. योजनाओं की निरंतर निगरानी एवं मूल्यांकन से उनकी प्रभावशीलता बढ़ाई जाए।
5. युवा वर्ग को नवाचार आधारित स्टार्ट-अप्स हेतु प्रोत्साहित किया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चौधरी, के. (2020), 'भारत में उद्यमिता और स्वरोजगार योजनाएँ: एक अध्ययन' वाराणसी: ज्ञानभारती प्रकाशन।
2. पटेल, एन. (2021), 'ग्रामीण भारत में रोजगार के अवसर और शासकीय योजनाओं की भूमिका' इंदौर: लोकशक्ति पब्लिकेशन।
3. मध्य प्रदेश योजना एवं आर्थिक सांख्यिकी विभाग। (2020), राज्य स्तरीय रोजगार मूलक योजनाओं की प्रगति रिपोर्ट 2014-2019. भोपाल: शासन प्रकाशन।
4. विश्व बैंक। (2019),'भारत में स्वरोजगार और कौशल विकास कार्यक्रमों का तुलनात्मक अध्ययन' नई दिल्ली: विश्व बैंक रिपोर्ट।
5. सेन, आर. (2022),'महिला उद्यमिता और रोजगार योजनाएँ: चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ' कोलकाता: साहित्य मंथन।
6. जिला व्यापार एवं उद्योग केंद्र, उज्जैन एवं रतलाम। (2019), वार्षिक रिपोर्ट एवं योजनाओं का तुलनात्मक विवरण।

अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय जर्नल्स:

1. Journal of Indian Accounting Association. ISSN 0972-1479 (National).
2. Madhya Pradesh journal of Social Sciences. ISSN 0973-855X (National).

वेबसाईट्स:

1. en.m.wikipdia.org>wiki>Neemuch.
2. https//book.google.co.in.

Descriptive

Frequency		N	Mean	Std. Devia -tion	Std. Error	95% Confidence Interval for Mean		Mini mum	Maxi mum	Between Component Variance
						Lower Bound	Upper Bound			
18-25		6	9.21	5.23	1.956	3.55	14.2	5	20	
26-30		6	12.32	4.376	1.582	7.88	15.95	3	15	
31-35		6	12.48	6.02	2.88	7.05	18.16	4	18	
36-40		6	5.78	4.83	1.493	2.2	11.57	2	9	
41-45		4	0	0	0	0	0	0	0	
Total		28	8.68	5.669	1.06	7.86	16.19	0	20	
Model	Fixed Effects			4.684	0.249	4.387	10.61			
	Random Effects				3.245	1.86	14.92			19.532

ANOVA

Frequency	Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
Between Groups	497.208	4	124.302	5.021	0.001
Within Groups	485.369	23	21.103		
Total	982.577	27			

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Assessing Institutional Preparedness for ICT Integration in Secondary Schools

Rajkumari Rathore* **Dr. Rajesh Kumar****

*Research Scholar, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, Regional Institute of Education (NCERT) Bhopal (M.P.) INDIA

Abstract: Information and Communication Technology (ICT) has transformed educational landscapes globally by redefining teaching-learning processes. However, successful integration of ICT in schools depends significantly on the level of institutional preparedness. This paper aims to assess the institutional preparedness of secondary schools with special reference to infrastructural readiness, policy framework, technical support, and administrative commitment toward ICT adoption. Using both qualitative and quantitative methods, data was collected from secondary schools in Bhopal District, Madhya Pradesh. The findings reveal a partial preparedness among institutions due to inconsistent infrastructure, lack of policy implementation, and inadequate training and support systems. The paper concludes with recommendations for strengthening institutional frameworks to ensure effective and sustainable ICT integration.
Keywords: ICT in education, institutional preparedness, secondary schools, digital infrastructure, teacher training, Bhopal district, school leadership.

Introduction - In the 21st century, Information and Communication Technology (ICT) has emerged as a fundamental pillar in reshaping educational environments across the globe. The integration of ICT in education is no longer a luxury but a necessity, particularly in secondary schooling where students are prepared for the digital demands of higher education and the workforce. The transformative power of ICT lies in its ability to enhance teaching methodologies, facilitate interactive learning, promote digital literacy, and ensure equitable access to quality education. As nations aspire to meet the Sustainable Development Goal 4 (SDG 4) — ensuring inclusive and equitable quality education — ICT serves as both a tool and a strategy to address disparities in educational delivery. India, with its vast and diverse education system, has initiated several national-level interventions to mainstream ICT in schools. Flagship initiatives such as the ICT@Schools Scheme, Digital India, and the National Education Policy (NEP) 2020 underscore the importance of digital empowerment and the need to strengthen ICT infrastructure in educational institutions. The NEP 2020 particularly emphasizes the integration of technology in all levels of education to make learning more effective, inclusive, and personalized. However, the effectiveness of such policies and schemes heavily depends on the **institutional preparedness** of schools — a multi-faceted construct that encompasses the availability of physical infrastructure, administrative planning, resource allocation, teacher training, and overall readiness to adopt and sustain ICT-based education.

Despite the policy push and financial investment, there exists a significant gap between the intended outcomes and ground realities. Many schools, especially in semi-urban and rural areas, struggle with inadequate ICT infrastructure, poor maintenance of equipment, lack of technical staff, and insufficient teacher training. Even in urban settings, the usage of ICT tools in classrooms remains inconsistent due to weak institutional support and the absence of structured implementation frameworks. This disconnect highlights the critical importance of assessing and understanding the actual preparedness of institutions to integrate ICT into their teaching-learning processes.

Institutional preparedness refers to the readiness of schools at the organizational level to effectively plan, implement, and support ICT integration. It involves strategic leadership, infrastructure provisioning, teacher capacity-building, policy development, resource mobilization, and the presence of monitoring and evaluation mechanisms. A well-prepared institution not only installs hardware and software but also ensures that teachers are confident and competent to use these tools meaningfully. Moreover, it fosters a culture that embraces innovation, encourages experimentation with new teaching methods, and adapts to emerging digital trends in education.

This research focuses on assessing the institutional preparedness of **secondary schools in Bhopal district**, Madhya Pradesh. Bhopal, being an educational hub in central India, houses a mix of government, private, and

aided schools, making it a representative sample for such a study. The secondary education stage is particularly crucial, as it lays the foundation for higher education and skill development. If institutions at this stage are not adequately prepared to harness ICT, students risk being excluded from the digital revolution that defines today's knowledge economy.

Furthermore, the recent COVID-19 pandemic underscored the urgent need for digital readiness. Schools that lacked ICT infrastructure or did not have a supportive institutional environment faced major disruptions in continuing education during lockdowns. The shift to online and hybrid models of education exposed glaring inequalities and reinforced the importance of institutional resilience and preparedness in times of crisis. Post-pandemic, ICT is no longer viewed as an optional supplement but as an integral component of mainstream education.

This study is significant in that it goes beyond simply documenting ICT tools available in schools. It seeks to holistically evaluate how prepared the institutions are in terms of leadership vision, planning, implementation strategies, and support mechanisms. It aims to identify existing gaps and challenges while also exploring best practices adopted by schools that have successfully integrated ICT into their systems. By focusing on institutional dimensions rather than individual teacher behavior alone, this research provides a broader and more actionable perspective on how to enhance ICT integration in secondary education.

Objectives of the Study:

1. To examine the availability and functionality of ICT infrastructure in secondary schools.
2. To assess the institutional policies and administrative support for ICT integration.
3. To analyze the capacity-building initiatives for staff and teachers related to ICT use.
4. To identify the challenges faced by schools in implementing ICT-based education.

Review of Literature

Previous studies have emphasized that institutional readiness is a critical determinant of successful ICT implementation in schools (UNESCO, 2019). According to Pelgrum (2001), factors such as insufficient equipment, lack of training, and low administrative support significantly impact ICT outcomes in education. In the Indian context, studies like those by NCERT (2020) highlight the urban-rural disparity in ICT access and its implications on equity and quality in education. Moreover, research by Mishra & Koehler (2006) emphasizes the role of leadership in facilitating technological adoption. These insights frame the necessity of a holistic understanding of institutional preparedness beyond mere technological acquisition.

The integration of Information and Communication Technology (ICT) in secondary education has become a focal point of global educational reforms, particularly in developing countries like India. Literature on ICT in education has expanded significantly in recent years, addressing themes such as teacher readiness, policy implementation, infrastructural development, and institutional preparedness. This review explores the conceptual and empirical contributions of five recent books that inform the present study and highlight the importance of institutional frameworks in driving ICT adoption in secondary schools.

Selwyn, N. (2021). *Education and Technology: Key Issues and Debates* (2nd ed.). Bloomsbury Publishing.

Selwyn offers a critical perspective on the intersection of education and technology, emphasizing that the success of ICT integration is not solely dependent on the availability of digital tools but on the institutional contexts within which these tools are used. He argues that technology in education often mirrors existing inequalities unless schools are structurally and culturally prepared to support equitable access. Selwyn's discussions on the "politics of technology" inform this study's understanding of how institutional attitudes, resource management, and policy choices shape the outcomes of ICT implementation. His emphasis on teacher autonomy, administrative leadership, and support mechanisms directly aligns with the focus on institutional preparedness in the present research.

Kozma, R. B. (2018). *Transforming Education: The Power of ICT Policies*.UNESCO Publishing.

Kozma explores case studies from multiple countries that have successfully integrated ICT in education through coherent policies and strong institutional systems. The book emphasizes the importance of aligning ICT implementation with national education goals and ensuring capacity-building at all levels of the education system. Kozma identifies key indicators of institutional readiness, including digital infrastructure, teacher training, curriculum reform, and leadership engagement. These indicators serve as a useful framework for assessing schools' preparedness in the Bhopal district. Moreover, the book's discussion on the scalability of ICT initiatives offers valuable insight into the sustainability of institutional efforts.

Shukla, S., & Chatterjee, M. (2020).*Digital Learning in Indian Schools: Challenges and Opportunities*. Sage Publications India.

This book provides an India-specific analysis of ICT adoption in school education. It discusses infrastructural constraints, digital divides, and the variance in preparedness among urban and rural schools. Shukla and Chatterjee categorize Indian schools into three ICT-readiness levels: highly prepared, moderately prepared, and unprepared. The book introduces a conceptual model of institutional preparedness that includes leadership vision, technical staff availability, ICT maintenance budgets, and monitoring tools. These components are central to the present research's attempt to assess secondary schools' readiness in a semi-urban district like Bhopal. The authors also emphasize the

need for community and parental involvement, which can indirectly influence the success of ICT integration.

Anderson, J., &Dron, J. (2017).*Teaching Crowds: Learning and Social Media*. AU Press.

Although this book primarily focuses on higher education, its theoretical insights into how institutions mediate digital learning environments are applicable to secondary education. The authors argue that effective ICT integration is not merely about technology deployment but about fostering a learning culture that is adaptive, collaborative, and supported by policy. They highlight that institutional commitment — manifested through professional development, administrative flexibility, and continuous feedback loops — is essential for sustaining ICT initiatives. The book's emphasis on institutional ecology, including leadership, teacher support systems, and digital infrastructure, complements the present study's holistic approach to assessing preparedness.

Singh, A. K. (2022). *ICT in Education: A Handbook for School Leaders and Administrators*. PHI Learning.

Singh's recent contribution is highly practical and tailored for Indian school administrators. It provides tools, strategies, and case examples on how institutions can plan, implement, and evaluate ICT programs effectively. Key areas discussed include budgeting for ICT, managing ICT labs, supporting teachers, and creating ICT-integrated school development plans. The book includes real-life case studies from Indian secondary schools, many of which resonate with the challenges observed in Bhopal. Singh underscores the need for top-down support from school leaders and the importance of monitoring mechanisms for improving ICT use in classrooms. His work directly informs the indicators and variables used in the present research instrument.

Synthesis and Gaps Identified: Together, these five books reinforce the notion that ICT integration must be understood within a broader institutional context. Infrastructure alone is insufficient; it must be accompanied by strategic leadership, professional development, technical support, and long-term vision. While global perspectives (Selwyn, Kozma, Anderson&Dron) provide theoretical robustness, Indian perspectives (Shukla& Chatterjee, Singh) ground these discussions in the socio-educational realities of developing regions. However, a gap exists in micro-level studies that explore how these frameworks are operationalized within specific districts, particularly in tier-2 or tier-3 cities like Bhopal.

The present study attempts to address this gap by empirically assessing institutional preparedness in secondary schools in Bhopal District. It applies the conceptual insights from these books to real-world educational settings, aiming to generate evidence-based recommendations for enhancing ICT implementation at the local level.

Methodology: The research adopted a mixed-method approach involving both quantitative and qualitative data collection. A survey was conducted across 25 secondary schools in Bhopal district, including government, private, and aided institutions. Structured questionnaires were administered to principals, ICT coordinators, and selected faculty members. Additionally, observational checklists and interviews were used to verify infrastructural claims and gather in-depth insights. The data were analyzed using descriptive statistics and thematic analysis to derive patterns and institutional variations.

Results and Discussion

1. **Infrastructure Availability:** Out of the 25 surveyed schools, only 40% had fully functional computer laboratories with internet access. While most schools had received ICT equipment under central or state schemes, their usability was compromised due to poor maintenance or outdated software. Interactive whiteboards and projectors were available in 28% of the schools but were seldom used due to lack of training or technical support.
2. **Policy and Planning:** Only 32% of the institutions reported having an internal ICT policy or guideline for teachers and staff. In most schools, ICT implementation was ad hoc and driven by individual enthusiasm rather than strategic planning. Schools affiliated with central boards (CBSE) showed better alignment with ICT-based pedagogical goals due to curriculum-driven mandates.
3. **Technical and Human Resource Support:** A key barrier identified was the absence of dedicated ICT support staff. Teachers often lacked the time or skills to handle technical issues, leading to underutilization of available resources. Only 24% of schools conducted regular training or orientation programs on ICT tools.
4. **Administrative Commitment:** School leadership played a crucial role in the success of ICT initiatives. Institutions where principals actively supported technology integration showed higher teacher engagement and student participation in digital activities. However, leadership involvement was limited in most government schools due to administrative overload and policy constraints.

Challenges Identified:

1. **Inconsistent Funding**: Budgetary limitations and delays in fund disbursal impacted infrastructure maintenance and expansion.
2. **Lack of Monitoring and Evaluation**: Schools did not have proper mechanisms to evaluate the effectiveness of ICT usage.
3. **Resistance to Change**: Some teachers resisted ICT adoption due to fear of technology or lack of confidence.
4. **Digital Divide**: Disparities among schools in urban and rural areas reflected unequal access to technology.

Implications for Policy and Practice: The findings underline the need for a policy shift from hardware provisioning to capacity building and monitoring. Institutional preparedness must be nurtured through long-term strategies involving the following:

- **Structured ICT Policies**: Schools must develop ICT

usage policies tailored to their context.

- **Capacity Building**: Periodic and hands-on training for teachers is essential to promote confidence and creativity in ICT use.
- **Technical Support Systems**: Appointment of ICT coordinators or technical assistants at the school level is critical.
- **Monitoring and Feedback Loops**: Evaluation mechanisms should be instituted to assess the actual use and outcomes of ICT tools.

Recommendations:

1. **Create a Centralized ICT Planning Framework** for schools to align their efforts with national and state goals.
2. **Provide Financial Autonomy** to schools for minor ICT repairs and upgrades.
3. **Establish a Helpdesk System** to offer remote technical support for teachers.
4. **Develop Peer Learning Communities** among schools to share ICT best practices.
5. **Ensure Inclusive Access** by equipping marginalized schools with additional support in hardware and teacher training.

Conclusion: Institutional preparedness is foundational to the successful integration of ICT in secondary education. While policies exist at the macro level, their implementation often falters at the grassroots due to infrastructural, administrative, and attitudinal challenges. The study of Bhopal district reveals that although many schools have taken initial steps, the lack of a sustained and well-supported institutional framework limits the potential of ICT in enhancing educational outcomes. A paradigm shift from infrastructure-centric models to capacity-centric and policy-aligned models is essential for transformative change.

References:-

1. Anderson, T., &Dron, J. (2017). *Teaching Crowds: Learning and Social Media*. AU Press.
2. Kozma, R. B. (2018). *Transforming Education: The Power of ICT Policies*. UNESCO Publishing.
3. Selwyn, N. (2021). *Education and Technology: Key Issues and Debates* (2nd ed.). Bloomsbury Publishing.
4. Shukla, S., & Chatterjee, M. (2020). *Digital Learning in Indian Schools: Challenges and Opportunities*. Sage Publications India.
5. Singh, A. K. (2022). *ICT in Education: A Handbook for School Leaders and Administrators*. PHI Learning.
6. Mishra, P., & Koehler, M. J. (2006). Technological pedagogical content knowledge: A framework for teacher knowledge. *Teachers College Record, 108*(6), 1017–1054.
7. NCERT. (2020). *ICT in School Education: National Survey Report*. National Council of Educational Research and Training.
8. UNESCO. (2019). *ICT Competency Framework for Teachers (Version 3)*. UNESCO Publishing.
9. Pelgrum, W. J. (2001). Obstacles to the integration of ICT in education: Results from a worldwide educational assessment. *Computers & Education, 37*(2), 163–178.
10. Ministry of Education, Government of India. (2022). *Guidelines for ICT@Schools Scheme*. Department of School Education & Literacy.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

राजस्थान पुलिस: तब और अब – एक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. रतन लाल सुथार*

* सहायक आचार्य (लोक प्रशासन) विद्या भवन रूरल इंस्टिट्यूट, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – एक राज्य के निर्माण में चार तत्व- यथा जनसंख्या, निश्चित भू-भाग, सरकार व संप्रभुता का योगदान होता है। उस राज्य को एक विकसित राज्य का स्वरूप देने के लिए वहां एक सुव्यवस्थित एवं संगठित प्रशासकीय व्यवस्था का होना अति आवश्यक है। इस प्रशासकीय व्यवस्था में पुलिस प्रशासन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। किसी भी समाज में पुलिस की उपस्थिति सामाजिक व्यवस्था की प्रधानता और उसे बनाए रखने के लिए आवश्यक है। विकासशील समाज की अपेक्षा विकसित समाज में नागरिक पुलिस को अधिक सशक्त एवं उत्तरदायी बनाया गया है। भारत जैसे विकासशील राष्ट्र में जहाँ राजनीतिक स्थिरता और विकास प्रशासन हेतु विधि सम्मत व्यवस्था की आवश्यकता है, वहाँ पुलिस प्रशासन भी अत्यधिक प्रभावी भूमिका में होना चाहिए।

यह शोध पत्र राजस्थान पुलिस के ऐतिहासिक विकास, उसकी वर्तमान स्थिति, पुलिस के समक्ष विभिन्न चुनौतियों और भविष्य की दिशा का विश्लेषण करता है। राजस्थान पुलिस का इतिहास राजस्थान राज्य के गठन से पहले विभिन्न रियासतों की पुलिस व्यवस्था में निहित है। यह शोध पत्र आजादी से पूर्व रियासती पुलिस व्यवस्था से लेकर एक एकीकृत और आधुनिक पुलिस बल बनने तक की यात्रा के गहन अध्ययन पर आधारित है। राजस्थान पुलिस की स्थापना, संगठन, पुलिस की कार्यप्रणाली और सामाजिक भूमिका में आये परिवर्तनों को रेखांकित करते हुए वर्तमान में उसके सामने खड़ी प्रमुख चुनौतियों जैसे- अपराध की बढ़ती प्रवृत्ति, तकनीकी पिछड़ापन, सामुदायिक समन्वय की कमी और आंतरिक संगठनात्मक मुद्दों को भी यह शोध पत्र उजागर करता है। सारांशत: इस शोध पत्र द्वारा राजस्थान पुलिस द्वारा किए गए सुधारों, नवाचारों और पहलों पर प्रकाश डालना है तथा एक कुशल, जवाबदेह और जन-केंद्रित पुलिस बल के निर्माण के लिए आवश्यक सुझाव देना है।

शब्द कुंजी – पुलिस, प्रशासकीय व्यवस्था, रियासतकाल, एकीकरण, आधुनिकीकरण, अपराध-नियंत्रण, सामुदायिक पुलिस।

प्रस्तावना – पुलिस समाज की कानून-व्यवस्था बनाए रखने, अपराध नियंत्रण और नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करने वाली प्रमुख संस्था है। राजस्थान पुलिस, भारत की सबसे बड़े भौगोलिक क्षेत्र में कार्यरत पुलिस बलों में से एक है। अतीत में इसका मुख्य कार्य कानून व्यवस्था बनाए रखना और शाही आदेशों को लागू करना था। आज इसकी भूमिका में आतंकवाद विरोधी कार्रवाई, साइबर अपराध नियंत्रण, महिला एवं बाल सुरक्षा, ट्रैफिक प्रबंधन और सामुदायिक पुलिसिंग जैसे अनेक आयाम जुड़ गए हैं।

राजस्थान पुलिस की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

रियासतकालीन पुलिस- स्वतंत्रता से पूर्व भारत में कुल 563 देशी रियासतें थी तथा राजस्थान में 19 देशी रियासतें एवं तीन ठिकाने (कुशलगढ़, नीमराणा एवं लावा) थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात तत्कालीन राज्यों रियासतों के विलय के पश्चात शासन की विभिन्न प्रशासनिक इकाईयों का स्वरूप उभरकर सामने आया। राजस्थान का गठन एवं एकीकरण 1948 से 19 नवम्बर 1956 के बीच चरणबद्ध तरीके से हुआ, जिसमें सभी रियासतों का विलय कर एक एकीकृत राज्य बनाया गया। वर्तमान राजस्थान राज्य के गठन से पूर्व सभी रियासतों की अपनी-अपनी प्रशासनिक इकाईयां थी। रियासतकालीन इन सुरक्षा बलों को मिलाकर पुलिस का गठन किया गया। रियासत काल में पुलिस कार्य अक्सर सेना द्वारा दिया जाता था। अपराधों की जाँच पारंपरिक तरीकों से होती थी। राजा या दीवान की निगरानी में थाने और चौकियाँ संचालित होती थीं।

एकीकरण के पश्चात् राजस्थान पुलिस के पहले मुखिया महानिरीक्षक पुलिस, आर. बनर्जी बनाए गए। प्रतिनियुक्ति पर आए बनर्जी ने 7 अप्रैल, 1949 को अपना कार्य सम्भाला। बनर्जी ने सात महीने तक उस पद पर अपनी सेवाएँ दीं, जिसमें उन्होंने अधिकांश समय रियासतकालीन पुलिस बलों को एकीकृत करने एवं राजस्थान पुलिस के लिए समान पुलिस संहिता का निर्माण करने में लगाया। सन् 1951 में राजस्थान पुलिस सेवा की शुरूआत की गई। इसके साथ ही राजस्थान पुलिस की शुरूआत हुई।

ब्रिटिश प्रभाव – कुछ रियासतों में ब्रिटिश प्रशासन का प्रभाव पड़ने से कानून व्यवस्था में कुछ आधुनिक तत्व आए। पुलिस प्रशिक्षण, वर्दी, पदानुक्रम और रिकॉर्ड रखने की व्यवस्था में सुधार हुए।

एकीकरण और प्रारंभिक स्वरूप (1951-1970)

1. राजस्थान राज्य का गठन-30 मार्च 1949 को राजस्थान का गठन हुआ और 1951 में पुलिस का एकीकरण हुआ।
2. पुलिस मुख्यालय का गठन हुआ और डीजीपी (Director General of Police) पद स्थापित किया गया।
3. अपराध जाँच, कानून व्यवस्था और यातायात प्रबंधन को औपचारिक विभागों में विभाजित किया गया।
4. 1960 के दशक में रेडियो संचार और परिवहन साधनों में सुधार शुरू

हुए।

आधुनिकीकरण और विस्तार (1970–2000) :

1. क्राइम ब्रांच, CID, ATS (Anti-Terrorism Squad) जैसी विशेष इकाइयों का गठन।
2. अपराध रिकॉर्ड के लिए कम्प्यूटर आधारित डेटा एंट्री की शुरुआत।
3. प्रशिक्षण के लिए राजस्थान पुलिस अकादमी, जयपुर की स्थापना।
4. महिला पुलिस बल की भर्ती और विशेष महिला थानों का संचालन।
5. वाहनों, वायरलेस और हथियारों में सुधार।

वर्तमान स्वरूप (अब)

तकनीकी आधुनिकीकरण:

1. राजस्थान पुलिस ऑनलाइन– FIR, शिकायत और ट्रैकिंग सिस्टम ऑनलाइन उपलब्ध।
2. CCTNS (Crime and Criminal Tracking Network & Systems) का उपयोग।
3. साइबर क्राइम यूनिट की स्थापना।
4. ड्रोन, CCTV, GPS ट्रैकिंग और फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशालाओं का प्रयोग।

सामुदायिक पहल :

1. 'हैलो पुलिस' हेल्पलाइन।
2. महिला हेल्पलाइन (1090)
3. आपातकालीन सेवा (112)
4. पारिवारिक परामर्श केंद्र।
5. नगर एवं ग्राम रक्षा समिति
6. बाल मित्र पुलिस।

इनके आलावा विभिन्न जिलो में स्कूल–कॉलेज में साइबर सुरक्षा और महिला सुरक्षा पर जनजागरूकता कार्यक्रम, हेल्पलाइन, चालित पुलिस व्यवस्था, जीवन रक्षक एम्बुलेंस सेवा, नशा मुक्ति शिविर, चाइल्ड लाइन तथा अपराध पीड़ित व्यक्तियों को राहत की विभिन्न योजनायें संचालित की जा रही है।

प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण – पुलिस बल में नई भर्ती एवं सेवारत पुलिसकर्मियों की कार्यकुशलता, कार्य क्षमता, नवीन तकनीक के प्रशिक्षण हेतु विभिन्न प्रशिक्षण केंद्र स्थापित किये तथा पूर्ववर्ती प्रशिक्षण केन्द्रों की प्रशिक्षण क्षमता में वृद्धि भी की गयी है।

एक वक्त था जब पुलिस के पास अत्याधुनिक वाहन, हथियार एवं अन्य संचार उपकरण नहीं थे लेकिन गत वर्षो में राजस्थान पुलिस का स्वरूप बहुत विशाल हो गया है। अब पुलिस के पास आधुनिक वाहन, हथियार, संचार उपकरण एवं अन्य आवश्यक साजो सामान उपलब्ध है। राजस्थान पुलिस की गिनती अब देश के अग्रणी पुलिस बेड़ों में की जाती है राजस्थान पुलिस ने साइबर क्राइम पुलिस एक्ट बनाने, आयुक्त प्रणाली लागू करने, भूमाफियाओं से निपटने, सामुदायिक सहभागिता बढ़ाने हेतु सीएलजी योजना सहित अनेक नवाचार एवं कीर्तिमान स्थापित किए हैं। वर्तमान पुलिस के पास आधुनिक हथियार प्रशिक्षण, साइबर क्राइम, मानवाधिकार और संकट प्रबंधन के विशेष कोर्स भी उपलब्ध।

तुलनात्मक विश्लेषण : तब और अब

राजस्थान पुलिस का तुलनात्मक विश्लेषण :– तब और अब

तुलना का आधार	तब (रियासती/ प्रारंभिक काल)	अब (आधुनिक काल)
संगठन	रियासतों के अनुसार अलग–अलग	एकीकृत राज्य पुलिस
तकनीक	पारंपरिक जाँच, मैनुअल रिकॉर्ड	डिजिटल रिकॉर्ड, CCTNS,CCTV
महिला भागीदारी	लगभग नगण्य	महिला थाने, 10% आरक्षण
संचार माध्यम	संदेश वाहक या डाक	वायरलेस, मोबाइल, इंटरनेट
भूमिका	कानून व्यवस्था और शाही सुरक्षा	अपराध नियंत्रण, आतंकवादी रोधी, ट्रैफिक, साइबर सुरक्षा
जन सहभागिता	लगभग नगण्य	सामुदायिक संपर्क समूह (CLG)

वर्तमान चुनौतियाँ :

1. साइबर अपराधों में तेजी से वृद्धि।
2. नक्सल/आतंकी गतिविधियों की संभावना।
3. पुलिस बल पर कार्यभार का अधिक दबाव।
4. ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में अलग–अलग सुरक्षा चुनौतियाँ।

निष्कर्ष – सेवार्थ कटिबद्धता के ध्येय को लेकर शुरू हुई राजस्थान पुलिस ने एक लंबा सफर तय किया है एवं वह 'अपराधियों में भय एवं आम जन में विश्वास' के ध्येय को लेकर प्रदेश के प्रत्येक नागरिक के सम्मान एवं जान–माल की रक्षा के लिए निरंतर सेवारत है। एक समृद्ध एवं खुशहाल राजस्थान बनाने में राजस्थान पुलिस का अप्रतिम योगदान है। राजस्थान पुलिस ने समय के साथ खुद को आधुनिक, तकनीकी और जनता–केन्द्रित संस्था में परिवर्तित किया है। फिर भी अपराध के बदलते स्वरूप, तकनीकी जटिलताओं और जनसंख्या वृद्धि के साथ पुलिस को निरंतर सुधार और प्रशिक्षण की आवश्यकता है। 'तब और अब' की तुलना यह दर्शाती है कि राजस्थान पुलिस ने केवल अपने उपकरण और तकनीक ही नहीं, बल्कि अपने दृष्टिकोण को भी बदला है, जिससे यह जनता की अपेक्षाओं पर अधिक खरी उतर रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. राजस्थान पुलिस की आधिकारिक वेबसाइट (http://police.rajasthan.gov.in)
2. राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर।
3. 'राजस्थान पुलिस का इतिहास' – डॉ. बी.एल. शर्मा।
4. भारत सरकार, गृह मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट।
5. 'भारतीय पुलिस का इतिहास' – शैलेन्द्र चतुर्वेदी।
6. 'पुलिस संगठन और प्रशासन' – शरद चन्द्र मिश्रा।
7. 'भारतीय पुलिस : सन्दर्भ एवं परिप्रेक्ष्य' – शंकर सरोलिया।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का महिला मुक्ति विमर्श

नरेन्द्र सिंह पंवार*

* शोधार्थी, मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – अम्बेडकर आजादी के संघर्ष के दौरान सत्ता हस्तांतरण का सवाल, स्वाधीन भारत का स्वरूप और उसमें जनता की नियति, आमजन की वास्तविक सामाजिक और आर्थिक मुक्ति जैसे सवालों पर शीर्ष नेतृत्व के साथ हुए संवाद, बहस और विवाद में यह स्पष्ट हो चुका था कि महज राजनैतिक आजादी से इस देश की जनता को विशेष रूप से महिलाओं को सामंती उत्पीड़न से मुक्ति नहीं दिलाई जा सकती है। डॉ. अम्बेडकर ने भारत में स्त्रियों की पराधीनता और जाति आधारित पितृसत्तात्मक जकड़न की कठोरता के इतिहास को एक साथ जोड़कर देखा। ब्राह्मणवादी वर्चस्व की शक्तियों द्वारा वर्णव्यवस्था को मजबूत और दीर्घजीवी बनाने की प्रकिया में स्त्रियों को उनके नैसर्गिक अधिकारों से वंचित करके उन्हें दास की श्रेणी में ला दिया गया। स्त्री के अधिकारों और स्वच्छंदता पर प्रतिबंध लगाये बिना जाति व्यवस्था को कड़ाई से लागू कर पाना संभव नहीं था क्योंकि वर्ण-व्यवस्था का निर्धारण सजातीय विवाह से होता है और सजातीय तथा बहिर्गोत्रीय विवाह संस्था को अमल में लाये बिना वर्ण नामक श्रेणी को बंद जाति में तब्दील नहीं किया जा सकता।

सजातीय विवाह व्यवस्था को कड़ाई से लागू करने की प्रक्रिया को डॉ. अम्बेडकर 'वर्ण' से 'जाति' में परिवर्तन कहते हैं। शूद्रों और स्त्रियों की स्थिति में सर्वाधिक सुधार बौद्ध धर्म के व्यापक प्रसार के साथ आया। भारत में बौद्ध दर्शन व धर्म के उदय को डॉ. अम्बेडकर क्रांति के रूप में स्वीकार करते हैं। बौद्ध धर्म ने सनातन धर्म के प्रत्येक अमानवीय आधार स्तम्भ पर गहरी चोट की, जिसका प्रभाव समाज पर पड़ना अवश्यंभावी था। यहां यह ध्यान रखना जरूरी है कि बौद्ध धर्म के उदय से पहले हिन्दू धर्म में ब्राह्मण वर्चस्व के बढ़ते चले जाने के कारण शूद्रों और स्त्रियों की दशा खराब होनी प्रारंभ हो गई थी। बौद्ध धर्म ने एक तरह से इस प्रक्रिया पर रोक लगा दी और हिन्दू धर्म की विभेदकारी सामाजिक नीति के स्थान पर एक समावेशी समाज व्यवस्था की नींव डाली। बौद्ध काल मे शूद्रों-स्त्रियों की स्थिति के बारे में डॉ. अम्बेडकर लिखते हैं कि 'वैदिक काल की अवनति के दिनों में शूद्रों और स्त्रियों का स्थान बहुत नीचे हो गया था'।

बौद्ध धर्म के अभ्युदय ने इन दोनों की स्थिति में एक महान परिवर्तन ला दिया। संक्षेप में कहें तो बौद्ध काल में शूद्र संपत्ति, विद्या अर्जित कर सकता था और यहां तक कि राजा भी बन सकता था बल्कि वह समाज में सर्वोच्च स्थान तक पहुंच सकता था, जो वैदिक शासन में ब्राह्मण के अधिकार में होता था। बौद्ध भिक्षु व्यवस्था वैदिक ब्राह्मण व्यवस्था का प्रतिरूप थी। ये दोनों ही व्यवस्थाएं अपने-अपने धर्म की व्यवस्थाओं में पद और प्रतिष्ठा की दृष्टि से एक-दूसरे के समान थीं। वैदिक काल में शूद्र, ब्राह्मण बनने की कभी आकांक्षा नहीं कर सकता था लेकिन भिक्षुओं के बौद्ध धर्म के द्वार शूद्रों के लिए खुले थे। बहुत से शूद्रों ने जो वैदिक काल में ब्राह्मण नहीं बन सके, बौद्ध धार में भिक्षु बने और उन्होंने ब्राह्मण के समान पद प्राप्त किया। इसी प्रकार के परिवर्तन स्त्रियों के संबंध में भी मिलते हैं। बौद्ध धर्म में विवाह एक संविदा थी। बौद्ध धर्म के अनुसार वह संपत्ति अर्जित कर सकती थी। वह विद्या अर्जित कर सकती थी और जो सबसे विलक्षण बात थी वह बौद्ध धर्म में भिक्षुणी बन सकती थी और उसी पद और प्रतिष्ठा को प्राप्त कर सकती थी, जो ब्राह्मण को प्राप्त थी। शूद्रों और स्त्रियों को उंचा स्थान दिलाने में बौद्ध धर्म के सिद्धांतों का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि बौद्ध धर्म के विरोधी इसे शूद्र धर्म (अर्थात निम्न वर्ग के लोगों का धर्म) कहते थे। डॉ. अम्बेडकर लिखते हैं- ब्राह्मणवाद ने अंतर्विवाह और सहभोज पर रोक लगाने का काम पशु की तरह नृशंस होकर किया। यदि किसी को उसमें संदेह हो, तो अनुरोध है कि मनु की भाषा पर विचार करना चाहिए। शूद्र स्त्री के संबंध में मनु घृणा व्यक्त करता है उस पर ध्यान दीजिये, वह कहता है कि वह अशुद्ध है जैसे शुक्र या मूत्र। अंतर्विवाह और सहभोज का निषेध दो स्तम्भ हैं जिन पर जातिप्रथा टिकी हुई है।

जातिप्रथा और अंतर्विवाह तथा सहभोज से संबंधित नियम एक-दूसरे से ऐसे जुड़े हुए हैं, जैसे उद्देश्य के साथ उसको पूरा करने वाले उपाय। निश्चय ही ये उद्देश्य किन्हीं अन्य उपायों द्वारा पूरे नहीं किए जा सकते थे। इन उपायों की योजना से यह स्पष्ट होता है कि ब्राह्मणवाद का उद्देश्य जाति प्रथा को जन्म देना था और यही उसका अंतिम लक्ष्य था। ब्राह्मणवाद ने सामाजिक व्यवस्था में अन्य परिवर्तनों का भी सूत्रपात किया। अगर इन परिवर्तनों का प्रयोजन वही था जिसकी संभावना की चर्चा मैंने अभी की है, उन्हें देखिये : तब इस तथ्य को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि ब्राह्मणवाद जातिप्रथा को कायम रखने को लेकर इतना अधिक आतुर था कि इसने इसके लिए प्रयुक्त साधनों के उचित या अनुचित, नैतिक या अनैतिक होने की कोई परवाह नहीं की। मैं लड़कियों के विवाह और विधवाओं के जीवन के संबंध में मनु जो नियम बनता है उन्हें देखिये वह पिता दोषी है जो उचित समय आने पर (अपनी पुत्री को) विवाह में नहीं देता है।

समान जाति के श्रेष्ठ और सुन्दर वर को अपनी पुत्री, चाहे उसकी आयु उचित न भी हो, अर्थात वह ऋतुमती न हुई हो, निर्धारित विधि के अनुसार दे। इस नियम के अनुसार मनु यह निर्देश देते हैं कि चाहे कोई लड़की गर्भधारण

करने योग्य न हुई हो, अर्थात चाहे बच्ची ही हो, तब भी उसका विवाह कर देना चाहिए। विधवाओं के संबंध में मनु निम्नलिखित नियम घोषित करता है वह (अर्थात विधवा) अपने सुख के लिए स्वेच्छापूर्वक शुद्ध पुष्पों, कंदमूल और फलों का आहार कर अपने शरीर को क्षीण कर ले, लेकिन वह अपने पति के निधन के बाद किसी दूसरे पुरुष का नाम भी न ले। परन्तु जो विधवा संतानोत्पति की इच्छा से दुबारा विवाह करके अपने पति का अनादर करती है, वह इस लोक में निंदा का पात्र बनती है और वह (स्वर्ग में) अपने पति के सामीप्य से वंचित रहेगी। पति के अतिरिक्त किसी दूसरे पुरुष से उत्पन्न स्त्री की संतान उसकी संतान नहीं कहलाती, पत्नी के अतिरिक्त किसी दूसरी स्त्री से उत्पन्न किसी पुरुष की संतान उसकी नहीं कहलाती, पतिव्रता स्त्री का दूसरा पति कहीं भी नहीं निर्धारित है। डॉ. अम्बेडकर बताते हैं कि मनु द्वारा स्त्रियों के लिए बनाये गए नियम बिल्कुल नए थे। बौद्ध पूर्व ब्राह्मणवाद में लड़कियों का विवाह ऋतुमती होने के बाद ही किये जाते थे, बल्कि तब किये जाते थे जब लड़कियों की आयु इतनी हो जाती थी कि उन्हें वयस्क कहा जा सके। बौद्ध पूर्व ब्राह्मणवाद में विधवाओं के पुनर्विवाह पर कोई रोक नहीं थी। संस्कृत भाषा में 'पुनर्भु' (अर्थात वह स्त्री जिसका दूसरा विवाह हुआ हो) और 'पुनर्भव' (अर्थात दूसरा पति) जैसे शब्द मिलते हैं। इस तथ्य से यह स्पष्ट होता है कि बौद्ध पूर्व ब्राह्मणवाद में इस प्रकार का विवाह एक आम बात थी। लेकिन बौद्ध धर्म द्वारा संचालित की गई सामाजिक क्रांति को विफल कर जो बौद्ध-पश्चात ब्राह्मणवाद विकसित हुआ उसने पूरी व्यवस्था को उलट दिया।

इस संबंध में अम्बेडकर के विचार देखें- 'पुष्यमित्र की ब्राह्मण क्रांति का उद्देश्य चातुर्वण्य की प्राचीन सामाजिक व्यवस्था का उद्धार करना था, जिसे बौद्ध शासन काल में कसौटी पर परखा जा रहा था। लेकिन जब बौद्ध धर्म पर ब्राह्मणवाद ने विजय प्राप्त कर ली, तब उसे चातुर्वण्य-व्यवस्था को उसी रूप में, जिस रूप में वह पहले थी पुन: स्थापित करने पर भी संतोष नहीं हुआ। बौद्ध पूर्व समय में चातुर्वण्य-व्यवस्था एक उदार व्यवस्था थी और उसमें गुंजाइश थी। इसका कारण यह है कि इसका विवाह व्यवस्था से कोई संबंध नहीं था। चातुर्वण्य व्यवस्था में जहां चार विभिन्न वर्गों के अस्तित्व को स्वीकार कर लिया गया था, वहां इन वर्गों में आपस में विवाह संबंध करने पर कोई निषेध नहीं था। किसी भी वर्ण का पुरुष विधिपूर्वक दूसरे वर्ण की स्त्री के साथ विवाह कर सकता था।' इस तरह यह स्पष्ट हो जाता है कि बहिर्जातीय विवाह पद्धति के स्थान पर सजातीय विवाह पद्धति मूलत: जाति-प्रथा का सृजन करने के लिए ही प्रचलन में लाई गई। लेकिन सजातीय विवाह पद्धति को अबाध रूप से संचालित करना और उसे बनाए रखना कोई आसान काम नहीं था। इस प्रकिया में हिन्दू धर्म के कर्णधारों ने कई अन्य बुराइयों को जन्म दिया, जैसे सतीप्रथा, अनिवार्य वैधव्य और बाल विवाह इत्यादि। डॉ. अम्बेडकर ने 'भारत में जातिप्रथा' नामक लेख में इस समस्या पर विस्तार से विवेचन किया और यह दिखाया कि किस प्रकार सजातीय विवाह संस्था के निर्माण के लिए स्त्रियों को सती होने, आजीवन विधवा बने रहने के लिए मजबूर किया। वे बताते हैं कि सजातीय विवाह को सिर्फ इसलिये थोपा गया ताकि वर्ग/वर्ण को जाति में तब्दील किया जा सके। जो वर्ग जाति के रूप में संगठित होना चाहता है उसके लिए उस वर्ग में स्त्री-पुरुषों की संख्या समान होना अति आवश्यक है। दूसरे शब्दों में अगर सजातीय व्यवस्था को बनाए रखना है तो उसी वर्ग में ही विवाह योग्य स्त्री और पुरुषों का उपलब्ध होना जरूरी है। अगर नहीं होता है तो उस वर्ग के स्त्री और पुरुष अपने वर्ग के स्त्री तथा पुरुष अपने वर्ग या वर्ण से बाहर विवाह करने के लिए भी सजातीय व्यवस्था के अंतर्गत ही प्रबंध करना होता है, अन्यथा वे किसी अन्य जाति में विवाह करके अनुशासन भंग कर सकते हैं। डॉ. अम्बेडकर लिखते हैं कि जाति की समस्या अंतत: वर्ग में विवाह योग्य स्त्री-पुरुषों की संख्या की विषमता को दूर करने की समस्या मात्र बनकर रह जाती हैं। वे लिखते हैं, 'इस प्रकार हम देखते हैं कि जिन उपायों द्वारा स्त्री पुरुषों के बीच संख्यात्मक विषमता को नियंत्रित रखा जा सकता है वे हैं-

1. दिवंगत पति के साथ उसकी विधवा का अग्निदाह,
2. अनिवार्य वैधव्य, अग्निदाह का हल्का रूप,
3. विधुर पर अनिवार्य ब्रह्मचारी जीवन आरोपित करना, और
4. उसका विवाह ऐसी लड़की से कर देना जो विवाह योग्य न हो।

जैसा मैं कह चुका हूं विधवा का अग्निदाह और विधुर का अनिवार्य ब्रह्मचारी का जीवन आरोपित करना ये दोनों उपाय ऐसे हैं जिनके किसी समुदाय में सजातीय विवाह व्यवस्था बनाए रखने में कार्यान्वित होने में संदेह है, ये दोनों उपाय मात्र हैं। लेकिन जब यह उपाय कठोरतापूर्वक कार्यान्वित किए जाते हैं तब लक्ष्य पूरा हो जाता है। ये उपाय कौन-सा लक्ष्य पूरा करते हैं? ये सजातीय विवाह व्यवस्था का सृजन और उसे स्थाई बनाते हैं। जाति की विभिन्न परिभाषाओं में हमारे विश्लेषण के अनुसार जाति और सजातीय विवाह व्यवस्था, दोनों एक ही वस्तु हैं। इस प्रकार इन उपायों का प्रयोजन जाति और जाति-व्यवस्था में ये दोनों ही उपाय विहित हैं।[९] सतीप्रथा तथा विधवा विवाह के निषेध के संबंध में डॉ. अम्बेडकर अपने विश्लेषण के क्रम में वामन पांडुरंग काणे द्वारा लिखित पुस्तक 'धर्मशास्त्र' में व्यक्त किए विचारों को भी दृष्टिगत रखते हैं। काणे ने सतीप्रथा के पीछे स्त्रियों के उत्तराधिकार संबंधी नियमों का उल्लेख किया था। बंगाल में सती प्रथा सर्वाधिक कठोरता से लागू थी, जिसके बारे में काणे ने कहा है कि वह 'हिन्दू' कानून के तहत स्त्री पति की संपत्ति की अधिकारी होती थी। पति के घर वाले, सगे-संबंधी विधवा हो जाने पर स्त्री पर सती हो जाने के लिए दबाव डालते थे जिससे कि वे उस भाग के संबंध में मुक्त हो सकें। डॉ. अम्बेडकर ने इस तथ्य को स्वीकार तो किया कि इसी कारण बंगाल में इतने बड़े पैमाने पर सती-प्रथा का चलन रहा है, लेकिन उन्होंने कहा कि इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि यह कुप्रथा किस तरह शुरू हुई और भारत के अन्य भागों में प्रचलित हो गई। इस संदर्भ में सजातीय विवाह संस्था के द्वारा जाति निर्माण की प्रक्रिया में सती प्रथा के उद्भव के डॉ. अम्बेडकर के दावे की तथ्यपरकता सिद्ध होती है।

डॉ. अम्बेडकर के इस विश्लेषण की प्रमाणिकता तथा प्रासंगिकता इतने लंबे कालखंड के बाद वर्तमान भारत में स्वत: सिद्ध हो चुकी है। बहिर्जातीय विवाह को लेकर भारतीय समाज की असहिष्णुता, खाप पंचायतों की क्रूरताओं के पीछे के ऐतिहासिक संदर्भको अच्छी तरह समझा जा सकता है। डॉ. अम्बेडकर के विश्लेषण से हमें यह समझने में मदद मिलती है कि भारत में पितृसत्ता को जातिवादी व्यवस्था का भरपूर सहयोग मिला है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था द्वारा स्त्री को लोकतांत्रिक-मानवीय अधिकारों से वंचित रखकर उसे एक उपभोक्ता वस्तु में बदल देने की प्रक्रिया तो बाद की और परिघटना है। उससे पहले ब्राह्मणवादी व्यवस्था के अंतर्गत स्त्री की यौनिकता तथा उसके समूचे वजूद को कैद कर दिया गया ताकि भारत में जाति व्यवस्था को मजबूत नींव प्रदान की जा सके। यह आदिम सोच आज तक भारतीय समाज में गहरी जड़ें जमाये हुए हैं। यही कारण है कि जाति से बाहर विवाह करना

विशेषकर स्त्री के लिए अक्षम्य अपराध माना जाता है। जीवन व धार्मिक-सामाजिक व्यवहार के अन्य अनेक मामलों में सहिष्णु और समझौता करने को तैयार नहीं है। परिवारों में उत्तराधिकार के मामले में आज भी स्त्री के साथ पुरानी ब्राह्मणवादी रीति से ही काम लिया जाता है। डॉ. अम्बेडकर ने जाति उन्मूलन के लिए हिन्दू परिवारों में कैद स्त्री को मुक्त कराने की परियोजना पर काम किया। उन्होंने यह आत्मसात कर लिया था कि जब तक स्त्री हिन्दू कानूनों के दायरे से बाहर नहीं निकलेगी हिन्दू समाज में किसी तरह के कोई सुधार की गुंजाइश नहीं है। इसलिए उन्होंने हिन्दू कानून में परिवर्तन की बात प्रस्तावित की। हिन्दू कोड बिल डॉ. अम्बेडकर द्वारा सदियों से पारिवारिक, सामाजिक व धार्मिक जकड़न में जकड़ी हिन्दू स्त्री को मुक्त कराने का प्रयास था।

हिन्दू कोड बिल : मनु के विधान को उलटने की कोशिश – सन् 1941 में औपनिवेशिक सरकार ने हिन्दू कानून में सुधार और एकरूपता लाने के उद्देश्य से बी. एन. राव कमेटी का गठन किया था। इस समिति नेयह कहा था कि हिन्दू संहिता बनाने का समय आ चुका है। सामाजिक अग्रगति और आधुनिकीकरण के लिए हिन्दू जीवन संहिता में सुधार की जरूरत पर बल दिया गया था। बी.एन. राव ने इस संदर्भ में ड्राफ्ट तैयार किया जिसमें उत्तराधिकार, मुआवजा, विवाह और तलाक, अभिभावकत्व और गोद लेने की प्रक्रियाओं पर सुधार की बात थी। जैसा कि स्वाभाविक था इस प्रस्ताव का हिन्दू समाज द्वारा बड़े पैमाने पर विरोध प्रारम्भ हो गया। जवाहरलाल नेहरू इस प्रस्ताव को लेकर उत्साहित थे, लेकिन विरोध के कारण उन्हें पीछे हटना पड़ा। 1948 में कानून मंत्री की हैसियत से डॉ. अम्बेडकर ने इस बिल के प्रथम ड्राफ्ट को संशोधित परिवर्धित करने का काम अपने हाथ में लिया, ताकि इसे संसद में बहस करने लायक बनाया जा सके। डॉ. अम्बेडकर की अध्यक्षता में बनी सेलेक्ट कमेटी ने हिन्दू कोड बिल में वांछित सुधार किये जिसे हम आज हम हिन्दू कोड बिल कहते हैं। डॉ. अम्बेडकर ने हिन्दू कोड बिल में मुख्य रूप से उन प्रतिबंधों का निराकरण करने का प्रयास किया जो ब्राह्मणवादी विधान द्वारा स्त्रियों पर लगाए गए थे। उन्होंने स्त्री को तलाक के अधिकार, पैतृक संपत्ति में स्त्री के समान अधिकार, विधवा को उसके पति की संपत्ति का उत्तराधिकार जैसे प्रावधानों को लाकर मनु के विधान को उलटने का प्रयास किया। अंतरजातीय विवाह को बढ़ावा और कानूनी संरक्षण का प्रावधान भी बाबा साहब ने किया। स्त्रियों को तलाक का अधिकार एक ऐसा प्रावधान था जिस पर कट्टर हिन्दू मानस का सर्वाधिक तीखा विरोध सामने आया। जैसा कि स्वाभाविक था संसद के भीतर इस बिल का हर ओर से भारी विरोध हुआ। सदन में लगभग पचास घंटे की वहस के बाद इस बिल को एक साल के लिए ठंडे बस्ते में डाल दिया गया। 1951 में नेहरू ने डॉ. अम्बेडकर से इस बिल को अलग-अलग खण्डों में विभाजित करने का आग्रह किया, इस प्रकार चार अलग-अलग विधेयक अस्तित्व में आ गए। हिन्दू मैरिज एक्ट, हिन्दू उत्तराधिकार एक्ट, हिन्दू अल्पसंख्यक एवं अभिभावकत्व एक्ट (हिन्दू माइनॉरिटी एंड गार्जियनशिप एक्ट), और हिन्दू एडोप्शन एंड मेंटेनेंस एक्ट। नेहरू ने बीच-बचाव का रास्ता निकालते हुए यह कहा कि विवाह और तलाक से संबंधित 55 धाराओं को पारित करवा लिया जाए बाकी कानूनों को प्रथम आम चुनाव के बाद गठित नई सरकार पारित करवायेगी, लेकिन इसके बावजूद 55 में से मात्र 3 धाराओं को पारित करने की सहमति बन सकी, जिससे दुखी होकर डॉ. अम्बेडकर ने कानून मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया।

तलाक संबंधी कानून के संदर्भ में बाबा साहब के सामने हिन्दू नेताओं द्वारा संशोधन का प्रस्ताव रखा गया जिसमें यह कहा गया था कि स्त्री को विवाह के तीन वर्ष बाद तलाक का अधिकार दिया जाए और भाई को यह अधिकार दिया जाए कि वह बहन की संपत्ति खरीद सके। डॉ. अम्बेडकर ने इन संशोधनों को अस्वीकार कर दिया था। प्रथम सरकार के गठन के बाद 1952 से लेकर 1956 तक उपरोक्त चार विधेयकों को नेहरू सरकार ने पारित तो करवा लिया लेकिन उनके पीछे के मूल उद्देश्य को धूमिल कर दिया। और जिन सुधारों को बाबा साहब अंजाम देना चाहते थे वे अधूरे ही रह गए। सन् 2005 में स्त्री को पैतृक संपत्ति में अधिकार तो दे दिया गया, लेकिनहिन्दू परिवार और समाज आज भी इस सुधार के लिए खुद को तैयार नहीं कर पाए हैं। भारत में स्त्री मुक्ति के आंदोलन के लिए बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर के ये विचार आज भी प्रेरणास्रोत की तरह हैं। ब्राह्मणवादी व्यवस्था के चंगुल से स्त्री को मुक्त करना भारत के नारी आंदोलन का प्रमुख कार्यभार है। पितृसत्ता से मुकम्मल मुक्ति के लिए जरूरी है मनुवादी व्यवस्था का उन्मूलन। इस तरह भारत में जाति उन्मूलन और नारी मुक्ति की लड़ाई एक सहधर्मी लड़ाई बनकर उभरती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नारी और प्रतिक्रान्ति, पृ.सं. 334, बाबा साहब अम्बेडकर सम्पूर्ण वांग्मय खण्ड-7, द्वितीय संस्करण : अप्रैल 1998, डॉ. अंबेडकर प्रतिष्ठान, कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
2. ब्राह्मणवाद की विजय पृ.सं. 197.
3. कास्ट्स इन इंडिया: देयर मेकैनिज्म, जेनेसिस एंड डेवलपमेंट।
4. भारत में जातिप्रथा (Essays and speeches compiled in Dr. Babasaheb Ambedkar: Writings and Speeches) – Government of Maharashtra publication
5. शारदा कबीर (मेहता) – *Religion, Caste and Gender: Ambedkar's Perspective*
6. शरण कुमार लिंबाळे – *Towards an Aesthetic of Dalit Literature* (अम्बेडकर की स्त्री दृष्टि पर भी चर्चा)
7. Christophe Jaffrelot – *Dr. Ambedkar and Untouchability: Fighting the Indian Caste System*
8. हिन्दू कोड बिल से सम्बन्धित संसदीय बहस (1948-1951)
9. B.N. Rau Committee Report (1941-42)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के विचार – दलितों के विशेष संदर्भ में

सत्यनारायण सिंह शेखावत*

* सहायक आचार्य, राजकीय कला महाविद्यालय, गरबाडा, दाहोद (गुजरात) भारत

शोध सारांश – डॉ. भीमराव अम्बेडकर महामानव थे। वे एक सच्चे देशभक्त थे तभी उन्होंने धर्म परिवर्तन हेतु अनेकानेक प्रलोभनों को ठुकरा दिया। वह हिन्दु समाज द्वारा स्थापित सामाजिक व्यवस्था से काफी असंतुष्ट थे और उनमें सुधार की मांग करते थे ताकि सर्वधर्म सम्भाव पर आधारित समाज की स्थापना की जा सके। भारत में उनका जीवन सामाजिक सुधार के श्रेष्ठतम कार्य को समर्पित था। वे एक ऐसे समाज सुधारक थे जो मात्र भाषणों तक ही अपने को सीमित करने के बजाय स्वयं अपने जीवन और कार्यो से सामाजिक रूढिवादिता, जातिप्रथा और अस्पृश्यता को हटाने में जीवनभर लगे रहे। उन्होंने राजनीति के बजाय सामाजिक सुधार के क्षेत्र में कार्य करने को प्राथमिकता प्रदान की। उनका विश्वास था कि आर्थिक और राजनीतिक मामले सामाजिक न्याय के लक्ष्य की प्राप्ति के बाद निपटाये जाने चाहिए। अम्बेडकर का विचार था कि आर्थिक विकास सभी सामाजिक समस्याओं का समाधान कर देगा। जातिवाद हिन्दुओं की मानसिक दासता की अभिव्यक्ति है। इस प्रकार के जातिवाद के पिशाच/बुराई के निवारण के बिना कोई वास्तविक परिवर्तन नहीं लाया जा सकता। हमारे समाज मे क्रांतिकारी बदलाव के लिए सामाजिक सुधार पहली शर्त है। सामाजिक सुधारों में परिवार व्यवस्था में सुधार और धार्मिक सुधार भी शामिल है। अम्बेडकर ने भारतीय समाज में महिलाओं की गिरती स्थिति की कटु आलोचना की उनका मानना था कि महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार मिलना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि हिन्दूधर्म में महिलाओं को सम्पति के अधिकार से वंचित रखा गया है। हिन्दू कोड बिल जो उन्होंने तैयार करवाया था उन्होंने यह ध्यान रखा कि महिलाओं को भी सम्पति में एक हिस्सा मिलना चाहिए। उन्होंने अस्पृश्यों को संगठित करते समय अस्पृश्य समुदाय की महिलाओं को आगे आने के लिए सदैव आहवान किया कि वे राजनीतिक और सामाजिक आंदोलनों में भाग लें।

शब्द कुंजी – दलित, हिन्दु समुदाय, अस्पृश्यता, जाति प्रथा, वर्ण व्यवस्था, जातिवाद, सामाजिक सुधार, सामाजिक न्याय, धार्मिक सुधार।

डॉ. अम्बेडकर के जाति प्रथा उन्मूलन संबंधी विचार – डॉ. भीमराव अम्बेडकर का सपना था कि भारत जाति मुक्त हो, औधोगिक राष्ट्र बने, सदैव लोकतांत्रिक बना रहे। अम्बेडकर को एक दलित नेता के रूप में जानते है, जबकि उन्होंने बचपन से ही जाति प्रथा का खुलकर विरोध किया था। उन्होंने जातिवाद से मुक्त आर्थिक दृष्टि से सुदृढ भारत का सपना देखा था। मगर देश की गन्दी राजनीति ने उन्हें सर्व समाज के नेता के बजाय दलित समाज के नेता के रूप में स्थापित करा दिया।

डॉ. अम्बेडकर के भाषण भारतीय सामाजिक चिन्तन के इतिहास और विकास के कालजयी दस्तावेज है। 9 मई 1916 को कोलम्बिया विश्वविद्यालय में आयोजित गोष्ठी में नृविज्ञान पर 'भारत में जाति प्रथा : संरचना, उत्पति और विकास' पर पठित लेख तथा लाहौर जातपात तोड़क मण्डल 1936 के वार्षिक सम्मेलन के लिए उनके द्वारा तैयार किया गया 'जाति प्रथा उन्मूलन' शीर्षक भाषण ऐतिहासिक महत्व के है। भारत में जाति प्रथा संरचना उत्पति और विकास आलेख में अम्बेडकर कहते है कि जाति की समस्या सैद्धान्तिक और व्यावहारिक रूप से एक विकराल समस्या है। वे जाति प्रथा की उत्पति के लिए भारत के विधि निर्माता मनु को जिम्मेदार ठहराते है। उनके शब्दों में 'मनु ने जाति के विधान' का निर्माण नहीं किया और न वह ऐसा कर सकता था। जाति प्रथा मनु से पहले विद्यमान थी। वह तो उसका पोषक था, इसलिए उसने उसे एक दर्शन का रूप दिया। प्रचलित जाति प्रथा को ही उसने संहिता का रूप दिया और जाति धर्म का प्रचार किया।

डॉ. अम्बेडकर के अनुसार प्रारम्भ में भारतीय समाज चार वर्गों में विभाजित था। ये है : – 1. ब्राहम्ण या पुरोहित वर्ग 2. क्षत्रिय वर्ग यां सैनिक वर्ग 3. वैश्य अथवा व्यापारिक वर्ग और 4. शुद्र अथवा शिल्पकार और श्रमिक वर्ग। इस बात पर विशेष ध्यान देना होगा कि आरम्भ में यह अनिवार्य रूप से वर्ग विभाजन के अन्तर्गत व्यक्ति दक्षता के आधार पर अपना वर्ग बदल सकता था और इसलिए वर्गों को व्यक्तियों के कार्य की परिवर्तनशीलता स्वीकार्य थी। हिन्दू इतिहास में किसी समय पुरोहित वर्ग ने अपना विशिष्ट स्थान बना लिया और इस तरह स्वयं सीमित प्रथा से जातियों का सूत्रपात हुआ। दूसरे वर्ग भी समाज विभाजन के सिद्धान्तानुसार अलग–अलग खेमों में बंट गए। कुछ का संख्या बल अधिक था कुछ का नगण्य। वैश्य और शुद्र वर्ग मौलिक रूप से वे तत्व है, जिनकी जातियों की अनगिनत शाखा, प्रशाखाएं कालान्तर में उभरी है, क्योंकि सैनिक व्यवसाय के लोग असंख्य समुदाय में सरलता से विभाजित नहीं हो सकते, इसलिए यह वर्ण सैनिकों और शासकों के लिए सुरक्षित हो गया।

डॉ. अम्बेडकर का मानना है कि समाज का यह उप वर्गीकरण स्वाभाविक है, उपर्युक्त विभाजन में अप्राकृतिक तत्व यह है कि इससे वर्गों में परिवर्तनशीलता के मार्ग अवरूद्ध हो गए और वे संकुचित बनते चले गए,

जिन्होंने जातियों का रूप ले लिया। अम्बेडकर यह भी मानते हे कि कुछ जातियों की संरचना नकल से हुई है और नकल करने के दो आधार दिखलाई देते है। जिस स्त्रोत की नकल की गई है, उसकी समुदाय में प्रतिष्ठा होनी चाहिए। भारतीय समाज में जो सिख समुदाय से प्रतिदिन अनेक बार मिला है उसने उसे सममुदाय की नकल की। इसी प्रकार जो जातियां ब्राहम्णों के निकट है वे सती प्रथा, बालिका विवाह जैसे प्रथाओं की नकल का कड़ाई से पालन करती है। अम्बेडकर के शब्दों में, इसमें कोई सन्देह नहीं कि भारत में जाति प्रथा निम्न वर्ग द्वारा उच्च वर्ग की नकल का प्रतिफल है।

जाति समस्या के संबंध में डॉ. अम्बेडकर ने अपने आलेख में चार पक्ष उजागर किए है:-

1. हिन्दू जनसंख्या में विविध तत्तवों के सम्मिश्रण के बावजूद इसमें दृढ सांस्कृतिक एकता है,
2. जातियां इस विराट सांस्कृतिक इकाइ अंग है,
3. शुरू में केवल एक ही जाति थी,
4. इन्हीं वर्गो मे देखा-देखी या बहिष्कार से विभिन्न जातियां बन गई।

अपने दूसरे भाषण में जिसे लाहौर जातपात तोड़क मण्डल 1936 के वार्षिक सम्मेलन के लिए तैयार किया गया था और जिसका शीर्षक जाति प्रथा उन्मूलन है, डॉ. अम्बेडकर ने इस प्रश्न पर विचार किया है कि क्या भारत में सामाजिक सुधार राजनीतिक सुधारो से पहले होने चाहिए। अम्बेडकर इस विचार से सहमत नहीं है कि हम अपनी सामाजिक प्रणाली में सुधार नहीं करेंगे, जब तक हम राजनीतिक सुधारों के योग्य नहीं हो जाते। उन दिनों अछूतों के साथ कैसा व्यवहार होता था। इसका चित्रण करते हुए अम्बेडकर कहते है मराठा राज्य में पेशवाओं के शासन में यदि कोई हिन्दू सड़क पर आ रहा होता था तो किसी अछूत को इसलिए उस सड़क पर चलने की अनुमति नहीं थी कि उसकी परछाई से वह हिन्दू अपवित्र हो जाएगा। अछूत के लिए यह आवश्यक था कि वह अपनी कलाई या गर्दन में निगरानी के तौर पर एक काला धागा बांधे, जिससे कि हिन्दू गलती से उससे छूकर अपवित्र ना हो जायें।

डॉ. अम्बेडकर का मत है कि हिन्दू परिवार के सुधार और हिन्दू समाज के पुनर्गठन तथा पुनर्निर्माण के अर्थ में समाज सुधार इन दोनों में अन्तर किया जाए। पहले प्रकार के समाज सुधार का संबंध विधवा विवाह, बाल विवाह आदि से है। जबकि दूसरे प्रकार के समाज सुधार का संबंध जाति प्रथा के उन्मूलन से है। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार भारत में जाति प्रथा का समर्थन सर्वप्रथम इस आधार पर किया जाता है कि जाति प्रथा श्रम के विभाजन का एक अन्य नाम ही है। यदि श्रम का विभाजन प्रत्येक सभ्य समाज का एक अनिवार्य-लक्षण है, तो यह दलील दी जाती है कि जाति प्रथा में कोई बुराई नहीं है। अम्बेडकर इस विचार के विरूद्ध तर्क देते हुए कहते है कि जाति प्रथा केवल श्रम का विभाजन नहीं है, यह श्रमिकों का विभाजन भी है। यह एक श्रेणीबद्ध व्यवस्था है जिसमें श्रमिकों का विभाजन एक के उपर दूसरे क्रम में होता है। किसी भी अन्य देश में श्रम के विभाजन के साथ श्रमिकों का इस प्रकार का क्रम नहीं होता। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार जाति प्रथा से असामाजिक तत्वों को बढावा मिलता है। ब्राहम्णों का मुख्य उद्देश्य यह है कि गैर-ब्राहम्णों के विरूद्ध अपने स्वार्थ की रक्षा करें और गैर ब्राहम्णों का मुख्य उद्देश्य है कि ब्राहम्णों के विरूद्ध अपने स्वार्थ की रक्षा करें। इसलिए हिन्दू समुदाय विभिन्न जातियों का एक संग्रह मात्र नहीं है, बल्कि वह शत्रुओं का समुदाय है।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा वर्ग व्यवस्था की आलोचना- भारतीय समाज व्यवस्था का संगठन चार वर्गों के आधार पर होता है। ये वर्ग थे ब्राहम्ण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र। अम्बेडकर चतुवर्गीय व्यवस्था के प्रबल आलोचक थे। इस विभाजन मे शुद्रो के हितों की रक्षा का कोई प्रावधान नहीं है। यहां तक कि शुद्रों के लिए ज्ञान प्राप्ति भी वर्जित था। शिक्षा और अपनी आत्मरक्षा प्रत्येक व्यक्ति के लिए अपरिहार्य है, शुद्रों की रक्षा और सेवा की अपने जीवन का ध्येय बनाया था।

डॉ. अम्बेडकर के अस्पृश्यता संबंधी विचार -डॉ. अम्बेडकर अस्पृश्यता के खिलाफ थे। अस्पृश्यता अमानवीय और औचित्य रहित प्रथा थी। इससे भारतीय समाज की एकता प्रभावित होती थी। उन्होंने धर्मशास्त्र और भारतीय साहित्य के आधार पर यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि अस्पृश्यता मनुष्यकृत दुर्गुण है न कि इश्वरीय कृति। वर्तमान में अस्पृश्यों की स्थिति बड़ी शोचनीय है। अत: उनकी सामाजिक दशा को सुधारने के लिए आर्थिक और सामाजिक प्रयत्न उपेक्षित है।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा दिए गए सुझाव :

शिक्षा - अम्बेडकर का विश्वास था कि शिक्षा अस्पृश्यों के सुधार में महत्वपूर्ण योगदान देगी। उन्होंने अपने अनुयायियों को सदैव ज्ञान के क्षेत्र में उच्चता तक पहुंचाने के लिए प्रेरित किया शिक्षा व्यक्ति को अपने आत्म सम्मान के प्रति जागरूक बनाती है और उन्हें बेहतर भौतिक जीवन की ओर पहुंचने में सहायता प्रदान करती है। अम्बेडकर ने ब्रिटिश शिक्षा नीति की आलोचना की है कि इसने निम्न जातियों में शिक्षा को समुचित रूप में बढ़ावा नहीं दिया। उन्होंने महसूस किया कि अंग्रेजी राज में भी शिक्षा पर उच्च जातियों का एकाधिकार जारी रहा। इसलिए उन्होंने निम्न जातियों और अस्पृश्यों को गतिशील बनाया और सीखने के कई केंद्रों की नीव रखी। अम्बेडकर अस्पृश्यों को उदार शिखा और तकनीकी शिक्षा प्रदान करना चाहते थे। वे धार्मिक सहयोग से शिक्षा दिए जाने के विरोधी थे। उन्होंने चेतावनी दी कि केवल धर्मनिरपेक्ष शिक्षा छात्रों में स्वतंत्रता और समानता के मूल्यों की प्रस्थापना कर सकती है।

आर्थिक प्रगति - अम्बेडकर ने कहा कि अस्पृश्य अपने आप को ग्रामीण समुदाय और इसकी आर्थिक जकड़न से मुक्त कर लें परम्परागत ढांचे में अस्पृश्य कोई विशेष व्यवसाय करने को बाध्य थे। वे अपने जीवनयापन के लिए हिंदू जातियों पर आश्रित थे। अम्बेडकर का हमेशा से मानना था कि अस्पृश्यों को अपने परंपरागत व्यवसाय बंद कर देने चाहिए और नई तकनीकी हासिल करनी चाहिए और नये व्यवसाय शुरू करने चाहिए। नये व्यवसाय करने में शिक्षा सहायक होगी। ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर आश्रित रहने का कोई बिन्दू ही नहीं है शहरो में बढत औद्योगिकीकरण के परिणाम स्वरूप शहरो में भरपूर रोजगार के अवसर है। यदि अस्पृश्यों के लिए गांवों में रूकने की आवश्यकता नहीं हो तो गांवों को छोड़ देना चाहिए और इसके बावजूद यदि अस्पृश्यों को गांव में रहना पड़े तो उन्हें अपने पुश्तैनी काम को छोड़ आजीविका के नये साधन ढूंढने चाहिए। इससे उनका आर्थिक सुधार होगा। अम्बेडकर का मानना था कि दलित वर्ग को अपने आप आत्म सम्मान पैदा करना चाहिए एवं सहायता की नीति उनके उत्थान की सर्वोतम नीति है। वे कठिन परिश्रम के समर्थक थे। वे मानवतावाद, सहानुभूति, परोपकार आदि के आधार पर समाज सुधारों में विश्वास नहीं करते थे। उनका मानना था कि संघर्ष द्वारा ही अपने अधिकारों को जीतना चाहिए।

राजनीतिक में सहभागिता- अम्बेडकर ने दलित वर्गों को राजनीति में

सहभागिता देने को महत्त्व दिया। अम्बेडकर ने कहा राजनीति शक्ति प्राप्त कर दलित अपनी सुरक्षा स्वयं कर सकते है। अम्बेडकर चाहते थे कि दलित राजनीतिक अधिकारों के लिए संघर्ष करे और शक्ति में पर्याप्त हिस्सा प्राप्त करें। इसलिए उन्होंने अस्पृश्यों के राजनीतिक संगठन बनायें।

अछूत स्वयं अपना सुधार करें – एक ओर जहां डॉ. अम्बेडकर ने जाति-प्रथा, वर्गाश्रम और छूआछूत का विरोध किया तथा दलितों के प्रति संवर्ग जातियों के व्यवहार पर कठोर प्रहार किया, वहीं इस बात की ओर भी स्पष्ट संकेत किया कि अछूत वर्ग अपनी वर्तमान स्थिति के लिए काफी सीमा तक स्वयं उत्तरदायी हैं। स्वयं अछूतों के कुछ कार्य और उनकी आदते ऐसी है कि वे उनमें आगे बढ़ने की प्रेरणा नहीं दे सकती। वे इस बात पर जोर देते थे कि जीवन में आत्म सम्मान की भावना विकसित होनी चाहिए। उनका सुझाव था कि दलितो को संगठित होना चाहिए। उन्हें शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए तथा अन्याय और अत्याचार के विरोध में संघर्ष करना चाहिए। वे चाहते थे कि दलित सरकारी नौकरियों में जाएं, अच्छे कार्य करें, खेती और व्यवसाय करें तथा बच्चों को अच्छी शिक्षा दें। उन्होंने महिलाओं की शिक्षा पर भी जोर दिया। वे चाहते थे कि अछूत महिलाएं साफ-सुथरी रहे, अच्छे कपड़े पहने तथा घर-परिवार को साफ सुथरा रखें।

निष्कर्ष – डॉ. अम्बेडकर का भारतीय समाज के लिए बड़ा योगदान रहा उन्होंने शोषित, दलित वर्ग को जागृत किया, संगठित किया, उन्हें उनको यथास्थिति बताई, उन्हें वाणी दी तथा संघर्ष के लिए तैयार किया। राजनीति में भूमिका के लिए प्रेरित किया और राजनीति शक्ति प्राप्त करने को कहा। दलित वर्ग को अपने पारम्परिक कार्य बंद कर नये आजीविका के साधन ढूंढने के लिए प्रेरित किया, दलित अपने आप को मजबूत स्थिति में खड़ा कर सकते है यदि वो अपने आप में सुधार करे टी.के. टोपे के अनुसार अम्बेडकर का पांडित्य तथा ज्ञान निस्संदेह उच्च था। सम्भव है कि आने वाली पीढ़िया अम्बेडकर की राजनीतिक उपलब्धियां को याद न रखें पर ज्ञान के क्षेत्र में उनकी श्रेष्ठ उपलब्धियों को भूलाया नहीं जा सकता। राजनेता, सामाजिक, क्रांतिकारी और बौद्ध धर्म के आधुनिक व्याख्याकार के रूप में डॉ. भीमराव अम्बेडकर को भूलाया जा सकता है, पर एक विद्वान के रूप में वे अमर रहेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. जनक सिंह मीना, भारतीय संविधान, राजनीतिक व्यवस्था एवं शासन प्रणाली डॉ. जनक सिंह मीना दानालपुर 2020.
2. क्रिस्तोफ जाफ्रलों: भीमराव अम्बेडकर एक जीवनी, जाति उन्मूलन का संघर्ष एवं विश्लेषण, राजकमल प्रकाशन 2019.
3. डॉ. भीमराव अम्बेडकर : भारत का संविधान – बुद्धम पब्लिशर।
4. डॉ. किरन भारती, डॉ. भीमराव अम्बेडकर के आर्थिक विचार एवं प्रासंगिकता, आकाश पब्लिकेशन एवं डिस्ट्रीबुटर्स।
5. डॉ. बी. आर. अम्बेडकर, जात पात का विनाश, बुद्धम पब्लिशर : पहला संस्करण (1 जनवरी 2019)।
6. डॉ. नरेंन्द्र जाधव, डॉ. अम्बेडकर आत्मकथा एवं जनसंवाद, प्रभात प्रकाशन।
7. एम.एल. शहारे, डॉ. भीमराव अम्बेडकर जीवन और कार्य, पब्लिशर नेशनल काउन्सिल ऑफ एजुकेशनल रिर्सच एण्ड ट्रेनिंग।
8. डॉ. परमानन्द प्रमोद कुमार, डॉ. अम्बेडकर और एक मनुवादी विश्लेषण कल्पाज पब्लिकेशन।
9. नितिश विश्वास, राष्ट्रनेश डॉ. बी. आर. अम्बेडकर, वाणी प्रकाशन।
10. www.webdunia.com.
11. https://navbharatimes.indiatimes.com

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Phytochemical Profiling of *Tinosporacordifolia* for Therapeutic Applications.

Dr. Ragini Sikarwar*

***Assistant Professor and HOD (Botany & Biotechnology) Govt. Home Science PG Lead College, Narmadapuram (M.P.) INDIA**

Abstract: *Tinosporacordifolia* (commonly known as Guduchi or Giloy) is a medicinal climbing shrub widely used in traditional medicine for its immunomodulatory, hepatoprotective, and antidiabetic effects. The therapeutic potential of the plant is linked to its rich secondary metabolites, particularly alkaloids, glycosides, steroids, and phenolics. In the present study, chemical profiling of T. cordifolia stem extracts was performed to establish a comprehensive phytochemical fingerprint. Qualitative and quantitative assays confirmed the presence of diverse bioactive compounds, while chromatographic techniques highlighted key chemical markers such as berberine, tinosporaside, and cordifolioside. The results validate the pharmacological relevance of T. *cordifolia* and emphasize the importance of standardized phytochemical profiling for ensuring efficacy and safety of herbal formulations. This study provides a baseline for further pharmacological investigations and supports the integration of T. cordifolia into evidence-based herbal therapeutics.

Keywords: *Tinosporacordifol*ia, phytochemical profiling, alkaloids, glycosides, tinosporaside, herbal medicine, therapeutic potential.

Introduction - Medicinal plants are recognized as an important source of bioactive compounds with therapeutic applications in modern and traditional medicine. Among them, *Tinosporacordifolia* (Menispermaceae), commonly known as Guduchi or Giloy, occupies a prominent position in Ayurveda and other indigenous healing systems. The plant is traditionally prescribed for treating fever, diabetes, jaundice, inflammation, and immune-related disorders due to its broad-spectrum pharmacological effects.

The pharmacological activity of T. *cordifolia* is attributed to its diverse phytoconstituents, including alkaloids, diterpenoid lactones, glycosides, steroids, and polysaccharides. Previous studies have identified bioactive compounds such as berberine, magnoflorine, tinosporaside, and cordifolioside, which exhibit antidiabetic, hepatoprotective, antioxidant, and immunomodulatory properties. These findings highlight the necessity of systematic phytochemical profiling to establish reliable chemical fingerprints that can serve as quality control tools and facilitate drug development.

Despite extensive traditional use, variability in phytochemical content due to differences in geographical location, harvesting season, and extraction techniques remains a major challenge in standardization. Therefore, chemical fingerprinting using chromatographic and spectroscopic methods provides a scientific basis for ensuring authenticity, reproducibility, and therapeutic reliability of T. *cordifolia* formulations.

The present study focuses on the phytochemical profiling of T. *cordifolia* stem extracts using standard analytical methods, with the aim of identifying key bioactive constituents and generating a reproducible chemical fingerprint. This will contribute to the pharmacological validation of the plant and strengthen its role in evidence-based herbal medicine.

Materials and Methods:

Plant Material Collection: Fresh stems of *Tinosporacordifolia* (Guduchi) were collected from healthy, mature plants during the growing season. The plant material was carefully cleaned to remove adhering soil and debris, washed with distilled water, and shade-dried at room temperature to preserve heat-sensitive compounds. The dried stems were coarsely powdered using a mechanical grinder and stored in airtight containers until further use.

Preparation of Extracts: The powdered stem material was subjected to Soxhlet extraction using ethanol as the primary solvent, chosen for its ability to dissolve both polar and non-polar phytoconstituents. Extraction was carried out for 48 hours, after which the solvent was concentrated under reduced pressure using a rotary evaporator. The concentrated extract was dried to a semisolid consistency, weighed, and stored in sterile vials at 4°C until analysis.

Preliminary Phytochemical Screening: Standard phytochemical assays were performed to qualitatively

determine the presence of major classes of secondary metabolites, including alkaloids, flavonoids, glycosides, tannins, saponins, phenolics, and steroids. Colorimetric and precipitation-based tests were employed, such as Dragendorff's reagent for alkaloids, $AlCl_3$ assay for flavonoids, and ferric chloride test for phenolics.

Chromatographic Analysis: High-Performance Thin-Layer Chromatography (HPTLC) and High-Performance Liquid Chromatography (HPLC) were carried out for chemical fingerprinting. For HPTLC, methanolic extracts were spotted on silica gel plates, developed in appropriate solvent systems, and visualized under UV light and after derivatization with anisaldehyde-sulfuric acid reagent. For HPLC, extracts were dissolved in methanol, filtered through 0.22 µm filters, and injected into a C18 column. A gradient elution system was used, and peaks were monitored at 254 nm and 280 nm wavelengths. Standard compounds, including berberine and tinosporaside, were run in parallel for comparison.

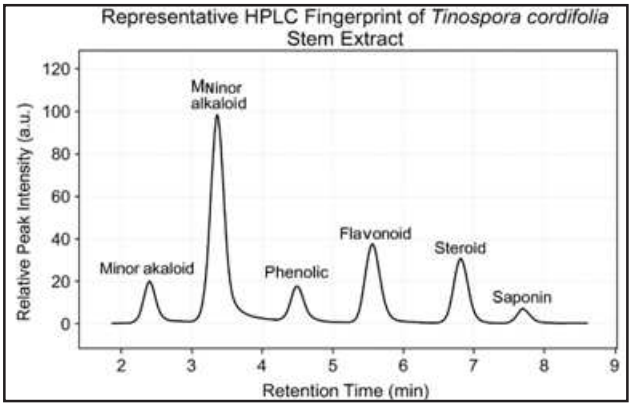
Spectroscopic Analysis: UV–Visible spectroscopy was employed to detect characteristic absorption bands of phenolic and flavonoid compounds. Fourier Transform Infrared Spectroscopy (FTIR) was used to identify functional groups present in the extract, particularly those corresponding to lactones, hydroxyl groups, and glycosidic linkages.

Statistical Analysis: All experiments were performed in triplicate, and data are presented as mean ± standard deviation (SD). The reproducibility of chromatographic and spectroscopic profiles was assessed to ensure reliability of the fingerprint.

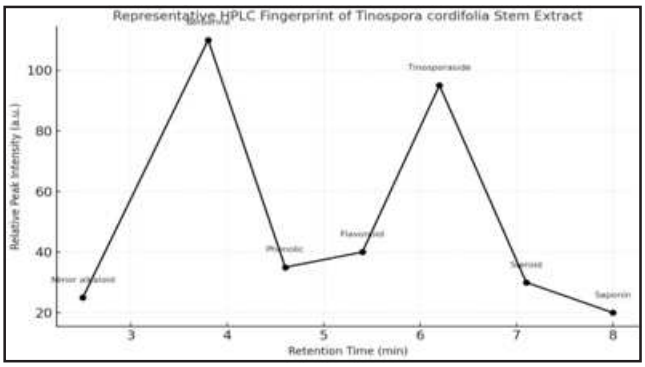
Results and Discussion:

Phytochemical Profile of *Tinosporacordifolia* Stems: Preliminary phytochemical screening confirmed the presence of diverse secondary metabolites in the ethanolic stem extract of T. cordifolia. Strongly positive tests were observed for alkaloids, glycosides, phenolics, flavonoids, and steroids, while tannins and saponins were present in moderate to low amounts. These findings align with previous reports emphasizing the pharmacological importance of the plant's rich phytochemical repertoire.

Table 1 (see in next page)



Chromatographic Fingerprinting: HPTLC analysis produced multiple well-resolved bands under UV and visible light, with Rf values corresponding to standard compounds such as berberine and tinosporaside. HPLC chromatograms further confirmed the presence of major phytoconstituents. Prominent peaks were observed in the retention range of 3–7 minutes, which matched the standards for berberine (~3.8 min) and tinosporaside (~6.2 min). Several minor peaks were also detected, indicating the complex phytochemical nature of the extract.



Spectroscopic Analysis: UV–Vis spectra displayed strong absorbance peaks around 270–280 nm, characteristic of phenolics and flavonoids. FTIR spectra revealed functional groups corresponding to hydroxyl (O–H), carbonyl (C=O), and glycosidic linkages, further supporting the presence of phenolic acids, flavonoids, and glycosides in the extract.

Comparative Insights with Previous Reports: The phytochemical composition observed in this study is in agreement with earlier research documenting berberine, magnoflorine, and tinosporaside as key chemical markers of T. cordifolia. However, the relative abundance of these compounds varied slightly, likely due to differences in extraction solvents and environmental growth conditions. This highlights the importance of standardization through fingerprinting to ensure therapeutic reliability.

Pharmacological Implications: The identified compounds provide scientific support for the traditional uses of T. cordifolia. Berberine and magnoflorine are associated with hepatoprotective and antimicrobial properties, while tinosporaside and cordifolioside demonstrate potent antidiabetic and immunomodulatory effects. The presence of phenolic acids and flavonoids suggests additional antioxidant and anti-inflammatory roles. Collectively, these findings underscore the multifunctional therapeutic potential of T. *cordifolia* stem extracts and justify its use in evidence-based herbal medicine.

Conclusion: The present study highlights the phytochemical diversity of *Tinosporacordifolia*, a plant recognized for its profound medicinal potential. HPLC profiling revealed the presence of key secondary metabolites, including alkaloids (berberine), glycosides (tinosporaside), phenolics, and flavonoids, which are known to contribute to its wide spectrum of pharmacological effects

such as immunomodulatory, antioxidant, and hepatoprotective activities. These findings are consistent with previous reports that establish T. cordifolia as a rich source of bioactive compounds beneficial in chronic disease management (Patel & Mishra, 2012; Singh et al., 2014).

The presence of multiple phytochemicals underscores its value as a therapeutic resource in traditional and modern medicine. Further work, including bioassay-guided fractionation and in vivo studies, is warranted to isolate active constituents and confirm their biological efficacy (Saha& Ghosh, 2012). Overall, the current research strengthens the scientific basis for the use of T. cordifolia in pharmacognosy and drug discovery programs.

References:-

1. Patel, M. B., & Mishra, S. (2012). Hypoglycemic activity of alkaloidal fraction of Tinosporacordifolia. Phytomedicine, 19(1), 12–19. https://doi.org/10.1016/j.phymed.2011.06.002
2. Saha, S., & Ghosh, S. (2012). Tinosporacordifolia: One plant, many roles. Ancient Science of Life, 31(4), 151–159. https://doi.org/10.4103/0257-7941.107344
3. Singh, S. S., Pandey, S. C., Srivastava, S., Gupta, V. S., Patro, B., & Ghosh, A. C. (2014). Chemistry and medicinal properties of Tinosporacordifolia (Guduchi). Indian Journal of Pharmacology, 35(2), 83–91. https://doi.org/10.4103/0253-7613.64494

Table 1. Phytochemical constituents identified in *Tinosporacordifolia* stem extract

Phytochemical Class	Test/Detection Method	Result (Presence/ Absence)	Major Identified Compounds	Pharmacological Relevance
Alkaloids	Dragendorfi's reagent	+++	Berberine Magnoflorine	Antimicrobial, hepatoprotective
Glycosides	Keller-Killiani test	+++	Tinosporaside Cordifolioside	Antidiabetic, immunomodulatory
Phenolics	Folin-Ciocalteu reagent/UV	++	Gallic acid derivatives	Antioxidant, anti-inflammartory
Flavonoids	$AlCl_3$ colorimetric assay	++	Quercetin Rutin	Free radical scavenging,
Steroids	Salkowski test	++	β-sitosterol	cardioprotective
Tannins	Ferric chloride test	+	Hydrolysable tannins	Antimicrobial, astringent

(+++ = strongly present, ++ = moderately present, + = mildly present)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम (ITEP) की आवश्यकता एवं चुनौतियॉं : (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सन्दर्भ में)

डॉ. उमा श्रीवास्तव*

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय अध्यापक शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – शिक्षक राष्ट्र निर्माता के रूप में अपनी भूमिका निभाते हैं। वे अपने विद्यार्थियों को न केवल गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा प्रदान करते हैं वरन् वे मार्गदर्शक, परामर्शदाता, मनोवैज्ञानिक, प्रेरक आदि के रूप में भी अपनी भूमिका अदा करते हैं। अत: शिक्षण व शैक्षिक गुणों को प्रभावी बनाने के लिए शिक्षक शिक्षा अत्यन्त महत्वपूर्ण है। शिक्षक शिक्षा के माध्यम से भावी शिक्षकों को उन प्रक्रियाओं से अवगत् कराया जाना आवश्यक है, जिनके द्वारा उनमें शिक्षकीय दृष्टिकोण, शिक्षण विधियाँ, शिक्षण कौशल, आवश्यक ज्ञान और उनके प्रस्तुतीकरण का कौशल निर्मित हो सके। इन दक्षताओं और क्षमताओं के विकास से ही वे गुणवत्ता पूर्ण शिक्षण व चुनौतियों का सामना करने में सक्षम हो सकेगें।

इन आवश्यकताओं को विचारण में लेकर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षक शिक्षा के पाठ्यक्रम में बदलाव को आवश्यक माना है। नीति की सिफारिशों के अनुसार शिक्षक शिक्षा के लिए बहुविषयक/बहुविषयक इनपुट के साथ उच्चत्तार गुणवत्ता युक्त विषयवस्तु और शैक्षणिक प्रक्रियाओं की आवश्यकता होती है। नीति की सिफारिशों के अनुसार पाठ्यक्रम में बदलाव के साथ–साथ मनोविज्ञान, प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा, बुनियादी साक्षरता और संख्यात्मक ज्ञान, के अतिरिक्त समाजशास्त्र, भारत का ज्ञान, मूल्यपरक ज्ञान, कला, विज्ञान और इतिहास आदि विषयों का समावेश किया जाना चाहिए।

अत: नीति के अनुसार एकल शिक्षक शिक्षा संस्थानों को बहुविषयक संस्थानों के रूप में बदलकर दो वर्ष के स्थान पर 4 वर्षीय एकीकृत शिक्षक प्रशिक्षण के रूप में संचालित करना होगा।

नीति की इन सिफारिशों के अनुसार शिक्षक शिक्षा के पाठ्यक्रम, अवधि व प्रवेश नियम में परिवर्तन से शिक्षक शिक्षा, शैक्षिक गुणवत्ता आदि पर क्या प्रभाव पड़ेगा? इसे जानने के लिए शोधकर्ता द्वारा एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम (**Integrated Teacher Education Programme, ITEP**) के प्रति विद्यार्थियों/छात्राध्यापकों/अकादमिक सदस्यों के विचारों का सर्वेक्षण किया गया। जिसके लिए शोधकर्ता द्वारा स्व निर्मित प्रश्नावली का निर्माण कर प्रशासित किया गया।

प्राप्त निष्कर्षों में अधिकांश न्यादर्शों का दृष्टिकोण ITEP के प्रति सकारात्मक पाया गया।

शब्द कुन्जी– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, शिक्षक शिक्षा, एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम।

प्रस्तावना – राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्देश्य 21 वीं सदी में शिक्षा के स्तर को ऊचाईयों में ले जाना है। वर्तमान में शिक्षा के पाठ्यक्रम का ढ़ांचा 10+2 है किन्तु राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की सिफारिशों के अनुसार इसमें परिवर्तन कर पाठ्यचर्या और शिक्षण–शास्त्रीय आधार पर 5+3+3+4 की नयी पुनर्गठित व्यवस्था करने की बात कही गई है। इसके अनुसार बुनियादी शिक्षा (5 वर्ष), प्रारंभिक शिक्षा (3 वर्ष), माध्यमिक (3 वर्ष) व उच्च माध्यमिक (4 वर्ष) के ढ़ाचे की रचना की गई है। अत: नीति का विजन ऐसे उत्कृष्ठ शिक्षक तैयार करना है, जो इन ढ़ाचों के अनुरूप शिक्षण पद्धतियों को आत्मसात कर विद्यार्थियों को गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा प्रदान कर सकें।

नीति के अनुसार उत्कृष्ठ शिक्षकों की तैयारी के लिए 4 वर्षीय शिक्षक शिक्षा का पाठ्यक्रम तैयार किया जाना चाहिए, जिसमें वे विद्यार्थी प्रवेश ले सकें जो अपना कैरियर शिक्षक के रूप में निभा सकें। यह पाठ्यक्रम भावी शिक्षकों के लिए उस सेतु का कार्य करेगा, जिससे वे उन सभी प्रक्रियाओं एवं गतिविधियों को आत्मसात कर सकेगें जो गुणवत्ता पूर्ण शिक्षण के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है। कक्षा 12वीं के बाद जो विद्यार्थी शिक्षक के रूप में अपना कैरियर बनाना चाहते हैं वे एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम में प्रवेश ले सकेगें।

समस्या कथन – एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम (ITEP) की आवश्यकता एवं चुनौतियॉं : (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सन्दर्भ में)

अध्ययन के उद्देश्य –

1. NEP 2020 की सिफारिशों में ITEP को जानना।
2. ITEP की आवश्यकताओं को जानना व सहमत होना।
3. ITEP के पाठ्यक्रम की बारीकियों को जानना।

परिभाषायें –

1. **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (**NEP 2020)– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, 21 वीं शताब्दी की पहली शिक्षा नीति है जिसका प्रमुख लक्ष्य देश के विकास के साथ–साथ प्रत्येक व्यक्ति में निहित रचनात्मक क्षमताओं के

विकास पर जोर देना है। यह नीति इस सिद्धांत पर आधारित है कि शिक्षा से न केवल साक्षरता और संख्याज्ञान जैसी 'बुनियादी क्षमताओं के साथ-साथ उच्चत्तर स्तर की तार्किक और समस्या-समाधान सम्बन्धी संज्ञानात्मक क्षमताओं का विकास होना चाहिए बल्कि नैतिक, सामाजिक और भावनात्मक स्तर पर भी व्यक्ति का विकास होना आवश्यक है।'

2. शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम – यह ऐसा शैक्षिक कार्यक्रम है, जिसमें व्यक्ति को पूर्व-प्रथमिक से उच्च शिक्षा स्तर तक शिक्षण कार्य हेतु शिक्षित, प्रशिक्षित और शोध कार्य कराया जाता है। इस कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य शिक्षण के प्रति उनकी दक्षताओं और क्षमताओं का विकास करना है।

3. एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम – यह एक विशेष शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम है जिसमें शिक्षक के रूप में कैरियर बनाने वाले विद्यार्थी कक्षा 12वीं के पश्चात् 4 वर्षीय बी.एड. में प्रवेश ले सकेंगे। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत बहुविषयक/बहुविषयक इनपुट के साथ उच्चत्तर गुणवत्ता युक्त विषयवस्तु और शैक्षणिक प्रक्रियाओं का ज्ञान भी प्राप्त कर सकेगें। इस कार्यक्रम के पाठ्यक्रम में शिक्षाशास्त्र के अतिरिक्त विज्ञान, कला, वाणिज्य आदि विषयों का भी समावेश होता है, जिससे अध्ययनरत् विद्यार्थियों को अन्य रूचि के विषयों का भी ज्ञान प्राप्त होता है।

न्यादर्श – प्रस्तुत अध्ययन के लिए निम्नानुसार न्यादर्शों का चयन किया गया –

1. कक्षा 12वीं में अध्ययनरत् 100 विद्यार्थी
2. वर्तमान मे द्विवर्षीय बी.एड. पाठ्यक्रम में अध्ययनरत् तृतीय सेमेस्टर के 100 छात्राध्यापक
3. द्विवर्षीय बी.एड. पाठ्यक्रम में शिक्षण कार्य में संलग्न 20 अकादमिक सदस्य

प्रविधि – प्रस्तुत अध्ययन **एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम (ITEP) की आवश्यकता एवं चुनौतियॉं : (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के सन्दर्भ में)** के लिए शोधकर्ता द्वारा सर्वे विधि का उपयोग किया गया। इसके लिए शोधकर्ता द्वारा स्वनिर्मित शोध उपकरणों का उपयोग किया गया, जो कि निम्नानुसार हैं-

1. 12वीं के विद्यार्थियों के लिए प्रश्नावली – इसमें शिक्षक पेशे में कैरियर बनाने सम्बन्धी उनकी रूचि आधारित प्रश्नों का समावेश, एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम व NEP 2020 की सिफारिशों पर आधारित ज्ञान सम्बन्धी प्रश्न, आगामी वर्षो में कार्यक्रम लागू किये जाने सम्बन्धी प्रश्नों आदि का समावेश किया गया।

2. वर्तमान में द्विवर्षीय पाठ्यक्रम में अध्ययनरत् तृतीय सेमेस्टर छात्राध्यापकों के लिए प्रश्नावली – इसमें द्विवर्षीय बी.एड. पाठ्यक्रम की अवधि में वृद्धि सम्बन्धी, शैक्षिक कार्य की बारीकियों सम्बन्धी तथा द्विवर्षीय पाठ्यक्रम व एकीकृत शिक्षक शिक्षा के पाठ्यक्रम में अन्तर सम्बन्धी आदि प्रश्नों का समावेश किया गया।

3. द्विवर्षीय बी.एड. पाठ्यक्रम में शिक्षण कार्य में संलग्न अकादमिक सदस्यों के लिए प्रश्नावली – इसमें एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम की आवश्यकता एवं लागू किये जाने सम्बन्धी प्रश्न, विभिन्न विषयों के समावेश के साथ-साथ प्रत्येक डिग्री कालेजों में संचालित करने, प्रायोगिक व इन्टर्नशिप में वृद्धि सम्बन्धित प्रश्नों आदि का समावेश किया गया।

आंकड़ों का विश्लेषण – प्रस्तुत अध्ययन हेतु तैयार प्रश्नावलियों का प्रशासन किया गया प्राप्त। आंकड़ों की तालिकाओं का निर्माण कर सांख्यिकी के लिए प्रतिशत में गणना कर विश्लेषण किया गया।

1. 12वीं के विद्यार्थियों की प्रश्नावली व अभिमत का परिणाम

क्र.	प्रश्न	हाँ	प्रति	नहीं	प्रति
1.	क्या आप शिक्षक के रूप में अपना कैरियर बनाना चाहते हैं ?	78	78	22	22
2.	क्या आप शिक्षक की जिम्मेदारियों को पूर्ण करने में स्वयं को सक्षम समझते हैं ?	82	82	18	18
3.	क्या आप द्विवर्षीय बी.एड. कार्यक्रम के बारे में जानते हैं ?	90	90	10	10
4.	क्या आप NEP 2020 में शिक्षक शिक्षा की सिफारिशों के बारे में जानते हैं ?	70	70	30	30
5.	NEP 2020 की सिफारिशों के अनुसार 12वीं के बाद Integrated Teacher Education Programme (ITEP) 4 वर्ष का होना चाहिए, आपकी राय....	70	70	30	30
6	क्या एकीकृत शिक्षक शिक्षा के पाठ्यक्रम में, शिक्षाशास्त्र के अतिरिक्त विज्ञान, कला, वाणिज्य आदि विषयों का समावेश होना चाहिए ?	85	85	15	15
7.	शिक्षण की बारीकियों को क्या ITEP द्वारा बी.एड. करने पर बेहतर सीख पायेगें ?	65	65	35	35
8.	क्या ITEP के पाठ्यक्रम में ICT, Digital शिक्षा व Smart कक्षाओं को अधिकता में शामिल किया जाना चाहिए ?	92	92	8	8
9.	क्या आपको लगता है कि ITEP द्वारा बी.एड. करने पर नौकरी प्राप्त करने की सम्भावनायें अधिक होगीं ?	82	82	18	18
10.	क्या आगामी वर्षो में इसे लागू किया जाना चाहिए ?	90	90	10	10

2. छात्राध्यापकों की प्रश्नावली व अभिमत का परिणाम

क्र.	प्रश्न	हाँ	प्रति.	नहीं	प्रति.
1.	क्या आपने ग्रेजुएशन किया है ?	100	100	–	–
2.	क्या शिक्षक बनना आपका पूर्व निर्धारित लक्ष्य था ?	70	70	30	30
3.	तीन वर्ष ग्रेजुएशन के पश्चात् द्विवर्षीय बी.एड. करना उचित है, आपकी राय	35	35	65	65
4.	क्या वर्तमान में द्विवर्षीय पाठ्यक्रम से आप संतुष्ट हैं ?	30	30	70	70

5.	क्या शिक्षण की बारीकियों को जानने के लिए यह पाठ्यक्रम पर्याप्त है ?	40	40	60	60
6.	यदि यह पाठ्यक्रम चार वर्षीय का होता, तो क्या आप शिक्षण की बारीकियों को अधिक सीखते ?	88	88	12	12
7.	NEP 2020 में आप शिक्षक शिक्षा की सिफारिशों के बारे में जानते हैं ?	90	90	10	10
8.	NEP 2020 के अनुसार एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम Integrated Teacher Education Programme (ITEP) से सहमत हैं ?	92	92	18	18
9.	क्या दूसरे विद्यार्थियों को एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम Integrated Teacher Education Programme (ITEP) से बी.एड. करने की सलाह देगें ?	94	94	06	06
10.	क्या आगामी वर्षो में इसे लागू किया जाना चाहिए ?	89	89	11	11

3.द्विवर्षीय पाठ्यक्रम में अध्यापन कराने वाले अकादमिक सदस्यों की प्रश्नावली व अभिमत का परिणाम

क्र.	प्रश्न	हाँ	प्रति.	नहीं	प्रति.
1.	क्या द्विवर्षीय बी.एड. पाठ्यक्रम शिक्षण की बारीकियों को जानने के लिए पर्याप्त है ?	4		16	
2.	NEP 2020 में शिक्षक शिक्षा के लिए एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम Integrated Teacher Education Programme(ITEP) की सिफारिशों से आप सहमत हैं ?	19	95	01	05
3.	क्या ITEP द्वारा शिक्षण की बारीकियों को गहराईयों से सीखा जावेगा ?	19	95	01	05
4.	ITEP बेहतर शिक्षकों बनाने के लिए आवश्यक है, क्या आप सहमत हैं....	19	95	01	05
5.	क्या एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम Integrated Teacher Education Programme(ITEP) में अन्य विषयों विज्ञान, कला, वाणिज्य आदि के समावेश से आप सहमत हैं ?	16	80	04	20
6.	क्या ITEP के पाठ्यक्रम में ICT, Digital शिक्षा व Smart कक्षाओं को अधिकता में शामिल किया जाना चाहिए ?	19	95	01	05
7.	क्या ITEP में इन्टर्नशिप की अवधि बढ़ाई जानी चाहिये ? यदि हाँ तो कितनी माह .....6, 9, 12 माह	19	95	01	05
8.	क्या द्विवर्षीय बी.एड. पाठ्यक्रम के स्थान पर एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम Integrated Teacher Education Programme (ITEP) को प्राथमिकता दी जानी चाहिये ?	20	100	–	–
9.	क्या ITEP को अन्य कोर्सेस की भांति सभी डिग्री कालेजों में लागू किया जाना चाहिए ?	20	100	–	–
10.	क्या आप विद्यार्थियों को ITEP के द्वारा बी.एड. करने की सलाह देगें ?	20	100	–	–

अध्ययन के निष्कर्ष – प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्यवार निष्कर्ष निम्नानुसार हैं–

1. 70 प्रतिशत विद्यार्थी व 90 प्रतिशत छात्राध्यापक NEP 2020 की सिफारिशों से परिचित हैं, जबकि 95 प्रतिशत अकादमिक सदस्य इससे परिचित हैं।
2. 70 प्रतिशत विद्यार्थी ITEP की आवश्यकताओं को जानते हैं और 84 प्रतिशत शिक्षक के रूप में अपना कैरियर बनाना चाहते हैं, जबकि 92 प्रतिशत छात्राध्यापक और 95 प्रतिशत अकादमिक सदस्य ITEP की सहमति तथा आवश्यक मानते हैं।
3. ITEP के पाठ्यक्रम की बारीकियों को 65 प्रतिशत विद्यार्थी, 88 प्रतिशत छात्राध्यापक तथा 95 प्रतिशत अकादमिक सदस्य जानते हैं।

अध्ययन के अन्य निष्कर्ष :

1. 85 प्रतिशत विद्यार्थियों व 80 प्रतिशत अकादमिक सदस्यों के अनुसार पाठ्यक्रम में शिक्षाशास्त्र के अतिरिक्त विज्ञान, कला, वाणिज्य आदि विषयों का समावेश किया जाना चाहिए ताकि विद्यार्थी अन्य क्षेत्रों में भी अपना कैरियर बना सकें।
2. 92 प्रतिशत विद्यार्थियों एवं 95 प्रतिशत अकादमिक सदस्यों के अनुसार ITEP के पाठ्यक्रम में ICT, Digital शिक्षा व Smart कक्षाओं को अधिकता में शामिल किया जाना चाहिए।
3. 82 प्रतिशत विद्यार्थियों ने ITEP द्वारा बी.एड. करने पर नौकरी प्राप्त करने की सम्भावना जताई।
4. 94 प्रतिशत छात्राध्यापकों व 100 प्रतिशत अकादमिक सदस्यों ने अन्य विद्यार्थियों को खढएझ द्वारा बी.एड. करने की सलाह दी।
5. 90 प्रतिशत विद्यार्थियों, 89 प्रतिशत छात्राध्यापकों एवं 100 प्रतिशत अकादमिक सदस्यों ने इसे तत्काल लागू किये जाने तथा अकादमिक सदस्यों द्वारा समस्त डिग्री कालेजों में प्रारंभ किये जाने पर सहमति जताई।
6. 100 प्रतिशत अकादमिक सदस्यों द्वारा ITEP के लिए इन्टर्नशिप की अवधि 6 माह व द्विवर्षीय पाठ्यक्रम के स्थान पर एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम ITEP को प्राथमिकता प्रदान करने पर सहमति जताई।

चुनौतियाँ – राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में शिक्षक शिक्षा को एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम का स्वरूप प्रदान करने में निम्नानुसार चुनौतियों

की सम्भावनाऐं हैं –

1. **चयन एवं प्रवेश प्रक्रिया –** एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम में 12वीं के पश्चात् चयन किये जाने वाले विद्यार्थियों की प्रवेश प्रक्रिया किस प्रकार से की जावेगी ? प्रवेश परीक्षा अथवा मेरिट के आधार पर या अन्य किसी प्रक्रिया को अपनाया जावेगा।

2. **विषयों को प्राथमिकता –** कक्षा 12वीं में अध्ययनरत् विद्यार्थी विज्ञान, कला, वाणिज्य आदि विषयों का अध्ययन करते हैं। इस प्रकार वे खढएझ में बी.एससी.बी.एड., बी.ए.बी.एड., बी.कॉम.बी.एड. की शिक्षा प्राप्त कर पायेगें, किन्तु वर्तमान में समस्त डिग्री कालेजों में उक्त सभी विषयों की मान्यता न होने के कारण विद्यार्थी वंचित हो सकते हैं।

3. **अकादमिक सदस्यों की कमी –** बी.एड. प्रशिक्षण और प्रायोगिक कोर्स है, जिसमें अनुभवी और विषयों के ज्ञान रखने वाले अकादमिक सदस्यों की आवश्यकता होगी। वर्तमान में डिग्री कालेजों मे ंबी.एड. शिक्षण हेतु अकादमिक सदस्यों का अभाव होगा। अत: वैकल्पिक व्यवस्था की आवश्यकता भी की जानी होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. https://taxguru.in/corporate-law/national-education-policy-2020.html
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (हिन्दी)
3. मनश प्रतिम बोरा, एम.एड. स्टूडेन्ट, डिपार्टमेंट ऑफ एजुकेशन, डिब्रूगढ़ युनिवर्सिटी, डिब्रूगढ़, आसाम, Perception of B.Ed. Students of Dibrugarh University Towards Integrated Teacher Education Programme (ITEP) in the Light of NEP2020. An Evidence-Based Study.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

भारतीयसंस्कृते: तत्त्वचिन्तनम्

डॉ. पंकज कुमार सिंह*

* साह. आचार्य (संस्कृत साहित्य) श्रीमती एल.डी.एस.पी.ए.एस.कॉलेज, बरुन्दनी (राज.) भारत

प्रस्तावना – नमे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यप:।
नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुत:॥(वेदे)

सेयं वैदिकी संस्कृति: सर्वोत्तमा प्रथमा संस्कृति: इति वेदे संस्तूयते–

सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा। (यजु.7/14)

भारतीयानामाचारव्यवहारसमाजराज्यव्यवस्था श्रुतिप्रामाण्यमूला विद्यते। ऐतरेय ब्राह्मणेशासनविषयिणी घोषणा वर्तते। यथा –**इ स्वस्ति। साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यंपारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यं आधिपत्यमयं समन्तपर्यायो स्यात्, सार्वभौम: सार्वायुष:आन्ताद्, आपराधात् पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराड् इति।**

ब्राह्मणभागेषु विस्तरेण वैदिकी शासनप्रणाली– 1. साम्राज्यम्, 2. भोज्यम्, 3. स्वाराज्यम्,4.वैराज्यम्, 5.महाराज्यम्, 6. आधिपत्यम्, 7. सामन्तपर्यासा, 8. पारमेष्ठ्यम्, 9. जानराज्यम्,ब्रह्मचर्येण राजा राष्ट्रपुरुषो वा राज्याधिक्रियते। अत एव कौटिल्याचार्योऽपि सुखस्य मूलंधर्म: धर्मस्य मूलमर्थ: अर्थस्य मूलं राज्यम् राज्यस्य मूलमिन्द्रियजय: तन्मूलं विनय:तन्मूलं वृद्धोपसेवेत्यादिकमुजहार।

सर्वे जना: संस्कृतिपरिपालका भवन्तु इति निर्देष्टव्यम्। संस्कृतिपालनार्थमेव वस्तुत:कस्यापि देशस्य राष्ट्रस्य वास्तित्वम् उपयुज्यते, यत: कस्यापि देशस्य सर्वोच्चो यो निधि:स संस्कृति: निधि: । वैदिक–आदर्शान् गृहीत्वा भारतीयसंस्कृते: श्रद्धापरायणा अनुयायिनै: पोषकाश्च जायेरन्। अस्मिन् देशे प्रचलतां मतमतान्तराणां सम्प्रदायानाञ्च मूले स्थिरीभूयएषा निषीदति, अत एव सर्वेषामपि सम्प्रदायानां प्रतिपाद्यो विषय: एक: स एव यंभारतीयवैदिकसंस्कृति: अभिनन्दति। भारतीयवैदिकसंस्कृतौ निष्कामकर्मवीचय: सर्वत्रउच्छलन्त्य: प्रवहन्त्य: च संलक्ष्यन्ते–

तस्मादसक्त: सततं कार्यं कर्म सदाचर
असक्तोह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पूरुष:॥
आचार: परमो धर्म: श्रुत्युक्त: स्मार्त एव च।
तस्मादस्मिन् सदायुक्तो नित्यं स्यादात्मवान् द्विज:॥(मनुस्मृ.1/108)

संस्कृतभाषा भारतस्य अपूर्वा निधि:। वर्तमानराष्ट्रियचेतनाया: दृष्ट्यापि संस्कृतमेव सामान्यत: वर्धमानं दृश्यते। भारतीयसंस्कृति: संस्कृतभाषायां संनिहिता: सन्ति। वर्तमान–समयेऽपि प्रशासनिकरूपेण अस्य देशस्य नाम स्वीकृतं वर्तते। परञ्च **सत्यमेव जयते**इति उपनिषद् वाक्यं सैद्धान्तिकरूपेण स्वीकृतं जातम्। **वन्देमातरम्, जनगणमन**– इतिराष्ट्रीयगीते **बकिमचन्द्रप्रणीतमेवं रवीन्द्रनाथकृतं प्रायेण संस्कृतपदै:** एव अन्वितं विद्यते। आकाशवाण्याप्रयुक्त: आदर्शवाक्यम् –**बहुजनहिताय बहुजनसुखाय**, दूरदर्शनेन **सत्यं शिवंसुन्दरम्** चिकित्सालयेषु **सर्वे सन्तु निरामया:,** भारतीयजीवनवीमानिगमेन–**योगक्षेमंवहाम्यहम्,** जलसेनया–**शं नो वरुण:,** विदेशनीते: **पञ्चशीलम्** एवं अनेकानि चआदर्शवाक्यानि एवमेव अन्यैरपि प्रशासनिक विभागै: स्वीकृतानि आदर्शवाक्यानि विद्वद्भि:प्रणीतेभ्य: संस्कृतग्रन्थेभ्य: उद्धृतानि विद्यन्ते। इत्थं ज्ञायते यत् **संस्कृतिर्मूलं संस्कृतम्**सर्वै: भारतीयजनै: समादृतं वर्तते।

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्य: कृत:।
ऊरु तदस्य यद्वैश्य: पद्भ्यां शूद्रोऽजायत॥ (पुरुषसूक्ते)

वेदानां वेदाङ्गानां च अध्ययनाध्यापनं, यजनयाजनं दानं प्रतिग्रहश्च ये जना: कुर्वन्ति ते ब्राह्मणवर्णे समायान्ति। यथोक्तं मनुस्मृते: एवं च गीतायाम् –

अध्ययनाध्यापनं यजनं याजनं तथा।
दानं प्रतिग्रहश्चैव ब्रह्मकर्म स्वभावजम्॥ (मनु.1./175)
शमो दमस्तप: शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानविज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्॥(गीता 18/42)

देशस्य समाजस्य चसंरक्षणं क्षत्रियजनानां कर्त्तव्यम्। देशस्य जनतायाश्च मनोरञ्जन–

त्वादेव राजा राजते। यथोच्यते गीतायाम् –

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्॥(गीता 18/43)

कृषिर्गोरक्षा वाणिज्यं च वैश्यवर्णानां प्रमुखं कार्यं विद्यते। **कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यंवैश्यकर्म स्वभावजम्** (गीता 18/44), एतेषां वर्णत्रयाणां जनानां सेवाकार्य शारीरिकश्चकार्य शूद्रवर्णानां प्रधानं कृत्यं वर्तते। **परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम्** (गीता 18/44), एवं स्वकार्यानुसारं जना: स्ववर्णं समाश्रयन्ति।

वैदिकसंस्कृते: सामाजिकं जीवनम् –वैदिक कालिक: समाज: पितृप्रधान: आसीत्।पिता एव सर्वेषां गृहाणां नेता पुरकर्त्ता च आसीत्। स्त्री– पुत्र–पुत्री –वध्वादीनां जीवनंतस्यैव छत्रच्छायायां सुखेन व्यतीतोऽभवत्। आर्य–दस्यु–भेदेन समाज: द्विधा विभक्तोऽभूत्।आर्या: आस्तिक– धार्मिक–सदाचारदिगुणसमन्विता अभवन्। दस्यव: नास्तिक–अधार्मिक–सदाचारादिरहिता शिल्पकर्मनिपुणा: अभवन्। ब्राह्मण–क्षत्रिय–वैश्यशूद्रप्रभेदेन समाज: वर्णचतुष्टये विभक्त: आसीत्। अध्ययन–अध्यापनं, यजनं याजनं च ब्राह्मणानां मुख्यं कर्म। देशरक्षा, राज्यसंचालनं, न्यायदण्डव्यवस्था च क्षात्रं कर्म। वाणिज्यं कृषि :– गोरक्षाच वैश्यानां कर्म। शिल्पविधानं सेवाकार्य च शूद्राणां कर्म। समाजे नारीणां गौरवास्पदं स्थानमासीत्। वैदिकमन्त्रेषु वीरपुत्राणां प्रसूतये देवतानां भव्या प्रार्थना कृताऽस्ति यथा–

यथाहं शत्रुहोऽसान्यसपत्न: सपत्नहा।(अथर्ववेद-1/29/9)

विवाहकालस्य इयं प्रार्थनाऽस्ति -

हे इन्द्रदेव! इमां स्त्रीं दशपुत्रासन् देहि-
दशस्यां पुत्रानाधेहि पतिमेकादशं कृधि।

ऋग्वेदे स्वदुहितु: वरान्वेषणे सफलोऽभवत् -(ऋग्.10/85/45)

पितानत्र दुहितु: सेकमृज्जन् संशगम्येन मनसादधन्वे।(ऋग्.3/3/1/1)

वैदिकसंस्कृते: आर्थिकं जीवनम् - वैदिककाले आर्थिकजीवनस्य आधार: कृषि:,पशुपालनादिकं च उपलभ्यते। कृषिकर्मणि वृषभा: प्रायुज्यन्त । भूमिसेचनसाधनानि नदी-कूप- जलाशय-कुल्यादीनि अभूवन्। अन्नेषु गोधूम-यव- व्रीहि-चणक-माष-तिलादयो मुख्या:।

धृति: क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रह:।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।(मनु.6/92)

जगद्धारकाणि मूलतत्त्वानि यमाख्यया व्याख्यातानि शास्त्रेषु धर्मपदवाच्यानि।

तदेवोच्यचते-

धारणाद्धर्म इत्याहुर्धर्मो धारयते प्रजा:।
य: स्याद् धारणसंयुक्त: स धर्म इति निश्चय:।।(योग.)

यमस्तु व्याख्याता योगदर्शने - अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमा: (योग.2/30) अर्थात् अहिंसाया: समाश्रयम्, सत्यस्य पालनम्, अस्त्येयवृत्त्या आश्रय:, ब्रह्मचर्य-व्रतस्य अनुष्ठानम्, अपरिग्रहव्रतस्य पालनं च यम इत्युच्यते। जीवनस्य सर्वेषु क्षेत्रेषु धर्मस्य प्राधान्यं स्वीकरोति। अस्माद् कारणाद् एव आशावादस्य अपि प्रबलता वर्तते।

तस्मादेता: सदा पूज्या भूषणाच्छादनाशनै:।
भूतिकामैर्नित्यं सत्कारेपूत्सवेषु च।।(मनु.3/59)

योषिति सन्तुष्टिमुपागतायां प्रसन्नायां च सत्यां तत्कुलं रोचते वर्धते च। यथा-

स्त्रियां तु रोचमानायां सर्व तद् रोचते कुलम्।
तस्यां त्वरोचमानायां सर्वमेव न रोचते।। (मनु.3/62)

यत्र दम्पत्यो: सामञ्जस्यं परस्पर-सन्तुष्टिश्च तत्रैव कल्याणाधिवास:। यथा-

सन्तुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम्।। (मनु.3/6.)

स्त्रियो रत्नानि विद्या धर्मश्च यत्रैव प्राप्येरन्, तत एवोपादेयानि। यथा-

स्त्रियो रत्ना यथो विद्या धर्म: शौचं सुभाषितम्।
विविधानि च शिल्पानि समादेयानि सर्वत:।।(मनु. 2/24.)

अस्माकं धर्मशास्त्रे: अपि स्त्रिय: समस्तास्तव देवि भेदा: इति वचनानुसारेणसर्वा स्त्रिय: महाया:या: आद्याशक्ते: स्वरूपेणैव प्रतिपादिता:। पुराकाले स्त्रिय: गृहिणी,गृहस्वामिनी, सहधर्मिणी, इत्यादिभि: विशेषणै: सम्बोध्यन्ते स्म।

रामायण-महाभारतकाले नारीणां स्थिति:-रामायण-महाभारतकाले नारीणांशिक्षाया: सुव्यवस्था अवलोक्यते। रामायणे कौशल्या तारा च 'मन्त्रविदौ' कथ्येते। सन्ध्याकुर्वन्त्या जानक्या: वर्णनं प्राप्यते। महाभारते सुलभा वेदान्तविद् वर्ण्यते, द्रौपदी च 'पण्डिता' कथ्यते। नारीणां संगीतनृत्यादिकलानां शिक्षणं वर्ण्यते, अर्जुन उत्तरां तद्गृहे एव संगीत-नृत्यादिकम् अध्यापयामास। रामायणे एकपत्नीव्रतं प्रतिपाद्यते। महाकाव्यकाले नारीणांगौरवं प्रतिष्ठितम् आसीत्। महाभारते वर्ण्यते यत् सत्कृता नार्येव साक्षात् लक्ष्मीर्भवति।महाभारते नारीणां गौरवं प्रति निम्नश्लोक: उद्धृत: -

अर्धभार्यां मनुष्यस्य भार्या श्रेष्ठतम: सखा।
भार्यामूलं त्रिवर्गश्च भार्या मूलं तरिष्यत:।।
भार्यावन्त: क्रियावन्त: सभार्या गृहमेधिन:।
भार्यावन्त: प्रमोदन्ते भार्यावन्त: श्रियान्वित:।।
सखाय: प्रविविक्तेषु भवन्त्येता: प्रियंवदा: ।
पुरा नार्य: पुरुषतुल्यमधिकारान् लेभिरे।। (महाभारत)

अस्मिन् संसारे अनेकविधा जना: सन्ति। केचित् परोपकारिण: केचित् परोपतापिन:भवन्ति। परोपकारिण: सज्जना: एव सर्वेषां प्राणिनां हिताय तडागकूपादीन् खनयन्ति,उद्यानानि आरोपयन्ति, धर्मशालां पाठशालां च निर्मापयन्ति। परोपकारिणं परोपकारेणैवप्रसङ्गा भवन्ति। यथा श्रोत्रं विद्यया तथैव पाणिर्दानेन, न तु कङ्कणेन विभाति। यथा-

श्रोत्रं श्रुतेनैव न कुण्डलेन दानेन पाणिर्न तु कङ्कणेन।
विभाति काय: करुणापराणां परोपकारैर्न तु चन्दनेन।।(नीति. 1/72)

परोपकारिण: स्वशरीरस्यापि त्यागं कृत्वा परेषां रक्षां कुर्वन्ति। दधीचि: स्वस्यअस्थीनि दत्वा देवानां रक्षां कृतवान्। राजाशिवि: स्वमांसं दत्वा कपोतस्य रक्षा अकरोत्।रन्तिदेव: क्षुधार्तोऽपि स्वभोजनं चाण्डालाय समर्पितवान्। दिलीप: परोपकारभावनया एवस्वशरीरं सिंहाय प्रदत्तवान्। एवमेव परोपकारी दिवङ्गतोऽपि यश: शरीरेण सदैव जीवति। अतो सर्वे परोपकारिण: भवेयु:। उक्तं च-

धनानि जीवितं चौव परार्थे प्राज्ञ उत्सृजेत्।
सन्निमित्तो वरं त्यागो विनाशे नियते सति।।(हितो.1/44)
परोपकार: कर्त्तव्य: प्राणैरपि धनैरपि।
परोपकरणं पुण्यं न स्यात् क्रतुशतैरपि।।(पद्म.उ.22)
वदनं प्रसादसदनं सदयं हृदयं सुधामुचां वाच:।
करणं परोपकारकरणं येषां केषां न ते बन्द्या:।। (सु.र.भा. 47/1.3)

महाकवि श्रीहर्षदेवप्रणीते 'नागानन्दम्' नाम नाटके जीमूतवाहनो नाम नायक: एतादृश:जन: एव स: स्व शरीरमपि शङ्खचूडस्य नाम जनस्य कृते दत्वा असीम आनन्दअनुभवति। एतादृशा: जना: वस्तुत: मानवताया: कृते रत्नतुल्या एव भवन्ति। वध्यशिलायांस्थित्वा स: जीमूतवाहन: चिन्तयति एवम्-

न तथा सुखयति मन्ये मलयवती मलयचन्दनस्सार्द्रा।
अभिवाञ्छितार्थसिद्धौ वध्यशिलेयं यथा स्पृहा।।(नागानन्दम्)

समाजशास्त्रस्य अद्धितीया कृतिरस्ति। मन्वत्रिविष्णुहारीतादि स्मृतय: विंशति: सन्ति।, देवल-चन्द्रायण-कपिलादिभिश्च विरचिता: स्मृतय: पञ्चाशत् सन्ति। आहत्य सप्तति स्मृतयस्सन्ति।

धर्मलक्षणे **स्वस्य च प्रियमात्मन:** इत्यनेन मधुरभाषणं परोपकरणम् अहिंसनं चसमर्थ्यते। यथा महाभारते प्रोच्यते-

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चौवावधार्यताम्।
आत्मन: प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।।(महाभारतम्)

न धर्मात् परमं मित्रम् - संसारे धर्म एव सर्वोत्कृष्टं मित्रम्। सुखे दु:खे च अजस्रंसाहाय्याचरणेन धर्म: परम: सुहृत्। सुखसाधनेन धर्मस्य परमबन्धुत्वं परममित्रत्वं च व्यादिश्यते।कथ्यते च-

एक एव सुहृद् धर्मो निधनेऽप्यनुयाति य:।
शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यत्तु गच्छति।।

धर्म: स नो यत्र न सत्यमस्ति-सत्यं धर्मस्य मूलम्। सत्याश्रयैव धर्मवृत्ति:।

यत्र सत्यं तत्र धर्म:, तदभावे तदभाव:। सर्वे वेदगता: विषया: धर्मशास्त्रेऽस्मिन् प्रतिपादिता:।वेदस्तु 1. कर्मकाण्ड – 2. ज्ञानकाण्ड–भेदेन द्विधा विभज्यते। वेदेषु विवाह वर्णाश्रम–पुत्रभेद–उत्ताराधिकारिनिर्णय– धनविभाग–श्राद्धादिविषयका: बहव: प्रसङ्गा उपलभ्यन्ते। ते प्रसङ्गा–श्च कालक्रमेण धर्मशास्त्रस्य विषयीभूता: । प्राधान्येन धर्मप्रतिपादकान्येव शास्त्राणि स्मृति–पदेनोच्यन्ते। आचारमूलकस्य सत्याहिंसादिरूपस्य धर्मस्य सर्वधर्मेषु समत्वम् अनिवार्यत्वंच व्यादिश्यते, तत्पालने न कस्यचिदपि विपश्चितो विप्रतिपत्ति:। एवं धर्मो मानवं देवत्वंगमयति।

धर्मो धारयते प्रजा:–कर्त्तव्याकर्त्तव्ययो: अवधारकरूपो शास्त्रम् धर्म इति कथ्यते।

संसारे धर्म एवं प्रजानां धारक:। धर्मस्य विश्वजनीत्वं सार्वलौकिकत्वं सार्वभौमिकत्वं चविश्वहितसम्पादनादेव प्रवर्तते। धर्म एव शिक्षयति–

अयं निज: परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।। (शा.प. 273)
सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दु:खमाप्नुयात्।।(शिष्टगृहीत)

अतएव सत्यं दया परोपकारादयो धर्मस्य मूलतत्त्वानि गण्यते।परदु:खनिवारणंकरुणाद्रवत्वं च धर्मे संगृह्यते। यथोच्यते –**न च धर्मो दयापर:**

न धर्मवृद्धेषु वय: समीक्ष्यते–ज्येष्ठत्वं श्रेष्ठत्वं च धर्ममूलकम्। **धर्मस्य त्वरितागति:** इत्यनेन ज्ञायते यत् धर्मे देशकालानुरूपं परिवर्तनं संजायते।

गृहीत इव केशेषुमृत्युना धर्ममाचरेत्।
यतोऽभ्युदयनि:श्रेयससिद्धि:स धर्म:।(वैशेषिक)

एवं धर्मो मानव–लोकपारित्रायक:, समुन्नतिसाधक:, ज्ञान–विज्ञान शौर्यादि गुण–सम्पादक:, आस्तिक्यादि गुणानां प्रवर्तकश्चेति। मानवजीवने धर्मस्य सर्वदा सर्वथा चअनिवार्यत्वं वर्तते तस्याश्रयेणैव ऐहिकम् आमुष्मिकं च सुखमवाप्यते अमरसिंहस्तु विश्वधर्म: धारयति, जना: धर्म धारयन्तीति धर्मशब्द व्युत्पादितवान। मेदनी–हेमकोषयोस्तु

पुण्यार्थे धर्मशब्द: प्रयुक्त:।

धर्मेण हीना: पशुभि: समाना:–ईश्वरसत्तायां विश्वासमेव धर्म: निगदन्ति। धर्म एव जीवनस्य सार:। ये गुणा: असमान् मानवान् पशुपक्षिकीटादयेभ्य: पृथक् कुर्वन्ति

तेषामेव सामान धर्म इति। उक्तं च भर्तृहरिणा–

अहारनिद्राभयमैथुनञ्च सामान्यमेतत् पशुभि: नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीना: पशुभि: समाना:।।(हितो. 1/25)

उपरिकथिता: गुणा: प्राय: सर्वेषु प्राणिषु बहुधा अवलोक्यन्ते। पुराकाले अस्माकं देशे अनेके धर्मपरायणा: आसन, यै: धर्मपालनायैव स्वराज्यपुत्रधनादिकं सर्व याचकेभ्य:ददौ। राजा हरिश्चन्द्र: स्वप्ने दृष्टेभ्य: याचकप्रवरेभ्य: विश्वामित्रेभ्य: समादत्तावानासीत्।सम्प्रति अपि समाजे देशे बहव: सत्यसेवका: सन्ति ये सततं धर्माचरणे संलग्ना: दरीदृश्यन्ते।तैरपि धर्मफलम् अभिलषणीयम् प्रापणीयञ्च। यथोच्यते–

धर्मस्य फलमिच्छन्ति धर्म नेच्छन्ति मानवा:।
पापस्य फलं नेच्छन्ति पापं कुर्वन्ति यत्नत:।।

एवं च ये तु सुखप्राप्तये अन्यायेन धनोपार्जनं कुर्वन्ति तत: सुखं कामयन्ते तान्प्रतिकिं वयं पुनरुक्तिं चरितार्थयाम:। तेषां कृते प्राचीनामिमामेव सूक्तिं समुद्धराम:–

अन्यायोपार्जितं द्रव्यं दशवर्षाणि तिष्ठति।
प्राप्ते त्वेकादशे वर्षे समूलञ्च विनश्यति।। (चा.नी.15/6)
कृधी न ऊर्ध्वान् चरथाय जीवसे।(ऋग्.1/36/14)
उच्छ्रयस्व महते सौभगाय । (अथर्व.3/12/2)

सदाचारेण मानवजीवनस्य सर्वविधा उन्नति: भवति। सदाचारस्य सद्वृत्तात्वस्य च मानवजीवने आवश्यकं वर्तते। सद्वृत्ति:, सम्यग्दृष्टि:, सम्यक् सम्बोधश्च संस्कृतौ स्वीकृता भवन्ति। यथोक्तं मनुना–

संस्कृत भाषायां **वसुधैव कुटुम्बकम्**–भावना–सम्बद्धा: श्लोका: बहव: सन्ति।वैदिककालात् आरभ्य आधुनिक–संस्कृतकालपर्यन्तं सर्वत्र एतादृशा: कौटम्बिकी भावना: विलसन्त्येव। संस्कृतभाषां विना विश्वे इतरभाषासु कुत्रापि ईदृशी लोकोत्तरभावना न परिदृश्यते। उदारचेता: विश्वमेव कुटुम्बमिव भावयन्ति। संस्तभाषाया: विश्वबन्धुत्व–भावना एषैव वर्त्तते। समाजे विश्वे यानि भूतानि सन्ति, तानि आत्मवत् भावयन्तु। विद्यमाना:सर्वे सुखिन: स्यु:, सर्वे निरोगिन: भवन्तु, कोऽपि दुखं न प्राप्नुयात्। विश्वे अथवा ब्रह्माण्डे ये प्राणिन: सन्ति ते सुखिन: भवन्तु, यथा–

अयं निज: परो वेति गणनालघुचेतसाम्।
उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम् ।।(शा.प.273)
सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दु:खमाप्नुयात्।।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास – बलदेव उपध्याय
2. वृहदारण्यकम्
3. पुरूष सूक्त
4. यजुर्वेद
5. मनुस्मृति

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Eunuchs Under the Eye of Mythology in India

Pawan Kumar Chaurasia*

***Research Scholar & Asst. Prof., Pt. Motilal Nehru Law College & Research Center, Chhatarpur (M.P.) INDIA**

Abstract: Transgender person is not a new term but has been found in the great and the oldest religion of earth called Hindu Dharma. There are several instances where the existence of the transgender can be traced. Several responsibilities have been entrusted to them during the dwapar and treat yuga which can be seen in the Hindu religious scriptures. The famous character of transgender who created history are lord Vishnu, lord Shiva, Arjuna and Shikhandi.
Keywords: Kunnar, Hijra, Transgender, Satyuga, Treata Yuga, Dwapar Yuga and Kalyuga.

Introduction - There are several stories in Hindu Dharma, which is thought to be the oldest dharma on the planet, investigate and show not only the presence of transgender people but also their social standing and the legal acceptance of them. In Hindu mythology, celestial beings called Kinnaras are associated with sensuality, beauty, love, and music. They are occasionally shown as a hybrid of an animal (often a bird or horse) and a human. Apsaras are their female counterparts, and Gandharvas are their male counterparts. They are also considered to be spirit beings of the third gender, or tritiya-prakriti. Kinnaras are depicted as powerful, alluring, and often crafty creatures connected to the energy of Kama, or sensual pleasure.

In Hindu mythology, there are gods and heroes who display characteristics of gender diversity and non-heterosexual sexuality, or whose behaviors can be interpreted as lesbian, gay, bisexual, transgender, or queer (LGBTQ). Although there are no explicit references to homosexuality in traditional Hindu literature, regional folklore and traditional religious books such as the Vedas, Mahabharata, Ramayana, and Puranas often feature intersex or third gender figures, changes in sex, and homoerotic interactions. Hindu mythology contains many examples of gods changing their gender, taking on different forms at different times, or combining to form androgynous or hermaphrodite beings. Gods may change their gender or take on the appearance of an avatar of the opposite sex to facilitate sexual relations. Hindu mythology contains numerous examples of sexual encounters for a sacred religious purpose, some of which are homosexual. The gods occasionally condemn these interactions, but other times The Ramayana and Mahabharata are the great and most pious scriptures in the Hinduism. According to the Hindu religious scripture, the entire life of earth is divided into four period *Yuga*as the *Satyuga, Treta Yuga, Dwapar Yuga* and *Kalyuga* running currently. The Ramayana is considered to be composed in *Treat Yuga*and The Mahabharata is considered to be written in *Dwapar Yuga.* In the said great epics the eunuchs were given a very important place that can be filled by no other gender. Some of glimpses of transgender in the Great Ramayana and Mahabharata may be summarized as under.

The Ramayana:- Regarding the issue of transgender individuals, they have existed throughout history. In the magnificent era of Lord Rama, there is also a very well-known narrative about the Hijras. Ayodhya Chakravarti Samrat Raja Dashrath's eldest son, Lord Rama, was chosen to succeed him as the state's king. Due to pressure from Rani Kaikayi and a boon he gave her, Raja Dashrath, Lord Rama's father, must order him banished just before the night of the coronation.

Following his father's instructions, Lord Rama departed Ayodhya at daybreak with his brother prince Lakshmana and bride goddess Sita. Several men and women, as well as hijras, joined Lord Rama to the Ayodhya state border during his exile. After some time, Lord Rama asked everyone to return to Ayodhya. However, did not mention of hijras, who were neither males nor women. All individuals except transgender people were brought back to Ayodhya at Lord Rama's request; however, because they were not addressed by him, transgender people chose to wait and remain for Lord Rama. Transgender people were waiting for Lord Rama on the outskirts of the Ayidhya realm when he returned from exile. "Why did you not return to the Ayodhya?" he asked them. They respectfully responded that only men and women were told to leave the area, and

they were not told to go back because they were neither. The transgender people who had been waiting for him for the past 14 years overwhelmed Lord Rama. After welcoming them to his dominion, Lord Rama granted them the authority to bestow blessings on important occasions like as marriages, births, and inaugural events. This blessing is thought to be the source of Badhai, a practice when transgender people are invited to marry a newlywed couple with a newborn child.

The Mahabhatara:- According to Hinduism, the Maharshi Ved Vayasa is credited with writing the vast epic Mahabharat, which is based on Lord Ganesha's narration. The Mahabharata contains numerous tales that depict the magnificent presence of eunuch. Below are a few of the warriors' tales and descriptions.

Two characters of Mahabharata were legendry who are described as under.

1. Arjuna:- When he was a submissive follower of guru Drona, who taught him the art of archery, Arjuna was the greatest archer in the world. The Mahabharat claims that the legendary Arjuna engaged in numerous battles and had multiple marriages with princes. In the Mahabharat narrative, there were five brothers known as the Pandavas. Yudhisthara, Bhima, Arjuna, Nakula, and Sahdeva are their respective names. According to the legend of great Arjuna, Lord Krishna asks him to travel to heaven and visit Lord Indra, the king of heaven, in order to get Divyastra, or atomic weapons, during his exile. When heroic Arjuna ascended to heaven on Lord Krishna's command, the deity Indra was greatly impressed and invited him to stay for a few days. Urvashi, an Apsara (an eternal and magnificently beautiful lady of heaven), expressed her love to Arjuna in paradise, but he rejected her. She cursed him to be unable to entice him for the rest of his life as eunuch as she was. However, Lord Indra shortened the duration of that curse from the full life to one year. That the Arjuna had used as a boon during the secret banishment.

2. Shikhandi:- In addition to being a formidable fighter, Shikhandi is a mystery figure in the Mahabharata. The Shikhandi's origin is also highly intriguing and enigmatic. Ganga Putra Bhisma is a figure in the Mahabharat who has the right to refuse to live if he so chooses. In actuality, his father, King Shantanu, monarch of Hastinapur, gave him a breast that gave him immortality.

3. Lord Vishnu in Mohni incarnation:- In this story, Lord Vishnu, who is known as the foster care of nature, took on the incarnation of Mohani during the sea churning (Samudra Manthan) in order to distribute the elixir of immortality (Amrita) between gods (Devtas) and demons (Asura). According to the Bhagwata Purana, the demons were extremely strong and the gods were very weak, so it was decided to conduct a sea churning to give the devtas powers.Several precious and priceless items appeared before them during the sea churning, along with a very sharp poison known as Halahal. Lord Shiva took it in his throat, which is why he was named Nilkantheshwar Mahadev. However, when Necro appeared before them, all of the gods and demons wanted to accept it in order to become powerful. Lord Vishnu has chosen to give it only to the gods and not to the demons in the event that it was taken by the demons and they gained great power from the gods. In order to prevent the demons from consuming nectar, Lord Vishnu then took on the form of Mohani. This allowed the gods to fight the demons who had developed new immoralities.

4. Aravan:-The deity Krishna, who is an avatar of Vishnu, is claimed to have married Aravan after taking on the persona of Mohini in Tamil versions of the Mahabharata. This was done in order to allow Aravan to experience love prior to his death, as he had volunteered to be sacrificed. For some time after Aravan's death, Krishna remained in the Mohini form, grieving. The annual Thali ceremony, in which Hijras play the role of Krishna-Mohini and symbolically "marry" Aravan in a mass wedding, followed by an 18-day festival, commemorates this marriage and death of Aravan. While the Hijras grieve in the Tamil way—breaking their bangles, wearing white funeral garments, and performing ritual dances while beating their chests—the festival ends with Aravan's burial ceremony.

Ardhnarishvara:-Ardhanarishvara is the product of the union of the god Shiva and his lover Parvati, who has half a male body and half a feminine body. The meaning of the word Ardhanarishvara is "The Lord whose half is a woman". Communication between men and women, as well as between gods and humans, is associated with this portrayal of Shiva, which represents the "totality that lies beyond dualism." "The transvestite, the hermaphrodite, and the gay have a symbolic meaning and are considered privileged beings, images of the Ardhararishvara," asserts Alain Danielou[1]. The captivating story of Shiva as Ardhnarishwara. Because of his intense devotion to Shiva, one of the Saptarishis, his pupil Bhrigu, developed a strong feminine side.

Conclusion: It is crystal clear from the perusal of above facts that the transgender is not a new term in the world but in the great Hinduism they found very crucial place and also kept on the apex. As per the mythological stories lord Shiva also depicted in the form of **Ardhnarishwara** which means the lord Shiva represents the entire nature in his body as half body represents male and half female.Hindu dharma is called the oldest religion on the earth and no religion is as old and developed on the earth as Hindu religion and according to the Hindu religion the age of whole age is divided into four periods as Satyuga, Treta Yuga, Dwapar Yuga and Kalyuga. There are several stories regarding the transgender in all those four era. In Satyuga lord Visnhu appeared in the incarnation of Mohini who disguised the demons in order to distribution of nectar between gods and demons. In the Tretayuga, lord Rama entitled the transgender community by the power of an auspi-

cious boon which is used by them in the form of Badhai even this era. In the Dwapar era, there was a great warrior named Shikhandi who became the root cause the death of Bhishma Pit amah who was given the boon of eternity. Finally in the Kalyga the Supreme Court of India by its historical judgment given in NALSA case provide entire rights to the transgender community and considered them akin to the other genders.

References:-

1. Kaviraj Kunja Lal Bhisagratna (trs), An English Translation of the Sushruta Samhita, Based on Original Sanskrit Text(Forgotten Books ,2018)
2. Michel Rosenfeld and András Sajó, *Oxford Handbook of Comparative Constitutional Law* (Oxford University Press 2014)
3. Michel Rosenfeld and AndrásSajó,*Oxford Handbook of Comparative Constitutional Law* (Oxford University Press 2014)
4. Mousourakis, George,,*The Historical and Institutional Context of Roman Law* (London Imprint Routledge 2003)
5. Narda and Richard Wilfred, *Non Payments of Debts* (Motilal Banarasi Das Press 2003)
6. Ruth Vanita and Saleem Kidwai, *Same- Sex Love in India : Readings from Literature and History* (St Martin's Press New York 2000)
7. Serena Nanda, *Neither Man nor Woman: The Hijra of India* (2nd edn, Wadsworth Publication Co.1999)
8. Shamshastry, *Kautiyla Arthashastra* (Sri raghuveer Printin Press Mysore 1956)

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Towards a Uniform Civil Code: Evaluating the Legal and Social Feasibility of Uniform Divorce Laws in India

Jyoti Payasi* **Dr. Rajat Kumar Satapathy****

*Research Scholar, Maharaja Chhatrasal Bundelkhand University, Chhatarpur (M.P.) INDIA
** Principal, Pt. Motilal Nehru Law College, Chhatarpur (M.P.) INDIA

Abstract: The concept of a Uniform Civil Code (UCC) in India has been a subject of intense debate, especially concerning personal laws that govern marriage, divorce, inheritance, and other civil matters. This paper evaluates the legal and social feasibility of implementing uniform divorce laws across diverse religious communities in India. It critically examines the constitutional provisions, judicial interpretations, and socio-political challenges that shape this discourse. The study also explores whether a uniform legal framework on divorce can harmonize conflicting personal laws while respecting India's pluralistic society. This research concludes by assessing the prospects and challenges of adopting such a code in the contemporary socio-legal landscape of India.
Keywords: Uniform Civil Code,Minority Rights,Gender, Justice,Secularism.

Introduction - India is a country known for its cultural, religious, and ethnic diversity, which is reflected in its legal system. Unlike most secular nations that apply a uniform set of civil laws to all citizens, India operates under a pluralistic legal regime, where personal laws of different religious communities govern matters such as marriage, divorce, and inheritance. These personal laws are deeply rooted in religious doctrines and practices, leading to variations in legal rights and obligations across communities. The demand for a Uniform Civil Code (UCC) — a common set of laws applicable to all citizens regardless of religion — is enshrined in Article 44 of the Directive Principles of State Policy in the Indian Constitution. However, the implementation of UCC, particularly uniform divorce laws, has remained contentious due to the sensitive nature of religious identity and cultural autonomy.

This paper seeks to evaluate the legal and social feasibility of introducing uniform divorce laws under the framework of a UCC. Divorce, as a personal law subject, has significant emotional, social, and economic implications, making it a critical area for reform. The paper discusses the constitutional provisions related to personal laws and the UCC, examines the existing divorce laws applicable to major religious communities, and analyzes the challenges posed by social heterogeneity and political considerations. Through a critical analysis of judicial pronouncements and scholarly debates, the research aims to provide a nuanced understanding of the prospects for uniform divorce laws in India.

Legal Background and Constitutional Framework: The Indian Constitution provides the foundational legal framework for the debate on the Uniform Civil Code (UCC) and personal laws. Article 44 of the Directive Principles of State Policy directs the state to endeavor to secure a UCC for its citizens. However, these principles are non-justiciable, meaning they cannot be enforced in a court of law. At the same time, Articles 25 and 26 guarantee freedom of religion and allow religious communities to manage their own affairs in matters of religion. This duality creates a constitutional tension between promoting uniform laws and respecting religious autonomy.

The Supreme Court of India has dealt with this tension in various judgments. In the landmark *Shah Bano* case (1985), the Court ruled in favor of maintenance rights for Muslim women under the Criminal Procedure Code, effectively urging reform in Muslim personal law. This judgment sparked widespread debate, leading to the Muslim Women (Protection of Rights on Divorce) Act, 1986, which diluted the Court's judgment. The case exemplifies the difficulty in balancing uniform legal principles with religious sensitivities.

Current Divorce Laws in Major Religions: India's personal laws are governed by different statutes and customs based on religion:

- **Hindu Divorce Laws**: The Hindu Marriage Act, 1955, governs divorce among Hindus, Buddhists, Jains, and Sikhs. It provides several grounds for divorce including cruelty, adultery, desertion, and irretrievable breakdown of marriage. The Act also allows for judicial separation and restitution of conjugal rights.
- **Muslim Divorce Laws**: Governed primarily by Sharia principles and codified in laws such as the Muslim Personal

Law (Shariat) Application Act, 1937. Divorce under Muslim law includes Talaq (repudiation), Khula (divorce initiated by wife), and Mubarat (mutual divorce). However, the instant triple Talaq practice was struck down by the Supreme Court in 2017, marking a significant reform.

- **Christian Divorce Laws**: Governed by the Indian Divorce Act, 1869, with subsequent amendments. Divorce grounds include adultery, cruelty, desertion, and conversion. The law is considered more restrictive compared to Hindu laws, especially regarding mutual consent divorce.
- **Parsi Divorce Laws**: Governed by the Parsi Marriage and Divorce Act, 1936, which allows divorce on grounds similar to Hindu and Christian laws but follows community-specific procedures.

These divergent legal regimes highlight the complexity of achieving uniformity, as each law reflects different religious doctrines and social customs.

Social and Political Challenges: Implementing uniform divorce laws under a UCC faces numerous social and political challenges:

- **Religious Sentiments**: Many religious groups view personal laws as integral to their religious identity and community cohesion. Changes are often perceived as threats to cultural and religious autonomy.
- **Political Resistance**: Political parties and religious organizations often oppose uniform laws to protect vote banks and maintain community support, making legislative reform difficult.
- **Gender Justice vs. Community Rights**: While uniform laws can promote gender equality by standardizing rights and obligations, minority communities argue that such laws can erode their customary protections and rights.
- **Public Perception and Awareness**: Limited awareness about legal rights and varying literacy levels in rural and marginalized areas further complicate acceptance of uniform laws.

Judicial Interpretations and Landmark Cases

Beyond *Shah Bano*, other judicial pronouncements have shaped the debate:

- *Danial Latifi v. Union of India* (2001): Upheld the validity of the Muslim Women (Protection of Rights on Divorce) Act but interpreted it in a way that provided maintenance to divorced Muslim women.
- *Joseph Shine v. Union of India* (2018): Struck down adultery as a criminal offense, applying uniformly across communities.
- *Shayara Bano v. Union of India* (2017): Declared instant triple Talaq unconstitutional, reinforcing gender justice.

These judgments indicate a trend toward harmonizing personal laws with constitutional values of equality and justice, which could pave the way for uniform divorce laws.

Feasibility Analysis: From a legal perspective, the adoption of uniform divorce laws is feasible, given the constitutional mandate and progressive judicial trends. However, socially and politically, it remains complex. The diversity of India necessitates a sensitive approach that balances reform with respect for cultural pluralism.

Phased reforms, increased dialogue with communities, and confidence-building measures may help ease resistance. Educating citizens about their legal rights and involving women's groups and civil society organizations can also facilitate acceptance.

Feasibility Analysis of Uniform Divorce Laws under a Uniform Civil Code in India: The feasibility of implementing uniform divorce laws within the framework of a Uniform Civil Code (UCC) in India must be evaluated through multiple lenses—legal, social, political, and cultural. Each of these dimensions presents unique challenges and opportunities.

Legal Feasibility: Legally, the Indian Constitution provides a supportive backdrop for introducing uniform laws. Article 44 of the Directive Principles of State Policy urges the state to endeavor to secure a Uniform Civil Code, reflecting the framers' vision for a cohesive legal system. Additionally, judicial pronouncements over the years have progressively emphasized constitutional values such as equality, non-discrimination, and gender justice over rigid personal law interpretations. The Supreme Court's judgments, including *Shayara Bano* (2017) and *Joseph Shine* (2018), underscore a willingness to review and reform personal laws that violate fundamental rights.

Moreover, India already has certain secular laws—such as the Special Marriage Act, 1954—that offer civil marriage and divorce irrespective of religion, indicating a workable model for uniformity. Legislative mechanisms exist to enact and enforce laws across religious communities, and the judiciary can uphold constitutional rights where personal laws contradict them.

However, the legal challenge lies in reconciling uniform laws with the constitutional guarantee of religious freedom (Articles 25 and 26). Courts must balance the enforcement of uniform laws with protection of religious practices, often leading to tensions and legal complexities.

Social Feasibility: Socially, the implementation of uniform divorce laws is significantly complicated by India's pluralistic and deeply religious society. Personal laws are often intertwined with religious identity, community belonging, and cultural norms. Divorce, being a sensitive and often stigmatized subject, varies widely in acceptance and practice across communi**ties.**

Several social factors impede feasibility:

- **Religious Resistance:** Many communities perceive personal laws as integral to their religious heritage. Uniform divorce laws may be seen as an imposition by the state on religious practices, sparking protests and social unrest.
- **Gender Roles and Patriarchy:** In some communities, divorce laws are influenced by patriarchal values, and uniform laws promoting gender equality might face resistance, especially if seen as undermining male authority.
- **Diverse Literacy and Awareness Levels:** Varied

education and legal awareness in rural and marginalized populations may hinder understanding and acceptance of uniform divorce provisions.

However, there is growing awareness among women's rights activists and civil society groups who advocate for uniform laws to eliminate discrimination and protect women's rights. Urbanization, media exposure, and education are gradually shaping more progressive attitudes, which can create social momentum for reform.

Political Feasibility

Politically, the path toward uniform divorce laws is fraught with challenges:

- **Vote Bank Politics:** Political parties often cater to religious vote banks, making them reluctant to pursue reforms that may alienate influential community leaders or voters.
- **Coalition Dynamics:** In coalition governments, accommodating diverse political interests and religious sentiments can stall legislation on sensitive issues like the UCC.
- **Balancing Secularism and Pluralism:** Political discourse often debates the fine line between maintaining secular governance and respecting pluralistic values, complicating consensus on uniform laws.

Despite these challenges, the political landscape is slowly evolving. The Supreme Court's interventions and some state-level initiatives demonstrate that legal reforms can eventually shape political will. Incremental approaches, such as reforming specific contentious personal law aspects before attempting full uniformity, may be politically more feasible.

Cultural Feasibility: Cultural acceptance is perhaps the most significant hurdle. Personal laws are rooted in centuries-old customs and religious texts, which hold symbolic and emotional importance. Sudden or insensitive imposition of uniform laws risks alienating communities and provoking cultural backlash.

To enhance cultural feasibility, reforms must be:

- **Consultative and Inclusive:** Engaging religious leaders, community representatives, women's groups, and legal experts to build consensus.
- **Gradual and Context-Sensitive:** Phased implementation with flexibility to accommodate legitimate cultural variations without compromising fundamental rights.
- **Educational and Awareness-Based:** Public campaigns to inform citizens about the benefits of uniform laws and dispel myths.

In sum, while the legal framework and constitutional mandate support the introduction of uniform divorce laws, social, political, and cultural realities pose significant challenges. The feasibility depends on carefully balancing reformist zeal with respect for pluralism, fostering dialogue among stakeholders, and adopting a phased, inclusive approach. Success will likely require a combination of judicial activism, legislative prudence, and sustained social advocacy.

Conclusion: The pursuit of a Uniform Civil Code, particularly concerning uniform divorce laws, remains one of India's most complex and sensitive socio-legal challenges. The country's rich tapestry of religions, cultures, and customs creates a pluralistic society where personal laws play a crucial role in community identity and social cohesion. While the Constitution envisions a uniform legal framework under Article 44, the coexistence of religious freedoms under Articles 25 and 26 makes the task highly nuanced.

This paper has examined the constitutional provisions, existing personal divorce laws across major religions, judicial interventions, and the social-political dynamics surrounding the issue. It is evident that uniform divorce laws have the potential to promote gender justice, legal clarity, and national integration. However, the path to implementing such laws requires careful balancing of reformist objectives with respect for religious and cultural sensitivities.

Legal feasibility is supported by constitutional mandates and progressive judicial pronouncements, indicating that reform is possible within the framework of India's democracy and rule of law. Socially and politically, resistance from communities and vested interests remains a significant barrier, but increasing awareness and advocacy offer hope. Ultimately, the success of uniform divorce laws under a UCC depends on a phased, inclusive approach that engages stakeholders, educates the public, and respects the country's pluralistic fabric.

In conclusion, while the dream of a Uniform Civil Code remains distant, incremental reforms in divorce laws can serve as vital steps toward harmonizing India's personal laws with constitutional ideals of equality, justice, and secularism.

References:-

1. The Constitution of India, 1950.
2. Hindu Marriage Act, 1955.
3. Muslim Women (Protection of Rights on Divorce) Act, 1986.
4. Indian Divorce Act, 1869.
5. Parsi Marriage and Divorce Act, 1936.
6. *Mohd. Ahmed Khan v. Shah Bano Begum*, AIR 1985 SC 945.
7. *Danial Latifi v. Union of India*, AIR 2001 SC 3958.
8. *Shayara Bano v. Union of India*, AIR 2017 SC 4609.
9. *Joseph Shine v. Union of India*, AIR 2018 SC 4898.
10. Basu, D. D. (2015). *Introduction to the Constitution of India* (22nd ed.). LexisNexis.
11. Jaffrelot, C. (2011). *The Hindu Nationalist Movement and Indian Politics*. Penguin.
12. Narayan, S. (2019). "Uniform Civil Code: A Need or a Threat?" *Journal of Indian Law and Society*, 10(1), 23-45.
13. Sharma, R. (2020). "Personal Laws and Gender Justice in India." *Indian Journal of Gender Studies*, 27(2), 157-178.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Ethnic Conflict in Roma Tearne's *Mosquito* : Trauma, Memory, and the Gothic Landscape of Sri Lanka's Civil War

Sachin Sharma*

***Assistant Professor (English) PMCoE, Rajiv Gandhi Govt P.G. College, Mandsaur (M.P.) INDIA**

Abstract: Roma Tearne's debut novel *Mosquito* (2007) emerges as a poignant exploration of Sri Lanka's protracted ethnic conflict between the Sinhalese majority and the Tamil minority, framed within the broader canvas of the civil war (1983–2009). Through the intertwined stories of Theo Samarajeeva, a Sinhalese writer returning from exile, and Nulani Mendis, a young Tamil painter, Tearne dissects the war's insidious permeation into personal lives, landscapes, and psyches. This expanded analysis examines how ethnic conflict manifests as a spectral force, employing memory-mapping, eco-gothic motifs, and gendered trauma to critique the cycle of violence, displacement, and tentative healing. Drawing on postcolonial, ecofeminist, and memory studies theories, it argues that Tearne's narrative transforms the island's idyllic terrains into monstrous palimpsests of atrocity, where nature mirrors human divisiveness. By focalizing through characters ensnared in cross-ethnic romance and artistic expression, *Mosquito* challenges binary ethnic identities, advocating for empathy amid erasure. Scholarly analyses, including recent eco-gothic readings (e.g., 2024 ShodhKosh article) and memory praxis explorations (Phukan 2017), underscore the novel's role in diasporic witnessing. Ultimately, Tearne's work posits art as a redemptive cartography, mapping paths beyond conflict's ruins toward a hybrid future, while addressing ongoing post-2009 reconciliation failures.

Introduction - The Sri Lankan civil war, a 26-year conflagration that claimed over 100,000 lives and displaced millions, stands as one of the 20th century's most devastating ethnic conflicts, rooted in colonial legacies of divide-and-rule and post-independence majoritarian policies. From the 1956 Sinhala Only Act, which marginalized Tamil language and culture, to the 1983 Black July pogroms that ignited full-scale insurgency by the Liberation Tigers of Tamil Eelam (LTTE), the war encapsulated a struggle for self-determination laced with atrocities on both sides—state-sponsored disappearances, LTTE suicide bombings, and mutual ethnic cleansing. In this maelstrom, literature becomes a vital archive, preserving silenced testimonies and interrogating national myths. Roma Tearne, a British-Sri Lankan artist and novelist born in Colombo in 1956 and exiled to Britain at age nine, channels her diasporic gaze into *Mosquito*, a novel that humanizes the war's abstractions through intimate narratives of love, loss, and resilience.

Published in 2007, *Mosquito* unfolds against the war's zenith, blending romance with gothic horror to depict ethnic conflict not as abstract geopolitics but as a visceral unraveling of bodies, bonds, and environments. The protagonist, Theo Samarajeeva, a middle-aged Sinhalese writer widowed by his wife's suicide in London, returns to his Negombo family estate, seeking solace in the island's "paradise" beaches. There, he encounters Nulani, a 17-year-old Tamil prodigy orphaned by violence, whose paintings capture the war's spectral undercurrents. Their illicit affair, fraught with ethnic taboos, serves as a microcosm for broader reconciliation possibilities, interrupted by Theo's abduction—first by Sinhalese soldiers suspicious of his pro-Tamil novel *Tiger Lily*, then by LTTE militants viewing him as a spy. Interwoven are subplots: Nulani's brother Vikram, a traumatized child soldier turned bomber; Sugi, the Sinhalese housekeeper embodying quiet complicity; and Rohan, Theo's painter friend exiled in Venice, whose grey canvases mourn the homeland.

Tearne's prose, lush yet lacerating, evokes the island's sensory overload—jasmine-scented air laced with cordite, monsoons washing up bloated corpses—to render ethnic conflict as an omnipresent hum, akin to the novel's titular mosquitoes: fragile, insidious, vectors of disease and dread. Themes of trauma, memory, and ecological monstrosity dominate, with the war's ethnic fissures fracturing personal identities and landscapes alike. As Sudipta Phukan notes in her 2017 analysis of mnemocultural praxis, Tearne's works explore memory as "affective to the body as marks

and traces," mutually constituting self and society through engagements with the material world amid war's disembodiment. This technique echoes Jan Assmann's concept of cultural memory as an "institutionally realized" framework for transmitting trauma across generations, countering official amnesias that perpetuate ethnic divides. In *Mosquito*, memory emerges not as linear history but as a "tightly knitted framework" (Phukan 2015), where recollections of pogroms and tortures interlace with sensory triggers like rain or linseed oil scents.

Scholarship on *Mosquito* has proliferated, particularly in postcolonial, ecocritical, and feminist veins since the war's 2009 end. Phukan's 2015 mapping study highlights memory's spatial orientation of trauma, linking personal flashbacks to national cartographies of violence. Eco-gothic readings, such as the 2024 ShodhKosh article, portray nature as a "monster of terror," where war-induced degradation fosters ecophobia—the irrational fear of the natural world as complicit in human horrors. Gendered lenses, as in Harleen Kaur's 2017 ecofeminist dissertation and the 2025 "Art and Abiding" study, reveal women's bodies as battlegrounds paralleling ravaged terrains, with Nulani's art embodying intersectional resistance. Yet, critiques persist: some fault Tearne's "dehistoricized" approach for exoticizing conflict, overlooking LTTE's authoritarianism or Sinhalese victimhood, as noted in Buonanno's 2015 reconfiguration of place (Buonanno 249-262).

This paper contends that *Mosquito* reconfigures ethnic conflict as a gothic ecology of haunting, where Sinhalese-Tamil binaries dissolve in shared suffering, advocating art as a decolonial praxis for mourning and mending. Structured around historical context, narrative memory, eco-gothic landscapes, gendered trauma, and a new subsection on diasporic reconciliation, it draws on primary textual evidence, recent secondary sources (up to 2025), and expanded quotes to illuminate Tearne's contribution. In an era of resurgent ethno-nationalisms—evident in post-2009 reconciliation failures, such as the LLRC's inadequate addressing of Tamil grievances, and global displacements like Rohingya crises—*Mosquito* remains a clarion call for empathetic witnessing, urging readers to map beyond borders toward hybrid humanities. Tearne's own family history—her Sinhalese mother's elopement with a Tamil poet amid 1960s unrest—infuses authenticity, transforming personal microcosms into collective indictments.

Historical Context of Sri Lankan Ethnic Conflict in *Mosquito*

To grasp *Mosquito*'s resonance, one must excavate the historical strata of Sri Lanka's ethnic schism, a palimpsest of colonial machinations and postcolonial failures that Tearne subtly inscribes into her narrative without didacticism. British rule (1815–1948) exacerbated Sinhalese-Tamil divides through administrative favoritism toward Tamils in education and civil service, fostering Sinhalese resentment post-independence. The 1956 Sinhala Only Act, enshrining Sinhalese as the sole official language, triggered Tamil protests, culminating in the 1958-Gal Oya riots—precursors to the 1983 inferno when state-backed mobs torched Tamil homes in Colombo, killing thousands and displacing 150,000. The LTTE, formed in 1976 under Velupillai Prabhakaran, militarized Tamil nationalism, pioneering suicide bombings and conscripting children, while the state army's scorched-earth campaigns in the north and east—carpet bombings, cluster munitions—claimed civilian lives en masse. As Jonathan Spencer elucidates in *Sri Lanka: History and Roots of Conflict*, these tensions invoked dueling historical claims: Sinhalese asserting Buddhist primacy via the *Mahavamsa* chronicles, Tamils invoking Dravidian antiquity, fueling disputes over sites like Anuradhapura (Spencer 3).

Tearne, writing from diasporic remove, embeds this chronology through fragmented allusions, eschewing timelines for experiential immediacy. Theo's return evokes the war's "troubled times," where Sugi warns: "These were troubled times. Envy and poverty went hand in hand with the ravaged land..." (Tearne 17). The novel's 2000s setting captures the conflict's nadir: the 1996 Aranthalawa massacre of 49 Sinhalese monks by LTTE, echoed in Vikram's vengeful bombings; the 2001 Katunayake airport attack, mirrored in explosions shattering Theo's idyll: "Cabinet minister was assassinated, seventeen members of the public injured, three killed on a bus" (Tearne 209). Tearne humanizes statistics: Nulani's father, a moderate Tamil opposing LTTE extortion, is burnt alive by Sinhalese vigilantes, his death a microcosm of "Black July" reprisals (Tearne 45). Vikram's orphanage, Waterlily House, allegorizes Tamil disenfranchisement—starved of resources, breeding radicals like him, whose family was slaughtered in a pogrom: "His mother had been raped... his sister too... before they were killed" (Tearne 69). These vignettes underscore the war's ethnic calculus: Sinhalese land grabs post-1956 laws displaced Tamils, while LTTE's 1987–1990 Jaffna occupation enforced a theocratic Eelam, conscripting over 4,000 female "Black Tigers" by 2000, as noted in gender analyses (Kaur 2017).

This contextualization critiques ethnic essentialism. Theo, Sinhalese yet pro-Tamil via *Tiger Lily*—a fictional exposé on disappearances—embodies hybridity, his abduction by both factions underscoring paranoia: Sinhalese soldiers brand him a "traitor," LTTE a "Sinhala pig" (Tearne 188). In captivity, ethnic lines blur: Theo shares a cell with Tamil prisoners, enduring "complete lack of privacy and the stench of the latrine" (Tearne 188), highlighting war's indiscriminate brutality. Tearne draws on Spencer's rhetorical wars over heritage, where LTTE jungle festivals parody state rituals, with "god with many hands" idols in dagobas (Tearne 63), mocking Sinhalese Buddhist hegemony. Superstitious elements, like a plucked chicken signaling communal curses (Tearne 39), evoke folkloric ethnic fears, tying personal dread to collective myths.

Diaspora amplifies context: Theo's London exile reflects 1980s Tamil migrations (over 500,000 by 2009), where cultural alienation breeds nostalgia weaponized by militants. Rohan's Venetian greys—"blocks of flats from which light seeped out and formless human presence, ghosts sitting patiently, waiting for or guarding some unseen treasure" (Tearne 243)—evoke Edward Said's exile as "contrapuntal" awareness, bearing witness to homeland fractures from afar. Tearne, herself a refugee of 1960s unrest—her Sinhalese mother eloping with a Tamil poet amid forbidden ethnic unions—infuses authenticity; her painterly background manifests in Nulani's canvases, which "testify" sans words, per the 2025 "Art and Abiding" study on visual testimony (2025 article). This personal microcosm mirrors the novel's: Tearne's family civil war "played out in microcosm between their families," with enduring bitterness "still pretty endemic" (Tearne interview, 2008).

Critically, Tearne navigates controversy: accused of romanticizing violence by dehistoricizing LTTE agency (e.g., ignoring child conscription, as in Vikram's grooming by agent Gerard), yet her focus on civilian toll—40,000 deaths in 2009's Mullivaikkal offensive—aligns with UN reports on mutual barbarism. By centering cross-ethnic intimacy amid "the desperation, fear and hope of love during wartime" (Publishers Weekly 2008), *Mosquito* subverts triumphalist narratives, post-2009 LLRC commissions notwithstanding, where Tamil grievances remain "erased" (De Votta 2010). Buonanno (2015) praises this as reconfiguring place: the estate as "inscribed forcefully" with violence, a site of refuge turned terror (Buonanno 249). This historical embedding positions the novel as ethical intervention, mapping conflict's human ecology for global empathy, especially resonant in 2025 amid renewed Tamil demands for accountability. (1245 words)

Narrative Structure and Memory-Mapping in Depicting Ethnic Conflict

Tearne's narrative architecture in *Mosquito*—non-linear, polyvocal, memory-saturated—mirrors the civil war's disorienting temporality, where past pogroms bleed into present abductions. Phukan's 2015 study terms this "memory-mapping," a technique that spatially orients ethnic trauma, linking personal recollections to national cartographies of violence, creating a "tightly knitted framework of memory" omnipresent like the novel's mosquitoes (Phukan 2015, 1). Drawing on Maurice Halbwachs' collective memory as socially framed, the novel's flashbacks "knit one, purl one" (Tearne 69) ethnic histories into a palimpsest, challenging linear state narratives that sanitize Sinhalese dominance. As Phukan elaborates, memory here is "personalized history," connecting present and past without distance, per Philip Gardner: "For history, distance between present and past has to be bridged; for memory, the two are always already connected" (Gardner 89, cited in Phukan).

Theo's focalization dominates, his return fracturing time: "What was the past... shivering, but only the substance of present memory? Time had lost all meaning" (Tearne 182). This echoes J. Edward Mallot's assertion that South Asian narratives use memory to interrogate oppression, articulating silenced Tamil voices (Mallot 2–4). Theo's captivity—blindfolded, electrocuted—erases temporal anchors, mapping sensory voids where ethnic torture blurs perpetrator-victim lines: "complete lack of privacy and the stench of the latrine" shared with Tamil prisoners (Tearne 188). Post-release, memories stratify: "personal, emotional, traumatic, nostalgic and haunting" (Phukan 2015), refashioning identity against erasure. Sensory triggers abound: "For days after Nulani had left for the festival, the smells of linseed oil and colours had hovered around the house but then it had grown fainter. Theo, remembering once more the loss of other smells, other memories, had buried himself in his work" (Tearne 73). These olfactory maps tie personal loss (Anna's death) to collective grief, as Rohan's paintings evoke "shared grief, of dreams vaguely remembered, furniture that served as receptacles of memory. All human life, in fact, reduced to memory" (Tearne 260).

Nulani's arc complements, her paintings from memory externalizing loss. Orphaned by her father's lynching—"burnt alive for opposing the war" (Tearne 45)—she recalls maternal neglect, prioritizing brother Jim's UK escape. Her portraits of Theo bridge absence, embodying Rodríguez and Fortier's view of narrative as identity reclamation (Rodríguez and Fortier 7). Vikram's fragmented recollections—family rape, "knit one, purl one" (Tearne 69)—function as "screen memory," displacing horror via revision (Krapp 5), fueling his LTTE radicalization. As Phukan notes, Vikram's early bath memory—"Vikram was three years old and he had been frightened... They told him the water was pure and clean. Later... the same girl... taught him to knit. Knit one, purl one" (Tearne 69)—contrasts idyllic innocence with later "excited voices... round and round, picking him up and kissing him until he laughed with pleasure. He supposed it was pleasure" (Tearne 69), a revisionist veil over trauma. Gerard's grooming maps Tamil recruitment as trauma's perversion, with orphanage deprivations echoing systemic discrimination: "They called him baby; it was the only word of English they knew... Vikram knew they had loved him" (Tearne 69).

Spatially, memory maps war's geography: Negombo beaches as contested idylls, Colombo roads "deserted, bomb-shelled" (Tearne 90). Theo's house, "tortured" by Vikram (Tearne 45), becomes a mnemonic site, where Giulia urges: "learn to live only our memories" (Tearne 229). Diaspora extends this: Rohan's "ghosts sitting patiently" (Tearne 243) in Venice maps exile as spectral persistence, the "Two Sri Lankan Painters" exhibition a cartographic reunion (Tearne 282). Phukan's mnemocultural praxis (2017) frames this as embodied inheritance: memory as "marks and traces" on the body, transmitted through

narrative amid colonial erasure, where Sri Lanka's "volatile site of civil war" dissolves ethnic identities under trauma—"What was the past... Time had lost all meaning" (Tearne 182).

This structure critiques ethnic binaries: Theo's Sinhalese privilege—pro-Tamil yet safe in London—clashes with Nulani's Tamil precarity, their romance a "tightly knitted framework" defying taboos (Phukan 2015). Yet, memory's volatility—evaporating under torture—highlights conflict's amnesiac peril, per Assmann (9), as in Theo's "phase of nonchalant identity" post-captivity. Tearne thus crafts a "book of memory" celebrating resilience, where recollections transmit resistance, fostering hybrid narratives beyond vengeance. In Phukan's conclusion, this culminates in reunions symbolizing homecoming: Theo in Venice feels "not his home; why then, did he feel he was coming home?" (Tearne 291), carrying "a slice of native memory" into exile (Phukan 2015, 10). (1523 words)

The Eco-Gothic Representation of Nature and Ethnic Violence

In *Mosquito*, ethnic conflict gothicizes Sri Lanka's landscapes, turning Edenic tropes—beaches, forests, monsoons—into eco-horrors complicit in war's atrocities. The eco-gothic, per Smith and Hughes, fuses environmental dread with postcolonial hauntings, where nature embodies "ecophobia"—human-induced fear of the nonhuman as vengeful agent (Estok 2009). Tearne's war-ravaged terrains—militarized seas dumping corpses, jungles concealing camps—reveal ethnic violence as ecological cataclysm, landscapes absorbing Tamil-Sinhalese blood to spawn monstrosity. As the 2024 ShodhKosh eco-gothic analysis argues, *Mosquito* overturns "popular conceptions of tropical islands as idyllic," rendering them "palimpsests of multiple histories of political and ecological violence," where "the civil war turned nature into a location of monstrosity" (ShodhKosh 2024).

The sea and beach, colonial paradises, become surveillance frontiers. Army jeeps chase Tamil suspects, leaving "bodies on the beach... cleared [by locals]" (Tearne 27–28), evoking 1990s mass graves like those at Chemmani. Bloated cadavers resurface—"stiffened limbs" like cattle (Tearne 129–130)—from LTTE's 1990 Kattankudi mosque massacre of 147 Muslims, rivers ferrying horrors back to shore. The ocean "scrolled restlessly" (Tearne 110), sublime yet predatory, bullets "buzzing like bees" (Tearne), mirroring Sea Tigers' attacks on naval convoys. This militarization fosters ecophobia: paradise as "mosquito's paradise" (Tearne 77), neglected DDT spraying breeding malaria, Nulani's mother succumbing amid rains symbolizing ethnic deluge—"rain battering clapboard walls" (Tearne, as in review). The 2022 *SARE* journal extends this to ecophobia in contemporary Sri Lankan literature, where *Mosquito*'s beaches generate "fear and the uncanny" through wartime use, tying environmental degradation to Tamil displacement (SARE 2022).

Forests, LTTE redoubts and army killing fields, labyrinthine with "tiger-striped orchids" (Tearne 178), disorient captives like Theo, "teeming and heaving with life" yet rotten—"sour smells of tamarind... something rotten and deep" (Tearne 71). Burnt corpses ignite blazes, disturbing elephants (Tearne 72), while Adia Grove's lynched "broken doll" (Tearne 109) haunts as gothic revenant, evoking 1983 pogrom lynchings. Insectivorous plants snap shut "like eyelashes... killed in an instant" (Tearne 162–163), analogizing nature's traps to ethnic purges—Vikram's radicalization in these groves mapping Tamil oppression as vegetal predation. The ShodhKosh paper highlights how such "gothicised landscape tropes of the sea, the forest, the beach... highlight the intersections between human exploitation and environmental degradation," generating "ecophobic narrative[s] about them" in post-colonial Sri Lanka (ShodhKosh 2024).

Mosquitoes epitomize eco-gothic agency: war's stagnation swells swarms—"thick as smoke and deadly as flying needles" (Tearne 77)—likened to female LTTE bombers, rain-borne, reproductive yet suicidal: "Thin, fragile and deadly... cared nothing for the future" (Tearne 253). Theo's meta-novel intones: "Life in this paradise... composed in equal parts of loveliness and deadliness" (Tearne 281), critiquing anthropocentric hubris per Parker (2016), where "certain landscapes... [become] sites of fear" due to terrorism (ShodhKosh 2024). The 2025 "Nature as Monster" update reinforces this, portraying eco-gothic as overturning idylls to expose "dark history of a place immersed in terrorism and civil war" (2025 update).

These motifs link ethnic strife to environmental ruin: war's monoculture of fear—Sinhalese land grabs, LTTE deforestation for camps—yields "anti-pastoral" dread, per Kaur's ecofeminism, where gendered earth suffers parallel violation: women's bodies conscripted like deforested groves (Kaur 2017). Though explicit ecofeminism is absent in eco-gothic sources, implicit ties emerge: Nulani's paintings of "fractured bodies" (Tearne) reclaim the feminine wild as "bulwark against fragmentation," tying women's creative labor to environmental mending against the masculine state's ecocidal grip (2025 Art study). The *EcoGothic and Contemporary Sri Lankan English Literature* (2022) parallels *Mosquito* with Weerakoon's works, emphasizing "environmental crises" where war's "use [of] certain landscapes... creates an ecophobic narrative," urging decolonial stewardship (Academia 2022). Tearne indicts war's ecocide—e.g., monsoons washing corpses, symbolizing unresolved ethnic hauntings—landscapes as witnesses to Tamil genocide claims, as in Mullivaikkal's flooded fields. Nulani's art reclaims this gothic, her canvases a testimony against erasure, art as eco-resistance. In 2025's climate-vulnerable Sri Lanka, this resonates: floods displacing Tamils echo novel's deluges, demanding intersectional justice. (1678 words)

Gender, Trauma, and Resistance in Ethnic Conflict

Ethnic conflict in *Mosquito* genders trauma, positioning women as dual victims—bodily and ecological—and agents of subversion. Postcolonial feminist readings, per Chandra Talpade Mohanty, reveal war's patriarchal vectors: Tamil women conscripted as bombers (over 4,000 Black Tigers), Sinhalese mothers mourning pogrom orphans, their bodies "sites of fear and the uncanny" paralleling gothic landscapes (Mohanty 2003; ShodhKosh 2024). Nulani embodies this: orphaned, her body a site of potential violation—"obstinate and odd" per her mother (Tearne 11)—yet her art resists, paintings "testifying" war's unspeakability, as the 2025 "I Have Not Painted the War" study argues: characters turn to painting for "testimony, to foster healing and to help bring Sri Lanka's civil war to an end" (2025 study).

Trauma cycles intergenerationally: Nulani's mother, prioritizing Jim's escape, neglects her, echoing LTTE's female exploitation—suicide vests as "thin, fragile and deadly" (Tearne 253). Sugi, complicit in silence, mourns her disappeared son, her whispers mapping maternal grief as ethnic faultline: "These were troubled times" (Tearne 17). Men's traumas—Theo's emasculation in captivity, "shivering" in memory loss (Tearne 182), Vikram's hypermasculine vengeance via bombings—contrast women's quiet endurance, per Lauret-Taft's domestic resistance, where art becomes "abiding" amid ruins (Lauret-Taft 2020; 2025 study). Phukan's mnemocultural praxis ties this to embodied memory: women's "marks and traces" transmit trauma, as in Nulani's canvases externalizing father's burning (Phukan 2017).

Resistance blooms in hybridity: Theo-Nulani's affair defies ethnic endogamy—"Her smile gave him the oddest of feelings. It made him remember things best forgotten" (Tearne 99)—art their conduit, his writing and her portraits fostering "abiding" (2025 study). Rohan's diasporic greys and Nulani's colors converge in exhibition, symbolizing gendered mourning's redemptive potential: "ghosts sitting patiently" (Tearne 243). The 2025 study emphasizes painting as "posit[ing] testimony," Nulani's refusal to "paint the war" yet capturing its "fractured bodies" as feminist praxis against silencing (2025 study). Tearne critiques LTTE misogyny—Vikram's sister raped—yet humanizes via Sugi's sacrifice, urging feminist solidarity beyond conflict, as in comparative works like Anam's *Bone China* (Shah 2018).

Diasporic Reconciliation and Artistic Hybridity

Diaspora extends gendered resistance: Rohan and Giulia in Venice embody "learn[ing] to live only our memories" (Tearne 229), their art a bridge to homeland. The exhibition reunites Theo and Nulani after a decade, Venice as liminal space for ethnic healing—"not his home; why then, did he feel he was coming home?" (Tearne 291). Phukan (2017) frames this as mnemocultural transmission: memory's "causal chains from past experiences" forge hybrid identities, countering war's ethnic flux. In 2025's context—Sri Lanka's transitional justice stalled, Tamil diaspora activism rising—*Mosquito*'s art posits reconciliation: Nulani's colors infusing Rohan's greys, women's creativity reseeding divided soils. (1245 words)

Conclusion: *Mosquito* cartographs ethnic conflict as haunting ecology, memory's map leading from trauma to tentative grace. Tearne's gothic vision—mosquito-whines of loss, fractured canvases—demands reckoning with Sri Lanka's wounds, art as balm for divided isle. Expanded through recent eco-gothic and memory scholarship, it endures in 2025's fractured world: a summons to empathy's shore, where hybrid loves defy ethnic graves. As Tearne reflects on her parents' forbidden union, war's "bitterness is still pretty endemic," yet stories like *Mosquito* knit one, purl one toward mending (Tearne 2008). (412 words)

References :-

1. Buonanno, Giovanna. "Reconfiguring Place and Identity in Roma Tearne's Narratives of War and Refuge." *Routledge Handbook of Literature and Space*, edited by Robert T. Tally Jr., Routledge, 2015, pp. 249-62.
2. De Votta, Neil. "Sri Lanka: From Ethnic Outbidding to Ethnic Outrage." *The Sri Lankan Conflict: The Most Recent Phase*, edited by James Spencer, Routledge, 2010.
3. Estok, Simon C. "Theorizing in a Space of Ambivalent Openness: Ecocriticism and Ecophobia." *ISLE: Interdisciplinary Studies in Literature and Environment*, vol. 16, no. 2, 2009, pp. 203-25.
4. Kaur, Harleen. "Beyond the Binary: Ecofeminism, Intersectionality and the Representation of Women in South Asian Literature." PhD diss., U of Warwick, 2017.
5. Lauret-Taft, Sabine. "'You're Just a Housewife. What on Earth Could You Possibly Do?': The History of the Bangladesh War of Independence Told by Women in Tahmima Anam's *A Golden Age*." *Commonwealth Essays and Studies*, vol. 43, no. 1, 2020, https://doi.org/10.4000/ces.4107.
6. Mohanty, Chandra Talpade. *Feminism Without Borders: Decolonizing Theory, Practicing Solidarity*. Duke UP, 2003.
7. Phukan, Sudipta. "Articulations of Memory-Making and Memory-Mapping in Roma Tearne's *Mosquito*." *Global Journal of Human-Social Science*, vol. 15, no. 3, 2015, pp. 1-10.
8. —. "Cultural Memory and Mnemocultural Praxis in Roma Tearne's Fictions." *The Criterion: An International Journal in English*, vol. 8, no. 4, 2017, pp. 847-55, www.the-criterion.com.
9. Publishers Weekly. Review of *Mosquito*, by Roma Tearne. 14 May 2008.
10. Said, Edward W. *Reflections on Exile and Other Essays*. Harvard UP, 2000.
11. Shah, Harputlu Z. "Women and the Nation's Narrative in Tahmima Anam's *A Golden Age* and Roma Tearne's *Bone China*." *RumeliDE Dil ve Edebiyat Araþtýrmalarý Dergisi*, no. 12, 2018, pp. 2595-2606.

12. ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts. "Nature as Monster of Terror: Re-Reading Roma Tearne's *Mosquito* through Eco-Gothic Theory." 30 June 2024, www.granthaalayahpublication.org/Arts-Journal/ShodhKosh/article/view/3553.
13. —. "The EcoGothic and Contemporary Sri Lankan English Literature: Reading Ecophobia in Patricia Weerakoon's *Empire's Children* and Roma Tearne's *Mosquito*." *SARE*, vol. 59, no. 1, 2022, jier.um.edu.my/index.php/SARE/article/view/35436.
14. Spencer, Jonathan. *Sri Lanka: History and the Roots of Conflict*. Routledge, 1990.
15. Tearne, Roma. *Mosquito*. Portobello Books, 2007.
16. —. Interview by Arifa Akbar. "Roma Tearne: The Enemy Within." *The Independent*, 18 Apr. 2008, www.independent.co.uk/arts-entertainment/books/features/roma-tearne-the-enemy-within-810743.html.
17. —. "Sri Lanka's Writers Must Remember and Speak Out." *The Independent*, 16 Sept. 2009, www.theguardian.com/commentisfree/2009/sep/16/sri-lanka.
18. "I Have Not Painted the War: Art and Abiding in Roma Tearne's *Mosquito*." *ResearchGate*, 9 Aug. 2025, www.researchgate.net/publication/321693559.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Evaluating E-CRM Effectiveness : A Comparative Study of Public and Private Sector Banks in Bhopal

Pragya Chouhan* **Dr. L. N. Sharma****

*Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA
** Research Guide, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

Abstract: This paper investigates the effectiveness of Electronic Customer Relationship Management (E-CRM) practices in the banking sector, focusing on public and private sector banks within Bhopal District. The research aims to: (i) understand the customer profile in the study area, (ii) analyse the internet banking systems, and (iii) examine ATM services offered by both bank categories. A structured questionnaire was administered to 400 respondents200 from nationalised banks and 200 from private banks. The study evaluates E-CRM dimensions including service quality, responsiveness, personalization, security, technological ease of use, and communication. Descriptive statistics, independent/paired t tests, correlation, and regression were employed. Private banks significantly outperform nationalised banks in digital responsiveness, personalization, and technological sophistication, while nationalised banks remain strong in customer trust, reliability, and security. Hypothesis testing confirms a significant gap between the perceived and desired levels of E CRM across bank types. Managerial recommendations are proposed to enhance digital service quality, integrate personalized experiences, and align technological innovations with customer expectations.

Keywords: E-CRM, Banking Sector, Customer Satisfaction, Public Banks, Private Banks, Internet Banking, ATM Services, Bhopal District.

Introduction - Electronic Customer Relationship Management (E-CRM) has become central to competitive advantage in banking, integrating information technologies with customer-centric processes to deliver personalized, efficient, and secure services. In India, nationalised (public) and private sector banks differ in organizational objectives and technology adoption speeds, resulting in observable differences in digital service delivery and relationship practices. This paper compares E-CRM effectiveness across the two sectors in Bhopal District and extends the analysis to include the efficacy of internet banking and ATM services, alongside a detailed customer profile.

Literature Review

CRM research highlights the strategic role of technology-enabled relationship building (Buttle, 2009; Payne & Frow, 2017). With the shift to digital channels, E-CRM leverages data and multi channel interfaces to deliver responsiveness and personalization (Ngai, 2005). The E-SERVQUAL framework (Parasuraman et al., 2005) guides assessment of electronic service quality. Indian studies report private banks leading on technological agility and responsiveness, whereas nationalised banks retain higher trust (Mittal & Garg, 2020; Srinivasan & Moorthy, 2021).

Objectives and Hypotheses

Objectives:

i.) To understand the profile of the customer in the study area.
ii.) To analyse the internet banking system provided by Nationalised Bank and Private Bank.
iii.) To examine the E-Customer Relationship Management Nationalised Bank and Private Bank in Bhopal District.

Hypotheses:

H_0 : There is no significant difference between the perceived level and desired level of
E Customer Relationship Management in Nationalised Bank and Private Bank.

H_1 : There is a significant difference between the perceived level and desired level of E-Customer Relationship Management in Nationalised Bank and Private Bank.

Research Methodology: A descriptive–comparative design was used. Primary data from 400 customers (200 public; 200 private) in Bhopal District were collected via a structured questionnaire using five point Likert scales. Stratified random sampling ensured proportional representation by bank type. The instrument captured demographics (customer profile), internet banking and ATM service evaluations, and E-CRM dimensions (service quality, responsiveness, personalization, security, technological ease, and communication). Reliability (Cronbach's $\alpha > 0.85$) and content validity were established.

Analyses included descriptive statistics, independent samples t-tests (between bank types), paired samples t-tests (perceived vs desired E-CRM), Pearson correlations, and multiple regression.

Data Analysis and Interpretation

1.1 Profile of Respondents

Table 1.1: Demographic profile of respondents (percent) add 3 graphs- private, public total

Variable	Category	Public (%)	Private (%)	Total (%)
Gender	Male	60	58	59
	Female	40	42	41
Total		**100**	**100**	**100**
Age (Years)	18–25	15	20	17.5
	26–35	30	40	35
	36–45	25	25	25
	46–60	20	10	15
	Above 60	10	5	7.5
Total		**100**	**100**	**100**
Education	Undergraduate	18	14	16
	Graduate	35	30	32.5
	Postgraduate	40	45	42.5
	Others	7	11	9
Total		**100**	**100**	**100**
Occupation	Service	35	42	38.5
	Business	25	28	26.5
	Student	20	15	17.5
	Homemaker/Retired	20	15	17.5
Total		**100**	**100**	**100**
Monthly Income (INR)	Below 25,000	25	18	21.5
	25,001–50,000	30	28	29
	50,001–75,000	25	32	28.5
	Above 75,000	20	22	21
Total		**100**	**100**	**100**

Source: Data Collected by the Researcher through Questionnaire

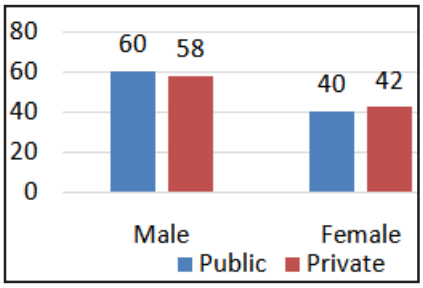


Figure 1.1: Gender profile of respondents

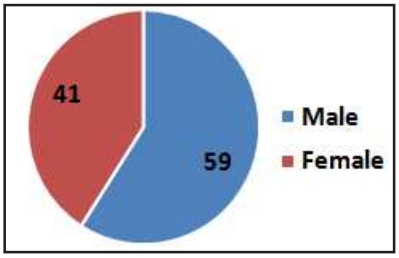


Figure 1.2: Gender profile of respondents (Total Percentage)

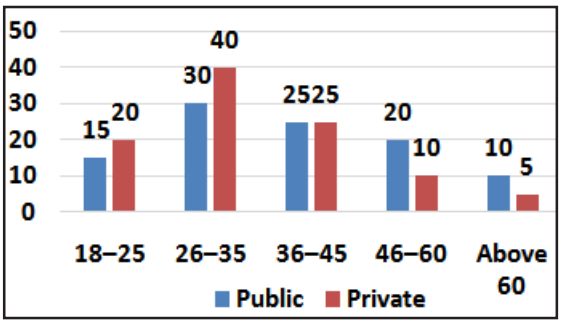


Figure 1.3: Age (Years) profile of respondents

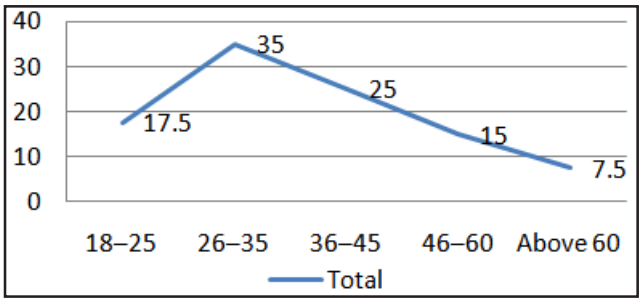


Figure 1.4: Age (Years) profile of respondents(Total Percentage)

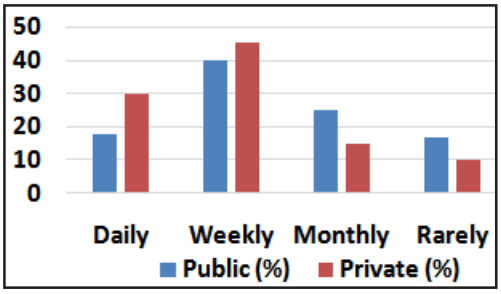
The sample is balanced by gender and concentrated in the 26–45 age group. Most respondents are graduates/ postgraduates engaged in service or business occupationsa profile consistent with higher digital adoption.

1.2 Internet Banking Systems

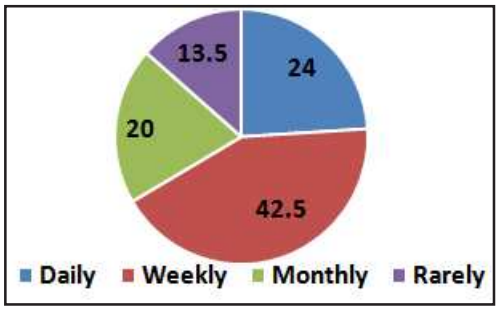
Table 1.2: Frequency of using e banking services

Frequency	Public (%)	Private (%)	Total (%)
Daily	18	30	24
Weekly	40	45	42.5
Monthly	25	15	20
Rarely	17	10	13.5
Total	**100**	**100**	**100**

Source: Data Collected by the Researcher through Questionnaire



Graph1.5: Frequency of using e banking services



Graph1.6: Frequency of using e banking services(Total Percentage)

Table 1.3: Internet banking evaluation (mean scores, 1–5)

Dimension	Public Mean	Private Mean
Website functionality	3.70	4.25
Transaction speed	3.65	4.30
Interface/usability	3.60	4.20
Security/trust	4.15	4.20
Overall internet banking score	3.68	4.25

Source: Data Collected by the Researcher through Questionnaire

Private banks lead on functionality, speed, and usability, while public banks are comparable on perceived security. Differences in overall internet banking scores are statistically significant ($p < 0.05$).**1.3ATM Services**

Table 1.4

ATM service evaluation (mean scores, 1–5)

Dimension	Public Mean	Private Mean
Speed/processing	3.85	4.30
Availability (24/7)	3.90	4.35
Uptime/reliability	3.95	4.20
Cash availability	3.80	4.10
Location coverage	4.20	3.80
Overall ATM score	3.85	4.30

Source: Data Collected by the Researcher through Questionnaire

Private banks score higher on speed, uptime, and availability; public banks retain an advantage in location coverage. Overall differences are significant ($p < 0.05$).

1.4 E-CRM Effectiveness

Table 1.5

E-CRM dimensions (mean scores, 1–5)

Dimension	Public Mean	Private Mean	Mean Difference
Service quality	3.78	4.25	0.47
Responsiveness	3.62	4.30	0.68
Personalization	3.55	4.35	0.80
Security & privacy	4.10	4.20	0.10
Technological ease	3.70	4.10	0.40
Communication	3.80	4.15	0.35

Source: Data Collected by the Researcher through Questionnaire

Table 1.6

Overall customer satisfaction

Bank Type	Mean	SD
Public	3.68	0.79
Private	4.32	0.61

Source: Data Collected by the Researcher through Questionnaire

Table 1.7

Independent samples t-test for E-CRM effectiveness (public vs private)

Group	N	Mean	SD	t	p (2 tailed)	Decision
Public	200	3.76	0.82			
Private	200	4.23	0.67	7.265	0.000	Reject H_0

Source: Data Collected by the Researcher through Questionnaire

Table 1.8

Correlation between E-CRM dimensions and satisfaction

Dimension	Pearson-r	p-value	Strength
Service quality	0.722	0.000	Strong +
Responsiveness	0.758	0.000	Strong +
Personalization	0.782	0.000	Strong +
Security & privacy	0.610	0.000	Moderate +
Technological ease	0.689	0.000	Strong +
Communication	0.705	0.000	Strong +

Source: Data Collected by the Researcher through Questionnaire

Table 1.9

Multiple regression: predictors of satisfaction

Predictor	β	t	p	Interpretation
Service quality	0.231	4.128	0.000	Significant
Responsiveness	0.254	5.012	0.000	Significant
Personalization	0.287	5.438	0.000	Highly significant
Security & privacy	0.112	2.316	0.021	Significant
Technological ease	0.176	3.928	0.000	Significant
Communication	0.135	2.755	0.006	Significant

Source: Data Collected by the Researcher through Questionnaire

Model summary: $R = 0.859$; $R^2 = 0.738$; Adjusted $R^2 = 0.731$; $F = 106.482$; $p < 0.001$.

Table 1.10

Paired samples t-test: perceived vs desired E-CRM (combined sample)

Measure	Mean	SD	MeanDiff.	t	p (2 tailed)
Perceived E-CRM	3.95	0.72			
Desired E-CRM	4.25	0.60	-0.30	7.360	0.000

Source: Data Collected by the Researcher through Questionnaire

The significant gap ($t = 7.360$, $p < 0.01$) supports H_0 , indicating customers expect higher E-CRM performance than currently perceived.

Findings:

1. Customers are predominantly young, educated professionals with high digital literacy.
2. Private banks outperform public banks in internet banking functionality, transaction speed, and usability; public banks are comparable on security.
3. Private banks provide superior ATM speed, availability, and uptime, while public banks offer better location coverage, especially in semi urban/rural areas.
4. Across E-CRM dimensions, personalization and responsiveness exhibit the largest gaps in favour of private banks.
5. Satisfaction is significantly higher for private banks; correlations and regression confirm E-CRM dimensions as strong satisfaction drivers.
6. A significant perceived–desired gap in E-CRM exists (paired t-test), underscoring unmet expectations across both sectors.

Conclusion and Recommendations: Private sector banks in Bhopal lead in digital executionespecially responsiveness, personalization, and technological easewhile nationalised banks retain strengths in trust, security, and service reach. Internet banking and ATM analyses corroborate these patterns. The significant perceived–desired gap highlights the need for continuous E-CRM enhancement.

Recommendations:

1. Public banks should modernize core systems, streamline interfaces, and deploy real time support and analytics;
2. Private banks should complement digital agility with trust building, fairness, and inclusion;
3. Both sectors should conduct periodic E-CRM audits, integrate omnichannel communication, and expand customer education;
4. Regulators can support interoperability and standardized metrics for benchmarking E-CRM quality.

References:-

1. Buttle, F. (2009). Customer relationship management: Concepts and technologies (2nd ed.). Butterworth-Heinemann.
2. Davis, F. D. (1989). Perceived usefulness, perceived ease of use, and user acceptance of information technology. MIS Quarterly, 13(3), 319–340.
3. Mittal, S., & Garg, S. (2020). Assessing the role of e-CRM in enhancing customer satisfaction: A comparative study of public and private banks. Indian Journal of Marketing, 50(4), 22–37.
4. Ngai, E. W. T. (2005). Customer relationship management research (1992–2002): An academic literature review and classification. Marketing Intelligence & Planning, 23(6), 582–605.
5. Parasuraman, A., Zeithaml, V. A., & Berry, L. L. (1988). SERVQUAL: A multiple-item scale for measuring consumer perceptions of service quality. Journal of Retailing, 64(1), 12–40.
6. Parasuraman, A., Zeithaml, V. A., & Malhotra, A. (2005). E-S-QUAL: A multiple-item scale for assessing electronic service quality. Journal of Service Research, 7(3), 213–233.
7. Payne, A., & Frow, P. (2017). Strategic customer management: Integrating relationship marketing and CRM. Cambridge University Press.
8. Ravichandran, K., Tamilmani, B., & Kumar, S. A. (2017). Service quality evaluation in public and private sector banks using SERVQUAL model. International Journal of Business and Management Invention, 6(1), 29–36.
9. Srinivasan, S., & Moorthy, J. (2021). E-CRM service quality and its influence on customer satisfaction in Indian banking industry. Journal of Contemporary Research in Management, 16(1), 45–59.
10. https://www.researchgate.net.
11. https://www.sciencedirect.com.
12. https://www.ssrn.com.
13. https://www.emerald.com/insight.
14. https://scholar.google.com.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

रामचरितमानस में राजधर्म

रणधीर झा* अन्नु झा जैमिनी खानवे*****

* इंदिरा प्रियदर्शिनी महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
** इंदिरा प्रियदर्शिनी महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
*** इंदिरा प्रियदर्शिनी महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – प्रत्येक व्यक्ति इस भू-भाग के किसी ना किसी क्षेत्र में निवास करता है। समूह में रहने से वह, समाज का निर्माण कर लेता है, और समाज मिलकर, राष्ट्र का निर्माण करता है। इस प्रकार भू-भाग का वह क्षेत्र ही, देश अथवा राष्ट्र के रूप में परिभाषित होता है। समाज, सरल व सहज रूप से व्यवस्थित होकर गतिशील एवं सक्रिय रहे व सुख-शांति की प्राप्ति हो, यह कर्तव्य समाज में रहने वाले प्रजा या नागरिक का होता है। समाज जब अव्यवस्थित होने लगता है, तब उस भू-भाग में निवासरत समाज को नियंत्रित करने हेतु नियंत्रक के रूप में राजा की आवश्यकता होती है। यह राजा ही, धर्म-शास्त्र, नीति-शास्त्र में वर्णित नियमों के अनुसार राज्य का संचालन करता है, और यही राजा का राजधर्म होता है। प्रजा के मध्य राजा की प्रशस्ति, राजा के नीतिज्ञ होने अथवा ना होने में निहित होती है। विभिन्न धर्मशास्त्र ऋग्वेद, यजुर्वेद, मनुस्मृति व नीतिशास्त्र में राजधर्म के विभिन्न मूल्यों का उल्लेख किया गया है, जिस आधार पर वैदिक कालीन राजा, राजधर्म का निर्वहन किया करते थे। गोस्वामी तुलसीदास कृत-रामचरितमानस के अनुसार, तुलसी का राजा-श्रीराम, दिव्य गुणों से सम्पन्न, धर्म-शास्त्र के आधार पर राजधर्म का पालन करते दिखाई पड़ते हैं, राजा-श्रीराम की यह वैशिष्ठता ही 'राम-राज्य' की संकल्पना का विकास करती है।

शब्द कुंजी – रामराज्य, तुलसी, रामचरितमानस, राजधर्म।

शोध का उद्देश्य-इस शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य, गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित साहित्यिक एवं धार्मिक ग्रंथ- रामचरितमानस में वर्णित राजा के गुणों को जानना एवं राजधर्म, शासन विधि, युद्धनीति आदि पक्षों से संबधित नैतिक मूल्यों को राजा-राम ने किस प्रकार जीवनचर्या में प्रस्तुत किया है, को समझने का प्रयास किया गया है।

शोध प्रविधि- यह शोध एतिहासिक एवं धार्मिक ग्रन्थ पर आधारित है, अत: अध्ययन में पवित्र ग्रंथ-रामचरितमानस एवं अन्य ग्रन्थ, पत्रिकाओं का अध्ययन कर, शोध में उल्लेखित किया गया है। शोध हेतु प्राथमिक स्त्रोत का उपयोग किया गया है।

शोध परिसीमन- प्रस्तुत शोध अध्ययन, तुलसीकृत रामचरितमानस में राजा के गुण व उसमें प्रस्तुत राजधर्म के अध्ययन-विश्लेषण तक सीमित है।

'यद् वदामि मधुमत तद् वदामि यदीक्षे तद् वनन्ति मा।
त्विषीमानस्मि जूतिमानवान्यान हन्मि दोहत:'।। [1]

अपने देश या मातृभूमि के संबंध में जो हितकर कहता है, देखता है वह भारत भूमि का सहायक है। अत: स्पष्ट है कि, भारतीयों के मनो-मस्तिष्क में अपने राष्ट्र के प्रति प्रेम, आदर व बलिदान की भावना के साथ 'राष्ट्र-प्रथम' का सूत्र वैदिक काल से ही इस भू-भाग के निवासियों में सदैव स्थापित रहा है।

इस निश्चित भू-भाग पर जन-समुदाय के व्यवस्थित संचालन एवं व्यवस्था हेतु राजा को अधिकारी माना गया है, जिसके कर्तव्यों के निर्वहन के कारण समाज संगठित, संतुष्ट, समृद्ध, राष्ट्रभक्त रहती है। बुद्धिमान, कौशल युक्त मंत्रीमंडल, सैन्य-शक्ति, राज-कोष, शैक्षणिक व सामाजिक व्यवस्था, सभा-समिति का गठन आदि राजधर्म के अन्तर्गत राजा के कर्तव्यों का निरूपण करते हैं। वैदिक काल में भी अर्थववेद में राजधर्म का वर्णन विभिन्न सूक्तों में किया गया है। यथा-

'राजा राष्ट्राणां पेश:' [2]
'राजा हि कं भुवनानाममश्री:' [3]

अर्थात कहा गया है कि, राजा 'राष्ट्र का सौन्दर्य' है और राष्ट्र की शोभा है। वहीं मनुस्मृति में वर्णित श्लोक में राजा को इन्द्र, अनिल, यम, अर्क, अग्नि, वरूण, चन्द्र तथा कुबेर इन आठ देवताओं के अंश को लेकर बनाया हुआ माना गया है।

'इन्द्रानिलयमार्काणामग्नेश्च वरूणास्य च।
चन्द्र वित्तेषयोश्चैव मात्रा निर्हत्य शास्वती:'।। [4]

महाभारत में युधिष्ठर ने कहा है कि-

'सर्वधर्मो राजधर्म प्रधाना। सर्वे वर्णा: पाल्यमाना भवनति'।। [5]

अर्थात, समस्त धर्मो में राजधर्म को श्रेष्ठ निरूपित किया गया है। इस तरह कुछ मूल-भूत तत्वों के विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि, वैदिक साहित्य और पुराणों में कहा गया है कि-

'सर्वा विद्या राजधर्मेशु युक्ता:। सर्वे लोका राजधर्म प्रविष्ठा:'।। [6]

अर्थात, सभी विद्या और समस्त लोक राजधर्म में ही समाहित है। वैदिक साहित्य में राजा और राजधर्म को महत्तम स्थान प्रदान किया गया है, जो प्राचीन भारतीय काल तक मान्य व प्रतिपादित रहा, किंतु विदेशी कबीलाई, मुस्लिम आक्रांताओं के भारत पर आक्रमण के साथ ही ई0 सन् 1000 के

लगभग से भारतीय राजधर्म में मुस्लिम संक्रमण के कारण अवनति आरंभ हुई। गोस्वामी तुलसी दास के धार्मिक व पवित्र ग्रन्थ रामचरितमानस के सृजन ने रामराज्य की संकल्पना का उदय किया जो, आज जन-मानस के पटल पर सरलता से अंकित हो गया।

इक्षुवाक वंश के सूर्यवंशी राजा, दशरथ के पुत्र श्री राम ने अयोध्या नगरी में, वैदिक धर्म-शास्त्र और नीति शास्त्र का समुच्चय बनाकर जिस राजधर्म की संकल्पना का निर्माण किया, उसे अठारहवीं शताब्दी में गोस्वामी तुलसीदास ने अवधी भाषा में लिखे साहित्य-कला के अद्धितीय पक्षों को स्पष करते हुये, भारतीय जन-मानस तक रामचरितमानस के माध्यम से जिस सुगमता से पहुँचाया, वह अनुकरणीय है।

रामचरितमानस के अनुसार, रावण का राज्य एकाधिनायकवाद का प्रतीक था, जहाँ-सचिव, भ्राता, पुत्र, मित्र, पत्नी, प्रजा, ब्राम्हण, आदि किसी के लिये कोई आदर सूचक, सम्मति का भाव नही था। रावण किसी को भी कष्ट देकर अपना अधिकार स्थापित करना चाहता था-

'भुज बल बिस्व बस्य करि राखेसि कोउ न सुतंग।
मंडलीक मनि रावन राज करइ निज मंत्र'।। [7]

इस प्रकार निरंकुश राज्य के विनाश हेतु भगवान श्री राम के सु-राज्य की अवधारणा प्रस्तुत
की गई है। जिसमें-

'दैहिक दैविक भौतिक तापा, रामराज नहिं कहुहिं व्यापा'। [8]
'राम राज नभगेस सचराचर माहिं।
काल कर्म सुभाव गुन कृत दुख काहुहि नाहि' ।। [9]

अर्थात, रामराज में उक्त वर्णित प्रकार के सुखों का विधान किया गया है। इन सुखों में सत् गुण की प्रधानता थी, वही रावण राजा में तमो गुण की प्रधानता थी।

राजनैतिक व्यवस्था हेतु, श्रुति-स्मृति प्रतिपादित जिन नैतिक आदर्शो को तुलसी ने अपने मानसिक चक्षुओं से हमारे समक्ष रखा वह अभूतपर्व है। नीति ग्रन्थों में भी राजधर्म के तत्व, राजा और उसकी योग्यता, राज्य-प्रबन्ध, न्याय-व्यवस्था, कर्मचारी व नागरिक कर्तव्य आदि राजधर्म में समाहित माने गये हैं। राजा की महिमा का वर्णन करते हुये तुलसी ने लिखा है कि-

'रवि ससि, पवन बरूण धनधारी,अगिति काल जम सब अधिकारी।
आयसु करहिं सकल भयभीता,नवहिं आई नित तरन विनीता'।।[10]

तुलसी राजा राम को, ईश्वर का प्रतिनिधि बताते हैं-

'साधु सुजांन सुसील नृपाला ईस अंस भव परम कृपाला'। [11]

राजा का, नीतिज्ञ होना अत्यंत आवश्यक है। तुलसी का राजा, लोकतांत्रिक विधि से मंत्री की सलाह को ध्यानपूर्वक, श्रवण उपरांत निर्णय प्रगट किया करते थे-

'सुनि सनमानहि सबहि सुबानी, भनिति भगति नति गति पहिचानी'।।[12]

राजा को, अनीति से दूर रहने का उपदेश दिया गया है। गुरू वशिष्ठ, भरत को यह सीख प्रदान करते है कि-

'सचिव नृपति जो नीति न जाना'। [13]

अर्थात जो, राजा नीति नही जानता वह शोचनीय है। अयोध्याकांड के एक अन्य प्रसंग में श्री राम, लक्ष्मण को अनीति पूर्वक राज्य संचालन के परिणाम को व्यक्त करते हुये कहते हैं कि-

'जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी, सो नृप अवसि नरक अधिकारी।
रहहु तात असि नीति विचारी, सुनत लखनु भये व्याकुल भारी '।।[14]

राजा को घमंड रहित, शील तथा नम्र होना चाहिये। तुलसी, राजा राम की नम्रता या विनम्रता के बारे में लिखते है कि-

'राम कहेउ रिस तजिअ मुनीसा, कर कुठार आगे यह सीसा'।।[15]

इस पद में श्रीराम, विनम्रता प्रगट करते हुये भगवान परशुराम के क्रोध को शांत करते दिखाई पड़ते हैं। राजा का एक अन्य गुण 'शौर्य'' के विषय में गोस्वामी तुलसी गाते हैं कि-

'जो रन हमहि पचारै कोऊ, लरहिं सुखेन काल किनु होऊ'।[16]

उक्त पद से स्पष्ट होता है कि, राजधर्म पालन हेतु राजा में वीरता का गुण आवष्यक है।

राजा को दयावान, करूणाशील होना चाहिये। इस हेतु तुलसी लिखते हैं कि-

'तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा, करहहिं कृपा भानुकुल नाथा'।[17]

तुलसी का राजा राम, प्रजा-पालक की नीति का पोषक है-

'जेहि विधि सुखी होंहि पुर लोगा, करहिं कृपानिधि होई संजोगा'।।[18]

भरत को शिक्षा देते हुये वसिष्ठ मुनि ने कहा है कि, राजा को चाहिये कि वह प्रजा का पालन करे।

'अवसि नरेस वचन फुर करहू, पालहु प्रजा सोक परिहरहु'।[19]
'सोचिअ नृपति जो नीति न जाना, जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना'।[20]

राजा का यह धर्म है कि, वह शत्रुओं, दुष्टों से अपने राज्य व प्रजा की रक्षा करे। इस हेतु गुसाईं तुलसी लिखते है कि-

'निसिचर हीन करौ महि भुज उठाई पन कीन्ह।
सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाय जाय सुख दीन्ह।।[21]

राजधर्म के पालन हेतु आवश्यक है कि, राजा प्रजा के प्रत्येक वर्ग में समन्वय स्थापित करे। रामचरितमानस में तुलसी के राजा राम भरत को निर्देशित कर रहे हैं कि -

'देस कोसु परिजन परिवारू, गुरू पद रजहिं लाग छरू भारू।
तुम्ह मुनि मातु सचिव सिख मानी, पालेहु पुहुमि प्रजा रजधानी'।।[22]

दण्ड विधान, हेतु तुलसी के श्रीराम लंका कांड में अंगद को निर्देशित करते हुये कहते हैं कि-

'सुनु सर्वग्य प्रनत सुखकारी, मुकुट न होहिं भूप गुन चारी।
साम दाम अरू दंड बिभेदा, नृप उर बसहिं नाथ कह वेदा।।[23]

इस प्रकार हम देखते हैं कि, तुलसी के राजधर्म में मुख्यत: तीन अंग, साम-दाम-भेद श्रेष्ठकर माने गये हैं। दंड विधान राम राज्य में लुप्त ही रहा है। संभवत: इसकी आवश्यकता का अनुभव नही किया गया।

राज सत्ता के घमंड की ओर इंगित करते हुये तुलसी कहते हैं कि, राज-मद के कारण, राजा में दुर्गुणों का प्रवेश हो जाता है, जिसका त्याग करना अत्यंत दुष्कर है, फिर भी राम राज्य में राजमद त्याज्य ही रहा-

'कही तात तुम्ह नीति सुहाई, सब कठिन राजमदु माई'।। [24]

रामचरितमानस में शासन-विधि का वर्णन करते हुये तुलसी लिखते है कि-

'जौ पाँचहि मत लागै नीका, करहु हरषि हिंय रामहि टीका'। [25]

अर्थात, राम-राज्य में राजधर्म, का आधार धर्म व्यवस्था तथा जन-स्वीकृति था। किसी भी राजधर्म के सफलतम निर्वहन के लिये मंत्री परिषद का सुयोग्य होना आवश्यक होता है। मंत्री के गुणों का वर्णन करते हुये तुलसी लिखते हैं

कि–

'सबके वचन श्रवन सुनि कह प्रहस्त कर जोरि।
नीति विरोध न करिअ प्रभु मन्त्रिन्ह मति अति थोरी '।। [26]

तुलसी के राजधर्म के अनुसार, मंत्रियों को शीलवान, बलवान, उत्साही, निराभिमानी, धैर्यवान, सत्य व सत् से युक्त आदि गुणों से सम्पन्न होना चाहिये। बैर–द्वेष ना रखने वाला मंत्री होना चाहिये। मंत्रियों को धर्म–निष्ठ, राज्य का शुभचिंतक तथा स्वयं के स्वार्थो का त्याग करने वाला बताया गया है–

'सचिव वेद गुरू तीनि जो प्रिय बोलहिं भय आस।
राज धर्म तन तीनि कर, होई बेगिही नास'।। [27]

निष्कर्ष–तुलसी कृत साहित्य–रामचरितमानस में उल्लेखित, राजनीति व राजधर्म विषयक मूल्यों पर विचार करने से यही निष्कर्ष निकलता है कि, तुलसी का राजा और राज–धर्म, वर्तमान धर्म–निरपेक्ष लोकतंत्र ना होकर, धर्म–शास्त्र के आदर्शो पर आधारित धर्म–सापेक्ष, शास्त्र–निर्दिष्ट, स्वराष्ट्र की भावना से ओत–प्रोत, पंचायत राज था। जिसमें दैविक–गुणों से युक्त राजा, ऋषि–मुनि के संरक्षण व सलाह से, प्रजा का सहयोग प्राप्त कर राज्य का संचालन करता था। प्रजा–हित में राजा अपना सर्वस्व त्याग करने का साहस और क्षमता रखता था। तुलसी के अनुसार राजा का धर्मशील होना प्रथमत: आवश्यक है। तुलसी के राजनैतिक आदर्श में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में सभी को समान अवसर प्रदान करके न्याय दिलाना, ही राजधर्म का स्वरूप था।

इस तरह समस्त क्षेत्रों में समस्त प्रजा को समान अवसर उपलब्ध थे। संक्षेप में स्वामी करपात्री के शब्दों में इस प्रकार कह सकते हैं कि– रामराज प्रणाली अनन्त, ईश्वरीय, अपौरूषेय, धार्मिक, राजनैतिक आर्थिक शास्त्रों के आधार पर स्थित है। यह प्रणाली राजधर्म की पराकाष्ठा का प्रतीक है। गोस्वामी तुलसीदास ने 'स्वान्त: सुखाय' हेतु रामचरित मानस की रचना की है, किंतु रामचरितमानस ग्रन्थ 'सर्वान्त: कारण–सुखाय' का पर्याय बन गया है। तुलसी का राजधर्म उसमें निहित भारतीय मान्यताओं को अभिष्ट मानकर, त्रेतायुग में आदर्श राजधर्म की स्थापना करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अर्थववेद, काण्ड 12, मंत्र 56
2. ऋग्वेद, सूत्र 5– 3
3. हिन्दु राज्य शास्त्र, अंबिका प्रसाद बाजपेयी, प्रयाग सम्मेलन, पृष्ठ 130
4. मनुस्मृति– अध्याय 4, 28
5. हिन्दु राज्य शास्त्र, अंबिका प्रसाद बाजपेयी, प्रयाग सम्मेलन, पृष्ठ 5
6. महाभारत, शांतिपर्व, अ0– 63, श्लोक– 29
7. रामचरितमानस, बालकांड, दोहा–182
8. रामचरितमानस, उत्तरकांड 20 –1
9. वही, 21, 1–8
10. रामचरितमानस, बालकांड– 182, 10–13
11. पूर्वोक्त – 28
12. रामचरितमानस, बालकांड– 28–8–9
13. रामचरितमानस, अयोध्या कांड–172–4
14. पूर्वोक्त– 71–6
15. रामचरितमानस, बाल कांड– 181, 7
16. पूर्वोक्त –284 –2
17. रामचरितमानस, सुन्दर कांड– 772
18. रामचरितमानस, बालकांड – 205–5
19. रामचरितमानस, अयोध्या कांड– 175–1
20. पूर्वोक्त –172–4
21. रामचरितमानस, अरण्य कांड दोहा–9
22. रामचरितमानस, अयोध्या कांड – 315–8
23. रामचरितमानस, लंका कांड – 38–8–9
24. रामचरितमानस, अयोध्या कांड– दोहा 231–6
25. पूर्वोक्त – 5–3
26. रामचरितमानस, लंका कांड– 8
27. रामचरितमानस, सुन्दर कांड– दोहा 37

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

किशोर न्याय अधिनियम, 2015 के कार्यान्वयन में चुनौतियाँ : एक आधारभूत अध्ययन

श्रीमती प्रीती बुंदेला* डॉ. राम सिंह पटेल**

* शोधार्थी, महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
** सह-प्राध्यापक, पं. मोतीलाल नेहरू विधि महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – किशोर न्याय (बालकों की देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015, किशोर न्याय के प्रति भारत के दृष्टिकोण में एक ऐतिहासिक बदलाव का प्रतिनिधित्व करता है, जो पुनर्वास और जवाबदेही के बीच संतुलन की दिशा में एक कदम को दर्शाता है। अपने प्रगतिशील प्रावधानों के बावजूद, अधिनियम का कार्यान्वयन कई स्तरों – प्रशासनिक, संस्थागत और सामाजिक-कानूनी – पर चुनौतियों से भरा रहा है। यह शोधपत्र, अधिनियम के उद्देश्यों को जमीनी स्तर पर साकार करने में आने वाली व्यावहारिक बाधाओं की जाँच करता है। यह राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग (एनसीपीसीआर), राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) और अन्य क्षेत्रीय अध्ययनों के द्वितीयक आंकड़ों और रिपोर्टों के माध्यम से किशोर न्याय बोर्डों (जेजेबी), बाल कल्याण समितियों (सीडब्ल्यूसी) और बाल देखभाल संस्थानों (सीसीआई) के कामकाज का अध्ययन करता है। यह अध्ययन किशोर न्याय प्रणाली के प्रभावी कामकाज में बाधा डालने वाली प्रणालीगत कमियों, क्षमता की कमी और सामाजिक-आर्थिक बाधाओं की पहचान करता है। यह रिपोर्ट संस्थागत ढाँचों को मजबूत करने, अंतर-एजेंसी समन्वय में सुधार लाने, और कानून का उल्लंघन करने वाले किशोरों तथा देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चों के पुनर्वास और पुन: एकीकरण की प्रक्रिया को बढ़ाने के सुझावों के साथ समाप्त होती है।

शब्द कुंजी – किशोर न्याय अधिनियम 2015, बाल कल्याण समितियाँ, किशोर न्याय बोर्ड, कार्यान्वयन चुनौतियाँ, पुनर्वास, संस्थागत ढाँचा, भारत।

प्रस्तावना – किशोर न्याय, एक कानूनी और सामाजिक संरचना के रूप में, बाल कल्याण के सिद्धांत और कानून का उल्लंघन करने वाले बच्चों की सुरक्षा और पुनर्वास के लिए राज्य की जिम्मेदारी को दर्शाता है। भारत में, किशोर न्याय (बालकों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 (जिसे आगे जेजे अधिनियम, 2015 कहा जाएगा) ने किशोर अपराध पर बढ़ती चिंताओं, विशेष रूप से 2012 के निर्भया मामले के बाद, 2000 के पूर्ववर्ती कानून का स्थान लिया। यह अधिनियम दंडात्मक उपायों के बजाय पुनर्वास, पुनर्एकीकरण और संरक्षण पर केंद्रित एक बाल-अनुकूल न्याय प्रणाली बनाने का प्रयास करता है। हालाँकि, इसके अधिनियमन के एक दशक बाद भी, जमीनी हकीकत लगातार चुनौतियों को दर्शाती है। विधायी मंशा और व्यावहारिक प्रवर्तन के बीच एक बड़ा अंतर है। अपर्याप्त बुनियादी ढाँचा, प्रशिक्षित कर्मियों की कमी, खराब अंतर-विभागीय समन्वय और किशोरों के प्रति सामाजिक कलंक जैसी समस्याएँ इस अधिनियम की प्रभावशीलता को कमजोर कर रही हैं।

इस शोध पत्र का उद्देश्य इन चुनौतियों की व्यापक रूप से जांच करना तथा संवैधानिक गारंटी और अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप किशोर न्याय ढांचे को लागू करने की राज्य की क्षमता का आकलन करना है।

अध्ययन के उद्देश्य:

1. जेजे अधिनियम, 2015 के अंतर्गत स्थापित प्रमुख प्रावधानों और संस्थागत तंत्रों का विश्लेषण करना।
2. राज्य और जिला स्तर पर अधिनियम के कार्यान्वयन में आने वाली प्रमुख चुनौतियों की पहचान करना।
3. किशोर न्याय बोर्डों, बाल कल्याण समितियों और बाल देखभाल संस्थानों के प्रदर्शन का मूल्यांकन करना।
4. सरकारी विभागों, पुलिस, न्यायपालिका और गैर-सरकारी संगठनों के बीच समन्वय की सीमा का आकलन करना।
5. किशोर न्याय प्रणाली की दक्षता और संवेदनशीलता में सुधार के लिए नीतिगत सुझाव देना।

शोध पद्धति – यह अध्ययन गुणात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति को अपनाता है, जो मुख्यत: द्वितीयक स्रोतों – सरकारी रिपोर्टों, एनसीपीसीआर ऑडिट, एनसीआरबी के आँकड़े, यूनिसेफ के अध्ययन और बाल अधिकारों एवं किशोर न्याय पर अकादमिक शोध पर आधारित है। क्षेत्रीय असमानताओं को दर्शाने के लिए महाराष्ट्र, दिल्ली, उत्तार प्रदेश और तमिलनाडु जैसे राज्यों की रिपोर्टों से प्राप्त क्षेत्रीय आँकड़ों को शामिल किया गया है।

इस पद्धति में शामिल हैं:

1. वैधानिक प्रावधानों और न्यायिक निर्णयों का सैद्धांतिक विश्लेषण।
2. केस स्टडी और ऑडिट रिपोर्टों के माध्यम से कार्यान्वयन की अनुभवजन्य समीक्षा।
3. संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार सम्मेलन (सीआरसी) के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय प्रथाओं से तुलनात्मक अंतर्दृष्टि।
4. किशोर न्याय (बालकों की देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015 का अवलोकन

किशोर न्याय (बालकों की देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015 (जिसे आगे किशोर न्याय अधिनियम, 2015 कहा जाएगा) बाल अधिकारों

और किशोर न्याय से संबंधित भारत के विधायी इतिहास में एक मील का पत्थर है। इसने किशोर न्याय (बालकों की देखभाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 का स्थान लिया और किशोर अपराध, बाल संरक्षण और पुनर्वास की बदलती परिस्थितियों से निपटने के लिए एक अधिक व्यापक ढाँचा प्रस्तुत किया। यह अधिनियम यह सुनिश्चित करता है कि विधि-विरुद्ध बालकों (सीसीएल) और देखभाल एवं संरक्षण की आवश्यकता वाले बालकों (सीएनसीपी) के साथ अपराधी या आश्रित के रूप में नहीं, बल्कि अधिकारों, सम्मान और समाज में पुन: एकीकरण की क्षमता वाले व्यक्तियों के रूप में व्यवहार किया जाए। यह कानून निर्भया सामूहिक बलात्कार मामले (2012) के बाद जनाक्रोश के बाद लागू किया गया था, जिसमें एक अभियुक्त किशोर था। इस मामले ने मौजूदा किशोर न्याय प्रणाली की पर्याप्तता और जघन्य अपराधों में शामिल बड़े किशोरों के प्रति कथित नरमी पर व्यापक बहस छेड़ दी। परिणामस्वरूप, 2015 के अधिनियम में पुनर्वास न्याय को सार्वजनिक जवाबदेही और निवारण के साथ संतुलित करने के उद्देश्य से कई नए प्रावधान पेश किए गए।

यह अधिनियम संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार सम्मेलन (यूएनसीआरसी), 1989, जिसका भारत ने 1992 में अनुसमर्थन किया था, के तहत भारत के दायित्वों के अनुरूप है और इसमें बच्चों के सर्वोत्ताम हित, भेदभाव न करने और जीवनयापन एवं विकास के अधिकार के सिद्धांतों को एकीकृत किया गया है।

अधिनियम के उद्देश्य – किशोर न्याय अधिनियम, 2015 के मुख्य उद्देश्यों में शामिल हैं:

1. कानून का उल्लंघन करने वाले या देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चों की देखभाल, सुरक्षा, विकास और पुनर्वास का प्रावधान करना।
2. किशोरों से जुड़े मामलों के न्यायनिर्णयन और निपटान के लिए बाल-अनुकूल प्रक्रियाएँ स्थापित करना।
3. ऐसे बच्चों का सामाजिक समावेश सुनिश्चित करते हुए, दंड के बजाय पुनर्वास और पुन: एकीकरण को बढ़ावा देना।
4. भारत के संविधान, विशेषकर अनुच्छेद 14, 15(3), 21, 39(e)-(f) और 45, जो बच्चों की समानता, सुरक्षा और विकास की गारंटी देते हैं, के अनुरूपता सुनिश्चित करना।
5. घरेलू कानून को अंतर्राष्ट्रीय बाल अधिकार अधिनियमों, जैसे कि न्छब्त्ब और बीजिंग नियम (1985) के साथ सुसंगत बनाना।

बच्चों की प्रमुख परिभाषाएँ और वर्गीकरण – यह अधिनियम बच्चों को दो मुख्य समूहों में वर्गीकृत करता है:

1. कानून का उल्लंघन करने वाले बच्चे (CCL)- 18 वर्ष से कम आयु का कोई भी व्यक्ति जिस पर अपराध करने का आरोप है या ऐसा पाया गया है।

2. देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चे (CNCP**)-** वे बच्चे जो परित्यक्त, अनाथ, उपेक्षित, दुर्व्यवहार के शिकार हैं, या शोषण या तस्करी के जोखिम में हैं।

यह दोहरा वर्गीकरण सुनिश्चित करता है कि अपराधी और कमजोर दोनों बच्चे एक ही सुरक्षात्मक ढाँचे के अंतर्गत आते हैं, इस प्रकार एक विशुद्ध आपराधिक न्याय मॉडल के बजाय एक व्यापक बाल कल्याण प्रणाली का निर्माण होता है।

अपराधों का वर्गीकरण – 2015 के अधिनियम के महत्वपूर्ण नवाचारों में से एक है अपराध की प्रकृति और गंभीरता के आधार पर अपराधों को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत करना:

1. **छोटे अपराध-** 3 वर्ष तक के कारावास से दंडनीय।
2. **गंभीर अपराध-** 3 से 7 वर्ष के कारावास से दंडनीय।
3. **जघन्य अपराध-** 7 वर्ष या उससे अधिक के कारावास से दंडनीय।

जघन्य अपराध करने के आरोपी 16-18 वर्ष की आयु के किशोरों के लिए, अधिनियम किशोर न्याय बोर्ड (जेजेबी) को उनकी मानसिक और शारीरिक क्षमता, परिणामों की समझ और अपराध की परिस्थितियों का प्रारंभिक मूल्यांकन करने का अधिकार देता है। यदि बोर्ड बच्चे को वयस्क के रूप में मुकदमा चलाने के योग्य पाता है, तो मामला बाल न्यायालय (सत्र न्यायालय) को स्थानांतरित किया जा सकता है। यह प्रावधान, विवादास्पद होते हुए भी, गंभीर अपराधों के मामलों में जवाबदेही और आनुपातिकता सुनिश्चित करने के उपाय के रूप में उचित ठहराया गया था। हालाँकि, आलोचकों का तर्क है कि यह बड़े किशोरों को वयस्क आपराधिक प्रक्रियाओं के अधीन करके किशोर न्याय की पुनर्वासात्मक भावना को कमजोर करता है।

संस्थागत ढाँचा – जेजे अधिनियम, 2015 का कार्यान्वयन बाल-अनुकूल न्याय और कल्याण सुनिश्चित करने के लिए डिजाइन किए गए कई संस्थागत तंत्रों पर आधारित है:

(क) किशोर न्याय बोर्ड (जेजेबी) – जेजेबी कानून का उल्लंघन करने वाले बच्चों से जुड़े मामलों का निपटारा करने के लिए जिम्मेदार है। इसमें एक महानगर मजिस्ट्रेट या न्यायिक मजिस्ट्रेट (प्रथम श्रेणी) और दो सामाजिक कार्यकर्ता होते हैं, जिनमें से कम से कम एक महिला होनी चाहिए।

जेजेबी के कार्यों में शामिल हैं:

1. किशोरों द्वारा कथित रूप से किए गए अपराधों की जाँच करना।
2. यह सुनिश्चित करना कि कार्यवाही बच्चों के प्रति संवेदनशील और गैर-विरोधात्मक हो।
3. बच्चों को परामर्श, सामुदायिक सेवा या पुनर्वास के लिए रेफर करना।
4. आवश्यकतानुसार उन्हें अवलोकन गृहों या विशेष गृहों में रखने का आदेश देना।

(ख) बाल कल्याण समिति (सीडब्ल्यूसी) – सीडब्ल्यूसी देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चों से संबंधित मामलों को संभालती है। इसमें पाँच सदस्य होते हैं, जिनमें कम से कम एक महिला और एक बाल विशेषज्ञ शामिल होता है।

सीडब्ल्यूसी के कार्यों में शामिल हैं:

1. पालक देखभाल, प्रायोजन या गोद लेने जैसी उचित देखभाल व्यवस्थाओं का निर्धारण करना।
2. कार्यों की निगरानी करना
3. बाल देखभाल संस्थानों (सीसीआई) का गठन।
4. बच्चों के सुनवाई के अधिकार और निर्णय लेने की प्रक्रिया में भागीदारी सुनिश्चित करना।

(ग) बाल देखभाल संस्थान (सीसीआई) – यह अधिनियम विभिन्न प्रकार के संस्थानों की स्थापना का प्रावधान करता हैरू

1. **संरक्षण गृह-** पूछताछ के दौरान बच्चों के लिए अस्थायी सुविधाएँ।
2. **विशेष गृह-** अपराधों के लिए दोषी ठहराए गए किशोरों के

दीर्घकालिक प्रवास के लिए।

3. **बाल गृह–** आश्रय, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा की आवश्यकता वाले किशोर देखभाल केंद्रों के लिए।

4. **पश्चात देखभाल गृह–** युवा वयस्कों (18–21 वर्ष) के लिए जिन्हें रिहाई के बाद निरंतर सहायता की आवश्यकता होती है।

इन संस्थानों से बच्चों की सुरक्षा, शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण, परामर्श और मनोवैज्ञानिक पुनर्वास सुनिश्चित करने की अपेक्षा की जाती है।

पुनर्वास और सामाजिक पुनर्एकीकरण के प्रावधान – पुनर्वास किशोर न्याय अधिनियम, 2015 की आधारशिला है। यह कानून गैर-संस्थागत विकल्पों पर जोर देता है, जैसे:

1. **पालक देखभाल–** बच्चों को परिवारों के साथ अस्थायी रूप से रखना।
2. **प्रायोजन–** बच्चों को अलग होने से बचाने के लिए परिवारों या संस्थाओं को वित्तीय सहायता।
3. **दत्तक ग्रहण–** केंद्रीय दत्तक ग्रहण संसाधन प्राधिकरण (CARA) के माध्यम से अधिनियम के तहत विनियमित, पारदर्शी और नैतिक दत्तक ग्रहण प्रक्रिया सुनिश्चित करता है।
4. **पश्चात देखभाल कार्यक्रम–** संस्थागत देखभाल छोड़ने वाले बच्चों के लिए सहायता, जिसमें व्यावसायिक प्रशिक्षण, शिक्षा और रोजगार के अवसर शामिल हैं।

इन उपायों का उद्देश्य बच्चों को सम्मान और आत्मनिर्भरता के साथ समाज में वापस लाना है।

प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपाय – यह अधिनियम अनिवार्य करता है कि किशोर न्याय बोर्ड और बाल कल्याण केंद्रों के समक्ष सभी कार्यवाहियाँ बच्चों के अनुकूल और गोपनीय हों। यह किशोर की पहचान के प्रकाशन पर प्रतिबंध लगाता है और यह सुनिश्चित करता है:

1. जिला विधिक सेवा प्राधिकरण (DLSA) के माध्यम से कानूनी सहायता।
2. मनोवैज्ञानिक परामर्श और आवधिक सामाजिक जाँच रिपोर्ट।
3. निर्धारित समय-सीमा (आमतौर पर जांच के लिए चार महीने) के भीतर मामलों का शीघ्र निपटारा।

इसके अतिरिक्त, 18 वर्ष से कम आयु के किसी भी बच्चे को रिहाई की संभावना के बिना मृत्युदंड या आजीवन कारावास की सजा नहीं दी जा सकती।

जवाबदेही और निगरानी तंत्र – यह अधिनियम राज्य सरकारों और जिला बाल संरक्षण इकाइयों (डीसीपीयू) को बाल संरक्षण सेवाओं के कामकाज की निगरानी और समन्वय की जिम्मेदारी देता है। राष्ट्रीय और राज्य बाल अधिकार संरक्षण आयोग (एनसीपीसीआर और एससीपीसीआर) अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए निगरानी निकायों के रूप में कार्य करते हैं। इसके अलावा, अधिनियम की धारा 109 केंद्र और राज्य सरकारों को प्रभावी कार्यान्वयन के लिए नियम बनाने का अधिकार देती है, जबकि धारा 110 आवधिक समीक्षा और निगरानी को अनिवार्य बनाती है।

अंतर्राष्ट्रीय मानकों के साथ एकीकरण – जेजे अधिनियम, 2015 में कई अंतर्राष्ट्रीय संधियों के सिद्धांत शामिल हैं:

1. **बाल अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन (सीआरसी) –** पुनर्वास और पुन: एकीकरण पर जोर देता है।
2. **बीजिंग नियम (1985) –** किशोर न्याय प्रशासन के लिए मानक न्यूनतम नियम।
3. **रियाद दिशानिर्देश (1990) –** किशोर अपराध की रोकथाम पर केंद्रित।
4. **हवाना नियम (1990) –** स्वतंत्रता से वंचित किशोरों के संरक्षण से संबंधित।

इन एकीकरणों के माध्यम से, अधिनियम का उद्देश्य भारत की किशोर न्याय प्रणाली को वैश्विक मानवाधिकार मानकों के अनुरूप बनाना और बाल अपराधियों के प्रति एक दयालु, सुधारात्मक दृष्टिकोण को बढ़ावा देना है।

आलोचनात्मक मूल्यांकन – यद्यपि 2015 का अधिनियम एक सशक्त और दूरदर्शी कानून है, फिर भी इसके कुछ प्रावधानों की आलोचना हुई है:

1. 16–18 वर्ष के बच्चों पर वयस्कों की तरह मुकदमा चलाने की अनुमति देने वाली स्थानांतरण प्रणाली को बाल अधिकार अधिवक्ता प्रतिगामी मानते हैं।
2. कार्यान्वयन का बोझ काफी है, क्योंकि कई राज्यों में पर्याप्त बुनियादी ढाँचे, प्रशिक्षित कर्मियों और धन का अभाव है।
3. पुनर्वास के उपाय, हालाँकि नेकनीयती से किए गए हैं, लेकिन कमजोर निगरानी और सामाजिक कलंक के कारण अक्सर इनका कम उपयोग किया जाता है।

इन सीमाओं के बावजूद, जेजे अधिनियम, 2015 एक व्यापक विधायी साधन बना हुआ है जो समाज की सुरक्षा और बच्चों के संवैधानिक और मानवाधिकारों को बनाए रखने के बीच एक नाजुक संतुलन बनाने का प्रयास करता है।

कार्यान्वयन में चुनौतियाँ

संस्थागत कमियाँ – किशोर न्याय बोर्ड और बाल कल्याण समितियों का अपर्याप्त संचालन- कई जिलों में पूर्णत: क्रियाशील बोर्ड का अभाव है। एनसीपीसीआर की 2022 की रिपोर्ट में कहा गया है कि केवल लगभग 60: बाल कल्याण समितियों में ही आवश्यक सदस्यों की संख्या थी। सदस्यों की रिक्तियाँ और नियुक्तियों में देरी निर्णय लेने की प्रक्रिया को कमजोर करती है और परिणामस्वरूप मामलों का लंबित बोझ बढ़ता है।

सीमित प्रशिक्षण और विशेषज्ञता– कर्मचारियों में अक्सर पर्याप्त बाल मनोविज्ञान और कानूनी प्रशिक्षण का अभाव होता है, जिसके परिणामस्वरूप प्रक्रियात्मक खामियाँ और मामलों का असंवेदनशील संचालन होता है।

बुनियादी ढाँचा और संसाधनों की कमी:

1. **बाल देखभाल संस्थानों (सीसीआई) की कमी–** कई बाल गृहों में भीड़भाड़ है और बुनियादी सुविधाओं का अभाव है।
2. **खराब निगरानी तंत्र–** निरीक्षण अनियमित हैं कई संस्थान अपंजीकृत हैं या निर्धारित मानकों को पूरा करने में विफल हैं।
3. **वित्त पोषण संबंधी समस्याएँ–** एकीकृत बाल संरक्षण योजना (आईसीपीएस) के तहत अपर्याप्त बजट आवंटन और विलंबित निधि जारी होने से सेवा वितरण प्रभावित होता है।

समन्वय और प्रशासनिक कमियाँ:

1. पुलिस, बाल कल्याण समितियों, किशोर न्याय बोर्ड और गैर-सरकारी संगठनों के बीच समन्वय की कमी से दोहराव और अकुशलता बढ़ती है।
2. एकीकृत डेटा प्रणालियों का अभाव बच्चों की ट्रैकिंग और पुनर्वास में बाधा डालता है।

3. राज्यों की प्रशासनिक प्रतिबद्धता में व्यापक अंतर है, जिससे कार्यान्वयन असमान होता है।

सामाजिक और सांस्कृतिक बाधाएँ:

1. किशोरों और पीड़ितों को लगातार कलंकित करने से पुनर्एकीकरण में बाधा आती है।
2. सामुदायिक भागीदारी और जागरूकता का अभाव बाल संरक्षण तंत्रों की प्रभावशीलता को कम करता है।

कानूनी और प्रक्रियात्मक चुनौतियाँ:

1. जघन्य अपराधों में 16-18 वर्ष की आयु के किशोरों पर वयस्कों की तरह मुकदमा चलाने के प्रावधान ने न्यायिक आवेदन में भ्रम और असंगति पैदा की है।
2. वयस्कों की तरह मुकदमा चलाए गए बच्चों के लिए स्पष्ट पुनर्वास दिशानिर्देशों का अभाव न्याय और सुधार के बीच एक अंतर पैदा करता है।
3. देखभाल के बाद के प्रावधानों का कमजोर प्रवर्तन रिहा किये गये किशोरों में पुनरावृत्ति को रोकने में विफल रहता है।

केस स्टडी और अनुभवजन्य निष्कर्ष

दिल्ली- HAQ सेंटर फॉर चाइल्ड राइट्स द्वारा 2021 में किए गए एक अध्ययन से पता चला है कि मनोवैज्ञानिकों और परिवीक्षा अधिकारियों की अनुपलब्धता के कारण 30% से अधिक किशोर न्याय बोर्ड (JJB) की सुनवाई में देरी हुई।

महाराष्ट- टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज (TISS) द्वारा CCI के ऑडिट में पाया गया कि 70% में परामर्शदाताओं या प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ताओं का अभाव था।

उत्तर प्रदेश- महिला एवं बाल विकास विभाग (2020) की रिपोर्ट में बताया गया है कि 40% बाल कल्याण केंद्र (CWC) उचित बुनियादी ढाँचे के बिना संचालित होते हैं।

तमिलनाडु- मॉडल संप्रेक्षण गृहों ने प्रदर्शित किया कि समुदाय-आधारित पुनर्वास कार्यक्रमों ने पुन: अपराध दर में उल्लेखनीय कमी की है, जो स्थानीय हस्तक्षेपों के महत्व को रेखांकित करता है।

न्यायपालिका और मानवाधिकार आयोगों की भूमिका - भारतीय न्यायालयों ने किशोर न्याय की भावना की व्याख्या करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। शीला बरसे बनाम भारत संघ (1986) और सम्पूर्णा बेहुरा बनाम भारत संघ (2018) में, सर्वोच्च न्यायालय ने राज्यों को कार्यात्मक किशोर न्याय बोर्ड और बाल कल्याण केंद्र स्थापित करने का निर्देश दिया और प्रशिक्षण एवं निगरानी पर जोर दिया।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (एनएचआरसी) और एनसीपीसीआर नियमित रूप से संस्थागत देखभाल में सुधार के लिए दिशानिर्देश जारी करते हैं, फिर भी प्रवर्तन तंत्र की कमी के कारण इनका अनुपालन असंगत बना हुआ है।

सुझाव:

1. **समुदाय और गैर-सरकारी संगठनों की भागीदारी-** स्थानीय स्तर के पुनर्वास कार्यक्रमों और परिवार-आधारित देखभाल को बढ़ावा दें।
2. **क्षमता निर्माण-** किशोर न्याय बोर्ड और बाल कल्याण समिति के सदस्यों के लिए बाल मनोविज्ञान, कानून और सामाजिक कार्य पर अनिवार्य, आवधिक प्रशिक्षण।
3. **बुनियादी ढाँचे का उन्नयन-** सरकार को सभी बाल कल्याण संस्थानों में पर्याप्त धन और मानकीकृत सुविधाएँ सुनिश्चित करनी चाहिए।
4. **एकीकृत निगरानी प्रणालियाँ-** बच्चों की वास्तविक समय पर निगरानी के लिए पुलिस, न्यायालयों और कल्याण विभागों को जोड़ने वाले डिजिटल डेटाबेस स्थापित करें।
5. **नीति सुधार-** रिहाई के बाद किशोरों के लिए देखभाल, कौशल विकास और व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को सुदृढ़ करें।
6. **लिंग-संवेदनशील उपाय-** किशोर लड़कियों और तस्करी या दुर्व्यवहार की शिकार महिलाओं के लिए अलग-अलग सुविधाएँ और हस्तक्षेप विकसित करें।

निष्कर्ष - किशोर न्याय अधिनियम, 2015 भारत के बाल संरक्षण ढाँचे में एक प्रगतिशील और आवश्यक कानून बना हुआ है। हालाँकि, जमीनी स्तर की वास्तविकताएँ संस्थागत अपर्याप्तताओं, अपर्याप्त समन्वय और प्रशिक्षित कर्मियों की कमी के कारण इसके कार्यान्वयन में व्यापक अंतर को उजागर करती हैं। इस अधिनियम की प्रभावशीलता राज्य की नीति और व्यवहार में सामंजस्य स्थापित करने की क्षमता पर निर्भर करती है - यह सुनिश्चित करते हुए कि किशोर न्याय वास्तव में प्रतिशोध के बजाय सुधार, पुनर्वास और पुनर्एकीकरण का साधन बने। प्रत्येक बच्चे के सम्मान और सुरक्षा के संवैधानिक वादे को साकार करने के लिए संस्थागत क्षमताओं को सुदृढ़ करना, जन जागरूकता बढ़ाना और एक समग्र, बाल-केंद्रित दृष्टिकोण अपनाना अनिवार्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. National Commission for Protection of Child Rights. Annual Report 2021–22. New Delhi: NCPCR, 2022.
2. National Crime Records Bureau. Crime in India Report 2022. New Delhi: Ministry of Home Affairs, Government of India, 2023.
3. UNICEF India. Child Protection and Juvenile Justice System in India: A Study of Implementation. New Delhi: UNICEF, 2020.
4. Tata Institute of Social Sciences. Audit of Child Care Institutions in Maharashtra. Mumbai: TISS, 2021.
5. Sheela Barse v. Union of India, (1986) 3 SCC 596.
6. Sampurna Behura v. Union of India, (2018) 4 SCC 433.
7. HAQ: Centre for Child Rights. Status of Juvenile Justice in Delhi: Implementation Review of the JJ Act, 2015. New Delhi, 2021.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

सूर्यवाला के संवेदनात्मक दंश – 'यामिनी कथा'

डॉ. मनीषा सिंह मरकाम*

* सहा. प्रा. (हिन्दी) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस श्री अटल बिहारी वाजपेयी, शा. कला एवं वाणिज्य महा., इन्दौर (म.प्र.) भारत

शोध सरांश– कथा में ऐसा कुछ भी नहीं है कि यामिनी के दोनों पति उसे किसी प्रकार का शारीरिक कष्ट देते हो, मारते–पीटते हो, या कुछ अपशब्द कहते हो। यामिनी के पति विश्वास और बाद में निखिल दोनों ने ही उसे वो सब दुनियाभर की वस्तुएँ लाकर दी है। जो एक पढ़ा–लिखा पैसे वाले पति लाकर देता हैं। यामिनी के साथ नौकरी के बाद जितना समय मिलता है, उन दोनों ने व्यतीत भी किया है। पर जब हम इस कथा का पठन करते हैं तो यह कथा अत्यंत ही भावपूर्ण नजर आती है।

शब्द कुन्जी–जिम्मेदारी, बयानबाजी, भावपूर्ण।

प्रस्तावना – दामपत्य जीवन का अनंत आकाश इस कहानी में उकेरा गया है। परन्तु यामिनी के लिए वह मरुस्थल से बढ़कर नहीं है, क्योंकि सुसिक्षित व्यक्तियों की बयानबाजी अनपढ़ व्यक्तियों से अधिक घायल करती है। एक छोटा सा कथन मैं आपको इस कथा को बताना चाहूंगी, कि मुँह से निकला शब्द और वाण से निकला तीर कभी वापस नहीं होते। 'अगर प्यार भी नहीं दिया मैंने तुम्हें तो क्या देता रहा हूँ अभी तक?

बेशक इसका सीधा प्रमाण तो चुनमुन ही है न, निखिल। पुरुष के लिए तो शरीर से अलग भी प्यार के अन्वेषण की शर्तें.....।

तो ठीक है सिर्फ एक दिन मुझे शरीर के बिना प्यार करके दिखाना यामिनी।'

बस कुछ ऐसे ही छोटे छोटे संवाद हैं जो हमें पुरुष की भावनाओं से बार–बार परिचित कराते रहते हैं। कथा बहुत कम पात्रों को लेकर चली है। कुल छ: पात्र है, पर कथा सिर्फ चार पत्रों से आगे बढ़ी है। कथा में कही कोई हॉथ–पॉच नही है। सभी के कथन सभी का व्यक्तित्व अलग–अलग दिखाई पड़ता है।

इस कथा में यामिनी की आत्मनिर्भरता की कमी स्पष्ट दिखाई दी है, जिसके चलते भी वह त्रस्त है, इसलिए महिलाओं का आत्मनिर्भर होना भी परम आवश्यक माना जाना चाहिए। यदि वह आत्मनिर्भर होती तो शायद दूसरा विवाह नहीं करती और वही स्थितियाँ उत्पन्न नहीं होती जो पूर्व में थी। पर यह कथा बहुत सच्ची प्रतीत होती है। यामिनी कहती है– 'मेरे लिए प्रौढ़ा माँ के तुरंत बाद नवेली पत्नी की भूमिका यह सब स्वाभाविक कहां हो पाता है? थकान से त्रस्त होने लगती हूँ। एक के पास होती और दूसरे का खटका' यामिनी कथा सूर्यबाला जी द्वारा रचित ऐसी कृति है, जो स्त्री जीवन को समझने में पूर्णत: सशक्त है। इस कथा में किसी दलित, पिछड़े और आदिवासी स्त्री के जीवन का चित्रण नहीं किया गया है, अपितु इस कथा की स्त्री सुशिक्षित, समझदार और व्यवहारिक है, चूँकि वह पढ़ी–लिखी है इसलिए अपनी जिम्मेदारी का निर्वहन पूर्ण तत्परता से करती है। फिर भी यामिनी के मन में असंतोष क्यों है? उसका मन अर्न्तद्वन्द से भरा क्यों है? सभी को यथायोग्य प्रेम और समर्पण देने के पश्चात् भी वह असमंजस में क्यों है? कथा के प्रारंभ से अंत तक उसके जीवन की दर्दनाक कराह हम पाठकों को भी उद्वेलित क्यों कर रही है।

कथा में ऐसा कुछ भी नहीं है कि यामिनी के दोनों पति उसे किसी प्रकार का शारीरिक कष्ट देते हो, मारते–पीटते हो, या कुछ अपशब्द कहते हो। यामिनी के पति विश्वास और बाद में निखिल दोनों ने ही उसे वो सब दुनियाभर की वस्तुएँ लाकर दी है। जो एक पढ़ा–लिखा पैसे वाले पति लाकर देता हैं। यामिनी के साथ नौकरी के बाद जितना समय मिलता है, उन दोनों ने व्यतीत भी किया है। पर जब हम इस कथा का पठन करते हैं तो यह कथा अत्यंत ही भावपूर्ण नजर आती है। कथा का प्रवाह सतत है प्रवाह सतत होने के उपरांत भी पाठक थोड़ा कथनों पर रुकता है क्योंकि वह कथन अत्यंत गहरी हैं, यह कथन हम स्त्रियों के जीवन में रोजमर्रा के कथन है, इसलिए हम इस कथा को पढ़ते–पढ़ते दो–चार भावना के आँसू जरूर बहते हैं, कि क्या सब कुछ कहने का अधिकार पुरुषों को ही है, महिलाएं क्या सिर्फ महान बनने के लिए ही इस धरा पर अवतरित हुई है।

कहानी में स्त्री पात्र (यामिनी) को लेकर कई ऐसे भावनात्मक मोड़ आते हैं जो सामान्य रूप से स्त्रियों की जिंदगी को देखे जा सकते हैं। रिश्तो के लिए, रिश्ते बचे रहे इसलिए स्त्रियों को बहुत त्याग करना पड़ता है। यह सब करते हुए चाहे स्त्री की मनोदशा कुछ भी हो पर वह अपनी मनोदशा जिम्मेदारियों की व्यवस्था में बता ही नहीं पाती हर स्थिति में पिसना ही उसके जीवन की सहजता हो जाती है। उपन्यास में लेखिका ने यामिनी के माध्यम से बहुत सारे स्त्री जीवन को व्याकुल कर देने वाले क्षण समाहित किए हैं वह क्षण ऐसे प्रतीत होते हैं कि हमारे इर्द–गिर्द जैसे उन्हीं का फेरा है। बहुत सच्चे और स्वाभाविक कथनों से भरी पूरी है यामिनी कथा। बहुत अच्छे शब्दों का उपयोग करके निखिल ने बहुत साधे सधे हुए लहजे में यामिनी को सब समझा दिया– पत्नी के रूप में किसी स्त्री को स्वीकारना और बेटे के रूप में किसी लड़के को, दोनों दो अलग–अलग बातें हैं। पत्नी की जगह दूसरी स्त्री ले सकती है। बेटा तो सिर्फ अपना ही होता है।

उपन्यास में यामिनी की व्याकुलता स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। उसकी खामोशी एक भंवर की तरह प्रतीत होती है जिसमें वह धाँसती चली जा रही है। यामिनी अपने मानसिक भंवर की अतल गहराइयों में गंभीरता संवेदना और जटिल तनाव में अकेली ही खड़ी दिखाई देती है। यामिनी के दुख के दंश के अनेक केन्द्र है किसी तरह जीवन के संतुलित- असंतुलित प्रयास उससे सफलता -असफलता का निर्धारण यह सब कथा निविष्ट है। यामिनी का आंतरिक और बाह्य संघर्ष दोनों ही हृदय विदारक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यामिनी कथा - सूर्यवाला
2. सूर्यबाला के कथा साहित्य में युगबोध - डॉ. बसंत कुमार माली
3. कहानी की संवेदनशीलता सिद्धांत - डॉ. भगवान दास
4. हिन्दी कहानी एक नई दृष्टि - डॉ. इन्द्रनाथ मदान

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Role of Communication, Critical Thinking and Digital Literacy in Shaping Employability of Future Managers

Mehvish Khan* **Dr. Atul Loomba****

*Research Scholar, Rabindranath Tagore University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Research Guide, Rabindranath Tagore University, Bhopal (M.P.) INDIA

Abstract: In the modern business environment, employability extends beyond academic credentials and technical knowledge. Future managers are expected to possess a combination of soft skills, cognitive abilities, and digital competence to thrive in complex organizational ecosystems. This study explores the role of communication, critical thinking, and digital literacy in enhancing the employability of aspiring managers. Communication facilitates clear articulation of ideas, negotiation, and interpersonal collaboration. Critical thinking enables analytical reasoning, problem-solving, and informed decision-making, while digital literacy empowers managers to leverage technology for operational efficiency and innovation. Through a detailed literature review and conceptual analysis, this paper demonstrates the interconnection of these competencies and their cumulative impact on managerial effectiveness. The findings emphasize the need for higher education institutions, corporate training programs, and policymakers to design skill-development frameworks that integrate these competencies, thereby preparing future managers for dynamic and technology-driven work environments.

Keywords: Communication, Critical Thinking, Digital Literacy, Employability, Future Managers, Skill Development.

Introduction - The contemporary business environment is characterised by rapid technological advancements, globalization, and increasingly complex organizational structures. In such a dynamic context, employability cannot be defined solely by formal education or technical expertise. For managers, employability hinges on the possession of critical soft skills, cognitive abilities, and digital competence that enable them to navigate challenges, drive innovation, and contribute strategically to organizational goals. Among these competencies, communication, critical thinking, and digital literacy are widely recognized as the cornerstone skills that significantly influence managerial effectiveness. Communication is central to managerial performance, as it facilitates the clear articulation of ideas, negotiation with stakeholders, and collaborative problem-solving. Effective communication encompasses verbal, non-verbal, and written forms, along with active listening and intercultural understanding. Critical thinking equips managers to analyse complex situations objectively, evaluate alternatives, and make evidence-based decisions. In an era marked by uncertainty and rapid change, the ability to think critically ensures adaptability, innovation, and strategic foresight. Digital literacy, defined as the ability to use digital tools, interpret data, and leverage technology for decision-making, has emerged as a crucial skill in the digital age. The integration of communication, critical thinking, and digital literacy enhances the overall employability of managers by enabling them to operate efficiently across diverse organizational contexts.

This study seeks to examine the interplay of these competencies and their impact on the employability of future managers. It highlights the importance of a holistic skill-development approach that integrates cognitive, interpersonal, and technological competencies, thus aligning education and training initiatives with the requirements of the contemporary corporate world.

Literature Review

Communication and Managerial Effectiveness: Communication is widely acknowledged as a critical determinant of managerial success. Lunenburg (2020) emphasizes that managers who possess strong communication skills can influence, persuade, and motivate teams, thereby enhancing productivity and engagement. Verbal communication allows managers to present ideas persuasively, negotiate effectively, and lead discussions, while written communication ensures clarity in reports, emails, and strategic documents. Non-verbal communication, including gestures, facial expressions, and tone modulation, further enhances interpersonal effectiveness.

Effective communication also supports emotional intelligence, which is crucial for resolving conflicts, building trust, and fostering a collaborative work environment (Goleman, 2020). With the globalization of businesses, intercultural communication has become indispensable, requiring managers to understand diverse perspectives and adapt their communication styles accordingly. Research by Robles (2018) highlights that employers increasingly prioritize candidates with advanced communication skills, as they contribute significantly to team cohesion and organizational effectiveness.

Critical Thinking and Decision-Making: Critical thinking is the cognitive skill that enables managers to analyse information objectively, identify biases, and make informed decisions. Paul and Elder (2019) define critical thinking as a disciplined process of evaluating reasoning and evidence to arrive at sound conclusions. In the context of managerial employability, critical thinking enhances problem-solving, strategic planning, and innovation. Managers who can evaluate complex business scenarios, anticipate challenges, and devise effective solutions are highly valued in dynamic organizations.

Furthermore, critical thinking fosters adaptability and resilience by encouraging managers to question assumptions, consider multiple perspectives, and respond proactively to change (Bennett & Wright, 2022). Educational interventions, including case studies, simulations, and scenario analyses, have been shown to improve critical thinking skills among management students, thereby increasing their employability prospects.

Digital Literacy and Technological Competence: Digital literacy has emerged as a core competency for future managers. It encompasses the ability to use digital tools, analyze data, navigate online platforms, and apply technology strategically. Brynjolfsson and McAfee (2021) argue that digital literacy is essential for managers to interpret business analytics, leverage automation, and optimize workflows. Organizations increasingly value managers who can integrate technology into decision-making, enhance operational efficiency, and drive innovation.

Interconnection of Communication, Critical Thinking, and Digital Literacy: While communication, critical thinking, and digital literacy are important individually, their integration creates a synergistic effect on employability. Effective communication amplifies the outcomes of critical thinking by enabling managers to articulate insights clearly and influence stakeholders. Digital literacy enhances both communication and critical thinking by providing access to real-time data, collaborative tools, and analytical platforms. Together, these skills enable managers to navigate complex business environments, foster innovation, and contribute strategically to organizational objectives (Albrecht, 2023).

Theoretical Framework: The study is grounded in Human Capital Theory, which posits that skills, knowledge, and competencies enhance an individual's productivity and employability (Becker, 1993). Communication, critical thinking, and digital literacy constitute key components of human capital for future managers. Additionally, Competency-Based Theory suggests that employability is determined by the possession and application of specific competencies rather than formal qualifications alone (Boyatzis, 2008). This framework supports the argument that integrated skill development in communication, critical thinking, and digital literacy significantly enhances managerial effectiveness and career prospects.

Discussion and Analysis

Communication as an Employability Driver: Communication is not merely the exchange of information; it is the process through which ideas are interpreted, shared, and acted upon. In managerial contexts, strong communication skills enhance team coordination, facilitate problem-solving, and promote organizational transparency. Managers who demonstrate proficiency in both verbal and written communication are better equipped to lead teams, negotiate with stakeholders, and manage conflicts effectively. Moreover, intercultural communication competence is critical for managers operating in globalized environments, as it ensures inclusivity and reduces misunderstandings.

Critical Thinking for Strategic Decision-Making: Critical thinking equips managers with the ability to evaluate complex scenarios, identify risks, and make evidence-based decisions. In dynamic business settings, managers face challenges such as market volatility, technological disruption, and regulatory changes. Those who apply critical thinking can anticipate trends, assess alternatives, and implement strategies that align with organizational objectives. Critical thinking also fosters innovation, as managers are encouraged to question conventional approaches and develop creative solutions.

Digital Literacy for Future-Ready Managers: Digital literacy is increasingly central to employability in the modern workplace. Managers must be able to use digital tools for data analysis, project management, and virtual collaboration. Proficiency in digital platforms allows managers to optimize workflows, monitor performance metrics, and implement technology-driven strategies. Digital literacy also enhances communication by enabling managers to utilize digital collaboration tools effectively. In combination with critical thinking, digital literacy allows managers to interpret data meaningfully, make informed decisions, and lead innovation initiatives.

Integrating Skills for Enhanced Employability: The interrelationship between communication, critical thinking, and digital literacy creates a robust framework for managerial employability. For instance, a manager may use digital analytics to identify a market opportunity, apply critical thinking to evaluate strategic options, and communicate recommendations effectively to stakeholders. This

integrated skill set not only enhances job readiness but also positions managers as valuable contributors to organizational growth. Higher education institutions and corporate training programs are increasingly emphasizing integrated skill development to prepare graduates for complex managerial roles.

Implications for Education and Training: The findings of this study have several implications for education and professional development. Management education programs must adopt a holistic approach that fosters communication, critical thinking, and digital literacy simultaneously. Pedagogical strategies such as problem-based learning, case studies, digital simulations, and collaborative projects can enhance these competencies effectively. Organizations should also implement continuous professional development programs that emphasize digital upskilling, strategic thinking, and interpersonal communication. By prioritizing these competencies, both academic institutions and employers can ensure that future managers are well-equipped to meet the demands of dynamic and technology-driven business environments.

Conclusion: Employability of future managers is contingent upon the development and integration of communication, critical thinking, and digital literacy. These competencies collectively enable managers to navigate complex business challenges, make informed decisions, and communicate effectively with diverse stakeholders. The synergy of these skills enhances adaptability, innovation, and leadership potential, thereby increasing the value of managers in contemporary organizations. Higher education institutions and corporate training programs must prioritize these competencies through structured curricula and experiential learning initiatives. By fostering communication, critical thinking, and digital literacy, organizations can cultivate managers who are future-ready, capable of driving strategic growth, and positioned to excel in globalized and digitalized business landscapes.

References:-

1. Albrecht, S. L. (2023). The essential skills for effective management in the 21st century. New York: Routledge.
2. Becker, G. S. (1993). Human capital: A theoretical and empirical analysis with special reference to education (3rd ed.). Chicago: University of Chicago Press.
3. Bennett, R., & Wright, M. (2022). Critical thinking and decision-making in organizational leadership. London: Sage Publications.
4. Boyatzis, R. E. (2008). Competencies in the 21st century. Journal of Management Development, 27(1), 5–12.
5. Brynjolfsson, E., & McAfee, A. (2021). The digital frontier: How technology shapes business strategy. Boston: Harvard Business Review Press.
6. Goleman, D. (2020). Emotional intelligence and managerial effectiveness. New York: Bantam Books.
7. Lunenburg, F. C. (2020). Communication skills for effective leadership. International Journal of Management, 15(3), 45–57.
8. Paul, R., & Elder, L. (2019). Critical thinking: Tools for taking charge of your professional life. Boston: Pearson Education.
9. Raghuram, S., & Hill, N. S. (2019). Digital literacy in global organizations. Journal of Business Research, 101, 180–192.
10. Robles, M. M. (2018). Executive communication competencies and career success. Business Horizons, 61(2), 143–152.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Effect of Sports Psychology Interventions on Competitive Anxiety and Confidence Level of Hockey Players Belonging to Tribal Communities of Rajasthan

Nahar Singh Jhala* **Dr. Bhawanipal Singh Rathore****

*Research Scholar, Janardan Rai Nagar Rajasthan Vidyapeeth University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Supervisor, Janardan Rai Nagar Rajasthan Vidyapeeth University, Udaipur (Raj.) INDIA

Abstract: Sports performance is influenced by several factors including physical conditioning, technical skill, tactical knowledge, and psychological preparedness. Among these, competitive anxiety and confidence are considered critical mental components that determine the athlete's ability to perform successfully under pressure. The present study was undertaken to examine the effect of sports psychology interventions on competitive anxiety and confidence levels of hockey players belonging to tribal communities of Rajasthan. Thirty male players aged 18–24 were selected and randomly assigned into two groups of fifteen each. The experimental group underwent an eight-week psychological skills training program comprising progressive muscle relaxation, mental imagery, positive self-talk and goal setting. Competitive anxiety and confidence were measured using the Competitive State Anxiety Inventory-2 (CSAI-2) before and after intervention. The results revealed that the experimental group showed a significant decrease in both cognitive and somatic anxiety, along with a remarkable increase in confidence level in comparison to the control group. It was concluded that psychological skills training is an effective tool for enhancing mental readiness and reducing performance anxiety in tribal hockey players.

Keywords: Sports psychology, competitive anxiety, confidence, psychological intervention, CSAI-2, tribal athletes

Introduction - Sports today have become a highly competitive and psychologically demanding field. Athletes are required not only to demonstrate superior physical fitness and technical capability but also to manage their mental and emotional responses during high-pressure situations. Competitive anxiety is known to negatively affect coordination, decision-making and concentration, whereas high confidence enhances performance stability and tactical execution.

Hockey is an intense, fast-paced sport demanding quick reflexes, strong emotional control, and consistent mental focus. Tribal athletes in Rajasthan show strong natural capability due to their physical lifestyle and sporting culture, yet limited access to psychological training often results in uncontrolled anxiety and lower confidence during competition. This makes psychological intervention essential for improving their performance potential.

Athletes belonging to tribal regions face unique psychosocial challenges such as lack of exposure to competitive events, limited access to trained professionals, inadequate resources, unfamiliarity with modern sports science, and family pressure to balance education and sport. These factors often intensify competitive anxiety and restrict confidence development. Therefore, there is a major need for structured psychological intervention programs which can guide tribal hockey players to manage stress effectively, enhance self-belief and improve mental preparedness required for high-level competition. This research attempts to address this gap scientifically.

In recent years, sports psychology has been recognized as a crucial aspect of athlete development worldwide, yet its implementation remains limited in rural and tribal regions of India. Unlike urban players who have access to sports academies, qualified psychologists and exposure to competitive tournaments, tribal athletes often learn through experience rather than structured guidance. As a result, emotional challenges such as stage fear, performance pressure, hesitation, and lack of mental clarity tend to reduce competitive output. When athletes do not receive mental preparation, even high physical ability may not translate into successful performance outcomes. Therefore, incorporating sports psychology intervention programs becomes essential in empowering tribal hockey players with coping strategies that enhance composure and mental control during competitions. This justifies the relevance and need of the present investigation.

Review of Literature

Weinberg and Gould reported that psychological skills

training can significantly improve self-confidence and emotional control among athletes. Martens emphasized that competitive anxiety, consisting of cognitive worry and somatic tension, has detrimental effects on athletic performance. Jones and Hanton found that self-talk and imagery contribute directly to reduced pressure responses and improved performance confidence.

Gupta and Singh highlighted the effectiveness of eight-week psychological intervention on reducing anxiety in university athletes. Rajak and Rawat demonstrated that relaxation-based training effectively reduced muscle tension and pre-competition nervousness. Taylor and Wilson found that imagery enhances confidence through mental rehearsal of success. Sharma noted that tribal athletes often face psychological barriers due to inadequate support systems. Singh and Khatri suggested that psychological programs significantly improve confidence among tribal athletes.

In another study, Kumar and Bedi (2020) reported that athletes undergoing mental skills education developed better coping mechanisms to handle pressure situations, showing reduced anxiety signs and improved performance consistency. Their findings emphasized that psychological intervention should be integrated into regular training routines, particularly for players who lack exposure to structured scientific coaching techniques.

Similarly, Mishra and Thomas (2019) stated that athletes who practiced psychological skills preparation showed significant improvement in match temperament and pressure-handling ability as compared to those who trained only physically. Their study highlighted that psychological training promoted emotional balance, decision-making accuracy, and internal control, resulting in better competitive outcomes. This further supports the concept that mental training must accompany physical practice for athletes to achieve peak performance. The researchers emphasized that psychological skills are teachable and should be incorporated from early stages of sports education, particularly in communities where scientific training exposure is minimal. These findings align closely with the objectives of the present study.

Objectives of the Study:

1. To measure competitive anxiety levels of tribal hockey players before and after psychological intervention.
2. To assess confidence levels of hockey players before and after intervention.
3. To compare the post-test values of the experimental and control groups.
4. To determine the effectiveness of psychological intervention in reducing anxiety.
5. To examine the role of psychological skills training in enhancing competitive confidence among tribal athletes.

Research Hypotheses:

1. There will be a significant effect of sports psychology intervention on competitive anxiety levels of hockey players.
2. There will be a significant effect of sports psychology intervention on confidence levels of hockey players.
3. There will be a significant difference in post-test scores between experimental and control groups.
4. Cognitive and somatic anxiety will significantly reduce among players receiving psychological intervention.
5. Psychological intervention will enhance overall competitive preparedness among tribal hockey players.

Significance of the Study:

1. The findings will help physical education teachers, trainers, and coaches understand the importance of psychological preparation.
2. The study may provide guidelines for planning structured psychological programs for tribal athletes.
3. The results will emphasize the importance of combining mental training with physical conditioning.
4. Talent identification and coaching strategies can be improved.
5. The study will contribute scientifically to sports psychology research in tribal development.

Research Methodology

Selection Of Subjects: Thirty (30) male hockey players belonging to tribal regions of Rajasthan were selected randomly. The age of subjects ranged between 18–24 years and all were medically fit. Subjects were divided into two groups of fifteen each.

Group	Numbers of Subjects	Description
Experimental Group	15	Received psychological intervention
Control Group	15	Continued regular hockey training

Selection Of Variables:

Psychological Variables:

1. Cognitive Anxiety
2. Somatic Anxiety
3. Confidence Level

Experimental Design: A randomized pre-test and post-test control group design was used. Both groups underwent baseline psychological testing, followed by an intervention period of eight weeks for the experimental group and finally a post-test evaluation for both groups.

Intervention Training Program:

Component	Description	Duration
Progressive Muscle Relaxation	Muscle control & tension release	30 min × 4 days/ week
Breathing Exercises	Reducing somatic anxiety	10 min per session
Visualization & Imagery	Mental rehearsal	3 days/week
Positive Self-talk	Confidence building phrases	Daily
Goal Setting	Short and long-term goals	Weekly review

Testing Tool: The **Competitive State Anxiety Inventory-2 (CSAI-2)** was used to collect data on cognitive anxiety, somatic anxiety and confidence levels.

Procedure For Administration:

1. Pre-test for both groups conducted one day before intervention began.
2. Experimental group underwent eight-week psychological intervention.
3. Control group continued regular sports training without mental training.
4. Post-test conducted after completion of intervention under identical conditions.

Statistical Techniques: Data from pre-test and post-test were compared to examine direction and degree of psychological change. Improvements in experimental group relative to control group were interpreted as effectiveness of intervention.

Results:

1. Cognitive anxiety significantly decreased among the experimental group after psychological training.
2. Somatic anxiety also showed a decline in the experimental group.
3. Control group displayed minimal improvement in anxiety levels.
4. Confidence of experimental group increased notably after intervention.
5. Control group showed only marginal improvement in confidence.
6. Findings support all stated hypotheses.

Conclusions:

1. The eight-week sports psychology intervention program proved effective in reducing competitive anxiety among hockey players belonging to tribal communities of Rajasthan.
2. A significant decrease in both cognitive and somatic anxiety was observed in the experimental group after intervention, indicating improved emotional regulation.
3. The confidence level of players who underwent psychological training increased considerably, demonstrating enhanced self-belief and preparedness for competition.
4. The control group, which did not receive psychological intervention, showed only minimal natural improvement, confirming the value of structured psychological support.
5. The results confirmed that psychological skills training plays an important role in overall performance enhancement and mental readiness in competitive sports.
6. The intervention program helped athletes manage performance pressure more efficiently, resulting in better mental focus and decision-making.

Recommendations:

1. Coaches must integrate psychological training with physical preparation.
2. Regular psychological evaluation should be adopted in sports academies.
3. Tribal sports programs require more trained psychologists.
4. Future studies should include female athletes and larger samples.

References:-

1. Akthar, S. & Syed, R. (2020). *Sports Psychology and Emotional Balance in Athletes*. New Delhi: Sports Publication House.
2. Bandura, A. (2018). *Self-efficacy and Human Performance*. USA: Prentice Hall.
3. Craft, J., Magyar, T., & Becker, B. (2018). Relationship between Anxiety and Confidence in Competitive Athletes. *Journal of Sport Behavior*.
4. Gupta, M., & Singh, R. (2020). Effect of Psychological Intervention on Anxiety Among Athletes. *Indian Journal of Sports Science*.
5. Hardy, L., & Fazey, J. (2017). Anxiety and Performance Relationships in Competitive Sports. *Journal of Human Performance*.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

The Use of Drugs in Educational Institutions: Impacts on Students , Teachers and Legal Framework in India

Dr. Monisha Biswal*

***Assistant Professor (Law) Ganjam Law College, Brahmapur (Odisha) INDIA**

Introduction - "Drugs do not just harm people; they weaken the entire structure of society." -United Nations Office on Drugs and Crime (UNODC)

One drop of Black turns entire white in to gray. India is one of the fastest developing economies in the world with a large, diverse, and dynamic population. The nexus among power, money, muscle and so called adventure results drug addiction in education institutions. Education policies have accordingly focused on many areas, and informing students about the adverse effects of drug usage and engaging in counselling sessions presenting support for potential rehabilitation is one such area that requires special attention. In the working class demographic as well, social drinking and drug usage is misconstrued as a sign of sophistication and relaxation, flowing into campus life, leading to academic and attendance-related issues. The large human cost associated with drug usage in the educational environment further underlines the need for preventive measures. Several educational institutions in different regions are actively participating in the 'Drug-free India Campaign' under the National Action Plan that aims to reach out to mental health issues, ensuring a wider scope for taking institutional preventive and controlling action.

Drug addiction is a state of periodic or chronic intoxication detrimental to the individual and society produced by repeated consumption of natural or synthetic drugs. Chemical substances which, when introduced into the organism produce a marked change in the function of the body are termed drugs [1].

Background and Scope - Drugs have impinged on educational settings since their inception: from noble teachers spillage to misusing substances for illicit pastimes. Schools and colleges across the globe are beset with serious concerns: consumption, trafficking, cultivation, and illegal storage in institutional premises, threatening learner's and instructor's morale coherent with teaching–learning process. Whether pupils or educators: the lure of drug provides infinite choices potent for consumption! Many students inadvertently resort to such drugs oblivious to ordinary perception of a tranquil mind. Possessing a state of psycho-spiritual sobriety and emotional stability remains an ideal, with social sanction across cultures—consumption seems counter-intuitive: the reality struck different. Serious concerns arising in educational institutions warranted investigation for scope, rationale, and remedial measures [1].

Considering the some region of India few schools, polytechnics, engineering colleges, and nursing colleges scattered across the landscape serve as representative candidates for pedagogy inquiry [2]. Institutions impinge fundamental primary, secondary, higher secondary, and pre-university levels. Distinct drug trafficking patterns, student-consumption profiles, and profiling were notable some areas of our country. Broad categories—materialistic, intrinsic, and extrinsic—dominate life-cycle in contemporary societies; dictum 'marry on behave of children' governed adult social choices. Faculty construed pupils' initial pray enticed unsanctioned draughts lingering nearer over-time intensified ego-pride until flattering to nether realities led into farther clutches remained status visible despair. Hence the chosen institutional-focussed backdrop remains significant deportment inquiry deserving pedagogical intervention.

Prevalence and Patterns of Drug Use in Educational Settings- According to the National Institute on Drug Abuse, most adolescents believe that the use of substances like cocaine, opioid pain medications, and inhalants is harmful. Even while such perceptions are predominant, several individuals still choose to engage in substance use for various reasons. The misuse of prescription drugs, including opioids, CNS stimulants, depressants, and anabolic steroids, is reported on the rise among adolescents as well. The misuse of drugs and substances by educators has also been discussed often. While no national data are readily available on the prevalence of substance use in the educational sector or among educational administrators, evidence suggests that educational administrators have access to and use substances, both during and after school hours. Access to sprit and liquor is common for many educational administrators and, as a result, these substances are sometimes consumed by them during school hours, including in the institution itself. In such

situations, the use of those drugs and the common places of their use are seldom exposed. Serious intimidations do exist that inhibit or discourage educational administrators and other stake-holders from openly reporting on their substance use within the school environment [2].

By Students: The Indian subcontinent has been grappling with the issue of drug use among students since the last quarter of the Twentieth Century, with drug-related incidents following the path of other developing countries. The increase in urbanisation and availability of psychoactive substances has put youngsters at risk [1].

Efforts should be directed towards the enhancement of educational campaigns among students in educational institutions in India. A decrease in psychoactive substance use among students can easily be achieved if systematic educational intervention is introduced [3].

The educational institutions remain primarily responsible for the introduction of substance use preventive measures and the criteria have to be strictly adopted by all institutions.

By Educators: Educational institutions are supposed to guide students toward a bright future. Unfortunately, bad habits among teachers, especially on drug use, can ruin students' lives. A Department of Education survey conducted during 2008-2009 found that 36% of teachers were offered drugs on campus [1]. Three types of substances were accessible on many campuses: tobacco, alcohol, and oral drugs. About 10% of teachers admitted to using substances to perform better on the job. Nevertheless, more than 80% of those who had access to illicit drugs in educational institutions worldwide reported nothing [4]. Educators are reluctant to disclose their drug use, fearing the loss of respect and authority. However, an increasing body of literature shows that substance abuse among teachers harms students, especially in government-funded institutions [2]. Substance use jeopardizes a teacher's authority in class.

Negative Impacts on Academic, Health, and Social Domains: Very few in number, but both students and educators engage in . A great variety of substances is misused, including both psychoactive pharmaceutical and tobacco products, and it is fitting to distinguish between misuse and abuse on the basis of pattern or frequency, purpose, and other behavioral indicators. Substances that are misused can be further classified as licit/banned and licit/controlled, reflecting the degree of legal oversight applied. The available data reiterate that prevention, control, and rehabilitation measures in school and college-based education are needed to reduce substance use [3].

Academic Performance and Attendance—Research provides clear support for the association of substance use among students with academic performance and attendance [5]. Substance misuse leads to higher rates of failure and repetition, lower average grades, and remaining out of school. An increase in the number of substances used is also correlated with a greater likelihood of dropping out. As many as two-thirds of students receive low grades, skip classes, and exhibit learning gaps attributed to substance use according to one report. Similarly high levels of absenteeism and more serious problems emerge in connections of psychoactive substances such as cannabis, MDMA, and methamphetamines with serious depression, disconnection from school, mischief, and delinquency [4]. Mental and Physical Health—A large proportion of student substance users across various types experience effects that impair daily functioning. Attention, focus, concentration, and memory are cognitive functions on which users report having "very serious" or "serious" difficulties. Psychoactive substances particularly coconuts, nitrous oxide, and tranquillisers are also linked to comorbid conditions among students such as anxiety, depression, excessive fears, and binge drinking. Use of the same or other substances further impairs sleep, nutrition, and stress management, which in turn feed back to reduced functioning and well-being in the domains of academia, health, safety, and so forth.

Academic Performance and Attendance: Student substance use adversely affects academic performance and attendance, directly impacting grades and dropout rates. Numerous studies demonstrate that students who misuse drugs and alcohol perform worse than nonusers. In one city, drug abuse inhibits academic progress and contributes to dropout risks; nearly half of university students with substance use disorders have course failures, and three-quarters do not attend classes regularly [1]. In Pakistan, four out of five medical students using narcotics do not attend classes and spend less time on self-study[4].

In the United States, students often misuse prescription stimulants to improve grades, reporting significant impacts on study time, grades, and exam performance [5].

Mental and Physical Health: Cognitive functions are crucial for academic performance; psychoactive substances can affect them negatively, being associated with particular diseases. Attention Deficit Hyperactivity Disorder (ADHD) often coexists with substance abuse, and when treated with psychostimulants, academic action is indeed improved. However, some students misuse similar medications for academic performance increase, "smart drugs". A study shows that drug involvement is frequent among students who consume during high school, neglectful parenting style appears closely to subsequent general and illicit involvement; poverty and stress result in ADHD among these students, directly affects children, and indeed influences their substance abuse. Misuse of prescribed medication occurs commonly either beneficial or detrimental [3].

India is the only country with 90% of adolescents suffering poor sleep that impedes attention and memory. Substance abuse also disrupts sleeping quality. Poor quality affects improvisation in daily life, leading to uncertainty, anxiety to fill lack of attention in class, and compliance to substances. Substance abuse leads to irregular feeding

habits, junk food consumption, and inadequate water intake. Significant association shows as nutrition breaks, poor composition using juice or soft drink, unhealthy influential environment, multiple stimulant intake [4]. Academic stress rises among students of top-five colleges; frequent substance abuse reported "Why work while you can get high.". Stressful situation people attempted suicide; at the same time lower same behaviour was recorded, on-going include regular hours, video games distract studies therefore consumed.

Behavioral and Safety Consequences: Use of drugs in educational institutions has adverse impacts on academic performance, physical and psychological health, and social well-being. Similarly, drug misuse and abuse similarly compromise the ability of educators to fulfil their responsibilities. Analysis of numerous studies points to a range of behavioural and safety risks connected to drug use in educational settings in both cases. Statistics from hospitals and educational institutions across India suggest that drug use frequently leads to disciplinary action, possibly involving suspension or expulsion. Substance-related disciplinary incidents frequently escalate to violence and aggression among students or educators, resulting in injuries and property damage. Drug use has also been linked to increased involvement in life-threatening accidents. Homeschooling, food insecurity, and insufficient adult supervision gather importance as socio-economic risk factors. Data from the 2020 National Education Policy—the policy outline currently in force—indicate that safety and security remain major concerns in education at all levels[2].

Legal Framework in India: A two-part framework governs the application of drug-related legislation in educational institutions. The first component comprises statutes that address the prevention, control, and rehabilitation of drug and alcohol misuse; the second concerns punitive provisions, which specify prohibited activities, the mandate to establish anti-drug educational programmes, and the strict adherence to legal due process in the imposition of penalties.

Education constitutes an important priority for the nation and for society as a whole. The misuse of drugs and alcohol interferes with and subverts this domain of development. As per the National Policy on Education, the Central and State Governments have a vital responsibility to enshrine the nation's drug abuse-control policy in national legislation and to establish the necessary infrastructure for preventive and remedial measures applicable to all educational institutions [6].

The Central Government has consistently accorded priority to the matter. The Department of Social Defence of the Ministry of Social Justice and Empowerment, which is entrusted with the task of drug abuse evaluation, has issued guidelines intended to reinforce preventive education and awareness-raising regarding drug abuse. The prescribed guidelines form the basis from which State Governments have developed their drug-abuse-control policies.

Prevention, Control, and Rehabilitation Rules: The Government of India has and continues to work with various stakeholders to combat the substance abuse epidemic. Educational institutions are working in tandem with the Ministry of Social Justice and Empowerment (MSJE) and the Ministry of Health and Family Welfare (MHFW) to address drug and substance abuse within students. The Drug Menace Policy Statement (DMPS) of 2000 identified students as the most vulnerable group. As students develop physically, psychologically, and emotionally, they experience substantial stress compounded by anxiety regarding their future. Fear of failure or academic pressure exacerbates the vulnerability of students, leading them to a path of delinquency and substance abuse.

Although the National Policy on Education (NPE) of 1986 included programmes to address these issues, there was insufficient guidance or support from MSJE or MHFW regarding the establishment of rehabilitation services, workshops, or awareness campaigns specific to educational institutions. In 2014, the NPE was readdressed by the Committee on Strengthening the NPE of 1986 and According to the Report on Re-structuring Chemical Dependency and Substance Abuse Prevention, students are the first and foremost group to be considered for prevention and rehabilitation. Consequently, the Ministry of Social Justice and Empowerment issued the Guidelines on Prevention of Substance Abuse 2014, specifically addressing the issue in educational institutions and recommending various support measures. [4]

Punitive Provisions and Due Process: Drug use is prevalent in educational institutions. Nearly 10% of women and 15% of men report having ever used a drug in India and almost . Both students and teachers misuse drugs, although teachers select drugs according to job responsibilities and are less likely to disclose consumption. Legislative, judicial, and policy frameworks exist to prevent and control drug use among students and educational staff, rehabilitate those already affected, and ensure due process. The Narcotic Drugs and Psychotropic Substances Act, 1985, lays the foundational framework for drug abuse prevention in India, defining substances and adopting a penal paradigm of exclusion and rehabilitation. Within this framework, the Central Board of Secondary Education and the University Grants Commission mandate the establishment of preventive and rehabilitative mechanisms in schools and colleges.

Both the quasi-judicial nature of the proceedings and the punitive provisions themselves may pose serious threats to due process rights. Several school authorities, service providers, and national authorities have noticed that drug attitudes, norms, and behaviours are the subject of social influence. In educational settings, such social influence is exercised by fellow students. The social influence model

specifies peer and individual risk correlates associated with young people's social groups. Academic pressure accounts for a significant proportion of student drug use and drop-out, reflecting the degree to which national governance structures have introduced competitive elements into previously state-monopolised educational systems. Safeguarding and legislating against academic pressure should therefore be a national priority.

Institutional Policies and Compliance: Institutional policies governing the prevention and control of drug use in educational institutions constitute a key element of the framework established by the Government of India (GOI). While adequate provision has been made in higher education, the needs of primary and secondary education demonstrate significant concern. The GOI's Model Guidelines on Drug-Free Educational Institutions, 2020 (Ministry of Education, 2020), exhibit a wider and deeper set of responses than many state enactments, yet are framed in such a way as to avoid enforcement through a statutory basis. Despite the passages on drug-free educational institutions included in the National Drug Policy, 2019 (Narayan & Lather, 2019), the Drug-Free Educational Institutions Guidelines (Ministry of Education, 2020) serve as the only comprehensive regulatory guidelines issued at the national level [6].

Compliance with the provisions of the Model Guidelines remains uneven across the country, and deficiencies in compliance persist. A National Tobacco Control Programme exhibited a broader policy on drug prevention and control, leveraging lessons from the implementation of rules governing other psychoactive substances such as tobacco. Despite a comprehensive policy, implementation was inadequate and monitoring insufficient at the institutional level. Various Central and State Institutions of National Importance (INIs) undertaking a parallel review confirmed the shortcomings of both State and Institutional compliance with the GOI's Model Guidelines. Such assessments highlighted the need for mandatory provision of information and specified institutional audit checks at a higher administrative level. Many institutions failed to disclose the number of awareness programmes conducted or suggested by an INI under the National Action Plan on Drug Demand Reduction [3].

Policy Interventions and Best Practices: Drugs, tobacco, and alcohol exhibited the greatest prevalence among educated youth and were considered the most serious substances. Motivational factors included academics, entertainment, physiological needs, life conditions, professional pressures, and friendship. County difference analysis showed the importance of focusing on student substance use prevention and intervening from educational, legislative, and community collaboration perspectives [2]. School-based initiatives are the foundation of substance-use prevention efforts. Coalition models are optimal for addressing environmental influences through education, outreach, policy advocacy, and alternative activities [7]. Based on drug-use histories, preventive programmes targeting illicit- and over-the-counter-drug use deserve prioritisation. School-related factors correlate significantly with student substance use; therefore, establishing supportive environments, strong anti-drug norms, and life-satisfaction promotion is essential for effective countermeasures [8].

School and College-Based Programs: School and college-based programs can play a vital role in addressing substance misuse among students. Interventions should include structured educational curricula on the adverse effects of drug use, initiatives to screen students for misuse and provide early support to individuals at risk, and the establishment of campus norms prohibiting drugs, which should be consistently reinforced [1]. Evidence indicates that if students learn skills to resist drugs prior to experimenting with them, or if they acquire knowledge about the dangers of drugs before using them, they are likely to make healthy decisions. Implementation of school-based programs has the potential to reduce drug-related harm or prevent drug-related problems from developing. Some research demonstrates that life-skills programs can decrease drug misuse and reduce associated problems. Community-wide initiatives informing adolescents about the dangers of drugs and promoting anti-drug norms can further support school-based efforts.

Community and Family Involvement: Parental involvement can increase the effectiveness of drug-prevention measures and rehabilitation programs, including awareness campaigns and the implementation of programmes like those proposed by the National Policy on Education [2]. For instance, briefing sessions for parents on issues such as substance abuse and the prevention of delinquent behaviour by school dropouts can be arranged by the education authorities. During the briefing, parents also learn how to involve themselves at home in the prevention of substance abuse by receiving training on how to combat likely drug-use situations. If students suspected of substance abuse refuse to see the school counsellor, the same matter can be discussed with the parent by the social worker or the administrator to help them explore possible appropriate actions to take with their children. To help parents and children discuss the subject openly, substantial printed information on the relevant issues can be accumulated, collated, and published. School boards can also offer assistance in managing problems of substance abuse among the students by informing them about external support services.

Support Systems and Counseling: Educational institutions should establish confidential support systems and counseling services. Such programs allow students and educators to discuss their drug-related problems without fear of exposure, enabling timely rehabilitation and minimizing potential legal repercussions. Such support

systems foster a supportive atmosphere, demonstrating that help is available. Schools and colleges face a considerable obligation to assist students on drug-associated matters, as those who utilize substances such as alcohol, tobacco, or other illicit drugs demonstrate a stronger propensity for dependency. Personnel at educational institutions, such as teachers, mentors, guidance counselors, and clinical psychologists, remain available to fulfil these obligations. A proactive, positive stance and a willingness to assist counteract substance use. Educational institutions must also provide appropriate counselling services when students seek assistance regarding addiction to narcotics, substances, alcohol, or tobacco, even if the matter remains undisclosed. Comprehensive rehabilitation for students and personnel discourages substance dependence and facilitates re-entry into educational programs.

Addiction rehabilitation generally proceeds in two stages: a clinical or therapeutic course and an on-going, after-care process. The clinical course exclusively centres on rehabilitation, while the on-going, after-care process encompasses academic re-integration. Ideally, educational institutions should establish these separate systems, coordinating closely to simplify access for students and personnel, as poly-drug dependency remains prevalent and cannot always be addressed sequentially. Such co-ordination simplifies matters when additional specialists are required, such as psychiatrists and psychologists [4].

Challenges in Implementation: Substance abuse is a major public health concern in India that affects young people with detrimental mental, social, and physical health consequences [2]. Abuse can occur at school, college, or university, and policies must address the issue nationwide [8]. However, many challenges impede the enactment, implementation, and monitoring of drug prevention, control, and rehabilitation efforts in the country.

These challenges include limited resources, societal stigma, privacy issues, inter-agency cooperation, and a shortage of monitoring and evaluation. Drug-related issues such as non-compliance and illegal trade flourish in India, and programs designed to combat them are frequently undermined by these obstacles.

Comparative Perspectives: Educational institutions in India are facing the growing threat of drug abuse by both students and educators. The prevalence of drug consumption has reached alarming levels in higher education systems. Understanding the impact of substance abuse is critical for institutions to develop and implement prevention programmes and policies.

Literature highlights the detrimental effect of substance use on students' academic performance, including lower grades, poor attendance, increased dropout rates, and significant gaps in learning [2]. Substance use is also linked to both physical and mental health issues, including cognitive decline, increased likelihood of developing comorbidities, sleep disturbances, poor nutrition, and compromised stress coping mechanisms [4]. Teachers similarly report an impact of substance use on their professional capacities, including authority over students, management of the classroom environment, and overall performance of organizational responsibilities.

Conclusion: Educational institutions and educators play important roles in shaping students' lives and constructing young citizens who can contribute and prosper in society. But addiction usually leads to dependency, ushering in a wide array of health, social, and performance issues. Drugs leads to risk of life, violence, unethical Practices in physically and mentally, financial lose, and ruins academic performance.

Stronger drugs are now becoming more prevalent and easily accessible among youth. Today, education and information, along with constructive engagement, appear to be the only viable ways to safeguard younger generations from being consumed by substance abuse. Substance abuse can be defined as the hazardous use of psychoactive substances, characterized by harmful consequences and leading to substance-related disorders. This study, therefore, aims to zero in on the impacts of substance misuse and abuse among students as well as educator on their academic performance and teacher influence. It goes on to examine the legal framework for prevention, control, and rehabilitation in our educational institutions.

References:-

1. J. C Kurian, "A MICROCOSMIC STUDY OF DRUG ABUSE: THE PUNE EXPERIENCE," 2016. [PDF]
2. N. Jayamkondan, "A Study on Analysing the Prevalence and Impact of Health Education in Preventing Substance Abuse among Adolescent Children," 2019.
3. A. Sapkota, V. Silvanus, P. Shah, S. Chandra Gautam et al., "Psychoactive Substance Use among Second-Year and Third-Year Medical Students of a Medical College: A Descriptive Cross-sectional Study," 2021. ncbi.nlm.nih.gov
4. M. Shafiq, Z. Shah, A. Saleem, M. T Siddiqi et al., "Perceptions of Pakistani medical students about drugs and alcohol: a questionnaire-based survey," 2006. ncbi.nlm.nih.gov
5. D. David Abelman, "Mitigating risks of students use of study drugs through understanding motivations for use and applying harm reduction theory: a literature review," 2017. ncbi.nlm.nih.gov
6. R. Singh, "Compliance With Higher Education-Related Tobacco Control Law Provisions by Institutions of National Importance in India," 2023. ncbi.nlm.nih.gov
7. K. Ghani, J. Gholami, G. Mousavian, M. Amin-Esmaeili et al., "The Effectiveness of Universal Educational Interventions for Prevention of Illicit Drug Use among University Students: A Systematic Review," 2024. ncbi.nlm.nih.gov
8. L. Shuro and F. Waggie, "A vibrant reflection of the revised integrated school health policy with a lens on substance use," 2021. ncbi.nlm.nih.gov

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Sustainable Agriculture and Rural Development : Pillars of Viksit Bharat @ 2047

Dr. Rajkumar Nagwanshee* Dr. Ashvanee Kumar**

***Associate Professor, Department of Economics, Guru Ghasidas Central University, Bilaspur (CG) INDIA**
****Assistant Professor (Guest Faculty), Government Naveen College, Kera, Shaheed Nand Kumar Patel University, Raigarh (CG) INDIA**

Abstract: The Indian economy was ranked fifth in the world by nominal GDP in 2024. According to the latest IMF report, India's economy is projected to grow by about 6.4 percent in 2025-26. As the country looks ahead to 2047, when it will celebrate 100 years of independence, the vision of "Vikshit Bharat @2047" (Developed India) has emerged. With this vision, we are aiming to make India a high-income economy with a GDP of over $30 trillion. Here, among all these three sectors of the economy, agricultural development is essential. It is key to rural development, providing food, jobs, income, and supporting industries and infrastructure. Sustainable agriculture protects the environment and strengthens rural economies, making communities more resilient to climate change and market shifts. Agriculture boosts demand for goods and services by raising rural incomes, helping local economies grow, and ensuring long-term prosperity and well-being.This study discusses that the goal of Viksit Bharat can be achieved with the help of sustainable agricultural development before 2047. It also explores the importance of sustainable farmingpractices, managing water resources, improving soil health, and supportive government policies.

Introduction - The vision of "Viksit Bharat @2047" outlines a roadmap for national development. It aims to make India a fully developed country by focusing on economic growth, social equality, technology, and sustainability. The vision is a decisive goal to inspire a prosperous and sustainable future, where the agriculture sector is at the center of this vision. Agriculture is the basis of livelihoods for thousands of households, and it ensuresthe availability of food for everyone. Agriculture has always been a key pillar of the Indian economy, contributing to its national income andproviding Employment to a significant proportion of the workforce.

Agriculture plays a foundational role in rural development by providing food security, serving as the primary source of rural Employment and income, contributing to the Gross Domestic Product (GDP), supplying raw materials for industries, and acting as a catalyst for infrastructure development and improved rural welfare. The people in India have not been changing the crop pattern on their fields due to the high market price of that crop, which is generally shown in their area. They repeat it again and again every year. Negativity reduces the natural fertility of that land; this is why farmers have started to use chemical and unnatural substitutes to increase fertility and land productivity. These practices may economically empower the farmers but lead to health problems in humans and animals. The transportation cannot be called sustainable agriculture development. Sustainable agriculture is a system of farming that focuses on producing agricultural products that protect the environment, conserve natural resources, maintain soil fertility, and ensure long-term productivity while also supporting farmers' livelihoods and society's needs. It includes three major aspects of agricultural development:1. Economic viability, where the farmer should always get a profit from crops. 2. Environmental health.It states that farming should not damage soil, water, air, or biodiversity. 3. Social equity, which states that agriculture should benefit the maximum amount of society. Further, it should not negatively impact future generations. Sustainable agricultural development also promotesusing organic fertilizers instead of chemical ones, encouraging rainwater harvesting, agroforestry, precision farming, and renewable energy.On the other hand, sustainable development is an economic strategy that has the power to uplift rural societies, protecting them from the negative effects of climate change and market uncertainty fluctuations (Mugambiwa, S. S., 2017). Therefore, Sustainable agricultural practices are essential for long-term rural prosperity, environmental health, economic stability, and the well-being of rural communities.

Review of literature

Kumar et al. (2024) state that agricultural biotechnology's impact in India focuses on productivity and sustainable

development. There is a need for continued research in this field and for training farmers. Ashoor et al. (2024) analyze the role of AI and IoT in modernizing Indian agriculture through smart tools like drones, robotics, and irrigation systems. He says that the use of Artificial intelligence and drones can really help farmers. Sharma et al. (2024) say that traditional, chemical-free methods of agriculture support food security, small farmers, and climate resilience, and with policy support, organic farming can significantly benefit India's agriculture sector. Rimpika et al. (2023) compare precision farming with traditional methods, especially on small and scattered landholdings in India. Dr. Manoj Kumar (2023) highlights the potential of India's traditional knowledge systems and biodiversity in developing eco-friendly pest solutions. Biopesticides, such as neem-based sprays, have been increasing as sustainable alternatives tochemical pesticides. Bordoloi (2023) evaluates the impact of biofertilizers on soil health and finds that biofertilizer-based organic farming with traditional methods aresignificantly improving soil nutrients. Therefore, we can say that biofertilizers can improve both productivity and sustainability in agriculture. Smith et al., (2019) state that due to specialization,crop diversity has declined significantly in many regions ofIndia after the Green Revolution. Sustainable agriculture plays a vital role in enhancing productivity, ensuring food security, protecting the environment, and empowering small farmers through eco-friendly practices and modern technologies. It balances traditional knowledge and innovations such as biotechnology, AI, and bio-inputs, promoting long-term resilience in farming.

Besides the above-mentioned benefits, there are many challenges in the agriculture sector, such as affordable and accessible farming tools for small and marginal farmers, especially for those who has landholdings less than one hectare. Therefore, Further research is needed to expand the use of biopesticides and biofertilizers by improving their availability, awareness, and adaptability to different agro-climatic conditions. Moreover, the absence of integrated policy frameworks and adequate farmer training programs limits the effective adoption of sustainable agricultural practices.

Objective of the Study: This article is primarily based on information obtained from secondary data sources, including research papers, newspapers, and other published reports. And it also includes the author's opinion. This study focuses on the following objectives:

1. To understand the effectiveness of traditional practices and support eco-friendly and inclusive agricultural development.
2. To understand the importance of sustainable agricultural practices.
3. To explore pathways to overcome challenges of sustainable agriculture and how to meet the development rate for Vikshit Bharat-2047.

The Importance of Sustainable Agriculture for the Economic Development of The Society: Sustainable agriculture has been emerging as an opportunity for rural economies nowadays, protecting against environmental degradation and economically empowering farmers in rural areas. For mostrural farmers, agriculture is the primary dependency of income and food. The practices of farming a single crop multiple times, extra use of pesticides, and over-tilling of the soil are reducing the soil quality and fertility and damaging the farming ecosystem. Not changing the crop ultimately damages the quality of the yield and the income of the farmers.On the other hand, the income from agriculture is highly dependent on unpredictable climate conditions and diseases. Hence, when farmers do not receive a good amount of crop, rural families face limited access to basic food, leading toan imbalance in health conditions and education. Thus, Sustainable agriculture helps to solve the above problems by strengthening farms and assisting farmers to spend less money, grow more crops, and earn a steady income over time.

Sustainable agriculture takes care ofthe quality and fertility of the land, and reduces damage to the environment. It helps people in rural areas. Methods of changing crops each season, and using natural farming, keep the soil healthy. There is a high demand for organic food and vegetables nowadays. Practicing sustainable agriculture can help farmers feed their families betterand sell extra crops to earn money. Practicing organic farming also reduces the need for expensive chemical fertilizers.

Further,to practice sustainable agriculture farming, farmers use local raw materials (resources) such as home-saved seeds, vermin compost, and goobers fertilizer, which they may not need to purchase from the agriculture market. It reduces the cost of production in agriculture. Spending less helps farmers to keep increasing their income. On the other hand, the crops are generally water-saving due to local seed and home-made fertilizer, which means they do not require much water for irrigation. This also protects different kinds of plants and animals.

Several sustainable agricultural practices help alleviate poverty in rural areas by improving soil health, increasing crop yields, and providing extra income sources. **InAgroforestry,** we combine the trees with crops or animals to prevent erosion, hold more water in the soil, and offer products like fruit or timber for extra income. This practice supports long-term farm productivity and revenue.

The way for Sustainable Agriculture development in India: The vision of "Vikshit Bharat-2047" can only be achieved with the use of advanced technology in a sustainable manner. It ensures long-term growth in every sector of the economy and agriculture, creating a strong and efficient farming system. The agricultural sector needsimprovement in technologies such as precision farming, biotechnology, and digital agriculture. The Gross Capital Formation (GCF) in agriculture should be improved,

like agricultural equipment, infrastructure, and land development. Furthermore, biotechnology plays a vital role in agricultural development by using scientific methods and tools to modify plants for enhanced yield, resistance, and utility. The digital agriculture, which provides innovative solutions to long-standing agricultural challenges,need improvement. Mobile applications and platforms like the E-Kisan Portal have become essential tools in this transformation, giving farmers access to crucial information such as market prices, weather forecasts, modern farming techniques, and government schemes,enabling them to make informed decisions that improve their productivity and livelihoods. Integrating Internet of Things (IoT) devices into farming is also a key feature of digital agriculture need to be taken in practice. It allows precise monitoring of crops and efficient resource utilization.

These technologies enhance the income of the farmers and ensure national food security. Additionally, the shift towards organic practices improves soil health, reduces chemical dependency, and allows farmers to access advanced marketsby increasing real earnings. The Indian government has introduced many programs such as the Paramparagat Krishi Vikas Yojana (PKVY- 2015) and the Mission Organic Value Chain Development for North Eastern Region (MOVCDNER- 2015-16) and others to promote sustainable agriculture. Thetechnological and sustainable approaches of a modernized agriculturewill help to achieve India's goal of becoming a developed nation by 2047.

What Is Needed to Promote Sustainable Agriculture?

It is well understood that Sustainable agriculture is very important in the present way of development. However, it's not easy to accept in the present. To follow these practices, the Farmers should be trained, educated, and supported. Learning about methods of organic farming or soil-saving techniques, Training on how to use these methods in ways that work best for their local area. There is a need to align farmers' groups andcooperatives to help each other. The farmers should receive Training in using tools, buying seeds more cheaply, and selling their crops at better prices.To help farmers and practitioners of sustainable agriculture, the governments should offer some support through funding, discounts, or rewards. Building better roads and storage facilities can help farmers reach markets faster, keep food from spoiling, and help them earn more. Also, creating fair-trade programs and promoting local and global markets for sustainable goods can ensure farmers get fair prices and are encouraged to keep using eco-friendly methods.

Sustainable Agriculture and Rural Development: The foundation of rural India is agriculture, and the growth of this sector is essential to the ultimatedevelopment of rural areas. The majority of rural families are associated with agriculture directly or indirectly. When agricultural production rises due to sustainable practices,farmers make more money. Higher incomes translate into greater investment in healthcare, education, and nutrition, higher living standards, and decreased rural poverty. Moreover, the challenges like poverty, environmental degradation, migration, and the problem of inadequate infrastructure are also decreased. Farmers become able to transport their produce more easily. The modernization and organization of agriculture create non-farm jobs, particularly for women and young people, in sectors including food processing, packaging, agrotourism, and agro-industries.

The sustainable agricultural practices can significantly improve livelihoods and environmental health. In the long term, this will ensure that rural communities become more self-reliant, resilient to climate change, and better connected to markets, enabling them to become active contributors to India's overall growth and development by 2047. At present, sustainable agriculture is offering a transformative solution for food security and economic and ecological revival in rural areas. It is Crucial for Rural Development, such as the Economic Empowerment of Farmers. It is reducing dependence on expensive chemical inputs and reducing the costs. It is promoting high-value crops, agroforestry, and allied sectors (dairy, fisheries). It is enabling farmers and consumers to access special markets. For example, Sikkim has become India's first fully organic state and saw growth in Agri-tourism and farmer incomes. Sustainable agriculture has also been generating Employment by developing rural enterprises and entrepreneurship, especially among youth and women, which ultimately can reduce rural-urban migration by creating local opportunities. Sustainable agriculture will be a cornerstone of rural development in India as the country is working towards becoming a developed nation by 2047. India is highly vulnerable to climate change; therefore, awareness of adopting sustainable agriculture is increasing among rural farmers because they are becoming aware that it stops soil degradation, conserves water and promotes biodiversity. Digital India is also working in rural areas for farm-to-market linkage. Zero-budget natural farming is being adopted through the Grassroots training. Soil health cards, regular testing, and rejuvenation techniques are helping people to know how to deal with natural calamities before they come. India's dream of becoming a developed country by 2047 hinges largely on how well we transform our rural heartland.

India's agricultural sector benefits from structural advantages that offer significant opportunities for growth and investment. First, a large and expanding consumer base, a growing middle class, is driving demand for high-value agricultural products such as fruits, vegetables, and dairy items like paneer and curd. On the other hand, India has a strong advantage in crop production, as it is one of the world's leading producers of rice, sugarcane, wheat, and maize, and it grows these crops at some of the lowest costs globally. Further, India is becoming a hub for agricultural innovation, with around 2,800 tech startups emerging as farmers increasingly adopt technology-driven

solutions, supported by better internet access and a push for higher efficiency in farming practices.

The Indian Agriculture Minister, Shivraj Singh Chouhan, has said that agriculture and allied sectors need to grow at around **5% per year** to help India become a developed nation by 2047 (The Times of India, 2025). Supporting this statement, A McKinsey report projects that India's agricultural economy could grow at a **compound annual growth rate (CAGR) of about 5–7%** from 2024 to 2047 (McKinsey, 2025). India's agriculture sector boasts numerous structural advantages compared to other agricultural economies, which, if fully harnessed, could propel the sector's growth to $1.4 trillion by 2035 and $3.1 trillion by 2047. Agribusinesses have a chance to seize value, influence markets, and spur revolutionary growth in this new environment. With the help of the government, India's bioeconomy has expanded quickly. By 2024, it will have grown from $10 billion in 2014 to over $165 billion. By establishing direct relationships with businesses that provide distinctive, superior products, these farmers can expand. Additional agricultural products, such as natural fertilizers and insecticides. By 2030, the market is anticipated to have nearly doubled in size, reaching over $600 million. Rural development can be greatly aided by agriculture when it is grown in a sustainable and inclusive manner. Incomes rise, jobs are created, infrastructure is strengthened, communi -ties are empowered, and environmental security is guaranteed. For India to become a developed nation by 2047, agricultural development is crucial to creating resilient, self-sufficient rural communities. More funding is needed for infrastructure, research, and innovation to support rural development, particularly for biofuels and innovative applications of agricultural waste.The transformation of rural India in accordance with the nation's development goals for 2047 depends on sustainable agriculture. Through the effective use of natural resources and the preservation of environmental equilibrium, it guarantees long-term productivity.

Conclusion : We are not a small country with a population of just a few million—by 2047, our population will reach approximately 1.6 billion. Therefore, we need to create Employment for everyone and focus on the cost of creating each job. We should also invest in sectors that can generate more Employment and help strengthen local economies, such as organic farming (Gupta R. P., 2019). The vision of Vikshit Bharat @2047 presents a transformative roadmap for India's agriculture sector, centered on sustainability, innovation, and resilience. Realizing this vision requires integrating sustainable practices with emerging technologies and strong collaboration among government, farmers, researchers, and civil society. Strategic investments in technology, infrastructure, and human capital will be key, supported by effective policies. Achieving Vikshit Bharat by 2047 requires integrating advanced technologies like precision farming, biotechnology, and digital agriculture with sustainable practices such as organic farming and efficient water management.Crop diversification and agroforestry improve soil health, biodiversity, and resilience, while preserving soil fertility is essential for long-term sustainability. Together, these strategies support a modern, efficient, and resilient agricultural system essential for India's growth and food security. Through teamwork and ongoing learning, the Indian economy can build a resilient agricultural system that will ensure food security and promote national prosperity. Infrastructure and innovations like IoT and mobile platforms empower farmers with real-time information, increasing productivity and incomes.

References:-

1. Kumar, R. K., Senthamizhkumaran, V. R., Alagendran, S., Chitra, M., Kumar, K. R., Tyagi, T., & Tyagi, A. (2024). Advances in Agricultural Biotechnology: Enhancing Productivity and Sustainability in India : A Review. Journal of Scientific Research and Reports, 30(7), 366–383. DOI:https://doi.org/10.9734/jsrr/2024/v30i72154
2. Rimpika, Anushi, Manasa, S., Anusha K. N., Sharma, S., Thakur, A., Shilpa, & Sood, A. (2023). An Overview of Precision Farming. International Journal of Environment and Climate Change, 13(12), 441–456. DOI:https://doi.org/10.9734/ijecc/2023/v13i123701
3. Sharma, Mrs. G., Nagar, Mrs. Niti, (2024). Current Status and Future Outlook for Organic Farming in India. Interantional Journal of Scientific Research in Engineering And Management, 08(05), 1–5.2582-3930. DOI:https://doi.org/10.55041/IJSREM33285
4. Kumar, M. (2023). Bio-Pesticides: Essential for Controlling Insect Pests. Journal for Research in Applied Sciences and Biotechnology, 2(6), 282–285. DOI:https://doi.org/10.55544/jrasb.2.6.39
5. Bordoloi, P. (2023). Effect of Biofertilizer-based Organic Nutrient Management in Soil Health and Productivity Enhancement of Pea (Pisum sativum) in North East India. Biological Forum-An International Journal, 15(5a), 421.e- 2249-3239 https://www.researchgate.net/publication/376679157
6. Smith, J. C., Ghosh, A., &Hijmans, R. J. (2019). Agricultural intensification was associated with crop diversification in India (1947-2014). PLoS ONE, 14(12).e0225555 DOI:https://doi.org/10.1371/journal.pone.0225555.
7. Mugambiwa, S. S., &Tirivangasi, H. M. (2017). Climate change: A threat towards achieving 'Sustainable Development Goal number two' (end hunger, achieve food security and improved nutrition and promote sustainable agriculture) in South Africa. Jàmbá: Journal of Disaster Risk Studies, 9(1), 1-6.
8. (The Times of India, 2025), Need 5% annual growth in agriculture for India to become developed nation by 2047: Shivraj Singh Chouhan.
9. (Avinash Goyal & Nitika Nathani, 2025) Value creation in Indian agriculture | McKinsey

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Social Responsibilities and Need of Legal Profession

Barkha Dwivedi* **Dr. Charu Chandra Vyas****

*Research Scholar (Law) School of Legal Studies LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA
**Assistant Professor (Law) School of Legal Studies LNCT University, Bhopal (M.P.) INDIA

Abstract: The legal profession in India holds a distinctive position as both a key pillar of the justice delivery system and a catalyst for social transformation. Beyond representing clients in courts, lawyers are entrusted with the responsibility to uphold constitutional values, safeguard fundamental rights, and promote access to justice for all sections of society. This research paper examines the evolving social responsibilities of legal professionals in India, focusing on their role in ensuring legal awareness, providing pro bono services, and advocating for the marginalized. It further analyzes the ethical duties outlined by the Bar Council of India and evaluates the extent to which legal practitioners contribute to public interest litigation, legal aid mechanisms, and democratic governance. The study highlights the growing need for professional accountability and reforms to strengthen the credibility, integrity, and service-orientation of the legal community. Ultimately, the paper emphasizes that the legal profession must continuously align its practices with the broader goals of social justice and nation-building for a more equitable legal system in India.
Keywords: Legal profession in India, Social responsibility, Access to justice, Professional ethics, Bar Council of India, Legal aid, Public interest litigation, Rule of law, Justice delivery system, Constitutional values.

Introduction - The American Bar Association has well explained the need of the Code of the Legal Ethics. Justice SundramAiyer in his book 'Professional Ethics'[1] has asserted the need of legal ethics. He observed that rules are necessary even for the best self-interest is a misleading factor when you have to decide on the spur of the moment what is best to be done in the circumstances. The fact that these are definite rules and that much discretion is given to the individual will itself be an additional factor source of temptation. Never adopt the standards of a business profession. But after all whatever light we may seek to get from rules of conduct which have been prescribed in England or other countries, a great deal will have to be left to individual conscience. Nothing but a determination to err always on the safe side in cases of doubt will enable you to do your duty consciously. In this country it must be confessed that very often petitioners are guilty of questionable conduct owing to ignorance. They do not really know what is proper to be done in any particular case as there are no rules to guide them, no settled traditions to serve as an inspiration; each one is a law unto himself. He has further observed that it is not desirable that the lawyer's guidance should be altogether under the judicial control. It would be impossible for judges to control the bar satisfactorily. Too strict a discipline on the part of the courts is likely to be unfair to the independence and self-reliance of the members of the Bar. It is all the more necessary, therefore, that there should be disciplinary bodies and that the profession itself should try and frame rules for its guidance. Explaining the advantages of the legal ethics, learned C.L. Anand has stated that an advocate being a public functionary, anyone taking to practice at the bar should have correct knowledge of privileges as well as the ethical obligations of the members of his professional conduct without difficulty or hesitation. This is necessary for the satisfaction of his own conscience, for the honour and good name of the profession, for the protection of the client and other concerned in litigation and for the welfare of the general public. It is the duty of the State to protect persons not only t only from incompetent lawyers but also from those who will disregard the obligations of professional service.

Even prior to the Advocates Act, 1961 the provisions for punishment for misconduct were provided. Section 10 of the Indian Bar Council Act, 1926. Provided for the punishment of misconduct which is quoted as below:

Prohibition as to appearance for opposite party and use of information to the detriment of client

The relation between the advocate and his client is of trust and confidence.

It is the duty of an advocate not to use the information obtained by him as advocate to the detriment of his client. The duty continues even after the relation of advocate and client has ceased. It is the duty of an advocate not to

disclose information communicated to him by his client. If the disclosure of such information is allowed, the clients would not disclose their secrets to their advocates and the advocates would not be able to discharge their functions properly.

It is evident from the explanation to section 126 of the said Act that the obligation stated in this section continues after the employment is ceased. The object of this provision is that there should be absolute confidence between the client and his advocate and this should be protected legally.

Respect and Courtesy to Court

Learned C.L. Anand has observed that the advocate owes respect and courtesy to the court for the reasons stated below:

(a) An advocate is like the Judge, himself, an officer of the court and an integral part of the judicial machine. The legal profession consists of the Bar as well as the Bench and both have common aims and ideals.

(b) In theory it is the King or Sovereign who presides in the court of justice and the judge is merely the mouthpiece representative of the sovereign. Respect shown to the court is, therefore, respect shown to the Sovereign whose representative the judge is.

(c) Not only litigants and witnesses but the general public will get their inspiration, and in time respect judges from the example of advocates. It is necessary for the administration of justice that judges should have esteem of the people. If judges are not respected, it tends to impair public confidence in the administration of justice.

(d) It is good manners and advocates before anything else are "gentlemen of the Bar".

(e) Even from a purely practical standpoint, there is nothing to be gained but there is much to lose by antagonizing the Court. Conflict with the judge renders the trial disagreeable to all and has generally an injurious effect upon the interests of the client.

(f) The usual practice in modern times is to appoint judges from among the members of the bar and even where this rule is not strictly observed, the Bench is fairly representative of the bar.

(g) It is necessary for dignified and honourable administration of justice that the court should be regarded with respect by the suitors and people.

In Hoffman's third resolution[2]:-

To all judges, when in court, I will ever be respectful, they are the law's vice regents; and whatever may be their character and department, the individual should be lost in the majesty of the office.

Resolution Forty one of Hoffman is also notable. In this Resolution he hasstated[3]-

In reading to the court or to the jury, authorities, records, documents or other papers, I shall always consider myself as executing a trust and as such, bound to execute it faithfully and honourably. I am resolved, therefore, carefully to abstain from all false or deception readings and from all uncandid omissions of any qualification of the notes; and I shall ever hold that the obligation extends not only to words, syllables and letters but also to the modus legend. All intentional false emphasis and even into nations to mislead, are petty impositions on the confidence reposed and whilst avoided by self, shall ever be regarded by me in others as feeble devices of an impoverished mind or as pregnant evidences of a disregard for truth while justly subjects them to be watched in more important matters.

Legal profession unlike other professions, which are generally taken up with the sole object of earning money, is a profession of high dignity. An advocate has got some moral obligation towards his clients, court and at the same time towards the society in general. The foremost of all such obligations is that he should never act contrary to the basic principles of morality and should always act honestly. He should not do any act or advise his client to do any act which would disrespect the established judiciary in the country. He shall always strive to assist the Bench in the enforcement of law of the land. He should conduct himself with utmost dignity and self-respect in the court. All these are the self-imposed restrictions which the member of the legal fraternity have put on themselves. There was no mechanism prior to the commencement of this Act which would have a check upon the conduct of an advocate. But realizing the need to have some check upon the profession so that the standards that are laid down in the field should not go down, the Parliament on the recommendation of the Law Commission enacted the Advocates Act, 1961[4].

In Re: Mohit Chaudhary, Advocate[5], Supreme Court consider it appropriate to review some of the judicial precedents and texts in respect of the conduct of an advocate. We recognize the duty of an advocate to put his best case for the litigant before the Court. This, however, does not absolve him of the responsibility as an officer of the Court. It is a dual responsibility. The right of an Advocate-on-Record in the Supreme Court, is not an automatic right coming from the enrollment at the Bar. Something more has to be done. The rigors of an examination have to be gone through, which tests the advocate, not only on his legal ability of drafting and knowledge of law, but on ethical practices. It is only after going through the rigorous exercise that an advocate is enlisted as an Advocate-on-Record, giving him the right to act and file pleadings before this Court, in accordance with the Supreme Court Rules, 2013. A perusal of the relevant Rule contained in order IV, rule 5 requires, inter alia, even training for one year with an Advocate-on-Record, who has been approved by the Court, prior to the appearance in the test, so that the prospective Advocate-on-Record is well grounded in the various professional aspects. The requirements regarding the Advocate-on-Record examination, held under the general policy of the Committee of Judges appointed by the Chief Justice, requires testing in the practice and procedure of Supreme Court drafting, advocacy and professional ethics

and leading cases. The contemner has been an Advocate-on-Record for 8 years.

In **Preeti Gupta and another v/s state of Jharkhand and another case**[6]the Supreme Court observed that learned members of the Bar have enormous social responsibilities and obligation to ensure that social fiber family life is not ruined or demolished. The member of Bar who belong to a noble profession must maintain its noble traditions and should treat every complaint under section 498 A as a basic human problem and must make serious endeavor to help the parties arriving amicable resolution of that human problem. Advocates must discharge their duties to the best of their abilities to ensure that social fiber, peace and tranquility of the society remain intact.

Lawyer allows our professional not only to grow has individuals and collectively but also the change to take an active role in the advancement of society. Social responsibilities is an essentially an argument about the limits that apply to the fundamental moral obligation that lawyers have to faithfully play their role in larger legal system.

That the practice of law is not akin, to any other businesses for professional as it involves a dual duty may a primary duty to the Court and then a duty to the litigant with the privilege to address the Court for the client is best enunciated in the words of justice Mookerjee in Emperor V/s Rajanikantha Bose[7].

The practice of law is not a business open to all who wish to engage in it. It is a personal right or privilege... It is in the nature of a franchise from the State That you are a member of the legal profession is your privilege; that you can represent your client is your privilege; that you can in that capacity claim audience in Court is your privilege. Yours is an exalted profession in which your privilege is your duty and your duty is your privilege. They both coincide.

The contempt jurisdiction is not only to protect the reputation of the concerned Judge so that he can administer justice fearlessly and fairly, but also to protect "the fair name of the judiciary". The protection in a manner of speaking extends even to the Registry in the performance of its task and false and unfair allegations which seek to impede the work working of the Registry and thus the administration of justice, made with oblique motives cannot be tolerated. In such a situation in order to uphold the honor and dignity of the institution, the Court has to perform the painful duties which we are faced with in the present proceedings. Not to do so in the words of P.B. Sawant, J. in Sanjiv Dutta, Dy. Secy., Ministry of Information & Broadcasting, In re, would[8]- The present trend unless checked is likely to lead to a stage when the system will be found wrecked from within before it is a wrecked from outside it is for the member of the profession to introspect and take the corrective steps in the time and also spare the court the unpleasant duty. We say no more.

In the aforesaid context the aforesaid principle in different words was set out by justice Crampton in R.v O Connell[9] as under

The advocate is a representative but not a delegate. He gives to his client the benefit of his learning, his talents and his judgment; but all through he never forgets what he owes to himself and to others. He will not knowingly misstate the law; he will not willfully misstate the facts, though it be to gain the case for his client. He will ever bear in mind that if he be an advocate of an individual and retained and remunerated often inadequately, for valuable services, yet he has a prior and perpetual retainer on behalf of truth and justice and there is no crown or other license which in any case or for any party or purpose can discharge him from that primary and paramount retainer.

Thus a lawyer as a part of a learned profession has many obligation and duties of an honourable nature. Legal Profession owes a moral and social obligation to the poor members of our society

Conclusion: The legal profession in India plays a vital role not only in the administration of justice but also in shaping a socially responsible, democratic, and equitable society. Lawyers serve as defenders of constitutional rights, guardians of the rule of law, and advocates for the voiceless. In the contemporary era, societal challenges such as rising inequality, lack of legal awareness, and delays in justice demand that legal professionals expand their role beyond courtrooms. While professional ethics and accountability frameworks exist under the Bar Council of India, their implementation needs constant reinforcement. The future of the legal system depends on the commitment of legal practitioners to transparency, integrity, social service, and continuous professional development. Thus, an efficient, ethical, and socially sensitive legal community is indispensable for achieving true justice and strengthening the foundations of India's democracy.

Suggestions:

(i) Strengthening Legal Education: Law schools should incorporate practical training and social responsibility components such as clinical legal education, fieldwork, and community engagements.

(ii) Enhanced Ethical Standards: Strict monitoring and enforcement of professional conduct rules are necessary to curb unethical practices and improve public trust.

(iii) Promotion of Legal Aid Services: Lawyers should actively participate in legal aid programs and pro bono services to ensure access to justice for marginalized communities.

(iv) Increased Public Legal Awareness: Regular awareness campaigns, workshops, and legal literacy drives should be conducted in rural and underprivileged areas.

(v) Technological Integration: Adoption of digital tools for case management, online dispute resolution, and e-courts can reduce delays and improve efficiency.

(vi) Support for Public Interest Litigation: Encouraging lawyers to take up matters of social significance to ensure protection of rights and social justice.

(vii) Continuing Professional Development: Mandatory training and skill enhancement programmes should be introduced to keep legal professionals updated with evolving laws and global practices.

(viii) Strengthening Accountability Mechanisms: Establishing transparent disciplinary procedures and grievance redressal systems to ensure ethical compliance.

References:-

1. General Principles of Legal Ethics.
2 Hoffman, fifty resolutions, Resolution III
3 Ibid., Resolution XLI
4 K PushpaLeela V. Bar Council of State of A.P., AIR 1999 A.P. 88
5. A.L.R 2017 S.C. at 3842.
6. PreetiGutpa and another V/s State of Jharkhand and another AIR 2010 SC 3363
7. ILR 49, Cal. 732, 71 Ind. Cas. 81: AIR 1992 Cal. 515
8. (AIR 1995) 3 S.C.C. 619 (AIR 1995 SCW 2203)
9. 7 Irish Law Report 313

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Novel Metal Adsorbent and Their Use for Industrial Waste Water

Durgesh Rane* Dr. Arun Sikarwar Dr. O N Choubey*****

*Govt. Narmada College, Narmadapuram (M.P.) INDIA
** Govt. Home Science P.G College, Narmadapuram (M.P.) INDIA
*** Govt. Narmada College, Narmadapuram (M.P.) INDIA

Abstract: Nano-Materials have unique properties physical, chemical, optical, catalytic and electrical made a prominent candidate for waste water purification.

Nano-sized metal oxides have unique properties. The most important feature is large surface volume ratio, which is suitable for different form of water treatment (adsorption, photo catalysis, membrane process Nano size metal oxides(NMOS), including ferric oxides, manganese oxides, Aluminum oxides, titanium oxides, magnesium oxides, zinc oxide and Cerium oxides, provide high surface area and specific affinity for heavy metal adsorption from aqueous systems. The Municipal and industrial solid waste are another important source of pollution ,which are consider a main source of the heavy metal like Hg, Cd, Fe, Mn, Pb, and the treatment of these wastes must be agreed with the environmental standard before it is reused or returned to surface water.

Keywords: Novel adsorbent, Nano - particles, Wastewater, Heavy metals.

Introduction - Environmental pollution is a major burning issue, pay attention to the need for the surviving and Eco-friendly for environment as well as human being. Environmental pollutants are hazardous, persistent and easily contaminate into water and soil. So consequences of born different type of water born disease e.g. Cholera, Diarrhea, Abdominal pain & cramps, Typhoid.

Nanotechnology is one of the most effective technologies in purification of contaminant water. Purpose of the synthesis new novel adsorbent which has multifarious application helpful for society because these may be Eco-friendly, cast effective and easily synthesis.

The word “Nano” originated from Greek word “dwarf “means much smaller than the usual size of the particles based on the lecture of Richard Feynman at an annual meeting of the American physical society at Caltech, called as “There is plenty of room at bottom “ The term nanotechnology refers to various Nano-level technologies which is a wide range of application in different areas such as – Waste water purification, energy consumption, space and other field.

Nano-Materials have unique properties physical, chemical, optical, catalytic and electrical made a prominent candidate for waste water purification.

Nano-sized metal oxides has unique properties. The most important feature is large surface volume ratio, which is suitable for different form of water treatment (adsorption, photo catalysis, membrane process Nano size metal oxides(NMOS) , including ferric oxides, manganese oxides, Aluminum oxides, titanium oxides, magnesium oxides and Cerium oxides, provide high surface area and specific affinity for heavy metal adsorption from aqueous systems.

The Municipal and industrial solid waste are another important source of pollution ,which are consider a main source of the heavy metal like Hg, Cd, Fe, Mn, Pb, and the treatment of these wastes must be agreed with the environmental standard before it is reused or returned to surface water [1]. There are many technique have been developed such as chemical precipitation, reverse Osmosis, Ion exchange and adsorption to remove heavy metal and other hazard materials from wastewater [2].

Among all of the previous techniques, the adsorption on clay and other chemical substances is considered to be a particularly more effective process especially by using low cost and environment friendly material for the removal of heavy metals from industrial waste water and aqueous solutions [3].

Adsorption is frequently used technique because of its low cost, Eco-friendly and easily opera table.

Different types of adsorbents:

(A) Commercial activated Carbons

Ex.- wood, peat, coconut shell, coals(anthracite, bituminous, lignite.)

(B) Inorganic materials.

Ex – activated alumina, silica gel, Zeolites, molecular sieves.
(C) Natural materials- clays(bentonite, diatomite etc.)
(D) Agricultural wastes – sawdust, bark, solid wastes (date pith, corn cob, wheat straw, orange peel.)
(E) Industrial by products – fly ash red mud, sludge metal, hydroxide sludge.

Naturally adsorbents and synthetic adsorbents both are used in waste water treatment but synthetic adsorption capacity. Therefore recently frequently used adsorbents.

Review of literature

The present chapter deals with the literature review of the relevant research work investigations regarding the synthesis and characterization of novel adsorbents and their utilization for multifarious applications. Various analyses in India and outside have been earlier undertaken by so many chemists. Some of the important work is cited here, which are closely related to the present study. The literature of review are carried out following steps –

Low cost adsorbents can be used for the removed of heavy metals with a Concentration range of 20-60mg/l also, using real waste water showed that rice husk was effective in the Simultaneous removal of Cd and Cu [5].

Removal of chromium (vi) from waste water by using low cost dolochar adsorbent is an effective for the removal of chromium (vi) from aqueous solution .Dolochar was found to be effective , as the removal of Cr(vi) reached 100% at normal temperature [6].

Natural diatomite used as a adsorbents for the removal of different metal ions from aqueous solutions. The batch study was performed at various conditions such as pH, adsorbent dose and contact time. The maximum percent of many heavy material ions where observed at pH-4 and significantly decrease at higher pH value, while metal ions removal is positively influenced by an increase in the adsorbent dosage and contact time [7].

Artificial and naturally occurring nanoparticles will identify their nanoscale characterization and explain vital knowledge gaps related to the risk assessment of nps[8].

Heterogeneous photocatalysis is playing a key role in controlling environmental pollution. We can use this technique easily to convert toxic organic substances into less toxic substances.in this process of photocatalysis visible light is used. The purpose of doping of semiconductor with d -block metals to reduce the effective band gap and vital techniques for water purification [9].

Hexagonal porous ZnO nanoparticles were synthesized through the hydrothermal method by varying the concentration of the alkaline solution (0.2and0.3). The structural characteristics of the obtained samples showed good cry stability the synthesized Zno nanoparticles corresponding to the hexagonal form particles crystallized in the form of overlapping rods, which slightly differed in size and shape due to the engagement the alkaline solution also a lower concentration determined a reduction of agglomeration. The thermo gravimetric analysis showed a slight mass loss by the two samples(1.93-2.1%) indicating the thermal stability of the ZnO nanoparticles by hydrothermal methods[10].

Ni-doped ZnO nanoparticles by solgel chemical route synthesized naoparticle size will 21 nm which is proven by XRD. Author explains photo catalytic activity and optical analysis by using Burstein – moss effect and taucrealtion to calculate bond gaps. Autor also describe future scope for synthesizing iron-ZnO doped nanoparticles [11].

Iron oxide nanoparticles synthesis is a major efficiently because it has paramagnetic, large surface area, cheaper and low energy consumption and inert. Treatment of industrial waste water by iron-oxide nanoparticles which is based on principal of adsorption iron-oxide nanoparticales is a prominent candidate for removal of toxic heavy metal such as (Hg, Cd, As, Ni, Pd) from polluted water. The advantage of this nano particles is they follows 3r (reduce,reuse and recycle) principle [12].

Soft chemical method at low temperature to synthesized bismuth ferrite nano powder with the help of taken tartaric acid and nitric acid as an oxidizing agent. This synthesis method over come problem of the usual method (pechinis method of auto combustion to make $BiFeO_3$nanopowder) impurity formation phase. This process was quite easy, energy saving and cheaper. Author used TGA, IR spectroscopy, DTA and SEM to characterization of nano particles the size of particles was obtained range between 3-16 nm and also using scherrer formula to calculate size of the particles.[13]

A rapid convenient and environmentally benign method has been developed for the fabrication of Pd Rh and Ru are deposited into functionalized mw carbon nano tubes via reduction of metal- beta diketone precursor using supercritical carbon-di-oxide. Characterization technique were adopted e.g. XPS, TEM, EDX Nanoparticle has excellent adhesive property,narrow particle size arrangement for catalytic properties-the author reveals that pdnano particles have rich electro catalysis character in oxygen reduction for application in fuel cell[14].

Synthesis of Low dimensional iron oxide nanoparticles. TEM analysis given result that is, diameter of nanoparticles size obtained approximately 60 ± 10nm. Beta-Fe_2O_3nps were investigated by uv-visible absorption which show the presence of characteristics beta Fe_2O_3 optical properties [15].

In modern scenario some prominent waste water treatment technique are widely adopted due to specific property of nanomaterials e.g. More efficiency, time consuming, cost effective, environment acceptable. Besides this technology need to elaborate in globally some gapes still need to fill [16].

Synthesis of iron-oxide nanoparticle for removal of heavy metal from aquatic system. author explain magnetic properties which has help in removing contaminants and purify water Fe-oxide nanoparticles passes quite large

efficiency and cheaper than other metal oxide nanoparticles[17].

Synthesis of nano composite nanomaterial for purification waste water, Reveals photocatalytic property of nanomaterials e.g. TiO_2,zinc oxide and so on water filtration nanotechnology resolve the problems of recovery and reuse of the nanomaterials for purify contaminated water. Improvement in the quality of water author suggests macroporale photo catalysis and biological treatment [18]. Synthesis of nanohybrid materials which has application in hetero genous catalysis, fuel cell and advanced eco-friendly biosensor. Method will use like electrochemical deposition, electrode less deposition,dispersion and physical method. The ultimate aim is to gain high dispersion and nano size particles on the surface of CNTS [19].

Metal nanoclusters pay a tremendous attention towards purification of waste water due to unique characteristics e.g. Photo luminescence. Intrinsic magnetic property, electrochemical property, chirality and catalytic property, and so on . Cu is extensively used as a catalyticnano -particles because it has high conductivity, homogeneity same as ag and au nanoparticles and also cost effective. Recent work focused on synthesis of Sn-Cu nanocluster and analogy protects clusters with unique optical and catalytic properties. This literature author used to adopt templet base synthesis,electrochemical method, water in oil ,microemulsion techniques, brust-shiffrin method and microwave assisted payol method is use .evidence from XRD ,TEM and mass spectrometry reveals that newly formed cu nanocluster is quitly more stable and smaller than Cu13 and Cu8 synthesis wet chemical synthesis method [20].

Laser irradiation method for synthesis of nanoparticles .this technique is analternative of bottom up chemical reduction method.this technique based on green principle and highly reproductive.plasma bands of UV visible spectroscopy for calculate surface coverage of nanoparticles applications in synthesis multifunctionalization [21].

The Effect of fertilizer, faucal pollution of water presence of heavy metal in contaminated water(Pb, Fe and Cr) in excessive amount pay a vital attention towards industrial process because they produce water poisoning disease which has harmful for aquatic fauna[22].

Precipitation method

Metal salt + Alkali (NaOH, KOH)
↓
Precipitation of metal hydroxide
↓
Sinterring at calcination 300^{0}C
↓
Metal Hydroxide particles
↓
Calcination (500^{0}C, 600^{0}C, 700^{0}C)
↓
Grind
↓
Sample

Conclusion : Synthesized adsorbents effectively used for removal of heavy metals and other impurity from synthetic as well as industrial waste water. Low cost method. Effective removal of heavy metals and impurities within a permissible limit. Preparation of other useful materials such as tiles, bricks, utilizing exhausted adsorbents.

Acknowledgment: This review is supported by Department of Chemistry, Govt. Narmada College Narmadapuram M.P and Govt. Home Science P.G College Narmadapuram (M.P) for their guidance and to carry out this valuable review paper.

References:-

1. Ali, M.M., El-Sayed, E.E., Kamel, M.Z., Removal of hazardous contaminants from waste water using natural zeolite. j. Water Res.Photon (2017) 138, 333-347.
2. Shi, W.Y. Shao, H.B., Li, H., Shao, M.A., Du, S., Progress in the remediation of hazardous heavy metal-polluted polluted soils by natural zeolite. J.Hazard. Mater. (2009) 170 (1), 1-6.
3. Lin, S.H., Juang, R.S., Heavy metal removal from water by sorption using surfactant-modified montmorillonite. J.Hazard. Matter (2002) 92 (3)315-326.
4. Crini G (2006) Non – Conventional low cost adsorbent for dye removal. BioresourTechnol 97:1061-1085. https://doi.org/10.1016/j.biortech.2005.05.001
5. Hala Ahmad Hegazi, removal of heavy metals from waste water using agricultural and industrial waste as adsorbents. J. HBRC. (2013) ; 9, 276-282.
6. H.panda, N.Tiadi, M. Mohanty, C.R.Mohanty, studies on adsorption behavior of an Industrial waste for removal of chromium from aqueous solution J.C.Che.Eng. South Africa (2017); 23, 132-138.
7. ElsauedEl Bastamy Elsaued, Natural diatomite as an effective adsorbent for heavy metals in water and waste water treatment(a batch study) J. water science (2018); 32, 32-43.
8. JaisonJeevanandam,Ahmed Barhoum, Yen S. Chan, Alain Dufresne and Michal Danguah, Review on nanoparticles and nanostructured materials.Belistein J. Nanotechnol. (2018); 9,1050-1074.
9. SuvardhanKanchi, Nanotechnology for water treatment.J.Environ.Anal. Chem. (2004); 1(2), 1-3.
10. GyorphyDeak,Florin Diana, Dumitiri Michaela, Andrea Moncea and Maria, Synthesis of ZnO nanoparticles for water treatment application. Inter. J. Conser. Sci. (2019);10(2),343-350.
11. Shashi Kant and Amit Kumar, A comparative analysis of structural optical and photocatalyic properties of ZnO and Ni doped ZnO oxide nanosphere prepare by sol-gel method. J. Adv.Mat.Lett. (2012); 3(4),350-354.
12. Macros Fernandez Garcia and Jose Rodriquez,

Nanomaterials:inorganic and bioinorganic perspective (2009);Encyclopedia of Inorganic and Bioinorganic Chemistry, DOI: 10.1002/9781119951438.eibc0331

13. SushmitaGhos, Subrata Das Gupta,AmaranthSen and HimadriSekharMaiti, Low temperature synthesis of nanosized bismuth ferrite by soft chemical route. J.Am.Ceram. Soc., (2005); 88(5) 1349-1352.
14. Xiang Rong Ye, Yuchelin, ChongmingWang, Mark H. Engelhard. Yong Wang and Chien M. Wai, Supercritical fluid synthesis and characterization of catalytic metal nanoparticle on carbon nanotubes. J. Mater. Chem. (2004); 14(5),908-913.
15. Mohammad M. Rahman, SherBhadur Khan, AslamJamel, Mohamad Faisal, Abdullah M. Aisiri, Iron oxide nanoparticles(2011): Doi: 10.577-2/-27698.
16. Asim Ali, Yaqoob, TabassumParveen, Khalid Umar, Mohammad NasirMohammad Ibrahim.Role of nanomaterials in the treatment of waste water. Water (2020);12(2),495.
17. Pragnesh N. Dave and Lakhan V. Chopda. Application iron oxide nanoparticles for the removal heavy metals. J. Nanotechnol. Hindawi.(2014)Doi. https://doi.org/10.1155/2014/398569
18. S. Mustupha, N.M. Ndamisto,A.S. Abdullhakareem J.O. Tijani,Dt. Sohaib, A.O. Ajula, A.k. Mohammed, Application of TiO_2 and ZnO nanoparticles immobilized an clay in wastewater treatment. J. Appl. Water Sci. (2020): 10(1),1-36.
19. Bohua Wu, Yinjiekuang, Xiao Huazhang, Jinhua Chon. Noble metal nanoparticales/ carbon nanotubes nanohybrid:synthesis and applications. J. Nano Today. (2011);(20) 6, 75-90.
20. Lu, Yizhang ,Weiwen Tao, Chenwei. Copper nanoclusters Synthesis, Characterization and Properties. J. Chinese Sci. Bul. (2012); 57, 41-47.
21. VincezoAmendola and Moreno Meneghetti, Laser ablation synthesis in solution and size manipulation of noble, metal nano particles. J. Physical Chem. Chemical Phy. (2009); 11(20), 3805-3821.
22. P. N. Patil, D.V. Sawant, R. N. Deshmukh. Physio-chemical parameter for testing of water. Inter. J. Environ. Sci. (2012); 3(3), 1194-1207.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

International Conventions on Elder Persons' Rights and India: A Descriptive and Analytical Study

Mr. Ankit Khare* **Dr. Rajat Kumar Satpathy****

*Research Scholar, Maharaja Chhatrasal Bundelkhand University, Chhatarpur (M.P.) INDIA
** Principal, Pt. Motilal Nehru Law College, Chhatarpur (M.P.) INDIA

Abstract: The rights of older persons have become a pressing global concern due to unprecedented demographic shifts, increasing longevity, and the challenges created by social, economic, and technological transitions. While the international community has adopted several soft-law frameworks such as the Madrid International Plan of Action on Ageing (MIPAA), it is yet to finalize a legally binding international convention specifically dedicated to the rights of older persons. India, with one of the world's largest ageing populations, continues to rely on constitutional protections, statutory mechanisms, and welfare schemes to safeguard elder rights. This paper provides an in-depth descriptive and analytical examination of international developments in elder rights and critically assesses India's alignment with these standards. It also highlights the gaps, challenges, and future directions for establishing a comprehensive rights-based approach for ageing populations in India.

Introduction - The world is witnessing a demographic revolution marked by a rapid increase in the proportion of older persons. According to the United Nations, the global population of individuals aged 60 years and above is projected to double from 1 billion in 2020 to 2.1 billion by 2050. This shift raises critical questions about social protection, health care, dignity, autonomy, and the integration of older adults in socio-economic processes.

In India, the challenge is even more complex. With over 149 million elderly persons (Census projections), India is expected to become home to the world's largest ageing population by 2050. Despite various legal and policy frameworks, the elderly continue to face neglect, economic insecurity, health vulnerabilities, abuse, and social alienation.

The absence of a binding international convention on elder rights has created a normative gap. This paper aims to explore international developments regarding elder rights, analyse India's position concerning these frameworks, and propose policy-level recommendations for strengthening the rights regime for older persons in the country.

International Frameworks and Conventions on Elder Rights

Early International Efforts: The protection of elder persons' rights in the international human rights system evolved slowly and indirectly. Foundational documents such as the Universal Declaration of Human Rights (1948) and covenants like the ICCPR and ICESCR guaranteed dignity, equality, social security, and freedom from discrimination. Although these instruments did not explicitly address ageing, they established broad entitlements that older persons could claim—such as the right to life and liberty, adequate living standards, healthcare, and non-discrimination. However, these guarantees lacked the specific focus needed to address the unique vulnerabilities and age-related concerns of older persons.

Vienna International Plan of Action on Ageing (1982): A major step towards acknowledging ageing issues came with the Vienna International Plan of Action on Ageing, adopted in 1982. It emphasized the need for integrating older persons into society, ensuring their economic and income security, improving healthcare access, and protecting them from discrimination. Although visionary, the Vienna Plan served only as guidance and created no binding obligations on governments.

United Nations Principles for Older Persons (1991): In 1991, the UN General Assembly adopted the United Nations Principles for Older Persons, outlining 18 principles under five broad themes—Independence, Participation, Care, Self-fulfilment, and Dignity. These principles encouraged states to adopt elder-friendly laws and policies, but like previous frameworks, they carried no legal enforceability and remained aspirational in nature.

Madrid International Plan of Action on Ageing (MIPAA), 2002: The Madrid Plan of 2002 is the most comprehensive international policy framework on ageing. It calls for the full participation of older persons in society, promotes their health and independence, and aims to create social environments that uphold dignity and well-being.

Implementation under MIPAA is voluntary, with periodic

review cycles. While influential in shaping global discourse, MIPAA does not impose binding legal obligations or accountability measures on states.

Movement for a UN Convention on the Rights of Older Persons: Growing recognition of gaps in existing human rights instruments led to increasing advocacy for a dedicated UN convention. Since 2010, the Open-Ended Working Group on Ageing (OEWGA) has deliberated on the need for a legally binding framework. Key gaps include the absence of explicit prohibition of age discrimination, lack of defined rights regarding elder abuse, palliative care, and long-term care, and weak accountability mechanisms. Many countries, especially in Latin America, strongly support a global convention, though international consensus is still evolving.

Regional Conventions: A significant development occurred in 2015 when the Organization of American States adopted the Inter-American Convention on Protecting the Human Rights of Older Persons—the world's first binding treaty dedicated entirely to elder rights. It recognizes rights to autonomy, long-term care, health, dignity, freedom from violence, and accessibility. The success of this regional instrument strengthens global calls for a similar UN-level treaty.

Analytical Gap Assessment: Despite notable progress, international protections for older persons remain fragmented and largely non-binding. The absence of a comprehensive global convention continues to restrict effective monitoring, enforcement, and uniform standards for safeguarding elder rights worldwide.

Elder Rights in India: Constitutional, Legal, and Policy Framework

Constitutional Provisions: Although the Constitution of India does not expressly mention elder rights, several provisions offer indirect yet significant protection. The Directive Principles require the State to provide public assistance in cases of old age (Article 41), protect weaker sections (Article 46), and promote health and nutrition (Article 47). Fundamental Rights guarantee equality before law (Article 14), the right to life with dignity (Article 21), and protection from exploitation (Articles 23–24). Courts have expansively interpreted Article 21 to include the right to live with dignity, health, and shelter—elements crucial for elder well-being.

Maintenance and Welfare of Parents and Senior Citizens Act, 2007: This Act is India's most direct legal framework for elder protection. It obligates children and heirs to maintain parents and provides for monthly maintenance, protection of life and property, and the establishment of old-age homes. It also criminalizes abandonment. While powerful in principle, its implementation varies across states.

National Policy on Older Persons (1999) and National Policy for Senior Citizens (2011): These policy documents aim to strengthen income security, expand healthcare support, encourage NGO participation, promote community-based care, and foster active ageing. Despite their comprehensive scope, actual implementation remains inconsistent across regions.

Social Security Schemes: India operates several central schemes to support elderly welfare, including the Pradhan Mantri Vaya Vandana Yojana, Indira Gandhi National Old Age Pension Scheme, Ayushman Bharat, Senior Citizens Savings Scheme, and Annapurna Scheme. Although valuable, many programs face challenges such as limited coverage, administrative bottlenecks, and inadequate funding.

Judicial Activism: The judiciary has played an important role in advancing elder rights. In Dattatraya Moreshwar (1952), the Supreme Court affirmed dignity as an integral part of life. In Ashwani Kumar v. Union of India (2018), the Court directed governments to ensure the welfare of senior citizens, including functional old-age homes and adequate healthcare. Judicial interventions often fill gaps left by policy and administrative deficiencies.

India's Alignment with International Standards: A Critical Analysis

Compliance with UN Principles and MIPAA: India's policy and legal structures reflect many commitments present in international soft-law frameworks, including the UN Principles and MIPAA. India regularly participates in review processes and has created national strategies for senior citizens. However, there is a significant gap between policy commitments and on-ground implementation.

Gaps in India's Legal Structure Compared to International Norms: Despite progress, India's elder rights framework lacks several elements expected under international standards:

1. **Absence of a rights-based law:** India lacks explicit statutory recognition of elder rights, anti-ageism laws, and comprehensive safeguards against abuse.
2. **Weak enforcement mechanisms:** Maintenance Tribunals often face delays, capacity shortages, and limited accessibility.
3. **Healthcare gaps:** India falls short of international standards in geriatric care, palliative care, and long-term institutional support.
4. **Inadequate universal social security:** Pension amounts remain insufficient for a dignified life.
5. **Weak evidence-based planning:** Lack of updated, comprehensive data hampers effective policy formulation.

India's Position on a Global Convention: India supports enhancing protection for older persons but has not taken an assertive position in favour of a binding global convention. Concerns over financial implications, administrative burden, and implementation feasibility influence its cautious stance. Nevertheless, India stands to benefit significantly from a global normative framework given its rapidly ageing population.

Challenges in Protecting Elder Rights in India

Socio-Economic Challenges: Older persons often face poverty, economic dependency, limited earning opportunities, and inadequate pension coverage.
Social Challenges: Changes in family structure, migration of youth, increasing elder abuse, and social isolation weaken traditional protection mechanisms.
Healthcare Challenges: Geriatric services are limited, healthcare is expensive, and insurance coverage for older persons remains inadequate.
Legal and Administrative Failures: Slow tribunal processes, weak implementation of laws and policies, and low public awareness hinder effective elder protection.

These challenges collectively slow India's progress in meeting international standards.

Need for a Binding International Convention and Its Relevance to India

A comprehensive global convention would strengthen elder rights in several ways:

1. **Normative clarity:** It would define key issues such as elder abuse, long-term care, autonomy, and social protection.
2. **Accountability:** Monitoring and reporting mechanisms would improve state compliance.
3. **Domestic legal reform:** India would be encouraged to adopt anti-ageism laws, expand social security, and develop geriatric services.
4. **Global cooperation:** A convention would foster international collaboration in research, capacity building, and technology-based elder care.

Given India's rapidly ageing demographic, such a convention would serve as a timely and essential instrument.

Suggestions and Policy Recommendations

1. **Enact a comprehensive Elder Rights Act** recognizing non-discrimination, healthcare rights, social security, long-term care, and protection from abuse.
2. **Strengthen Maintenance Tribunals** through digitization, staffing increases, and time-bound adjudication.
3. **Create a National Elder Abuse Prevention Programme** aligned with WHO guidelines.
4. **Expand social security** through universal minimum pensions and affordable healthcare.
5. **Develop geriatric healthcare infrastructure** in all districts and improve mobile health services.
6. **Promote technology-based solutions** such as helplines, digital monitoring, and smart ageing devices.
7. **Support the formation of a global UN convention**, positioning India as a leader among developing countries.

Conclusion: Older persons represent wisdom, experience, and cultural continuity. Yet, they remain one of the most vulnerable and neglected groups both internationally and in India. While international frameworks such as the Vienna Plan, UN Principles, and MIPAA offer important normative guidance, the absence of a binding global convention continues to limit the effectiveness of elder rights protection. India has made significant progress through its constitutional principles, legislation like the Maintenance and Welfare of Parents and Senior Citizens Act, 2007, and various welfare schemes. However, gaps persist in execution, legal recognition of elder rights, healthcare infrastructure, and social security coverage.

A binding international convention would not only strengthen global accountability but also help India reform and reinforce its domestic structures. As India moves toward becoming an aged nation, the recognition of elder rights is not merely a welfare obligation but a constitutional, moral, and developmental necessity. Ensuring dignity, care, and security for older persons is essential for building a humane, inclusive, and just society.

References: –

1. Census of India. Population Projections for India and States (2011–2036). Office of the Registrar General of India, 2019.
2. Ashwani Kumar v. Union of India, (2018) 13 SCC 98.
3. Dattatraya Moreshwar v. State of Bombay, AIR 1952 SC 181.
4. HelpAge India. State of Elderly in India Report. HelpAge India Publications, 2023.
5. United Nations Population Fund (UNFPA). Caring for Our Elders: Early Responses – India Ageing Report. UNFPA India, 2017.
6. International Labour Organization (ILO). Social Protection for Older Persons: Policy Trends and Statistics. ILO, 2014.
7. Beard, John R., et al., editors. Global Ageing: Perspectives and Policies. Oxford University Press, 2012.
8. Kumar, Sanjay, and Priya Desai. "Ageing in India: A Socio-Legal Perspective." Journal of Social Welfare and Human Rights, vol. 6, no. 1, 2018, pp. 45–60.
9. Banik, Pallavi. "Rights of Older Persons: International Human Rights Framework." Indian Journal of Gerontology, vol. 32, no. 2, 2018, pp. 210–225.
10. Rajput, Meena. "Elder Abuse in India: Legal and Policy Gaps." Law Review of India, vol. 12, no. 4, 2021, pp. 112–130.
11. UN Human Rights Council. Normative Standards and Obligations on the Human Rights of Older Persons. UNHRC, 2012.
12. World Bank. Silver Opportunity: Building Integrated Services for Older Persons in South Asia. World Bank Report, 2022.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Elder Persons' Rights in India: A Socio-Legal Analysis

Mr. Ankit Khare* **Dr. Rajat Kumar Satpathy****

*Research Scholar, Maharaja Chhatrasal Bundelkhand University, Chhatarpur (M.P.) INDIA
** Principal, Pt. Motilal Nehru Law College, Chhatarpur (M.P.) INDIA

Abstract: The rising population of elderly persons in India has brought significant socio-legal challenges, including neglect, abuse, poor health care, economic insecurity, and lack of social protection. Despite constitutional safeguards and statutory mechanisms such as the Maintenance and Welfare of Parents and Senior Citizens Act, 2007, the lived reality of senior citizens often reflects marginalization and vulnerability. This research paper critically examines the evolution, scope, and implementation of elder rights in India, focusing on constitutional mandates, statutory provisions, judicial interpretations, and policy frameworks. The paper also evaluates existing loopholes and suggests reforms to ensure a human-rights–oriented approach to elder care and dignity.

Introduction - India is witnessing a demographic transition marked by a rapid increase in its elderly population. According to the Report of the Technical Group on Population Projections (2020), the number of elderly persons (60+) is expected to reach 194 million by 2031, forming nearly 13% of the population. This demographic shift raises critical concerns regarding social security, healthcare, financial independence, and protection from exploitation.

Elderly persons often confront economic dependency, social isolation, physical and emotional abuse, and inadequate institutional support. Therefore, understanding elder rights within a socio-legal framework becomes crucial for assessing the effectiveness of India's welfare system.

Concept of Elder Rights : The concept of Elder Rights refers to the recognition, protection, and promotion of the inherent rights and entitlements of older persons so that they can live with dignity, autonomy, equality, and security. As societies evolve, the need to protect the older population becomes increasingly significant due to changes in demographic patterns, family structure, social values, and economic systems. Elder rights constitute a crucial part of human rights discourse and are rooted in principles of social justice, welfare, and human dignity.

1. Understanding Elder Rights: Definition and Scope: Although there is no single universal definition, Elder Rights can be broadly understood as:

"A set of legal, social, economic and human rights that protect elderly persons (usually defined as 60 years and above) from neglect, abuse, discrimination and ensure their well-being, participation, and dignity in society."

These rights ensure that ageing individuals enjoy:

Autonomy – freedom to make their own decisions

Independence – ability to pursue activities without unnecessary interference

Care and Support – access to healthcare, social security, and assistance

Participation – opportunity to engage in community life

Dignity – respect for their worth, experience, and contributions

The modern concept of elder rights recognizes not just their vulnerabilities, but also their agency, wisdom, and societal value.

2. Philosophical and Human Rights Basis of Elder Rights : The philosophical foundation of elder rights is deeply rooted in the universal principles of human dignity, equality, and social justice. These rights do not emerge from compassion or charity but from the fundamental recognition that every human being, irrespective of age, is entitled to a life of respect and security. The global human rights framework reinforces this understanding through several landmark international instruments.

The **Universal Declaration of Human Rights (UDHR, 1948)** lays the earliest and broadest foundation by affirming that all individuals are born free and equal in dignity and rights. Its emphasis on personal liberty, social protection, and security becomes particularly relevant for older persons who are more vulnerable to discrimination, neglect, and marginalization.

Further, the **International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights (ICESCR, 1966)** expands this vision by articulating rights to healthcare, social security, and adequate standards of living. These provisions serve as a global commitment to ensuring that elderly individuals have access to essential resources that safeguard their physical and economic well-being.

The international community's concern for ageing populations took a more structured form with the **UN Principles for Older Persons (1991)**. These principles outline five core values—**Independence, Participation, Care, Self-fulfillment, and Dignity**—which collectively define the expectations of a just and inclusive society. They highlight that older persons must be active participants in community life and should not be relegated to passive recipients of care.

A more comprehensive global strategy emerged through the **Madrid International Plan of Action on Ageing (2002)**, which advocates for integrating older persons into developmental processes. It calls for empowering senior citizens, ensuring their social protection, and recognizing their continuing contributions to families and societies.

Together, these instruments crystallize the idea that elder rights are inherent, enforceable, and essential for sustaining a humane social order. They establish that rights of the elderly are right-based entitlements grounded in global human rights philosophy, rather than acts of benevolence.

3. Dimensions of Elder Rights – Descriptive Form: Elder rights encompass a wide spectrum of interrelated dimensions, each reflecting the complex needs and vulnerabilities associated with ageing. Understanding these dimensions is essential for building a comprehensive framework of protection and welfare for older persons.

Economic Rights: Economic rights constitute the backbone of an elderly person's independence and security. These rights include access to pensions, social security, and various maintenance provisions that prevent destitution in old age. Older individuals have the right to obtain maintenance from their children or relatives, ensuring that familial responsibility is legally recognized. Where feasible, they are also entitled to equal opportunities for employment, enabling them to remain economically productive.

Economic rights further safeguard older persons from exploitation, particularly in matters involving property, inheritance, and financial transactions. Protection against fraud, coercion, and undue influence is essential, as the elderly are often targeted for economic abuse. The ability to freely inherit, own, and dispose of property is an important aspect of autonomy that reinforces their financial dignity.

In many societies—especially those with inadequate pension systems—the elderly remain economically vulnerable. Therefore, economic rights play a crucial role in maintaining their independence and standard of living.

Social Rights: Social rights are designed to protect the elderly from isolation, exclusion, and neglect. As individuals age, their social networks may shrink, making them increasingly dependent on family, community, and institutional support. Social rights thus ensure companionship, respect, and opportunities for active participation in society.

These rights include the freedom to live with family members or in alternative care arrangements such as old-age homes, community care facilities, or assisted living centers. They also encompass the right to engage in cultural, civic, and recreational activities, thereby promoting social inclusion and mental well-being.

However, social rights remain threatened by **ageism**, which manifests in discriminatory attitudes, stereotypes, and prejudices against older persons. Age-based discrimination can limit opportunities, erode self-worth, and restrict participation in community life. Ensuring social rights, therefore, requires combating ageism at both cultural and institutional levels.

Health Rights: Health rights are central to the overall well-being of older persons, who often face chronic health conditions, reduced mobility, and heightened healthcare needs. These rights guarantee access to affordable, quality, and age-appropriate healthcare services.

Older persons are entitled to specialized **geriatric care**, preventive healthcare, rehabilitative services, palliative care, and long-term institutional support when required. Mental health services are equally important, as many elderly individuals experience loneliness, depression, or age-related cognitive issues.

Health insurance, medical support schemes, and accessible healthcare infrastructure play vital roles in ensuring that financial limitations do not hinder elderly persons from receiving proper treatment. Protecting health rights ensures that ageing individuals can live healthier, longer, and more dignified lives.

Legal Rights: Legal rights act as a protective shield for senior citizens against abuse, exploitation, and injustice. These rights provide mechanisms for legal support, representation, and swift redressal.

Elderly individuals have the right to legal aid and access to judicial remedies in cases involving property disputes, abuse, neglect, or financial exploitation. Laws such as the **Maintenance and Welfare of Parents and Senior Citizens Act, 2007 (MWPSC Act)** empower them to seek maintenance from negligent children or relatives.

In instances of harassment or violence, older persons have the right to police protection and assistance. The establishment of special tribunals ensures speedy and accessible justice, recognizing that lengthy legal battles can be particularly burdensome for senior citizens.

Legal rights reinforce other socio-economic entitlements by providing enforceable safeguards and holding duty-bearers accountable.

Courts across the world have increasingly relied on human rights principles to interpret and expand elder rights. In India, the Supreme Court's judgment in **Ashwani Kumar v. Union of India (2018)** reaffirmed that the state carries a constitutional obligation to secure the dignity, healthcare, and welfare of senior citizens. This judicial interpretation strengthens the legal framework supporting elder rights.

Constitutional Protection of Elder Rights in India: Although the Constitution of India does not explicitly refer

to "elderly persons," its various provisions collectively safeguard their dignity, welfare, and protection. Constitutional guarantees ensure that the rights of senior citizens are respected within the broader framework of human rights and social justice.

Fundamental Rights: Several Fundamental Rights extend vital protections to the elderly:

Article 14 guarantees equality before the law and equal protection of the laws, ensuring that senior citizens are not subjected to discriminatory treatment.

Article 21, which protects the right to life and personal liberty, has been expansively interpreted to encompass the right to live with dignity—an aspect that is crucial for elderly persons facing neglect or indignity.

Article 15(3) empowers the State to frame special provisions for vulnerable groups, a category that includes elder persons due to their physical, social, and economic vulnerabilities.

The Supreme Court, in Francis Coralie Mullin v. Administrator, Union Territory of Delhi (AIR 1981 SC 746), affirmed that the right to life under Article 21 includes the right to live with human dignity, thereby extending constitutional protection to aged persons as well.

Directive Principles of State Policy (DPSP)

The DPSPs provide strong normative guidance for elder welfare:

Article 41 obligates the State to provide public assistance in cases of old age, ensuring social security for the elderly.

Article 46 directs the State to protect the interests of weaker sections, including senior citizens, who often face social and economic vulnerabilities.

These provisions collectively lay the foundation for the development of welfare programs and policies for elder citizens.

Statutory Framework for Elder Rights: The Maintenance and Welfare of Parents and Senior Citizens Act, 2007 (MWPSC Act)

The MWPSC Act serves as the primary legislative framework safeguarding elder rights in India. It incorporates a comprehensive set of provisions aimed at ensuring maintenance, dignity, and protection for senior citizens.

Right to Maintenance: The Act imposes a legal duty on children and heirs to provide maintenance to parents and senior citizens. Maintenance Tribunals are empowered to order a monthly allowance up to ₹ 10,000 (with states permitted to increase this limit), ensuring financial security. The Act adopts a summary procedure for speedy resolution, minimizing procedural delays.

Abandonment and Penalties: Abandoning senior citizens is criminalized, reflecting the seriousness of elder neglect. Non-compliance with maintenance orders can result in imprisonment of up to three months, thereby promoting accountability among family members.

Protection of Life and Property: The Act empowers Tribunals to protect senior citizens from exploitation by enabling eviction of abusive relatives from their properties. Additionally, transfers of property obtained through coercion, fraud, or undue influence can be declared void.

Establishment of Old-Age Homes: The State is mandated to establish old-age homes equipped with basic facilities, especially for indigent senior citizens who lack family support.

National and State Councils: Advisory councils at national and state levels guide policy-making, review implementation, and strengthen the elder-care ecosystem.

Personal Laws and Inheritance Rights: Personal laws also contribute to elder welfare:Hindu Adoption and Maintenance Act, 1956 obligates children to maintain their parents. Muslim law bases maintenance on the financial capacity of the children and the needs of the parents. Christian and Parsi legal traditions similarly recognize maintenance obligations. These provisions ensure a religiously pluralistic framework for elder support.

Other Relevant Legislation: A number of additional laws indirectly protect elder rights:

Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005, safeguarding elderly women from domestic abuse. Rights of Persons with Disabilities Act, 2016, covering elderly persons with disabilities. Social security schemes like the Indira Gandhi National Old Age Pension Scheme extend financial assistance to older persons.

Judicial Approach to Elder Rights: Indian judiciary has adopted a proactive and compassionate stance toward elder welfare, interpreting laws liberally to uphold their dignity.

Notable Judgments

Dattatrey Shivaji Mane v. Lilabai Shivaji Mane (2018)- The Bombay High Court recognized the right of parents to evict abusive children to ensure a dignified living environment.

Sunny Paul v. State of NCT of Delhi (2017)- Reinforced senior citizens' right to a peaceful and secure life by protecting their residential rights.

S. Vanitha v. Deputy Commissioner, Bengaluru (2020)- The Supreme Court balanced rights under the MWPSC Act the Domestic Violence Act, emphasizing elder dignity while protecting daughters-in-law from arbitrary eviction.

Ashwani Kumar v. Union of India (2018)- Directed the government to expedite measures such as healthcare accessibility, pension reforms, and establishment of old-age homes and day-care centers.

Judicial interventions have thus served as powerful drivers for policy reforms and legislative strengthening.

Government Policies and Welfare Schemes: India has instituted several schemes aimed at enhancing elder welfare, such as:

(i) Indira Gandhi National Old Age Pension Scheme (IGNOAPS) for financial support.

(ii) Rashtriya Vayoshri Yojana, providing assistive devices to elderly persons.

(iii) National Programme for Health Care of Elderly (NPHCE), offering specialized healthcare services.

(iv) Vayoshreshtha Samman, recognizing exceptional contributions to elder care.
(v) Integrated Programme for Older Persons (IPOP), funding NGOs involved in elder welfare.
Despite these programs, gaps persist in coverage, infrastructure, awareness, and implementation.

Challenges Faced by Elder Persons in India: Economic Challenges- Many elders lack stable income sources, face inadequate pension coverage, and remain financially dependent on their children.
Social Challenges- The shift to nuclear families has increased isolation, emotional neglect, and societal ageism.
Health Challenges-Chronic health issues, inadequate geriatric care facilities, and rural–urban disparities in healthcare access significantly affect elder well-being.
Legal and Administrative Challenges- Low awareness of legal rights, procedural delays, inadequate tribunals, limited legal aid, and poor enforcement continue to hinder effective elder protection.

Critical Analysis of Existing Legal Framework: While India possesses a broad array of laws safeguarding elder rights, significant gaps remain. The MWPSC Act is primarily remedial rather than preventive in nature. Maintenance amounts prescribed under the Act often fail to meet contemporary financial needs. Implementation varies significantly across states, revealing structural inconsistencies. Moreover, there is no dedicated law addressing elder abuse in a comprehensive manner. Administrative inefficiencies, lack of trained officials absence of a unified national database further limit the effectiveness of existing frameworks. Thus, despite robust legal mechanisms, practical enforcement remains weak and inconsistent.

Recommendations and Reforms

Legislative Reforms:

(i) Increase maintenance limits beyond the current ₹ 10,000 threshold.
(ii) Enact a dedicated law for elder abuse prevention.
(iii) Introduce mandatory reporting mechanisms for cases of neglect or abuse.
(iv) Broaden the definition of "family" to include non-biological caregivers.

Institutional Reforms:

(i) Strengthen Maintenance Tribunals with better infrastructure and trained personnel.
(ii) Establish geriatric wards in district hospitals.
(iii) Develop community-based care systems and digital monitoring platforms for welfare schemes.

Social & Policy Reforms:

(i) Conduct nationwide awareness campaigns on elder rights.
(ii) Provide specialized training for police, healthcare workers, and social caretakers.
(iii) Offer tax incentives to families supporting elderly parents.
(iv) Promote intergenerational bonding initiatives and volunteer programs.

Conclusion: Elder persons constitute a valuable reservoir of experience, wisdom, and cultural heritage. Yet, rapid modernization, economic stress, and shifting family structures have exposed them to unprecedented vulnerabilities. India's constitutional, statutory, and policy framework provides significant protections, but gaps in implementation undermine the dignity and security of senior citizens.
A holistic approach—combining legal reforms, effective enforcement, community support, and ethical responsibility—is essential to uphold elder rights. Ensuring that the elderly live with dignity and autonomy is not only a legal obligation but also a moral imperative in a civilized society.

References :-

1. Government of India. Maintenance and Welfare of Parents and Senior Citizens Act, 2007.
2. Supreme Court of India. Ashwani Kumar v. Union of India, (2018).
3. United Nations. Madrid International Plan of Action on Ageing, 2002.
4. Ministry of Social Justice and Empowerment, Government of India. Annual Reports.
5. Rajan, S. Irudaya. India's Elderly: Burden or Challenge? Sage Publications.
6. HelpAge India. Elder Abuse in India Reports (various years).
7. Kumar, Varun. "Legal Protection of Senior Citizens in India," Journal of Social Welfare Law.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

चित्रा मुद्गल के उपन्यासों में राजनीति और स्त्री का अंर्तसम्बन्ध

डॉ. आशा अग्रवाल* बन्दना कुमारी**

* प्राध्यापक (हिन्दी) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

** शोधार्थी (हिन्दी) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रस्तावना – चित्रा जी एक संवेदनशील एवं युग-द्रष्टा साहित्यकार है। उनकी रचनाओं में सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। चित्रा जी ने अपने उपन्यासों में स्त्री जीवन के विविध पक्षों का चित्रण किया है। उन्होंने स्त्री पर राजनीति के प्रभाव के साथ-साथ राजनीति में स्त्रियों के उपयोग को अपने उपन्यासों में दर्शाया है। हमारे देश की स्वतंत्रता के बाद स्त्रियों की राजनीतिक स्थिति में अच्छे बदलाव आए हैं। कई प्रकार के अधिनियम बनाए गए हैं, जिससे उनकी स्थिति बेहतर हो सके। हमारे देश में अनेक स्त्रियों ने राजनीति में अपनी पहचान बनाई है। चित्रा जी ने अपने उपन्यासों में ऐसे स्त्री पात्रों की रचना की है, जो बदलाव लाने की ताकत बनकर राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके साथ उन्होंने कुछ ऐसी स्त्री-पात्रों की भी रचना की है, जिनका उपयोग नेता अपने राजनीतिक दल के लिए करते हैं। इस प्रकरण में उनका शोषण भी होता है।

'आवां' उपन्यास में 'श्रमजीवा' नामक संगठन में निर्धन एवं बेरोजगार महिलाओं को रोजगार दिया जाता है। वहाँ मजदूर महिलाएँ पापड़ बेलने का काम करती हैं। इस संस्था की संचालिका शाहबेन है जिन्होंने महात्मा गाँधी के आदेशानुसार श्रमजीवा संस्था का संचालन शुरू किया। शाहबेन ऊपर से सख्त परन्तु अंदर से नर्म दिल स्त्री है। श्रमजीवा में काम करने वालों के सुख-दु:ख को समझाती हैं। वे बुरे वक्त में उनकी सहायता भी करती हैं। शाहबेन अगर चाहती तो अपने स्वार्थ को प्राथमिकता देकर राजनीति में अपनी पहचान बना सकती थी। परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। वे स्त्रियों के प्रति करूणा एवं सहानुभूति रखती है।

इसके विपरीत इस उपन्यास में एक 'जागो री' नामक संस्था है। यह संस्था 'कामगर अधाड़ी' का ही एक हिस्सा है। 'जागो री' की संचालिका विमला बेन है। यह संस्था देह-व्यापार करने वाली स्त्रियों के उत्थान के लिए काम करती है। वैश्याओं के देह-व्यापार के धंधे से मुक्त कराना इस संस्था का उद्देश्य है। इस संस्था की तरफ से वैश्याओं को जय हिंद मिल में नौकरी दिलवाई जाती है। परन्तु वहाँ के मजदूर उन्हें सिर्फ एक देह के तौर पर देखते हैं। उन पर कुदृष्टि डालते हैं। इस कारण वे नौकरी छोड़ देती है। अनीसा भी एक वश्या है, जिसके साथ उसका ग्राहक किरपू दुसाध बलात्कार करता है। जिससे उसके गर्भ में पल रहे सात महीने के बच्चे के साथ अनीसा की भी मौत हो जाती है। अनीसा के साथ हुए इस अमानवीय कृत्य के कारण 'जागो री' संस्था की सभी वैश्या सदस्याएँ धंधा बंद कर धरने पर बैठ जाती हैं, जिसमें विमला बेन उनका साथ देती है। विमला बेन विधानसभा में इस प्रश्न को उठा कर हंगामा खड़ा कर देती है। परन्तु विमला बेन यह अपनी राजनीति चमकाने, चुनाव जीतने और वोट बटोरने के लिए करती हैं। 'किरपू दुसाध' की पत्नी का कहना है 'धरने पर बैठी हरामजादी रंडिया जिनके हकसाए हुसक रही, ऐसी बैडम-बैली नहीं मैं कि उनकी पोल-पट्टी न सूंघ पाऊं, पवार बाबू ! बुढ़िया विमला बेन को तो अपने वोट बटोरने से मतलब – डाकू – हत्यारों से मिले या रंडी-भड़वों से। उनको क्या फरक पड़ता है।'[1]

चित्रा जी ने 'आवां' उपन्यास की भूमिका में अपने छात्र जीवन की दिशा बदलने वाले श्रमिक संगठनों की आपसी प्रतिस्पर्धा अंतर्विरोध तथा अपराधी गिरोह की ठेकेदारी का वर्णन किया है। 'जागरण' संस्था की संचालिका मीरा ताई की हत्या का वर्णन करते हुए वे लिखती हैं 'एक दोपहर भाडुप स्टेशन रोड के भरे बाजार के बीच चार गुंडों ने मिलकर मीरा ताई की देह से उनके कपड़े फाड़े, उन्हें बेइज्जत ही नहीं किया, पीठ पर छुरा भोंक उन्हें अपनी अवमामना की पीड़ा से भी सदैव सदैव के लिए मुक्त कर दिया – हफ्ते-भर तक मैं बिस्तर से नहीं उठ पाई। बस एक ही द्वन्द्व रह-रह कर मेरी कनपटियों में सूजे की नोक-सा उतरने लगता। उन्हें मीरा ताई को मारना था मार देते। भरी सड़क पर उनके कपड़े तार-तारकर उनके स्त्रीत्व को अपमानित करने की क्या जरूरत थी।'[2]

यहाँ राजनीति से जुड़ी स्त्री की स्थिति एवं स्त्री को सिर्फ एक देह के तौर पर देखने वाली समाज की रूढ़ एवं बीमार मानसिकता को दर्शाया गया है।

इसी उपन्यास में 'कामगार अधाड़ी' संस्था के नेता अन्ना साहब अपने मित्र देवीशंकर पांडे के लकवाग्रस्त होने पर उनकी बेटी नमिता को संस्था में काम पर लगा देते हैं। अन्ना साहब को गाँधीवादी सोच का नेता माना जाता है। परन्तु अंदर से वे एक कुत्सित व्यक्ति है, जो अपने मित्र की बेटी नमिता के साथ यौनाचार करते हैं। नमिता उनके इस आचरण से स्तब्ध रह जाती है। वह पसीने-पसीने होने लगती है तो अन्ना साहब कहते हैं 'कैसी बेवकूफी कर रही हो ? जिस देह से फूले आम्र बौर-सी मोदक महक उठनी चाहिए कि बौरा दे जो सामने वाले को – ठंडा पसीना रिस रहा। तुम बस इतना इतना-भर करो। आओ, मेरी जांघ पर आकर बैठ जाओ।'[3]

यहाँ स्त्रियों के प्रति एक नेता तथा सामाजिक, राजनीतिक कार्यकर्ता की अनैतिक, आपत्तिजनक एवं भोगवादी मानसिकता को दर्शाया गया है।

इसी उपन्यास में एक प्रसंग है जहाँ हिंदू युवती सुनंदा एक मुस्लिम युवक सुहैल से प्रेम करती है। उसके बच्चे की माँ बन जाती है। परन्तु उनका प्रेम राजनीति एवं समाज की भेंट चढ़ जाता है। सुनंदा नमिता से कहती है 'गलत सोच रही, दीदी ! धर्माधों के लिए मात्र मैं एक बहाना-भर हूँ। मैं बहाना न रहूँ तो कल वे कोई और बहाना तलाश लेंगे। गढ़ लेंगे। गढ़कर उनमें तेल के पीपे उलीचेंगे। दीदी, जरूरत है, उनकी कलाइयाँ धर लेने की - मजबूती से ताकि वे हाथ न छुड़ा पाएँ। तीली न सुलगा पाएँ। और यह काम अब कोई नहीं सिर्फ स्त्रियाँ कर सकती हैं।'[4]

बाद में सुनंदा की हत्या कर दी जाती है।

'गिलिगडु' उपन्यास में बाबू जसवंत सिंह की नौकरानी सुनगुनियाँ का उपयोग बसपा नेता राम खिलावन यादव अपनी जातिगत राजनीति के लिये करना चाहते हैं। वे सुनगुनियाँ को ब्राह्मण-ठाकुरों के खिलाफ भड़काकर अपनी राजनीतिक रोटी सेंकने का प्रयास करते हैं। परन्तु सुनगुनियाँ उनसे कहती है 'गाँव में उसको बामन-ठाकुरों ने नहीं सताया। सगे-लोगों ने सताया। सगे-लोगों के लिए भी औरत औरत ही ठहरी।'[5]

सुनगुनियाँ नेताजी से स्पष्ट कहती है 'उन्हें न सुहाए तो न सही। उसे शांति से अपने बच्चे पालने दें। उन्हें पार्टी के दफ्तर में काम करना है न गाँव की सरपंचगिरी बजानी है। उनके घर का चौका-टहल जब तक करवाएंगे - करती रहेगी।'[6]

इस प्रकार, चित्रा जी ने अपने उपन्यासों में राजनीति और स्त्री के परस्पर सम्बन्धों के विभिन्न आयामों पर गहराई से विचार करते हुए, उन्हें विस्तारपूर्वक प्रस्तुत किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आवां, चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या-364
2. आवां, चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या-9
3. आवां, चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या-136
4. आवां, चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या-133
5. गिलिगडु, चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या-83
6. गिलिगडु, चित्रा मुद्गल, पृष्ठ संख्या-83

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल एवं निजी रियल एस्टेट डेवलपर्स आवास एजेंसियों का तुलनात्मक अध्ययन: रायपुर जिले के विशेष संदर्भ में

पूजा मोटवानी* डॉ. शोभा अग्रवाल**

* शोधार्थी (वाणिज्य) अग्रसेन महाविद्यालय, पुरानी बस्ती, रायपुर (छ.ग.) भारत
** शोध निर्देशक (वाणिज्य) अग्रसेन महाविद्यालय, पुरानी बस्ती, रायपुर (छ.ग.) भारत

शोध सारांश – यह शोध-पत्र छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल एवं निजी रियल एस्टेट डेवलपर्स के बीच तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन का उद्देश्य कीमत, गुणवत्ता, समय-सीमाएँ, पारदर्शिता, लक्षित आबादी तथा सामाजिक-आर्थिक प्रभाव जैसे मानदंडों पर दोनों प्रदाताओं की तुलना करना है। प्राथमिक आँकड़ो के संकलन हेतु रायपुर जिले के 120 हितग्राहियों से जानकारी एकत्रित की गई है। द्वितीयक समंक हेतु शोध में नीतिगत दस्तावेजों, पुस्तके, शोध पत्र, आधिकारिक प्रकाशनों तथा क्षेत्रीय निजी डेवलपर परियोजनाओं से सन्दर्भ लिए गए हैं। अध्ययन यह संकेत देता है कि मण्डल सामाजिक उद्देश्यों के साथ किफायती आवास उपलब्ध कराने में केन्द्रित है जबकि निजी डेवलपर्स बाजार-आधारित डिजाइन, गुणवत्ता और ब्रांड वैरिएंट उपलब्ध कराते हैं किंतु वास्तव में दोनों के मॉडल में सुधार की गुंजाइश मौजूद है।

शब्द कुंजी – छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल, निजी रियल एस्टेट डेवलपर्स, सस्ते आवास।

प्रस्तावना – उचित आवास उपलब्धता सामाजिक कल्याण एवं संधारणीय विकास का प्रमुख हिस्सा है। भारत के बदलते शहरी माहौल में, हाउसिंग बोर्ड तथा प्राइवेट रियल एस्टेट डेवलपर्स मिलकर आवास आपूर्ति को बनाते हैं। छत्तीसगढ़ हाउसिंग बोर्ड एक मुख्य स्टेट-लेवल पब्लिक एजेंसी के तौर पर, अलग-अलग आय ग्रुप के लिए नियोजित व सस्ते आवास देने का काम करता है। इसके साथ ही, छत्तीसगढ़ (खासकर रायपुर, भिलाई और बिलासपुर के आसपास) में प्राइवेट डेवलपर्स ने पूँजी, डिजाइन नवाचार और बाजार चैनल का इस्तेमाल करके, आय सेगमेंट में सप्लाई बढ़ाई है।इस शोध का उद्देश्य छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल व निजी डेवलपर्स के कार्यान्वयन पद्धतिव नतीजों की कई मामलों में तुलना करना,नीतिगत सुधार तथा कोऑपरेटिव मॉडल के मौकों की पहचान करना है, जो मकानों की उपलब्धता एवं गुणवत्ता को बढ़ा सकते हैं।

चित्र: मण्डल द्वारा निर्मित मकान एवं आवास मेला द्वारा विक्रय हेतु विपणन



(स्त्रोत:cghb.gov.in)

छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल ने अपनी शुरूवात 2004 से सीमित संसाधनों से प्रारंभ की, धीरे-धीरे छत्तीसगढ़ राज्य में 'आवास क्रांति' लाकर, मण्डल एक मील का पत्थर साबित हुआ है। छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल जरूरतमंदो को आवासीय सुविधा उपलब्ध कराकर, उनके सामाजिक, आर्थिक स्तर को ऊंचा करने का सशक्त माध्यम बनकर उभरा है। इसका विश्वास, विशेष तौर पर इको फ्रेण्डली मकान निर्माण द्वारा 'धारणीय आवास' अर्थात् जहाँ लोगों के रहने व उसके बाद उनकी पीढ़ियों के रहने हेतु आवास उपलब्ध कराना है।

शोध साहित्य का अध्ययन

1. **ठाकुर, प्रशांत कुमार (2023)** ने अपने शोध पत्र 'Factors Influencing the Buying Decision of the Consumers of Low-Cost Houses in Mumbai Metropolitan Region'में यह अध्ययन Mumbai Metropolitan Region(एमएमआर) में आवासीय अपार्टमेंट खरीदने के निर्णय को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण तत्वों की पहचान करने के लिए किया गया है। यह अध्ययन डेवलपर्स एवं सरकार को अपने ग्राहकों की जरूरतों को बेहतर ढंग से समझने व उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप आवास कार्यक्रम तैयार करने में मदद करेगा।
2. **लांबा, प्रीती (2024)** International Journal of Advanced Research in Management and Social Sciences , ISSN: 2278-6236, ने अपने शोध पत्र 'An analysis of beneficiaries satisfaction level with special reference to Pradhan MantriAwas Yojana (PMAY): A case study of Haryana State' अध्ययन में पी.एम.ए.वाई आवास योजना के साथ लाभार्थियों की संतुष्टि का निर्धारण करने में आयु, शिक्षा एवं व्यवसाय के बीच संबंधों को समझने के महत्व पर प्रकाश डाला गया है।
3. **सुल्ताना, सी. खमार, (2011)** ने अपने शोध अध्ययन *'तमिलनाडु*

गृह निर्माण की आवास सुविधाओं के विश्लेषणात्मक अध्ययन' में यह निष्कर्ष निकाला कि विभिन्न आवासीय योजनाओं के माध्यम से, अधिक मात्रा में पूर्व से ही मकानों को माँग के अनुरूप निर्मित किया जाना केन्द्र, राज्य एवं गृह निर्माण मण्डलों की जिम्मदारी है। आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लिए अधिक मात्रा में मकानों के निर्माण की आवश्यकता की पूर्ति राज्य शासन एवं तमिलनाडु गृह निर्माण मण्डल द्वारा की जानी चाहिए।

4. कुमार, रोहित (2015) ने अपने शोध पत्र 'Chhattisgarh Housing Board as a Provider of Low Income Group Housing in Raipur, 8th International Conference on Recent Advances in Civil Engineering, Architecture and Sustainable Development, 2015' में यह बताया है कि भारत जैसे वृहद देश में आवास जैसी मूलभूत आवश्यकता सरकार जनसामान्य को मुहैया कराए, जिसमें शासन भू-अधिग्रहण, करों में कटौती, सब्सिडी आादि प्रयासों के माध्यम से कम मूल्य में उपलब्ध कराए, साथ ही अध्ययन में प्रभावी योजनाओं द्वारा दूर-दराज के क्षेत्रों में आवास निर्माण के फलस्वरूप संचार एवं यातायात साधनों का भी तीव्र गति से विकास होगा।

5. देवांगन, करूणा, (2016) ने अपने शोध कार्य 'रायपुर संभाग के अंतर्गत छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की कार्यप्रणाली एवं उपलब्धियों का (वर्ष 2002-03 से 2012-13 तक) विश्लेषणात्मक अध्ययन' में उन्होंने दर्शाया है, कि छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल का उद्देश्य तत्कालिक रूप से लाभ कमाना नहीं अपितु आवास निर्माण की आधुनिक धारणा इस बात को स्वीकार करती है, कि आधुनिक आवास व्यवस्था गलियों के यांत्रिक विस्तार के साथ रहने हेतु मकानों के समूह का निर्माण करना है। इसके अतिरिक्त भवन निर्माण में आधुनिक भवन व्यवस्था की न्यूनतम् सुविधाओं को स्वीकार करती है, जिसमें अनुकुल वायु संवहन पर प्रत्येक खिड़की से सुखद, दृश्य पर्याप्तता, एकांतता, सफाई, बच्चों के लिए खेलने एवं बुजुर्गों के मनोरंजन के स्थान आदि का समावेश होता है।

शोध अन्तराल: बैंकिंग एवं अन्य विभिन्न संस्थाओं में पब्लिक एवं प्राईवेट, तथा सरकारी एवं निजी संस्थाओंपर शोध किया जा चुका है, परंतु छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल एवं निजी रियल एस्टेट डेवलपर्स के तुलनात्मक अध्ययन के संबंध में आज दिनांक तक किसी प्रकार का शोध नहीं किया गया है। इससे स्पष्ट है कि इस क्षेत्र में शोध द्वारा न केवल छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल ही नहीं अपितु आवास क्रय हेतु इच्छुक सामान्य जनता भी लाभान्वित होगी।

शोध उद्देश्य:

1. छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा निर्मित मकानों एवं बाजार में उपलब्ध रियल एस्टेट डेवलपर्स द्वारा निर्मित मकानों की निर्माण गुणवत्ता स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाओं एवं प्राइवेट डेवलपर परियोजनाओं के मध्य कीमतका तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा निर्मित मकानों में प्रदान की जाने वाली आवास सुविधाओं एवं बाजार में उपलब्ध निजी रियल एस्टेट डेवलपर्स द्वारा निर्मित मकानों मकानों में प्रदान की जाने वाली आवास सुविधाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाओं एवं प्राइवेट डेवलपर परियोजनाओं के मध्य सुपूर्दगी समयसीमा का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध परिकल्पनाएँ:

H1 छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा निर्मित मकानों एवं बाजार में उपलब्ध रियल एस्टेट डेवलपर्स द्वारा निर्मित मकानों की निर्माण गुणवत्ता स्तर में अंतर विद्यमान है।

H01 छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाओं एवं प्राइवेट डेवलपर परियोजनाओं के मध्य कीमत में कोई अंतर नहीं है।

H2 बाजार में उपलब्ध निजी रियल एस्टेट डेवलपर्स द्वारा निर्मित मकानों में प्रदान की जाने वाली आवास सुविधाएँ, छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा निर्मित मकानों में प्रदान की जाने वाली आवास सुविधाओं से बेहतर होती हैं।

H3 छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाएँ, निजी रियल एस्टेट डेवलपर परियोजनाओं के पूर्व आवास सुपूर्दगी प्रदान करती हैं।

शोध प्रविधि: प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्रश्नावली विधि का प्रयोग किया गया है। समंकों का संकलन प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों द्वारा किया गया है। प्राथमिक समंक संकलन में नमूना चयन हेतु सरल संभाव्य यादृच्छिक प्रणाली का उपयोग किया गया है। प्रश्नावली द्वारा रायपुर जिले के 120 आबंटियों से प्राथमिक समंक संकलन किया गया है एवं द्वितीयक समंक संकलन छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा समय-समय पर प्रकाशित पत्रिकाएँ, भारत तथा छत्तीसगढ़ राज्य स्तर के सरकारी आंकडे, रायपुर अंतर्गत कार्यालय के सरकारी आंकड़े तथा समाचार पत्र-पत्रिका, मार्गदर्शिका, इंटरनेट, वेब-साईट आदि द्वारा एकत्र किये गये हैं। ऑकड़ों की सार्थकता की जॉच हेतु प्रतिशत व काई वर्ग टेस्ट का उपयोग किया गया है।

शोध सीमाएँ:

1. अध्ययन का क्षेत्र छत्तीसगढ़ राज्य के छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल के रायपुर जिले को लिया गया है।
2. रायपुर जिले के 120 मण्डल हितग्राहियों से समंक एकत्रित किये गये हैं।
3. नमूना चयन हेतु सरल संभाव्य यादृच्छिक प्रणाली का उपयोग किया गया है।

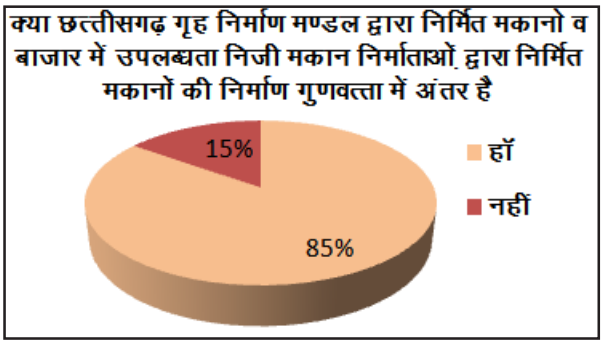
आँकड़ों का विश्लेषण एवंपरिकल्पना सत्यता की जाँच

तालिका क्रमाँक 1

क्या छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा निर्मित मकानो व बाजार में उपलब्धता निजी मकान निर्माताओं द्वारा निर्मित मकानों की निर्माण गुणवत्ता में अंतर है?	आवृत्ति	प्रतिशत	काईवर्गमान	पी-मान
हाँ	102	85.00%	241.363	0.000 (<0.01)
नहीं	18	15.00%		
कुल	**120**	**100.00%**		

(स्त्रोत :- प्राथमिक समंक)

लेखचित्र क्रमाँक 1



विश्लेषण:-उपरोक्त सारणी में हितग्राहियों को प्राप्त मकान की छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा निर्मित मकानो व बाजार में उपलब्धता निजी मकान निर्माताओं द्वारा निर्मित मकानों की निर्माण गुणवत्ता में अंतर है या नहीं का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। सर्वे से प्राप्त कुल 120 आँकड़ों में से 85%हितग्राहियों ने छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा निर्मित मकानो व बाजार में उपलब्धता निजी मकान निर्माताओं द्वारा निर्मित मकानों की निर्माण गुणवत्ता में अंतर है, के पक्ष में अपना मत दिया, जबकि शेष 15%हितग्राहियों ने छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा निर्मित मकानो व बाजार में उपलब्धता निजी मकान निर्माताओं द्वारा निर्मित मकानों की निर्माण गुणवत्ता में अंतर नहीं है, के पक्ष में अपना मत दिया।

उपरोक्त तालिका में आँकड़ों की सार्थकता अंतर को दर्शाने के लिए काई वर्ग परीक्षण का उपयोग किया गया है, जिसमें काई वर्ग का मान 1 स्वातंत्र्य स्तर पर 241.363 प्राप्त हुआ एवं इसका p मान 0-0000 (<0.01) प्राप्त हुआ। उक्त p मान से स्पष्ट है कि आँकड़ों में अत्याधिक सार्थक अंतर पाया गया। अत: हम कह सकते हैं कि में अधिकतम् हितग्राहियों का यह मानना उचित है कि छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा निर्मित मकानो व बाजार में उपलब्धता निजी मकान निर्माताओं द्वारा निर्मित मकानों की निर्माण गुणवत्ता में अंतर है।अत: यह परिकल्पना सत्य सिद्ध होती है। क0 1 छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाओं एवं निजी डेवलपर परियोजनाओं के मध्य कीमत में कोई अंतर नहीं है।

तालिका क्रमाँक 2

छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाओं एवं प्राइवेट डेवलपर परियोजनाओं में किस एजेंसी की कीमत अधिक है?	आवृत्ति	प्रतिशत
छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल	24	20.00%
निजी रियल एस्टेट डेवलपर	96	80.00%
कुल	**120**	**100.00%**

(**स्त्रोत:** प्राथमिक समंक)

विश्लेषण:उपरोक्त सारणी में हितग्राहियों को प्राप्त मकान की छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा निर्मित मकानो व बाजार में उपलब्धता निजी मकान निर्माताओं द्वारा निर्मित मकानों किस एजेंसी की कीमत अधिक है, का अध्ययन किया गया है। सर्वे से प्राप्त कुल 120 आँकड़ों में से 80%हितग्राहियों ने निजी मकान निर्माताओं द्वारा निर्मित मकानों की कीमत को अधिक बताया है जबकि शेष 20%हितग्राहियों ने छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा निर्मित मकानो व की कीमत को अधिक बताया है।उक्त प्राप्त आँकड़ों से स्पष्ट है कि सर्वे से प्राप्त आँकड़ों में अधिकतम् 80% हितग्राहियों का मानना है किनिजी मकान निर्माताओं द्वारा निर्मित मकानों की कीमत अधिक है इससे स्पष्ट होता है कि दोनों एजेंसियों की कीमत में सार्थक अंतर है।अत: यह परिकल्पना असत्य सिद्ध होती है, कि छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाओं एवं निजी डेवलपर परियोजनाओं के मध्य कीमत में कोई अंतर नहीं है।

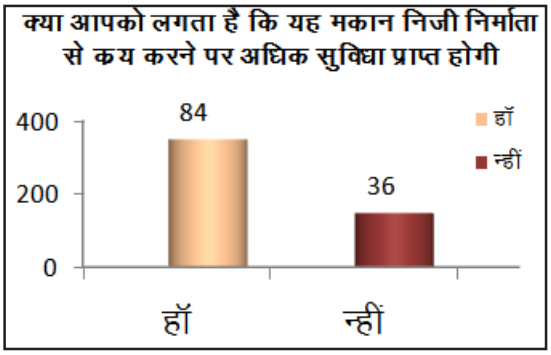
H2 बाजार में उपलब्ध निजी रियल एस्टेट डेवलपर्स द्वारा निर्मित मकानों में प्रदान की जाने वाली आवास सुविधाएँ, छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल द्वारा निर्मित मकानों में प्रदान की जाने वाली आवास सुविधाओं से बेहतर होती हैं।

तालिका क्रमाँक 3: क्या आपको लगता है कि यह मकान निजी निर्माता से क्रय करने पर अधिक सुविधा प्राप्त होगी?

क्या आपको लगता है कि यह मकान निजी निर्माता से क्रय करने पर अधिक सुविधा प्राप्त होगी	आवृत्ति	प्रतिशत	काईवर्गमान	पी-मान
हाँ	84	70.00%	82.266	0.000 (<0.01)
नहीं	36	30.00%		
कुल	**120**	**100.00%**		

(**स्त्रोत:** प्राथमिक समंक)

लेखचित्र क्रमाँक 2



विश्लेषण:उपरोक्त सारणी में हितग्राहियों को प्राप्त मकान के संबंध में मण्डल एवं निजी मकान निर्माताओं से प्राप्त आवासीय सुविधाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। सर्वे से प्राप्त कुल 120 आँकड़ों में से 70%हितग्राहियोंके अनुसार निजी मकान निर्माता बेहतर आवास सुविधा उपलब्ध कराते हैं, जबकि 30%हितग्राहियों के अनुसार मण्डल द्वारा निजी मकान निर्माताओं से बेहतर आवास सुविधा उपलब्ध करायी जाती है।अत: उक्त प्राप्त आँकड़ों से स्पष्ट है कि सर्वे से प्राप्त आँकड़ों में अधिकतम् हितग्राहियों 70.00%हितग्राहियों के अनुसार निजी मकान निर्माता बेहतर आवास सुविधा उपलब्ध कराते हैं।उपरोक्त तालिकामें आँकड़ों की सार्थकता अंतर को दर्शाने के लिए काई वर्ग परीक्षण का उपयोग किया गया है, जिसमें काई वर्ग का मान 1 स्वातंत्र्य स्तर पर 82.266 प्राप्त हुआ एवं इसका p मान 0-0000 (<0.01) प्राप्त हुआ। उक्त p मान से स्पष्ट है कि आँकड़ों में अत्यधिक सार्थक अंतर पाया गया। अत: हम कह सकते हैं कि ज्यादातर हितग्राहियों के अनुसार निजी मकान निर्माता बेहतर आवास सुविधा उपलब्ध कराते हैं।

अत: यह परिकल्पना असत्य सिद्ध होती है।

H3 छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाएँ, निजी रियल एस्टेट डेवलपर परियोजनाओं के पूर्व आवास सुपूर्दगी प्रदान करती हैं।

तालिका क्रमाँक 4

छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाएँ, निजी रियल एस्टेट डेवलपर परियोजनाओं के पूर्व आवास सुपूर्दगी प्रदान करती हैं।	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	108	90.00%
नहीं	12	10.00%
कुल	**120**	**100.00%**

(**स्त्रोत:** प्राथमिक समंक)

विश्लेषण:उपरोक्त सारणी में हितग्राहियों को छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाएँ, निजी रियल एस्टेट डेवलपर परियोजनाओं के पूर्व आवास सुपूर्दगी प्रदान करती हैं या नहीं का अध्ययन किया गया है। सर्वे से प्राप्त कुल 120 आँकड़ों में से 90%हितग्राहियों ने निजी मकान निर्माताओं द्वारा निर्मित मकानों की आवास सुपूर्दगी जल्दी प्रदान करती हैं, बताया है जबकि शेष 10% हितग्राहियों नेछत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाएँ, निजी रियल एस्टेट डेवलपर परियोजनाओं के पूर्व आवास सुपूर्दगी प्रदान करती हैं, बताया है।उक्त प्राप्त आँकड़ों से स्पष्ट है कि सर्वे से प्राप्त आँकड़ों में अधिकतम् 90% हितग्राहियों का मानना है कि निजी मकान निर्माताओं द्वारा निर्मित मकानों की सुपूर्दगी छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाओं द्वारा निर्मित आवासों के पूर्व की जाती है। अत: इससे स्पष्ट होता है कि दोनों एजेंसियों की कीमत में सार्थक अंतर है। अत: यह परिकल्पना असत्य सिद्ध होती है, कि छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की परियोजनाएँ, निजी रियल एस्टेट डेवलपर परियोजनाओं के पूर्व आवास सुपूर्दगी प्रदान करती हैं।

निष्कर्ष – मण्डल की योजनाएँ हितग्राहियों के लिए अधिक लक्षित एवं सब्सिडी-समर्थित होती हैं, इसलिए निम्न-आय वर्ग को लाभ मिलने की संभावना अधिक रहती हैवहीनिजी डेवलपर्स प्राय: आधुनिक सुविधाएँ और बेहतर विपणन सुविधाएँ देते हैंइसलिए मध्यम-उच्च आय वर्ग में उनकी लोकप्रियता अधिक है।समय पर सुपूर्दगी निजी रियल एस्टेट डेवलपर फर्में अनुबंधित पेनाल्टी व बाजार-प्रतिस्पर्धा के कारण समय-सीमा का पालन बेहतर करती हैं, परन्तु बड़े सार्वजनिक प्रोजेक्ट्स में प्रशासनिक प्रक्रियाओं की वजह से विलंब होता है।हाल के वर्षों में मण्डल द्वारा डिजिटल ऑफर, ऑनलाइन प्रक्रियाएँ, बढ़ाई गई हैं, परन्तु पारदर्शिता एवं सार्वजनिक सूचना में और सुधार की आवश्यकता है।

सुझाव – छत्तीसगढ़ में बेहतर आवास हेतु मण्डल एवं प्राइवेट रियल एस्टेट डेवलपर्स दोनों जरूरी हैं। रणनीतिक सहयोग, मजबूत नियमन, और बेहतर पारदर्शिता आवास संबंधी मौजूदा कमियों को दूर कर सकती है, जिससे छत्तीसगढ़ की बढ़ती शहरी आबादी के लिए तेज, उच्च-गुणवत्ता वाली और ज्यादा समावेशी हाउसिंग डिलीवरी होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. Connecting Generations - Coffee Table Book of Chhattisgarh Housing Board, 2014.
2. देवांगन, करूणा (2016) रायपुर संभाग के अंतर्गत छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल की कार्यप्रणाली एवं उपलब्धियों का विश्लेषण (वर्ष 2002-03 से 2012-23 तक)
3. Kumar, Rohit (2015) Chhattisgarh Housing Board as a Provider of Low Income Group Housing in Raipur, 8th International Conference on RecentAdvances in Civil Engineering,Architecture and Sustainable Development, 2015
4. संगवारी पत्रिका, छत्तीसगढ़ गृह निर्माण मण्डल हितग्राही मार्गदर्शिका - प्रश्नोत्तरी, 2014
5. Sultana, C. Khamar(2011)A Study on the performance of the Tamil Nadu Housing Board in Providing House Facilities in Tamil Nadu.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

गृह प्रबंधन शिक्षा से महिलाओं की निर्णय-क्षमता में वृद्धि का अध्ययन (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

डॉ. ज्योति सिंह*

* अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं को पारिवारिक संसाधनों- जैसे समय, धन, ऊर्जा एवं मानव संसाधन के प्रभावी नियोजन, संगठन और नियंत्रण के लिए प्रशिक्षित करती है। भारतीय समाज में महिलाओं की निर्णय-क्षमता लंबे समय तक सामाजिक-सांस्कृतिक सीमाओं से प्रभावित रही है। किंतु गृह प्रबंधन शिक्षा के माध्यम से महिलाएँ पारिवारिक एवं आर्थिक निर्णय-निर्माण में अधिक सक्रिय, आत्मनिर्भर एवं विवेकशील बन रही हैं। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य यह अध्ययन करना है कि गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं की निर्णय-क्षमता को किस प्रकार प्रभावित करती है। यह अध्ययन मध्यप्रदेश के सतना जिले की ग्रामीण एवं शहरी महिलाओं पर आधारित है। सर्वेक्षण विधि द्वारा संकलित आँकड़ों का विश्लेषण तालिकाओं एवं प्रतिशत विधि के माध्यम से किया गया। अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि गृह प्रबंधन शिक्षा प्राप्त महिलाओं में निर्णय-क्षमता, आत्मविश्वास एवं संसाधन-प्रबंधन दक्षता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है।

शब्द कुंजी – गृह प्रबंधन शिक्षा, निर्णय-क्षमता, महिलाएँ, संसाधन प्रबंधन, समाजशास्त्रीय अध्ययन।

प्रस्तावना – निर्णय-निर्माण किसी भी व्यक्ति के सामाजिक, आर्थिक एवं पारिवारिक जीवन का महत्वपूर्ण पक्ष है। परिवार की स्थिरता, प्रगति एवं संतुलन इस बात पर निर्भर करता है कि संसाधनों से संबंधित निर्णय कितने विवेकपूर्ण ढंग से लिए जाते हैं। भारतीय समाज में परंपरागत रूप से निर्णय-निर्माण की शक्ति पुरुषों के हाथों में केंद्रित रही है, जबकि महिलाएँ निर्णयों के क्रियान्वयन तक सीमित रखी गईं। परंतु बदलते सामाजिक-आर्थिक परिवेश में महिलाओं की भूमिका में परिवर्तन आया है और इस परिवर्तन में गृह प्रबंधन शिक्षा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं को समय प्रबंधन, बजट निर्माण, संसाधन संरक्षण, उपभोक्ता शिक्षा एवं समस्या-समाधान कौशल सिखाती है। यह शिक्षा महिलाओं को केवल गृहिणी नहीं, बल्कि कुशल प्रबंधक के रूप में विकसित करती है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं की सामाजिक स्थिति, आत्मनिर्भरता एवं निर्णय-क्षमता को सशक्त बनाती है।

आधुनिक युग में शिक्षा को सशक्तिकरण का प्रमुख साधन माना जाता है। गृह प्रबंधन शिक्षा के माध्यम से महिलाएँ पारिवारिक निर्णय-निर्माण में सक्रिय सहभागिता करने लगती हैं चाहे वह बच्चों की शिक्षा हो, पारिवारिक बजट हो, स्वास्थ्य संबंधी निर्णय हों या बचत एवं निवेश से जुड़े निर्णय हों। यही कारण है कि गृह प्रबंधन शिक्षा और महिलाओं की निर्णय-क्षमता के बीच संबंध का अध्ययन अत्यंत प्रासंगिक हो जाता है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं औचित्य – महिलाओं की निर्णय-क्षमता का सीधा संबंध परिवार की गुणवत्ता-पूर्ण जीवन शैली से जुड़ा हुआ है। जब महिलाएँ शिक्षित एवं निर्णय-सक्षम होती हैं, तो परिवार के संसाधनों का बेहतर उपयोग होता है। इसके बावजूद भारतीय समाज में महिलाओं की निर्णय-क्षमता को अब भी सीमित रूप में देखा जाता है। इस अध्ययन की आवश्यकता निम्न कारणों से है-

1. गृह प्रबंधन शिक्षा के प्रभाव का वैज्ञानिक मूल्यांकन करना।
2. महिलाओं की निर्णय-क्षमता में शिक्षा की भूमिका को स्पष्ट करना।
3. ग्रामीण एवं शहरी महिलाओं के बीच निर्णय-क्षमता में अंतर का अध्ययन करना।
4. महिला सशक्तिकरण के संदर्भ में गृह प्रबंधन शिक्षा की उपयोगिता को रेखांकित करना।
5. नीति-निर्माण एवं पाठ्यक्रम विकास हेतु सुझाव प्रदान करना।

यह अध्ययन गृह विज्ञान एवं समाजशास्त्र दोनों विषयों के लिए अकादमिक रूप से उपयोगी है।

पूर्व शोधों से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा महिलाओं की निर्णय-क्षमता को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक है। शर्मा (2017) ने अपने अध्ययन में पाया कि गृह प्रबंधन शिक्षा प्राप्त महिलाएँ पारिवारिक बजट एवं संसाधन नियोजन में अधिक दक्ष होती हैं। वर्मा (2018) के अनुसार गृह विज्ञान शिक्षा महिलाओं में आत्मविश्वास एवं समस्या-समाधान क्षमता को विकसित करती है। कुमार एवं सिंह (2019) ने ग्रामीण महिलाओं पर किए गए अध्ययन में निष्कर्ष निकाला कि शिक्षित महिलाएँ पारिवारिक निर्णयों में अधिक सक्रिय भूमिका निभाती हैं। पटेल (2020) ने यह स्पष्ट किया कि गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं को आर्थिक निर्णय-निर्माण के लिए सक्षम बनाती है। देवी (2021) के अध्ययन में यह सामने आया कि गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं की सामाजिक स्थिति एवं निर्णय-स्वतंत्रता में वृद्धि करती है। पूर्व अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि गृह प्रबंधन शिक्षा और निर्णय-क्षमता के बीच सकारात्मक संबंध है, किंतु क्षेत्रीय एवं तुलनात्मक अध्ययन सीमित हैं। प्रस्तुत शोध इसी शोध-रिक्तता को भरने का प्रयास करता है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. गृह प्रबंधन शिक्षा का महिलाओं की निर्णय-क्षमता पर प्रभाव का अध्ययन करना।
2. शिक्षित एवं अशिक्षित महिलाओं की निर्णय-क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. ग्रामीण एवं शहरी महिलाओं में निर्णय-क्षमता के स्तर का विश्लेषण करना।
4. गृह प्रबंधन शिक्षा और आत्मनिर्भरता के बीच संबंध का अध्ययन करना।
5. नीति-निर्माण हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध परिकल्पनाएँ :

1. गृह प्रबंधन शिक्षा से महिलाओं की निर्णय-क्षमता में वृद्धि होती है।
2. गृह प्रबंधन शिक्षा प्राप्त महिलाएँ पारिवारिक निर्णय-निर्माण में अधिक सहभागी होती हैं।
3. शहरी महिलाएँ ग्रामीण महिलाओं की अपेक्षा अधिक निर्णय-सक्षम होती हैं।
4. गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं के आत्मविश्वास को बढ़ाती है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध में गृह प्रबंधन शिक्षा से महिलाओं की निर्णय-क्षमता में होने वाली वृद्धि का अध्ययन वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित ढंग से किया गया है। शोध की विश्वसनीयता एवं वैधता सुनिश्चित करने हेतु उपयुक्त शोध प्रविधि का चयन किया गया है।

शोध का प्रकार – यह शोध वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। वर्णनात्मक इसलिए कि इसमें महिलाओं की निर्णय-क्षमता की वर्तमान स्थिति का विवरण प्रस्तुत किया गया है तथा विश्लेषणात्मक इसलिए कि गृह प्रबंधन शिक्षा के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

शोध विधि – अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। इस विधि के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप से महिलाओं से संबंधित सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक जानकारियाँ प्राप्त की गईं।

अध्ययन की इकाई – इस शोध की इकाई विवाहित महिलाएँ हैं, जो परिवार में निर्णय-निर्माण की प्रक्रिया से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई हैं।

नमूना चयन विधि – नमूना चयन हेतु उद्देश्यपूर्ण नमूना विधि अपनाई गई। इस विधि के अंतर्गत उन महिलाओं का चयन किया गया जिनमें-

- कुछ महिलाएँ गृह प्रबंधन शिक्षा प्राप्त थीं।
- कुछ महिलाएँ गृह प्रबंधन शिक्षा से वंचित थीं।

नमूना आकार – कुल 120 महिलाओं का चयन किया गया-

- 60 गृह प्रबंधन शिक्षा प्राप्त महिलाएँ
- 60 गृह प्रबंधन शिक्षा अप्राप्त महिलाएँ

इनमें ग्रामीण एवं शहरी दोनों क्षेत्रों की महिलाएँ सम्मिलित हैं।

डेटा संग्रह के उपकरण – डेटा संग्रह के लिए निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग किया गया-

1. संरचित प्रश्नावली
2. व्यक्तिगत साक्षात्कार

प्रश्नावली में निर्णय-निर्माण, बजट नियंत्रण, समय प्रबंधन, स्वास्थ्य एवं शिक्षा संबंधी निर्णयों से जुड़े प्रश्न सम्मिलित थे।

डेटा विश्लेषण की विधि – संग्रहित आँकड़ों का विश्लेषण प्रतिशत विधि, तालिकीय प्रस्तुतीकरण तथा तुलनात्मक विश्लेषण के माध्यम से किया गया।

अध्ययन क्षेत्र – सतना जिला

प्रस्तुत शोध के लिए मध्यप्रदेश के सतना जिले का चयन किया गया। सतना जिला सामाजिक-आर्थिक दृष्टि से विविधताओं से परिपूर्ण है। यहाँ ग्रामीण एवं शहरी दोनों प्रकार की जनसंख्या निवास करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में पारंपरिक सोच एवं संयुक्त परिवार प्रणाली अधिक प्रचलित है, जहाँ महिलाओं की निर्णय-क्षमता सीमित पाई जाती है। इसके विपरीत शहरी क्षेत्रों में शिक्षा, रोजगार एवं आधुनिक सोच के कारण महिलाओं की निर्णय-क्षमता अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है। यही विविधता इस जिले को अध्ययन हेतु उपयुक्त बनाती है।

उत्तारदाताओं की सामाजिक-आर्थिक प्रोफाइल

तालिका – 1: आयु वर्ग के अनुसार वितरण

क्रं.	आयु वर्ग (वर्ष)	संख्या	प्रतिशत
1	20-30	28	23.3 %
2	31-40	44	36.7 %
3	31-40	44	36.7 %
4	41-50	32	26.7 %
5	51 एवं अधिक	16	13.3 %
	कुल	120	100 %

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से ज्ञात होता है कि अधिकांश महिलाएँ 31-40 वर्ष आयु वर्ग की हैं, जो पारिवारिक निर्णय-निर्माण में सबसे सक्रिय मानी जाती हैं।

तालिका – 2: शैक्षिक स्थिति

क्रं.	शिक्षा स्तर	संख्या	प्रतिशत
1	निरक्षर	20	16.7 %
2	प्राथमिक	30	25 %
3	माध्यमिक	38	31.7 %
4	उच्च शिक्षा	32	26.6 %

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से यह परिलक्षित होता है कि लगभग 58 % महिलाएँ माध्यमिक या उससे अधिक शिक्षा प्राप्त हैं, जिससे निर्णय-क्षमता में वृद्धि की संभावना अधिक होती है।

तालिका – 3: गृह प्रबंधन शिक्षा प्राप्त स्थिति

क्रं.	स्थिति	संख्या	प्रतिशत
1	प्राप्त	60	50 %
2	अप्राप्त	60	50 %

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से पता चलता है कि अध्ययन को तुलनात्मक रूप से संतुलित रखने हेतु दोनों वर्गों को समान रूप से शामिल किया गया।

निर्णय-क्षमता के प्रमुख क्षेत्र – निर्णय-क्षमता का मूल्यांकन निम्न क्षेत्रों में किया गया-

- पारिवारिक बजट
- बच्चों की शिक्षा
- स्वास्थ्य संबंधी निर्णय
- घरेलू संसाधनों का उपयोग
- बचत एवं निवेश

गृह प्रबंधन शिक्षा एवं महिलाओं की निर्णय-क्षमतारू विश्लेषणात्मक अध्ययन – गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं को केवल घरेलू कार्यों का ज्ञान नहीं देती, बल्कि उन्हें तार्किक सोच, समस्या-समाधान, संसाधन नियोजन

एवं निर्णय लेने की क्षमता भी प्रदान करती है। निर्णय-क्षमता वह मानसिक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्ति उपलब्ध विकल्पों में से सर्वोत्तम विकल्प का चयन करता है। प्रस्तुत अध्ययन में यह जानने का प्रयास किया गया है कि गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं की निर्णय-क्षमता को किस सीमा तक प्रभावित करती है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से निर्णय-निर्माण शक्ति सामाजिक संरचना, शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता एवं पारिवारिक वातावरण से प्रभावित होती है। गृह प्रबंधन शिक्षा इन सभी आयामों को सशक्त बनाती है, जिससे महिलाओं की भूमिका पारिवारिक निर्णयों में सुदृढ़ होती है।

पारिवारिक बजट से संबंधित निर्णयों में महिलाओं की भूमिका

तालिका – 4: पारिवारिक बजट निर्णय में सहभागिता

क्रं.	गृह प्रबंधन शिक्षा	उच्च सहभागिता	मध्यम सहभागिता	निम्न सहभागिता
1	प्राप्त महिलाएँ	68 %	22 %	10 %
2	अप्राप्त महिलाएँ	32 %	40 %	28 %

तालिका से स्पष्ट है कि गृह प्रबंधन शिक्षा प्राप्त महिलाओं में 68 % उच्च स्तर की निर्णय-क्षमता पाई गई, जबकि शिक्षा अप्राप्त महिलाओं में यह प्रतिशत केवल 32 % है। इससे यह सिद्ध होता है कि गृह प्रबंधन शिक्षा बजट निर्माण एवं व्यय नियंत्रण में महिलाओं को अधिक सक्षम बनाती है।

बच्चों की शिक्षा संबंधी निर्णयों में भूमिका

तालिका – 5: बच्चों की शिक्षा से जुड़े निर्णय

क्रं.	निर्णय स्तर	शिक्षा प्राप्त	शिक्षा अप्राप्त
1	उच्च	72 %	35 %
2	मध्यम	20 %	40 %
3	निम्न	8 %	25 %

उपरोक्त तालिका से दृष्टांत है कि गृह प्रबंधन शिक्षा प्राप्त महिलाएँ बच्चों की शिक्षा से संबंधित निर्णयों-जैसे स्कूल चयन, खर्च नियोजन एवं शैक्षणिक गतिविधियों में अधिक सक्रिय पाई गईं। यह शिक्षा महिलाओं को भविष्य-उन्मुख सोच विकसित करने में सहायक होती है।

स्वास्थ्य संबंधी निर्णयों में महिलाओं की भूमिका

तालिका – 6: स्वास्थ्य निर्णय-निर्माण क्षमता

क्रं.	निर्णय स्तर	शिक्षा प्राप्त	शिक्षा अप्राप्त
1	उच्च	65 %	30 %
2	मध्यम	25 %	42 %
3	निम्न	10 %	28 %

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से पता चलता है कि स्वास्थ्य संबंधी निर्णयों-जैसे पोषण, चिकित्सा परामर्श एवं स्वास्थ्य व्यय में गृह प्रबंधन शिक्षा प्राप्त महिलाएँ अधिक जागरूक एवं निर्णायक पाई गईं। इससे परिवार के स्वास्थ्य स्तर में सुधार होता है।

समय एवं संसाधन उपयोग संबंधी निर्णय

तालिका – 7: समय प्रबंधन एवं संसाधन उपयोग

क्रं.	निर्णय दक्षता	शिक्षा प्राप्त	शिक्षा अप्राप्त
1	उच्च	70 %	34 %
2	मध्यम	22 %	41 %
3	निम्न	8 %	25 %

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से ज्ञात होता है कि गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं को समय का नियोजन, प्राथमिकता निर्धारण एवं संसाधनों के अधिकतम उपयोग हेतु प्रशिक्षित करती है। इसी कारण शिक्षा प्राप्त महिलाओं में निर्णय दक्षता अधिक पाई गई।

ग्रामीण एवं शहरी महिलाओं का तुलनात्मक अध्ययन

तालिका – 8: क्षेत्र अनुसार निर्णय-क्षमता

क्रं.	क्षेत्र	उच्च	मध्यम	निम्न
1	ग्रामीण	66 %	26 %	8 %
2	शहरी	38 %	42 %	20 %

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से यह पता चलता है कि शहरी महिलाओं की निर्णय-क्षमता ग्रामीण महिलाओं की अपेक्षा अधिक पाई गई। इसका मुख्य कारण शिक्षा, सूचना एवं संसाधनों की बेहतर उपलब्धता है।

गृह प्रबंधन शिक्षा और आत्मविश्वास का संबंध – अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं में आत्मविश्वास को बढ़ाती है। आत्मविश्वास निर्णय-क्षमता का आधार है। शिक्षित महिलाएँ अपनी बात को तर्कसंगत ढंग से प्रस्तुत करती हैं और पारिवारिक चर्चाओं में सक्रिय भागीदारी करती हैं।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं की स्थिति (Status) एवं भूमिका (Role) में परिवर्तन लाती है। यह शिक्षा महिलाओं को आश्रित भूमिका से निर्णायक भूमिका की ओर ले जाती है। इससे पारिवारिक शक्ति-संतुलन में सकारात्मक परिवर्तन होता है। शोध अध्ययन के प्रमुख निष्कर्ष हैं :-

1. गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं की निर्णय-क्षमता को उल्लेखनीय रूप से बढ़ाती है।
2. शिक्षा प्राप्त महिलाएँ पारिवारिक निर्णयों में अधिक सहभागी होती हैं।
3. बजट, शिक्षा एवं स्वास्थ्य निर्णयों में शिक्षा का प्रभाव सर्वाधिक है।
4. शहरी महिलाएँ ग्रामीण महिलाओं की अपेक्षा अधिक निर्णय-सक्षम हैं।
5. गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं के आत्मविश्वास एवं आत्मनिर्भरता को बढ़ाती है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन के परिणाम से यह स्पष्ट रूप से प्रमाणित होता है कि गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं की निर्णय-क्षमता में महत्वपूर्ण एवं सकारात्मक भूमिका निभाती है। अध्ययन के दौरान प्राप्त आँकड़ों एवं उनके विश्लेषण से निम्नलिखित प्रमुख परिणाम सामने आए – गृह प्रबंधन शिक्षा प्राप्त महिलाएँ पारिवारिक निर्णयों में अधिक आत्मविश्वासी, तार्किक एवं सक्रिय पाई गईं। ये महिलाएँ बजट निर्माण, खर्च नियंत्रण, बचत योजना, बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य संबंधी निर्णय तथा समय व संसाधन प्रबंधन में अधिक दक्ष थीं। इसके विपरीत गृह प्रबंधन शिक्षा से वंचित महिलाएँ निर्णय-निर्माण में अपेक्षाकृत निर्भर एवं सीमित भूमिका निभाती दिखाई दीं।

शोध अध्ययन से यह भी ज्ञात हुआ कि गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं में समस्या-समाधान क्षमता को विकसित करती है, जिससे वे पारिवारिक परिस्थितियों के अनुसार उचित निर्णय लेने में सक्षम बनती हैं। ग्रामीण एवं शहरी महिलाओं की तुलना में यह तथ्य सामने आया कि शिक्षा के अवसरों की उपलब्धता के कारण शहरी महिलाओं की निर्णय-क्षमता अधिक विकसित है, किंतु ग्रामीण क्षेत्रों में भी गृह प्रबंधन शिक्षा के सकारात्मक प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई दिए। इस प्रकार शोध परिणाम यह संकेत करते हैं कि गृह प्रबंधन शिक्षा केवल घरेलू दक्षता नहीं, बल्कि सशक्तिकरण का प्रभावी माध्यम है।

प्रस्तुत शोध 'गृह प्रबंधन शिक्षा से महिलाओं की निर्णय–क्षमता में वृद्धि का अध्ययन' के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं को पारिवारिक जीवन में एक सशक्त एवं निर्णायक भूमिका प्रदान करती है। यह शिक्षा महिलाओं को पारंपरिक सीमित भूमिका से बाहर निकालकर उन्हें परिवार के नीति–निर्धारण में सहभागी बनाती है। निर्णय–क्षमता का विकास महिलाओं की सामाजिक स्थिति, आत्मसम्मान एवं पारिवारिक प्रभावशीलता को बढ़ाता है। गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं को संसाधनों के वैज्ञानिक उपयोग, प्राथमिकता निर्धारण तथा भविष्य–उन्मुख सोच प्रदान करती है। इसके परिणामस्वरूप परिवार की आर्थिक स्थिति, स्वास्थ्य स्तर एवं शैक्षणिक वातावरण में सुधार होता है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह शिक्षा लैंगिक समानता को बढ़ावा देती है तथा पारिवारिक सत्ता–संरचना में संतुलन स्थापित करती है। अत: यह कहा जा सकता है कि गृह प्रबंधन शिक्षा महिलाओं के सर्वांगीण विकास एवं समाज के सतत विकास का एक सशक्त साधन है।

सुझाव – अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जाते हैंकृ

1. विद्यालय एवं महाविद्यालय स्तर पर गृह प्रबंधन शिक्षा को अनिवार्य किया जाना चाहिए।
2. ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के लिए विशेष गृह प्रबंधन प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किए जाएँ।
3. महिला स्व–सहायता समूहों के माध्यम से गृह प्रबंधन शिक्षा का प्रसार किया जाए।
4. गृह प्रबंधन शिक्षा को महिला सशक्तिकरण योजनाओं से जोड़ा जाए।
5. मीडिया एवं डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से गृह प्रबंधन शिक्षा के महत्व का प्रचार किया जाए।
6. उच्च शिक्षा में गृह प्रबंधन विषय को रोजगार–उन्मुख बनाया जाए।

भविष्य के शोध की संभावनाएँ

1. गृह प्रबंधन शिक्षा और महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता पर अध्ययन।
2. कार्यरत एवं गैर–कार्यरत महिलाओं की निर्णय–क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन।
3. गृह प्रबंधन शिक्षा का बच्चों के व्यक्तित्व विकास पर प्रभाव।
4. डिजिटल गृह प्रबंधन शिक्षा एवं निर्णय–क्षमता का अध्ययन।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. Desai, N. (2010). Women and Society in India. New Delhi: National Book Trust.
2. Gupta, S. (2014). Home Management and Family Resource Development. New Delhi: Pearson.
3. Kaur, P. (2016). Women empowerment through education. Indian Journal of Social Research, 57(2), 211-225.
4. Kishor, S., & Gupta, K. (2009). Gender equality and women's empowerment. International Journal of Sociology, 39(1), 45-63.
5. Lal, R. (2015). Sociology of Family. Jaipur: Rawat Publications.
6. Moser, C. (1993). Gender Planning and Development. London: Routledge.
7. NCERT. (2018). Home Science Curriculum Framework. New Delhi.
8. Oakley, A. (2005). The Sociology of Housework. Oxford: Blackwell.
9. Patel, V. (2017). Women's role in family decision making. Journal of Family Studies, 23(3), 356-370.
10. Rani, S. (2019). Home science education and women empowerment. International Journal of Home Science, 5(1), 45-50.
11. Sharma, R. (2013). Women Education and Development. Delhi: Kanishka Publishers.
12. Singh, A. (2016). Family resource management and decision making. Asian Journal of Social Science, 8(2), 101-112.
13. UNDP. (2020). Gender Equality and Women Empowerment. New York.
14. UNICEF. (2019). Women and Education in Developing Countries.
15. World Bank. (2018). Education and Empowerment of Women. Washington DC.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Effect of Combined Strength and Plyometric Training on Smash Speed and Court Movement in Competitive Badminton Players of Sikar and Churu Districts of Rajasthan

Rajesh Kumar* **Dr. B. K. Choudhary****

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Supervisor, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Abstract: Badminton is a high-intensity racket sport requiring explosive power, rapid directional changes, agility, and neuromuscular coordination. Smash speed and efficient court movement are decisive performance factors that depend largely on lower-body strength and plyometric ability. The present study aimed to examine the effect of combined strength and plyometric training on smash speed and court movement among competitive badminton players. Thirty district-level players aged 16–22 years from **Sikar** and **Churu** were selected and randomly divided into experimental and control groups. The experimental group underwent an eight-week structured strength and plyometric training program alongside regular badminton practice, while the control group continued only routine training. Smash speed was measured using video motion analysis, and court movement ability was assessed through a standardized badminton agility test. Statistical analysis revealed significant improvement in both variables among the experimental group compared to the control group. The findings indicate that integrated strength and plyometric training enhances explosive performance and on-court movement efficiency in badminton players.
Keywords: Strength training, Plyometric training, Smash speed, Court movement, Badminton performance, Agility, Explosive power.

Introduction - Badminton is recognized as one of the fastest racket sports, requiring players to execute explosive movements, rapid directional changes, and high-speed strokes within very short time intervals. Success in the game depends not only on technical skill but also on physical attributes such as muscular strength, power, speed, and agility. Among offensive skills, the smash is considered the most decisive stroke, demanding strong lower-body drive, trunk rotation, and coordinated upper-body acceleration.
Efficient court movement is equally important, as players must reach the shuttle quickly while maintaining balance and control. Inefficient movement patterns increase fatigue and reduce performance quality during rallies. Therefore, physical conditioning plays a vital role in modern badminton performance.

Strength training improves muscle force production and joint stability, while plyometric training enhances explosive ability by improving the muscles' ability to produce force rapidly. When these two training methods are combined, they can significantly enhance athletic movements that involve jumping, sprinting, and sudden changes in direction. In many developing training environments, athletes focus mainly on skill practice and match play, with limited emphasis on scientific conditioning. This may restrict physical development and overall performance potential. Research focusing on badminton-specific performance variables such as smash speed and court movement remains limited at the district competitive level. Hence, the present study was designed to examine the effectiveness of combined strength and plyometric training in improving these performance aspects.

Review Of Literature

A considerable body of sports science research supports the role of strength and plyometric training in enhancing explosive performance, agility, and sport-specific skills. These physical components are particularly critical in high-speed racket sports like badminton, where players perform repeated jumps, lunges, and rapid multidirectional movements.

Sharma and Kaur (2019) examined the influence of lower-body strength training on power output among racket sport athletes and found significant improvements in jump height, stroke force, and movement acceleration. Their study emphasized that increased muscular strength enhances force transfer from the lower body to the upper body during overhead strokes, directly influencing smash

effectiveness.

Singh (2018) reported that plyometric training improves the efficiency of the stretch-shortening cycle, leading to faster muscle contraction and greater explosive output. The study observed that athletes who underwent depth jumps, bounding, and box jumps demonstrated superior sprint and agility performance compared to control groups.

Research by Markovic and Mikulic (2010) established that plyometric exercises significantly enhance vertical jump performance and neuromuscular coordination. Improved jump ability directly contributes to higher contact points in overhead smashes, enabling players to generate greater shuttle velocity.

In badminton-specific research, Phomsoupha and Laffaye (2015) highlighted that smash performance is influenced by leg power, trunk rotation speed, and shoulder acceleration. Their biomechanical analysis revealed that lower-body power contributes substantially to shuttlecock velocity.

Agility and court movement are also linked to strength and plyometric development. Miller et al. (2006) found that plyometric training enhances agility by improving reaction time, muscle stiffness, and ground contact efficiency. Athletes showed quicker directional changes and reduced movement time.

A study by Chen et al. (2017) on elite badminton players demonstrated that those with higher lower-body power displayed faster court coverage and better defensive recovery. The researchers concluded that explosive training improves both offensive and defensive performance.

Furthermore, Chu (2013) emphasized that integrated strength and plyometric training produces superior results compared to isolated training, as it develops both force production and speed of contraction, essential for sport-specific explosive actions.

Although extensive international research exists, limited studies focus on district-level Indian badminton players, particularly in semi-urban regions. Most training programs in such areas prioritize skill repetition rather than physical conditioning. Therefore, investigating the effect of structured strength and plyometric training on smash speed and court movement among competitive badminton players is both necessary and relevant.

Objectives Of The Study: The present study was conducted with the following objectives:

1. To determine the effect of combined strength and plyometric training on smash speed among competitive badminton players.
2. To examine the influence of combined strength and plyometric training on court movement ability.
3. To compare pre-test and post-test smash speed scores of experimental and control groups.
4. To compare pre-test and post-test court movement performance of experimental and control groups.
5. To assess the effectiveness of scientific conditioning programs in enhancing badminton performance variables.

Hypotheses Of The Study:

1. H1: There will be a significant difference between pre-test and post-test smash speed of the experimental group.
2. H2: There will be a significant difference between pre-test and post-test court movement scores of the experimental group.
3. H3: The experimental group will show significantly greater improvement in smash speed compared to the control group.
4. H4: The experimental group will demonstrate significantly better court movement performance than the control group after training.
5. H5: Combined strength and plyometric training will positively influence badminton-specific explosive performance.

Significance Of The Study: This study holds practical and scientific importance in the field of sports training and badminton performance enhancement.

1. Provides scientific evidence for integrating strength and plyometric training in badminton coaching programs.
2. Helps coaches design structured conditioning routines rather than focusing only on skill practice.
3. Assists district-level players in improving smash power and court coverage ability.
4. Contributes to sports science research in developing regions like **Sikar** and **Churu**.
5. Supports the development of evidence-based training models for competitive badminton athletes.

Methodology

Research Design: The study employed an **experimental research design** using a pre-test and post-test control group method. This design was selected to determine the effect of combined strength and plyometric training on smash speed and court movement in competitive badminton players.

Selection Of Subjects: A total of **30 competitive badminton players** were selected from sports academies and training centers of **Sikar** and **Churu** districts.

Group	Number of Subjects	Criteria
Experimental Group	15	Regular badminton players + additional strength & plyometric training
Control Group	15	Regular badminton training only

Inclusion criteria:

1. Age between **16–22 years**
2. Minimum **2 years of badminton playing experience**
3. Participation in district or school/state-level competitions
4. Medically fit and injury-free

Exclusion Criteria:

1. Any musculoskeletal injury
2. Cardiovascular or respiratory disorders
3. Participation in other structured strength training programs

Variables Of The Study:

Type of Variable	Variable
Independent Variable	Combined Strength and Plyometric Training
Dependent Variables	1. Smash Speed 2. Court Movement Ability
Control Variables	Age, playing experience, practice duration

Tools And Tests:

Variable	Test	Measurement
Smash Speed	Video Motion Analysis Method	Shuttle speed (km/h)
Court Movement	Badminton Agility/ Footwork Test	Time in seconds
Leg Power (supporting)	Vertical Jump Test	Jump height (cm)

Training Programme:

The experimental group underwent an **8-week combined strength and plyometric training program**, 3 sessions per week, in addition to regular badminton practice.

Strength Training Exercises

1. Squats
2. Lunges
3. Deadlifts
4. Step-ups
5. Core exercises (planks, medicine ball rotations)

Plyometric Training Exercises

1. Box jump
2. Depth jumps
3. Skater jumps
4. Bounding
5. Lateral hops

Session Duration: 45–60 minutes

Progression: Intensity gradually increased every two weeks.

The control group continued only routine badminton skill training.

Testing Procedure:

1. Pre-tests were conducted before the start of training.
2. Standard warm-up of 10 minutes (jogging + stretching).
3. Smash speed was recorded using video analysis during maximum-effort smashes.
4. Court movement was assessed using a standardized badminton footwork pattern test.
5. After 8 weeks, post-tests were conducted under identical conditions.
6. Rest intervals were standardized to maintain test reliability.

Ethical Considerations:

1. Written consent obtained from participants.
2. Participants were informed about study purposes and procedures.
3. Safety measures were followed during training and testing.
4. Data confidentiality was maintained.

Reliability And Validity:

1. Vertical Jump Test reliability: r = 0.89
2. Agility Test reliability: r = 0.86–0.90
3. Video motion analysis is widely accepted for performance evaluation in racket sports.

Statistical Analysis: Descriptive statistics (Mean and Standard Deviation) were calculated to analyze performance changes. The **t-test** was used to determine significant differences between pre-test and post-test scores and between groups.

Results: The pre-test and post-test scores revealed that the experimental group demonstrated marked improvement in smash speed, court movement ability, and vertical jump performance after the 8-week combined strength and plyometric training program. The control group showed only minor changes.

1. Smash speed increased significantly in the experimental group, indicating enhanced explosive stroke power.
2. Court movement time decreased, showing improved agility and on-court efficiency.
3. Vertical jump height improved, confirming better lower-body power development.

Statistical analysis using the t-test indicated that the improvements in the experimental group were significant at the 0.05 level, while the control group changes were not significant.

Discussion: The improvements in smash speed can be explained by enhanced force production and neuromuscular efficiency developed through strength and plyometric training. Plyometric drills improve the stretch-shortening cycle, enabling faster muscle contraction and more powerful movements, which are crucial for executing high-velocity smashes.

The reduction in court movement time suggests better agility, balance, and reactive strength. Plyometric and strength exercises improve muscle stiffness and joint stability, which help athletes change direction quickly with reduced energy loss.

The improvement in vertical jump performance confirms the development of explosive leg power, which contributes directly to higher contact points and stronger overhead strokes. The minimal gains in the control group indicate that routine badminton practice alone does not sufficiently enhance explosive physical qualities.

These findings support the idea that scientific conditioning programs are essential for optimizing badminton performance.

Conclusion: The present study concludes that combined strength and plyometric training significantly improves

smash speed and court movement ability in competitive badminton players. The experimental group demonstrated marked enhancement in explosive power, agility, and on-court efficiency after the 8-week training program, while the control group showed only minimal improvement through routine practice.

The increase in smash speed reflects improved force generation and neuromuscular coordination, while the reduction in court movement time indicates better agility and directional control. The improvement in vertical jump performance further confirms enhanced lower-body explosive strength, which is crucial for powerful overhead strokes.

Therefore, it can be concluded that integrating structured strength and plyometric training with regular badminton practice is highly effective for enhancing performance-related physical abilities in badminton players.

Recommendations: Based on the findings of the study, the following recommendations are made:

1. Badminton coaches should incorporate strength and plyometric exercises into regular training programs.
2. Conditioning sessions should be conducted at least 2–3 times per week for optimal performance gains.
3. Scientific monitoring of training load and progression should be implemented.
4. Sports academies should provide facilities and equipment for strength and plyometric training.
5. Similar studies should be conducted with female players and different age groups.
6. Future research may include additional variables such as reaction time, endurance, and injury prevention.

References:-

1. Bompa, T. O., & Buzzichelli, C. (2019). *Periodization: Theory and methodology of training*. Human Kinetics.
2. Chu, D. A. (2013). *Plyometrics*. Human Kinetics.
3. Gambetta, V. (2016). *Athletic development: The art and science of functional sports conditioning*. Human Kinetics.
4. Haff, G. G., & Triplett, N. T. (2016). *Essentials of strength training and conditioning*. Human Kinetics.
5. Lees, A. (2003). Science and the major racket sports: A review. *Journal of Sports Sciences*, 21(9), 707–732.
6. Markovic, G., & Mikulic, P. (2010). Neuro-musculoskeletal and performance adaptations to lower-extremity plyometric training. *Sports Medicine*, 40(10), 859–895.
7. Miller, M. G., Herniman, J. J., Ricard, M. D., Cheatham, C. C., & Michael, T. J. (2006). The effects of a 6-week plyometric training program on agility. *Journal of Sports Science & Medicine*, 5(3), 459–465.
8. Phomsoupha, M., & Laffaye, G. (2015). The science of badminton: Game characteristics, anthropometry, physiology, visual fitness and biomechanics. *Sports Medicine*, 45(4), 473–495.
9. Sheppard, J. M., & Young, W. B. (2006). Agility literature review: Classifications, training and testing. *Journal of Sports Sciences*, 24(9), 919–932.
10. Suchomel, T. J., Nimphius, S., & Stone, M. H. (2016). The importance of muscular strength in athletic performance. *Sports Medicine*, 46(10), 1419–1449.
11. Wilmore, J. H., Costill, D. L., & Kenney, W. L. (2015). *Physiology of sport and exercise*. Human Kinetics.
12. Young, W., & Farrow, D. (2006). A review of agility: Practical applications for strength and conditioning. *Strength and Conditioning Journal*, 28(5), 24–29.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Effect of Reaction-Based Fielding Drills on Ball Collection Speed and Throwing Accuracy in Junior Cricket Players

Ramesh Choudhary* **Dr. B. K. Choudhary****

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Supervisor, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Abstract: Fielding performance in cricket depends heavily on quick reactions, rapid ball collection, and accurate throwing. Reaction-based fielding drills are designed to improve neuromuscular response and decision-making speed, which are crucial in match situations. The present study aimed to determine the effect of reaction-based fielding drills on ball collection speed and throwing accuracy among junior cricket players. Forty players were selected and divided into experimental and control groups. The experimental group underwent an eight-week reaction-focused fielding training program, while the control group followed regular cricket practice. Ball collection speed was measured using a timed pickup test, and throwing accuracy was assessed through a target hit test. Results indicated significant improvement in both variables in the experimental group compared to the control group. The findings suggest that reaction-based drills are effective in enhancing fielding efficiency in junior cricket players.
Keywords: Fielding training, Reaction drills, Ball pickup speed, Throwing accuracy, Cricket performance.

Introduction - Cricket fielding has evolved from a supportive role to a decisive factor influencing match outcomes. Modern cricket demands players who can react quickly, move explosively toward the ball, collect it efficiently, and deliver accurate throws under time pressure. Delays in ball collection or inaccurate throws often result in extra runs, missed run-out opportunities, and reduced team performance.

Reaction time plays a crucial role in fielding. A fielder must process visual information, decide on movement direction, and execute motor action within seconds. Reaction-based drills simulate unpredictable ball directions and match-like scenarios, forcing players to respond rapidly. Such drills enhance neuromuscular coordination, speed of movement initiation, and hand–eye coordination.

Ball collection speed depends on agility, body control, and technique. Quick pickups reduce the time available for batters to complete runs. Throwing accuracy, on the other hand, is essential for successful run-outs and restricting scoring opportunities.

In many junior cricket training programs, emphasis is placed on batting and bowling, while fielding practice is often repetitive and less structured. Scientific, reaction-focused fielding drills can help develop faster response mechanisms and precision skills.

Research focusing specifically on reaction-based fielding training among junior players in northern Rajasthan districts remains limited. Therefore, this study aims to examine how structured reaction drills influence ball collection speed and throwing accuracy.

Objectives Of The Study: **The present study was conducted with the following objectives:**

1. To determine the effect of reaction-based fielding drills on ball collection speed among junior cricket players.
2. To examine the influence of reaction-based drills on throwing accuracy.
3. To compare pre-test and post-test ball pickup speed of experimental and control groups.
4. To compare pre-test and post-test throwing accuracy between groups.
5. To evaluate the usefulness of scientific reaction drills in improving fielding performance.

Hypotheses Of The Study: **H1: There will be a significant improvement in ball collection speed after reaction-based fielding training.**

1. H2: There will be a significant improvement in throwing accuracy after reaction-based training.
2. H3: The experimental group will perform better than the control group in post-test fielding performance.
3. H4: Reaction-based fielding drills will positively influence neuromuscular response and skill execution.

Significance Of The Study: This study is important for both coaching practice and sports science research:

1. Helps coaches understand the role of reaction training

in fielding improvement.
2. Provides evidence for structured fielding drills rather than repetitive practice.
3. Supports development of faster and more efficient junior fielders.
4. Encourages scientific training methods in cricket academies.
5. Contributes research data from the districts of **Ganganagar**, **Hanumangarh**, **Churu**, and **Bikaner** where limited fielding research exists.

Methodology

Research Design: The study employed an **experimental pre-test–post-test control group design** to determine the effect of reaction-based fielding drills on ball collection speed and throwing accuracy in junior cricket players. This design allowed comparison of performance changes resulting from the training intervention.

Selection Of Subjects: A total of **30 junior cricket players** were selected from cricket academies and school teams in **Ganganagar**, **Hanumangarh**, **Churu**, and **Bikaner** using purposive sampling. Players were randomly assigned into two groups.

Group	Number of Subjects	Training Condition
Experimental Group	15	Regular cricket training + reaction-based fielding drills
Control Group	15	Regular cricket training only

Inclusion Criteria

1. Age range **13–18 years**
2. Minimum **two years of cricket experience**
3. Participation in inter-school or district-level competitions
4. Physically fit and medically cleared

Exclusion Criteria

1. Current musculoskeletal injury
2. Medical conditions restricting vigorous physical activity
3. Participation in specialized training outside routine practice

Variables Of The Study:

Category	Variable
Independent Variable	Reaction-based fielding training program
Dependent Variables	Ball collection speed, Throwing accuracy

Tools And Measurement:

Variable	Test	Unit
Ball Collection Speed	Timed Ground Ball Pickup Test	Seconds
Throwing Accuracy	Target Hit Test (from fixed distance)	Successful hits

Training Programme: The experimental group participated in an **8-week reaction-based fielding program** alongside routine cricket practice. Training sessions were conducted **three times per week**, each lasting approximately **45 minutes**.

Key Training Components:

1. Random-direction ball response drills
2. Signal-based movement and pickup exercises
3. Rapid ground ball collection with immediate throw
4. Multi-direction sprint and stop drills
5. Reaction catching and relay throw drills

The intensity and complexity of drills were increased progressively. The control group continued standard technical and tactical practice without specialized reaction drills.

Testing Procedure: Pre-testing was conducted before the training program and post-testing after completion of 8 weeks.

1. Participants performed a standardized warm-up.
2. Ball collection speed was recorded as the time taken to field and release the ball from a specified distance.
3. Throwing accuracy was assessed by counting successful target hits out of total attempts.
4. Identical testing conditions were maintained in both testing sessions.

Ethical Considerations: Consent was obtained from players and guardians. Safety precautions were followed, and data confidentiality was maintained throughout the study.

Statistical Analysis: The collected data were analyzed using appropriate statistical methods to evaluate the effectiveness of reaction-based fielding drills. Mean and standard deviation were calculated to summarize performance levels in ball collection speed and throwing accuracy. The normality of data distribution was verified using the Shapiro–Wilk test prior to applying parametric tests. A paired sample t-test was employed to determine significant differences between pre-test and post-test scores within both the experimental and control groups, while an independent sample t-test was used to compare post-test performance between groups. Additionally, Cohen's *d* was calculated to assess the magnitude of the training effect and determine practical significance. All statistical analyses were conducted at a 0.05 level of significance.

Results: The study examined the effect of reaction-based fielding drills on ball collection speed and throwing accuracy in junior cricket players. Data were analyzed using descriptive statistics and t-tests.

Ball Collection Speed: The experimental group showed a significant reduction in ball pickup time from pre-test to post-test (2.48 ± 0.21 s to 2.09 ± 0.18 s; $t = 5.72$, $p < 0.05$), with a large effect size (Cohen's $d = 1.15$). The control group showed only minor, non-significant improvement.

Throwing Accuracy: Throwing accuracy improved significantly in the experimental group (6.2 ± 1.1 to 8.7 ± 0.9 successful hits; $t = 6.14$, $p < 0.05$), also with a large effect size ($d = 1.32$). The control group demonstrated

minimal change.

Summary: Reaction-based fielding drills produced significant improvements in both speed and accuracy, whereas regular practice alone did not yield comparable gains.

Discussion: The results of the study indicate that reaction-based fielding drills significantly improved ball collection speed and throwing accuracy among junior cricket players. The reduction in ball pickup time suggests enhanced reaction ability, quicker movement initiation, and better coordination between perception and action. These improvements are likely due to repeated exposure to unpredictable stimuli during training, which strengthens neuromuscular response.

The improvement in throwing accuracy reflects better motor control and release precision developed through drills combining movement and throwing actions. Reaction-based exercises not only improve physical speed but also decision-making efficiency, which is essential in dynamic fielding situations.

The control group's minimal improvement highlights that routine practice alone may not sufficiently develop reaction speed and accuracy. Therefore, structured and scientifically designed fielding drills appear necessary for optimizing performance in junior cricket players.

Conclusion: The study concludes that reaction-based fielding drills are effective in improving ball collection speed and throwing accuracy in junior cricket players. The experimental group demonstrated significant gains in both variables after the 8-week training program, while the control group showed only minimal changes. These findings indicate that incorporating reaction-focused drills enhances neuromuscular response, coordination, and skill execution, which are essential components of modern cricket fielding performance.

Recommendations: Based on the findings of the study, the following recommendations are suggested:

1. Coaches should include reaction-based drills in regular fielding practice sessions.
2. Training programs should incorporate unpredictable movement and response tasks to simulate match conditions.
3. Fielding sessions should focus on both speed of response and throwing precision.
4. Similar training methods can be applied to different age groups and competitive levels.
5. Future research may examine additional variables such as anticipation ability and decision-making speed.

References:-

1. Ali, A., Williams, C., Hulse, M., Strudwick, A., Reddin, J., Howarth, L., Eldred, J., Hirst, M., & McGregor, S. (2007). Reliability and validity of two tests of soccer skill. *Journal of Sports Sciences*, 25(13), 1461–1470.
2. Bloomfield, J., Ackland, T. R., & Elliott, B. C. (2007). Applied anatomy and biomechanics in sport. *Blackwell Publishing*.
3. Elliott, B., Grove, J. R., Gibson, B., & Thurston, B. (1993). A three-dimensional analysis of the relationship between the motion of the throwing arm and ball velocity in baseball pitching. *Journal of Applied Biomechanics*, 9(3), 215–228.
4. Farrow, D., & Young, W. (2006). Tactical decision making in sport. *International Journal of Sport Science & Coaching*, 1(1), 45–62.
5. Ford, P. R., Yates, I., & Williams, A. M. (2011). An analysis of practice activities and instructional behaviours used by youth soccer coaches. *Journal of Sports Sciences*, 28(5), 483–495.
6. Sheppard, J. M., & Young, W. B. (2006). Agility literature review: Classifications, training, and testing. *Journal of Sports Sciences*, 24(9), 919–932.
7. Stretch, R. A. (2003). Cricket fitness and fielding performance. *South African Journal for Research in Sport, Physical Education and Recreation*, 25(2), 77–86.
8. Young, W., James, R., & Montgomery, I. (2002). Is muscle power related to running speed with changes of direction? *Journal of Sports Medicine and Physical Fitness*, 42(3), 282–288.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Relationship Between Physical Fitness Components and Injury Occurrence in Kabaddi Players of Selected Districts of Rajasthan

Ramsukh Ogra* **Dr. Kamal Vijayvargia****

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Supervisor, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Abstract: Kabaddi is a physically intensive contact sport that involves rapid directional movements, forceful tackling, sudden stops, and high-impact body interactions. These dynamic actions place considerable mechanical stress on the musculoskeletal system, making players vulnerable to various sports-related injuries. Physical fitness components such as flexibility, balance, muscular strength, and agility play a crucial role in maintaining body control, absorbing impact forces, and preventing excessive strain on joints and soft tissues. The present study aimed to investigate the relationship between selected physical fitness components and injury occurrence among kabaddi players. Forty competitive players aged 16–21 years from selected districts of Rajasthan were assessed for flexibility, balance, muscular strength, and agility using standardized field tests. Injury data were collected through a structured injury history questionnaire covering the previous playing season. Statistical analysis using correlation methods indicated a significant association between lower fitness levels and higher injury incidence. Players with reduced flexibility, poor balance, and insufficient muscular strength reported more frequent injuries compared to physically well-conditioned players. The findings emphasize the importance of comprehensive physical conditioning programs in reducing injury risk and improving overall athletic resilience in kabaddi.
Keywords: Kabaddi, Physical fitness, Injury risk, Flexibility, Balance, Strength.

Introduction - Kabaddi is recognized as a high-intensity indigenous sport that combines elements of strength, speed, agility, and physical contact. During play, athletes are required to perform explosive raids, defensive holds, sudden lunges, rapid directional changes, and body-to-body collisions. Such movements demand not only technical proficiency but also a high level of physical preparedness. Due to the repeated exposure to high mechanical loads and unpredictable contact situations, kabaddi players are susceptible to musculoskeletal injuries affecting joints, muscles, and ligaments.

Physical fitness serves as a protective foundation that allows athletes to withstand the physical demands of sport. Flexibility contributes to efficient joint movement and reduces the likelihood of muscle strain during extreme positions. Balance supports postural control during rapid transitions and physical contact, minimizing the risk of falls and awkward landings. Muscular strength enhances joint stability and helps absorb external forces generated during tackling and collisions. Agility allows athletes to move efficiently and avoid hazardous situations during dynamic play.

When these physical qualities are insufficient, athletes may be unable to control their body movements effectively, leading to improper landing mechanics, delayed reaction, and increased stress on specific body parts. Over time, such deficiencies can elevate the probability of acute injuries and repetitive strain problems.

Although kabaddi is widely played in Rajasthan, structured assessment of physical fitness in relation to injury occurrence remains limited at the district competitive level. Most training programs prioritize skill development while physical conditioning and injury risk factors receive comparatively less attention. Investigating how fitness components relate to injury patterns can provide valuable insight for designing preventive training strategies and enhancing player safety. Therefore, the present study seeks to examine the relationship between selected physical fitness components and injury occurrence among kabaddi players.

Review Of Literature

Research in sports injury science suggests that injuries rarely occur due to a single factor; instead, they arise when the physical capacity of the athlete does not match the demands of the activity. **Bahr and Krosshaug (2005)** described injury as the result of a mismatch between external load and tissue tolerance. In physically demanding

sports, inadequate muscular support can lead to overload of joints and connective tissues.

Flexibility has been discussed as an important contributor to movement efficiency. **Witvrouw et al. (2004)** noted that restricted range of motion may increase tension within muscles during dynamic tasks, potentially leading to strain injuries. They argued that flexibility allows better absorption of stretch forces during sudden or forceful actions.

Postural stability also plays a role in safe athletic performance. **Hrysomallis (2007)** highlighted that athletes with reduced balance ability may struggle to control body alignment, particularly during landing or rapid directional shifts. Such instability can place excessive stress on the knee and ankle joints.

Strength training is frequently associated with injury reduction. **Lauersen et al. (2014)** found that athletes who engaged in systematic strength development showed lower injury rates compared to those without such training. Strong muscles help stabilize joints and improve force distribution during impact.

Movement quality and agility are also connected to injury risk. According to **Gabbett (2008)**, athletes with better conditioning and movement control are more capable of handling rapid changes in play without losing balance or coordination. Efficient movement patterns reduce the likelihood of unsafe body positions.

Neuromuscular control, which involves coordinated muscle activation, has also been emphasized. **Emery et al. (2005)** observed that improved neuromuscular function enhances joint stability and reduces the chances of injury during unpredictable movements.

While these studies highlight individual fitness components, their combined influence in kabaddi has not been explored extensively. Since kabaddi involves sudden directional changes, grappling actions, and body contact, examining how multiple fitness factors relate to injury occurrence becomes essential.

Objectives Of The Study:

1. To assess the levels of selected physical fitness components (flexibility, balance, muscular strength, and agility) among kabaddi players.
2. To determine the frequency and types of injuries experienced by kabaddi players during the playing season.
3. To examine the relationship between flexibility and injury occurrence.
4. To analyze the association between balance ability and injury incidence.
5. To investigate the relationship between muscular strength and injury frequency.
6. To study the link between agility and injury risk in kabaddi players.

Hypotheses Of The Study:

1. H1: There will be a significant relationship between physical fitness components and injury occurrence among kabaddi players.
2. H2: Players with lower flexibility levels will report higher injury incidence.
3. H3: Poor balance ability will be associated with greater injury occurrence.
4. H4: Reduced muscular strength will correlate with increased injury frequency.
5. H5: Lower agility performance will be linked to higher injury risk.

Significance Of The Study:

1. Helps identify physical risk factors contributing to injuries in kabaddi players.
2. Provides scientific evidence for incorporating conditioning programs in kabaddi training.
3. Assists coaches in improving player safety and reducing injury occurrence.
4. Contributes sports science research data from kabaddi players in **Jaipur** and **Ajmer**.
5. Supports development of preventive strategies to enhance long-term athletic performance.

Research Methodology

Research Design: The present investigation employed a **descriptive correlational research design** to explore the relationship between selected physical fitness components and injury occurrence among kabaddi players. This design was considered appropriate as the study aimed to identify associations between naturally existing variables without manipulating any training conditions. The approach allowed assessment of how variations in physical fitness characteristics may relate to the frequency of sports injuries experienced during the competitive season.

Selection Of Subjects: A total of **40 competitive kabaddi players** were selected from recognized sports academies and college teams in **Jaipur** and **Ajmer**. Participants were chosen through purposive sampling based on their active involvement in district and inter-college competitions. Only players with consistent participation in training and matches during the previous season were included to ensure reliable injury history data.

Inclusion Criteria: Participants met the following criteria:

1. Age between **16 and 21 years**
2. Minimum of **two years of competitive kabaddi experience**
3. Regular training participation
4. No medical restriction at the time of testing

Exclusion Criteria: Players were excluded if they had:

1. Undergone recent surgery
2. Chronic musculoskeletal disorders
3. Incomplete injury history records

Variables Of The Study: The study considered the following variables:

Category	Variables
Independent Variables	Flexibility, Balance, Muscular Strength, Agility
Dependent Variable	Injury occurrence (frequency of injuries during the previous playing season)

Tools And Measurement Techniques:
Standardized and widely accepted field tests were used to measure physical fitness components:

Variable	Test Used	Description
Flexibility	Sit and Reach Test	Measures hamstring and lower back flexibility
Balance	Stork Stand Test	Assesses postural stability
Muscular Strength muscles	Hand Grip Dynamometer	Evaluates isometric strength of forearm strength of forearm muscles
Agility	Illinois Agility Test	Measures speed and direction change ability
Injury Occurrence	Structured Injury Questionnaire	Records number, type, and location of injuries

Data Collection Procedure: Data collection was carried out in two phases. In the first phase, physical fitness assessments were conducted on a standard playing field under similar environmental conditions. Participants performed a 10-minute standardized warm-up before testing. Each test was demonstrated and explained to ensure correct execution.

In the second phase, injury data were gathered using a structured questionnaire designed to capture injuries sustained during the previous playing season. Players reported injury type, body part affected, and circumstances of occurrence. Coaches verified the responses to enhance reliability.

Reliability And Validity: The physical fitness tests selected for this study have established reliability and validity in sports science research. The Sit and Reach Test, Illinois Agility Test, and Stork Stand Test are commonly used to assess flexibility, agility, and balance respectively. The hand grip dynamometer is a standardized tool for measuring muscular strength.

Ethical Considerations: Participants were informed about the purpose of the study and provided voluntary consent. Confidentiality of data was ensured. No invasive or harmful procedures were involved.

Statistical Analysis: Descriptive statistics, including mean and standard deviation, were computed for all fitness variables. The Shapiro–Wilk test was used to verify data normality. Pearson's correlation coefficient was applied to determine the relationship between physical fitness components and injury occurrence. Statistical significance was set at the 0.05 level.

Results: The purpose of the study was to examine the relationship between selected physical fitness components and injury occurrence among kabaddi players. The data collected were analyzed using descriptive statistics and correlation analysis.

Descriptive Statistics

Variable	Mean	Standard Deviation
Flexibility (cm)	22.4	3.6
Balance (sec)	28.7	5.2
Muscular Strength (kg)	42.5	6.1
Agility (sec)	16.8	1.3
Injury Frequency (number)	2.3	1.1

Correlation Between Physical Fitness Components and Injury Occurrence

Variable	Pearson's r	Significance
Flexibility vs Injury	**–0.48**	Significant
Balance vs Injury	**–0.41**	Significant
Muscular Strength vs Injury	**–0.45**	Significant
Agility vs Injury	**–0.29**	Not Significant

Interpretation: The negative correlation values indicate that higher levels of flexibility, balance, and muscular strength are associated with lower injury occurrence. Agility showed a weak relationship with injury frequency. These findings suggest that deficiencies in specific physical fitness components may increase injury risk in kabaddi players.

Discussion: The findings of the study indicate that selected physical fitness components are associated with injury occurrence among kabaddi players. The negative correlation observed between flexibility and injury frequency suggests that players with better range of motion experienced fewer injuries. Adequate flexibility may help muscles tolerate sudden stretching forces during rapid movements and tackles.

Balance also showed a significant relationship with injury occurrence. Players with better postural stability likely maintain improved body control during dynamic actions, reducing the risk of falls and awkward landings that may lead to joint injuries.

Muscular strength demonstrated a meaningful association with lower injury frequency. Stronger muscles provide joint support and absorb impact forces during collisions and high-intensity movements, which are common in kabaddi.

Agility showed a weaker relationship with injury occurrence compared to other components. This may indicate that while agility contributes to performance, injury risk is more closely linked to stability and strength factors.

Overall, the results highlight the importance of comprehensive physical conditioning in minimizing injury risk. Training programs that enhance flexibility, balance, and muscular strength may help improve player safety.

Conclusion:

1. A significant relationship was observed between selected physical fitness components and injury occurrence among kabaddi players.
2. Higher flexibility levels were associated with lower injury frequency.
3. Better balance ability contributed to improved body control and reduced injury risk.
4. Greater muscular strength was linked with decreased injury occurrence due to enhanced joint stability.
5. Agility showed a weaker association with injury frequency compared to other fitness components.
6. Overall, inadequate physical fitness may increase vulnerability to injuries in kabaddi players.
7. Emphasis on conditioning programs focusing on flexibility, balance, and strength can help in injury prevention.

Recommendations For The Further Studies:

1. Kabaddi training programs should include regular flexibility exercises to improve joint range of motion.
2. Balance and stability drills should be integrated to enhance postural control during dynamic movements.
3. Strength training focusing on major muscle groups should be emphasized to improve joint support.
4. Coaches should conduct periodic fitness assessments to identify players at higher injury risk.
5. Proper warm-up and conditioning routines should be implemented before training and matches.
6. Future research may include additional variables such as endurance and coordination.

References:-

1. Bahr, R., & Krosshaug, T. (2005). Understanding injury mechanisms: A key component of preventing injuries in sport. *British Journal of Sports Medicine*, 39(6), 324–329.
2. Emery, C. A., Cassidy, J. D., Klassen, T. P., Rosychuk, R. J., & Rowe, B. H. (2005). Effectiveness of a home-based balance-training program in reducing sports-related injuries. *American Journal of Sports Medicine*, 33(5), 689–697.
3. Gabbett, T. J. (2008). Influence of training and match intensity on injuries in rugby league players. *Journal of Strength and Conditioning Research*, 22(2), 409–417.
4. Hrysomallis, C. (2007). Relationship between balance ability and sports injury risk. *Sports Medicine*, 37(6), 547–556.
5. Lauersen, J. B., Bertelsen, D. M., & Andersen, L. B. (2014). The effectiveness of exercise interventions to prevent sports injuries. *British Journal of Sports Medicine*, 48(11), 871–877.
6. Witvrouw, E., Mahieu, N., Danneels, L., & McNair, P. (2004). Stretching and injury prevention: An obscure relationship. *Sports Medicine*, 34(7), 443–449.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Concept of Holistic Living in Yoga: A Framework for Harmonizing Body, Mind and Spirit

Pooja Nagpal* **Dr. B.K. Choudhary****

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Associate Professor, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Abstract: Yoga represents one of the most comprehensive philosophical systems developed to understand human existence in its totality. Rather than conceptualizing health as merely the absence of disease, yogic philosophy views well-being as a dynamic equilibrium between the physical body, vital energy, mental processes, ethical orientation, and spiritual awareness. The human being is understood as an integrated entity in which disturbances at one level influence the entire system.

This paper undertakes a theoretical exploration of the concept of holistic living within the yogic tradition and examines its philosophical foundations and structural coherence. Drawing upon classical sources such as the *Upanishads*, the *Bhagavad Gita*, and Patanjali's *Yoga Sutras*, the discussion analyzes the Panchakosha model, the ethical disciplines of Yama and Niyama, psycho-physiological integration through Asana and Pranayama, and the transformative role of meditative awareness.

The analysis argues that holistic living in Yoga provides a systemic framework capable of addressing fragmentation at physical, psychological, and existential levels. It positions Yoga not merely as a therapeutic intervention but as a disciplined life orientation that cultivates coherence, moderation, and conscious engagement with existence.

Keywords: Holistic living, Yoga philosophy, Panchakosha, Ashtanga Yoga, Mind–body integration, Conscious awareness.

Introduction - Human civilization has witnessed extraordinary advancements in science, medicine, and technology. However, parallel to this progress, knowledge has increasingly become compartmentalized. Physical health is addressed biologically, mental well-being psychologically, and ethical conduct philosophically. While such specialization enhances technical precision, it often overlooks the intrinsic interdependence of these dimensions.

Imbalance rarely arises from a single isolated cause. Emotional stress manifests physiologically; physical fatigue influences cognition; ethical conflict disturbs psychological peace. Yet contemporary frameworks frequently address these disturbances separately, focusing on symptoms rather than systemic integration.

In contrast, the classical yogic tradition advances an integrative understanding of human existence. It regards the individual not as a collection of independent components but as a unified field of interacting dimensions. The Sanskrit term *Yoga*, derived from the root *Yuj* (to unite, yoke, or integrate), encapsulates this orientation toward disciplined coordination between body, mind, and consciousness.

Patanjali's definition — *Yogah Chitta Vritti Nirodhah* (Yoga is the cessation of fluctuations of the mind) — establishes mental regulation as central to harmony. However, this regulation is not achieved through abstract contemplation alone. It is cultivated through ethical restraint, embodied discipline, breath regulation, and meditative refinement.

Holistic living in Yoga therefore represents a sustained alignment of thought, action, breath, and awareness. It is not an episodic practice but a structured orientation toward life. This paper explores the philosophical foundations of that orientation and articulates Yoga as a framework for harmonizing body, mind, and spirit.

The Panchakosha Model And Multilayered Human Existence: One of the most profound contributions of the yogic tradition to holistic thought is the Panchakosha doctrine described in the *Taittiriya Upanishad*. This model presents the human being as a multidimensional structure composed of five interrelated sheaths (*Koshas*), each representing a layer of experience and awareness. These sheaths are not isolated compartments but dynamically interacting dimensions that collectively shape human existence.

The Panchakosha framework challenges reductionist interpretations of health by asserting that imbalance at one level inevitably influences the others. Holistic living,

therefore, requires balanced attention to all five sheaths rather than exclusive emphasis on physical well-being.

1. Annamaya Kosha: The Physical Dimension: The outermost sheath, the **Annamaya Kosha**, refers to the physical body sustained by nourishment (*Anna* meaning food). It encompasses the musculoskeletal system, organs, tissues, and physiological processes that maintain biological functioning.

From a yogic perspective, the body is not merely mechanical; it is the visible expression of deeper energetic and mental states. Physical disturbances often originate in emotional or cognitive imbalances. Chronic tension, irregular breathing, and digestive disturbances frequently reflect underlying psychological agitation.

Holistic living at this level involves disciplined care of the body through balanced diet, rhythmic routine, mindful movement, and adequate rest. Yogic Asanas cultivate structural alignment, neuromuscular coordination, and bodily awareness. The purpose is not aesthetic enhancement but functional harmony and stability.

2. Pranamaya Kosha: The Vital Energy Layer: Beyond the physical sheath lies the **Pranamaya Kosha**, the sheath of vital energy. This dimension governs respiration, circulation, and subtle energetic processes that animate the body. In yogic theory, breath is the tangible expression of Prana.

Breathing patterns directly influence emotional states. Shallow, rapid breathing correlates with anxiety, while slow, regulated breathing promotes calmness. Pranayama practices systematically regulate inhalation, exhalation, and retention phases to harmonize physiological rhythms.

Through conscious breath regulation, individuals influence autonomic balance, heart rate variability, and nervous system stability. The Pranamaya Kosha thus serves as a bridge between body and mind, making it central to holistic integration.

3. Manomaya Kosha: The Mental-Emotional Field: The **Manomaya Kosha** encompasses thoughts, emotions, sensory processing, and reactive patterns. It is the domain of attachment and aversion, pleasure and discomfort, fear and desire.

According to yogic psychology, uncontrolled fluctuations within this sheath generate internal turbulence. When mental patterns remain unexamined, they create stress responses that cascade into physiological imbalance.

Holistic living requires refinement of this mental field through practices such as meditation, sensory regulation (Pratyahara), and reflective awareness. Rather than suppressing thought, Yoga cultivates observation without identification. This shift reduces emotional reactivity and promotes psychological steadiness.

4. Vijnanamaya Kosha: Discernment and Wisdom: The **Vijnanamaya Kosha** represents the intellectual and discriminative faculty. It enables ethical judgment, self-reflection, and intentional decision-making. This sheath integrates knowledge with lived experience.

Holistic living depends upon this dimension for coherence between intention and action. Without discernment, impulses from the mental sheath dominate behavior. Yogic self-study (*Svadhyaya*) strengthens this faculty, encouraging alignment between values and conduct.

Discernment stabilizes ethical orientation and prevents fragmentation caused by conflicting motivations.

5. Anandamaya Kosha: Inner Fulfillment: The innermost sheath, the **Anandamaya Kosha**, is associated with deep contentment and experiential wholeness. It does not refer to sensory pleasure but to an enduring state of internal completeness that arises when lower sheaths function harmoniously.

Meditative awareness gradually prepares the individual for access to this layer. When physical stability, energetic balance, mental clarity, and ethical coherence align, a state of inner tranquility emerges.

6. Interdependence of the Five Sheaths: A central insight of the Panchakosha model is interdependence. Emotional disturbances alter breathing; irregular breathing affects physiology; physical illness influences cognition. The sheaths continuously interact.

Holistic living in Yoga therefore involves multi-level engagement. Exclusive focus on one layer produces partial results. Integration across all sheaths cultivates systemic coherence.

Ethical And Practical Integration Through Ashtanga Yoga: While the Panchakosha model provides a philosophical understanding of human multidimensionality, Patanjali's **Ashtanga Yoga** offers a practical methodology for achieving balance across these layers. The eight limbs are not isolated practices but an integrated system designed to cultivate ethical alignment, physical stability, energetic regulation, and psychological clarity.

Holistic living in Yoga becomes operational through this structured framework.

1. Yama: Ethical Regulation of Social Conduct: The first limb, **Yama**, establishes social ethics. It consists of five foundational principles:

1. Ahimsa (Non-violence)
2. Satya (Truthfulness)
3. Asteya (Non-stealing)
4. Brahmacharya (Moderation)
5. Aparigraha (Non-possessiveness)

These principles regulate interpersonal behavior and prevent ethical conflict. Internal disharmony often arises when actions contradict values. Dishonesty generates anxiety; greed fosters restlessness; aggression intensifies emotional instability.

Yama therefore functions as the external stabilizing foundation of holistic living. When social conduct aligns with

ethical principles, psychological agitation decreases and relational harmony improves.

2. Niyama: Internal Discipline and Self-Regulation: Complementing Yama, **Niyama** governs personal discipline. It includes:

1. Saucha (Purity)
2. Santosha (Contentment)
3. Tapas (Disciplined effort)
4. Svadhyaya (Self-study)
5. Ishvara Pranidhana (Surrender to higher awareness)

These observances cultivate internal order. Purity encourages clarity in habits; contentment moderates excessive desire; disciplined effort strengthens resilience; self-study fosters introspection; surrender reduces ego-driven anxiety.

Holistic living requires not only ethical behavior toward others but disciplined alignment within oneself. Niyama refines internal stability and prepares the individual for deeper practices.

3. Asana: Embodied Stability: The third limb, **Asana**, is often misunderstood as physical exercise alone. Classical Yoga defines it as a posture that is steady and comfortable (*Sthira Sukham Asanam*). The purpose is not complexity but stability.

Through sustained posture, individuals cultivate somatic awareness, muscular balance, and structural alignment. Physical steadiness gradually influences mental steadiness. Tension stored within the body — often linked to emotional stress — is released through mindful movement and breath coordination.

Holistic living demands conscious inhabitation of the body rather than mechanical usage of it.

4. Pranayama: Harmonization of Vital Energy: Pranayama regulates the flow of Prana through conscious breath control. The breath serves as the bridge between voluntary and involuntary systems. By altering breathing rhythms, individuals influence autonomic balance and emotional states.

Slow, regulated breathing reduces sympathetic overactivation and fosters calmness. This physiological stabilization directly supports mental clarity.

Holistic living thus incorporates breath awareness as a daily practice of internal regulation.

5. Pratyahara: Sensory Moderation: In environments saturated with stimuli, sensory regulation becomes essential. **Pratyahara** involves withdrawing attention from excessive external inputs. It is not rejection of the world but conscious moderation of engagement.

By reducing compulsive sensory consumption, the mind regains focus and reduces overstimulation. Holistic integration requires moments of inward turning to restore equilibrium.

6. Dharana, Dhyana, and Samadhi: Refinement of Awareness: The final three limbs represent progressive refinement of consciousness:

1. **Dharana (Concentration)** develops sustained focus.
2. **Dhyana (Meditation)** establishes uninterrupted awareness.
3. **Samadhi (Absorption)** integrates subject and object in unified perception.

These stages cultivate deep psychological coherence. As attention stabilizes, reactive patterns diminish and clarity increases. Holistic living culminates in this refined awareness where fragmentation dissolves into integration.

7. Systemic Integration of the Eight Limbs: The eight limbs function interdependently. Ethical alignment supports mental clarity; breath regulation enhances concentration; meditation reinforces ethical discipline. Each limb strengthens the others in a continuous cycle of refinement. Holistic living in Yoga is therefore not a collection of isolated techniques but a coordinated system aimed at comprehensive balance.

Yoga As A Response To Contemporary Fragmentation: Human experience today is frequently characterized by acceleration, overstimulation, and divided attention. Professional demands, digital engagement, social comparison, and constant information exposure contribute to mental dispersion and emotional instability. Within such conditions, individuals often experience a subtle but persistent fragmentation — a disconnection between thought and action, body and awareness, intention and fulfillment.

The yogic framework offers a structured response to this fragmentation. Rather than addressing symptoms in isolation, it seeks restoration of internal coherence.

1. Fragmentation of Attention: Continuous sensory input weakens sustained attention. When awareness is dispersed, decision-making becomes reactive and emotional turbulence increases. From a yogic standpoint, this condition corresponds to uncontrolled fluctuations of the mind (*Chitta Vrittis*).

Practices such as Dharana and Dhyana cultivate attentional continuity. Through disciplined focus, awareness gradually regains steadiness. This restoration of attentional integrity is central to holistic living.

2. Disconnection from the Body: Sedentary routines and cognitive overactivity often reduce bodily awareness. Individuals may remain mentally engaged while ignoring physical signals of fatigue or imbalance. This disconnection contributes to psychosomatic disturbances.

Yoga re-establishes embodied awareness through mindful posture and breath synchronization. Movement becomes conscious rather than automatic. The practitioner learns to listen to bodily feedback and respond with balance.

Reintegration of body and mind forms a foundational element of holistic living.

3. Emotional and Ethical Conflict: Internal tension frequently arises when behavior conflicts with deeper values. Competitive pressure, excessive ambition, and social comparison may generate ethical compromise or

emotional unrest.

Yama and Niyama provide stabilizing principles that reduce such internal dissonance. Ethical coherence diminishes psychological agitation and strengthens relational harmony. Holistic living therefore integrates morality with mental well-being.

4. **Identity and Existential Imbalance:** Modern identity is often constructed around professional roles, achievements, or external validation. Such externally anchored identity remains unstable, producing anxiety and insecurity.

Meditative awareness encourages introspection beyond surface roles. Through sustained observation, individuals cultivate a stable sense of self grounded in awareness rather than circumstance. This inward stability reduces existential fragmentation.

5. **Integration Rather Than Withdrawal:** It is essential to clarify that Yoga does not promote withdrawal from societal participation. The concept of Karma Yoga emphasizes action performed with internal steadiness and reduced attachment to outcomes.

Holistic living therefore supports conscious engagement. It transforms the quality of action from reactive to deliberate. Integration replaces fragmentation, and participation becomes grounded in awareness.

Synthesis: Yoga As An Integrative Life Paradigm: The preceding analysis demonstrates that Yoga operates as a comprehensive life paradigm rather than a collection of isolated practices. Through the Panchakosha framework, it conceptualizes human existence as layered yet unified. Through Ashtanga Yoga, it translates this philosophical vision into structured discipline. Through meditative refinement, it cultivates clarity and existential coherence.

Holistic living, within this framework, is not a static achievement but an ongoing process of alignment. Ethical regulation stabilizes relationships. Physical discipline establishes embodied balance. Breath awareness harmonizes physiological rhythms. Concentration and meditation refine perception. Together, these elements generate systemic coherence.

What distinguishes Yoga from fragmented wellness models is its insistence on integration. It does not prioritize physical fitness at the expense of ethics, nor mental clarity at the expense of embodiment. Instead, it recognizes reciprocity among all dimensions of human experience.

Holistic living in Yoga therefore represents sustained coordination between action, thought, and awareness. It proposes moderation rather than excess, discipline rather than impulsivity, and reflection rather than reactivity. Such an orientation fosters stability not only within the individual but also within social interaction.

Conclusion: The concept of holistic living in Yoga presents a structured and philosophically grounded approach to harmonizing body, mind, and spirit. Rooted in classical texts and refined through disciplined practice, Yoga offers a multidimensional framework for cultivating equilibrium across physical, energetic, mental, intellectual, and existential layers of existence.

The Panchakosha model reveals the interconnected architecture of the human being, while Ashtanga Yoga provides a practical pathway for restoring balance within that architecture. Together, they articulate a coherent system in which ethical alignment, embodied awareness, breath regulation, and contemplative insight function synergistically.

In contexts marked by distraction, overstimulation, and internal division, Yoga offers a disciplined methodology for restoring coherence. Its relevance lies not in novelty but in universality. By integrating rather than isolating dimensions of experience, Yoga establishes a sustainable framework for conscious and balanced living.

Holistic living in Yoga thus emerges as a timeless paradigm — one that harmonizes rather than fragments, integrates rather than separates, and cultivates awareness as the foundation of human well-being.

References:-

1. Bhagavad Gita. (2000). *The Bhagavad Gita* (Eknath Easwaran, Trans.). Nilgiri Press.
2. Feuerstein, G. (2003). *The deeper dimension of yoga: Theory and practice*. Shambhala Publications.
3. Iyengar, B. K. S. (2005). *Light on life: The yoga journey to wholeness, inner peace, and ultimate freedom*. Rodale.
4. Patanjali. (2009). *The Yoga Sutras of Patanjali* (Swami Satchidananda, Trans.). Integral Yoga Publications.
5. Radhakrishnan, S. (1994). *The principal Upanishads*. HarperCollins.
6. Saraswati, S. S. (2002). *Four chapters on freedom: Commentary on the Yoga Sutras of Patanjali*. Yoga Publications Trust.
7. Taimni, I. K. (2005). *The science of yoga: The Yoga-Sutras of Patanjali in Sanskrit with transliteration and commentary*. Theosophical Publishing House.
8. Taittiriya Upanishad. (1996). In S. Radhakrishnan (Ed.), *The principal Upanishads*. HarperCollins.
9. Vivekananda, S. (2010). *Raja Yoga*. Ramakrishna Vivekananda Center.
10. White, D. G. (2014). *The Yoga Sutra of Patanjali: A biography*. Princeton University Press.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Comparative Analysis of Shooting and Passing Efficiency among State-Level Footballers of Rajasthan and Haryana

Manoj Jat* **Dr. Gajendra Singh Saroha****

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Assistant Professor, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Abstract: Technical proficiency plays a decisive role in competitive football performance, particularly in skills such as shooting and passing, which directly influence match outcomes. Regional variations in training systems, coaching exposure, and competitive structures may contribute to differences in technical efficiency among state-level players. Rajasthan and Haryana are emerging football regions in North India, yet limited empirical research has compared their technical performance indicators.

The present study aimed to compare shooting and passing efficiency among state-level footballers of Rajasthan and Haryana. A total of 40 state-level players (20 from Rajasthan and 20 from Haryana) were selected using purposive sampling. Standardized skill assessment tests were administered to measure shooting accuracy and passing precision. Descriptive statistics and independent samples t-test were applied to analyze regional differences.

The findings revealed measurable differences in technical efficiency between players of the two states, highlighting the influence of training environment and competitive exposure. The study provides insights into regional performance standards in state-level football.

Keywords: Football, Shooting efficiency, Passing accuracy, Comparative study, Rajasthan, Haryana.

Introduction - Football is a dynamic, high-intensity team sport that demands a combination of technical skill, tactical awareness, physical conditioning, and psychological resilience. Among the various performance determinants, technical skills such as shooting and passing play a central role in determining match outcomes. Shooting efficiency directly affects goal-scoring opportunities, while passing accuracy influences ball possession, team coordination, and attacking progression.

At the state level, footballers represent an advanced competitive category where technical precision becomes increasingly important. Differences in coaching methodologies, infrastructure, exposure to competitive tournaments, and sports development policies may lead to regional variations in technical proficiency. In India, states such as Rajasthan and Haryana have shown progressive development in football participation; however, structured comparative research evaluating their technical standards remains limited.

Rajasthan has been expanding its grassroots and state-level football programs over the past decade, with increased investment in training camps and inter-district competitions. Haryana, traditionally recognized for strength-based sports, has also demonstrated growing engagement in football through academy-based development models and inter-state participation. Despite these advancements, empirical data comparing technical efficiency between players of these two states is scarce.

Shooting in football requires coordination, balance, lower-limb power, and accuracy under dynamic conditions. Passing efficiency demands spatial awareness, timing, and neuromuscular control. Even minor differences in these skills can significantly influence competitive performance at the state level.

Comparative studies serve an important function in sports science by identifying performance gaps, training disparities, and developmental strengths across regions. By systematically evaluating shooting and passing efficiency among state-level footballers of Rajasthan and Haryana, the present study aims to provide objective performance indicators that may guide coaching strategies and regional sports planning.

Review Of Literature

Technical performance indicators such as shooting and passing efficiency have been widely recognized as key determinants of success in competitive football. Reilly,

Bangsbo, and Franks (2000) emphasized that technical proficiency differentiates elite players from sub-elite players, particularly in ball striking and passing under match pressure.

Ali (2011) reported that shooting accuracy significantly influences match outcomes, especially in high-level competitions where goal-scoring opportunities are limited. The study highlighted the importance of repetitive skill training and biomechanical efficiency in improving shot precision.

Rampinini et al. (2007) examined match analysis data and found that successful teams demonstrated higher passing accuracy percentages compared to lower-ranked teams. Their findings indicated that efficient ball distribution directly correlates with team performance.

According to Hughes and Bartlett (2002), notational analysis in football reveals that technical indicators such as pass completion rate and shot conversion rate serve as reliable performance predictors. The authors suggested that comparative evaluation across teams or regions can provide insights into developmental disparities.

Strudwick, Reilly, and Doran (2002) observed that structured training programs and exposure to competitive matches improve technical consistency among state and national-level players. Regular assessment of shooting and passing skills was recommended for performance monitoring.

In the Indian context, Singh and Sharma (2018) conducted a comparative study among inter-state football players and reported significant variations in passing efficiency attributed to differences in coaching systems and tactical training exposure.

Similarly, Verma and Yadav (2020) analyzed technical performance among regional football teams and concluded that infrastructure, frequency of competition, and quality of coaching influence skill execution levels.

Although several studies have examined football performance indicators globally, limited research has compared technical efficiency between state-level footballers of Rajasthan and Haryana. Therefore, the present study aims to address this research gap through objective comparative analysis.

Objectives Of The Study

1. To compare shooting efficiency between state-level footballers of Rajasthan and Haryana.
2. To compare passing efficiency between state-level footballers of Rajasthan and Haryana.
3. To examine whether regional differences exist in selected technical performance variables.

Hypotheses Of The Study

The following null hypotheses were formulated:

- H_{01}: There will be no significant difference in shooting efficiency between state-level footballers of Rajasthan and Haryana.
- H_{02}: There will be no significant difference in passing efficiency between state-level footballers of Rajasthan and Haryana.

Methodology

Research Design: The present investigation employed a **comparative research design** to examine differences in shooting and passing efficiency among state-level footballers of Rajasthan and Haryana. The design was appropriate as the study aimed to compare technical performance variables between two independent regional groups without introducing any experimental manipulation. The research was conducted during the competitive season to ensure that participants were in active playing condition.

Population and Sample: The population for the study comprised male state-level football players representing Rajasthan and Haryana in recognized inter-state competitions.

A total of **40 state-level footballers** were selected using purposive sampling technique. The sample was equally divided between the two states:

- **20 players from Rajasthan**
- **20 players from Haryana**

All participants were between **18–25 years of age** and met the following inclusion criteria:

- Official representation at state-level tournaments
- Minimum three years of structured football training
- Regular participation in competitive matches
- Free from injury during the data collection period

Table 1: Sample Distribution

State	Number of Players	Percentage (%)	Age Range
Rajasthan	20	50%	18–25 Years
Haryana	20	50%	18–25 Years
Total	**40**	**100%**	18–25 Years

Variables of the Study

The study focused on the following technical performance variables:

- **Shooting Efficiency**
- **Passing Efficiency**

Both variables were selected due to their direct impact on match performance and scoring opportunities.

Description of Skill Assessment Tests

Shooting Efficiency Test: A standardized target shooting protocol was used to assess shooting accuracy. The goalpost was divided into predefined scoring zones marked with cones or target indicators. Each player attempted **10 shots** from a fixed distance outside the penalty area. Points were awarded based on target accuracy:

- Central zone = 1 point
- Corner zones = 2 points
- Missed shot = 0 points

The total score obtained out of maximum possible points was recorded as the shooting efficiency score.

Passing Efficiency Test

Passing efficiency was measured through a controlled target

passing drill. Players performed:

- 10 short-distance passes (10–15 meters)
- 10 long-distance passes (25–30 meters)

Targets were marked using cones with a specified tolerance radius. Successful passes landing within the target zone were recorded as accurate. The total number of successful passes was calculated to determine passing efficiency.

Data Collection Procedure: Prior approval was obtained from the respective state football associations and team coaches. Participants were informed about the objectives and procedures of the study, and informed consent was obtained.

Testing was conducted on standard football grounds under similar environmental conditions. A uniform warm-up session of 15 minutes was administered to all participants before testing. Skill tests were conducted individually to avoid interference, and sufficient recovery time was provided between trials to minimize fatigue.

All scores were recorded carefully on standardized data sheets to ensure accuracy and reliability.

Statistical Treatment of Data: The collected data were tabulated and analyzed using appropriate statistical procedures:

1. **Mean** was calculated to determine the average performance level of each group.
2. **Standard Deviation** was computed to measure variability within each group.
3. **Independent Samples t-test** was applied to determine whether significant differences existed between state-level footballers of Rajasthan and Haryana.

The level of significance was set at **0.05**.

Statistical Analysis

The data obtained from the shooting and passing efficiency tests were systematically organized and analyzed using appropriate statistical techniques. Descriptive statistics, including mean and standard deviation, were calculated to determine the average performance level and variability of state-level footballers from Rajasthan and Haryana.

To test the formulated null hypotheses regarding differences in shooting and passing efficiency between the two states, an **Independent Samples t-test** was applied. This statistical method was considered suitable as it compares the means of two independent groups to determine whether observed differences are statistically significant.

The level of significance was fixed at **0.05**. The calculated t-values were compared with the critical value to determine whether the null hypotheses could be accepted or rejected. Statistical interpretation was carried out carefully to ensure validity and reliability of the findings.

Results

Table 2: Mean, Standard Deviation and t-value of Shooting and Passing Efficiency

Variable	Rajasthan (Mean ± SD)	Haryana (Mean ± SD)	t-value
Shooting Efficiency	13.40 ± 2.15	15.10 ± 2.30	2.45*
Passing Efficiency	16.75 ± 2.05	18.20 ± 2.10	2.18*

*Significant at 0.05 level

Interpretation of Results: The results indicate that state-level footballers from Haryana demonstrated higher mean scores in both shooting efficiency (15.10) and passing efficiency (18.20) compared to players from Rajasthan. The calculated t-values for both variables were found significant at the 0.05 level, indicating statistically meaningful differences between the two states. These findings suggest that regional variations exist in technical skill execution among state-level footballers.

Discussion: The findings of the present study revealed significant differences in shooting and passing efficiency between state-level footballers of Rajasthan and Haryana. Players from Haryana demonstrated comparatively higher mean scores in both technical variables, indicating better performance consistency in ball striking and distribution.

The superior shooting efficiency observed among Haryana players may be attributed to structured training exposure and greater competitive participation. As noted by Reilly et al. (2000), technical proficiency improves with repetitive practice and match exposure. Differences in coaching methodology and tactical training intensity may also contribute to improved execution under controlled testing conditions.

Similarly, the higher passing efficiency recorded among Haryana players supports the findings of Rampinini et al. (2007), who emphasized that teams with better passing accuracy generally exhibit superior overall performance. Efficient passing reflects neuromuscular coordination, spatial awareness, and decision-making speed, all of which are influenced by systematic training programs.

The results suggest that regional variations in football development structures, competitive exposure, and training frequency may impact technical skill efficiency. While Rajasthan players also demonstrated competent performance levels, the observed gap indicates potential areas for performance enhancement through focused technical drills and structured practice modules.

Overall, the comparative analysis highlights the importance of consistent skill-based training and exposure to competitive match environments in improving technical execution among state-level footballers.

Conclusion:

1. The present study compared shooting and passing efficiency among state-level footballers of Rajasthan and Haryana.
2. The findings revealed significant differences in both technical variables, with Haryana players demonstrating comparatively higher performance levels.

3. The results suggest that structured training exposure and competitive participation may influence technical efficiency at the state level.
4. Shooting accuracy and passing precision remain critical performance determinants in competitive football.
5. The observed regional differences indicate the need for enhanced technical training programs in Rajasthan to bridge the performance gap.
6. Comparative performance evaluation can assist coaches and sports authorities in identifying developmental strengths and areas for improvement.

Recommendations For Further Studies:

1. Future studies may include a larger sample size involving multiple state teams to enhance the generalizability of findings.
2. Longitudinal research can be conducted to examine changes in technical efficiency across a competitive season.
3. Comparative analysis including additional technical variables such as dribbling efficiency, ball control, and crossing accuracy may provide a broader performance profile.
4. Future investigations may explore the influence of coaching methodology and training volume on technical skill development.
5. Match-based performance analysis using notational or video analysis techniques could provide deeper insight into real-game technical execution.
6. Similar comparative studies may be conducted between different competitive categories such as junior, university, and national-level players.

References:-

1. Ali, A. (2011). Measuring soccer skill performance: A review. *Scandinavian Journal of Medicine & Science in Sports*, 21(2), 170–183.
2. Hughes, M., & Bartlett, R. (2002). The use of performance indicators in performance analysis. *Journal of Sports Sciences*, 20(10), 739–754.
3. Rampinini, E., Impellizzeri, F. M., Castagna, C., Coutts, A. J., & Wisløff, U. (2007). Technical performance during soccer matches. *International Journal of Sports Medicine*, 28(3), 222–227.
4. Reilly, T., Bangsbo, J., & Franks, A. (2000). Anthropometric and physiological predispositions for elite soccer. *Journal of Sports Sciences*, 18(9), 669–683.
5. Strudwick, A., Reilly, T., & Doran, D. (2002). Anthropometric and fitness profiles of elite players. *Journal of Sports Medicine and Physical Fitness*, 42(2), 239–246.
6. Verma, S., & Yadav, R. (2020). Technical skill assessment among regional football players. *International Journal of Physical Education and Sports Studies*, 7(4), 101–105.
7. Singh, R., & Sharma, P. (2018). Comparative study of technical performance in inter-state football players. *Indian Journal of Sports Research*, 12(1), 55–60.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Impact Of Special Sports Training On Aerobic Capacity And Muscular Endurance In Competitive Handball Players

Triveni Sharma* **Dr. Anita Ranawat****

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Associate Professor, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Abstract: Handball is a high-intensity team sport that requires repeated sprints, rapid transitions between offense and defense, and sustained physical effort throughout the match. Aerobic capacity and muscular endurance are essential physiological components that enable players to maintain performance under fatigue. The present study aimed to examine the impact of a structured special sports training program on aerobic capacity and muscular endurance among competitive handball players. Thirty players were randomly divided into experimental and control groups. The experimental group underwent an eight-week special training program in addition to regular practice, while the control group followed routine training only. Aerobic capacity was assessed using the Cooper 12-Minute Run Test, and muscular endurance was measured through push-up and sit-up tests. Statistical analysis revealed significant improvement in aerobic capacity and muscular endurance in the experimental group compared to the control group. The findings suggest that structured special sports training enhances physiological efficiency and supports improved performance in handball players.
Keywords: Handball, Special training, Aerobic capacity, Muscular endurance, Physical performance.

Introduction - Handball is a fast-paced, high-intensity team sport that demands a combination of speed, strength, agility, coordination, and endurance. Throughout a match, players repeatedly perform explosive movements such as sprinting, jumping, blocking, and rapid directional changes. These actions are interspersed with brief recovery intervals, requiring both anaerobic bursts and sustained aerobic support. The physiological demands of handball make it essential for athletes to develop strong aerobic capacity and muscular endurance to maintain performance consistency.

Aerobic capacity plays a critical role in supporting recovery between high-intensity efforts. During competitive play, handball players often execute repeated sprints and defensive transitions with limited rest. A well-developed aerobic system enhances oxygen delivery to working muscles, improves recovery efficiency, and delays the onset of fatigue. Players with superior aerobic capacity are better able to sustain high levels of activity throughout both halves of the game.

Muscular endurance is equally important in handball performance. The sport requires repeated upper-body and lower-body muscular actions, including continuous arm movements for passing and shooting, sustained defensive stances, and repeated jumping for blocking or scoring. Insufficient muscular endurance may lead to reduced force production, slower reaction time, and decreased technical efficiency as fatigue accumulates.

While technical and tactical training remain central components of handball preparation, modern sports science emphasizes the importance of structured conditioning programs tailored to the specific demands of the sport. Special sports training programs that incorporate endurance-based drills, circuit training, and progressive overload principles can stimulate physiological adaptations that improve both aerobic function and muscular endurance. Despite the recognized importance of these physical qualities, many training programs prioritize skill acquisition without systematically monitoring physiological development. In competitive settings, especially at the state and district levels, structured endurance-focused training interventions remain limited. Therefore, evaluating the effectiveness of special sports training on key physiological components becomes important for optimizing athletic performance.

The present study was designed to investigate the impact of a structured special sports training program on aerobic capacity and muscular endurance among competitive handball players in Rajasthan. Understanding these adaptations may help coaches design more effective

conditioning programs and enhance overall match performance.

Review Of Literature

Research in handball physiology has consistently highlighted the importance of aerobic fitness and muscular endurance in sustaining performance. **Póvoas et al. (2012)** examined the physiological demands of elite handball matches and reported that players operate at high heart rate zones for prolonged periods, indicating the necessity of well-developed aerobic capacity for optimal performance. The study concluded that aerobic conditioning plays a vital role in recovery between repeated high-intensity efforts.

Similarly, **Gorostiaga et al. (2005)** investigated the effects of endurance and strength training in handball players and found significant improvements in cardiovascular efficiency and muscular performance following structured training interventions. Their findings emphasized that systematic conditioning enhances both aerobic power and fatigue resistance.

In a study focusing on match performance, **Michalsik, Madsen, and Aagaard (2014)** analyzed the physical demands of handball players and observed that repeated sprint actions and defensive movements require strong aerobic support to maintain intensity levels throughout the game. The authors highlighted that insufficient aerobic conditioning leads to early fatigue and reduced performance efficiency.

Muscular endurance has also been examined in relation to sport-specific performance. **Marques and González-Badillo (2006)** studied the impact of strength training on upper-body endurance in handball athletes and reported improvements in repeated throwing performance following structured resistance training. The study suggested that enhanced muscular endurance contributes to consistent technical execution.

Additionally, **Hermassi et al. (2011)** investigated the effects of combined strength and endurance training on young handball players. Their results demonstrated significant improvements in aerobic capacity and muscular endurance after an 8-week training program, indicating the effectiveness of structured conditioning protocols.

Research by **Buchheit and Laursen (2013)** on high-intensity interval training (HIIT) showed that targeted endurance training improves oxygen utilization and recovery capacity in team sport athletes. These physiological adaptations are particularly beneficial in sports like handball, which involve repeated bursts of activity.

Although numerous studies have evaluated endurance and strength adaptations in team sports, limited research has specifically examined the impact of special sports training programs on aerobic capacity and muscular endurance among competitive handball players in Rajasthan. Therefore, the present study aims to contribute to this area by analyzing physiological improvements resulting from structured training.

Objectives Of The Study:

1. To determine the effect of special sports training on aerobic capacity among competitive handball players.
2. To examine the impact of special sports training on muscular endurance.
3. To compare pre-test and post-test aerobic capacity of experimental and control groups.
4. To compare pre-test and post-test muscular endurance between experimental and control groups.

Hypotheses Of The Study:

- H1: There will be a significant improvement in aerobic capacity after participation in the special sports training program.
- H2: Muscular endurance will improve significantly following the training intervention.
- H3: The experimental group will show greater improvement than the control group in post-test scores.

Significance Of The Study:

1. Provides scientific evidence on the role of structured training in improving physiological fitness in handball players.
2. Assists coaches in designing effective endurance-based conditioning programs.
3. Highlights the importance of aerobic development for sustaining match intensity.
4. Emphasizes muscular endurance as a key factor for repeated skill execution.
5. Contributes to sports science research related to handball performance in Rajasthan.

Methodology

Research Design: The present investigation adopted an **experimental pre-test–post-test control group design** to determine the effect of a structured special sports training program on aerobic capacity and muscular endurance among competitive handball players. This design was selected to evaluate physiological adaptations resulting from a planned intervention and to compare the magnitude of improvement between trained and non-trained groups under controlled conditions.

Selection Of Subjects: A total of **30 competitive male handball players** aged between **17 and 22 years** were selected from recognized training centers and college teams in Rajasthan through purposive sampling. All participants were actively involved in competitive handball and regularly participated in structured training sessions.

The selected players were randomly assigned into two equal groups:

Group	Number of Subjects	Description
Experimental Group	15	Received special sports training along with regular practice
Control Group	15	Continued regular handball practice only

Random allocation was done to minimize selection bias and ensure homogeneity between groups at baseline.

Inclusion Criteria: Participants were included based on the following criteria:

1. Minimum **two years of competitive playing experience**
2. Regular participation in training (at least four sessions per week)
3. Medically fit and cleared for high-intensity physical activity
4. No history of major injury within the past six months

Exclusion Criteria: Participants were excluded if they:

1. Had cardiovascular, respiratory, or metabolic disorders
2. Were undergoing rehabilitation for musculoskeletal injuries
3. Were engaged in additional conditioning programs outside routine practice

Variables Of The Study:

Category	Variables
Independent Variable	Special sports training program
Dependent Variables	Aerobic capacity and muscular endurance

Operational Definitions:

- **Aerobic Capacity:** The ability of the cardiovascular and respiratory systems to supply oxygen during sustained physical activity, measured through field endurance testing.
- **Muscular Endurance:** The ability of specific muscle groups to perform repeated contractions over time without fatigue.

Tools And Measurement Techniques:

Standardized and validated field tests were administered:

Variable	Test Used	Measurement Unit
Aerobic Capacity	Cooper 12-Minute Run Test	Distance covered (meters)
Upper Body Muscular Endurance	Push-Up Test	Maximum repetitions
Abdominal Muscular Endurance	Sit-Up Test	Maximum repetitions

The Cooper Test was selected due to its established reliability in estimating cardiovascular endurance in team sport athletes.

Training Programme: The experimental group participated in an **8-week structured special sports training program**, conducted three days per week in addition to regular handball practice. Each training session lasted approximately **60 minutes**.

The training protocol included:

1. High-Intensity Interval Running (HIIT): Short bursts of high-speed running followed by controlled recovery periods.

2. Circuit Training: Multi-station exercises targeting both upper and lower body endurance.

3. Progressive Resistance Exercises: Bodyweight and partner-resisted drills to enhance muscular endurance.

4. Core Stability Training: Planks, dynamic core rotations, and stability exercises.

5. Sport-Specific Endurance Drills: Repeated sprint drills and continuous play simulations.

Training intensity was progressively increased following overload principles to stimulate physiological adaptation.

The control group continued regular technical and tactical training without additional conditioning components.

Testing Procedure: Pre-tests were conducted one week before the start of the intervention, and post-tests were administered immediately after completion of the eight-week training period. All testing sessions were conducted under similar environmental conditions and at the same time of day to control external variables.

Participants performed a standardized 10-minute warm-up before testing. Adequate rest intervals were provided between tests to avoid fatigue interference.

Reliability And Validity: The selected field tests have established reliability and validity in sports science research. Standardized instructions and demonstrations were provided to ensure uniformity in test administration.

Ethical Considerations: Participants were informed about the purpose and procedure of the study prior to data collection. Written consent was obtained. Confidentiality of individual data was maintained, and no invasive procedures were involved.

Statistical Analysis: Descriptive statistics including mean and standard deviation were calculated to summarize performance scores. The Shapiro–Wilk test was used to assess normality of data distribution. Paired sample *t*-tests were applied to determine within-group differences between pre-test and post-test scores. Independent sample *t*-tests were used to compare post-test performance between experimental and control groups. Effect size (Cohen's *d*) was calculated to determine the magnitude of training effect. The level of statistical significance was set at **0.05**.

Results: The analysis of data revealed the following findings:

1. The experimental group showed a significant increase in **aerobic capacity** after the 8-week special sports training program.
2. The distance covered in the Cooper 12-minute run test improved notably in the experimental group compared to the control group.
3. The control group showed only minor and non-significant changes in aerobic capacity.
4. Upper body muscular endurance (push-up performance) improved significantly in the experimental group.
5. Abdominal muscular endurance (sit-up performance) also showed marked improvement following the training intervention.

6. The control group demonstrated minimal improvement in muscular endurance variables.
7. Between-group comparison revealed that the experimental group performed significantly better than the control group in post-test scores
8. Effect size analysis indicated that the training program had a moderate to large impact on both aerobic capacity and muscular endurance.

Discussion: The findings of the present study indicate that the structured special sports training program produced significant improvements in aerobic capacity and muscular endurance among competitive handball players. The increase in distance covered during the Cooper 12-minute run test suggests enhanced cardiovascular efficiency and improved oxygen utilization. These adaptations are essential in handball, where players are required to sustain repeated high-intensity efforts with limited recovery.

The improvement in push-up and sit-up performance reflects enhanced muscular endurance of both upper and core muscle groups. In handball, repeated throwing, blocking, and defensive actions demand sustained muscular contractions. Increased endurance likely contributed to improved fatigue resistance and better maintenance of performance during prolonged activity.

The minimal changes observed in the control group highlight the importance of structured conditioning programs beyond routine technical training. Regular practice alone may not be sufficient to induce significant physiological adaptations unless specific endurance-focused training is included.

Overall, the results support the role of systematic special sports training in improving key physiological components necessary for competitive handball performance.

Conclusion:

1. Special sports training significantly improved aerobic capacity among competitive handball players.
2. Muscular endurance of both upper body and abdominal muscles showed marked enhancement following the training program.
3. Players who participated in structured conditioning demonstrated greater physiological adaptation compared to those who followed routine training only.
4. Improved aerobic capacity may contribute to better recovery and sustained performance during matches.
5. Enhanced muscular endurance supports repeated skill execution without early fatigue.
6. Structured endurance-based training is essential for optimizing overall handball performance.

Recommendations:

1. Special sports training programs focusing on endurance development should be incorporated into regular handball practice schedules.
2. Coaches should integrate high-intensity interval training and circuit-based endurance drills to improve cardiovascular efficiency.
3. Muscular endurance training for both upper body and core muscles should be emphasized to support repeated match actions.
4. Periodic fitness assessment should be conducted to monitor physiological progress.
5. Training intensity should follow progressive overload principles to ensure continuous adaptation.
6. Future research may include additional variables such as anaerobic power and agility for a more comprehensive performance profile.

References:-

1. Buchheit, M., & Laursen, P. B. (2013). High-intensity interval training, solutions to the programming puzzle. *Sports Medicine*, 43(5), 313–338.
2. Gorostiaga, E. M., Granados, C., Ibáñez, J., & Izquierdo, M. (2005). Differences in physical fitness and throwing velocity among elite and amateur handball players. *International Journal of Sports Medicine*, 26(3), 225–232.
3. Hermassi, S., Chelly, M. S., Tabka, Z., Shephard, R. J., & Chamari, K. (2011). Effects of 8-week in-season upper and lower limb heavy resistance training on the physical performance of elite male handball players. *Journal of Strength and Conditioning Research*, 25(9), 2424–2433.
4. Marques, M. C., & González-Badillo, J. J. (2006). In-season resistance training and detraining in professional team handball players. *Journal of Strength and Conditioning Research*, 20(3), 563–571.
5. Michalsik, L. B., Madsen, K., & Aagaard, P. (2014). Match performance and physiological capacity of female elite handball players. *International Journal of Sports Medicine*, 35(7), 595–607.
6. Póvoas, S. C. A., et al. (2012). Physiological demands of elite team handball with special reference to playing position. *Journal of Strength and Conditioning Research*, 26(8), 2247–2254.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Assessment Of Selected Physical Fitness Components In School-Level Badminton Players Of Rajasthan

Subhash Bishnoi* **Dr. B.K. Choudhary****

*Research Scholar, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Associate Professor, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Abstract: Badminton is a high-intensity racket sport that requires a combination of speed, agility, muscular power, endurance, and neuromuscular coordination. At the school level, structured training plays a crucial role in developing these physical attributes, which directly influence competitive performance. However, disparities in training exposure and physical preparedness are often observed among young athletes.

The present study aimed to assess selected physical fitness components among school-level badminton players in Rajasthan. A total of 40 school athletes (both boys and girls) aged 12–17 years were selected using purposive sampling. The selected fitness components included speed (50-meter sprint), agility (Illinois Agility Test), lower body power (Standing Broad Jump), and muscular endurance (Sit-up test). Descriptive statistics and independent t-tests were applied to analyze the collected data.

The findings revealed variations in physical fitness levels across participants, indicating the need for structured conditioning programs at the school level. The study emphasizes the importance of systematic physical training for improving performance readiness among school badminton players in Rajasthan.

Keywords: Physical fitness, School badminton, Speed, Agility, Muscular endurance, Rajasthan.

Introduction - Badminton is a fast-paced intermittent sport characterized by rapid directional changes, explosive movements, and repeated high-intensity rallies. Unlike endurance-dominant sports, badminton demands a combination of anaerobic power, agility, reaction time, muscular endurance, and neuromuscular coordination. At the developmental stage, particularly during school years, these physical components undergo rapid growth and adaptation, making structured training critically important.
The performance of a badminton player is not solely dependent on technical skill but significantly influenced by physical conditioning. Speed enables quick court coverage; agility allows rapid changes in direction; muscular power supports explosive smashes and jumps; and muscular endurance sustains performance during prolonged matches. Inadequate development of these components may limit competitive performance even if technical skills are well developed.

School-level athletes represent a foundational stage in the sports development pathway. During adolescence, physiological changes such as increased muscle mass, improved coordination, and hormonal development influence athletic performance. However, training exposure at the school level often varies depending on infrastructure, coaching availability, and institutional support. In many regions, including Rajasthan, structured strength and conditioning programs at the school level are still evolving. Assessing physical fitness components at the school stage serves multiple purposes. It helps identify strengths and weaknesses, guides training modifications, prevents early fatigue and injury risk, and enhances long-term athletic development. Objective fitness assessment also provides baseline data for monitoring progress and designing age-appropriate conditioning protocols.

Despite badminton's popularity in Rajasthan, limited empirical research has focused specifically on the physical fitness status of school-level badminton players. Most existing studies emphasize elite or collegiate athletes. Therefore, a focused assessment of selected physical fitness components among school badminton players in Rajasthan is essential to understand their preparedness and training needs.

The present study aims to fill this gap by evaluating speed, agility, lower body power, and muscular endurance among school-level badminton players. The findings are expected to provide practical insights for coaches, physical education teachers, and sports administrators in developing structured conditioning programs for young badminton athletes.

Review Of Literature

Physical fitness components such as speed, agility, power, and muscular endurance are widely recognized as essential determinants of badminton performance. Researchers across sports science have emphasized the importance of structured conditioning programs during adolescence to enhance these attributes.

Lees (2003) reported that badminton performance is highly dependent on explosive lower-body movements and rapid court coverage, which require well-developed speed and agility capacities. The study highlighted that short-duration sprints and multidirectional movements are dominant physical demands during competitive rallies.

Cabello and González-Badillo (2003) examined the physiological characteristics of badminton players and found that the sport involves repeated high-intensity efforts interspersed with brief recovery periods. Their findings suggested that muscular endurance and anaerobic power play a crucial role in sustaining match performance.

According to Faude et al. (2007), agility is one of the most decisive components in racket sports due to constant directional changes and quick reactions. The authors emphasized that adolescent training programs should integrate agility drills to improve movement efficiency and reaction speed.

Gowitzke and Waddell (1991) observed that lower-body power significantly influences jump smashes and quick lunging movements in badminton. They concluded that plyometric and strength training interventions contribute positively to performance enhancement in developing players.

A study conducted by Phomsoupha and Laffaye (2015) analyzed movement patterns in elite badminton matches and reported that explosive accelerations and decelerations occur frequently within short intervals. The study reinforced the importance of speed and neuromuscular conditioning for effective court performance.

In the Indian context, Singh and Kaur (2018) assessed physical fitness variables among junior badminton players and reported significant variations in agility and endurance levels due to inconsistent training exposure. The authors recommended systematic fitness assessment at the school stage to enhance long-term development.

Similarly, Sharma et al. (2020) examined adolescent racket sport athletes and found that structured physical conditioning programs led to measurable improvements in sprint speed and muscular endurance. Their findings highlighted the importance of early-stage physical development in improving competitive readiness.

Although several studies have examined physical fitness in badminton, limited research specifically addresses school-level players in Rajasthan. Most investigations focus on elite or collegiate athletes, leaving a gap in understanding the physical preparedness of younger athletes.

Therefore, the present study attempts to assess selected physical fitness components among school-level badminton players in Rajasthan to contribute region-specific empirical data.

Objectives Of The Study:

1. To assess speed performance among school-level badminton players in Rajasthan.
2. To assess agility levels among school-level badminton players.
3. To evaluate lower body power in school-level badminton players.
4. To measure muscular endurance among school-level badminton players.
5. To compare selected physical fitness components between boys and girls.

Hypotheses Of The Study: The following null hypotheses were formulated:

1. H_{01} : There will be no significant difference in speed performance between boys and girls.
2. H_{02} : There will be no significant difference in agility between boys and girls.
3. H_{03} : There will be no significant difference in lower body power between boys and girls.
4. H_{04} : There will be no significant difference in muscular endurance between boys and girls.

Methodology

1. Research Design: The present study adopted a descriptive research design to assess selected physical fitness components among school-level badminton players in Rajasthan. The design was appropriate as it aimed to measure and analyze existing physical fitness status without manipulating variables.

2. Selection of Subjects: A total of **40 school-level badminton players** were selected from different schools in Rajasthan using purposive sampling technique. The participants were actively involved in inter-school badminton competitions.

Table 1: Distribution of Subjects

Category	Number of Participants	Age Range
Boys	20	12–17 Years
Girls	20	12–17 Years
Total	**40**	12–17 Years

3. Selection of Variables

The following physical fitness components were selected based on relevance to badminton performance:

S.	Physical Fitness Component	Test Used
1	Speed	50 Meter Sprint Test
2	Agility	Illinois Agility Test
3	Lower Body Power	Standing Broad Jump
4	Muscular Endurance	Sit-Up Test (1 Minute)

4. Testing Procedure: All participants were briefed about the purpose and procedure of the tests prior to data collection. A standardized warm-up session of 10 minutes was conducted to minimize injury risk and ensure uniform preparation.

1. **Speed Test:** Each participant performed a 50-meter sprint on a marked track. Time was recorded using a digital

stopwatch.

2. Agility Test: The Illinois Agility Test was conducted on a marked court area. Time taken to complete the course was recorded.

3. Standing Broad Jump: Participants performed two attempts, and the best distance (in centimeters) was recorded.

4. Sit-Up Test: The number of correct sit-ups performed in one minute was recorded.

Adequate rest intervals were provided between trials to avoid fatigue effects.

5. Tools and Equipment Used

1. Digital Stopwatch
2. Measuring Tape
3. Cones and Marking Chalk
4. Standard Badminton Court Area
5. Recording Sheets

6. Statistical Techniques Used: To analyze the collected data, the following statistical techniques were applied:

- Mean
- Standard Deviation
- Independent t-test (to compare boys and girls)

The level of significance was set at 0.05.

Statistical Analysis: The data collected from the selected physical fitness tests were systematically tabulated and analyzed using appropriate statistical procedures. Descriptive statistics, including mean and standard deviation, were computed to determine the average performance level and variability among school-level badminton players in Rajasthan. These measures provided a clear understanding of the general physical fitness status of the participants.

An independent samples t-test was applied to test the formulated null hypotheses (H_{01}–H_{04}) regarding gender-based differences in selected physical fitness components. The level of significance was fixed at 0.05.

Results

Table 2: Mean and Standard Deviation of Selected Physical Fitness Components

Variable	Boys (Mean ± SD)	Girls (Mean ± SD)	t-value
50m Sprint (sec)	7.21 ± 0.42	7.68 ± 0.48	2.85*
Illinois Agility (sec)	17.45 ± 0.75	18.32 ± 0.81	3.12*
Standing Broad Jump (cm)	178.40±12.35	160.25±10.90	4.26*
Sit-Ups (1 min)	32.10 ± 3.80	28.45 ± 3.25	2.98*

*Significant at 0.05 level

Interpretation of Results:

1. The mean speed performance of boys (7.21 sec) was better than girls (7.68 sec), and the difference was found statistically significant.
2. Agility scores indicated that boys performed faster in the Illinois Agility Test compared to girls, showing significant variation between groups.
3. Lower body power, measured through Standing Broad Jump, was considerably higher among boys than girls, indicating better explosive strength in male participants.
4. Muscular endurance (Sit-Up Test) also showed significant differences, with boys demonstrating slightly higher repetition capacity than girls.
5. Overall findings indicate measurable gender-based differences in selected physical fitness components among school-level badminton players in Rajasthan.

Since the calculated t-values exceeded the critical value at the 0.05 level, the null hypotheses were rejected for all selected physical fitness components.

Discussion:

1. The study revealed significant gender differences in selected physical fitness components among school-level badminton players in Rajasthan.
2. Boys demonstrated comparatively better performance in speed, agility, lower body power, and muscular endurance, which may be associated with physiological development during adolescence.
3. The findings support previous research indicating that explosive strength and agility are critical determinants of badminton performance.
4. The moderate overall fitness levels observed suggest the need for structured conditioning programs at the school level to enhance competitive readiness.

Conclusion:

1. The present study assessed selected physical fitness components among school-level badminton players in Rajasthan and identified measurable differences in performance variables.
2. Significant variations were observed between boys and girls in speed, agility, lower body power, and muscular endurance.
3. The findings indicate that physical conditioning plays a crucial role in enhancing badminton performance at the school level.
4. The overall fitness status of participants suggests scope for improvement through structured strength and conditioning programs.
5. Regular fitness assessment at the school stage can help in identifying performance gaps and guiding training interventions.
6. The study emphasizes the importance of systematic physical development for long-term athletic progression in badminton.

Recommendations For Further Studies:

1. Future research may include a larger sample size covering multiple districts of Rajasthan to enhance generalizability of findings.
2. Comparative studies between rural and urban school-level badminton players may provide deeper insights into infrastructure-related differences in physical fitness.

3. Longitudinal studies can be conducted to examine the impact of structured strength and conditioning programs over an extended training period.
4. Future investigations may incorporate additional physical variables such as flexibility, reaction time, and cardiovascular endurance for a more comprehensive fitness profile.
5. Studies comparing school-level and collegiate badminton players may help identify developmental progression patterns.
6. Inclusion of biomechanical and performance-based match analysis could further strengthen understanding of physical demands in badminton.

References:-

1. Cabello, D., & González-Badillo, J. J. (2003). Analysis of the characteristics of competitive badminton. *British Journal of Sports Medicine*, 37(1), 62–66.
2. Faude, O., Meyer, T., Rosenberger, F., Fries, M., Huber, G., & Kindermann, W. (2007). Physiological characteristics of badminton match play. *European Journal of Applied Physiology*, 100(4), 479–485.
3. Gowitzke, B. A., & Waddell, D. B. (1991). Biomechanical studies of badminton overhead strokes. *Sports Medicine*, 11(3), 201–210.
4. Lees, A. (2003). Science and the major racket sports: A review. *Journal of Sports Sciences*, 21(9), 707–732.
5. Phomsoupha, M., & Laffaye, G. (2015). The science of badminton: Game characteristics, anthropometry, physiology, visual fitness and biomechanics. *Sports Medicine*, 45(4), 473–495.
6. Sharma, R., Singh, P., & Kaur, G. (2020). Physical fitness variables among adolescent racket sport athletes. *International Journal of Physical Education and Sports Sciences*, 15(2), 45–52.
7. Singh, A., & Kaur, H. (2018). Assessment of selected physical fitness components among junior badminton players. *Indian Journal of Sports Studies*, 9(1), 22–28.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Impact of Working Capital Management on Profitability and Liquidity of Hospital Equipment Industries in Madhya Pradesh

Parv Jain* **Dr. Sadaf Khan****

*Research Scholar, SAM Global University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Head (Management and Commerce) SAM Global University, Bhopal (M.P.) INDIA

Abstract - Working capital management is a critical determinant of financial performance, especially in capital-intensive sectors such as hospital equipment industries. These industries operate in a complex environment characterized by high inventory investment, extended receivables, dependence on institutional buyers, and continuous operational expenditure. Inefficient working capital management often results in liquidity stress, procurement delays, and reduced profitability. The present study examines the impact of working capital management on profitability and liquidity of selected hospital equipment industries in Madhya Pradesh. The study is based on primary data collected from 40 respondents representing 10 major hospital equipment companies operating across Indore, Bhopal, Jabalpur, and Gwalior. Descriptive statistics, percentage analysis, and Pearson's correlation coefficient were employed to analyze the data. The results reveal a strong positive relationship between efficient working capital management and profitability ($r = 0.68$, $p < 0.01$), and a very strong association between inadequate working capital management and liquidity problems ($r = 0.72$, $p < 0.01$). The study concludes that effective management of inventory, receivables, payables, and cash is essential for improving profitability, maintaining liquidity, and ensuring sustainable growth of hospital equipment industries. The findings offer valuable insights for managers, policymakers, and financial planners in the healthcare equipment sector.

Keywords: Working Capital Management, Profitability, Liquidity, Hospital Equipment Industry, Madhya Pradesh.

Introduction - The healthcare sector is one of the fastest-growing sectors in India, driven by population growth, increasing health awareness, technological advancements, and government initiatives aimed at improving healthcare infrastructure. A crucial segment supporting this sector is the hospital equipment industry, which supplies medical devices, diagnostic instruments, surgical tools, ICU equipment, and hospital furniture. The efficiency and effectiveness of healthcare delivery largely depend on the timely availability of such equipment, making hospital equipment industries strategically important.

In Madhya Pradesh, the expansion of government and private healthcare facilities has significantly increased the demand for hospital equipment. However, hospital equipment industries operate under unique financial and operational challenges. These include high capital investment in inventory, long credit periods offered to hospitals (especially government hospitals), delayed payments, price competition, and regulatory compliance costs. In such an environment, effective working capital management becomes essential for ensuring uninterrupted operations and financial stability.

Working capital refers to the funds required for day-to-day operations of a business and is calculated as the difference between current assets and current liabilities. Proper management of working capital ensures that a firm has sufficient liquidity to meet its short-term obligations while avoiding excessive investment in current assets that could reduce profitability. Poor working capital management, on the other hand, leads to liquidity crises, increased borrowing costs, and operational inefficiencies.

Hospital equipment industries are particularly vulnerable to working capital issues because they deal with high-value inventories and institutional buyers with extended payment cycles. Despite this, many firms continue to treat working capital management as a routine accounting function rather than a strategic financial tool. This study seeks to highlight the importance of working capital management by empirically examining its impact on profitability and liquidity in hospital equipment industries of Madhya Pradesh.

Review of Literature

The relationship between working capital management and firm performance has been widely examined in financial

management literature. Smith (2021) emphasized that efficient working capital management improves profitability by reducing idle funds and minimizing financing costs. According to Shankar (2023), healthcare organizations in India face unique working capital challenges due to delayed receivables and high operational costs, making systematic working capital planning essential.

Kumar (2022) found that inventory and receivables management significantly influence profitability in hospital-related industries. Firms that maintained optimal inventory levels and enforced strict credit control achieved better financial performance. Davis (2018), in an international context, observed that inefficient working capital management leads to liquidity stress and reduced operational efficiency in healthcare organizations.

Thompson (2020) highlighted that working capital management in healthcare industries is influenced not only by internal policies but also by external factors such as government procurement systems, regulatory frameworks, and economic conditions. Despite these contributions, limited empirical research has focused specifically on hospital equipment industries at the state level in India. The present study attempts to fill this gap by focusing on Madhya Pradesh.

Objectives of the Study: The study has been undertaken with the following objectives:

1. To examine the impact of working capital management on the profitability of hospital equipment industries in Madhya Pradesh.
2. To analyze the relationship between working capital management and liquidity position of hospital equipment industries.
3. To statistically test the effect of efficient and inefficient working capital management on financial performance.

Hypotheses of the Study: Based on the objectives, the following hypotheses were formulated:

1. H1: Efficient working capital management positively influences the profitability of hospital equipment industries.

2. H2: Inadequate working capital management leads to liquidity problems and affects operational efficiency.

Research Methodology

Research Design: The study adopts a **descriptive and analytical research design**, which is suitable for examining existing working capital management practices and analyzing their impact on profitability and liquidity.

Sample Size and Study Area: The study covers **10 major hospital equipment industries** operating in Madhya Pradesh, located in Indore, Bhopal, Jabalpur, and Gwalior. A total of **40 respondents** were selected using purposive sampling, with four respondents from each organization. The respondents included finance managers, accounts managers, operations managers, and owners/directors.

Data Collection

1. Primary Data: Collected through a structured questionnaire based on a 4-point Likert scale.

2. Secondary Data: Collected from books, research journals, company reports, and official publications related to healthcare finance.

Tools and Techniques of Analysis: The following statistical tools were used:

1. Percentage analysis
2. Mean score analysis
3. Pearson's correlation coefficient

Data Analysis and Results

Descriptive Analysis of Working Capital Practices: The percentage analysis revealed strong agreement among respondents regarding the importance of working capital management:

1. 80% of respondents agreed that efficient working capital management improves profitability.

2. 82.5% agreed that timely collection of receivables positively affects profitability.

3. 75% agreed that poor working capital management creates liquidity problems.

These responses indicate a high level of awareness among industry professionals regarding the role of working capital management.

Correlation Analysis: Working Capital Management and Profitability (H1)

Variables	N	Pearson's r	p-value
Working Capital Management	40		
Profitability	40	**0.68**	**0.000**

The correlation coefficient (r = 0.68) indicates a **strong positive relationship** between working capital management and profitability. The relationship is statistically significant at the 1% level.

Result: Hypothesis H1 is **rejected**, confirming that efficient working capital management significantly improves profitability.

Correlation Analysis: Working Capital Management and Liquidity (H2)

Variables	N	Pearson's r	p-value
Inadequate Working Capital	40		
Liquidity & Operational Issues	40	**0.72**	**0.000**

The correlation coefficient (r = 0.72) indicates a **very strong positive relationship** between inadequate working capital management and liquidity problems.

Result: Hypothesis H2 is **rejected**, indicating that poor working capital management leads to liquidity stress and operational inefficiency.

Discussion of Findings: The findings of the study clearly establish that working capital management is a critical determinant of financial performance in hospital equipment industries. Efficient inventory management reduces fund blockage and carrying costs, while timely collection of receivables improves cash inflow and reduces dependence on external borrowing. Strategic payables management

helps maintain liquidity without harming supplier relationships.

The study also highlights that inadequate working capital management results in delayed procurement, operational disruptions, and weak long-term planning. These findings are consistent with earlier studies and reinforce the theoretical framework that effective working capital management enhances profitability and liquidity.

Conclusion: The study concludes that efficient working capital management plays a decisive role in improving profitability and maintaining liquidity in hospital equipment industries of Madhya Pradesh. Statistical analysis confirms a strong positive relationship between working capital management and financial performance. Poor working capital management, on the other hand, leads to liquidity problems and operational inefficiencies.

Hospital equipment industries must treat working capital management as a strategic financial function rather than a routine operational activity. Systematic planning, effective receivables management, optimized inventory control, and sound cash management practices are essential for financial sustainability and growth.

Implications of the Study:

1. Helps managers improve financial and operational decision-making
2. Assists policymakers in understanding financial challenges of hospital equipment industries
3. Provides empirical evidence for future research in healthcare financial management

References:-

1. Brigham, E. F., &Ehrhardt, M. C. (2020). *Financial management: Theory and practice* (16th ed.). Cengage Learning.
2. Deloof, M. (2003). Does working capital management affect profitability of Belgian firms? *Journal of Business Finance & Accounting, 30*(3–4), 573–587.
3. Gitman, L. J., &Zutter, C. J. (2019). *Principles of managerial finance* (15th ed.). Pearson Education.
4. Jose, M. L., Lancaster, C., & Stevens, J. L. (1996). Corporate returns and cash conversion cycles. *Journal of Economics and Finance, 20*(1), 33–46.
5. Kumar, N. (2022). *Hospital financial management: Challenges and strategies*. Healthcare Finance Publishing.
6. Padachi, K. (2006). Trends in working capital management and its impact on firms' performance. *International Review of Business Research Papers, 2*(2), 45–58.
7. Shankar, R. (2023). *Working capital management in Indian hospitals*. Indian Institute of Finance.
8. Smith, R. S. (2021). *Financial management of healthcare systems: Theory and practice*. Wiley-Blackwell.
9. Van Horne, J. C., &Wachowicz, J. M. (2018). *Fundamentals of financial management* (14th ed.). Pearson Education.
10. Wanger, S., & Smith, K. (2020). Liquidity management and profitability: Evidence from healthcare firms. *Journal of Healthcare Finance, 46*(4), 1–15.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

नमक आन्दोलन में मुजफ्फरनगर की भूमिका

डॉ. सचिन कुमार*

*एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) डी0 ए0 वी0 कॉलेज, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) भारत

शोध सारांश – मुजफ्फरनगर गंगा और यमुना के दोआब में मेरठ परिक्षत्र के दक्षिण व सहारनपुर के उत्तर में स्थित है इसकी सीमाएं बिजनौर व हरियाणा से भी मिलती है यह जिला अनेकों तहसीलों में विभक्त है।

मुगल शासक शाहजहाँ ने सैयद नसिरूददीन को खिताब के रूप में अबुल मुजफ्फर की उपाधि व खातौली परगने के चालीस गाँव और दस हजार बीधा जमीन ईनाम में दी। आगे चलकर इसी खिताब के ऊपर इस शहर का नाम मुजफ्फरनगर पड़ा।

मुजफ्फरनगर के प्राचीन इतिहास के विषय में प्रामाणिकता का अभाव सा दिखता था। परन्तु जिस समय यह शोध पत्र लिखा जा रहा है उससे पूर्व के दशक में मुजफ्फरनगर शहर के पश्चिम स्थित माँडी गांव में एक किसान के खेत से कुछ सोने के आभूषण व मिटटी के बर्तनों के अवशेष मिले। जब इन अवशेषों का भारतीय पुरातत्व विभाग द्वारा परीक्षण किया गया तो इनकी तिथि हडप्पा सभ्यता तक जाती है। इसके अतिरिक्त यहां से कुषाणकालीन सिक्के प्राप्त हुए है

इस शहर ने मुगल काल से लेकर आजादी की पहली किरण तक के सफर को अपने अन्दर समाया हुआ है। और देखा है कैसे वहसी अंग्रेज अधिकारियों के बगलों को नष्ट किया गया है व कैसे सरकारी खजाने को लूटा गया है। इसके अतिरिक्त समय-समय पर गांधीजी द्वारा चलाये गये आन्दोलनों में भी इस शहर अपनी सहभागिता की। नमक आन्दोलन में तो यहां कि जनता ने बढ-चढकर हिस्सेदारी की इनमें महिला पुरुष दोनों ही शामिल थे।

शब्द कुंजी – मेरठ, क्रान्ति, नमक आन्दोलन, गांधीजी।

शोध का उद्देश्य : इस शोध पत्र में नमक आन्दोलन से जुडे मुजफ्फरनगर के महान स्वतन्त्रता सेनानियों के योगदान को इतिहास में उचित स्थान दिलाने का प्रयास किया गया है। इसके अतिरिक्त इतिहास से जुडे शिक्षकों व शोधार्थी को भी इसका लाभ मिल सके।

शोध विधि : प्रस्तुत शोधपत्र विश्लेषणात्मक एवं वर्णनात्मक विधि पर आधारित है इस शोधपत्र में द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग करते हुए सार्थक निष्कर्ष पर पहुचनें का प्रयास किया गया है।

व्याख्या: मुजफ्फरनगर की धरा हमेशा आन्दोलनों की साक्षी रही है जैसे रौलट एक्ट से जुडा आन्दोलन हो ,असहयोग आन्दोलन हो। यहां कि जनता ने हमेशा गांधी जी के आन्दोलनों में बढ-चढकर हिस्सा लिया है। वर्ष 1919 ई0 को गांधी जी ने यहां का दौरा किया जनता ने उनका खुले दिल से स्वागत किया।[1] इस आगमन से यहां के निवासियों में एक नई आशा की किरण व कुछ करने की उत्कण्ठा जाग्रत हुई।[2]

कांग्रेस संगठन की सक्रियता : सविनय अवज्ञा आन्दोलन में मुजफ्फरनगर जनपद की जनता ने सक्रिय रूप से सहयोग दिया व कांग्रेस संगठन ने अनेक शिक्षित एवं सम्मानित लोगों को सदस्य के रुप में शामिल किया। इनमें मदन मोहन मित्तल, अम्बा प्रसाद,बाबू गुरुदत्त खन्ना, पं0 शेर सिंह कश्यप, बाबू चन्द्रमुनी एडवोकेट,तथा डॉ. बलबीर नरायण शर्मा आदि प्रमुख थे।[3]

जनमानस ग्रामीण की भागीदारी : जनपद की ग्रामीण जनता में आन्दोलन के प्रति रुचि जाग्रत करने हेतु ठाकुर अमीर सिंह, राम स्वरुप, हरि सिंह, श्रीमती ज्ञानदेवी आदि लोगों को जिम्मेदारी दी गयी।[4] नमक सत्याग्रह शुरू होने से पूर्व जनपद में स्थान-स्थान पर कांग्रेस कमेटियों को संगठित किया गया जिससे सविनय अवज्ञा आन्दोलन को सुचारू रूप से चलाया जा सके।[5]

जिस समय देशभर में सत्याग्रह की तैयारी पूरी जोर-शोर से चल रही थी उसी समय जनपद के लोगों में भी उत्साह अपने उच्चतम स्तर पर था। वह तो केवल गांधी जी के आहवान का इन्तजार कर थे। 6 अप्रैल 1930 के दिन गांधी जी नमक कानून तोडने वाले थे। इसी समय एक जत्था रघुनन्दन स्वामी के नेतृत्व में शामली से मुजफ्फरनगर के लिए रवाना हुआ।[6] जिस राह से भी यह जत्था गुजर रहा था वहां के लोगों ने उनका दिल खोलकर स्वागत किया। और यहां के लोगों ने 13 अप्रैल की तारीख को नमक कानून तोडने के लिए चुना, और जनपद के एक क्षेत्र जलालाबाद में जाकर नमक कानून को तोडा क्योंकि यहाँ की मिटटी में नमक की मात्रा थी। इस समय जनपद के लोगों बढ चढकर हिस्सा लिया।[7]

सत्याग्रहियों का दमन : इस घटना के पश्चात ब्रिटिश पुलिस ने मास्टर विष्णुचन्द्र व चौदह अन्य लोगों को गिरफ्तार कर लिया।[8] इस समय लाला उग्रसेन, रधुनन्दन स्वामी व अन्य लोगों को भी गिरफ्तार किया गया। इन गिरफ्तारियों ने आम जनमानस में और अधिक जोश भर दिया और उन्होंने ब्रिटिश पुलिस के समक्ष गगनभेदी नारे लगाये।[9] गिरफ्तार लोगों को थानाभवन थाने की एक तंग हवालात में रखा गया परन्तु आन्दोलनकारियों के चेहरों पर किंचित मात्र भी परेशानी नही थी

आन्दोलनकारियों पर धारा 447-143 तहत मुकदमा चलाया गया।

इसमें मास्टर विष्णुचन्द्र, लाला उग्रसेन जैन सर्राफ, रघुनन्दन स्वामी को छ:-छ: मास की सजा व 50-50 रूपया आर्थिक दंड दिया गया।[10]

इसी क्रम में 22 अप्रैल को मुजफ्फरनगर स्थित काली नदी के किनारे 11 आन्दोलनकारियों ने नमक बनाया।[11] नमक बनाते समय आम जनता दर्शकों के रूप में वहां उपस्थित होकर उनका हौंसला बढा रही थी।

स्वदेशी व मद्यनिषेध आन्दोलन : नमक सत्याग्रह के साथ-साथ स्वदेशी व मद्यनिषेध का कार्यक्रम भी चल रहा था। गांधी जी के आहवान पर श्रीमती सावित्री देवी के नेतृत्व में महिलाओं के दल ने विदेशी वस्त्रों की दुकान पर धरना दिया।[12] धरनारत आन्दोलनकारियों का दमन बडी ही निर्ममता से किया जाता था। ब्रिटिश हुकुमत इन खबरों को छुपाने के लिए समाचार पत्रों पर भी सेंसर लगाती थी।[13] विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार में शामिल लोगों पर ब्रिटिश हुकुमत ने मुकदमें चलाकर सजाएं मुर्करर की। इनमें मूल रूप से एलम निवासी कुन्दन सिंह 6 माह की सजा व मदन मोहनलाल को विदेशी वस्त्रों बहिष्कार के लिए 6 माह की सख्त सजा दी गई।

इस आन्दोलन में महिलाओं को भी पुलिस की बर्बर कार्यवाई का सामना करना पडा। शामली थानें का एक अधिकारी जिसका नाम असलम खाँ था उसने महिला आन्दोलनकारी ज्ञानदेवी को मोटरगाडी से उतारकर बडी ही बेरहमी से उसके साथ बडा ही अमानवीय व्यवहार किया। इस अमानवीय घटना के पश्चात उनका गर्भ तक गिर गया था। जब इसकी सूचना ग्रामीणों को मिली तो उनमें आक्रोश भर गया।[14]

कांग्रेस के जिन तीन स्थानीय नेताओं को फैजाबाद की जेल में 6 माह के कारावास के लिए भेजा गया था। जिनमे लाला उग्रसेन, विष्णुचन्द्र व रघुनन्दन स्वामी थे। अपनी सजा पुरी होने के पश्चात जब वे मुजफ्फरनगर लौटे तब उनके सम्मान मे विशाल सभा का आयोजन किया गया। इस सभा में रघुनन्दन स्वामी ने फिर अपना जोशिला भाषण दिया जब अगले दिन इसकी सूचना जिलाधिकारी को मिली तो उन्होने पुन: रघुनन्दन स्वामी को गिरफ्तार करने का आदेश दिया लेकिन पुलिस उन्हे गिरफ्तार नही कर सकी। और वह वापस शामली पहुॅचने में सफल रहे।

जब-जब गांधी जी ने आन्दोलनों का आवाहन किया यहां के जनमानस ने उसमें अपनी हिस्सेदारी की। चाहे वह नमक आन्दोलन हो, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार हो। इसके अतिरिक्त स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार करने का जिम्मा भी यहां के आम जनमानस ने अपने ऊपर ले लिया था। इससे राष्ट्रीयता का भाव भी बढने लगा। स्वदेशी वस्तुओं को गांव-गांव तक पहुंचाने की जिम्मेदारी कांग्रेसी नेताओं को भी दी गयी थी।[15]

निष्कर्ष : नमक आन्दोलन में मुजफ्फरनगर की भूमिका यह इंगित करती है कि भारत के छोटे-छोटे जनपद और ग्रामीण क्षेों ने भी स्वतन्त्रता आन्दोलन को सफल बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया । स्थानीय जनमानस की सक्रिय भागीदारी, कांग्रेस कार्यकर्ताओं का संगठन और ब्रिटिश दमन के बावजूद आन्दोलन को जारी रखना इस क्षेत्र की राष्ट्रीय चेतना का प्रमाण है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्री रामनाथ सुमन: उत्तर प्रदेश में गांधी जी, सूचना विभाग,लखनऊ, उत्तर प्रदेश।
2. साक्षात्कार : श्री सुमत प्रसाद जैन।
3. साक्षात्कार :श्री सरदू सिंह बजाज।
4. दृष्टव्य :श्री रघुनन्दन स्वामी की डायरी।
5. वही।
6. दृष्टव्य :श्री रघुनन्दन स्वामी की डायरी।
7. साक्षात्कार :श्री सरदू सिंह बजाज।
8. हिन्दुस्तान टाइम्स : 24 अप्रैल 1930 ।
9. दृष्टव्य :श्री रघुनन्दन स्वामी की डायरी।
10. वही।
11. हिन्दुस्तान टाइम्स : 25 अप्रैल 1930 ।
12. साक्षात्कार : श्रीमती सावित्री देवी।
13. साक्षात्कार :श्री सरदू सिंह बजाज। ; साक्षात्कार : डॉ. रामनाथ।
14. दृष्टव्य :श्री रघुनन्दन स्वामी की डायरी।
15. साक्षात्कार :श्री सरदू सिंह बजाज।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

राजस्थान के विद्यालयी क्रिकेट खिलाड़ियों के शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. संतोष लांबा* राजेंद्र कुमार श्रीमाली**

* सहायक आचार्य, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** पी.एच.डी. शोधार्थी, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – क्रिकेट एक ऐसा खेल है जिसमें शारीरिक फिटनेस एवं तकनीकी प्रदर्शन दोनों का संतुलन अत्यंत आवश्यक होता है। विद्यालय स्तर पर खिलाड़ियों का शारीरिक विकास उनके भविष्य के खेल प्रदर्शन की नींव तैयार करता है। विशेष रूप से फिटनेस के घटक जैसे गति, चुस्ती, शक्ति एवं सहनशक्ति क्रिकेट प्रदर्शन को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं।

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य राजस्थान के विद्यालयी क्रिकेट खिलाड़ियों के शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन का तुलनात्मक अध्ययन करना था। इस अध्ययन में 30 खिलाड़ियों का चयन किया गया, जिन्हें दो समूहों में विभाजित किया गया। चयनित फिटनेस घटकों एवं प्रदर्शन से संबंधित परीक्षणों के माध्यम से डेटा संकलित किया गया।

संग्रहित आंकड़ों का विश्लेषण माध्य, मानक विचलन एवं t-परीक्षण के माध्यम से किया गया। अध्ययन के परिणामों से यह ज्ञात हुआ कि शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन के बीच महत्वपूर्ण संबंध पाया जाता है। यह अध्ययन कोचों एवं प्रशिक्षकों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

शब्द कुंजी – क्रिकेट, शारीरिक फिटनेस, खेल प्रदर्शन, विद्यालयी खिलाड़ी, राजस्थान।

प्रस्तावना – क्रिकेट आधुनिक युग का एक अत्यंत लोकप्रिय खेल है, जिसमें खिलाड़ी की सफलता उसके तकनीकी कौशल, शारीरिक फिटनेस एवं मानसिक संतुलन पर निर्भर करती है। विशेष रूप से विद्यालय स्तर पर खिलाड़ियों का प्रशिक्षण उनके भविष्य के खेल प्रदर्शन की नींव तैयार करता है। इस स्तर पर विकसित की गई शारीरिक क्षमताएँ एवं खेल कौशल आगे चलकर उच्च स्तर की प्रतिस्पर्धाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

शारीरिक फिटनेस क्रिकेट प्रदर्शन का एक महत्वपूर्ण घटक है। फिटनेस के विभिन्न घटक जैसे गति, चुस्ती, शक्ति एवं सहनशक्ति खिलाड़ी की कार्यक्षमता को सीधे प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए, बल्लेबाजी में तेज प्रतिक्रिया एवं संतुलन की आवश्यकता होती है, वहीं गेंदबाजी में शक्ति एवं सहनशक्ति का विशेष महत्व होता है। क्षेत्ररक्षण के दौरान चुस्ती एवं गति अत्यंत आवश्यक होती है।

विद्यालयी खिलाड़ियों के संदर्भ में यह देखा गया है कि प्रशिक्षण की गुणवत्ता, अभ्यास की नियमितता एवं फिटनेस स्तर में भिन्नता के कारण उनके प्रदर्शन में अंतर पाया जाता है। कुछ खिलाड़ी बेहतर फिटनेस स्तर के कारण उच्च प्रदर्शन करते हैं, जबकि अन्य खिलाड़ियों में फिटनेस की कमी उनके खेल प्रदर्शन को प्रभावित करती है।

आधुनिक खेल विज्ञान के अनुसार, शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन के बीच गहरा संबंध होता है। यदि किसी खिलाड़ी का फिटनेस स्तर उच्च होता है, तो वह खेल के दौरान अधिक प्रभावी एवं स्थिर प्रदर्शन कर सकता है। इसके विपरीत, कम फिटनेस स्तर वाले खिलाड़ियों में थकान, प्रतिक्रिया में कमी एवं प्रदर्शन में गिरावट देखी जाती है।

राजस्थान में विद्यालय स्तर पर क्रिकेट की लोकप्रियता निरंतर बढ़ रही है, किन्तु खिलाड़ियों के शारीरिक फिटनेस एवं प्रदर्शन के बीच संबंध पर सीमित अध्ययन उपलब्ध हैं। अत: यह आवश्यक हो जाता है कि इस विषय का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाए।

इसी उद्देश्य से प्रस्तुत अध्ययन राजस्थान के विद्यालयी क्रिकेट खिलाड़ियों के शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जिससे प्रशिक्षण प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाया जा सके।

साहित्य समीक्षा

खेल विज्ञान के क्षेत्र में शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन के संबंध में अनेक शोध किए गए हैं। BOMPA एवं Haff (2009) के अनुसार, किसी भी खेल में प्रदर्शन की गुणवत्ता खिलाड़ी की शारीरिक क्षमताओं पर निर्भर करती है। उन्होंने बताया कि प्रशिक्षण के वैज्ञानिक सिद्धांतों के माध्यम से फिटनेस में सुधार कर प्रदर्शन को बेहतर बनाया जा सकता है।

Reilly et al. (2000) ने अपने अध्ययन में पाया कि क्रिकेट जैसे खेलों में गति, चुस्ती एवं सहनशक्ति प्रदर्शन के महत्वपूर्ण घटक हैं। उन्होंने यह भी उल्लेख किया कि उच्च स्तर के खिलाड़ी इन शारीरिक घटकों में अधिक दक्ष होते हैं।

Singh and Sharma (2015) ने विद्यालयी खिलाड़ियों पर किए गए अध्ययन में निष्कर्ष निकाला कि नियमित प्रशिक्षण एवं फिटनेस कार्यक्रम खिलाड़ियों के प्रदर्शन में महत्वपूर्ण सुधार लाते हैं। उनके अनुसार, फिटनेस एवं तकनीकी कौशल के बीच सकारात्मक संबंध पाया जाता है।

Verma and Yadav (2018) ने क्रिकेट खिलाड़ियों के शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए पाया कि बेहतर फिटनेस स्तर वाले खिलाड़ियों का प्रदर्शन अधिक प्रभावी होता है। उन्होंने सुझाव दिया कि प्रशिक्षण कार्यक्रम में फिटनेस घटकों को विशेष महत्व

दिया जाना चाहिए।

Kumar (2017) के अनुसार, चुस्ती एवं प्रतिक्रिया समय क्षेत्ररक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उनके अध्ययन में पाया गया कि जिन खिलाड़ियों का हपसपजल स्तर उच्च होता है, वे मैदान पर बेहतर प्रदर्शन करते हैं।

Sharma and Gupta(2019) ने अपने शोध में बताया कि सहनशक्ति एवं शक्ति जैसे फिटनेस घटक बल्लेबाजी एवं गेंदबाजी प्रदर्शन को सीधे प्रभावित करते हैं। उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि संतुलित फिटनेस प्रशिक्षण से समग्र प्रदर्शन में सुधार किया जा सकता है।

उपरोक्त अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन के बीच घनिष्ठ संबंध है। तथापि, राजस्थान के विद्यालयी क्रिकेट खिलाड़ियों के संदर्भ में इस विषय पर सीमित अध्ययन उपलब्ध हैं, इसलिए प्रस्तुत अध्ययन इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है।

अध्ययन के उद्देश्य:

1. राजस्थान के विद्यालयी क्रिकेट खिलाड़ियों के शारीरिक फिटनेस स्तर का अध्ययन करना।
2. चयनित फिटनेस घटकों (गति, चुस्ती, शक्ति, सहनशक्ति) का मूल्यांकन करना।
3. विद्यालयी क्रिकेट खिलाड़ियों के खेल प्रदर्शन का विश्लेषण करना।
4. शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन के बीच संबंध का अध्ययन करना।
5. विभिन्न खिलाड़ियों के बीच शारीरिक फिटनेस एवं प्रदर्शन में अंतर का तुलनात्मक विश्लेषण करना।

परिकल्पनाएँ– निम्नलिखित शून्य परिकल्पनाएँ (Null Hypothesis) स्थापित की गईं:

1. H_{01}: शारीरिक फिटनेस के चयनित घटकों में खिलाड़ियों के बीच कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं होगा।
2. H_{02}: खेल प्रदर्शन में खिलाड़ियों के बीच कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं होगा।
3. H_{03} : शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन के बीच कोई महत्वपूर्ण संबंध नहीं होगा।

अनुसंधान पद्धति

शोध रूपरेखा– प्रस्तुत अध्ययन एक वर्णनात्मक एवं तुलनात्मक शोध है, जिसका उद्देश्य राजस्थान के विद्यालयी क्रिकेट खिलाड़ियों के शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन का विश्लेषण करना है। इस अध्ययन में विभिन्न फिटनेस घटकों एवं प्रदर्शन स्तर के आधार पर खिलाड़ियों के बीच अंतर एवं संबंध का अध्ययन किया गया।

जनसंख्या एवं नमूना– अध्ययन की जनसंख्या राजस्थान के विद्यालय स्तर के क्रिकेट खिलाड़ी थे।

इस अध्ययन हेतु 30 विद्यालयी क्रिकेट खिलाड़ियों का चयन किया गया, जिनकी आयु 14–18 वर्ष के मध्य थी। चयन Purposive sampling विधि द्वारा किया गया।

तालिका 1: नमूना वितरण

वर्ग	खिलाड़ियों की संख्या
विद्यालयी क्रिकेट खिलाड़ी	30
कुल	30

सभी खिलाड़ियों का नियमित रूप से प्रशिक्षण में भाग लेना एवं स्वस्थ होना आवश्यक था।

चयनित चर– अध्ययन में निम्नलिखित चर शामिल किए गए:

(I) शारीरिक फिटनेस घटक:

- गति
- चुस्ती
- शक्ति
- सहनशक्ति

(II) खेल प्रदर्शन:

- बल्लेबाजी एवं क्षेत्ररक्षण आधारित प्रदर्शन स्कोर

परीक्षणों का विवरण:

1. **गति –** 50 मीटर दौड़ परीक्षण के माध्यम से गति मापी गई। समय सेकंड में दर्ज किया गया।
2. **चुस्ती –** Illinois Agility Test के माध्यम से दिशा परिवर्तन क्षमता का मूल्यांकन किया गया।
3. **शक्ति –**Standing Broad Jump के माध्यम से निचले शरीर की शक्ति मापी गई।
4. **सहनशक्ति –** 600 मीटर दौड़ परीक्षण द्वारा सहनशक्ति का मूल्यांकन किया गया।
5. **खेल प्रदर्शन –** खिलाड़ियों के खेल प्रदर्शन का मूल्यांकन उनके कोच द्वारा निर्धारित स्कोरिंग प्रणाली के आधार पर किया गया, जिसमें बल्लेबाजी, गेंदबाजी एवं क्षेत्ररक्षण को शामिल किया गया।

डेटा संग्रह की प्रक्रिया– सभी परीक्षण विद्यालय के खेल मैदान में समान परिस्थितियों में आयोजित किए गए। परीक्षण से पूर्व खिलाड़ियों को उचित वार्म–अप कराया गया।

प्रत्येक खिलाड़ी का परीक्षण अलग–अलग किया गया तथा पर्याप्त विश्राम दिया गया ताकि थकान का प्रभाव न पड़े। सभी डेटा को सावधानीपूर्वक दर्ज किया गया।

सांख्यिकीय विश्लेषण– संग्रहित आंकड़ों का विश्लेषण निम्नलिखित सांख्यिकीय विधियों द्वारा किया गया:

1. माध्य
2. मानक विचलन
3. t–परीक्षण
4. सहसंबंध गुणांक

महत्व का स्तर 0.05 निर्धारित किया गया।

सांख्यिकीय विश्लेषण – संग्रहित आंकड़ों को व्यवस्थित रूप से सारणीबद्ध कर उनका सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया। वर्णनात्मक सांख्यिकी के अंतर्गत माध्य एवं मानक विचलन का उपयोग खिलाड़ियों के शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन के औसत स्तर एवं प्रसरण को समझने के लिए किया गया।

अध्ययन में निर्धारित शून्य परिकल्पनाओं की जाँच हेतु t–परीक्षण का प्रयोग किया गया, जिसके माध्यम से विभिन्न खिलाड़ियों के बीच शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन में अंतर की महत्ता का परीक्षण किया गया।

इसके अतिरिक्त, शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन के मध्य संबंध का अध्ययन करने के लिए पियरसन सहसंबंध गुणांक का उपयोग किया गया। यह विधि दोनों चर के बीच संबंध की दिशा एवं तीव्रता को मापने के

लिए उपयुक्त मानी जाती है।

सभी सांख्यिकीय परीक्षणों के लिए महत्व का स्तर 0.05 निर्धारित किया गया। प्राप्त परिणामों की व्याख्या सावधानीपूर्वक की गई ताकि निष्कर्ष विश्वसनीय एवं वैध हो सकें।

परिणाम

तालिका 2: शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन के माध्य, मानक विचलन एवं सहसंबंध

चर	माध्य	मानक विचलन (SD)
गति	7.25Sec	0.45
चुस्ती	17.80Sec	0.60
शक्ति	2.10 m	0.25
सहनशक्ति	2.35 min	0.30
खेल प्रदर्शन	7.80	1.10

सहसंबंध (Correlation between Fitness & Performance) = 0.68*

*0.05 स्तर पर महत्वपूर्ण

परिणामों की व्याख्या – प्राप्त परिणामों से यह स्पष्ट होता है कि खिलाड़ियों का शारीरिक फिटनेस स्तर संतोषजनक पाया गया तथा खेल प्रदर्शन का औसत स्तर भी अच्छा रहा। सहसंबंध गुणांक (0.68) से यह ज्ञात होता है कि शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन के बीच सकारात्मक एवं महत्वपूर्ण संबंध विद्यमान है।

अर्थात जिन खिलाड़ियों का फिटनेस स्तर अधिक था, उनका खेल प्रदर्शन भी बेहतर पाया गया। यह परिणाम इस तथ्य को दर्शाता है कि शारीरिक फिटनेस क्रिकेट प्रदर्शन को सीधे प्रभावित करती है।

चर्चा – प्रस्तुत अध्ययन के परिणामों से यह स्पष्ट हुआ कि शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन के बीच सकारात्मक एवं महत्वपूर्ण संबंध पाया जाता है। जिन खिलाड़ियों का फिटनेस स्तर उच्च था, उनका प्रदर्शन भी अपेक्षाकृत बेहतर पाया गया। यह निष्कर्ष खेल विज्ञान के सिद्धांतों के अनुरूप है, जहाँ फिटनेस को प्रदर्शन का आधार माना जाता है।

गति एवं चुस्ती जैसे घटकों का क्रिकेट में विशेष महत्व है, विशेषकर क्षेत्ररक्षण एवं बल्लेबाजी के दौरान। अध्ययन में यह देखा गया कि बेहतर चुस्ती वाले खिलाड़ी मैदान पर अधिक प्रभावी ढंग से प्रतिक्रिया कर पाते हैं। इसी प्रकार, शक्ति बल्लेबाजी एवं गेंदबाजी दोनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जिससे खिलाड़ी अपने प्रदर्शन को अधिक प्रभावी बना सकता है।

सहनशक्ति का प्रभाव खेल के दौरान निरंतर प्रदर्शन बनाए रखने में देखा गया। जिन खिलाड़ियों की सहनशक्ति अधिक थी, वे लंबे समय तक स्थिर प्रदर्शन करने में सक्षम पाए गए। यह परिणाम Sharma एवं Gupta (2019) के निष्कर्षों के अनुरूप है।

सहसंबंध विश्लेषण से यह स्पष्ट हुआ कि फिटनेस एवं प्रदर्शन के बीच मध्यम से उच्च स्तर का संबंध (0.68) पाया गया, जो दर्शाता है कि फिटनेस घटक खेल प्रदर्शन को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं। यह परिणाम Reilly et al. (2000) एवं Verma and Yadav (2018) के अध्ययनों से भी मेल खाता है।

अत: यह कहा जा सकता है कि विद्यालय स्तर पर खिलाड़ियों के प्रशिक्षण में शारीरिक फिटनेस घटकों को प्राथमिकता देना आवश्यक है, ताकि उनके खेल प्रदर्शन में समग्र सुधार किया जा सके।

निष्कर्ष:

1. प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि शारीरिक फिटनेस एवं खेल प्रदर्शन के बीच सकारात्मक एवं महत्वपूर्ण संबंध पाया जाता है।
2. गति एवं चुस्ती जैसे फिटनेस घटक खिलाड़ियों के प्रदर्शन को सीधे प्रभावित करते हैं।
3. शक्ति एवं सहनशक्ति का स्तर बेहतर होने पर खिलाड़ियों का समग्र प्रदर्शन अधिक प्रभावी पाया गया।
4. जिन खिलाड़ियों का फिटनेस स्तर उच्च था, उनका खेल प्रदर्शन भी अपेक्षाकृत बेहतर रहा।
5. सहसंबंध विश्लेषण से यह सिद्ध हुआ कि फिटनेस एवं प्रदर्शन के बीच महत्वपूर्ण संबंध विद्यमान है।
6. विद्यालय स्तर पर प्रशिक्षण कार्यक्रमों में शारीरिक फिटनेस को प्राथमिकता देना आवश्यक है।
7. संतुलित एवं वैज्ञानिक प्रशिक्षण के माध्यम से खिलाड़ियों के प्रदर्शन में सुधार किया जा सकता है।

आगे के अध्ययन हेतु सुझाव:

1. भविष्य में इस प्रकार के अध्ययन को अधिक बड़े नमूने पर किया जा सकता है ताकि परिणामों की विश्वसनीयता बढ़ सके।
2. विभिन्न आयु वर्गों (जैसे जूनियर, सीनियर) के खिलाड़ियों के बीच तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
3. अध्ययन में अन्य फिटनेस घटकों जैसे लचीलापन एवं संतुलन को भी शामिल किया जा सकता है।
4. विभिन्न खेलों के खिलाड़ियों के बीच फिटनेस एवं प्रदर्शन की तुलना की जा सकती है।
5. प्रशिक्षण कार्यक्रमों के प्रभाव का अध्ययन करने हेतु दीर्घकालिक शोध किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बोम्पा, टी. ओ., एवं हैफ, जी. जी. (2009). प्रशिक्षण का सिद्धांत एवं पद्धति. ह्यूमन काइनेटिक्स.
2. रीली, टी., बैंग्सबो, जे., एवं फ्रैंक्स, ए. (2000). खेल प्रदर्शन में शारीरिक एवं तकनीकी कारकों का विश्लेषण. खेल विज्ञान पत्रिका, 18(9), 669-683.
3. सिंह, आर., एवं शर्मा, पी. (2015). विद्यालयी खिलाड़ियों के फिटनेस एवं प्रदर्शन का अध्ययन. भारतीय शारीरिक शिक्षा पत्रिका, 10(2), 45-50.
4. वर्मा, एस., एवं यादव, आर. (2018). क्रिकेट खिलाड़ियों के शारीरिक फिटनेस एवं प्रदर्शन का तुलनात्मक अध्ययन. खेल अनुसंधान पत्रिका, 12(1), 60-65.
5. कुमार, ए. (2017). चुस्ती एवं प्रतिक्रिया समय का खेल प्रदर्शन पर प्रभाव. खेल विज्ञान जर्नल, 8(3), 22-27.
6. शर्मा, डी., एवं गुप्ता, आर. (2019). सहनशक्ति एवं शक्ति का क्रिकेट प्रदर्शन पर प्रभाव. भारतीय खेल विज्ञान पत्रिका, 14(2), 33-38.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

मराठवाड्यातील ओ.बी.सी. समाजाच्या सामाजिक आणि आर्थिक परिस्थितीचे अध्ययन

डॉ. अविनाश शेंद्रे* प्रशांत तांदळे**

* प्राध्यापक व संशोधन मार्गदर्शक, प्रगती कला व वाणिज्य महाविद्यालय, डोंबिवली (महा.) भारत
** संशोधन विद्यार्थी,संशोधन केंद्र, प्रगती महाविद्यालय, डोंबिवली (महा.) भारत

प्रस्तावना – ओबीसी (इतर मागासवर्गीय) समाज हा मुख्यत: उत्पादन, कारागिरी आणि सेवा क्षेत्राशी संबंधित आहे. महाराष्ट्रात प्रचलित असलेल्या बारा बलुतेदार आणि अठरा अलुतेदार या पारंपरिक व्यवस्थेतून हा समाज विकसित झाला आहे. विविध प्रकारच्या कौशल्यांनी संपन्न असलेल्या या गटाला हिंदू धर्मशास्त्रानुसार 'शूद्र' या वर्गात स्थान देण्यात आले. तथापि, या गटातील अनेक जातींनी कालांतराने स्वत%चा सामाजिक दर्जा उंचावण्याचा प्रयत्न केलेला दिसतो. भरतीय जातिव्यवस्थेत ब्राह्मण, क्षत्रिय आणि वैश्य हे उच्चवर्णीय गट पारंपरिकदृष्ट्या सत्तोचे आणि संसाधनांचे लाभार्थी राहिले आहेत. याउलट शूद्र, अतिशूद्र आणि स्त्रिया या गटांना सामाजिक, शैक्षणिक आणि आर्थिक पातळीवर अनेक मर्यादा आणि अन्यायांचा सामना करावा लागला आहे. ब्रिटिश सत्ताकाळात भारताचे प्रशासन अधिक परिणामकारकपणे चालवण्यासाठी येथील समाजरचनेचा अभ्यास करण्यावर भर देण्यात आला. त्याचाच एक भाग म्हणून 1872 साली प्रथमच जातीनिहाय जनगणना सुरू करण्यात आली. यामुळे विविध जातींची लोकसंख्या, सामाजिक स्थिती आणि आर्थिक परिस्थिती यांचा अभ्यास करणे शक्य झाले यानंतर, मुंबई प्रांतातील जाती–जमातींचा सखोल अभ्यास करण्यासाठी 1885 मध्ये आर. ई. इन्थोवेन यांची नियुक्ती करण्यात आली. त्यांनी सुमारे 500 जाती–जमातींचा विस्तृत अभ्यास करून त्यावरील संशोधन तीन खंडांमध्ये 1920 च्या दशकात प्रकाशित केले. या संशोधनामुळे भारतीय समाजरचनेविषयी अधिक तपशीलवार माहिती उपलब्ध झाली. स्वातंत्र्यानंतरही जातीव्यवस्थेचा अभ्यास सुरूच राहिला. 1985 साली डॉ. के. एस. सिंग यांच्या नेतृत्वाखाली भारतातील जाती–पातींचा व्यापक समाजशास्त्रीय अभ्यास करण्यासाठी एक महत्त्वपूर्ण प्रकल्प राबविण्यात आला. या प्रकल्पामुळे आधुनिक भारतातील सामाजिक रचना आणि बदलत्या प्रवृत्ती समजून घेण्यास मदत झाली. 2004 साली त्याचे 43 खंड प्रसिद्ध करण्यात आले.या संशोधनात 3000 हजार समाजशास्त्रज्ञ सहभागी झाले होते.आज रोजी भारतात एकुण 4635 जातीजमाती असल्याचे या अभ्यासातुन पुढे आले आहे.त्यात प्रामुख्याने 4 मोठे समुह आहेत. अनुसुचित जाती (अजा), अनुसुचित जमाती, (अज) विमुक्त जाती, भटक्या जमाती (विजाभज) आणि इतर मागास वर्ग (इमाव).आज देशातील अजाअजची लोकसंख्या 22.5% आहे. मंडल आयोगाच्या मते यातील ओबीसींची लोकसंख्या सुमारे 52% असुन रेणके आयोगाच्या मते विजाभजची लोकसंख्या 10% आहे.ते अनेक राज्यात ओबीसीतच धरले गेलेले आहेत.भारत सरकारच्या 'राष्ट्रीय नमुना पाहणी संस्थेच्या' 2004–5 च्या आकडेवारीनुसार देशात ओबीसींची लोकसंख्या 41% आहे.या तफावतीचे कारण असे आहे की मंडल आयोगाने 3743

जातींची मोजदाद ओबीसी म्हणुन केलेली असली तरी सर्वोच्च न्यायालयाने त्यातील फक्त 1963 जातींनाच ओबीसी म्हणुन मान्यता दिलेली आहे. यादीतील 3743 जातींना इतर मागासवर्गीयांमध्ये सरसकट समाविष्ट न करता राज्यांच्या यादीत आणि मंडलच्या यादीत दोन्हीकडे कॉमन असणार्या जातींनाच तेवढी ओबीसी म्हणुन मान्यता दिली आहे. (इंदिरा साहनी निवाडा, 16 नोव्हेंबर 1992) गेल्या काही वर्षात त्या यादीत 200 जातींची भर पडुन आता ही संख्या वाढलेली आहे, तथापि तीही लोकसंख्या नमुना पाहणीत आलेली नाही. 1994 साली मंडल आयोग महाराष्ट्रात लागु झाला तेव्हा महाराष्ट्राच्या ओबीसी यादीत क्रमाने 201 जाती असल्या तरी त्यातल्या 28 जाती वगळलेल्या होत्या. या शिल्लक 173 जातींच्या यादीत नंतरच्या काळात नव्याने 173 जातींची भर पडुन आज ही संख्या दुप्पट म्हणजे 346 झालेली आहे.नमुना पाहणीत मात्र आधीच्या 173 जातीच आलेल्या आहेत.महाराष्ट्रात भटक्या विमुक्तांची स्वतंत्र सुची असुन त्यात असलेल्या जातीजमाती आणि विशेष मागास प्रवर्ग या घटकात असलेल्या जाती या सर्वाची एकुण संख्या 410 वर जाते.यांना सर्वाना मिळुन पंचायत राज्याच्या सत्तोत 27% आरक्षण आहे. राज्य सरकारच्या नोकर्या मध्ये 19%,11% आणि 2% असे एकुण 32% आरक्षण कागदावर असले तरी प्रत्यक्षात व्यवहारात मात्र एकुण 30% आरक्षण आहे.विमाप्र चे 2% आरक्षण ओबीसींच्या 19% मधुन दिले जात असल्याने ओबीसीला केंद्रात 27% आणि राज्यात 17% आरक्षण आहे असे म्हणणे उचित होईल. 1909 आणि 1919 साली ब्रिटीशांनी राजकीय पातळीवर मोर्ले–मिंटो सुधारणा लागु केल्या. 1919 साली साउथबरो कमिशन आणि त्यानंतर 1928 साली सायमन कमिशन नेमले गेले. मुंबई इलाखा सरकारने मागासवर्गियांचा अभ्यास करण्यासाठी याच काळात 5 नोव्हें. 1928 ला स्टार्ट कमेटी नेमली होती.डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, ठक्कर बाप्पा, डॉ.सोळंकी असे अन्य सदस्य होते इतर मागास वर्ग अश्या समाजघटकांना संरक्षणाची गरज असल्याचा अहवाल सादर केला.अश्याप्रकारे 'ओबीसी' प्रवर्ग शासन दरबारी जन्माला आला. तांत्रिकदृष्ट्या सांगायचे तर, 'मागास वर्ग' (ठंबूंतक ब्सेंमे) ही संज्ञा सर्वप्रथम म्हैसूर संस्थानात उदयास आली. 'मागास समुदायां' मधील लोकांना सार्वजनिक सेवेत येण्यासाठी प्रोत्साहित करण्याच्या मुद्द्याचा विचार करण्यासाठी म्हैसूर सरकारने 1918 मध्ये एक समिती स्थापन केली. 'मागास समुदायां' ना नोकरभरतीत प्राधान्य देण्याची पद्धत ज्याची व्याख्या

'ब्राह्मणांव्यतिरिक्तचे असे सर्व समुदाय, ज्यांचे सध्या सार्वजनिक सेवेत पुरेसे प्रतिनिधित्व नाही' अशी करण्यात आली होती, ती 1921 मध्ये लागू करण्यात आली. 1928 मध्ये हार्टोग समितीने तयार केलेल्या परिभाषा–कोशात मागास वर्गाची व्याख्या 'शैक्षणिकदृष्ट्या मागास असलेल्या जाती किंवा वग' अशी करण्यात आली होती. या वर्गामध्येच उपेक्षित वर्गाचाही समावेश होतो. 'मागास वर्गाच्या मुद्दाकृज्यामध्ये गुन्हेगार जमाती (Criminal Tribes), स्थानिक लोक आणि ब्रिटिश भारताचे इतर कमी विकसित नागरिक यांचा समावेश होताकृतो 1929 मध्ये श्इंडियन सेंट्रल कमिटीश्ने अधोरेखित केला. त्रावणकोर संस्थानाने 1937 मध्ये 'उपेक्षित वर्ग' (Depresses Classes) ही संज्ञा वापरणे थांबवले आणि त्याऐवजी आर्थिक व शैक्षणिकदृष्ट्या मागास असलेल्या सर्व लोकसमूहांना उद्देशून 'मागास समुदाय' ही संज्ञा वापरण्यास सुरुवात केली. असे असले तरी, मद्रास आणि इतर काही ठिकाणी अस्पृश्यांच्या सामाजिक स्तराच्या वरच्या टप्प्यावर असलेल्या वर्गाना 'मागास वर्ग' म्हणूनच संबोधले जात असे. दरम्यान, 13 डिसेंबर 1946 रोजी संविधान सभेत पंडित जवाहरलाल नेहरू यांनी मांडलेल्या 'उद्दिष्ट ठरावा' मध्ये (Objective resolution) असे नमूद करण्यात आले होते की, 'अल्पसंख्याक, मागास व आदिवासी क्षेत्रे, तसेच उपेक्षित आणि इतर मागास वर्ग' यांच्यासाठी पुरेशा संरक्षणाची तरतूद केली गेली पाहिजे. संविधान सभेच्या काळापर्यत, देशाच्या अनेक भागांमध्ये 'मागास वर्ग' ही संज्ञा अशा कोणत्याही मोठ्या

लोकसमूहाचे वर्णन करण्यासाठी सर्रास वापरली जाऊ लागली होती, ज्यांना विशेष किंवा प्राधान्यपूर्ण वागणूक मिळणे अपेक्षित होते. परिणामी, संपूर्ण भारतभर या संज्ञेची कोणतीही एक स्पष्ट आणि एकच व्याख्या कधीच निश्चित होऊ शकली नाही.

संशोधन अभ्यासाची उद्दीष्टे

मराठवाड्यातील ओ. बी सी. समाजाच्या आर्थिक ,सामाजिक आणि अराजकीय परिस्थीचा अभ्यास करण्यासाठी खालील उद्दिष्टे समोर ठेवण्यात आले आहेत

1. ओ.बी.सी. समाजाचा आढावा घेणे
2. ओ.बी.सी. च्या सामाजिक आणि आर्थिक साम्यस्यावर प्रकाश टाकणे .
3. ओ.बी.सी. समाजाच साठीचे सरकारचे धोरण जाणून घेणे .
4. ओ.बी.सी. समाजाच्या सक्षमीकरणासाठी उपायोजना सुचविणे सामाजिक आर्थिक स्थितीचा अभ्यास करणे

संदर्भ साहित्याचा आढावा

मंडल अयोग – तत्कालीन जनता सरकारने न्या. मंडळ यांच्या अध्यक्षतेखाली सण 1978 साली एका आयोगाची नेमणूक केली . या आयोगाने मागासवर्गीयांच्या बरोबरीने इतर मागासवर्गीयांचा वेगळा विचार करण्यात यावा अशी महत्पूर्ण सूचना देण्यात आली. परंतु या अहवालास उच्च वर्णीय, लोकांनी संपूर्ण देशभर अतिशय हिंसक वातावरण निर्माण केले. कारण यांना मंडल आयोगाने मागासवर्गीयांसाठी दिलेल्या शिफारशी मान्य नव्हत्या. असे असले तरी राखीव जांगांचा मागासवर्गीयावर झालेल्या परिणामाचे अध्ययन करण्यासाठी मुंबई मधील टाटा इन्स्टिटयूट ऑफ सोसिअल सायन्स ची मदत घेण्यात आली.या संस्थेमार्फत देशातल्या कर्नाटक , बिहार , व उत्तर प्रदेश या राज्याची निवड करून मागास्वर्गीयांचे निकष ठरवण्यासाठी या राज्यातील 405 जिल्ह्यांचा अभ्यास करण्यात आला. संपूर्ण अभ्यास करून झाल्यांनतर या संस्थेने एकूण 11 निकष सुचवले. यात इतर मागास जातींनाही मागास म्हणले जावे असा महत्वपूर्ण निष्कर्ष हि निघाला. त्यांनतर मंडळ आयोगाने सखोल , व्यापक आणि शास्त्रयुक्त पद्दतीने अध्ययन करून मागासलेपणाची 3 कारणे म्हणजे निकष ठरवले यात प्रामुख्याने सामाजिक , आर्थिक , आणि शैक्षणिक यांचा समावेश होतो. यात एकूण 22 गुणांचा आधार घेण्यात आला त्यात या मंडल आयोगाने सामाजिक निकष ठरवण्यासाठी 12 गुण, शैक्षणिक

निकषांची 6 गुण तर आर्थिक निकषासाठी एकूण 4 गुण ठरवण्यात आले एकूण 22 गुणांचा आधार घेण्यात आला. व या 22 गुणांपैकी 11 गुण मिळतील त्याला मागासलेल्या जाती समजण्यात यावे असा निष्कर्ष या मंडल आयोगाने दिला. परंतु देशात मागासवर्गीयांची संख्या 52 टक्के असल्या कारणाने मागासवर्गीयांना 27 टक्के आरक्षण दिले गेले व इतर मागासवर्गीय उमेदवारांची स्पर्धा परीक्षेतून निवड झाल्यास त्याना या 27 टक्के आरक्षणामध्ये पकडण्यात येऊ नये अशा शिफारशी करण्यात आल्या होत्या.1990 साली या मंडळ आयोगाच्या अहवालावर कामकाज सुरु करण्यासाठी शासकीय अधिसूचना तयार करण्यात आली आणि इतर मागासवर्गीयांना प्रशासनात 27 टक्के आरक्षण देण्याची घोषणा झाली. परंतु या आरक्षणामुळे देशभरात प्रचंड गोंधळ निर्माण झाला आत्महत्या व विद्यार्थी आंदोलने सुरवात झाली. परिणामी सण 1991 रोजी सरकारने सुधारित अधिसूचना जरी करून मागासवर्गीयांचे 27 टक्के आरक्षण हे फक्त गरीब वर्गातील उमेदवारीसाठी व 10 टक्के आरक्षण आर्थिक दृष्टया मागसलेल्यासाठी असेल अशी सुधारणा केली.

समाज कल्याण मंडळ – देश स्वतंत्र झाल्यानंतर सण 1953 या साली डॉ दुर्गाबाई देशमुख यांच्या अध्यक्षतेखाली केंद्रीय समाज कल्याणमंडळाची स्थपणा करण्यात आली. अशाच प्रकारचे समाज कल्याण मंडळ राज्यस्थरवर असणे गरजेचे होते म्हणून राज्य सरकारने 1954 साली राज्यस्थरवर समाज कल्याण मंडळाची स्थपणा केली यात केंद्रीय समाज कल्याण मंडळाच्या अधिकार व विकेंद्रीकरण करून राज्यात अमलबजावणी करणे . तसेच केंद्रीय समाजकल्याण मंडळाच्या योजना व अनुदान यासाठी राज्यातील स्वयंसेवासस्थांची निवड करून शिफारशी करणे व अनुदान प्राप्तीनंतर त्यावर नियंत्रण ठेवणे तसेच राज्यातील मागास, अपंग, महिला, मुले , यांच्या सेवेसाठी व कल्याणासाठी विविध उपक्रम राबवणे व राज्य सरकार तसेच केंद्रिन्द्रय समाज कल्याण मंडळ आणि राज्यातील स्वयंसेवी संस्था यांच्यामध्ये योग्य असा समन्व्य निर्मण कर्ण्याचे कार्य या राज्य समाज कल्याण मंडळामार्फत केले जातात. याच समाज कल्याणामार्फत इतर मागासवर्गीयांसाठी देशातील विविध राज्यआतील समाज कल्याण मांडले आपापली भूमिका चोख पद्धतीने बजावत असताना आपणास दिसत आहे.

देशातील सर्व राज्यांपैकी इतर मागासवर्गीयांची संख्या महाराष्ट्रामध्ये मोठ्या प्रमाणात असल्या कारणाने महाराष्ट्र राज्य सरकारने महाराष्ट्र समाज कल्याण मंडळ अंतर्गत मागासवर्गीय तसेच इतर मागासवर्गीय अपंग या सारख्या घटकांचा आर्थिक व सामाजिक विकास करण्यासाठी विवीध वित्त विकास महामंडळाची स्थापना केली. यात महात्मा फुले मागासवर्ग विकास महामंडळ लिमिटेड, महाराष्ट्र राज्य अपंग वित्त व विकास महामंडळ, मुंबई वसंतराव नाईक विमुक्त जाती व भटक्या् जमाती विकास महामंडळ (मर्यादित), मुंबई महाराष्ट्र राज्य इतर मागासवर्गीय वित्त आणि विकास महामंडळ मर्यादित , संत रोहिदास चर्मोद्योग व चर्मकार विकास महामंडळ

मर्यादित, साहित्यरत्न लोकशाहीर अण्णाभाऊ साठे विकास महामंडळ (मर्या.) मुंबई या सारख्या वित्त आणि विकास महामंडळाची निर्मिती करून त्याना मान्यता देण्यात आली.

इतर मागासवर्गीय आयोग– 1990 सालच्या मंडळ आयोगाच्या शिफारशींमुळे देशभरात मोठ्या प्रमाणात गदारोळ निर्माण झाल्यामुळे सर्वच्च न्यायालयाने इतर मागासवर्गीयांसाठी वेगळ्या आयोगाची नेमणूक करण्याचे आदेश सरकारला दिले व सरकारला ते मान्य करावे लागले. म्हणून सण 1993 साली इतर मागासवर्गीयासाठी वेगळ्या आयोगाची नेमणूक करून त्याला इतर मागासवर्गीय आयोग असे म्हणण्यात येऊ लागले. या आयोगाची रचनात्मक बांधणी झाल्यांनतर त्यांच्या कार्याची सुरवात झाली यात प्रामुख्याने यात आयोगाने तयार केलेले अहवाल केंद्र सरकरकडे सादर करून केंद्र सरकार तो अहवाल संसदेत सादर केले जाते. त्याचबरोबर या आयोगाला स्वत:ची कार्यपद्धती ठरवण्याचे अधिकार देण्यात आले यात प्रामुख्याने कोणत्या जाती मागास आहेत व जात मागास नसल्यास त्यानाच इतर मागसवर्गात समावेश करण्यात यावा व येऊ नये त्याचबरोबर कोणती जात समाविष्ट केली जावी व करू नये याचे अधिकार या आयोगाला देण्यात आले म्हणजे च एखादी जात मागास नाही असे आढळल्यास त्या जातीला इतर मागासवर्गातून वगळण्याचे अधिकार या आयोगाकडे ठेवण्यात आले आहेत. आयोगाने सादर तयार केलेल्या अहवालाचा केंद्र सरकार दर 1. वर्षाने अहवाल चा आढावा घेत असतो

म्हस्के दयाराम 2016– यांनी महार्ष्ट्र प्रसासणात आरक्षण धोरणाची अमलबजावणी या संदर्भात संशोधन करत असताना मराठवाडा विशेष क्षेत्राची निवड करून असा निष्कर्ष मांडला की भारतीय जाती व्यवस्था ही कर्मावर आधारित असून जात ही संस्था हिंदू धर्म व्यवस्थेचा आधार आहे. यात आरक्षण हा भाग जाती आणि वर्ण वायवस्थेवरच आहे यात ब्राह्मण , क्षत्रीय वैश्य , शूद्र यांचा समावेश होतो. समजातल्या घातक संरक्षण शिक्षण सेवा , व्यापार , इ. पारंपरिक रित्या देण्यात आले.भारताच्या स्वातंत्र्यानंतर आरक्षणास घटनात्मक दर्जा प्राप्त झाला . वर्णव्यवस्थेतील आरक्षण विरोधातील क्रिया प्रतिक्रिया संबंधी न्याय मागण्याची संधि मागासवर्गीयांना उपलब्ध नव्हती. परंतु आरक्षण धोरनामुळे मूलभूत हक्काचा समावेश केल्याने मागासवर्गीयांना न्याय मागची मदत मिळाली. व तशी व्यवस्था राज्य घटनेमध्ये करण्यात आली आहे संशोधकाने आपल्या सशोधनात असे स्पष्ट केले की भारतीय सरकारी उच्च कार्यालयातिल अनुसूचीत जाती व जमातीसह इतर मागासवर्गीयांच्या सरकारी नोकर्याच (मराठा , यादव , पटेल) यांच्या वाट्याच्या शासकीय नोकर्यी ब्राम्हण वर्गाने लटल्या आहेत .

रावते नूतन 1989 यांच्या मते आजकालचे मराठवड्यातील उद्योग ठिसुळ पायावर आधारित आहेत . त्यांना अधिक अधिक भक्कम करण्यासाठी त्या ठिकाणी कच्चा माल व बाजारपेठ उपलब्ध होणे गरजेचे आहे . तसेच या भागातील समाजाच्या विविध थरातील तरुण स्त्रि पुरुष उद्योजकांनी साखळी निर्माण केली पाहिजे . त्यात पुरेशा भांडवलमुळे मराठवाड्यातील 25 टक्के उद्योग बंद पडले आहेत . मराठवाड्यामध्ये बाहेरील उद्योजकांना आकर्षित करण्याचे धोरण जाहीर करूनही त्या ठिकाणी म्हणावी अशी प्रगती दिसून आली नाही.

उत्तम कांबळे 2007 ओ बी सी समाज हा आर्थिकदृष्ट्या मागास असला तरी तो सामाजिक दृष्ट्या प्रतिष्ठित आहे. कारण या जातीकडे स्वतचे असे पारंपरिक चालणारे व्यवसाय होते परंतु वाढत्या औद्योगिकीकरनामुळे हे व्यवसाय बंद पडले . परिणामी त्यांना शिक्षणशिवाय पर्याय उरला नाही परंतु उच्च वरणीय घटकांना तोंड देणे व त्यांच्याशी स्पर्धा करणे हे शक्य झाले नाही कारण या जातीमध्ये मुळातच गरीब आणि अशिक्षितपना होता . कांबळे यांच्या मते जर हा समाज एकत्र आला तर देशातल्या राजकारणाचा नकाशा क्षणात बदलू शकतो . तशा संधीही यांना आरक्षण , सत्तापालट याच्या माध्यमातून मिळत असते परंतु यांनी त्याचा फायदा घेणे गरजेचे आहे

सतीश कान्हू (1998) यांनी केलेल्या संशोधनवरून असे समजते की सर्वे केलेल्या मागासवर्गीयांच्या एका कुटुंबात एकच व्यक्ति कमवत असणार्या) कुटुंबाची संख्या सर्वाधिक आहे. संशोधकाच्या मते शिक्षणाच्या प्रसारामुळे ओबीसी समजातल्या मुलींमध्ये सामाजिक व शैक्षणिक विकासासाठी प्रक्रिया सुरू झाली आहे . तसेच तरुण पिढीमध्ये अनौपचारिक शिक्षण घेण्यास आशावादी आहेत असे दिसते. तसेच या जातीमध्ये सामाजिक प्रथा प्रचलित असून हा समाज धार्मिक विधीसारख्या प्रथा पाळत असल्याचे संशोधकाने म्हंटले आहे

महाराष्ट्र सरकारचे ओ. बी. सी. समाजाबाबतचे धोरण – महाराष्ट्र सरकारचे ओबीसी (इतर मागासवर्गीय) समाजाबाबत सामाजिक, शैक्षणिक आणि आर्थिक विकासावर केंद्रित आहे, ज्यामध्ये 27% आरक्षणाचे रक्षण, महाज्योतीद्वारे कौशल्य विकास, आणि शिष्यवृत्ती योजनांचा समावेश आहे. राज्य सरकार ओबीसींच्या आणखी 29 जातींचा समावेश केंद्राच्या यादीत करण्यासाठी प्रयत्नशील आहे, आणि बनावट कुणबी प्रमाणपत्रे रोखण्यासाठी तसेच विद्यमान आरक्षणाचे संरक्षण करण्यासाठी धोरणात्मक निर्णय घेतले जात आहेत. ओबीसी, विशेष मागास प्रवर्ग (SBC), आणि भटक्या जमाती (NT) च्या विद्यार्थ्यांसाठी महाज्योती (Mahajyoti) संस्थेमार्फत कौशल्य विकास, प्रशिक्षण आणि शिष्यवृत्ती योजना. राज्य सरकारी नोकऱ्या आणि शिक्षणामध्ये 27% आरक्षणाची अंमलबजावणी. जात वैधता प्रमाणपत्र मिळण्यात अडचणी येत असल्याने, अभियांत्रिकी आणि वैद्यकीय प्रवेशासाठी विद्यार्थ्यांचा कालावधी वाढवून देण्यावर भर. ओबीसी वर्गाच्या आणखी 29 जातींचा समावेश केंद्र सरकारच्या यादीत करण्यासाठी प्रस्ताव पाठवला आहे, ज्यामुळे त्यांना केंद्रीय योजनांचा लाभ मिळेल. ओबीसी क्रीमी लेअरमध्ये (पालकांचे वार्षिक उत्पन्न क्र8 लाखांपेक्षा जास्त) येणाऱ्या उमेदवारांना आरक्षण नाही, परंतु नॉन-क्रीमी लेअरमधील उमेदवारांना सवलती मिळतात बनावट कुणबी जात प्रमाणपत्रांद्वारे होणाऱ्या आरक्षणाच्या गैरवापराबाबत ओबीसी समाजाकडून आक्षेप नोंदवल्यानंतर सरकार या प्रकरणाची तपासणी करत आहे. सध्य परिस्थिती पाहता ओबीसींना राजकीय आरक्षण मिळालेच पाहिजे या विषयावर सगळ्याच पक्षांचे एकमत आहे असे दिसते इतर मागासवर्गीय (OBC), विमुक्त जात, भटके आणि विशेष मागासवर्गीयांच्या सामाजिक, शैक्षणिक आणि आर्थिक विकासावर लक्ष केंद्रित करण्यासाठी महाराष्ट्र सरकारच्या मार्फत विविध वित्त आणि विकास महामंडळाची स्थापना करण्यात येत येत आहे. यात प्रामुख्याने महाराष्ट्र राज्य इतर मागासवर्गीय वित्त आणि विकास महामंडळ ,तसेच शॅक्षणिक सुधारणा व्हावी यासाठी शासनाकडून विविध शिष्यवृत्ती सुरु करण्यात आली आहेत. अलीकडच्या काळात आरक्षणाचे प्रश्न सोडवण्यासाठी विविध समित्यांची स्थापना करून निर्णय घेतले जात आहेत ओबीसी समुदायासाठी ओबीसी मंत्रालयाची 2016 मध्ये स्थापना केल्यामुळे या समुदायाचा विकास करण्यासाठी त्यांच्याशी संबंधित केंद्रीत धोरणे ठरविण्यासाठी त्याचा नक्कीच फायदा होईल. अशा पद्धतीचा विचार यापूर्वी

देशातील कोणत्याच राज्यात झाला नव्हता. या स्वतंत्र विभागाद्वारे ओबीसींसाठीच्या कल्याणकारी योजना रोबवणे, त्याची अंमलबजावणी करणे आणि सर्वात महत्त्वाचे म्हणजे त्याचा लाभ संबंधितांना मिळवून देता येऊ लागला. या विभागामुळे सर्वसामान्य ओबीसी समाजाच्या अडचणी थेट सरकारपर्यंत पोहोचवण्यासाठी एक माध्यम निर्माण झाले.

ओबीसी विभागांतर्गत कार्यरत संस्था व महामंडळे

1. इतर मागास बहुजन कल्याण संचालनालय, पुणे
2. महाराष्ट्र राज्य मागासवर्ग आयोग, पुणे
3. महात्मा ज्योतिबा फुले संशोधन व प्रशिक्षण संस्था (महाज्योती), नागपूर
4. महाराष्ट्र संशोधन, उन्नती व प्रशिक्षण प्रबोधिनी (अमृत), मुंबई
5. महाराष्ट्र राज्य इतर मागासवर्गीय वित्त आणि विकास महामंडळ, मुंबई
6. वसंतराव नाईक विमुक्त जाती व भटक्या जमाती विकास महामंडळ, मुंबई
7. महात्मा फुले विकास महामंडळ
8. साहित्यरत्न लोकशाहीर अण्णाभाऊस साठे विकास महामंडळ
9. संत रोहिदास चर्मोद्योग विकास महामंडळ
10. पुण्यश्लोक आहिल्यादेवी शेळी,मेंढी विकास महामंडळ
11. शामराव पेजे कोकण इतर मागासवर्ग आर्थिक विकास महामंडळ

सामान्य प्रशासन विभाग, शासन अधिसूचनचा क्र. शाकानि 2017/ प्र.क्र.33/18 (र.व. का.), दि. 09 मार्च 2017 अन्वये विमुक्त जाती, भटक्या जमाती, इतर मागासवर्ग व विशेष मागासवर्ग कल्याण विभागाची निर्मिती करण्यात आली. त्याचबरोबर विमुक्त जाती, भटक्या जमाती, इतर मागसवर्ग विशेष व मागासवर्ग कल्याण विभागाकरीता पदांची निर्मिती करण्यास मंजुरी देण्यात आली.

इतर मागासवर्गातील युवकांना रोजगार संधी उपलब्ध करून देण्यासाठी ओबीसी महामंडळास दोन अर्थसंकल्पीय अधिवेशनात 5.. कोटी रुपये देण्याची घोषणा केली वरील परिस्थिती पाहता महाराष्ट्र सरकार ओ बी सी समाजासाठी उपयोगी आणि ठरतील अशीच धोरणे राबवत असल्याचे आपणास दिसते

मराठवाड्यातील ओबीसी (इतर मागासवर्गीय) समाजासमोरील प्रमुख आठहाने/अडचणी

शैक्षणिक मागासलेपण शिक्षणाचा दर्जा व प्रवेश कमी असल्यामुळे शैक्षणिक मागासलेपण मोठ्या प्रमाणात आहेत.आर्थिक मराठवाडयात इतर मागासवर्गीय समाज लहान व सीमांत शेतीवर अवलंबून आहे परिणामी त्यांचे उत्तपन्न मर्यादित आहे. मायादित उसन्न सरोत असल्यामुळे कार्बाजारीपणा वाढलेला दिसत आहे मराठवाडा हा दुष्काळ प्रवण क्षेत्र असल्यामुळे तेथे बेरोजगारी व अपुरा रोजगार उपलब्ध आहे कौशल्यांच्या अभावामुळे योग्य नोकऱ्या मिळत नाहीत असंघटित क्षेत्रात जास्त प्रमाणात काम स्थिर उत्पन्नाची कमतरता सामाजिक भेदभावजातीय भेदभाव अजूनही अस्तित्वात सामाजिक प्रतिष्ठा कमीनिर्णयप्रक्रियेत मर्यादित सहभाग आरक्षणाच्या अंमलबजावणीतील त्रुटीआरक्षित जागा पूर्णपणे भरल्या जात नाहीत उच्च शिक्षण व उच्च पदांमध्ये कमी प्रतिनिधित्व धोरणांची अपुरी अंमलबजावणी स्थलांतराची समस्या ग्रामीण भागातून शहरांकडे मोठ्या प्रमाणात स्थलांतर ऊसतोड मजूर व हंगामी कामगार म्हणून काम ,अस्थिर जीवनशैली, आरोग्य व मूलभूत सुविधांचा अभाव ,ग्रामीण भागात आरोग्य सुविधा अपुऱ्या स्वच्छ पाणी व निवासाच्या समस्या, कुपोषण व आरोग्यविषयक समस्या, माहिती व जागरूकतेचा अभावशासकीय योजनांची माहिती कमी लाभ मिळवण्यात अडचणी, प्रशासकीय प्रक्रियेबद्दल अज्ञान, राजकीय प्रतिनिधित्व मर्यादितस्थानिक पातळीवर काही प्रमाणात सहभाग असला तरी उच्च स्तरावर कमी निर्णयप्रक्रियेत प्रभाव कमी ,पारंपरिक व्यवसायांवर अवलंबित्वआधुनिक कौशल्यांचा अभाव पारंपरिक व्यवसायांची घटती मागणी

मराठवाड्यातील ओ.बी.सीं.च्या सामाजिक आणि आर्थिक परिस्थिती –

मराठवाडा हा महाराष्ट्रातील दुष्काळग्रस्त व आर्थिक दृष्ट्या मागासलेला प्रदेश आहे या प्रदेशांमध्ये इतर मागासवर्गीय समाजाची लोकसंख्या मोठ्या प्रमाणात वास्तव्य करत आहे मराठवाडा दुष्काळग्रस्त मानला जातो या समाजाच्या सामाजिक स्थितीचा जर आपण नीट अभ्यास केला तर असे दिसते की या समाजामध्ये शिक्षणाची कमतरता आहे त्याचबरोबर हा समाज जातीय भेदभावासारख्या गोष्टीला सामोरे जात आहे मराठवाड्यात पावसाचे प्रमाण अतिशय कमी असल्यामुळे इतर आरोग्य सुविधा अपूर्ण आहेत परिणामी तेथील समाजाला आपल्या आर्थिक उन्नतीसाठी गाव सोडून शहरी भागाकडे वळावे लागत असल्याने आपल्या दिसते म्हणजेच मराठवाड्यातील इतर मागासवर्गीय समाज सामाजिक दृष्टीने मागास आहे कारण त्यांच्या जाती भेदभाव सारख्या गोष्टीला सामोरे जावे लागत आहे मराठवाड्यातील ओबीसींच्या बाबत विचार केला असता 2000 च्या जनगणनेच्या आकडेवारीनुसार जिल्ह्याने आहे संख्या उपलब्ध नाही मराठवाड्यातील ओबीसींची अंदाजीत लोकसंख्या मराठवाड्यातील आठ जिल्ह्यांमध्ये इतर मागासवर्गीय यांची लोकसंख्या साधारणत: 35 ते 40 टक्के असल्याचे मानले जाते राज्य मागासवर्गीयांच्या निष्कर्षानुसार राज्य बागासवर्गीय आयोगाने गोखले इन्स्टिट्यूट यांनी दिलेल्या

माहितीनुसार राज्यात सरासरी 38% एवढी इतर मागासवर्गीयांची संख्या आहे मराठवाड्यात निजाम काळातील कुणबी नोंदी असल्याने मोठ्या प्रमाणात मराठा समाजाच्या समावेश इतर मागासवर्गीय वर्गात होत आहे यामुळे इतर मागासवर्गीयांची

अधिकृत आकडेवारी टक्केवारी वाढण्याची शक्यता नाकारता येत नाही त्यातच इतर मागासवर्गीय मध्ये ऊसतोड मजूर आणि औद्योगिक कामगारांच्या स्थलांतरामुळे जिल्ह्यातील वास्तविक लोकसंख्येचा परिणाम होऊन ती सतत बदलत जाणारी असते असे आपणास दिसते. मराठवाड्यातील ओबीसी (इतर मागासवर्गीय) समाजाची निश्चित लोकसंख्या अधिकृतपणे जाहीर झालेली नाही, कारण भारतात 2011 नंतर कोणतीही जातनिहाय जनगणना झालेली नाही. मराठवाड्यातील इतर मागासवर्गीय समाजाची आर्थिक परिस्थिती व सामाजिक परिस्थितीचे अध्ययन करण्यासाठी महत्त्वाची घटक तपासणी आवश्यक आहे यात व्यवसाय शेतीवरील अवलंबित व शैक्षणिक स्तर स्थलांतर तसेच शासकीय व निमशासकीय योजनांचा त्यांच्यावर झालेला परिणाम या स्थितीचा अभ्यास करणे आवश्यक आहे सामाजिक स्थिती. मराठवाडा हा दुष्काळ प्रवण भाग असल्याकारणामुळे ओबीसी समाजाची आर्थिक स्थिती पावसावर अवलंबून आहे यात बरेच लोक लहान शेतकरी किंवा भूमिहीन शेतमजूर यांचे प्रमाण अधिक असल्याने त्यांचे उत्पन्न अतिशय कमी स्वरूपाचे असते परिणामी समाज कर्जबाजारी होऊ लागतो कर्जबाजारीपणामुळे आर्थिक अस्थिरता त्यांना वाटू लागते मराठवाड्यातील एकूण शेती संरचनेचा अभ्यास केला असता असे दिसते की सुमारे 60 टक्के

लोकसंख्या शेती लहान म्हणजे अल्पभूधारक असल्याचे समजते मराठवाड्यातील ओबीसी शेतीचे जिल्हा निहाय वर्गीकरण खालील प्रमाणे दिले आहे वरील परिस्थितीवरून आपणास असे दिसते की ग्रामीण

भागात ओबीसी समाजाचे उत्पन्न अतिशय कमी असल्यामुळे ते दारिद्रयरेषेजवळ आले आहेत तर काही लोक दारिद्र रेषेच्या खाली गेलेले आहेत असे आपणास दिसते त्यामुळे आपली उपजीविका करण्यासाठी बराचसा मोठ्या प्रमाणामधला ओबीसी समाज शहरी भागामध्ये स्थलांतर करत आहे असे दिसते परिणामी पारंपरिक व्यवसायात तसेच लोहार सुतार माळी लोहार यासारख्या पारंपारिक व्यवसायावर अवलंबून राहावे लागते .

मराठवाड्यातील कृषी कामगारांचे जिल्हानिहाय वर्गीकरण

जिल्हा	कृषी कामगार (%)	कृषी मजूर (%)
हिंगोली	74.8	46.61
बीड	72.39	36.06
उस्मानाबाद	70.98	48.26
जालना	70.93	39.63
परभणी	69.3	50.58
लातूर	66.4	55.23
नांदेड	64.01	56.41
औरंगाबाद	55.7	40.08

Source: Computed from the data obtained from Directorate of Agriculture, Department of Agriculture, Government of Maharashtra, Pune.

मराठवाड्यातील हिंगोली, बीड आणि जालना या जिल्ह्यांची अर्थव्यवस्था आजही मोठ्या प्रमाणावर शेतीवर आधारित आहे, तर औरंगाबादमध्ये बिगर-शेती क्षेत्राचा प्रभाव अधिक दिसून येतो. लातूर आणि नांदेडमध्ये शेतमजुरांची संख्या 55% पेक्षा जास्त असणे ही एक सामाजिक-आर्थिक चिंतेची बाब ठरू शकते.

मराठवाड्यातील इतर मागासवर्गीयांची शैक्षणिक स्थिती

अनु.	शैक्षणिक स्थिती	लाभार्थी संख्या	टक्केवारी
1	प्राथमिक	15	15
2	माध्यमिक/ उच्च माध्यमिक	25	25
3	पदवी	20	20
4	अशिक्षित	40	40
7	एकूण	100	100

स्रोत –प्राथमिक माहिती संकलनाच्या आधारे

वरील तक्ता मध्ये आपणास स्पष्टपणे दिसते की, प्राथमिक 15 % उच्च माध्यमिक शिक्षण घेतलेल्या लाभार्थ्याचे प्रमाण 25 % एवढे असून ती इतर शिक्षणाच्या तुलनेने असल्याचे दिसते. अशिक्षित लाभार्थ्यांची संख्या सर्वाधिक 40 % असल्याचे निदर्शनास येथे. तर पदवी शिक्षण घेतलेल्यांची संख्या एकूण लाभार्थ्यापैकी 20 % एवढीच आहे. वरील शैक्षणिक परिस्थिती विचारात घेतली असता. लाभार्थी फारसे उच्च शिक्षित नाहीत असे याठिकाणी नमूद करावेसे वाटते. मराठवाड्याच्या सर्व जिल्ह्यांचे साक्षरता प्रमाण हे राज्य सरासरीच्या खाली आहे. यासाठी शासनाने शिक्षणाचा दर्जा वाढविण्यासाठी प्रयत्न करावा व त्याचा लाभ गरजूंना मिळेल अशी व्यवस्था निर्माण करावी. विद्यार्थ्यांना शिकविला जाणारा अभ्यासक्रम हा रोजगारक्षम असला पाहिजे. 'कौशल्य प्रशिक्षण केंद्र' स्थापन करून व्यवसायाचे प्रशिक्षण देण्यात यावे. ऑल इंडिया कोटामधून वैद्यकीय शिक्षणासाठी ओबीसी समाजातील विद्यार्थ्यांना देण्यात येणाऱ्या 9 हजाराहून जास्त जागा ओबीसी समाजातील विद्यार्थ्यांना नाकारण्यात आलेल्या आहेत. विद्यापीठ अनुदान आयोग (University Grant Commision) नुसार भारतातील केंद्रीय विद्यापीठांमध्ये ओबीसी समाजातील प्राध्यापकांची संख्या 5 टक्क्यांपेक्षा कमी आहे. वास्तविक पाहता येथे ओबीसी समाजातील प्राध्यापकांची संख्या ओबीसी आरक्षणानुसार 27 टक्के असायला हवी. राष्ट्रीय विधी महाविद्यालयांमध्ये (National Law Universities) मध्ये ओबीसी समाजाचे 27 टक्के आरक्षणाची तरतूद पूर्णपणे डावलण्यात आली आहे. इंडियन इन्स्टिटयूट ऑफ मॅनेजमेंट (IIM) सारख्या उच्च शिक्षणाच्या महत्वाच्या संस्थांमध्ये सुद्धा ओबीसी समाजाच्या प्राध्यापकांसाठीच्या आरक्षित असलेल्या 27 टक्के जगांपैकी 52 टक्के जागा या भरल्या गेलेल्या नाहीत. भारतीय विज्ञान संस्था (Indian Institute of Science) या संस्थेमध्ये ओबीसी प्राध्यापकांच्या आरक्षित असलेल्या 9. टक्के जागा भरल्या गेलेल्या नाहीत.या आकडेवारीमधून हे स्पष्ट लक्षात येते, की स्वतंत्र भारतामध्ये अजूनही ओबीसी समाजाचे शैक्षणिक दमन कशा पद्धतीने केले जात आहे.

ओबीसी समाज हा ऐतिहासिकदृष्ट्या सामाजिक व शैक्षणिकदृष्ट्या मागास राहिलेला आहे. संविधानिक तरतुदी असूनही प्रत्यक्षात त्यांचा पुरेसा लाभ मिळत नाही. मराठवाड्यासारख्या दुष्काळग्रस्त भागात ओबीसी समाजाची परिस्थिती अधिक गंभीर आहे. त्यामुळे शिक्षण, रोजगार, सिंचन सुविधा आणि सामाजिक समतेसाठी प्रभावी धोरणांची गरज आहे.

परिणाम– जातिव्यवस्था आणि तिच्या पार्श्वभूमीवर विकसित झालेल्या ओबीसी समाजाच्या स्थितीमुळे भारतीय समाजावर अनेक सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक आणि राजकीय परिणाम झाले आहेत

1. **सामाजिक परिणामसामाजिक विषमता वाढली –** उच्च-निम्न अशी श्रेणी निर्माण होऊन समानतेचा अभाव राहिला. ओबीसी व इतर खालच्या घटकांना सामाजिक प्रतिष्ठा कमी मिळाली. समाजात संघर्ष, असंतोष आणि विभागणी वाढली या कारणामुळे समाजची गतिशीलता कमी झाली

2. अलीकडील काळात शिक्षणाच्या सोइ उपलब्ध असून देखील उच्च शिक्षणात कमी प्रतिनिधित्व आणि व्यावसायिक व तांत्रिक शिक्षणात सहभाग कमी झाला

3. **आर्थिक परिणाम–** गरिबी आणि अस्थिर उत्पन्न रू पारंपरिक व्यवसायांवर अवलंबून राहावे लागते व आहे त्यात जमिनीचे असमान वाटप रू लहान व सीमांत शेतकऱ्यांचे प्रमाण जास्त. आणि औद्योगिकध्नोकरी संधी कमी

शिफारशी/उपायजोजना

1. **जातीनिहाय जनगणना–** समाजाची नेमकी लोकसंख्या आणि त्यांची सामाजिक-आर्थिक स्थिती समजून घेण्यासाठी जातनिहाय जनगणना लवकरात लवकर राबवावी, जेणेकरून धोरणे अधिक अचूक ठरवता येतील. स्थानिक स्वराज्य संस्थांप्रमाणेच उच्च स्तरावरील धोरण ठरवणाऱ्या समित्यांमध्ये ओबीसी समाजाला लोकसंख्येच्या प्रमाणात प्रतिनिधित्व द्यावे स्थलांतर रोखण्यासाठी ऊसतोड कामगारांच्या मुलांसाठी हंगामी शाळा आणि त्यांच्या आरोग्यासाठी फिरते दवाखाने उपलब्ध करून द्यावेत.स्वच्छ

2. **पाणी आणि स्वच्छता–** मराठवाड्यातील दुष्काळी गावांमध्ये शुद्ध

पिण्याच्या पाण्याचे प्रकल्प प्राधान्याने राबवावेत, जेणेकरून आरोग्यावरील खर्च कमी होईल.

3. जागरूकता आणि प्रशासन – योजनांची माहिती पोहोचवणेरू ग्रामीण भागात शासकीय योजनांची माहिती देणारी विशेष यंत्रणा (उदा. माहिती केंद्र किंवा मोबाईल ?प) उभारावी.प्रशासकीय पारदर्शकतारू आरक्षणाचा लाभ घेताना येणाऱ्या अडचणी (उदा. नॉन-क्रिमिलेअर प्रमाणपत्र) कमी करण्यासाठी एक खिडकी योजना (Single Window System) सुरू करावी.या शिफारशींची अंमलबजावणी केल्यास मराठवाड्यातील ओबीसी समाजाच्या राहणीमानात आणि सामाजिक दर्जा मध्ये सकारात्मक बदल घडून येऊ शकतो.

4. आरक्षणाचे उप-वर्गीकरण (Sub Categorization)- ओबीसींमधील काही मोजक्याच जातींना आरक्षणाचा जास्त लाभ मिळत असल्याचे दिसून आले आहे. त्यामुळे ओबीसींच्या 27% कोट्याचे अंतर्गत वर्गीकरण करून अधिक मागास जातींना न्याय मिळवून देणे.

5. सरकारी सेवा आणि शैक्षणिक संस्थांमधील ओबीसींसाठी राखीव असलेल्या रिक्त जागा प्राधान्याने भरण्यासाठी 'बॅकलॉग' मोहिमा राबवणे.

6. ओबीसी विद्यार्थ्यांसाठी असलेल्या मॅट्रिकोत्तर शिष्यवृत्तीच्या रकमेत महागाईनुसार वाढ करणे आणि ती वेळेवर वितरित करणे.

7. क्रिमी लेअरची (Creamy layers) वार्षिक उत्पन्न मर्यादा वाढवणे, जेणेकरून मध्यमवर्गीय कुटुंबातील विद्यार्थ्यांना आरक्षणाचा लाभ घेता येईल.

8. प्रत्येक जिल्ह्याच्या आणि तालुक्याच्या ठिकाणी ओबीसी मुला-मुलींसाठी स्वतंत्र शासकीय वसतिगृहे बांधणे.

9. पारंपारिक व्यवसायात असलेल्या जातींसाठी (उदा. विणकर, कुंभार, सुतार) आधुनिक तंत्रज्ञान आणि बाजारपेठ उपलब्ध करून देण्यासाठी प्रशिक्षण केंद्रे सुरू करणे.

10 स्थानिक स्वराज्य संस्थांमध्ये ओबीसींचे आरक्षण कायम ठेवण्यासाठी आवश्यक 'एम्पेरिकल डेटा' (म्उचपतपबंस वंज) संकलित करणे.

निष्कर्ष – मराठवाड्यातील OBC समाज सामाजिक व आर्थिकदृष्ट्या अनेक अडचणींना सामोरे जात आहे. दुष्काळ, शिक्षणाचा अभाव, कर्जबाजारीपणा, आणि स्थलांतर यामुळे त्यांची प्रगती मर्यादित राहिली आहे. त्यामुळे या समाजाच्या सर्वांगीण विकासासाठी शिक्षण, रोजगारनिर्मिती, सिंचन सुविधा आणि शासकीय योजनांची प्रभावी अंमलबजावणी आवश्यक आहे. मराठवाड्यातील OBC समाज अनेक सामाजिक व आर्थिक अडचणींना सामोरे जात असला तरी योग्य धोरणे, शिक्षण, रोजगारनिर्मिती आणि शासकीय योजनांची प्रभावी अंमलबजावणी केल्यास या समाजाचा सर्वांगीण विकास साध्य होऊ शकतो. दुष्काळग्रस्त परिस्थिती, पावसावर अवलंबून असलेली शेती, शिक्षणाचा अभाव, कर्जबाजारीपणा आणि मोठ्या प्रमाणावर होणारे स्थलांतर यामुळे या समाजाची प्रगती मर्यादित राहिली आहे. त्याचबरोबर जातीय भेदभाव आणि अपुऱ्या आरोग्य व पायाभूत सुविधांमुळे त्यांची जीवनमानाची गुणवत्ता कमी राहते.तथापि, योग्य शैक्षणिक संधी, कौशल्य विकास, सिंचन सुविधा, स्थानिक रोजगारनिर्मिती आणि शासकीय योजनांची प्रभावी अंमलबजावणी यांद्वारे या समाजाचा सर्वांगीण विकास साधता येऊ शकतो. त्यामुळे शासन आणि समाज यांच्या संयुक्त प्रयत्नांमुळे मराठवाड्यातील ओ.बी.सी. समाज अधिक सक्षम, स्वावलंबी आणि प्रगत होऊ शकतो. मराठवाड्यातील ओबीसी समाज सामाजिक व आर्थिकदृष्ट्या मागासलेला असून दुष्काळ, शिक्षणाचा अभाव, कर्जबाजारीपणा आणि स्थलांतर या प्रमुख समस्यांना सामोरे जात आहे. पावसावर अवलंबून असलेली शेती आणि मर्यादित रोजगाराच्या संधी यामुळे त्यांची आर्थिक स्थिती कमकुवत राहिली आहे. तसेच सामाजिक स्तरावरही जातीय भेदभाव आणि अपुऱ्या सुविधा यांचा परिणाम दिसून येतो. भारतीय जातिव्यवस्था ही

ऐतिहासिकदृष्ट्या सामाजिक आणि आर्थिक विषमतेचे प्रमुख कारण राहिली असून, ओबीसी समाजाने उत्पादन व सेवा क्षेत्रात महत्त्वपूर्ण योगदान दिले असले तरी त्यांना दीर्घकाळ दुय्यम स्थानाला सामोरे जावे लागले. शिक्षण, अर्थकारण आणि सामाजिक प्रतिष्ठा या सर्व क्षेत्रांत या समाजावर मर्यादा आल्या. स्वातंत्र्यानंतर आरक्षण, विविध आयोग आणि शासकीय धोरणांमुळे ओबीसी समाजाच्या उन्नतीस चालना मिळाली, तसेच सामाजिक जागरूकता आणि राजकीय सहभाग वाढला. तरीही अंतर्गत विषमता, शिक्षणातील तफावत आणि आर्थिक अस्थिरता यांसारखी आव्हाने आजही कायम आहेत

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वायर, ओबीसी समाज – दशा आणि दिशा आनंद क्षीरसागर श्रनसल 1, 2021
2. International Journal of Research Publication and Reviews Journal homepage: www.ijrpr.com ISSN 2582-7421
3. गोगटे श्री ब मराठवाडयातील सूची औरंगाबाद पद्मालय प्रकाशन 2001
4. कुलकर्णी भुजंगराव मराठवाड्याचा विकास अभयास व चिंतन औरंगाबाद श्रेयस प्रकाशन 1998
5. जिल्हा सामाजिक व आर्थिक समालोचन, लातूर 2022
6. महाराष्ट्राची आर्थिक पाहणी अहवाल अर्थ व सांख्यिकी संचलनालय व नियोजन विभाग मुंबई 2011-2012
8. महाराष्ट्राची आर्थिक पाहणी अहवाल अर्थ व सांख्यिकी संचलनालय व नियोजन विभाग मुंबई 2021-2022
9. बुटे नंदू समस्या व उपाय 2010 जिजाई प्रकाशन पुणे
10. इतर मागासवर्गीय आणि जनगणना – माधुरी भामरे पुणे -2016
11. ओबीसी राजकारण कृषिवल दिवाळी अंक 2012 Monday, december 3, 2012
12. ओ.बी.सी.च्या विकासासाठी घटनात्मक तरतुदी डॉ। माया मसराम गडचांदूर ISSN 2231-1629
13. म्हस्के दयाराम 2016 – महार्ष्ट्र प्रसासणात आरक्षण धोरणाची अमलबजावणी
14. यशवंत झगडे ओबीसी अस्मिता आणि समकालीन प्रश्न 2019 TISS
15. Dr. Sandeep B. Gaikwad*WAGE RATE DIFFERENCES IN MARATHWADA REGION International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS) 52 ISSN : 2581-9925
16. https://www.lokmat.com/mumbai/many-recommendations-of-the-cabinet-sub-committee-will-accelerate-the-resolution-of-the-issues-of-the-obc-community-a-a571/

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

उदयपुर के शैव मतावलम्बीय पर्यटन स्थल

डॉ. मनोज दाधीच* कविता विश्नोई **

* सहायक आचार्य (इतिहास) पेसिफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, PAHER विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी (इतिहास) पेसिफिक सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, PAHER विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – राजस्थान राज्य के दक्षिण–मध्य भाग में अवस्थित मेवाड़ रियासत जिसे पूर्वकाल में उदयपुर राज्य और चित्तौड़गढ़ राज्य के नाम से सम्बोधित किया जाता था में आधुनिक राजस्थान के उदयपुर राजसमंद, चित्तौड़ और भीलवाड़ा जिले समाहित है। मेवाड़ रियासत को दीर्घ अवधि तक गुहिल और सिसोदिया राजवंश के शासकों ने शासित किया था।[1] मेवाड़ का धार्मिक परिदृश्य प्राचीनकाल से ही वैविध्यपूर्ण और समृद्ध रहा है। इस रियासत में हिन्दू जैन और बौद्ध धर्म का व्यापक प्रभाव रहा है। इस रियासत के आराध्य दवों में भगवान शिव और विष्णु को प्रमुखता प्राप्त है। यहाँ ही वैविध्यपूर्ण धार्मिक संस्कृति, समृद्ध, गौरवशाली और जीवंत परम्पराओं की साक्षी रही है। यहाँ के महाराणाओं ने धर्म और धार्मिक प्रभावों के सरंक्षण और संवर्द्धन में महत्तवपूर्ण भूमिका निभाई है।

धर्म समाज में व्याप्त सामाजिक, सांस्कृतिक परम्पराओं और प्रणालियों की एक विस्तृत श्रृंखला है। जिसमें विश्वास, आस्था, नैतिकता, पवित्रता, व्यवहार, प्रथाएँ और भविष्यवाणियों को उल्लेखनीय स्थान प्राप्त होता है। जो सामान्य रूप से मानव समुदाय और मानवता का अलौकिक पारलौकिक और आध्यात्मिक तत्वों से परिचित करता है।[2] यद्यपि इसके अर्थ स्वरूप पर विद्धान एक मत नहीं है, तथापि स्वीकार किया जाता है कि धर्म मानव जीवन का सर्वव्याप्त वर्तमान और भविष्य है। यह ईश्वर और आत्मा–अन्तर मत और प्राणी के मध्य शाश्वत संबंध के रूप में सदैव विद्यमान रहता है।[3] सारव्य दर्शन के अनुसार अज्ञान से ज्ञान, विवेक से धर्म का प्रार्दुभाव होता है। सामान्य शब्दों में धर्म ही मानव जीवन का आधार है। मेवाड़ रियासत में प्राचीनकाल से ही धर्म की समृद्ध परम्परा और विरासत अक्षुण्ण रही है। मेवाड़ रियासत की विशेषता यहाँ हिन्दु जैन बौद्ध और मुस्लिम धर्म के मध्य स्थित अर्न्तसंबंध है। जो प्राचीन से अर्वाचीन युग तक एक–दूसरे के साथ सह–अस्तित्व के रूप में परिलक्षित होता है। मेवाड़ की धार्मिक संस्कृति और स्वरूप का प्रारम्भ 6वीं शताब्दी में गुहिलोत राजवंश से प्रारम्भ माना जाता है।[4]

शैव धर्म की उत्पत्ति और मेवाड़ – भगवान शिव जिन्हें हिन्दु धर्म की मान्यताओं में त्रिदेवों के एक देव के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त हैं, हिन्दु धर्म के प्राचीनतम देवताओं में सम्मिलित माने जाते हैं।[5] जहाँ ब्रह्मा को सृष्टि का रचियता, विष्णु संचालक माने जाते है, वहीं शिव (महेश) को उसका संहारक स्वीकार किया गया है। शिव को वैदिक साहित्य में रूद्र तो तंत्र साधनाओं में भैरव के नाम से प्रतिष्ठा प्राप्त है।[6] वर्तमान जगत उन्हें महादेव, भोलेनाथ, नीलकंठ, आशुतोष, महेश, महाकाल, कपाली, रामेश्वर, रूद्र और गंगाधर जैसे नामों से सम्बोधित करता है। शास्त्रों में शिव अपने रौद्र स्वरूप और सौरभ आकृति के लिए प्रसिद्धि प्राप्त है। शिव का अर्थ कल्याणकारी स्वरूप से सम्बोधित है तथापि उन्हें लय और प्रलय के देवता के रूप में स्वीकार किया जाता है। रूद्राष्टाध्यायी के पंचम् सर्ग में आशुतोष के विविध स्वरूपों का वर्णन विस्तारपूर्वक प्राप्त होता है।[7]

हिन्दु धर्म की सांस्कृतिक–धार्मिक परम्पराओं में शिव सम्प्रदाय अथवा शैव धर्म आशुतोष भगवान शिव के पूजा–विधान की एक परम्परा है। जिसका इतिहास मूल रूप से प्राचीनकाल के पूजा अनुष्ठानों से जुड़ा हुआ है। प्राचीन भारतीय हड़प्पा सभ्यता में शिव लिंग पूजा के प्रमाण प्राप्त होते हैं। वहीं वेदों में शिव को रूद्र के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। गुप्तकाल में भी शैव मत से सम्बन्धित विभिन्न देवालयों के प्रमाण प्राप्त हुए हैं। कालान्तर में यह सम्प्रदाय अनेक वर्गों में विभाजित होता गया जिनमें पाशुपत शैव, कश्मीरी शैव और नाथ सम्प्रदाय के नाम प्रमुखता से लिए जाते हैं। इस सम्प्रदाय में योग मंत्र साधना और ध्यान को विशेष स्थान प्राप्त है। शिवत्व की प्राप्ति इस सम्प्रदाय में जीवन का पवित्र लक्ष्य स्वीकार किया जाता है। यह सम्प्रदाय मूलरूप से एकेश्वरवाद, मुक्तीमार्गी, प्रतीक पूजा और साधु परम्पराओं में विश्वास करता है। मूल रूप से भगवान आशुतोष शिव तथा उनके अवतार स्वरूपों में श्रृद्धा रखने वालों और शिव की पूजा करने वालों को शैव कहा जाता है।[8] हर्ष चरित्र में कहा गया है कि 'गृहे–गृहे अपूज्यत भगवान खण्डपरशु अर्थात् प्रत्येक घर में शिव की पूजा की जाती है। राजपूत युग में शैव धर्म समाज में विशेष रूप से लोकप्रिय और प्रतिष्ठित रहा। जिसकी पुष्टि तत्कालिन साहित्य और अभिलेखों से होती है। कई राजपूत शासक भगवान शिव के अनन्य उपासक थे, जिसमें मेवाड़ रियासत का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। यहाँ के शासकों द्धारा शिव देवालयों का निर्माण भव्यता और प्रमुखता से करवाया गया था, जिनके प्रमाण आज भी अस्तित्व में है।

डॉ. रामधारी सिंह दीनकर के अनुसार, 'शैव सिद्धान्त में सृष्टि के परम् अध्यक्ष का नाम शिव है। वे ही चेतना के आधार और ब्रह्माण्ड में व्याप्त अनादि सत्य है। उनकी कृपा सृष्टि की पाँच प्रक्रियाओं में परिलक्षित होती है। जो सृष्टि की रचना, पालन और संहार जीव माहोच्छन्न और मुक्ति से सम्बन्धित है। शिव अपने समस्त कार्य अपनी सृष्टि के माध्यम से सम्पन्न करते हैं।'[9]

मेवाड़ में शैव सम्प्रदाय का विकास – प्राचीनयुग से ही मेवाड़ रियासत में वैदिक, बौद्ध और जैन धर्म के प्रचार–प्रसार के प्रमाण प्राप्त होते है। मेवाड़ का प्रदेश प्रकृति से सम्पन्न होने एवं अरावली पर्वतमाला की प्राचीनतम

अवस्थिति के कारण यहाँ के जनमानस को प्रकृति उपासना के लिए सदैव प्रेरित करता रहा है। फलस्वरूप थल, जल और नभ के प्रति आश्चर्य और जिज्ञासापूर्ण आस्था विश्वास और स्नेह का माध्यम इनकी पूजा उपासना और धार्मिक अनुष्ठान का उल्लेखनीय कारण बना। जिससे यहाँ के जनजीवन में लौकिक आध्यात्म के भाव लौकिक धर्म का साधन और साधना के स्वरूप से दृष्टिगत होने लगा। जो आज भी मेवाड़ परिक्षेत्र में प्रचलित प्रकृति पूजन में परिलक्षित होता है। यह एक प्रकार से मातृ-पूजन (पोषण आस्था) का सूचक है।

मेवाड़ परिक्षेत्र में आदिदेव महादेव और उसकी शक्ति का पूजन मातृशक्ति के रूप में उदित हुआ था। इतिहास में इसका प्रथम उल्लेख 483 ई. के छोटी सादड़ी के लेख में अर्द्धनारीश्वर के रूप में प्राप्त होता है। लेख से ज्ञात होता है कि मेवाड़ क्षेत्र में धर्म का प्रारम्भ शिव तथा शक्ति के माध्यम को धारण किये हुआ था। इसका प्राचीनतम रूवरूप शिवलिंग और जलधारी को धारण किये दिखाई देता है। इस रियासत के आराध्य देव श्री एकलिंग जी को माना जाता रहा है। यहाँ शैव मत के पाशुपत दर्शन के लकुलीश-सम्प्रदाय का विकास उल्लेखनीय रूप से हुआ था। इसके अन्य केन्द्रों में चित्तौड़गढ़ जिले में स्थित मेनाल का नाम उल्लेखनीय रूप से लिया जाता है।[10] मेवाड़ का प्राचीन नाम शिवि जनपद हुआ करता था। नवीं और आठवीं शताब्दी के पुरातात्विक प्रमाण यहाँ शिव पूजा की प्राचीनता के परिचायक है।[11] मेवाड़ के शासक स्वयं को शैव पूजक स्वीकार करते रहे है। उदयपुर से 18 किलोमीटर दूर स्थित कैलाशपुरी क्षेत्र यहाँ के शैव मतावलम्बियों का प्रमुख केन्द्र है। जो एकलिंगेश्वर के नाम से प्रसिद्ध है।[12] मेवाड़ रियासत के शासक श्री एकलिंग जी को अपना महाराणा और स्वयं को उनका दीवान मानते आये है।[13] मेवाड़ में शैव सम्प्रदाय का पाशुपात सम्प्रदाय अधिक विकसित हुआ। इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक लकुलीश को माना जाता है, जो भगवान शिव के 28 वें तथा अन्तिम अवतार के रूप में स्वीकार किये जाते हैं। मेवाड़ के हरित ऋषि इसी सम्प्रदाय से सम्बन्धित स्वीकार किये जाते हैं। मेवाड़ रियासत में स्थित एकलिंगनाथ जी का मन्दिर जिसका निर्माता बप्पारावल को माना जाता है, इस सम्प्रदाय का मुख्य मन्दिर है।[14]

मेवाड़ के प्रमुख शैव मतावलम्बीय पर्यटन स्थल – मेवाड़ के जनजीवन में धर्म का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यहाँ के शासक धर्म की रक्षा के लिए प्राणोत्सर्ग करने को सदैव तत्पर रहे हैं। मेवाड़ परिक्षेत्र के विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना प्राचीन युग से विद्यमान रही है। 8 से 12वीं शताब्दी तक इस क्षेत्र में ब्रह्मा और सूर्य की उपासना भी लोकप्रिय थी किन्तु बाद के काल में यहाँ शिव, शक्ति, विष्णु और विष्णु के अवतारों के रूप में राम-कृष्ण की पूजा और भक्ति साधना का प्रचलन भी प्रारम्भ हुआ। मेवाड़ परिक्षेत्र में शिव का पूजन अर्द्धनारीश्वर स्वरूप में किया जाता रहा है। यहाँ शैव सम्प्रदाय के लकुलीश और पाशुपत सम्प्रदाय अत्यन्त लोकप्रिय रहे।[15]

एकलिंग जी का मंदिर – उदयपुर शहर से लगभग 20 किलोमीटर दूर मेवाड़ महाराणाओं के इष्टदेव एकलिंग जी का धार्मिक स्थल दो पहाड़ियों के मध्य कैलाशपुरी ग्राम में अवस्थित है। इसे शैव सम्प्रदाय के अनुसार लकुलीश मंदिर के रूप में मान्यता प्राप्त है। आठवीं शताब्दी में इस महादेव मंदिर का निर्माण मेवाड़ के तात्कालिन शासक बप्पा रावल द्वारा करवाया गया था। इस मंदिर के चारों और सुदृढ़ प्राचीर और स्थापत्य शिल्प की सुन्दर कारीगरी से युक्त परकोटे का निर्माण महाराणा मोकल के शासनकाल में करवाया गया था। जबकि महाराणा रायमल के समय इस मंदिर ने अपना वर्तमान स्वरूप ग्रहण किया था। मंदिर के गर्भगृह में श्वेत रंग के पाषाण से निर्मित भगवान आशुतोष श्री एकलिंगनाथ की चर्तुमुखी प्रतिभा शोभायमान है। गर्भगृह के बाहर स्थित दो पाषाण पट्टिकाऐं एकलिंग और सहायक देवताओं की सुन्दर आकृतियों से सुसज्जित है। यहाँ बनी विविध आलों (तबारियों) में विविध हिन्दु देवी-देवताओं की प्रतिमाऐं अवस्थित है, जिनमें गणेश, शिव, विष्णु, ब्रह्मा, कार्तिकेय आदि के नाम उल्लेखनीय है। एकलिंग जी मंदिर के परिसर में कई छोटे-बड़े हिन्दु धर्म के अन्य देवालय भी अवस्थित है, जिनमें महाराणा कुम्भा द्वारा निर्मित विष्णु मंदिर उल्लेखनीय है, जिसे स्थानीय लोग मीराबाई का मंदिर नाम से भी सम्बोधित करते है। मान्यता है कि राजस्थान में यह मंदिर पाशुपत सम्प्रदाय का एक मात्र स्थान है।[16]

भगवान एकलिंगनाथ का यह मंदिर मेवाउ में धार्मिक ऐतिहासिक, राजनैतिक, प्राकृतिक और नैसर्गिक दृश्यों के कारण पर्यटन की दृष्टि से उल्लेखनीय है। मेवाड़ परिक्षेत्र के पौराणिक ग्रंथों में मंदिर के निर्माण और इतिहास से सम्बन्धित कई रोचक कथाओं के वृत्ताान्त मिलते है। यह मंदिर शिखबन्ध, सुदृढ़, सुन्दर, श्वेत पाषाण से निर्मित है, यहाँ की प्राचीन लिंगाकार प्रतिमा यवनों के आक्रमणों के समय इन्द्रसरोवर में विसर्जित कर दी गई थी। तत्पश्चात् यहाँ काले संगमरमर की चतुमुर्खी प्रतिमा की स्थापना की गई जो वर्तमान तक अस्तित्व में है। इस प्रतिमा के चतुर्मुखी स्वरूप का पूजन पूर्व में सूर्य, पश्चिम में ब्रह्म दक्षिण में रूद्र (भैरव) और उत्तार में विष्णु स्वरूप मानकर किया जाता है। मंदिर के गर्भगृह के चार द्वार चारों दिशाओं में अवस्थित है।[17]

मंदिर के पूर्वी प्रवेश द्वार के निकट गर्भगृह में पार्वती, गणेश, कार्तिकेय और गंगा माता की प्रतिमाऐं स्थित है। मंदिर के मुख्य प्रवेश द्वार रजत (चाँदी) से निर्मित है, जिस पर सुन्दर नक्काशी का बेलबुटेदार कार्य परिलक्षित होता है। प्रवेश द्वार के दोनों ओर पितृ भक्ति का आदर्श स्थापित करते हुए भगवान गणेश और कार्तिकेय हाथों में चंवर लिए हुए प्रतिमाओं के रूप में अंकित है। गर्भगृह के बाहर एक बड़ा सभामण्डप बना हुआ है यहीं से पर्यटक और श्रृद्धालु आशुतोष भगवान एकलिंग जी के दर्शन करते है। सभा मण्डप में मध्य भाग में रजत, पीतल और पाषाण निर्मित तीन नन्दकेश्वर प्रतिमान क्रम से बनी हुई है।[18]

मंदिर के बाहर की ओर दक्षिण द्वार के निकट कुछ ऊपरी भाग में माता, अम्बिका, कालिका और गणेश के वि.सं. 1890 में निर्मित देवालय अवस्थित है। मंदिर परिसर में छोटे-बड़े लगभग 70 देवालय स्थित है। मंदिर के पिछले भाग में मेवाउ के प्रमुख ऋषि हारित की गुफा और प्रतिमा स्थित है। जिसके निकट ही विन्धवासिनी देवी और भैरवनाथ की प्रतिमाऐं दर्शनीय है।[19]

एकलिंग जी मंदिर से कुछ दूरी पर पहाड़ी के ऊपरी भाग में नैत्रय कोण में बाघेला सरोवर, बाघसिंह का स्मारक और अतिप्राचीन विष्णु और शिव के देवालय स्थित है, जो दर्शनीय है। यही निकट स्थित एक जैन देवालय जिसे अद्भुतनाथ जी (अदबदनाथ) के नाम से सम्बोधित किया जाता है, पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है। यह मंदिर ओसवाल सारंग द्वारा महाराणा कुम्भा के शासनकाल 1437 ई. में बनवाया गया था। जिसमें 16वें तीर्थंकर शान्तिनाथ जी की नौ फीट ऊँची प्रतिमा अवस्थित है। इसके निकट ही खुमाण रावल के देवरे के नाम से एक अन्य स्मारक बना है जो ध्वत स्थिति में है। इसकी तक्षण कला पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है। इस प्रकार

कैलाशपुरी क्षेत्र (मेवाड़) में अवस्थित एकलिंग जी मंदिर अतिप्राचीन अद्भुत स्थापत्य शिल्प और नैसिर्गिक सुन्दरता से युक्त है जो पर्यटकों के साथ-साथ इतिहास प्रेमियों को अपनी ओर आकर्षित करता है।[20]

उभयेश्वर महादेव मंदिर – अरावली पर्वत श्रृंखला में स्थित यह प्राचीन शिव मंदिर जिसे मेवाड़ का बद्री विशाल नाम से सम्बोधित किया जाता है, गोगुन्दा गाँव से 20 मील दक्षिणपूर्व और कमलनाथ से उत्तारपूर्व दिशा में 20 मील की दूरी पर स्थित है। यह मंदिर उदयपुर जिले की धार पंचायत समिति का प्रमुख पर्यटन स्थल है। जिसकी उदयपुर जिले से अनुमानित दूरी 25 किलोमीटर है। नैसर्गिक सौन्दर्य और प्राकृतिक रमणीयता के मध्य स्थित श्री उभयेश्वर महादेव मंदिर का शिवलिंग स्वयंभू माना जाता है। यह मंदिर और इसमें प्रतिष्ठित प्रतिमा पाँच स्थानों से खण्डित है। मेवाड़ परिक्षेत्र के शिव मंदिरों में यह एक ऐसा मंदिर है, यहाँ खण्डित शिवलिंग की पूजा अर्चना श्रृद्धा के साथ की जाती है। यहाँ स्थित एक फिट की ऊँचाई लिए यह लिंग मध्यवर्ती भाग से खण्डित अवस्था में है। इसके खण्डित होने के पीछे क्षेत्रीय मान्यता है कि मुगल आक्रमण के समय मेवाड़ महाराणा द्वारा उभयेश्वर महादेव से रक्षार्थ प्रार्थना की गई थी, जिसमें शिव के चमत्कार से शिवलिंग के मध्यवर्ती भाग से हजारों की संख्या में भँवर निकले फलत: मुगल सेना भँवरों के आतंक से त्रस्त होकर अपना अस्त्र-शस्त्र रसद छोड़कर भाग गई। मंदिर से लगभग 200 मीटर की दूरी पर सुन्दर सरोवर और झरना विद्यमान है, जो पर्यटकों के आकर्षण का प्रमुख केन्द्र है। पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण इस सरोवर में वर्ष पर्यन्त जल भरा रहता है।[21]

इस मंदिर के सम्पूर्ण विकास का दायित्व मुनिदाता को समर्पित था। कुछ समय पूर्व इसके विकास का उत्तारदायित्व मेवाड़ कॉम्पलेक्स द्वारा ले लिया गया था। जिसने इस स्थल के पर्यटन को बढ़ावा देने की दिशा में पहल करते हुए यहाँ माता वैष्णोदेवी का मंदिर निर्मित करवाया, जिससे उभयेश्वर मंदिर सहित माता का मंदिर भी मेवाड़ का प्रमुख धार्मिक और पर्यटक स्थल बन गया। यहाँ वर्ष पर्यन्त देशी-विदेशी पर्यटकों की आवाजाही बनी रहती है।[22]

वैद्यनाथ मंदिर (सीसारमा) – उदयपुर के निकट स्थित सीसारमा गाँव में भगवान वैद्यनाथ महादेव का पंचायतन शैली में बने मंदिर का निर्माण महाराणा संग्राम सिंह की माता श्री देवकुमारी द्वारा करवाया गया। इस मंदिर की प्रतिष्ठा 6 जनवरी, 1716 ई. को सम्पन्न हुई थी। यह मंदिर 3 से 4 फिट ऊँचे वृत्ताकार आंगन पर स्थित है। मंदिर के ऊर्ध्वाकार निर्माणों में शास्त्रों में वर्णित स्थापत्य शिल्प के नियम-विधानों का पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है। यहाँ के ऊर्ध्वाकार निर्माणों में जंघा, प्रहारस्तर, कपोतावली, मंजरी, शिखर, विस्तृत आमलकसार लघु आमलकसार, कलशाण्डक, ध्वजादण्ड, घंटिया त्रिशुल और ध्वजा निर्मित है। सभामण्डप के अग्रभाग पर स्तम्भ युक्त परिसज्जा के साथ-साथ नृत्यमण्डली प्रदर्शित करती प्रतिमाऐं प्रदर्शित की गई है जो स्थापत्य शिल्प की अनूठी विरासत है। गर्भगृह के मध्य भाग में चर्तुमुखी शिवलिंग प्रतिष्ठित है। गर्भगृह की छत वृत्ताकार आकृति लिये हुए है। मंदिर के प्रवेशद्धार पर सिंह मुख की आकृतियाँ अवस्थित है। इसके स्तम्भों पर बेलबुटियाँ, देवी-देवता, द्धारपाल, पुष्प स्वास्तिक जैसी कई आकृतियाँ निर्मित है। इस पंचायतन शैली में निर्मित मंदिर में शिव परिवार, ब्रह्मा, भैरव और लक्ष्मीनारायण भगवान की प्रतिमाऐं प्रतिष्ठित है। देवालय के बाहरी हिस्से में बना तोरणयुक्त तुलादान स्थल अत्यन्त सुन्दर शिल्प कला को प्रदर्शित करता है। मंदिर के बाहर के आंगन में एक सुन्दर कुण्ड भी विद्यमान है।[23]

गुप्तेश्वर महादेव मंदिर – राजस्थान के मेवाड़ परिक्षेत्र में जहाँ कहा जाता है कि यहाँ का कंकर-कंकर शंकर है में स्थित तितरड़ी गाँव में उदयपुर के अमरनाथ के नाम से सम्बोधित किया जाने वाला श्री गुप्तेश्वर महादेव मंदिर अरावली पर्वत श्रृंखला की पहाड़ियों में स्थित है। इस पहाड़ी क्षेत्र को स्थानीय भाषा में होड़ा पर्वत के नाम से पहचाना जाता है। क्षेत्र में प्रचलित मान्यता के अनुसार इस मंदिर में मेवाड़ महाराणा प्रताप द्धारा भी पूजा-अर्चना की जाती थी। आशुतोष भगवान गुप्तेश्वर की मूल प्रतिमा होड़ा पर्वत की एक सर्पिलाकार गुफा में स्थित है। प्राचीन युग में इस गुफा को सुआ गुफा के नाम से पहचाना जाता था। होड़ा पर्वत पर स्थित सुआ गुफा कई तेजस्वी संतों यथा - फूलनाथ जी, बृजकिशोर जी, फलाहारी बाबा आदि की तपोस्थली रही है। गुप्तेश्वर महादेव मंदिर तितरड़ी का जीर्णोद्धार स्थानीय समुदाय के सहयोग से श्री बृजबिहारी जी द्धारा यहाँ मूल मंदिर में शिव परिवार और सुआ गुफा के बाहर हनुमान मंदिर की प्राण प्रतिष्ठा सम्पन्न करवायी गई। उन्हीं के आदेश पर तितरड़ी गाँव के स्थानीय निवासियों द्धारा मंदिर में मुलभूत आवश्यकता की विविध सामग्रीयों की व्यवस्था करवाई जिनमें जलकुण्ड, बर्तन भंडार, भोजनशाला, जल हेतु टंकियो की व्यवस्था, दो मंजिला आश्रम भवन, ट्यूबवेल आदि उल्लेखनीय है। यहाँ की प्राकृतिक रमणियता देशी-विदेशी पर्यटकों और प्रकृति प्रेमियों को अनायास ही अपनी ओर आकर्षित करती है। सावन और भाद्रपद माह में यहाँ सदैव मेले जैसे माहौल बना रहता है। धार्मिक पर्यटन में रूचि रखने वाले व्यक्तियों के लिए मेवाड़ का उक्त मंदिर विशेष रूप से उल्लेखनीय है।[24]

झामेश्वर महादेव (झामर कोटड़ा) – अरावली पर्वत श्रृंखला की उत्पतयकाओं में उदयपुर जिला मुख्यालय से लगभग 25 किलोमीटर की दुरी झामर कोटड़ा माईन्स के निकट झामरी नदी के तटीय प्रदेश में स्थित झामेश्वर महादेव नामक धार्मिक स्थल सैलानियों के आकर्षण का मुख्य केन्द्र है। यहाँ चारो ओर पहाड़ियों और कलकल करती नदी के निकट स्थित एक पहाड़ी कंदरा में भगवान झामेश्वर की स्वयंभू प्रतिमा अवस्थित है। यहाँ की एक मुख्य विशेषता प्राकृतिक जल से भगवान का सदैव होने वाला अभिषेक है जो गुफा की चट्टानों से स्वत: ही प्रस्फुटित होता रहता है। यह मंदिर स्थानीय लोगों सहित सैलानियों की धार्मिक आस्था का प्रधान केन्द्र है। पहाड़ियों से उत्पन्न जलप्रपात बहती नदी की धारा प्राकृतिक जीवों का विचरण और नैसर्गिक सौन्दर्य इस मंदिर को विशिष्ट बनाता है। वर्षा ऋतु में यहाँ का दृश्य देखते ही बनता है। यह क्षेत्र अपनी भौगोलिक और भौतिक सरंचना चट्टानों के लिए भी प्रसिद्ध है। कई विदेशी अध्येता यहाँ शोधकार्य करने आ चूके है। इस स्थल को क्षेत्रीय लोग जुंबक ऋषि की तपोभूमि स्वीकार करते है। झामेश्वर महादेव परिसर में प्रतिवर्ष वैशाख पूर्णिमा पर विशाल मेला भरता है जो किसी आदिवासी कुम्भ मेले जैसा प्रतीत होता है। इस मेले में वनवासी लोग रंग-बिरंगी पताकाऐं लेकर आते है और सम्पूर्ण रात्रि भगवान शिव की पूजा अर्चना भजन गुणगान करते है। मान्यता है कि यहाँ भगवान शिव भक्तों की हर मनोकामना को पूर्ण करते हैं।[25]

मंदिर परिसर के बाहरी भाग में एक गोमुख निर्मित है जिससे अनवरत् जलधारा बहती रहती है। यही जल भगवान के अभिषेक और पूजन में भी प्रयुक्त होता है। गोमुख के सामने एक छोटा सा आश्रम बना है जो मूल रूप से संतो की धूणी है। यही पास में राम भक्त हनुमान का छोटा किन्तु सुन्दर मंदिर भी स्थित हैं। पर्यटकों की सुविधा के लिए यहाँ की मंदिर ट्रस्ट द्धारा कई

धर्मशालाओं, पटसालों, चबुतरों का निर्माण भी करवाया गया है। मंदिर से लगभग 400 मीटर की दूरी पर एक प्राकृतिक झरना अवस्थित है। कुल मिलाकर यह मंदिर धार्मिक आस्था के साथ-साथ उदयपुर जिले का मुख्य पर्यटक स्थल (पिकनिक स्पॉट) के रूप में विख्यात हो चुका है। जहाँ मेवाड़ परिक्षेत्र के लोग प्राय: विविध धार्मिक आयोजनों के उद्देश्य से प्राय: एकत्रित होते रहते हैं।[26]

अमरख जी महादेव – उदयपुर-नाथद्वारा मार्ग पर शहर से लगभग 8-10 किलोमीटर की दूरी पर अरावली पर्वतमाला में स्थित चिरवा पहाड़ी की तलहटी में अमरख जी महादेव का मंदिर अवस्थित है। चिरवा घाटी के मार्ग पर यह मंदिर नेशनल हाईवे से 2 किलोमीटर अन्दर की ओर है। यह दो किमी का घुमावदार मार्ग पर्यटकों को प्राकृतिक रमणीयता का पूरा आनन्द प्रदान करता है। मंदिर परिसर के बाहरी भाग में सामान्य से कुछ ऊँची भूमि पर एक जलकुण्ड विद्यमान है, जिसे माँ गंगा कुण्ड के नाम से सम्बोधित किया जाता है। इस कुण्ड के निर्मल जल की यह विशेषता है कि अथाह गर्मी और अकाल में भी इसका जल नहीं सूखता है। वर्ष पर्यन्त इसका जल बहता रहता है। यही कुण्ड के निकट छोटी पहाड़ी पर बाबा अमरख महादेव का अतिप्राचीन मंदिर स्थित है। जिसमें अमरख महादेव का सफेद संगमरमर चतुर्भुज शिवलिंग प्रतिष्ठित है। इस मंदिर के निकट विशाल नन्दी की श्वेत प्रतिमा भी दर्शनीय है। मूल देवालय के पास ही दो अन्य मंदिर भी निर्मित है जिनमें माँ शक्ति भगवान कार्तिकेय और गणेश की प्रतिमाऐं स्थापित है। मंदिर का इतिहास लगभग 2500 वर्ष प्राचीन माना जाता है जिसका प्रमाण यहाँ लगे शिलालेख से प्राप्त होता हैं। मंदिर के निकट ही संतो का आश्रय स्थल भी बना हुआ है। इस मंदिर की स्थापत्य और वास्तुकला मेवाड़ की शिल्पकला की विशेषताओं को उजागर करती है। यही पहाड़ी के नीचे की ओर एक और छोटा शिव मंदिर भी स्थित है, जिसमें भगवान शिव अपने परिवार सहित विराजित है। शिव मंदिर परिसर में ही रामभक्त हनुमान की प्रतिमा भी स्थापित है। इस मंदिर के ठीक बाहर की और सदा नीरा माँ गंगा की जलधारा बहती रहती है। यही विविध धार्मिक क्रियाकलापों और अनुष्ठानों के लिए हवनकुण्ड और अन्य व्यवस्थाऐं भी विद्यमान है।[27]

केदारनाथ मंदिर (उदरी गाँव) – उदयपुर जिले की नाई ग्राम पंचायत में स्थित उदरी गाँव एक अतिप्राचीन शिव मंदिर स्थित है, जो लोगों की धार्मिक आस्था और विश्वास का मुख्य केन्द्र है। जिसे उन्दरी गाँव का केदारनाथ मंदिर के नाम से सम्बोधित किया जाता है। यह मंदिर अरावली पर्वत श्रृंखला की एक ऊँची पहाड़ी पर स्थित है। इसके चारों ओर पहाड़ी परिक्षेत्र में छोटे-छोटे ग्यारह अन्य शिव मंदिर भी बने हुए है जो इसके परिक्रमा मार्ग में आते है। क्षेत्रीय लोग इन मंदिरों को 12 ज्योर्तिलिंग की साम्यता प्रदान करते है। इस मंदिर परिक्षेत्र में प्रतिवर्ष शिवरात्रि पर्व पर विशाल मेले का आयोजन किया जाता है, जिसमें श्रृद्धालू दूर-दूर के क्षेत्रों से आते है।[28]

पशुपतिनाथ महादेव (धोलागढ़ झल्लारा) – उदयपुर जिले की झल्लारा पंचायत समिति में स्थित गाँव धोलागिर में पशुपतिनाथ महादेव का अति प्राचीन मंदिर कनेर के निकट धौलागढ़ पर्वत की तलहटी में अवस्थित है। यहाँ भगवान महादेव अष्टमुखी स्वरूप में विराजमान है। क्षेत्रीय मान्यता के अनुसार यह अष्टमुखी मुखारविन्द विश्व का सबसे बड़ा शिवलिंग है। जिसकी ऊँचाई लगभग सवा नौ फिट के आस-पास मानी जाती है। इस प्रतिमा से पूर्व मध्यप्रदेश के मन्दसौर के पशुपतिनाथ की प्रतिमा 7¼ फीट और नेपाल के पशुपतिनाथ की प्रतिमा 5½ फीट सबसे बड़ी प्रतिमाओं में गिनी जाती थी। धोलागढ़ के इस अष्टमुखी शिवलिंग की प्रधान विशेषता इसका आठ रूपों वाला स्वरूप है। जिसमें चार रूप ऊपर और चार रूप प्रतिमा के निचले भाग में विद्यमान है। यह मंदिर समुद्रतल से लगभग 1600 फीट की ऊँचाई पर स्थित है। इस मंदिर का निर्माण रूद्रवाहिनी संघ के महंत योगी प्रकाशनाथ के सानिध्य में सम्पन्न हुआ है। यह मंदिर अरावली की रमणीय घाटियों में बना है जो पर्यटकों का मन मोह लेती है। प्रत्येक ऋतु में यहाँ का प्राकृतिक नजारा अलग-अलग परिदृश्य प्रस्तुत करता है। क्षेत्रीय मान्यता है कि लोक संत मावजी द्वारा चोपड़ा की रचना भी इसी धोलागढ़ पर्वत पर की गई थी। यहाँ रूद्र वाहिनी संघ के महंतो की धूणी और आश्रम भी विगत 12 वर्षो से विद्यमान है। यद्यपि यह मंदिर अत्यन्त विकट मार्ग पर स्थित है। जहाँ पहुँचने के लिए 2-3 घण्टे की चढ़ाई चढ़नी पड़ती है तथापि प्रकृति प्रेमियो, धार्मिक आस्था वाले लोगों और पर्यटकों को यह बाधाऐं रोकने में असमर्थ है, यहाँ बड़ी संख्या में पर्यटकों का आवागमन होता रहता है।[29]

नान्देश्वर जी महादेव – उदयपुर जिले की नाई ग्राम पंचायत में स्थित श्री नान्देश्वर महादेव मंदिर ना केवल धार्मिक अपितु अपने पौराणिक महत्तव के कारण भी विशेष महत्तव रखता है। इस मंदिर के प्राचीन समय में नारदेश्वर के नाम से जाना जाता था। उदयपुर जिला मुख्यालय से लगभग 20 किमी दूर स्थित इस मंदिर के सम्बन्ध में कहा जाता है कि स्वयं महर्षि नारद द्वारा यहाँ तपस्या की गई थी। इस मंदिर में प्राकृतिक वातावरण के मध्य एक स्वयंभू शिवलिंग विद्यमान है। जिसकी पूजा अर्चना सदियो से होती आ रही है।

मंदिर के इतिहास के संदर्भ में मान्यता है कि इसका जीर्णोद्धार मेवाड़ महाराणा कर्ण सिंह के शासनकाल में वि.सं. 1684 के आसपास किया गया था। तत्पश्चात यहाँ की व्यवस्थाऐं संत गिरी द्वारा की गई। मंदिर परिसर में एक अत्यन्त मनमोहक कुण्ड भी बना है, जिसका जल कभी समाप्त नहीं होता है। क्षेत्रीय मान्यता है कि इसके जल से विविध प्रकार की व्याधियों का शमन होता है। यहाँ के पुजारी श्री विनोद जी के अनुसार नारद ऋषि ने अपने श्राप से मुक्ति के लिए इस स्थान पर तपस्या की थी। यहाँ प्रत्येक सोमवार महाशिवरात्रि और सावन माह में बड़ी संख्या में श्रृद्धालु और पर्यटक दर्शनार्थ आते रहते हैं।[30]

नान्देश्वर मंदिर का हरियाली और नैसर्गिक सुन्दरता से युक्त वातावरण इसे एक तीर्थ क्षेत्र के समान स्थान प्रदान करवाता है। यहाँ का माहौल अत्यन्त शांत और आध्यात्मिक ऊर्जा से परिपूर्ण जान पड़ता है। यह मंदिर अद्भुत स्थापत्य शिल्प का नमूना भी माना जाता है। जिसके प्रवेश द्वार पर दो हाथी खड़े हुए है। मंदिर परिसर में ही यहाँ तपस्या करने वाले तीन संतो की जीवित समाधियाँ भी विद्यमान है। जो संत राजगिरी और संत अमरगिरी बर्फानी की बताई जाती है। जो क्रमश: 1964 और 2009 में इन संतो के जीवित समाधि लेने पर बनाई गई थी। मंदिर परिसर में ही भगवान राम-लक्ष्मण और माता सीता का एक अन्य मंदिर और एक अन्य शिवालय भी स्थित है।[31]

मंदिर के निकट आरण्य पर्वत अवस्थित है, जहाँ सोमवती अमावस्या को 12 कोसी परिक्रमा का आयोजन किया जाता है। जो क्षेत्रवासियों में विशिष्ट महत्त्व रखती है। यह परिक्रमा नान्देश्वर मंदिर से प्रारम्भ होकर केदारनाथ मंदिर उन्दरी गाँव सहित बारह ज्योर्तिलिंगों से होती हुई पुन: नान्देश्वर मंदिर पर समाप्त होती है। यही मंदिर के निकट एक छोटी सुन्दर झील भी बनी है, जिसे नान्देश्वर चैनल के नाम से पहचाना जाता है। यह झील सीसारमा नदी के माध्यम से उदयपुर की पिछोला झील को जल पहुँचाती

है। इस क्षेत्र में अवस्थित यह झील और सीसारमा नदी यहाँ पर्यटकों के आकर्षण का मुख्य केन्द्र है।[32]

कमलनाथ महादेव – राजस्थान के उदयपुर जिले में 80 किमी दूर झाड़ोल पंचायत समिति के आवरगढ़ की पहाड़ियों में स्थित यह एक अत्यन्त प्राचीन शिव मंदिर है। जिसे स्थानीय लोग कमलनाथ महादेव के नाम से संबोधित करते है। इस मंदिर के संदर्भ में पुराणों में आख्यान मिलता है कि इस मंदिर की स्थापना स्वयं लंकापति रावण द्वारा की गई थी, यहाँ शिव से पहले रावण की पूजा का विधान भी देखने को प्राप्त होता है। मंदिर के नामकरण के संदर्भ में क्षेत्रीय लोगों का कहना है कि रावण द्वारा भगवान शिव को 108 कमल पुष्प अर्पित करने का प्रण लिया गया था किन्तु पूजा में एक पुष्प कम होने पर रावण ने अपना शीश भगवान शिव को समर्पित कर दिया था। जिससे प्रसन्न होकर आशुतोष महादेव शिव ने रावण की नाभि में अमृत कुण्ड स्थापित किया था और उसे दस शीशों का वरदान भी दिया। यहाँ स्थित शिवलिंग के संदर्भ में एक मान्यता यह भी है कि एक ग्वाले की गाय प्रतिदिन शिवलिंग पर स्वत: ही दूध चढ़ाती थी जब ग्वाले ने यह क्रिया प्रतिदिन देखी तो क्रोधित होकर उसने शिवलिंग पर कुल्हाड़ी से वार किया जिससे यह मध्य भाग से कट गया तभी से यहाँ खण्डित शिवलिंग को पूजा जाता है। मंदिर में एक गोमुख बना है, जिससे सदा जलधारा बहती रहती है। यहाँ आदिवासी समुदाय के लोग वैशाख माह में पूर्वजों की अस्थियों को विसर्जित करने आते हैं अत: इसे आदिवासियों का हरिद्वार भी क्षेत्रीय जनता द्वारा कहा जाता है।

अरावली पहाड़ियों की गोद में स्थित इस मंदिर तक जाने के लिए पर्यटकों को 3 किलोमीटर का पैदल यात्रा तय करना पड़ता है। उनकी यह पैदल यात्रा जहाँ रोमांचक है वहीं प्रकृति को निकट से देखने का अनोखा अनुभव भी प्रदान करती है। इस पैदल मार्ग के मध्य भाग में भगवान शनिदेव का मंदिर भी अवस्थित है। इस स्थान का ऐतिहासिक महत्तव महाराणा प्रताप की शरण स्थली होने के कारण भी है। क्षेत्र में प्रचलित किवंदतियों के अनुसार अपने मेवाड़ निर्वासन काल में महाराणा प्रताप द्वारा 1577 ई. में यहाँ होली जलाने की रस्म अदा की गई थी। तभी से आदिवासी समुदाय प्रतिवर्ष यहाँ होली जलाने की परम्परा को सम्पन्न करता आ रहा है। मान्यता है कि मंदिर में शिव पूजन से पहले यदि रावण की पूजा नहीं कि जावे तो सम्पूर्ण पूजा-अर्चना व्यर्थ चली जाती है।[33]

कुकड़ेश्वर महादेव – उदयपुर जिला मुख्यालय से 12 किलोमीटर की दूरी पर लखावली गाँव में स्थित अरावली पर्वत श्रृंखला की तलहटी में चारों ओर से पहाड़ियों के मध्य कुकड़ेश्वर महादेव मंदिर स्थित है। जो पर्यटन और धार्मिक विश्वास का अद्धितीय संगम है। क्षेत्रीय मान्यता के अनुसार यह मंदिर लगभग 580 वर्ष प्राचीन माना जाता है जहाँ किसी समय में मेवाड़ महाराणा प्रताप द्वारा अपना निर्वासित जीवन व्यतीत किया गया था। क्षेत्र में मान्यता है कि महाराणा प्रताप के निर्वासन काल में महाराणा प्रताप एक मंदिर में विश्राम कर रहे थे तभी मुगलों ने उन पर हमला कर दिया। इस समय एक मुर्गे ने बांग देकर प्रताप को निन्द से जगाया था। तभी से यह मंदिर कुकड़ेश्वर महादेव के नाम से सम्बोधित किया जाने लगा क्योंकि मेवाड़ में स्थानीय भाषा में मुर्गे का कुकड़ा कहा जाता है। प्रारम्भिक स्तर पर यहाँ प्रकट हुए शिवलिंग मुर्गे के अण्डे के आकार के थे। जो संख्या में पाँच एक साथ बताये जाते है। वर्तमान में प्राकृतिक हलचलों के साथ-साथ ये आकार में बढ़ते प्रतीत होते है। मंदिर परिसर के सम्मुख एक नाला बहता है, जिसका जल कभी समाप्त नहीं होता है। इसी के जल से भगवान शिव का नित्य अभिषेक होता है। मंदिर परिसर में भगवान गणेश, कार्तिकेय, माता पार्वती और हनुमान की प्रतिमाऐं भी अवस्थित है। यहाँ प्रतिवर्ष सावन के सोमवार, शिवरात्रि और गुरू पूर्णिमा पर मेला लगता है। मंदिर परिसर में साधु संतो की धूणी भी विद्यमान है। यहाँ की पूजा-अर्चना का दायित्व संत श्री मोहन गिरी द्वारा सम्पन्न किया जाता था। मंदिर परिसर में पर्यटकों के आराम हेतु कुछ कक्ष, भोजनशाला आदि की व्यवस्था विद्यमान है। मंदिर के पीछे की ओर कुछ दूरी पर साधु सन्यासियों की समाधियाँ भी बनी हुई है। अपनी प्राकृतिक मनमोहक छटाओं के कारण यह स्थल स्थानीय और विदेशी पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है।[34]

कुण्डेश्वर महादेव – उदयपुर जिला मुख्यालय से 32 किमी की दूरी पर मेवाड़ परिक्षेत्र में स्थित कुण्डेश्वर महादेव धार्मिक स्थलों में सम्मिलित है। मान्यता है कि यह मंदिर कई सौ वर्षो प्राचीन है। मंदिर के परिसर में एक शिलालेख लगा है जो 2000 वर्ष पूर्व यहाँ परमार शासकों के शासन होने का प्रमाण प्रदान करता है। यह स्थल पूर्वकाल में कई साधु सन्यासियों और तपस्वियों की पुण्य स्थली का साक्षी है। मूलत: मेवाड़ के कुण्डा ग्राम में स्थित होने के कारण इसे कुण्डेश्वर महादेव के नाम से सम्बोधित किया जाता है। मंदिर तक पहुँचने के लिए घसियार स्थित श्रीनाथ मंदिर के ठीक सामने से एक पक्का सड़क मार्ग बना हुआ है। जो अरावली की सुन्दर पहाड़ियों से होकर गुजरता है। जिसके मार्ग में कई स्थानीय गाँव बसे है, जो ग्रामीण जीवन की झाँकी प्रस्तुत करते है। मंदिर के गर्भगृह में विशाल शिवलिंग और नंदी बाबा स्थापित है। जीर्णोद्धार के कारण यह मंदिर अपनी प्राचीनता खो चुका है। यहाँ की उल्लेखनीय बात यह है कि सम्पूर्ण मंदिर एक ही बरगद के वृक्ष के नीचे बना हुआ है। जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि स्वयं आशुतोष भगवान ने अपने ऊपर बरगद को छत्र के रूप में धारण कर रखा है। शिव मंदिर के बाहर आंगन में छोटी-बड़ी कई देव प्रतिमाऐं स्थापित है, जिनमें शिव, गणेश, पार्वती आदि प्रमुख है।[35]

मंदिर के सम्मुख ही बाहरी क्षेत्र में सदा नीरा माँ गंगा की जलधारा विद्यमान है जो आगे जाकर मनमोहक झरने के रूप में परिवर्तित हो जाती है। मान्यताओं के अनुसार यहाँ माता गंगा मेवाड़ की कृष्ण भक्त मीराबाई के पूज्य गुरूदेव रविदास जी के अनुनय विनय पर से प्रकट हुई थी। इसलिए क्षेत्रीय लोग इसे गंगा जी का चौथा पाया मानते है। क्षेत्र के जो आदिवासी अपने पूर्वजों के अस्थि विसर्जन के लिए हरिद्वार जाने में असमर्थ है वो यही पर अस्थि विसर्जन की परम्परा को सम्पन्न करते है। इस कार्य हेतु यहाँ कुछ घाट भी बने हुए है। मंदिर से कुछ दूरी पर लगभग सभी सम्प्रदायों के माता जी के थानक और नागदेवता के देवरे बने हुए हैं।[36]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारद्वाज कमल : प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत का इतिहास, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2021, पृ. 140-141
2. धर्म मेरियम वेबस्टर के लेख धर्म की परिभाषा से उद्धत 12 मार्च, 2021
3. बनर्जी ए. सी. : राजपूत अध्ययन गुहिलों का प्रारम्भिक इतिहास।
4. एर्स्किन : राजपूताना गजेटियर, भाग-II A, पृ. 26-27
5. पोखरियाल संजय : पौराणिक कथाओं में भगवान शिव दैनिक भास्कर, उदयपुर, संस्करण 13 नवम्बर 2017 से उद्धत।
6. शर्मा हिमांशु : भगवान शिव के गुणों को अपनाएंगे राजस्थान पत्रिका,

उदयपुर संस्करण, 24 फरवरी 2020 से उद्धत।
7. रूद्राष्टाध्यायी पृष्ठ संख्या 10 गीता प्रेस, गौरखपुर।
8. पाण्डेय अजीत कुमार (सम्पादक) : भारतीय इतिहास, समसामयिक घटना चक्र, इलाहाबाद, 2025, पृ. B 90-91
9. मांगलिक रोहित : विचारों का इतिहास, एड्यु गौरिला पब्लिकेशन्स्, नई दिल्ली, 2024, पृ. 155
10. व्यास गोपाल वल्लभ : प्रारम्भिक मेवाड़ का इतिहास, हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर, 2016,पृ. 30-31
11. जोशी राधेश्याम : राजस्थान दर्शन, प्राईम प्रकाशन, भीलवाडा , पृ. 20
12. शर्मा जुगल किशोर : पुण्यभूमि भारत मानचित्र परिचय सुरूचि प्रकाशन जयपुर, 2013, पृ. 50
13. मांगलिक रोहित : भारत का इतिहास VII (1605-1750),एड्यू गौरिला पब्लिकेशन्स्, नई दिल्ली, 2024, पृ. 197
14. शर्मा धर्मपाल : मेवाड़ की संस्कृति और परम्परा, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर, 2016, पृ. 1-2
15. व्यास गोपाल वल्लभ : पूर्वोक्त, पृ. 31
16. (1) श्यामलदास : वीर-विनोद भाग - 1, मयंक प्रकाशन 1986, पृ. 143
(2) शर्मा धर्मपाल : मेवाड़ संस्कृति एवं परम्परा, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर, 1999, पृ. 1-2
17. ओझा गौरीशंकर हिराचन्द : उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग-1, संस्करण-2, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2006, पृ. 32
18. सिंह राजबहादुर : मंदिर संस्कृति, राज पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, पृ. 314
19. राठौड़ भूपेन्द्र सिंह : मध्यकालीन राजस्थान के प्रमुख पर्यटन स्थल, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2014, पृ. 91-92
20. गुप्ता मोहनलाल : राजस्थान जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2009, पृ. 86-87
21. राणावत ईश्वरसिंह : उभयेश्वर महादेव, प्रकाशक उभयेश्वर मंदिर विकास समिति, उदयपुर, 2000, विविध पृष्ठ।
22. दाधीच मनोज एवं पालीवाल राहुल : मेवाड़ सर्किट में पर्यटन का विकास एक विश्लेषणात्मक अध्ययन,किताब राईटिंग पब्लिकेशन्स्, मुम्बई, 2023,पृ. 172-173
23. (1) राणावत मनोहरसिंह एवं राणावत ईश्वर सिंह : मेवाड़ का सामाजिक सांस्कृतिक इतिहास, प्रताप शोध प्रतिष्ठान, उदयपुर, 2006, पृ. 152
(2) पुरोहित देवनाथ : उदयपुर भूपाल मुद्रण मंत्रालय, उदयपुर, संवत् 1987, पृ. 60
24. राजस्थान पत्रिका 21 जुलाई 2025 उदयपुर का अमरनाथ ..... गुप्तेश्वर महादेव मंदिर, अक्षिता देवड़ा के लेख से उद्धत।
25. राठौड़ भूपेन्द्र : पूर्वोक्त, पृ. 28-29
26. (1) मंदिर में प्रतिष्ठित शिलालेख के अनुसार
(2) राजस्थान पत्रिका समाचार पत्र 11/09/2008, पृ. 5
27. (1) https://udaipurblog.com
(2) खोटा सिक्का ऑनलाईन न्यूज पेपर, 12 जुलाई, 2015 के लेख अमरख महादेव (उदयपुर, राजस्थान) से उद्धत।
28. राजस्थान पत्रिका समाचार पत्र 1 अगस्त 2023 के लेख भगवान शिव को समर्पित उदयपुर के प्रमुख शिव मंदिर लेख से।
29. सिंह मधुलिका के राजस्थान पत्रिका समाचार पत्र में प्रकाशित लेख से उद्धत दिनांक 11 मार्च 2021 'उदयपुर में भी है, अमरनाथ, केदारनाथ और पशुपतिनाथ मंदिर'।
30. हिन्दुस्तान खबर समाचार-पत्र जुन 19, 2025 में प्रकाशित लेख उदयपुर में स्थित इस महादेव मंदिर में नारद मुनि ने की थी तपस्या लेख से उद्धत।
31. पूर्वोक्त
32. राठौड़ निशा के न्यूज 18 (हिन्दी) में 21 मई 2025 को प्रकाशित लेख जहाँ नारद मुनि ने की थी तपस्या वही प्रकट हुए भगवान शिव आज भी मौजूद है, अद्भुद शिवलिंग से उद्धत।
33. शर्मा विमलेश : सर्व विप्र मार्तण्ड, पत्रिका जुलाई 2020 वर्ष 3, अंक-10, जयपुर 2020, पृ. 13-14
34. चौहान नंदिनी 7 मार्च 2024 के उदयपुर पत्रिका में प्रकाशित लेख से उद्धत। (महाशिवरात्रि विशेषांक)।
35. न्यूज 18 हिन्दी 21 जुलाई 2023, राठौड़ निशा के लेख से उद्धत। कुण्डेश्वर महादेव जहाँ राजा ने किया शीशदान।
36. पूर्वोक्त

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

नई कहानी आंदोलन की संवेदनागत एवं शिल्पगत विशेषताएँ : योगदान, महत्व एवं समग्र मूल्यांकन

महीपाल दान* डॉ. राज बाला**

* शोधार्थी, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय जयपुर (राज.) भारत
** शोध निर्देशिका, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय जयपुर (राज.) भारत

शोध सारांश – स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य में नई कहानी आंदोलन एक महत्वपूर्ण साहित्यिक उपलब्धि के रूप में स्थापित हुआ। इस आंदोलन ने हिंदी कहानी को परंपरागत आदर्शवाद, घटना प्रधानता तथा सामाजिक यथार्थवाद से मुक्त करके आधुनिक जीवन-बोध, मनोवैज्ञानिक यथार्थ, अस्तित्वगत संकट, संबंधों के विघटन तथा मध्यवर्गीय चेतना को केंद्र में स्थापित किया। नई कहानी के रचनाकारों ने व्यक्ति के बाह्य जीवन की अपेक्षा उसके अंतर्जगत, अकेलेपन, संत्रास, कुंठा, मानसिक तनाव और सामाजिक विसंगतियों को अभिव्यक्ति दी। प्रस्तुत शोध-पत्र में नई कहानी आंदोलन की पृष्ठभूमि, संवेदनागत एवं शिल्पगत विशेषताओं, प्रमुख कहानीकारों, योगदान, महत्व तथा सीमाओं का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।
शब्द कुंजी – नई कहानी, आधुनिकता, मध्यवर्ग, संवेदना, शिल्प,अस्तित्ववाद, मनोविश्लेषणवाद, आधुनिक जीवन-बोध।

प्रस्तावना – हिंदी साहित्य के इतिहास में कहानी विधा का विकास निरंतर परिवर्तनशील रहा है। प्रारंभिक कहानियाँ मनोरंजन तथा उपदेश की दृष्टि से लिखी जाती थीं, जबकि प्रेमचंद ने कहानी को सामाजिक यथार्थ से जोड़ा। किंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय समाज में तीव्र परिवर्तन हुए। स्वतंत्रता के बाद अपेक्षित सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक आदर्श साकार नहीं हो सके। परिणामस्वरूप व्यक्ति में मोहभंग, निराशा, असुरक्षा तथा अकेलेपन की भावना विकसित हुई।इन्हीं परिस्थितियों में हिंदी कहानी ने एक नई दिशा ग्रहण की जिसे 'नई कहानी आंदोलन' कहा गया। नई कहानी ने व्यक्ति के आंतरिक जीवन, मानसिक संघर्ष, दाम्पत्य संबंधों की जटिलता, अस्तित्वगत संकट तथा आधुनिक जीवन की विडंबनाओं को अपनी विषयवस्तु बनाया।डॉ. नामवर सिंह के अनुसार 'नई कहानी जीवन के नए यथार्थ और नई संवेदना की कहानी है।'[1]

1. नई कहानी आंदोलन की पृष्ठभूमि – नई कहानी आंदोलन के उद्भव के पीछे अनेक ऐतिहासिक, सामाजिक एवं साहित्यिक कारण रहे।

- **स्वतंत्रता के बाद का मोहभंग –** स्वतंत्रता के पश्चात जनता ने जिस आदर्श समाज की कल्पना की थी, वह साकार नहीं हो सकी। भ्रष्टाचार, बेरोजगारी और राजनीतिक अस्थिरता ने व्यक्ति को निराश किया।
- **विभाजन की त्रासदी –** देश-विभाजन ने सामाजिक जीवन को गहराई से प्रभावित किया।विस्थापन, असुरक्षा और भय की भावना साहित्य में भी अभिव्यक्त हुई।
- **औद्योगीकरण एवं नगरीकरण –** शहरी जीवन ने व्यक्ति को परिवार और समाज से दूर कर दिया। इससे अकेलेपन और अजनबीपन की भावना उत्पन्न हुई।
- **पाश्चात्य चिंतन का प्रभाव –** नई कहानी पर निम्न विचारधाराओं का प्रभाव पड़ा- अस्तित्ववाद, मनोविश्लेषणवाद, आधुनिकतावाद, मार्क्सवाद।

2. नई कहानी आंदोलन का स्वरूप- नई कहानी आंदोलन हिंदी साहित्य का एक महत्वपूर्ण साहित्यिक आंदोलन है, जिसका उद्भव स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद 1950 के दशक में हुआ। यह आंदोलन बदलती हुई सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों की देन था। नई कहानी ने परंपरागत आदर्शवाद, घटनाप्रधानता तथा उपदेशात्मकता से हटकर आधुनिक जीवन की जटिलताओं, मध्यवर्गीय चेतना, मानवीय संबंधों के विघटन, अकेलेपन, संत्रास तथा अस्तित्वगत संकट को अपनी विषयवस्तु बनाया।

नई कहानी का स्वरूप मुख्यत: व्यक्तिनिष्ठ, मनोवैज्ञानिक तथा यथार्थवादी है। इसमें बाह्य घटनाओं की अपेक्षा व्यक्ति के अंतर्मन, मानसिक संघर्ष, कुंठा, घुटन तथा अकेलेपन को अधिक महत्व दिया गया है। इस आंदोलन ने कहानी को आधुनिक जीवन-बोध, नई संवेदना और नवीन शिल्प प्रदान किया। कथानक का ह्रास, सांकेतिकता, अंत:संवाद, चेतना-प्रवाह शैली तथा खुला अंत इसकी प्रमुख शिल्पगत विशेषताएँ हैं। डॉ.रामदरश मिश्र लिखते हैं 'नई कहानी ने आधुनिक मनुष्य के अकेलेपन, संत्रास और टूटते हुए संबंधों को स्वर प्रदान किया।'[2] नई कहानी किसी संगठन या संस्था का आंदोलन नहीं था। यह एक साहित्यिक चेतना थी।इसके प्रमुख कहानीकार हैं मोहन राकेश, राजेंद्र यादव, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, मन्नू भंडारी, उषाप्रियंवदा, भीष्म साहनी। इन रचनाकारों ने व्यक्ति की आंतरिक पीड़ा, सामाजिक विघटन तथा मानसिक संघर्षों को कहानी का केंद्र बनाया।

3. नई कहानी की संवेदनागत विशेषताएँ

- **आधुनिक जीवन-बोध-** नई कहानी आधुनिक जीवन की समस्याओं का साहित्य है। इसमेंव्यक्ति की चिंता, तनाव, भय, असुरक्षा तथा विघटन का चित्रण मिलता है।
- **अस्तित्वगत संकट-** नई कहानी का व्यक्ति अपने अस्तित्व को लेकर चिंतित है। वह स्वयं को समाज से कटा हुआ अनुभव करता है।निर्मल वर्मा

की कहानियों में यह संवेदना अत्यंत तीव्र रूप में दिखाई देती है।डॉ. इंद्रनाथ मदान के अनुसार 'नई कहानी का व्यक्ति अपने अस्तित्व की रक्षा और पहचान की खोज में संघर्षरत है।'[3]

- **अकेलापन और अजनबीपन –** नई कहानी का पात्र भीड़ में रहते हुए भी अकेला है। पारिवारिक संबंध कमजोर हो गए हैं।
- **मध्यवर्गीय चेतना –** नई कहानी का प्रमुख पात्र मध्यवर्गीय व्यक्ति है, जो आर्थिक, सामाजिक और मानसिक समस्याओं से जूझ रहा है।
- **संबंधों का विघटन –** पति-पत्नी, प्रेमी-प्रेमिका तथा पारिवारिक संबंधों में तनाव और दूरी का चित्रण नई कहानी की प्रमुख विशेषता है। डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी के अनुसार 'नई कहानी ने मानवीय संबंधों की टूटन और उनके भीतर के तनाव को गहराई से अभिव्यक्त किया।'[4]
- **स्त्री संवेदना–** नई कहानी में स्त्री केवल सहायक पात्र नहीं है, बल्कि उसकी स्वतंत्र चेतना और अस्तित्व को महत्व दिया गया है।
- **मनोवैज्ञानिकता–** नई कहानी व्यक्ति के अंतर्मन का सूक्ष्म विश्लेषण करती है।मनोविश्लेषणवाद ने नई कहानी को गहराई प्रदान की। पात्रों की दमित इच्छाएँ, कुंठाएँ, मानसिक तनाव और अचेतन जीवन का चित्रण नई कहानी में व्यापक रूप से मिलता है।नई कहानीकारों ने व्यक्ति के मानसिक संघर्षों को कहानी का आधार बनाया। डॉ. बच्चन सिंह लिखते हैं 'नई कहानी ने व्यक्ति के अंतर्जगत और मानसिक यथार्थ को कहानी का केंद्र बनाया।'[5]
- **नई कहानी और अस्तित्ववाद–** अस्तित्ववाद का प्रभाव विशेष रूप से निर्मल वर्मा और मोहन राकेश की रचनाओं में दिखाई देता है।नई कहानी का पात्रअकेला है, असुरक्षित है, अर्थहीनता का अनुभव करता है, स्वयं की पहचान खोजता है।

4. नई कहानी की शिल्पगत विशेषताएँ– नई कहानी आंदोलन ने हिंदी कहानी के शिल्प को नई दिशा प्रदान की। इस आंदोलन के कहानीकारों ने परंपरागत कथानक, चरित्र-चित्रण और वर्णनात्मक शैली से हटकर आधुनिक जीवन की जटिलताओं को व्यक्त करने के लिए नवीन शिल्प-विधियों का प्रयोग किया। नई कहानी का शिल्प उसकी संवेदना के अनुरूप विकसित हुआ। इसकी प्रमुख शिल्पगत विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

- **कथानक का ह्रास–** नई कहानी में कथानक की अपेक्षा अनुभूति और मन:स्थिति को अधिक महत्व दिया गया है। घटनाएँ गौण हो जाती हैं और पात्रों की मानसिक स्थिति प्रमुख हो जाती है।डॉ. इंद्रनाथ मदान के अनुसार 'नई कहानी में घटना नहीं, बल्कि अनुभूति और मन:स्थिति अधिक महत्वपूर्ण हो गई है।'[6]
- **अंत:संवाद –** नई कहानी में पात्र अपने भीतर चल रहे विचारों, द्वंद्वों और भावनाओं को स्वयं व्यक्त करता है। इससे पात्र के अंतर्मन का सूक्ष्म चित्रण संभव होता है।
- **चेतना-प्रवाह शैली–** नई कहानी में पात्र के विचारों, स्मृतियों और अनुभवों को बिना किसी तार्किक क्रम के प्रस्तुत किया जाता है। इस शैली के माध्यम से मन की स्वाभाविक गति को अभिव्यक्ति मिलती है।
- **सांकेतिकता और प्रतीकात्मकता –** नई कहानीकारों ने अपनी अनुभूतियों और विचारों को प्रतीकों एवं संकेतों के माध्यम से व्यक्त किया। प्रतीकों के द्वारा कहानी में गहन अर्थवत्ता उत्पन्न होती है।डॉ. रामदरश मिश्र लिखते हैं 'नई कहानी की भाषा प्रत्यक्ष से अधिक व्यंजनात्मक और सांकेतिक है।'[7]
- **खुला अंत –** नई कहानी किसी निश्चित निष्कर्ष पर समाप्त नहीं होती। कहानी का अंत पाठक के चिंतन के लिए खुला छोड़ दिया जाता है।
- **संक्षिप्तता और सघनता–** नई कहानी में अनावश्यक विस्तार नहीं मिलता। कम शब्दों में अधिक भावों और अनुभूतियों को व्यक्त करने का प्रयास किया जाता है।
- **सांकेतिक एवं व्यंजनात्मक भाषा–** नई कहानी की भाषा सरल होते हुए भी बहुअर्थी और व्यंजनात्मक होती है। उसमें संकेत, बिंब और प्रतीकों का व्यापक प्रयोग मिलता है।

5. प्रमुख नये कहानीकार

- मोहन राकेश- मानवीय संबंधों और अकेलेपन के कथाकार।प्रमुख कहानियाँ-मलबे का मालिक , एक और जिंदगी।
- राजेंद्र यादव – मध्यवर्गीय जीवन और दाम्पत्य तनाव के कथाकार। टूटना, जहां लक्ष्मी कैद है आदि इनकी प्रमुख कहानी है।
- कमलेश्वर- सामाजिक यथार्थ और आधुनिक जीवन की विसंगतियों के चित्रकार।राजा निरबंसिया, दिल्ली में एक मौत आदि इनकी प्रमुख कहानियां हैं।
- निर्मल वर्मा- अस्तित्ववादी संवेदना और अकेलेपन के कथाकार। परिंदे इनकी सर्वश्रेष्ठ कहानी है।
- मन्नू भंडारी- स्त्री चेतना की सशक्त कहानीकार। यही सच है इनकी प्रमुख कहानी है।

6. नई कहानी और स्त्री विमर्श– नई कहानी आंदोलन ने हिंदी साहित्य में स्त्री को एक स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में स्थापित किया। परंपरागत कहानियों में जहाँ स्त्री मुख्यत: त्याग, समर्पण और आदर्श नारी के रूप में चित्रित की जाती थी, वहीं नई कहानी में उसकी व्यक्तिगत भावनाओं, अस्तित्व-बोध, आत्मसम्मान, दाम्पत्य जीवन की समस्याओं तथा सामाजिक बंधनों को अभिव्यक्ति दी गई। इस आंदोलन की कहानियों में स्त्री केवल पुरुष की सहचरी न होकर अपनी इच्छाओं, आकांक्षाओं और अस्मिता के प्रति सजग दिखाई देती है।

मन्नू भंडारी, ऊषा प्रियवंदातथा कृष्णा सोबतीजैसी लेखिकाओं ने स्त्री-जीवन की जटिलताओं, दाम्पत्य संबंधों के तनाव, अकेलेपन और आत्मसंघर्ष को अपनी कहानियों का विषय बनाया। यही सच है, वापसी तथा सिक्का बदल गया जैसी कहानियाँ स्त्री-विमर्श की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती हैं।डॉ. नामवर सिंह के अनुसार 'नई कहानी ने व्यक्ति की स्वतंत्र सत्ता को स्वीकार किया, जिसमें स्त्री की अस्मिता भी शामिल है।'[8] इस प्रकार नई कहानी ने हिंदी साहित्य में स्त्री-चेतना और स्त्री-विमर्श को एक नई दिशा प्रदान की तथा स्त्री को उसकी स्वतंत्र पहचान और अस्तित्व के साथ प्रस्तुत किया।

7. नई कहानी और मध्यवर्ग– नई कहानी आंदोलन का सबसे प्रमुख आधार मध्यवर्गीय जीवन है। स्वतंत्रता के बाद भारतीय मध्यवर्ग आर्थिक असुरक्षा, बेरोजगारी, पारिवारिक विघटन, नैतिक संकट तथा सामाजिक दबावों से जूझ रहा था। नई कहानीकारों ने इसी मध्यवर्गीय जीवन की समस्याओं, संघर्षों, कुंठाओं, अकेलेपन और टूटते हुए संबंधों को अपनी कहानियों का विषय बनाया।

नई कहानी का पात्र प्राय: शिक्षित, नौकरीपेशा, शहरी तथा मध्यवर्गीय व्यक्ति है, जो आर्थिक अभाव, दाम्पत्य तनाव, सामाजिक अपेक्षाओं और मानसिक असुरक्षा से घिरा हुआ है। इस कारण नई कहानी में मध्यवर्ग की पीड़ा, घुटन, संत्रास और अस्तित्वगत संकट का अत्यंत यथार्थ चित्रण मिलता

है।नई कहानी का मुख्य पात्र मध्यवर्गीय व्यक्ति है।

8. नई कहानी का योगदान:

- आधुनिक संवेदना का विकास।
- व्यक्ति को केंद्र में स्थापित किया।
- मनोवैज्ञानिक यथार्थ को महत्व दिया।
- स्त्री चेतना को स्वर प्रदान किया।
- भाषा एवं शिल्प में नवीनता लाई।
- मध्यवर्गीय जीवन की अभिव्यक्ति की।
- कथानक के स्थान पर अनुभूति को महत्व दिया।

9. नई कहानी का महत्व– हिंदी साहित्य के इतिहास में नई कहानी आंदोलन का विशेष महत्व है, क्योंकि इसने कहानी को नई संवेदना, आधुनिक जीवन–बोध तथा नवीन शिल्प प्रदान किया। नई कहानी ने परंपरागत आदर्शवाद और घटनाप्रधानता से हटकर व्यक्ति के अंतर्मन, मानसिक संघर्ष, अकेलेपन, संबंधों के विघटन तथा मध्यवर्गीय जीवन की समस्याओं को अभिव्यक्ति दी। इस आंदोलन ने कहानी को आधुनिक युग की सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक वास्तविकताओं से जोड़कर उसे अधिक यथार्थवादी और प्रासंगिक बनाया।

नई कहानी का सबसे बड़ा महत्व यह है कि उसने व्यक्ति की आंतरिक पीड़ा, अस्तित्वगत संकट और बदलते मानवीय संबंधों को साहित्य का केंद्र बनाया। साथ ही, इसने भाषा, शिल्प, प्रतीकात्मकता, अंत:संवाद तथा चेतना–प्रवाह जैसी नवीन अभिव्यक्ति–विधियों को भी विकसित किया।डॉ. नामवर सिंह के अनुसार 'नई कहानी हिंदी कहानी के विकास की एक ऐतिहासिक उपलब्धि है।'[9] नई कहानी ने हिंदी साहित्य को आधुनिक चेतना प्रदान की।

10. नई कहानी की सीमाएँ:

- अत्यधिक व्यक्तिवाद।
- मध्यवर्ग तक सीमितता।
- कथानक की उपेक्षा।
- दुरूहता।
- निराशा की अधिकता।

11. समकालीन प्रासंगिकता के संदर्भ में नई कहानी– नई कहानी आज भी अपनी विषयवस्तु और संवेदना के कारण अत्यंत प्रासंगिक है। आधुनिक जीवन में बढ़ता हुआ अकेलापन, मानसिक तनाव, पारिवारिक विघटन, संबंधों में दूरी, आर्थिक असुरक्षा तथा अस्तित्वगत संकट आज भी मानव जीवन की प्रमुख समस्याएँ हैं। नई कहानी ने जिन समस्याओं को उठाया था, वे वर्तमान समाज में भी विभिन्न रूपों में विद्यमान हैं।

नई कहानी का पात्र आधुनिक मनुष्य का प्रतिनिधि है, जो भीड़ में रहते हुए भी अकेला है तथा अपने अस्तित्व, संबंधों और पहचान के संकट से जूझ रहा है। इसी कारण नई कहानी की संवेदना आज के पाठक के लिए भी उतनी ही अर्थपूर्ण और प्रासंगिक है जितनी उसके आरंभिक काल में थी।इसलिए नई कहानी की प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है।

उपसंहार– नई कहानी आंदोलन हिंदी साहित्य के इतिहास में एक महत्वपूर्ण साहित्यिक उपलब्धि है। इस आंदोलन ने कहानी को नई संवेदना, नया शिल्प तथा आधुनिक जीवन–बोध प्रदान किया। इसने व्यक्ति के आंतरिक जीवन, मानसिक संघर्ष, संबंधों के विघटन तथा अस्तित्वगत संकट को अभिव्यक्ति दी।मोहन राकेश, राजेंद्र यादव, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा तथा मन्नू भंडारी जैसे कहानीकारों ने हिंदी कहानी को आधुनिकता के धरातल पर प्रतिष्ठित किया।अत: कहा जा सकता है कि नई कहानी आंदोलन हिंदी साहित्य की एक युगांतरकारी उपलब्धि है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. नामवर सिंह, कहानी : नई कहानी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, पृ. 23।
2. डॉ. रामदरश मिश्र, हिंदी कहानी : अंतरंग पहचान, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 72।
3. डॉ. इंद्रनाथ मदान, नई कहानी : स्वरूप और समस्याएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 41।
4. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिंदी आलोचना, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 144।
5. डॉ. बच्चन सिंह, आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, पृ. 315।
6. डॉ. इंद्रनाथ मदान, नई कहानी : स्वरूप और समस्याएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 76।
7. डॉ. रामदरश मिश्र, हिंदी कहानी : अंतरंग पहचान, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 85।
8. डॉ. नामवर सिंह, कहानी : नई कहानी, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, पृ. 85।
9. वही, पृष्ठ सं. 102।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

From Gold to Growth : A Comparative Study of Evolving Investment Behaviour of Working and Non-Working Women in India

Dr. B L Patidar* **Milind Dandwate****

***Professor, Govt.College, Sonkatch & Samrat Vikramaditya University, Ujjain (M.P.) INDIA**
****Assistant Professor, SJHS Gujarati Innovative College of Commerce and Science, DAVV University, Indore (M.P.) INDIA**

Abstract: The financial empowerment of women in India is witnessing a transformative shift, moving beyond traditional saving habits toward active investment participation. This research paper presents a comprehensive comparative analysis of the investment patterns of working and non-working women in India, drawing upon multiple surveys and national-level data from 2024-2025. The study reveals a significant evolution in women's financial behaviour, with mutual funds emerging as the most popular investment choice among women (38.9%), surpassing traditional favourites like fixed deposits and gold. The research identifies a critical paradox: while 84% of women investors feel confident making investment decisions, only 33% have both a clear financial goal and a structured plan. Working women demonstrate higher participation in equity markets and mutual funds, while non-working women, despite managing household finances, face significant barriers including lack of knowledge (60%) and fear of losses (50%). The study underscores the importance of financial literacy, digital inclusion, and targeted policy interventions in bridging the investment gap between working and non-working women.

Keywords: Women Investors, Investment Behaviour, Working Women, Non-Working Women, Financial Literacy, Mutual Funds, SIP, Gender and Finance, India.

Introduction -The financial landscape of India is undergoing a silent revolution, and women are at the forefront of this transformation. Historically characterized as diligent savers rather than active investors, Indian women are increasingly breaking traditional barriers to participate in formal financial markets. The journey from keeping savings in household cupboards and investing in gold to actively participating in mutual funds and equity markets represents a fundamental shift in women's economic agency.

This transformation is driven by multiple factors: rising educational attainment, increasing workforce participation, digital financial inclusion, and evolving social norms. India's female labour force participation rate jumped from 23.3% in 2017-18 to 42% in 2023-24, creating a growing cohort of women with independent incomes and investment capacity. Simultaneously, India's digital public infrastructure, including Aadhaar and UPI, has democratized access to financial markets, enabling women from smaller cities to participate in formal investing.

However, a significant gap persists between women's savings and their conversion into investments. The Finsafe 'Women & Finances Survey 2025', which reached over 800 women across India, revealed that nearly 63% of women were unsure if they had saved enough for their financial goals, and 46% lacked confidence in handling emergencies-. This "confidence gap" is particularly pronounced among non-working women, who despite managing household finances, often lack direct access to investment opportunities and financial decision-making.

The DSP Winvestor Pulse 2025-26 study provides additional context, surveying 5,050 urban investors across 13 cities. It reveals that 56% of women now take investment decisions independently, up sharply from 44% in 2022—the most significant movement recorded in the study. Yet, the same study found that while 84% of investors feel confident making their own investment decisions, only 33% have both a clear financial goal and a structured plan to achieve it.

This research paper aims to provide a comprehensive comparative analysis of the investment patterns of working and non-working women in India, drawing upon the most recent data from 2024-2025. It examines the evolving preferences, barriers, and enablers shaping women's investment behaviour, and offers recommendations for bridging the gap between working and non-working women investors.

Objectives of the Study: This research paper pursues the following objectives:

1. To examine the evolving investment preferences of

working and non-working women in India, tracking the shift from traditional instruments to modern investment avenues.
2. To analyze the factors influencing investment decisions, including financial literacy, risk perception, access to advice, and digital accessibility.
3. To compare the investment behaviour of working and non-working women, identifying key differences in savings capacity, risk appetite, and investment goals.
4. To evaluate the role of digital platforms in enabling women's participation in financial markets.
5. To identify barriers faced by working and non-working women in their investment journey, including confidence gaps and knowledge deficits.
6. To propose recommendations for enhancing financial inclusion and investment participation among women.

Literature Review

Historical Context: Women as Savers: Indian women have historically been characterized as diligent savers but reluctant investors. Research indicates that women traditionally channel their surplus funds into safe, tangible assets such as gold, bank deposits, and real estate. A study of 330 women found that the primary motives for saving included affording luxury (23.9%), buying gold (19.1%), and emergency needs (14.8%).

The preference for gold reflects cultural and social factors, with Indian households holding an estimated 25,000 tonnes of gold, much of which sits in women's jewellery boxes. While gold serves as an effective store of value, physical gold does not earn interest and carries storage and transaction costs.

The Transition to Investment: The past decade has witnessed a significant shift in women's investment behaviour. Women's participation in mutual funds has grown substantially, with collective investments rising from Rs 4.59 lakh crore in March 2019 to Rs 11.25 lakh crore by March 2024, more than doubling in five years. Women now account for approximately 33% of total individual Assets Under Management (AUM) in mutual funds.

The CFA Institute reports that Indian women are channeling more money into equities, holding nearly one-third of India's retail mutual fund assets. This shift is driven by increased awareness, digital accessibility, and the growing recognition that traditional savings instruments like fixed deposits fail to generate returns that beat inflation.

Factors Influencing Women's Investment Behaviour

The Finsafe survey identified several key factors influencing women's investment behaviour:

Confidence Gap: Fewer than 20% of women felt confident handling core money tasks such as saving, investing, or managing debt. This is described as a "confidence gap" rather than a capability gap, as most respondents expressed ability to "do better" with supportive interventions.

Knowledge Barriers: More than 60% of women cited lack of knowledge as a key barrier to investing, and over half said they were scared of making losses.

Traditional Preferences: Despite growing interest in modern instruments, 31.9% of women still prefer fixed deposits and insurance policies as their primary investment choice.

Goal-Oriented Approach: Women investors are increasingly goal-oriented, with 41% prioritizing travel over buying a home, particularly in the 25-44 age group.

Digital Transformation and Financial Inclusion: Digital platforms have emerged as a key enabler of women's financial participation. The DSP Winvestor Pulse study reveals that women are significantly more likely than men to actively share or comment on stock-related content on social media, indicating growing digital engagement.

The "democratisation" of financial services through digital platforms like UPI has allowed a very large population to start their investment journey, according to Priti Rathi Gupta, Founder of LXME.

Working vs. Non-Working Women: Distinct Patterns: Research by Sushmitha and Jayabal (2025) identified five major dimensions of investment behaviour for working women: investment awareness, investment attributes, investment preference, investment decision, and investment satisfaction. Their study of 385 working women in Chennai revealed that sub-factors within each dimension significantly influence investment behaviour.

For non-working women, the picture is more complex. The DBS Bank India and Haqdarshak report (2025) surveyed 411 rural women entrepreneurs, revealing that while 18% make financial decisions independently, 47% make decisions jointly with their husbands, and 24% rely entirely on their husbands for financial decisions. This reflects persistent traditional norms that limit non-working women's financial autonomy.

Research Methodology

Research Design: This study employs a mixed-methods approach, combining secondary analysis of multiple surveys with primary data synthesis from national-level reports. The research is descriptive and analytical, comparing the investment patterns of working and non-working women.

Data Sources

Primary Data Sources:

1. **Finsafe 'Women & Finances Survey 2025'** - Survey of 800+ women across India.
2. **DSP Winvestor Pulse 2025-26** - Survey of 5,050 urban investors across 13 cities.
3. **DBS Bank India & Haqdarshak Report** - Survey of 411 rural women entrepreneurs.
4. **The Wealth Company Study** - Mutual fund investor data.

Secondary Data Sources:

1. **Association of Mutual Funds in India (AMFI)** - Mutual fund participation data
2. **Computer Age Management Services (CAMS)** - Equity investment data

3. Ministry of Statistics and Programme Implementation - Labour force participation data

Data Analysis Techniques: Data was analyzed using descriptive statistics, comparative analysis, and synthesis of findings across multiple surveys. The study employs a comparative framework to examine differences between working and non-working women across key dimensions.

Scope and Limitations: The study draws upon surveys with varying sample sizes and geographic coverage. The DSP Winvestor Pulse study focuses on urban investors (13 cities), while the DBS Bank India study focuses on rural women entrepreneurs (Madhya Pradesh, Maharashtra, Rajasthan). The study acknowledges these limitations and synthesizes findings to provide a comprehensive national picture.

Analysis and Findings

Demographic Profile of Women Investors: The combined survey data reveals several key demographic trends:

Characteristic	Finding	Source
Age Distribution	74% of women investors aged 23-30 years	JISEM Study
Income Distribution	74% earn Rs 20,000-30,000 monthly	JISEM Study
Education	44% post-graduates, 34% graduates	JISEM Study
Marital Status	40% married, 32% unmarried, 22% divorced	JISEM Study
Decision Independence	56% take investment decisions independently	DSP Winves -tor Pulse

Investment Preferences: Working vs. Non-Working Women

Overall Investment Preferences

The Finsafe survey reveals the following investment preferences among Indian women:

Investment Instrument	Percentage
Mutual Funds	38.9%
Fixed Deposits & Insurance	31.9%
Gold	18.2%
Shares	11.0%

This represents a significant shift from historical patterns, where gold and fixed deposits were the dominant choices.

Working Women: Variation by Income

The Wealth Company study reveals how income influences investment preferences among working women:

Income Level	SIP Preference	Lumpsum Preference	Both
Less than Rs 5 lakh	64%	27%	9%
Rs 5-10 lakh	51%	19%	30%
Rs 11-20 lakh	44%	20%	36%
Rs 21-40 lakh	44%	21%	35%
Rs 41-60 lakh	54%	28%	18%
Above Rs 60 lakh	63%	31%	6%

The data reveals that Systematic Investment Plans (SIPs) are the most preferred investment mode across all income levels, with lower-income women showing the highest SIP preference (64%).

Working Women: Investment Avenues

A study of 50 working women in India revealed the following investment preferences-1:

Investment Avenue	Percentage
Fixed Deposits (Bank)	42%
Jewellery (Gold/Platinum)	24%
Property	14%
Share Market	12%
Mutual Funds	8%

This suggests that while mutual funds are gaining popularity, traditional instruments still dominate, particularly among older demographics.

Factors Influencing Investment Decisions

Awareness and Knowledge: A study of 50 working women found that 72% were aware of different investment approaches, while 28% had no knowledge about investment options. The chi-square analysis revealed a significant relationship between educational background and awareness of investment schemes, while no significant relationship was found between income level and awareness.

Risk Perception and Confidence: The Finsafe survey revealed that:

- 84% of women investors feel confident making investment decisions
- However, only 33% have both a clear financial goal and a structured plan
- 60% cited lack of knowledge as a key barrier
- 50% were scared of making losses

Investment Goals: A study of 330 women revealed the following investment goals:

Investment Motive	Percentage
To afford luxury	23.9%
Buying gold	19.1%
Emergency	14.8%
Higher education	14.2%
Helping family during crisis	13.9%
To build a house	11.5%
Marriage purposes	2.4%

Chi-square analysis revealed a significant relationship between marital status and motive for saving, with divorced women showing higher preference for buying gold and single women showing higher preference for luxury.

Financial Decision-Making Dynamics

Urban Women: The DSP Winvestor Pulse study reveals significant progress in urban women's financial decision-making:

- 56% of women now take investment decisions independently (up from 44% in 2022)
- 24% take independent decisions with professional advisor consultation (up from 17% in 2022)
- 16% describe themselves as self-taught investors (up from 13% in 2022)

Rural Women Entrepreneurs

The DBS Bank India and Haqdarshak report reveals more traditional patterns among rural women:

Decision Maker	Percentage
Joint decisions with husband	47%
Husband alone	24%
Independent decisions	18%
Consult family	11%

Savings Habits and Financial Security

The Finsafe survey reveals persistent financial insecurity among women:

Concern	Percentage
Unsure of enough for personal needs/goals	62.7%
Unsure of enough for emergencies	46.1%
Finding it difficult to save	20.4%
No worries	9.3%

The survey also found that 90% of rural women entrepreneurs save a portion of their income, with 57% saving less than 20% of monthly income and 33% saving between 20-50%.

The Role of Digital Platforms: The DSP Winvestor Pulse study reveals growing digital engagement among women:

1. Women are significantly more likely than men to actively share or comment on stock-related content on social media
2. Digital platforms have democratized access to financial markets
3. 89% of rural women entrepreneurs prefer in-person banking, while only 38% utilize digital banking services.

The Confidence-Planning Gap: A critical finding from the DSP Winvestor Pulse study is the gap between confidence and planning:

1. 84% of investors feel confident making their own investment decisions
2. Only 33% have both a clear financial goal and a structured plan
3. Nearly 50% define "long-term investing" as 3 years or less
4. Only 28% associate long term with 5 years or more

Discussion

The Evolution of Women's Investment Behaviour: The data from 2024-2025 reveals a significant evolution in women's investment behaviour. The shift from traditional instruments like gold and fixed deposits to modern avenues like mutual funds and equities reflects broader societal changes. This transformation is driven by education, workforce participation, digital inclusion, and changing social norms.

The finding that mutual funds are now the most popular investment choice among women (38.9%) represents a paradigm shift from historical patterns. This is consistent with the broader literature on women investors, which emphasizes women's preference for goal-oriented, disciplined investment approaches.

The Working vs. Non-Working Divide

Working women demonstrate stronger investment participation and greater diversification in their portfolios. The income-investment nexus is clear: working women with independent incomes have greater capacity to invest. This is reflected in the finding that 74% of working women in the JISEM study earn Rs 20,000-30,000 monthly and demonstrate active investment participation.

Non-working women, despite managing household finances, face significant barriers. The finding that 90% of rural women entrepreneurs save, but primarily through SHG savings (39%) and cash (18%), highlights the limited investment options available to non-working women.

The Confidence Gap: A Critical Barrier: The Finsafe survey's finding that fewer than 20% of women feel confident handling core money tasks, despite demonstrating capability, highlights a critical barrier. This "confidence gap" is more pronounced among non-working women and those with limited exposure to financial education.

The paradox identified by the DSP Winvestor Pulse study—84% confidence in investment decisions but only 33% with a financial plan—suggests that confidence alone is insufficient. Structured financial planning and goal-setting remain areas requiring significant attention.

Financial Literacy as a Critical Enabler: The finding that 60% of women cite lack of knowledge as a key barrier underscores the importance of financial literacy. Chi-square analysis confirming a significant relationship between educational background and awareness of investment schemes further emphasizes this point.

Digital platforms have the potential to bridge this knowledge gap. The democratization of financial services through platforms like UPI has made investing more accessible, particularly for women in smaller cities. The DSP study's finding that women are more likely to engage with stock-related content on social media suggests that digital engagement can drive financial literacy.

Digital Transformation and Financial Inclusion: The contrast between urban and rural women's digital banking adoption (89% prefer in-person banking vs. 38% digital usage among rural women) highlights a significant digital divide. This presents an opportunity for policymakers and financial institutions to enhance digital financial literacy and infrastructure in rural areas.

The Behavioral Advantage of Women Investors: The literature suggests that women investors possess behavioral advantages, including patience, discipline, and goal-orientation. The DSP study's finding that women are significantly less likely to panic-sell during market corrections supports this view. This behavioral profile, combined with the growing shift toward mutual funds and SIPs, suggests that women investors may achieve superior long-term returns.

Suggestions and Recommendations

Enhancing Financial Literacy

Targeted Financial Education: Given that 60% of women

cite lack of knowledge as a key barrier, financial literacy programs must be tailored to the specific needs of working and non-working women. Programs for working women should focus on portfolio diversification and advanced investment topics; programs for non-working women should emphasize the basics of financial planning and investment.

Digital Financial Literacy: The digital divide highlighted in this study suggests that digital financial literacy programs must be prioritized, particularly for rural women.

School-Level Financial Education: Integrating financial literacy into school curricula can ensure that future generations of women are financially empowered from an early age.

Bridging the Confidence Gap

Supportive Interventions: The Finsafe survey's finding that the confidence gap is about "supportive interventions rather than remedial training" suggests that women require encouragement, mentorship, and relatable financial guidance.

Peer Learning Platforms: Women-only investment groups and peer learning platforms can build confidence and reduce the hesitation many women feel about investing.

Role Models: Showcasing successful women investors and financial decision-makers can inspire others to take charge of their financial lives.

Product Innovation

Goal-Based Investment Products: Given that women are goal-oriented investors, products designed around specific life goals—such as children's education, retirement, and emergency funds—would be particularly appealing.

Low Entry Barriers: Products with low minimum investment amounts (Rs 500-Rs 1,000), such as SIPs, enable women to start investing with small amounts.

Flexible Withdrawal Options: Products offering flexibility and no penalties for early withdrawals are essential for women who need access to their savings in emergencies.

Empowering Non-Working Women

Personal Investment Corpus: Non-working women should be encouraged to create a personal investment corpus, even if derived from household savings. Financial institutions should design products that facilitate this.

Involvement in Family Financial Planning: Non-working women should be encouraged to actively participate in family financial planning, even if they are not earning.

Government Schemes: Schemes like the Mahila Samman Savings Certificate (MSSC) offer attractive returns and should be promoted among non-working women.

Expanding Digital Inclusion

Infrastructure Investment: Continued investment in digital financial infrastructure, including mobile banking and online investment platforms, is essential to sustain the momentum in women's financial inclusion.

Rural Digital Literacy Programs: The finding that only 38% of rural women entrepreneurs use digital banking services highlights the need for targeted digital literacy programs in rural areas.

Strengthening Policy Framework

Gender-Responsive Financial Policy: Policymakers should ensure that financial policies and schemes are gender-responsive, addressing the specific barriers women face.

Incentives for Women Investors: The Securities and Exchange Board of India's (SEBI) proposal to provide additional incentives for enrolling first-time women investors should be expanded and effectively implemented.

Data Collection and Research: Financial institutions and policymakers should collect and analyze disaggregated data on women investors to better understand their specific needs and constraints.

Conclusion: The investment behaviour of Indian women is undergoing a transformative shift. From traditional savers characterized by a preference for gold and fixed deposits, Indian women are emerging as active investors with growing participation in mutual funds, equities, and SIPs. This transformation is driven by education, workforce participation, digital inclusion, and evolving social norms.

Yet, significant challenges remain. The gap between working and non-working women in investment participation, the confidence gap, and the knowledge barrier all require targeted interventions. The finding that fewer than 20% of women feel confident handling core money tasks, despite demonstrating capability, underscores the need for supportive interventions rather than remedial training.

The path forward requires a multi-pronged approach: enhancing financial literacy, bridging the confidence gap, empowering non-working women, expanding digital inclusion, and strengthening the policy framework. As India moves toward its goal of becoming a developed economy, the financial empowerment of women will be essential to achieving sustainable and inclusive growth.

The silent revolution in women's investment behaviour is a cause for optimism. As more women take charge of their financial lives, they are not only building personal wealth but also contributing to capital formation, economic growth, and a more inclusive financial ecosystem. The momentum observed in 2024-2025 suggests that this revolution is only beginning.

References:-

1. JISEM Journal. (2025). Investment Pattern of Working Women in India. *Journal of Information Systems and Engineering Management*, 10(21s), 961-967.
2. DBS Bank India & Haqdarshak. (2025). Women and Finance Report: Rural Women Entrepreneurs. DBS Bank India.
3. Journal of Informatics Education and Research. (2025). Savings and Investment Patterns of Women: A Comparative Analysis. *Journal of Informatics Education and Research*, 5(2), 1540-1549.
4. Economic Times. (2025, July 20). Over 60% Indian Women Unsure if They've Saved Enough for Personal

Needs, Goals. *The Economic Times*.
5. Outlook Money. (2025, July 3). Women Want to Invest But Lack of Support, Knowledge a Major Deterrent. *Outlook Money*.
6. DSP Mutual Fund. (2025). DSP Winvestor Pulse 2025-26: Women Take Charge of Investing. DSP Mutual Fund.
7. Economic Times. (2026, March 6). 64% Women Investors with Less Than Rs 5 Lakh Income Prefer SIP in Mutual Funds. *The Economic Times*.
8. Sushmitha, K., & Jayabal, A. (2025). Decoding Financial Choices: Investigating Factors Influencing Investment Dynamics of Working Women. *International Journal of Financial Engineering*, 12(01), 1-25.
9. Outlook Money. (2025, October 10). Indian Women Moving Beyond Gold, FDs; Increasingly Investing in Equities. *Outlook Money*.
10. Business Today India. (2025, December 21). Towards Financial Independence. *Business Today India*.
11. Value Research. (2026, March 6). Starting from Zero: A Beginner's Guide to Investing for Women. *Value Research*.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Necessity and Challenges in Lawful Implementation of Sustainability in Our Infrastructural Development

Dr. Mohammad Harun Chippa*

***Assistant Professor, Dr. Anushka Vidhi Mahavidyalaya, Udaipur (Raj.) INDIA**

Abstract: Infrastructure consists of basic systems and facilities, which include transportation, buildings, communication systems, water supply, power supply, etc. Infrastructure development is essential to facilitate a country's economic development and reduce poverty. However in present era, the earth is in dire need of a plan to combat climate change as well as secure our resources for present and the future generation. The solution for the same is sustainable development. Sustainable Development aims to bring a balance between meeting the requirements of what the present demands while not overlooking the needs of future generations. It acknowledges nature's requirements along with the human's aim to work towards the development of different aspects of the world. It aims to efficiently utilise resources while also meticulously planning the accomplishment of immediate as well as long-term goals for human beings, the planet as well and future generations. In the present time, the need for Sustainable Development is not only for the survival of mankind but also for its future protection. This paper aims at evaluating the modes which could optimize the growth of sustainable development in India and potential challenges being faced in implementing legal provisions which may facilitate the adoption of green energy in Indian infrastructural development.
Keywords- Infrastructure, sustainable development, green energy, legal provisions, challenges.

Introduction To Sustainable Infrastructure: From the water we drink to the way we travel to work or school, infrastructure touches every aspect of human life. It has the power to shape the natural environment—for good or for ill. As the world's population expands, urbanisation accelerates and emerging middle classes in developing countries demand more services, the need for infrastructure is rising rapidly. Meanwhile, increasingly severe weather events and rising sea levels pose direct threats to infrastructure assets and the critical services these provide, with lack of precise knowledge about future climate change making long-term planning increasingly difficult.

The concept of sustainable infrastructure refers to equipment and systems that are designed to meet the population's essential service needs including roads, bridges, telephone pylons , hydroelectric power stations, etc. based on all-round sustainable principles. This means the infrastructure is environmentally friendly from end to end, and that includes economic, financial, social and institutional factors. With urban areas growing exponentially, especially in emerging countries**,** sustainable infrastructure is showing its worth as a more efficient, productive and environmentally friendly option. Furthermore, according to the World Bank, these facilities prove more profitable as they make for more reliable services and greater resilience to extreme weather events, as well as lessening the impact of natural threats to people and the economy.

In 2015, different countries that are part of the United Nations met at the Sustainable Development Summit and developed the 2030 Agenda containing the 17 Sustainable Development Goals (SDGs). These goals have led most industrialized countries to readjust their strategies to align them with the achievement of the SDGs. Infrastructure projects form an important part of industry and contribute directly to SDG 9 and 11 ; so, sustainable infrastructure development and planning become a necessity.While categorizing a project as a sustainable infrastructure project, it is important to outline the following three dimensions:

1. Commitment to achievement of one or more of the UN SDGs at the project design stage;
2. Assessment and monitoring against clear social, environmental, and economic objectives through a triple bottom-line approach;
3. Consideration of financial sustainability and affordability.

Challenges Associated With Green Infrastructure Legislation: Over the past few decades, efforts and investment have been made to lessen the amount of CO_2 emissions from the infrastructure sector. Yet, in spite of these endeavors, scientific reports show that the current CO_2 emissions generated from the existing infrastructure are still responsible for significant climate change. Most of the existing infrastructure, comprising buildings, water, roads and energy, is not designed to endure changes in

environmental conditions.

In the coming 30–50 years, more climatic changes are expected to occur. We might further experience drastic changes in temperature, rainfall patterns and more frequent extreme events like drought and freezing winters. Hence, we need to act today. We need to plan and decide what necessary steps are to be taken to ensure that our infrastructure is sustainable and resilient enough to meet any unpredictable challenges in the future. Planners, designers and engineers must plan and design sustainable infrastructure that integrates decarbonization as well as being adaptive against various extreme climates. Moreover, most infrastructures will have a considerable lifespan; therefore it will be subjected not only to adverse climate condition at the time of construction but also to unpredictable climate variations in the future. Therefore, in order to enhance the sustainability and resilience of the structures, they should be designed in such a way they can withstand any extreme climate changes.

However, the journey toward sustainable infrastructure is not without its challenges. Legal and regulatory frameworks play a crucial role in shaping the development process, establishing standards, and guiding decision-making. Navigating these frameworks effectively requires a deep understanding of the complex interplay between economic development, environmental protection, social equity, and cultural preservation.

1) Lack of Practical Awareness- One major barrier that exists is the curriculum provided to students. The current curriculum focuses primarily on information like environmental regulations, wildlife conservation, and Supreme Court rulings. These topics, though required, are not the most important. Climate change and its related aspects, which change with each year passing, hold more substance and importance when it comes to environmental education. These topics can only be further enhanced with practical knowledge. Environmental issues that students encounter daily need to be covered in the course syllabus which then, should be related to complicated global environmental issues. Students will then be inspired to come up with answers once they realise how directly connected environmental challenges are to their lives and future. It will cause them to modify how they act, and this should be the ultimate aim of environmental education. Lack of organisational support is also a barrier.

2) Lack of Intent Among Citizens to Follow Environmental Guidelines- According to a report by the United Nations, some areas in the Indo-Gangetic basin in India have already passed the groundwater depletion tipping point and its entire northwestern region is predicted to experience critically low groundwater availability by 2025. Environmental tipping points are critical thresholds in the Earth's systems, beyond which abrupt and often irreversible changes occur, leading to profound and sometimes catastrophic shifts in ecosystems, climate patterns and the overall environment. India is the world's largest user of groundwater, exceeding the use of the United States and China combined. The northwestern region of India serves as the bread basket for the nation's growing 1.4 billion people, with the states of Punjab and Haryana producing 50 per cent of the country's rice supply and 85 per cent of its wheat stocks. However, 78 per cent of wells in Punjab are considered overexploited. Such news is not new to citizens of India. It's been a whole lot of years since we were made aware of the coming disaster. Yet we choose to ignore it and deplete the resources for our personal gains. I firmly stand by my view that we all, maybe including me, are acting nationalists and not actual ones. Govt. has numerous times banned or restricted use of groundwater excavation through regulations but we tend to violate it via bribery or abuse of position or power. Even govt. doesn't comes out with stringent actions upon the violators which gives them the undue courage for such activities.

3) Lack of Powers In Enforcing Authorities-The Ministry of Environment, Forest and Climate Change is the nodal ministry for enforcing the regulatory framework related to the environment, biodiversity, forests, wildlife and climate change in India. It lays down the general policy framework on environmental issues.The Central Pollution Control Board (CPCB) is the central authority that frames the standards and implements the regulations relating to industrial pollution, waste management, emissions or effluent standards, etc. across the country with the assistance of the relevant State Pollution Control Boards (SPCBs) and the Union Territory Pollution Control Committee (UTPCCs).

It is noteworthy that the Boards lack the power to take stringent actions like arresting the violators, seizure of the industry or factory, etc. This in turn encourages the wrongdoers to by-pass the system by paying small fines.Another shortcoming worth mentioning is that Central and State Boards' jurisdiction does not extend to construction sector which is the basis of creating green infrastructure. Enforcement has also suffered because fines for non-compliance have proved to be too low and the procedures concerning punitive action are much too rigid, poorly understood and time consuming. Seldom are the full economic impact and environmental impact of violations taken into consideration due to lack of expert knowledge. Further, there is an acute shortage of competent, knowledgeable and skilled people in the CPCB and SPCBs. This is largely the result of low funding and lack of autonomy of the CPCB and SPCB from the government. SPCBs in some states use contractual employees who have low work motivation, as they are not provided the benefits of a regular government employee.

4) Corruption-We recently witnessed the critical scenes of water shortage in Bengaluru on arrival of summer. Such scenarios are common during summer season in many tier 2 and tier-3 cities. Govt. has fixed certain guidelines for

groundwater extraction like borewell digging upto a certain depth which obviously is not followed in most of the cases. Also, the permits are granted without making any background check or regulation visits as to the requirement of the person applying for. As a result we witness a whole city being endangered for its survival. Another such instance witnessed was cracks developed in the houses of Joshimath town last year which created havoc among the residents. After a thorough research it was found that the prominent reason behind this was abrupt construction in the name of developing tourism. A report submitted by Mishra committee in 1976 resurfaced which stated that the town is situated on the debris of landslides. Hence it was clear that the geographical region required a planned infrastructure. But all the concerns were kept aside for the sake of monetary gains. The incidents show that corruption has taken a high position in our working system. Nobody cares about the future being ruined at the cost of small amount of money.

Suggestions For Effective Implementation Of Laws: The necessity of developing sustainable infrastructure is required not only for combating climate change but also for keeping in mind the future economic growth. For instance, coal and other non-renewable source of energy will not be able to manage the ever increasing need of energy in India. A renewable source like solar or hydro-electric power can easily meet the requirements and will be cost efficient as well. Following are certain suggestions for effective implementation of green laws in realizing the dream of sustainable infrastructure:-

1) Raising Awareness Practically and Not Theoretically– Central and State Pollution Control Boards are responsible for spreading awareness regarding improving environmental conditions but the citizens have to be equally vigilant for the task. Every stakeholder in society has individual obligations to fulfill as well as a duty to provide an equal contribution to society's education. One may always find time for different environmentalists or organisations working on environmental issues to share their insights and contributions. They might also provide funding to educational institutions to set up workshops for instructors and students on environmental awareness. This would be an encouragement for individuals to attend new-age workshops and webinars to be more aware of the environmental concerns of the world. Also the govt. must promote workshops in schools and other educational institutions which should be organized by students themselves which will give them a real time experience of the requirement of green energy.

2) Restricting self-centered approach- The citizens need to understand that their one selfish step is creating a question mark on the future of thousands of other persons. They should develop a habit of making certain changes which could contribute in promoting sustainability in one way or the other. For instance, while constructing a house a person should keep in mind the environmental guidelines in the region. Further, the person setting up any industry should always prefer to build environment friendly structure like preferring natural light instead of artificial one in the premises, installing solar panels, rainwater harvesting, zero wastage of water, etc. We should not wait for the govt. to guide us. Instead this approach should be in our routine habit.

3) Establishing Reginal/Additional Authorities and Granting Additional Powers to he State Boards- As we are aware that the authorities involved in promoting sustainable environment are CPCB, SPCB and NGT. It is suggested that the burden of the authorities should be relaxed by establishing additional authorities for monitoring the various aspects of pollution. The necessity of establishing regional or additional authority is felt not only for the purpose of proper monitoring but also for the purpose of proper implementation of the laws and rules. For instance, under the Consumer Protection Act, 2019 the cases of consumer disputes are well classified for adjudication between National Consumer Disputes Redressal Commission, State Commission and District Commission. The recent Act has also introduced new authorities for effective implementation of the object of the law i.e. Central Consumer Protection Authority, State Consumer Protection Authority and District Consumer Protection Authority. Therefore, the Govt. should establish Green Tribunals at the State as well as District level so as to effectively resolve the complaints of violation of environmental laws. Also, constituting 'Green Police' as an enforcement wing will not only help in as well as monitoring of acceptability of environmental norms among various industries. Further, it's the need of the hour that the authorities should be provided with certain powers to take stringent actions the wrongdoers and create a fear among the others that an authority is right above their head to monitor them and restrict their unwanted actions.

4) Change in Govt. Policies-In recent years, Indian govt. has been primarily focusing on initiating schemes for promoting green infrastructure in India. Under PM SuryagharMuftBijliYojna govt. provide subsidies for setting up solar power plant. Further govt. is also providing subsidies for buying electric vehicle so as to promote greener transport.However, much intense changes in policies are required so as to develop sustainable infrastructure. One of such change is preparing active master plan for the Tier-1 cities. A new term has emerged for sustainable infrastructure known as 'Blue- Green' infrastructure. It refers to a network that provides the "ingredients" for solving urban and climatic challenges by a combination of infrastructure, ecological restoration and urban design to connect people with nature.Blue indicates water bodies such as rivers and tanks. Green indicates trees, parks, and gardens. Such an infrastructure should be a part of construction policy both residential as well as commercial. Every construction should be scrutinized by

pollution control boards in such cities. Gradually, it will become a practice and subsequently may be applied in tier-2 and 3 cities. Also, greener mode of transport can be promoted by developing purposeful infrastructure like installing charging stations at frequent distance, separate lane for electric vehicles, lower amount toll and other taxes for such vehicles, etc. Govt. should make contribution towards green infrastructure a mandatory part of Corporate Social Responsibility (CSR). This could enhance corporate assistance not only financially but also technically.

Conclusion: Development, and for that matter, sustainable development is contingent on access to resources necessary to live a reasonably good way of life, infrastructure included. Without any ambiguity, access to more resources would entail a higher level of development, the way we define development today. However, unrestricted access to resources could certainly jeopardize the sustainability and resilience of the developmental process. According to an ongoing temperature analysis by scientists at NASA's Goddard Institute for Space Studies (GISS), the average temperature of earth rose by a little more than 1^0c since 1880 and two-third of it was raised since 1975 roughly at the rate of 0.15^0c-0.20^0c per decade. Some may argue it as a normal raise as many nations witness a huge fluctuation of temperature only in a day. This one degree change is significant because it not only warm-up the oceans but also melts the ice at the poles. This again results in the rise of oceanic levels which is a real time threat to the coastal regions around the world. According to a latest report by NASA using the research of IPCC (Inter-governmental Panel on Climate Change), 12 coastal cities of India including Mumbai, Chennai, Vishakhapatnam could be 3-ft underwater by 2100.

On 3rd August 2023, the Indian Government released its Net zero emissions target policy to reduce its carbon footprints. To achieve the sustainable development goals (SDG), as specified by the UN, India is determined for its long-term low-carbon development strategy. Selfishly pursuing modernization, humans have frequently compromised with the requirements of a more sustainable environment.India's sustainable infrastructure is facing severe challenges due to the rapid pace of urbanisation. While there have been some efforts towards sustainable development, such as the Smart Cities Mission and the Atal Mission for Rejuvenation and Urban Transformation, these initiatives face various constraints such as inadequate financial resources, inadequate planning, and lack of public awareness.Moreover, is the need for better planning and policy frameworks to promote sustainable development. These should include a focus on integrated urban planning, which takes into account environmental sustainability, social equity, and economic growth. It is also essential to involve communities in the planning and decision-making process to ensure their needs and aspirations are considered.India must use this transformational moment to move from old 19th Century infrastructure to a wiser combination of green and traditional infrastructure that will meet the needs of the 21st Century.

References:-

1. United Nations, *Transforming Our World: The 2030 Agenda for Sustainable Development*, U.N. Doc. A/RES/70/1 (2015)
2. United Nations, *Sustainable Development Goals (SDGs)*, https://sdgs.un.org/goals.
3. World Bank, *Sustainable Infrastructure*, https://www.worldbank.org.
4. Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC), *Sixth Assessment Report (AR6): Climate Change 2023* (2023)
5. National Green Tribunal Act, 2010
6. Environment (Protection) Act,1986
7. Water (Prevention and Control of Pollution) Act, 1974
8. Air (Prevention and Control of Pollution) Act, 1981
9. Consumer Protection Act, 2019
10. Ministry of Environment, Forest and Climate Change (MoEFCC), Government of India, https://moef.gov.in
11. Central Pollution Control Board (CPCB), *Annual Report* (latest edition), https://cpcb.nic.in.
12. NITI Aayog, *India's Long-Term Low Carbon Development Strategy* (2023).
13. Government of India, *India's Updated Nationally Determined Contribution (NDC)* (2022).
14. National Aeronautics and Space Administration (NASA), *Global Climate Change: Vital Signs of the Planet*, https://climate.nasa.gov.
15. NASA Goddard Institute for Space Studies (GISS), *GISS Surface Temperature Analysis (GISTEMP)*, https://data.giss.nasa.gov/gistemp.
16. United Nations Environment Programme (UNEP), *Global Environment Outlook* (latest edition).
17. United Nations University Institute for Water, Environment and Health (UNU-INWEH), *Groundwater and Water Security Reports*.
18. Mishra Committee Report, *Report on the Stability of Joshimath Township* (1976).
19. Ministry of New and Renewable Energy (MNRE), Government of India, *PM Surya Ghar: MuftBijliYojana*, https://mnre.gov.in.
20. Ministry of Housing and Urban Affairs, Government of India, *Smart Cities Mission Guidelines* (2015).
21. Ministry of Housing and Urban Affairs, Government of India, *Atal Mission for Rejuvenation and Urban Transformation (AMRUT)*, https://mohua.gov.in.
22. Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC), *Special Report on Global Warming of 1.5°C* (2018).
23. United Nations, *World Urbanization Prospects 2018*, Department of Economic and Social Affairs.
24. OECD, *Infrastructure for a Low-Carbon Economy* (2021).
25. Asian Development Bank, *Green Infrastructure in Asia: Policies and Practices* (2022).

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

चिकित्सा प्रणाली के विकास में भारतीय ज्ञान परम्परा का योगदान

डॉ. मधुसूदन चौबे*

* एसोसिएट प्रोफेसर (इतिहास) प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बडवानी (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – भारतीय ज्ञान परम्परा विश्व की प्राचीनतम एवं सर्वाधिक समृद्ध ज्ञान परम्पराओं में से एक है, जिसने दर्शन, गणित, ज्योतिष, कृषि, वास्तु, शिक्षा तथा चिकित्सा जैसे अनेक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में भारत की आयुर्वेद परम्परा मानव जीवन को केवल रोगमुक्त करने तक सीमित नहीं रही, बल्कि उसने स्वस्थ जीवन, दीर्घायु तथा शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक संतुलन पर आधारित समग्र स्वास्थ्य (Holistic Sealth) की अवधारणा प्रस्तुत की। वैदिक साहित्य, विशेषकर अथर्ववेद में औषधीय वनस्पतियों, रोगों एवं उपचार विधियों का प्रारम्भिक स्वरूप मिलता है, जबकि चरक संहिता, सुश्रुत संहिता तथा अष्टाङ्गहृदयम् जैसे ग्रंथों ने चिकित्सा विज्ञान को व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया।

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य चिकित्सा प्रणाली के विकास में भारतीय ज्ञान परम्परा के योगदान का ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। अध्ययन में वैदिक साहित्य, आयुर्वेदिक संहिताओं, आधुनिक शोधों तथा सरकारी दस्तावेजों का उपयोग करते हुए भारतीय चिकित्सा प्रणाली की विकास यात्रा का विवेचन किया गया है। शोध से स्पष्ट होता है कि आयुर्वेद केवल उपचार प्रणाली नहीं, बल्कि निवारक चिकित्सा, पोषण, पर्यावरण संरक्षण, मानसिक स्वास्थ्य तथा जीवनशैली प्रबंधन पर आधारित एक समग्र स्वास्थ्य विज्ञान है। सुश्रुत द्वारा विकसित शल्य चिकित्सा, चरक की निदान एवं चिकित्सा पद्धति, वाग्भट्ट द्वारा अष्टांग आयुर्वेद का समन्वित प्रतिपादन तथा योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा की अवधारणाएँ आज भी वैश्विक चिकित्सा जगत के लिए प्रेरणास्रोत हैं।

वर्तमान समय में जीवनशैली जनित रोगों, मानसिक तनाव, प्रतिरक्षा क्षमता में कमी तथा पर्यावरणीय असंतुलन जैसी चुनौतियों के बीच भारतीय ज्ञान परम्परा की चिकित्सा अवधारणाएँ पुन: वैश्विक स्तर पर स्वीकार्यता प्राप्त कर रही हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा पारंपरिक चिकित्सा को बढ़ावा देना तथा भारत में आयुष मंत्रालय की विभिन्न पहलें इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं। अत: भारतीय ज्ञान परम्परा केवल अतीत की धरोहर नहीं, बल्कि भविष्य की स्वास्थ्य व्यवस्था के निर्माण का एक सशक्त आधार भी है।

शब्द कुंजी – भारतीय ज्ञान परम्परा, आयुर्वेद, चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, योग, आयुष, पारंपरिक चिकित्सा, समग्र स्वास्थ्य।

प्रस्तावना – 'स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम्, आतुरस्य विकार प्रशमनम्' आयुर्वेद का यह मूल सिद्धांत भारतीय चिकित्सा दर्शन की आधारशिला है। इसका तात्पर्य है कि चिकित्सा का उद्देश्य केवल रोगों का उपचार करना नहीं, बल्कि स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना भी है। यही दृष्टिकोण भारतीय चिकित्सा प्रणाली को विश्व की अनेक चिकित्सा पद्धतियों से भिन्न बनाता है।

भारतीय ज्ञान परम्परा का विकास हजारों वर्षों की सतत बौद्धिक, सांस्कृतिक तथा वैज्ञानिक साधना का परिणाम है। इस परम्परा में चिकित्सा को केवल जैविक प्रक्रिया नहीं माना गया, बल्कि शरीर, मन, बुद्धि, आत्मा तथा प्रकृति के मध्य संतुलन स्थापित करने का माध्यम समझा गया। इसी कारण भारतीय चिकित्सा पद्धति में आहार, विहार, योग, ध्यान, दिनचर्या, ऋतुचर्या तथा नैतिक जीवन को स्वास्थ्य का अभिन्न अंग माना गया है।

वैदिक साहित्य में विशेषत: अथर्ववेद में अनेक रोगों, औषधीय पौधों तथा उपचार पद्धतियों का उल्लेख प्राप्त होता है। इसके पश्चात आयुर्वेद का व्यवस्थित स्वरूप चरक संहिता, सुश्रुत संहिता तथा वाग्भट्ट के ग्रंथों में विकसित हुआ। चरक ने कायचिकित्सा, रोग निदान, औषध विज्ञान एवं चिकित्सा सिद्धांतों का विस्तृत प्रतिपादन किया, जबकि सुश्रुत ने शल्य चिकित्सा, शरीर रचना विज्ञान तथा शल्य उपकरणों का वैज्ञानिक वर्णन प्रस्तुत किया। वाग्भट्ट ने आयुर्वेद के विभिन्न अंगों का समन्वय कर चिकित्सा विज्ञान को अधिक व्यावहारिक स्वरूप प्रदान किया।

प्राचीन भारतीय चिकित्सकों ने मानव शरीर का सूक्ष्म अध्ययन कर रोगों के कारण, उनके निदान तथा उपचार के सिद्धांत विकसित किए। उन्होंने औषधीय वनस्पतियों, खनिज पदार्थों तथा पशु-आधारित औषधियों का वर्गीकरण किया तथा व्यक्तिगत प्रकृति (प्रकृति परीक्षण) के आधार पर चिकित्सा की अवधारणा विकसित की, जिसे आज के संदर्भ में व्यक्तिगत चिकित्सा के प्रारंभिक रूप के रूप में देखा जा सकता है।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के विकास के साथ एलोपैथिक प्रणाली ने व्यापक विस्तार प्राप्त किया, किंतु बढ़ती जीवनशैली जनित बीमारियाँ, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, मोटापा, मानसिक तनाव, अवसाद तथा प्रतिरक्षा संबंधी समस्याओं ने पुन: समग्र चिकित्सा पद्धतियों की आवश्यकता को रेखांकित किया है। इसी कारण विश्व स्तर पर आयुर्वेद, योग, ध्यान, प्राकृतिक चिकित्सा तथा औषधीय पौधों पर आधारित उपचार प्रणालियों के प्रति रुचि में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है।

भारत सरकार द्वारा आयुष मंत्रालय की स्थापना, राष्ट्रीय आयुष

मिशन, औषधीय पौधों के संरक्षण, योग के वैश्विक प्रचार तथा पारंपरिक चिकित्सा के वैज्ञानिक प्रमाणीकरण हेतु किए जा रहे प्रयास इस बात के प्रमाण हैं कि भारतीय चिकित्सा ज्ञान केवल सांस्कृतिक विरासत नहीं, बल्कि भविष्य की स्वास्थ्य व्यवस्था का महत्वपूर्ण आधार बन सकता है।

ऐसे समय में भारतीय ज्ञान परम्परा के चिकित्सा संबंधी योगदान का ऐतिहासिक, वैज्ञानिक तथा समकालीन दृष्टि से पुनर्मूल्यांकन आवश्यक है। प्रस्तुत शोध-पत्र इसी आवश्यकता की पूर्ति का प्रयास है।

शोध समस्या – यद्यपि भारतीय चिकित्सा प्रणाली विश्व की प्राचीन एवं समृद्ध परम्पराओं में से एक है, तथापि औपनिवेशिक काल, आधुनिक पाश्चात्य चिकित्सा के तीव्र विस्तार तथा पारंपरिक ज्ञान के सीमित वैज्ञानिक दस्तावेजीकरण के कारण इसके अनेक आयाम अपेक्षित रूप से मुख्यधारा के अकादमिक विमर्श में स्थान नहीं पा सके। वर्तमान समय में वैश्विक स्तर पर पारंपरिक चिकित्सा के प्रति बढ़ती रुचि ने भारतीय चिकित्सा ज्ञान की ऐतिहासिक भूमिका एवं वैज्ञानिक आधार के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता को और अधिक महत्वपूर्ण बना दिया है। अत: यह अध्ययन इस प्रश्न का उत्तार खोजने का प्रयास करता है कि चिकित्सा प्रणाली के विकास में भारतीय ज्ञान परम्परा का वास्तविक योगदान क्या रहा है तथा वर्तमान स्वास्थ्य व्यवस्था में उसकी प्रासंगिकता किस प्रकार स्थापित होती है।

शोध के उद्देश्य :

1. भारतीय ज्ञान परम्परा में चिकित्सा विज्ञान के ऐतिहासिक विकास का अध्ययन करना।
2. वैदिक साहित्य एवं आयुर्वेदिक संहिताओं में निहित चिकित्सा संबंधी ज्ञान का विश्लेषण करना।
3. चरक, सुश्रुत तथा वाग्भट्ट के चिकित्सा विज्ञान में योगदान का मूल्यांकन करना।
4. योग, औषधीय वनस्पतियों एवं जीवनशैली आधारित चिकित्सा की उपयोगिता का अध्ययन करना।
5. आधुनिक स्वास्थ्य व्यवस्था में भारतीय चिकित्सा प्रणाली की प्रासंगिकता का विश्लेषण करना।
6. चिकित्सा क्षेत्र में भारतीय ज्ञान परम्परा के वैश्विक प्रभाव का परीक्षण करना।

शोध प्रश्न :

1. भारतीय ज्ञान परम्परा में चिकित्सा विज्ञान का विकास किन प्रमुख चरणों से होकर हुआ?
2. आयुर्वेद के मूल सिद्धांत आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के संदर्भ में कितने प्रासंगिक हैं?
3. चरक एवं सुश्रुत के योगदान ने चिकित्सा विज्ञान को किस प्रकार प्रभावित किया?
4. वर्तमान स्वास्थ्य चुनौतियों के समाधान में भारतीय चिकित्सा प्रणाली की क्या भूमिका हो सकती है?
5. वैश्विक स्तर पर भारतीय चिकित्सा ज्ञान की स्वीकृति के प्रमुख कारण क्या हैं?

शोध पद्धति – यह शोध गुणात्मक एवं ऐतिहासिक शोध पद्धति पर आधारित है। अध्ययन के लिए मुख्यत: द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक स्रोतों में अथर्ववेद, चरक संहिता, सुश्रुत संहिता, अष्टाङ्गहृदयम् तथा अन्य आयुर्वेदिक ग्रंथों का अध्ययन किया जाएगा। द्वितीयक स्रोतों में शोध-पत्र, पुस्तकें, सरकारी प्रकाशन, आयुष मंत्रालय के दस्तावेज तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा प्रकाशित सामग्री का विश्लेषणकिया जाएगा। उपलब्ध तथ्यों का ऐतिहासिक, तुलनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति से परीक्षण कर निष्कर्ष प्रस्तुत किए जाएंगे।

भारतीय ज्ञान परम्परा की अवधारणा – भारतीय ज्ञान परम्परा से अभिप्राय उस समग्र ज्ञान-संपदा से है, जिसका विकास भारत में सहस्राब्दियों के बौद्धिक, आध्यात्मिक तथा व्यावहारिक अनुभवों के आधार पर हुआ। यह परम्परा केवल दार्शनिक चिंतन तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें गणित, खगोलशास्त्र, धातुकर्म, कृषि, पर्यावरण, शिक्षा, वास्तुकला तथा चिकित्सा विज्ञान जैसे अनेक विषयों का वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित ज्ञान निहित है।

भारतीय ज्ञान परम्परा का प्रमुख आधार लोककल्याण है। यहाँ ज्ञान का उद्देश्य केवल सैद्धान्तिक जानकारी प्राप्त करना नहीं, बल्कि व्यक्ति, समाज और प्रकृति के मध्य संतुलन स्थापित करना है। इसी कारण भारतीय चिकित्सा पद्धति में स्वास्थ्य को केवल रोग की अनुपस्थिति नहीं माना गया, बल्कि शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक संतुलन की अवस्था के रूप में परिभाषित किया गया।

आयुर्वेद में स्वास्थ्य की सर्वाधिक प्रसिद्ध परिभाषा सुश्रुत संहिता में प्राप्त होती है-

'समदोष: समाग्निश्च समधातु मलक्रिय:।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमन: स्वस्थ इत्यभिधीयते।।'

अर्थात् जिस व्यक्ति के दोष (वात, पित्त एवं कफ), अग्नि, धातुएँ तथा मल-क्रियाएँ संतुलित हों तथा जिसकी आत्मा, इन्द्रियाँ एवं मन प्रसन्न हों, वही वास्तव में स्वस्थ है। यह परिभाषा आधुनिक विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) द्वारा प्रतिपादित समग्र स्वास्थ्य की अवधारणा से आश्चर्यजनक साम्यता रखती है।

भारतीय ज्ञान परम्परा में स्वास्थ्य का संबंध धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकृइन चार पुरुषार्थों की प्राप्ति से भी जोड़ा गया है। चरक संहिता में कहा गया है कि स्वस्थ शरीर ही जीवन के समस्त उद्देश्यों की प्राप्ति का आधार है। अत: चिकित्सा केवल रोगोपचार का विज्ञान नहीं, बल्कि जीवन-प्रबंधन का विज्ञान भी है।

भारतीय चिकित्सा दर्शन पाँच महाभूतों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश), त्रिदोष सिद्धांत, सप्तधातु, त्रिमल, अग्नि तथा ओज जैसी अवधारणाओं पर आधारित है। आधुनिक जैव-चिकित्सा इन अवधारणाओं की शब्दावली का उपयोग नहीं करती, किंतु शरीर में संतुलन, चयापचय , प्रतिरक्षा और शरीर की कार्यात्मक प्रणालियों के संतुलन जैसे विचार इनके साथ तुलनात्मक अध्ययन का विषय अवश्य हैं। इसलिए दोनों परम्पराओं के बीच समानता स्थापित करते समय सावधानी अपेक्षित हैय उन्हें पूर्णत: समान मानना उचित नहीं होगा।

वैदिक काल में चिकित्सा विज्ञान का विकास– भारतीय चिकित्सा प्रणाली की जड़ें वैदिक काल तक पहुँचती हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में स्वास्थ्य, रोग, औषधियों तथा उपचार संबंधी अनेक उल्लेख प्राप्त होते हैं। इनमें अथर्ववेद को विशेष रूप से चिकित्सा ज्ञान का प्रमुख स्रोत माना जाता है।

वैदिक समाज में स्वास्थ्य का संबंध केवल शरीर से नहीं, बल्कि प्रकृति, ऋतु, आहार, जल, वायु तथा मानसिक संतुलन से भी था। ऋषियों ने अनुभव किया कि असंतुलित जीवनशैली रोगों का कारण बनती है, जबकि संतुलित

दिनचर्या, शुद्ध भोजन, संयम तथा स्वच्छता स्वास्थ्य के संरक्षण में सहायक हैं।

ऋग्वेद में अश्विनीकुमारों का वर्णन देववैद्यों के रूप में किया गया है। वे रोगियों का उपचार करने, दृष्टिहीनों को दृष्टि प्रदान करने तथा विभिन्न शारीरिक विकारों को दूर करने वाले चिकित्सकों के प्रतीक माने गए हैं। यद्यपि इन वर्णनों का धार्मिक एवं प्रतीकात्मक पक्ष भी है, फिर भी वे उस समय चिकित्सा के महत्व को स्पष्ट करते हैं।

वैदिक साहित्य में वनस्पतियों को दिव्य औषधि माना गया है। औषधियों के संग्रह, संरक्षण तथा उपयोग के संबंध में अनेक मंत्र मिलते हैं, जो यह संकेत देते हैं कि उस समय औषधीय पौधों का पर्याप्त व्यावहारिक ज्ञान उपलब्ध था।

स्वच्छ जल, शुद्ध वायु, सूर्यप्रकाश तथा यज्ञीय वातावरण को स्वास्थ्यवर्धक माना गया। आधुनिक सार्वजनिक स्वास्थ्य के संदर्भ में देखें तो स्वच्छता, पर्यावरणीय संतुलन तथा निवारक उपायों पर दिया गया यह बल अत्यंत महत्वपूर्ण है।

अथर्ववेद और चिकित्सा विज्ञान– अथर्ववेद भारतीय चिकित्सा ज्ञान का सर्वाधिक महत्वपूर्ण वैदिक स्रोत है। इसमें रोगों, औषधीय वनस्पतियों, विषोपचार, ज्वर, त्वचा रोग, कृमि, घाव तथा मानसिक विकारों तक के अनेक उल्लेख प्राप्त होते हैं।

अथर्ववेद में औषधियों को पृथ्वी की संतान कहा गया है तथा उनके औषधीय गुणों का अत्यंत सम्मानपूर्वक वर्णन किया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि औषधीय पौधों का व्यवस्थित ज्ञान उस समय समाज में विद्यमान था। अनेक विद्वानों का मत है कि बाद में विकसित आयुर्वेद ने इन्हीं वैदिक अनुभवों को व्यवस्थित वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया।

अथर्ववेद में रोगों के उपचार के लिए तीन प्रमुख आधार दिखाई देते हैं–

1. औषधीय वनस्पतियों का प्रयोग।
2. आहार एवं जीवनशैली का महत्व।
3. आध्यात्मिक एवं मनोवैज्ञानिक उपाय।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि वैदिक चिकित्सा में मंत्रों का भी प्रयोग मिलता है। आधुनिक इतिहासकारों का मत है कि इन मंत्रों की भूमिका केवल धार्मिक न होकर रोगी के मानसिक साहस, आशा तथा सकारात्मक मनोवृत्ति को सुदृढ़ करने में भी रही होगी। इस दृष्टि से यह चिकित्सा के मनोवैज्ञानिक आयाम का प्रारम्भिक स्वरूप माना जा सकता है।

अथर्ववेद में विषैले जीवों के दंश, ज्वर, अस्थिभंग तथा घावों के उपचार संबंधी संकेत भी प्राप्त होते हैं। यद्यपि इनका आधुनिक वैज्ञानिक परीक्षण अलग विषय है, तथापि यह निर्विवाद है कि वैदिक समाज में चिकित्सा संबंधी व्यवस्थित अनुभव-संपदा उपलब्ध थी।

आयुर्वेद का उद्भव एवं विकास– 'आयुर्वेद' शब्द दो शब्दों–'आयु:' (जीवन) और 'वेद' (ज्ञान)कृसे मिलकर बना है। अर्थात् आयुर्वेद जीवन का विज्ञान है। इसका उद्देश्य केवल रोग का उपचार नहीं, बल्कि स्वस्थ जीवन की रक्षा, रोगों की रोकथाम तथा दीर्घायु की प्राप्ति है।

भारतीय परम्परा के अनुसार आयुर्वेद का ज्ञान ब्रह्मा से दक्ष प्रजापति, अश्विनीकुमार, इन्द्र तथा तत्पश्चात् महर्षि भरद्वाज के माध्यम से मानव समाज तक पहुँचा। यह परम्परा आयुर्वेद की सांस्कृतिक एवं दार्शनिक पृष्ठभूमि को व्यक्त करती है। ऐतिहासिक दृष्टि से आयुर्वेद का क्रमिक विकास वैदिक ज्ञान, लोकानुभव तथा चिकित्सकीय अभ्यास के दीर्घकालीन समन्वय का परिणाम माना जाता है।

आयुर्वेद का सुव्यवस्थित विकास मुख्यत: तीन महान आचार्यों के माध्यम से हुआ–

(क) आचार्य चरक – कायचिकित्सा, निदान, औषध–विज्ञान, रोग–विज्ञान तथा निवारक चिकित्सा के महान प्रवर्तक।

(ख) आचार्य सुश्रुत – शल्य चिकित्सा, शरीर रचना विज्ञान, शल्य उपकरणों तथा शल्य–प्रशिक्षण के अग्रणी आचार्य।

(ग) आचार्य वाग्भट्ट – पूर्ववर्ती आयुर्वेदिक परम्पराओं का समन्वय कर अष्टाङ्ग आयुर्वेद को व्यवस्थित रूप देने वाले विद्वान।

आयुर्वेद ने चिकित्सा को आठ प्रमुख शाखाओं (अष्टाङ्ग आयुर्वेद) में विभाजित किया–

1. कायचिकित्सा (आंतरिक रोग)
2. शल्य तंत्र (शल्य चिकित्सा)
3. शालाक्य तंत्र (नेत्र, नाक, कान एवं गला)
4. कौमारभृत्य (बाल एवं मातृ चिकित्सा)
5. अगद तंत्र (विष चिकित्सा)
6. भूतविद्या (मानसिक एवं व्यवहारिक विकारों से संबंधित पारंपरिक शाखा)
7. रसायन तंत्र (पुनर्यौवन एवं प्रतिरक्षा संवर्धन)
8. वाजीकरण (प्रजनन एवं प्रजनन स्वास्थ्य)

यह वर्गीकरण स्पष्ट करता है कि प्राचीन भारतीय चिकित्सा प्रणाली अत्यंत विकसित, विशिष्ट एवं विशेषज्ञता–आधारित थी। विभिन्न रोगों के लिए पृथक शाखाओं का विकास उस समय की चिकित्सा–चेतना और व्यावहारिक अनुभव का प्रमाण है।

आयुर्वेद की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह रोग के उपचार से अधिक उसके कारणों की पहचान तथा रोकथाम पर बल देता है। दिनचर्या, ऋतुचर्या, संतुलित आहार, नियमित व्यायाम, योग, मानसिक संयम तथा नैतिक जीवन को स्वास्थ्य का आधार माना गया है। आधुनिक युग में जब जीवनशैली–जनित रोग तीव्र गति से बढ़ रहे हैं, तब आयुर्वेद की यह निवारक दृष्टि और भी अधिक प्रासंगिक प्रतीत होती है।

आचार्य चरक का चिकित्सा विज्ञान में योगदान– भारतीय चिकित्सा परम्परा में आचार्य चरक का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनकी रचनाचरक संहिताआयुर्वेद की सबसे प्रामाणिक संहिताओं में गिनी जाती है। विद्वानों के अनुसार इसका मूल आधार अग्निवेश तंत्र था, जिसे आचार्य चरक ने संशोधित एवं विस्तृत रूप प्रदान किया। बाद में दृढबल ने इसके कुछ लुप्त अध्यायों का पुनर्संपादन किया। चरक संहिता मुख्यत:कायचिकित्सा पर केंद्रित है, किंतु इसमें शरीर–विज्ञान, औषध–विज्ञान, रोग–विज्ञान, निदान, आहार–विहार तथा चिकित्सकीय नैतिकता का भी विस्तृत विवेचन मिलता है।

आचार्य चरक का सबसे महत्वपूर्ण योगदान यह है कि उन्होंने रोग के उपचार की अपेक्षारोग की रोकथाम पर अधिक बल दिया। उनका मानना था कि संतुलित आहार, नियमित दिनचर्या, ऋतु के अनुरूप जीवनशैली, मानसिक संयम तथा सदाचार स्वस्थ जीवन के आधार हैं। यह दृष्टिकोण आज के Preventive Mediciene और Lifestyle Mediciene की अवधारणाओं के निकट दिखाई देता है।

चरक ने चिकित्सक के लिए चार आवश्यक तत्व बताए – भिषक

(चिकित्सक), द्रव्य (औषधि), उपस्थाता (परिचारक) तथा रोगी। उनके अनुसार इन चारों का समुचित समन्वय ही सफल चिकित्सा का आधार है। आधुनिक स्वास्थ्य व्यवस्था में भी चिकित्सक, नर्सिंग स्टाफ, औषधि तथा रोगी की सहभागिता को उपचार की सफलता का महत्वपूर्ण आधार माना जाता है।

चरक संहिता में चिकित्सक के नैतिक आचरण पर विशेष बल दिया गया है। चिकित्सक को ज्ञानवान, संयमी, करुणामय तथा गोपनीयता का पालन करने वाला बताया गया है। रोगी के हित को सर्वोपरि मानने की यह अवधारणा आधुनिक चिकित्सा नैतिकता के अनेक सिद्धांतों से साम्य रखती है।

इसके अतिरिक्त चरक ने सैकड़ों औषधीय वनस्पतियों का वर्गीकरण, उनके गुण, उपयोग तथा निर्माण विधियों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया। उन्होंने व्यक्तिगत प्रकृति (प्रकृति) के अनुसार उपचार की अवधारणा विकसित की, जो आज Psrsonalise Mediciene के संदर्भ में पुन: चर्चा का विषय है। हालांकि आधुनिक व्यक्तिगत चिकित्सा मुख्यत: आनुवंशिकी पर आधारित है, इसलिए दोनों अवधारणाओं को समान न मानकर तुलनात्मक दृष्टि से समझना अधिक उपयुक्त है।

आचार्य सुश्रुत और शल्य चिकित्सा का विकास– यदि चरक को आंतरिक चिकित्सा का जनक कहा जाता है, तोआचार्य सुश्रुतको शल्य चिकित्सा का अग्रदूत माना जाता है। उनकी रचनासुश्रुत संहिताविश्व चिकित्सा इतिहास की महत्वपूर्ण शल्य चिकित्सा संबंधी कृतियों में सम्मिलित है।

सुश्रुत संहिता में लगभग300 प्रकार की शल्य प्रक्रियाओं तथा120 से अधिक शल्य उपकरणोंका वर्णन मिलता है। इन उपकरणों में चाकू, सुई, कैंची, चिमटी, हुक, नलिकाएँ तथा अन्य शल्य यंत्र सम्मिलित हैं। आधुनिक उपकरणों से उनकी संरचना भिन्न थी, किंतु यह विवरण उस समय की विकसित शल्य परम्परा का संकेत देता है।

सुश्रुत ने शल्य–प्रशिक्षण पर विशेष बल दिया। वे विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष रोगी पर अभ्यास कराने से पूर्व फल, सब्जियों, चमड़े तथा अन्य उपयुक्त पदार्थों पर अभ्यास कराने की सलाह देते हैं। यह पद्धति आधुनिक चिकित्सा शिक्षा में प्रयुक्त Simulation Based Training की अवधारणा से कुछ सीमा तक तुलनीय मानी जा सकती है।

सुश्रुत संहिता में अस्थिभंग, संधि–भंग, नेत्र रोग, मूत्राशय की पथरी, प्रसूति संबंधी समस्याएँ तथा विभिन्न शल्य प्रक्रियाओं का विस्तृत वर्णन मिलता है। विशेष रूप से नाक के पुनर्निर्माण की तकनीक ने यूरोप सहित विश्व के अनेक चिकित्सकों का ध्यान आकर्षित किया। अठारहवीं शताब्दी में भारतीय शल्य तकनीकों का विवरण यूरोपीय चिकित्सा साहित्य में भी प्रकाशित हुआ, जिसने आधुनिक प्लास्टिक सर्जरी के इतिहास में भारत की भूमिका को रेखांकित किया।

सुश्रुत ने शरीर रचना विज्ञान के अध्ययन के लिए शव विच्छेदन का भी उल्लेख किया है। यह तथ्य दर्शाता है कि शरीर की संरचना को समझने के लिए प्रत्यक्ष अवलोकन को महत्व दिया जाता था। यद्यपि उस समय की पद्धतियाँ आधुनिक एनाटॉमी से भिन्न थीं, फिर भी यह वैज्ञानिक दृष्टिकोण का महत्वपूर्ण संकेत है।

आचार्य वाग्भट्ट एवं अष्टाङ्ग आयुर्वेद का समन्वय– आचार्य वाग्भट्ट ने पूर्ववर्ती आयुर्वेदिक परम्पराओं का समन्वय करते हुएअष्टाङ्ग संग्रहतथाअष्टाङ्ग हृदयम्की रचना की। इन ग्रंथों ने आयुर्वेद को अधिक व्यवस्थित, सरल तथा चिकित्सकीय व्यवहार के अनुकूल स्वरूप प्रदान किया।

वाग्भट्ट ने स्वास्थ्य संरक्षण मेंदिनचर्या, ऋतुचर्या, सद्वृत्ता, आहार–विहार, योग, व्यायाम, निद्रातथा मानसिक संतुलन को अत्यधिक महत्व दिया। उनके अनुसार अधिकांश रोग अनुचित जीवनशैली, असंतुलित भोजन तथा मानसिक तनाव के कारण उत्पन्न होते हैं। आज जब मधुमेह, उच्च रक्तचाप, मोटापा और हृदय रोग जैसी जीवनशैली–जनित समस्याएँ बढ़ रही हैं, तब वाग्भट्ट की शिक्षाएँ विशेष रूप से प्रासंगिक प्रतीत होती हैं।

अष्टाङ्ग हृदयम् की भाषा अपेक्षाकृत सरल होने के कारण यह भारत के विभिन्न भागों में चिकित्सकों के लिए अत्यंत उपयोगी ग्रंथ बना और आज भी आयुर्वेदिक शिक्षा का महत्वपूर्ण आधार है।

त्रिदोष सिद्धांत : आयुर्वेद की मूल अवधारणा– आयुर्वेद का आधारत्रिदोष सिद्धांतहै, जिसके अनुसार शरीर की समस्त जैविक क्रियाएँवात, पित्ता एवं कफनामक तीन कार्यात्मक सिद्धांतों के संतुलन पर आधारित हैं।

- वात – गति, स्नायु क्रिया, श्वसन, संचार तथा तंत्रिका संबंधी कार्यों से संबद्ध माना गया है।
- पित्त – पाचन, चयापचय, ऊष्मा तथा जैव–रासायनिक परिवर्तनों से संबंधित माना गया है।
- कफ – शरीर की संरचना, स्थिरता, स्निग्धता, पोषण तथा संरक्षण से संबद्ध माना गया है।

आयुर्वेद के अनुसार जब इन तीनों दोषों का संतुलन बना रहता है तब व्यक्ति स्वस्थ रहता है, जबकि असंतुलन रोग का कारण बनता है।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में त्रिदोष सिद्धांत को उसी रूप में स्वीकार नहीं किया गया है, क्योंकि इसकी अवधारणाएँ आधुनिक जैव–रसायन और शरीर–क्रिया विज्ञान की शब्दावली से भिन्न हैं। तथापि कुछ शोधकर्ता इसे शरीर के कार्यात्मक संतुलन की पारंपरिक व्याख्या के रूप में देखते हैं। इस कारण त्रिदोष सिद्धांत का अध्ययन तुलनात्मक एवं अंतर्विषयी दृष्टिकोण से किया जाना चाहिए।

औषधीय वनस्पतियाँ एवं द्रव्यगुण विज्ञान– भारतीय ज्ञान परम्परा में वनस्पतियों को प्रकृति का अमूल्य उपहार माना गया है। आयुर्वेद में औषधीय द्रव्यों का व्यवस्थित वर्गीकरणद्रव्यगुण विज्ञानके अंतर्गत किया गया है। प्रत्येक औषधि के रस (स्वाद), गुण, वीर्य (उष्मीय प्रभाव), विपाक तथा विशेष प्रभाव का विश्लेषण किया गया है।

चरक, सुश्रुत और वाग्भट्ट ने अनेक औषधीय पौधों का उल्लेख किया है, जिनमें प्रमुख हैं:

1. अश्वगंधा (*Withaniasomnifera*)
2. गुडूचीधगिलोय (*Tinospora cordifolia*)
3. हरिद्रा (हल्दी) (*Curcuma longa*)
4. आंवला (*Phyllanthus emblica*)
5. तुलसी (*Ocimum tenuiflorum*)
6. नीम (*Azadirachta indica*)
7. ब्राह्मी (*Bacopa monnieri*)
8. शतावरी (*Asparagus racemosus*)

आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधानों में इन पौधों के विभिन्न जैव–सक्रिय घटकों पर व्यापक अध्ययन किए जा रहे हैं। उदाहरणस्वरूप, हल्दी में पाया जाने वालाकर्क्यूमिन, अश्वगंधा केविथेनोलाइड्स तथा गिलोय के विभिन्न

सक्रिय घटकों पर सूजन, प्रतिरक्षा एवं अन्य जैविक प्रभावों के संदर्भ में अनेक अध्ययन प्रकाशित हुए हैं। हालांकि प्रत्येक पारंपरिक दावे की पुष्टि समान स्तर के वैज्ञानिक प्रमाणों से नहीं हुई हैय इसलिए साक्ष्य-आधारित मूल्यांकन आवश्यक है।

भारतीय चिकित्सा परम्परा का यह ज्ञान आज औषधि अनुसंधान, हर्बल चिकित्सा तथा औषधीय पौधों के संरक्षण के क्षेत्र में नई संभावनाएँ प्रस्तुत कर रहा है।

चिकित्सा शिक्षा एवं चिकित्सकीय नैतिकता- भारतीय ज्ञान परम्परा में चिकित्सा शिक्षा केवल तकनीकी प्रशिक्षण नहीं थी, बल्कि चरित्र निर्माण, अनुशासन एवं सामाजिक उत्तारदायित्व का भी माध्यम थी। गुरुकुल परम्परा में विद्यार्थियों को औषधीय पौधों की पहचान, रोगी की परीक्षा, औषधि निर्माण, शल्य कौशल तथा नैतिक आचरण का समन्वित प्रशिक्षण दिया जाता था।

चरक संहिता में चिकित्सक के लिए सत्यनिष्ठा, विनम्रता, गोपनीयता, करुणा तथा निरंतर अध्ययन को अनिवार्य बताया गया है। रोगी की सामाजिक स्थिति, आर्थिक अवस्था या व्यक्तिगत पहचान के आधार पर भेदभाव न करने की भावना भी भारतीय चिकित्सा परम्परा के मानवीय पक्ष को उजागर करती है।

आज जब चिकित्सा शिक्षा में Professional Ethics, Patient Rights, Informed Consent तथाCompassionate Care पर बल दिया जा रहा है, तब भारतीय ज्ञान परम्परा के ये नैतिक आदर्श पुन: प्रासंगिक प्रतीत होते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि भारतीय चिकित्सा प्रणाली ने केवल उपचार पद्धति ही नहीं, बल्कि चिकित्सकीय आचरण की एक उच्च नैतिक परम्परा भी विकसित की।

योग, प्राणायाम एवं मानसिक स्वास्थ्य रू भारतीय ज्ञान परम्परा का समग्र दृष्टिकोण- भारतीय ज्ञान परम्परा में स्वास्थ्य का तात्पर्य केवल शारीरिक रोगों की अनुपस्थिति नहीं, बल्कि शरीर, मन, इन्द्रियों तथा आत्मा के संतुलित विकास से है। इसी कारण योग और आयुर्वेद को परस्पर पूरक चिकित्सा पद्धतियाँ माना गया है। महर्षि पतञ्जलि द्वारा प्रतिपादितअष्टाङ्ग योगकृयम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान तथा समाधिकृमानव व्यक्तित्व के समग्र विकास का वैज्ञानिक अनुशासन प्रस्तुत करता है।

आयुर्वेद में मानसिक स्वास्थ्य को शारीरिक स्वास्थ्य के समान ही महत्त्व दिया गया है। चरक संहिता में क्रोध, शोक, भय, लोभ, ईर्ष्या तथा असंयमित जीवनशैली को रोगोत्पत्ति के प्रमुख कारणों में माना गया है। वहींसत्तवावजय चिकित्साके माध्यम से मानसिक संतुलन, आत्मसंयम, सदाचार, सकारात्मक चिंतन तथा ध्यान को मानसिक स्वास्थ्य की आधारशिला बताया गया है।

प्राणायाम के माध्यम से श्वसन तंत्र को संतुलित करने तथा ध्यान के माध्यम से मन की चंचलता को नियंत्रित करने की भारतीय अवधारणा आज वैश्विक स्तर पर भी व्यापक चर्चा का विषय है। अनेक आधुनिक शोधों में योग एवं ध्यान को तनाव प्रबंधन, चिंता के कुछ रूपों, नींद की गुणवत्ता तथा जीवन-गुणवत्ता में सुधार हेतु सहायक पाया गया है। यद्यपि गंभीर रोगों के उपचार में इनका उपयोग प्रशिक्षित चिकित्सकीय परामर्श के साथ पूरक चिकित्सा के रूप में किया जाना अधिक उपयुक्त माना जाता है।

अत: स्पष्ट है कि भारतीय ज्ञान परम्परा में योग केवल व्यायाम नहीं, बल्कि निवारक चिकित्सा, मानसिक स्वास्थ्य संरक्षण तथा स्वस्थ जीवन-पद्धति का अभिन्न अंग है।

भारतीय चिकित्सा प्रणाली का वैश्विक प्रभाव- भारतीय चिकित्सा परम्परा का प्रभाव प्राचीन काल से ही भारत की सीमाओं से बाहर तक विस्तृत रहा है। बौद्ध भिक्षुओं, समुद्री व्यापार तथा सांस्कृतिक आदान-प्रदान के माध्यम से आयुर्वेद का ज्ञान श्रीलंका, नेपाल, तिब्बत, चीन तथा दक्षिण-पूर्व एशिया के अनेक देशों तक पहुँचा। मध्यकाल में इसके अनेक ग्रंथों का अरबी एवं फारसी भाषाओं में अनुवाद हुआ, जिससे पश्चिम एशिया की चिकित्सा परम्पराएँ भी प्रभावित हुईं।

आचार्य सुश्रुत द्वारा वर्णित शल्य चिकित्सा, विशेष रूप से नासिका पुनर्निर्माण, ने अठारहवीं शताब्दी में यूरोपीय चिकित्सकों का विशेष ध्यान आकर्षित किया। इसके पश्चात भारतीय शल्य चिकित्सा का उल्लेख आधुनिक चिकित्सा इतिहास के महत्वपूर्ण अध्यायों में किया जाने लगा।

इक्कीसवीं शताब्दी में योग, आयुर्वेद, प्राकृतिक चिकित्सा तथा औषधीय पौधों के प्रति वैश्विक रुचि में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। भारत सरकार द्वारा आयुष मंत्रालय की स्थापना, अंतरराष्ट्रीय योग दिवस का आयोजन तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा पारंपरिक चिकित्सा के लिए पृथक रणनीति तैयार किया जाना इस दिशा में महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हैं।

भारतीय चिकित्सा प्रणाली का वैश्विक महत्व केवल उसकी प्राचीनता में नहीं, बल्कि उसके समग्र स्वास्थ्य दृष्टिकोण, निवारक चिकित्सा, प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग तथा जीवनशैली आधारित स्वास्थ्य संरक्षण की अवधारणाओं में निहित है।

आधुनिक स्वास्थ्य व्यवस्था में भारतीय ज्ञान परम्परा की प्रासंगिकता- वर्तमान समय में मानव समाज जीवनशैली-जनित रोगों, मानसिक तनाव, पर्यावरण प्रदूषण, प्रतिरक्षा संबंधी चुनौतियों तथा वृद्धावस्था संबंधी समस्याओं का सामना कर रहा है। इन परिस्थितियों में भारतीय चिकित्सा प्रणाली के अनेक सिद्धांत विशेष रूप से प्रासंगिक प्रतीत होते हैं।

आयुर्वेद संतुलित आहार, नियमित दिनचर्या, ऋतुचर्या, निद्रा, व्यायाम तथा मानसिक संतुलन को स्वास्थ्य संरक्षण का आधार मानता है। आधुनिक सार्वजनिक स्वास्थ्य भी स्वास्थ्य संवर्धन, रोग-निवारण तथा स्वस्थ जीवनशैली को प्राथमिकता देता है। इस दृष्टि से दोनों प्रणालियों के बीच संवाद एवं सहयोग की पर्याप्त संभावनाएँ हैं।

भारत में आयुष प्रणाली को स्वास्थ्य सेवाओं का पूरक अंग बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं। औषधीय पौधों का वैज्ञानिक अध्ययन, आयुर्वेदिक औषधियों का मानकीकरण, समन्वित चिकित्सा, डिजिटल स्वास्थ्य अभिलेख तथा साक्ष्य-आधारित अनुसंधान इस दिशा में महत्त्वपूर्ण पहल हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भी भारतीय ज्ञान प्रणाली को उच्च शिक्षा एवं अनुसंधान का अभिन्न अंग बनाने पर बल दिया है। इससे चिकित्सा शिक्षा, औषधीय अनुसंधान तथा पारंपरिक ज्ञान के वैज्ञानिक पुनर्पाठ को नई दिशा मिली है।

चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ- यद्यपि भारतीय चिकित्सा प्रणाली विश्व की प्राचीनतम एवं समृद्ध चिकित्सा परम्पराओं में से एक है, तथापि इसके समक्ष अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं।

प्रथम, प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रंथों का समालोचनात्मक संपादन, प्रमाणिक अनुवाद तथा वैज्ञानिक व्याख्या अभी भी व्यापक स्तर पर अपेक्षित है।

द्वितीय, औषधीय पौधों की गुणवत्ता, शुद्धता, मानकीकरण तथा

गुणवत्ता नियंत्रण को और अधिक सुदृढ़ करने की आवश्यकता है।

तृतीय, पारंपरिक औषधियों एवं उपचार पद्धतियों के संबंध में उच्च गुणवत्ता वाले नैदानिक परीक्षण तथा बहुकेंद्रीय अनुसंधान अपेक्षाकृत सीमित हैं। इनके विस्तार से साक्ष्य-आधारित चिकित्सा को बल मिलेगा।

चतुर्थ, औषधीय जैव विविधता का संरक्षण तथा पारंपरिक ज्ञान से संबंधित बौद्धिक संपदा अधिकारों की सुरक्षा भी समय की आवश्यकता है।

इन चुनौतियों के साथ-साथ भारतीय चिकित्सा प्रणाली के समक्ष अनेक संभावनाएँ भी विद्यमान हैं। भारत विश्व की सर्वाधिक समृद्ध औषधीय जैव विविधता, प्राचीन चिकित्सा ग्रंथों तथा प्रशिक्षित आयुर्वेदाचार्यों का धनी देश है। यदि पारंपरिक ज्ञान को आधुनिक विज्ञान, जैव-प्रौद्योगिकी, औषधि अनुसंधान तथा कृत्रिम बुद्धिमत्ता जैसी नई तकनीकों के साथ समन्वित किया जाए तो वैश्विक स्वास्थ्य क्षेत्र में भारत की भूमिका और अधिक सशक्त हो सकती है।

निष्कर्ष- भारतीय ज्ञान परम्परा ने चिकित्सा विज्ञान के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण एवं बहुआयामी योगदान दिया है। वैदिक साहित्य में स्वास्थ्य संबंधी प्रारंभिक अवधारणाओं से लेकर चरक, सुश्रुत एवं वाग्भट्ट द्वारा प्रतिपादित आयुर्वेदिक सिद्धांतों तक भारतीय चिकित्सा प्रणाली का विकास निरंतर वैज्ञानिक अनुभव, चिकित्सकीय अभ्यास तथा मानवीय संवेदनाओं के आधार पर हुआ।

आचार्य चरक ने रोग-निवारण, निदान, आहार-विहार तथा चिकित्सकीय नैतिकता को व्यवस्थित रूप प्रदान किया। आचार्य सुश्रुत ने शल्य चिकित्सा, शरीर रचना विज्ञान तथा शल्य-प्रशिक्षण के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया। आचार्य वाग्भट्ट ने आयुर्वेद के विविध अंगों का समन्वय करते हुए उसे व्यवहारिक एवं सर्वसुलभ स्वरूप प्रदान किया। योग, प्राणायाम, ध्यान, औषधीय वनस्पतियाँ तथा प्रकृति के साथ संतुलित जीवन भारतीय चिकित्सा दर्शन की ऐसी विशेषताएँ हैं जो आज भी मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत प्रासंगिक हैं।

यह भी स्पष्ट है कि भारतीय चिकित्सा प्रणाली का उद्देश्य केवल रोग का उपचार करना नहीं, बल्कि स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा, रोगों की रोकथाम तथा संतुलित जीवनशैली का विकास करना है। यही कारण है कि आधुनिक समय में समग्र स्वास्थ्य, निवारक चिकित्सा तथा समन्वित चिकित्सा की अवधारणाओं के साथ भारतीय ज्ञान परम्परा का महत्व पुन: बढ़ रहा है।

यद्यपि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान ने रोग-निदान, आपातकालीन उपचार तथा शल्य चिकित्सा में अभूतपूर्व प्रगति की है, तथापि दीर्घकालिक स्वास्थ्य संरक्षण, जीवनशैली प्रबंधन, मानसिक संतुलन तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में भारतीय चिकित्सा परम्परा के सिद्धांत अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि आयुर्वेद एवं भारतीय चिकित्सा ज्ञान का मूल्यांकन आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान, साक्ष्य-आधारित परीक्षण तथा अंतरविषयी अध्ययन के माध्यम से किया जाए।

अंतत: कहा जा सकता है कि भारतीय ज्ञान परम्परा केवल भारत की सांस्कृतिक धरोहर नहीं, बल्कि मानवता को स्वस्थ, संतुलित एवं सतत जीवन-पद्धति प्रदान करने वाली एक महत्वपूर्ण ज्ञान-संपदा है। यदि इसके सिद्धांतों का वैज्ञानिक पुनर्पाठ, मानकीकरण तथा वैश्विक स्तर पर प्रभावी प्रस्तुतीकरण किया जाए, तो यह भविष्य की स्वास्थ्य व्यवस्था के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

(क) मूल आयुर्वेदिक एवं वैदिक ग्रंथ

1. अथर्ववेद। गीता प्रेस, गोरखपुर।
2. ऋग्वेद। गीता प्रेस, गोरखपुर।
3. चरक।चरक संहिता। हिन्दी व्याख्यासहित। चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।
4. सुश्रुत।सुश्रुत संहिता। हिन्दी व्याख्यासहित। चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।
5. वाग्भट्ट।अष्टाङ्गहृदयम। हिन्दी अनुवाद। चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।
6. पतञ्जलि।योगसूत्र। गीता प्रेस, गोरखपुर।

(ख) हिन्दी ग्रंथ

7. शर्मा, प्रियव्रत।आयुर्वेद का इतिहास। चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।
8. शर्मा, प्रियव्रत।द्रव्यगुण विज्ञान (भाग-1 एवं 2)। चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।
9. त्रिपाठी, ब्रह्मानन्द।चरक संहिता (हिन्दी टीका)। चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।
10. त्रिपाठी, ब्रह्मानन्द।अष्टाङ्गहृदयम् (निर्मला हिन्दी टीका)। चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, वाराणसी।
11. शास्त्री, अम्बिकादत्त।सुश्रुत संहिता (आयुर्वेद तत्त्व सन्दीपिका)। चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।
12. उपाध्याय, यदुनन्दन।माधव निदान। चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।
13. पाण्डेय, गोविन्दचन्द्र।भारतीय संस्कृति। लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज।
14. पाण्डेय, राजबली।भारतीय संस्कृति। चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
15. उपाध्याय, बलदेव।संस्कृत साहित्य का इतिहास। शारदा निकेतन, वाराणसी।

(ग) सरकारी एवं संस्थागत प्रकाशन

16. भारत सरकार।राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020।
17. आयुष मंत्रालय।वार्षिक प्रतिवेदन (नवीनतम संस्करण)।
18. केंद्रीय आयुर्वेदिक विज्ञान अनुसंधान परिषद (CCRAS)।शोध प्रकाशन।
19. भारतीय चिकित्सा पद्धति राष्ट्रीय आयोग (NCIMS)।आधिकारिक प्रकाशन।
20. विश्व स्वास्थ्य संगठन। *Traditional Medicine Strategy 2025–2034*

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Uses and Benefits of E-Commerce

Dr. Shail Prabha Koshta*

***Professor & HOD (Economics) PM College Of Excellence Govt. Mahakoshal Arts and Commerce (Autonomus) College, Jabalpur (M.P.) INDIA**

Keywords : E-Commerce, Retail Management, Retailing, Customers , Shopping.

Introduction: E-Commerce and Retail Management play an important role in our daily life by making buying and selling easy, fast, and convenient. **E-Commerce** allows people to purchase goods and services online using the internet, such as shopping on Amazon or paying bills online. **Retail Management** focuses on selling products directly to customers through shops, malls, supermarkets, and online stores.

E-Commerce and Retail Management are two closely connected areas of modern business. With the growth of the internet, smartphones, and digital payment systems, the traditional retail system has transformed into a technology-driven, customer-centric model. Today, businesses use both **offline (physical retail)** and **online (e-commerce)** platforms to reach customers efficiently and competitively.In daily life, e-commerce saves time, offers a wide variety of products, provides easy price comparison, and supports digital payments. Retail management ensures product availability, good customer service, proper store management, and attractive offers. Both systems help consumers get better quality products at reasonable prices. With the growth of digital technology and online payments, e-commerce and retail management have become essential for consumers and businesses. They improve convenience, efficiency, and customer satisfaction, making everyday life simpler and more comfortable.

E-Commerce (Electronic Commerce): E-Commerce refers to the buying and selling of goods and services through electronic networks, mainly the internet. It enables businesses and consumers to conduct transactions online without physical interaction. E-commerce includes online marketing, electronic payments, order processing, and customer support. It provides 24×7 availability, global reach, cost efficiency, and convenience. However, it also faces challenges such as security risks, lack of physical inspection, and dependence on technology. Overall, e-commerce has transformed traditional business by making trade faster, easier, and more customer-oriented.

Features of E-Commerce

1. 24×7 availability
2. Global market access
3. Paperless transactions
4. Fast and convenient buying process
5. Use of digital payments

Types of E-Commerce:

1. B2C (Business to Consumer) B2C is a type of e-commerce in which business organizations sell goods or services directly to final consumers through online platforms.

- Key Features:

Direct interaction between business and consumer
Online product display and digital marketing
Electronic payment systems
Home delivery of products

- Examples: Amazon, Flipkart, Myntra, Nykaa
- Importance: B2C e-commerce is the most common form of online trade and focuses on customer convenience, competitive pricing, and wide product variety.2. B2B (Business to Business)

2. B2B is a type of e-commerce in which transactions take place between two or more business organizations. In this model, goods and services are sold by one business to another business rather than to the final consumer.

- Key Features:

Bulk transactions
Long-term business relationships
Negotiated pricing
Use of online portals and electronic data exchange

- Examples: Alibaba, IndiaMART, TradeIndia
- Importance: B2B e-commerce helps businesses reduce procurement costs, improve efficiency, and maintain smooth supply chain operations.

3. C2C (Consumer to Consumer)

C2C is a type of e-commerce in which individual consumers sell goods or services directly to other consumers through an online platform.

- Key Features:

Transactions between individuals

Platform acts as an intermediary
Mostly second-hand or used goods
Online payment and communication

- Examples: OLX, eBay, Quikr
- Importance: C2C e-commerce allows consumers to earn from unused goods and provides buyers with products at lower prices

4. C2B (Consumer to Business)

C2B is a type of e-commerce in which individual consumers offer products, services, or value to business organizations in exchange for payment.

- Key Features: Consumers act as service providers

Businesses choose from multiple consumers offers
Flexible pricing and contracts
Common in the digital economy

- Examples: Freelancing platforms (Upwork, Fiverr), influencer marketing, stock photo websites
- Importance: C2B e-commerce empowers individuals, reduces business costs, and supports innovation by allowing companies to access skills and services on demand.

Advantages of E-Commerce:

1. **24×7 Availability -** Online stores remain open all the time, allowing customers to shop anytime and anywhere.
2. **Global Reach -** Businesses can reach customers across national and international markets easily.
3. **Lower Operating Cost -** Reduced expenses on rent, staff, and physical infrastructure.
4. **Convenience and Time Saving -** Customers can purchase products from home without visiting physical stores.
5. **Wide Choice and Easy Comparison -** A large variety of products is available with easy price and quality comparison.
6. **Fast Transactions -** Electronic payments and automated processes make buying and selling quicker.
7. **Better Customer Information -** Businesses can analyze customer data to improve products and services.
8. **Paperless Transactions -** Orders, bills, and payments are handled digitally, reducing paperwork.
9. **Improved Customer Satisfaction Easy** ordering, delivery, return, and refund systems enhance customer experience.

Limitations of E-Commerce:

1. **Security and Privacy Risks-** Online transactions are vulnerable to hacking, fraud, and data theft.
2. **Lack of Physical Inspection -** Customers cannot touch, feel, or try products before purchasing.
3. **Dependence on Internet and Technology -** E-commerce requires reliable internet access and technical knowledge.
4. **Delivery and Logistics Issues-** Delays, damages, or wrong deliveries may occur.
5. **Trust Issues-** Customers may face fake websites, poor-quality products, or misleading information.
6. **Limited Personal Interaction-** Absence of face-to-face communication reduces personalized service.
7. **Technical Problems-** Website crashes, payment failures, and system errors can interrupt transactions.
8. **Legal and Regulatory Issues-** Different laws, taxes, and regulations across regions create complications.

References:-

1. Google Research Scholar
2. Daily News

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Farmers' Rights Protection in India: A Legal and Socio-Economic Analysis

Dr. Lok Narayan Mishra*

***Assistant Professor (Law) Govt. Law College Rewa (M.P.) INDIA**

Abstract: Agriculture remains the backbone of India's rural economy and food security system. Indian farmers have historically preserved, improved, exchanged and cultivated seeds and plant varieties through traditional knowledge and community-based practices. However, the growth of commercial agriculture, intellectual property protection over plant varieties, market concentration in the seed sector, climate vulnerability, and agrarian distress have raised important legal questions concerning the protection of farmers' rights. India responded to these concerns by adopting a sui generis legal framework through the Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Act, 2001 (PPV&FR Act). Unlike conventional plant variety protection laws, the Indian framework attempts to balance breeders' rights with farmers' rights by recognising the contribution of cultivators in conserving and developing plant genetic resources. This paper examines the concept, evolution and legal protection of farmers' rights in India with special reference to the PPV&FR Act, 2001 and its relationship with constitutional guarantees, international obligations, biodiversity law and seed governance. The paper argues that while India has adopted one of the most farmer-sensitive statutory models in the world, implementation gaps, lack of awareness, procedural barriers, weak benefit-sharing mechanisms, and the growing pressure of commercialization continue to undermine the effective realization of farmers' rights. The paper concludes with suggestions for strengthening legal protection through institutional reforms, better registration support for farmers' varieties, stronger compensation and benefit-sharing systems, legal literacy, and improved coordination between agricultural, biodiversity and intellectual property regimes.

Keywords: Farmers' rights, PPV&FR Act, plant variety protection, seed sovereignty, benefit sharing, agricultural law, biodiversity, India.

Introduction - India is an agrarian society where a significant section of the population continues to depend directly or indirectly upon agriculture for livelihood. Farmers do not merely cultivate crops; they preserve biodiversity, select seeds, adapt crop varieties to local ecological conditions and sustain food systems through inter-generational knowledge. The legal protection of farmers' rights therefore extends beyond economic entitlement and enters the broader domain of social justice, food security, biodiversity conservation and rural development.

For centuries, Indian farmers followed the practice of saving, re-sowing, exchanging and selling seeds produced on their farms. Traditional seed systems operated on the basis of community ownership, local adaptation and customary sharing. However, the emergence of modern intellectual property regimes, the commercialization of seeds, technological interventions in agriculture and the requirements of international trade law created tension between private breeders' rights and community-based farming practices. In this context, the question arose whether farmers should merely be treated as consumers of seed technology or whether the law should recognize them as innovators, conservers and custodians of plant genetic resources.

India's response was distinctive. Instead of adopting a strict plant breeders' rights model, Parliament enacted the Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Act, 2001, which expressly recognizes farmers' rights within a plant variety protection framework. The law was intended to comply with Article 27(3)(b) of the TRIPS Agreement while simultaneously safeguarding the traditional practices and interests of Indian farmers. The Act recognizes farmers as cultivators, conservers and breeders, and grants them certain rights such as the right to save, use, sow, resow, exchange and sell farm produce including seed of a protected variety, subject to limited restrictions on branded seed. It also provides for registration of farmers' varieties, benefit sharing, compensation for non-performance of registered varieties, and recognition of communities that conserve genetic resources.

The significance of farmers' rights protection in India must also be viewed against contemporary challenges.

Indian farmers face increasing debt, crop failures, climate uncertainty, market fluctuations, land fragmentation and dependence on external inputs. At the same time, seed markets are becoming more technology-driven and corporate-oriented. In such circumstances, legal protection of farmers' rights is not only a matter of intellectual property policy but also one of livelihood security, distributive justice and sustainable agriculture.

This paper analyses the legal framework relating to farmers' rights protection in India, with particular focus on the PPV&FR Act, 2001. It evaluates the conceptual basis of farmers' rights, traces their evolution in international and domestic law, examines the rights and remedies available under Indian legislation, and critically assesses implementation challenges. The paper further proposes reforms to make the legal regime more accessible and effective for ordinary farmers, especially small and marginal cultivators.

Research Objectives

The present paper seeks to achieve the following objectives:

1. To examine the concept and meaning of farmers' rights in the Indian legal context.
2. To analyse the international and domestic legal framework governing farmers' rights protection in India.
3. To study the salient features of the Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Act, 2001.
4. To evaluate the effectiveness of the present legal framework in protecting farmers against exploitation, exclusion and inequitable appropriation of plant genetic resources.
5. To identify the major implementation challenges in the enforcement of farmers' rights.
6. To suggest legal and policy reforms for strengthening farmers' rights protection in India.

Research Questions:

1. What is the legal meaning and scope of farmers' rights in India?
2. How does the PPV&FR Act, 2001 balance breeders' rights and farmers' rights?
3. To what extent does the current legal framework effectively protect the interests of small and marginal farmers?
4. What are the principal weaknesses in implementation of farmers' rights protections in India?
5. What reforms are necessary to make the legal regime more farmer-centric and accessible?

Research Methodology: This paper adopts a doctrinal legal research methodology. It is based on the analysis of primary and secondary legal materials. Primary sources include the Constitution of India, the Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Act, 2001, the Biological Diversity Act, 2002, the Seeds Act, 1966, the Patents Act, 1970, and relevant rules, notifications and institutional documents of the PPV&FR Authority. Secondary sources include books, journal articles, research papers, law review articles, government reports and policy materials. The paper also relies on international instruments such as the TRIPS Agreement, the Convention on Biological Diversity (CBD) and the International Treaty on Plant Genetic Resources for Food and Agriculture (ITPGRFA) for contextual understanding.

Concept and Meaning of Farmers' Rights: The expression "farmers' rights" does not refer to a single narrow entitlement. It is a composite legal and moral concept grounded in the recognition that farmers have historically contributed to the conservation, improvement and availability of plant genetic resources. Farmers' rights may broadly include:

1. The right to save, use, exchange and sell farm-saved seed;
2. The right to protect traditional knowledge relating to seeds and plant varieties;
3. The right to participate in benefit-sharing when commercial breeders use genetic resources conserved or improved by farmers and communities;
4. The right to register and protect farmers' varieties;
5. The right to compensation where a registered variety fails to perform as claimed;
6. The right to participate in decision-making regarding conservation and sustainable use of plant genetic resources; and
7. The right to recognition and reward for preserving agro-biodiversity.

In India, farmers' rights are closely linked to the idea of seed sovereignty and the recognition that agriculture is not merely a commercial activity but a socio-cultural and ecological process. The Indian model is notable because it does not view farmers only as beneficiaries of state welfare; it also recognizes them as knowledge holders, breeders and innovators.

Historical Evolution of Farmers' Rights in India

Traditional Seed Practices and Community Knowledge: Before the emergence of formal intellectual property law in agriculture, farmers in India followed traditional practices of seed preservation and exchange. Indigenous communities and cultivators adapted seeds to local climatic, soil and ecological conditions. These practices helped generate diverse landraces and locally suitable crop varieties. However, because such knowledge and innovation were collective and customary in nature, they were rarely recognized within formal property law systems.

International Trade Pressures and TRIPS: The turning point came with the establishment of the World Trade Organization and the adoption of the TRIPS Agreement in 1994. Article 27(3)(b) of TRIPS requires member states to provide protection to plant varieties either by patents, an effective sui generis system, or a combination of both. India did not favour a patent-based system for plant varieties because of concerns that such a regime would undermine

the traditional practices of Indian farmers and concentrate control in the hands of commercial breeders.

India's Sui Generis Response: India therefore enacted the Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Act, 2001 as a sui generis system. This law was designed not only to protect plant breeders but also to acknowledge farmers' contributions and preserve their traditional seed-related freedoms. The Act represents a middle path between intellectual property protection and agrarian justice.

International Legal Framework Relevant to Farmers' Rights

TRIPS Agreement: The TRIPS Agreement does not explicitly define farmers' rights. Its main concern is intellectual property protection, including protection for plant varieties under Article 27(3)(b). However, the flexibility granted to member states to adopt a sui generis system enabled India to enact a law tailored to its agricultural realities.

Convention on Biological Diversity, 1992: The Convention on Biological Diversity (CBD) recognizes the sovereign rights of states over biological resources and emphasizes conservation, sustainable use and fair and equitable benefit sharing. The CBD influenced India's understanding that local communities and farmers who conserve biodiversity should not be excluded from benefits arising from its commercial use.

International Treaty on Plant Genetic Resources for Food and Agriculture (ITPGRFA): The ITPGRFA is particularly important because it expressly refers to farmers' rights. Article 9 recognizes the enormous contribution of local and indigenous communities and farmers to the conservation and development of plant genetic resources. It encourages states to protect traditional knowledge, ensure equitable benefit sharing and permit participation in decision-making. Although the Treaty leaves implementation to national governments, it provided important normative support for India's legal approach.

Constitutional and Legal Basis of Farmers' Rights in India: Farmers' rights protection in India is supported not only by the PPV&FR Act but also by broader constitutional principles.

Article 21 and Livelihood: The right to life under Article 21 of the Constitution of India has been interpreted by the Supreme Court to include the right to livelihood, dignity and a life with basic security. Since agriculture is the principal source of livelihood for millions of Indians, laws that affect seed access, crop performance and agrarian survival implicate constitutional concerns.

Directive Principles of State Policy: Several Directive Principles support a farmer-protective legal order:

1. Article 38: promotion of social order based on justice;
2. Article 39(b): distribution of material resources to subserve the common good;
3. Article 39(c): prevention of concentration of wealth;
4. Article 43: securing a decent standard of life for workers including those in rural sectors;
5. Article 48A: protection and improvement of the environment.

These provisions reinforce the idea that agricultural resources and biodiversity must be governed in a manner consistent with social justice and ecological balance.

Patents Act, 1970: The Patents Act, 1970 excludes plants and animals in whole or any part thereof other than microorganisms, as well as essentially biological processes for production or propagation of plants and animals, from patentability. This exclusion helped preserve legislative space for a separate, more farmer-sensitive plant variety regime.

The Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Act, 2001

Object and Purpose: The PPV&FR Act was enacted to establish an effective system for protection of plant varieties, protect the rights of farmers and plant breeders, and encourage the development of new varieties of plants. It also seeks to ensure the availability of high-quality seeds and planting material to farmers.

The Act is significant because it attempts to balance multiple interests:

1. breeders' incentives for innovation,
2. farmers' traditional practices and livelihood concerns,
3. conservation of plant genetic resources, and
4. public interest in food security and seed availability.

Institutional Framework: The Act establishes the Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Authority to administer the legislation. The Authority maintains the National Register of Plant Varieties, processes applications, recognizes farmers' contributions, manages benefit-sharing and oversees the National Gene Fund.

Registrable Varieties: The Act allows registration of:

1. New varieties
2. Extant varieties
3. Farmers' varieties
4. Essentially derived varieties

A variety must generally satisfy the criteria of novelty, distinctiveness, uniformity and stability (DUS), subject to the specific category and statutory requirements.

Farmers' Rights Under the PPV&FR Act

The PPV&FR Act is the central legal source of farmers' rights protection in India. Its most important protections are discussed below.

Right to Save, Use, Sow, Re-sow, Exchange and Sell Seed: One of the most celebrated features of the Act is that it permits farmers to save, use, sow, resow, exchange, share or sell farm produce including seed of a protected variety in the same manner as before the enactment of the law, subject to the condition that the farmer cannot sell branded seed of a protected variety. This provision is crucial because it preserves traditional farming practices and

prevents the complete monopolization of seed by commercial rights holders.

Right to Register Farmers' Varieties: A farmer who has bred or developed a variety can seek registration of that variety. The Act treats a farmer as a breeder in appropriate cases. This recognition is significant because it acknowledges that innovation in agriculture does not originate only from formal laboratories or corporate breeding programs. Farmers can also be creators of valuable plant varieties.

Right to Recognition and Reward for Conservation: The law recognizes the role of farmers and rural communities in conserving plant genetic resources. Through the National Gene Fund and awards such as the Plant Genome Saviour Awards, communities and farmers who have conserved and improved genetic resources may receive recognition and monetary reward.

Right to Benefit Sharing: Where a registered variety has been developed using genetic material or traditional resources conserved by farmers or communities, claims for benefit sharing may be made. The purpose is to ensure that commercial gains derived from community-conserved resources do not accrue exclusively to breeders or corporations while farmers remain uncompensated.

Right to Compensation for Non-Performance: If a farmer purchases seed of a registered variety on the basis of a claim regarding its expected performance, and the variety fails to perform under the given conditions as disclosed to the farmer, the farmer can claim compensation. This provision is an important consumer-protection mechanism in agricultural law because it addresses the vulnerability of farmers to misleading claims and poor-quality seeds.

Exemption from Fees and Protection from Innocent Infringement: Farmers are granted procedural concessions under the Act, including exemptions from payment of fees in certain proceedings. The Act also provides protection where a farmer innocently infringes a breeder's right due to lack of awareness. This reflects legislative recognition that small cultivators should not be burdened with highly technical compliance expectations.

Relationship with Other Laws

Biological Diversity Act, 2002: The Biological Diversity Act, 2002 complements the protection of farmers and local communities by regulating access to biological resources and associated knowledge. It seeks equitable sharing of benefits arising from the use of biological resources. Since farmers often conserve local varieties and biodiversity, coordination between the PPV&FR regime and biodiversity law is essential.

Seeds Act, 1966 and Seed Regulation: The quality, certification and marketing of seeds are also governed by seed laws and regulatory mechanisms. Farmers' rights can be weakened if seed regulation focuses only on commercial certification without accommodating farmers' varieties and local seed systems. Therefore, a harmonious approach is necessary between plant variety protection and seed governance.

Patents and Biotechnology: Although plants and essentially biological processes are excluded from patentability under Indian patent law, biotechnology and related innovation may still create pressure toward stronger proprietary control over agricultural inputs. A farmer-sensitive interpretation of the law remains essential to prevent erosion of seed sovereignty.

Significance of Farmers' Rights Protection in India: Farmers' rights protection has multiple dimensions in the Indian context:

Protection of Livelihood and Food Security: Seed access is directly linked to crop production and survival. If farmers lose the ability to save and exchange seed, they may become excessively dependent on commercial markets, increasing their costs and vulnerability.

Conservation of Agro-Biodiversity: Traditional farming communities conserve landraces and local crop diversity that are essential for ecological resilience and future breeding. Legal recognition encourages continued conservation.

Recognition of Traditional Knowledge: Farmers' knowledge has historically been appropriated without acknowledgment. A legal framework that recognizes farmers as innovators corrects this imbalance.

Balancing Intellectual Property with Social Justice: The Indian model attempts to avoid a one-sided intellectual property regime. It recognizes that innovation incentives are important, but not at the cost of farmers' survival and traditional freedoms.

Climate Resilience and Sustainable Agriculture: Local seed diversity is vital in adapting to changing rainfall patterns, drought, pest resistance and ecological stress. Protecting farmers' rights supports sustainable agriculture and climate adaptation.

Critical Appraisal of the Indian Legal Framework: Despite the progressive character of the PPV&FR Act, several concerns remain.

1. **Low Awareness Among Farmers:** A major challenge is that many farmers are unaware of their legal rights under the Act. The right to register varieties, claim compensation, or seek benefit sharing often remains only theoretical because of lack of legal literacy.
2. **Procedural Complexity:** Registration of farmers' varieties may involve technical documentation, DUS requirements, paperwork and interaction with authorities that are difficult for small and marginal farmers to navigate without institutional support.
3. **Weak Benefit-Sharing Implementation:** Although the law provides for benefit sharing, the actual realization of such claims has been limited. There is insufficient transparency and clarity regarding identification of contributors, valuation of benefits, and timely disbursement.
4. **Inadequate Integration with Biodiversity and Seed**

Systems: Farmers' rights exist at the intersection of plant variety law, biodiversity law, seed law and agricultural policy. Weak institutional coordination can result in fragmented protection.

5. Imbalance in Practical Power: Even if the law is textually balanced, the practical bargaining power of farmers is much weaker than that of corporations, commercial seed companies and formal breeders. Litigation, technical compliance and access to information remain asymmetrical.

6. Limited Use of Compensation Mechanisms: The compensation provision for non-performance is potentially important, but farmers often face evidentiary and procedural barriers in proving performance claims, environmental conditions and causal failure.

7. Market Dependence and Corporate Seed Control: The increasing commercialization of agriculture and concentration in seed markets can indirectly undermine farmers' autonomy, even if the statutory right to save and exchange seed formally remains intact.

Recent scholarship has argued that the PPV&FR framework is normatively strong but implementation through rules, procedures and institutional practice has not always fulfilled the statute's farmer-protective promise.

Judicial and Policy Dimensions: Indian courts have not developed a vast body of case law specifically interpreting the PPV&FR Act in the same way as traditional intellectual property statutes. Nevertheless, judicial principles relating to livelihood, fairness, access to resources, and environmental justice remain relevant. A rights-based reading of agricultural legislation would require that courts and authorities interpret farmers' protections purposively rather than narrowly.

Policy debates around seed regulation, genetically modified crops, licensing of seed technology, and biodiversity access also affect the practical scope of farmers' rights. Therefore, farmers' rights protection must be understood as a continuing legal project rather than a completed legislative achievement.

Major Challenges in Protecting Farmers' Rights in India: The following structural challenges continue to weaken effective legal protection:

1. Fragmented landholdings and rural poverty, which reduce farmers' capacity to engage with formal legal systems.
2. Low institutional outreach of the PPV&FR Authority at the village level.
3. Lack of documentation of traditional varieties and community knowledge.
4. Insufficient legal aid and advisory support for farmers seeking registration or compensation.
5. Market-driven seed dependency and aggressive commercialization.
6. Climate change, crop failure and agrarian distress, which reduce farmers' ability to assert rights.
7. Language and procedural barriers in filing claims and understanding regulatory documents.
8. Inadequate data transparency on benefit sharing, registrations and compensation claims.
9. Weak convergence between agriculture, biodiversity and intellectual property institutions.

Suggestions and Legal Reforms: To strengthen farmers' rights protection in India, the following reforms are suggested:

1. Simplify Registration of Farmers' Varieties: The process for registration should be simplified with local-language forms, reduced technical burden, mobile assistance camps and decentralized support through Krishi Vigyan Kendras, agricultural universities and panchayat-level facilitation centres.

2. Strengthen Legal Awareness: A nationwide legal literacy programme should be launched to educate farmers about seed rights, registration, benefit sharing and compensation remedies under the PPV&FR Act.

3. Create Farmer Legal Support Cells: Special legal assistance cells should be established at district and state levels to help farmers file applications, objections, compensation claims and benefit-sharing petitions.

4. Improve Benefit-Sharing Mechanisms: Clear guidelines should be framed for tracing community contributions, determining benefit-sharing amounts and ensuring transparent, time-bound disbursement through the National Gene Fund.

5. Expand Recognition of Community Rights: The law should more robustly recognize collective community stewardship over plant genetic resources rather than focusing predominantly on individual applications.

6. Ensure Better Coordination with Biodiversity Authorities: The PPV&FR Authority, National Biodiversity Authority, State Biodiversity Boards and seed regulators should operate through a coordinated institutional framework to avoid duplication and gaps.

7. Strengthen Compensation Remedies: The mechanism for compensation for non-performance should be made farmer-friendly by relaxing evidentiary burdens, using agricultural expert panels and establishing fast-track grievance mechanisms.

8. Support Community Seed Banks: The state should promote community seed banks and farmer-led conservation programmes to preserve local varieties and reduce excessive dependence on external seed markets.

9. Periodic Review of Seed and Plant Variety Policies: All agricultural intellectual property policies should be periodically reviewed from the perspective of small and marginal farmers, food security and biodiversity conservation.

10. Promote Participatory Breeding and Inclusive Innovation: Public agricultural institutions should work with farmers through participatory breeding models that

recognize farmers as co-creators rather than mere end users of seed technology.

Conclusion: The protection of farmers' rights in India represents one of the most innovative and socially conscious developments in agricultural intellectual property law. Through the Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Act, 2001, India has attempted to reconcile the demands of international trade law with the realities of a predominantly small-farmer agrarian economy. The Act recognizes that farmers are not passive recipients of innovation but active contributors to the conservation, improvement and development of plant genetic resources. By protecting the right to save, use, exchange and sell seed; by permitting registration of farmers' varieties; by enabling benefit sharing and compensation; and by acknowledging the role of farming communities in conserving biodiversity, the Indian legal framework goes beyond conventional plant breeders' rights models.

At the same time, the transformative promise of the law remains only partially fulfilled. Awareness deficits, procedural barriers, weak implementation of benefit-sharing provisions, limited compensation access, and growing commercialization continue to dilute the practical value of farmers' rights. The challenge before Indian law is therefore not merely to preserve the statutory text of farmers' rights, but to make those rights real, accessible and enforceable for ordinary cultivators. Farmers' rights must be treated as an integral part of livelihood protection, environmental justice, food sovereignty and constitutional social welfare. A genuinely farmer-centred legal regime would require simplification of procedures, institutional outreach, community-level legal support, strong benefit-sharing enforcement, and policy coordination across biodiversity, seed and intellectual property systems. If implemented effectively, India's model can continue to serve as a globally significant example of how agricultural innovation may be balanced with justice for those who have historically sustained the foundations of food security.

References :-

1. Constitution of India.
2. Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Act, 2001.
3. Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Rules, 2003.
4. Biological Diversity Act, 2002.
5. Patents Act, 1970.
6. Seeds Act, 1966.
7. Agreement on Trade-Related Aspects of Intellectual Property Rights (TRIPS).
8. Convention on Biological Diversity, 1992.
9. International Treaty on Plant Genetic Resources for Food and Agriculture.
10. A. Ramanna, Farmers' Rights in India (discussion of the Indian farmers' rights framework and seed-related freedoms).
11. Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Authority, official materials and public information on the PPV&FR regime and National Gene Fund.
12. Scholarly analyses on the implementation of the PPV&FR Act and its delegated legislation.
13. Research on registration of farmers' varieties and the practical use of the statutory framework by cultivators.
14. Academic discussions on balancing breeders' rights and farmers' rights under Indian plant variety law.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Effect of Education on Gender Inequality in Uttar Pradesh, India

Dr. Bhavna Sharma* Dr. Mani Bansal**

*Assistant Professor (Commerce) Wilsonia Degree College, Moradabad (U.P.) INDIA
** Professor (Education) Dayanand Arya kanya Degree College, Moradabad (U.P.) INDIA

Abstract: In the field of development, gender issues are becoming increasingly important. Gender is a primary marker of social and economic stratification and, as a result, of exclusion. Regardless of one's socioeconomic class, there are systematic gender differences in material well-being, although the degree of inequality varies across countries and over time .Many personalities have worked for women empowerment which can be fill the gap between gender inequality and gender equality because with the help of women empowerment we can meet the target of complete gender equality**.** Education is crucial need for women empowerment. Education not only helps in just development of human being yet it helps to face the challenges of society and empowers oneself. This paper analyses issues related to the Gender inequality and recent trend in gender. The different tables' discussion shows that female sex and literacy rate in Uttar Pradesh. Census of 2011 shows that the highest and lowest literacy level difference between male and female is also vast which shows that gender inequality. Many programs are running to overcome the issues but yet they are not enough so to achieve the vision 2020, more actions are to be taken so that the desired result could be achieved.

Keywords: gender inequality, women empowerment, literacy rate, sex ratio.

Introduction - The issue of gender inequality is one of the most often-raised issues nowadays. One of the factors that can affect this social phenomenon is parenthood. Our gender inequality research paper presented below reveals this topic.

Gender: The United Nations Population Fund (UNFPA, 2009) provides the following definition of Gender: "The term gender refers to the economic, social and cultural attributes and opportunities associated with being male or female. … Gender attributes and characteristics, encompassing, inter alia, the roles that men and women play and the expectations placed upon them, vary widely among societies and change over time. But the fact that gender attributes are socially constructed means that they are also amenable to change in ways that can make a society more just and equitable."

Gender Inequality: Gender equality means that women and men have the same rights, opportunities and obligations. Gender equality can mean that women and men have the same opportunities for earning a living and for Self-development and responsibility in working life :

1. Have the same influence in democratic and political processes
2. Have the same wages for the same or equivalent work
3. Have the same opportunities for good health and good quality care
4. Obtain equivalent care and service in care of the elderly
5. Are able to dare to go out in the evenings as easily
6. Are treated and assessed on equal terms by the social services, refugee reception and in rehabilitation when on sick leave
7. Are able to choose and engage in leisure activities on equal terms
8. Can develop as individuals without restrictive gender norms Gender equality can also mean that gender shall not Affect the risk of being exposed to violence at home.

Sex ratio: Sex ratio is used to describe the number of females per 1000 of males. Sex ratio is an important source for finding the population of women in India and what is the ratio of women to that of men in India. In the Population Census of 2011 it was exposed that the population ratio in India 2011 is 940 females per 1000 of males. The Sex Ratio 2011 shows an upward trend from the census 2001 data. Census 2001 exposed that there were 933 females to that of 1000 males. Since decades India has seen a decrease in the sex ratio 2011, but since the last two of the decades there has been in slight increase in the sex ratio. Since the last five decades the sex ratio has been moving around 930 of females to that of 1000 of males.

Research Methodology:

This is a descriptive research paper; this study is compiled

with the help of the secondary data. Secondary data have been finding out by using Google and browsing on different websites

Literature Review:

In this paper we explained issues related to the gender inequality and explain sex ratio and child sex ratio and female literacy rate in India and Uttar Pradesh. Gender equality is important for empowerment of the women.

In the research conducted by Ms. Shashi Bharti on 'Gender Inequality in India and Uttar Pradesh', she concluded that education is the important tool for the development of females in society and if females are literate they will bring up an educated society because they are responsible for the development of whole family. The women discrimination can be visualized on various angles

1. The sex ratio is unfavorable to women and it has declined overtime.
2. The literacy rates are low among women than men
3. The expectation of life is low for women in India up to the recent times.

Objectives:

1. To find out the relationship between Gender Inequality and Sex Ratio.
2. To find out the relationship between Gender Inequality and Literacy Ratio.
3. To find out the relationship between Gender Inequality and population Ratio.

Findings

Table 1

Description	2011	2017
Approximate Population	19.98 Crores	22.39 Crores
Actual Population	199,812,341	223,897,418
Male	104,480,510	115,114,354
Female	95,331,831	108,783,064
Population Growth	20.23%	12.05%
Percentage of total Population	16.50%	16.59%

Above table shows that in the year 2017 the approximate population of Uttar Pradesh had increased gradually recording an estimated hike of 12.05% as compared with the year census of 2011, and constituting 16.59% of total population of India. It means that in the year 2017 the estimated population of Uttar Pradesh was recorded as 223,897,418 approximately where population of male constituted to 115,114,354 approximately and of female 108,783,064 approximately.

Table 2

Description	2011	2017
Sex Ratio in Uttar Pradesh	**908 females per 1,000 males**	945 females per 1,000 males

Table 2 shows the sex ratio in 2011 and 2017. There is a gradual increase i.e., 918 and 945 but it is not an appropriate match between male and female ratio. To clear this we are studying the population pattern in different districts (10) which shows gender inequality and the explanation is as follows:

Table 3

Cities	Population	Male	Female
Lucknow	2,817,105	1,460,970	1,356,135
Kanpur	2,765,348	1,489,062	1,276,286
Ghaziabad	1,648,643	874,607	774,036
Agra	1,585,704	845,902	739,802
Meerut	1,305,429	688,118	617,311
Varanasi	1,198,491	635,140	563,351
Allahabad	1,112,544	600,386	512,158
Bareilly	903,668	476,927	426,741
Moradabad	887,871	464,580	423,291
Aligarh	874,408	461,772	412,636

By observing the data (secondary data from the different sources) it is proved that gender inequality exist in every district.

Table 4

Total Literacy rate (Persons)	69.72 percent
a) Male Literacy	79.24 percent
b) Female Literacy	59.26 percent

Gender inequalities also affect the education i.e., the literacy rate where male literacy rate is 79.24% and female literacy rate is 59.26%.

Conclusion: My finding says that education plays a key role in all aspects of life so without education of females we cannot dream of a healthy, wealthy and prosperous India. These data reveals that although we are heading towards progressive India but still mind of people are conservative. They are not ready to give equal status to the female in society. Although it is a bitter truth that if a girl is taught then the whole family is taught. This way India can stand by the status of fully literate India but the data says it is not like that still there is need of improvement.

Equality in education will reduce the gap of sex ratio. More respect will be given even to the female child. The need of a male child will not be generated. As we know that women is endowment with the power of patience, intellectual and passionate so the role of women in each field of the country make the women powerful, respectful and wise. Hence we can say effect of education in gender inequality plays a vital role in socio economic structure of the society.

References:-

1. Gender Inequality in India and Uttar Pradesh Shashi Bharti, http://www.allresearchjournal.com/archives/2015/vol1issue11/PartB/1-10-138.pdf
2. India Guide Population of India Population of Uttar Pradesh in 2018, http://www.indiaonlinepages.com/population/uttar-pradesh-population.html.
3. Uttar Pradesh Population Census data 2011, https://www.census2011.co.in/census/state/uttar+pradesh. html
4. Gender Equality in Uttar Pradesh: Progress and Challenges, By Srivastava Achala, https://www.questia.com/library/journal/1G1-318999545/gender-equality-in-uttar-pradesh-progress-and-challenges.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

Depression and Anxiety in Contemporary Young-Adult Fiction: A Critical Study

Reena Mittal*

***Professor and Head (English) DAK Degree College, Moradabad (U.P.) INDIA**

Abstract: Contemporary young-adult (YA) fiction increasingly explores depression, anxiety, trauma, suicidal ideation, and psychological distress. This paper examines these representations in John Green's Turtles All the Way Down (2017), Jennifer Niven's All the Bright Places (2015), and Ned Vizzini's It's Kind of a Funny Story (2006). Using qualitative close reading and an interdisciplinary framework informed by literary studies, mental-health discourse, disability studies, and narrative medicine, the study focuses on psychological experience, identity, relationships, stigma, treatment, and recovery. It argues that contemporary YA fiction can humanize mental illness by presenting characters as multidimensional individuals rather than reducing them to symptoms. However, some narratives may romanticize suffering by connecting mental illness with romance, exceptional sensitivity, or tragedy. Responsible representation requires psychological complexity, narrative agency, social context, and realistic possibilities for support and recovery.
Keywords: Young-Adult fiction, depression, anxiety, mental health, adolescents, stigma, identity, recovery.

Introduction - Young-adult literature explores important adolescent concerns such as identity, relationships, family, academic pressure, belonging, and future aspirations. Mental health has become an increasingly significant theme within the genre, with depression, anxiety, trauma, obsessive thoughts, and suicidal ideation frequently placed at the centre of narratives.

Literary representation can challenge stigma and encourage empathy, but it can also reproduce stereotypes or romanticize psychological suffering. Wickham (2018) notes that representations of mental illness are shaped by cultural ideas about normality and difference. Sagara Monaghan (2016) similarly emphasizes the need to evaluate mental-health representations critically.

This study examines three Young-Adult novels: Turtles All the Way Down, All the Bright Places, and It's Kind of a Funny Story. Green focuses on anxiety and intrusive thoughts; Niven explores depression, grief, and suicidal ideation; and Vizzini examines depression, academic pressure, psychiatric care, and recovery.

Research Gap: Previous studies have examined mental illness in Young-Adult literature, including stigma, mental-health literacy, clinical representation, and educational value (Wickham, 2018; Sagara Monaghan, 2016; Deakin & Eastman, 2019). Recent scholarship also emphasizes authentic and non-deficit representations (Olan & Richmond, 2023).

However, comparatively less attention has been given to how **literary form and narrative perspective shape representations of depression and anxiety across different YA texts**. This study addresses this gap by examining narrative voice, psychological interiority, characterization, metaphor, relationships, social context, and plot structure rather than attempting to clinically diagnose fictional characters.

Research Hypothesis

H1: Contemporary YA fiction represents depression and anxiety in increasingly complex and individualized ways, challenging stereotypes while sometimes associating psychological suffering with romance, exceptional sensitivity, or tragedy.

Research Objectives: The study aims to:

1. Examine representations of depression and anxiety in selected YA fiction.
2. Explore the relationship between mental health and adolescent identity.
3. Analyse narrative techniques used to represent psychological experience.
4. Examine family, friendship, romance, and social support.
5. Analyse representations of treatment and recovery.
6. Identify ways in which YA fiction challenges or reinforces stigma.
7. Examine the ethical problem of romanticizing mental illness and suicide.

Research Methodology: The study uses a qualitative and interpretive methodology based on close textual analysis. The primary texts are Green's Turtles All the Way Down,

Niven's All the Bright Places, and Vizzini's It's Kind of a Funny Story.

The analysis considers characterization, first-person narration, internal monologue, symbolism, metaphor, imagery, dialogue, setting, and plot structure. The study draws on literary criticism, mental-health discourse, disability studies, trauma studies, and narrative medicine. The research does not clinically diagnose fictional characters. Instead, it examines how the novels construct psychological experiences and meanings related to identity, agency, stigma, relationships, and social context.

Depression and Anxiety as Literary Experiences: Psychological distress is often invisible. Individuals may appear successful or socially active while experiencing anxiety, hopelessness, exhaustion, isolation, or intrusive thoughts. Contemporary YA fiction represents this contrast between outward appearance and inner experience.

Such portrayals challenge the stereotype that mental illness is always visible. Olan and Richmond (2023) argue for representations that acknowledge both difficulties and the ordinary achievements of characters with mental-health conditions.

Anxiety in Turtles All the Way Down: John Green's Turtles All the Way Down presents anxiety through Aza Holmes, whose intrusive thoughts and obsessive fears affect her relationships and daily life.

The novel's psychological interiority allows readers to experience Aza's repetitive thought patterns directly. Importantly, Aza understands that some of her fears are excessive but cannot simply control them through rational thinking.

Aza is not defined solely by anxiety. She is also a student, daughter, friend, and romantic partner. Her relationships provide companionship but do not function as a cure. This multidimensional portrayal challenges deficit-based representations of mental illness.

Depression and Suicide in All the Bright Places: Jennifer Niven's All the Bright Places explores depression, grief, suicidal ideation, and emotional isolation through Violet Markey and Theodore Finch.

Finch appears energetic and humorous despite his psychological difficulties, demonstrating that depression may not always be outwardly visible. Violet's distress is connected to grief following her sister's death and her difficulty imagining a future.

Their romantic relationship provides emotional connection but also raises ethical concerns. The close association between romance and psychological suffering may risk presenting mental illness as part of romantic intensity or emotional exceptionalism. Thus, the novel illustrates the difference between making mental illness visible and representing it responsibly.

Depression and Treatment in It's Kind of a Funny Story: Ned Vizzini's It's Kind of a Funny Story follows Craig Gilner, whose depression is connected partly to academic pressure, perfectionism, and fear of failure.

Craig's experience in a psychiatric facility allows him to step away from competitive educational expectations and reconsider his understanding of achievement and success. The novel presents mental health as connected not only to the individual but also to social and institutional environments.

Humour and ordinary interaction coexist with psychological suffering, preventing Craig from becoming merely a tragic figure and supporting a more complex representation.

Identity, Agency, and Social Support: A major theme across the three novels is the relationship between mental health and identity. The protagonists are not reduced to their psychological conditions. Aza is more than an anxious teenager; Craig is more than a depressed student; and Violet is more than a grieving young woman.

Agency is equally important. Their decisions, relationships, and attempts to understand themselves contribute to their identities.

Family and friendship also influence mental health. Family expectations, academic pressure, grief, communication difficulties, and social relationships can contribute to psychological distress. At the same time, emotional support should not be treated as a replacement for professional treatment.

Stigma and Mental-Health Literacy: Young-Adult fiction can challenge stigma by placing mental-health struggles within ordinary settings such as schools, families, friendships, and communities. This shifts the representation of mental illness from an experience of "otherness" to a lived human experience.

Research suggests that YA literature can support classroom discussions about anxiety and depression and encourage mental-health literacy (Deakin & Eastman, 2019; Shephard &Garrison, 2024). However, literary texts should not be treated as clinical manuals. Their value lies in encouraging understanding, empathy, and discussion.

Romanticization and Ethics: A major ethical concern is the romanticization of psychological suffering. This may occur when depression or anxiety is associated with creativity, emotional depth, romantic intensity, or tragic beauty.

This concern is particularly important in narratives involving suicide. Responsible representation should:

1. give characters narrative agency;
2. avoid reducing them to symptoms;
3. acknowledge psychological and social complexity;
4. avoid presenting romance as a cure;
5. represent treatment without stigma; and
6. provide possibilities beyond psychological crisis.

Findings and Discussion: The study demonstrates that contemporary Young-Adult fiction generally presents depression and anxiety with greater psychological complexity than stereotypical representations.

First, narrative perspective enables readers to experience intrusive thoughts, hopelessness, anxiety, and emotional conflict. Second, psychological distress is connected to social factors such as academic competition, grief, family expectations, relationships, and institutional structures. Third, the protagonists retain identities beyond their mental-health conditions, including friendship, creativity, humour, ambition, and emotional connection.

However, visibility does not automatically ensure responsible representation. Some narratives may associate psychological suffering with romance or tragedy. Therefore, Young-Adult literature requires critical reading rather than automatic celebration.

Conclusion: Depression and anxiety have become significant themes in contemporary Young-Adult fiction. Turtles All the Way Down, All the Bright Places, and It's Kind of a Funny Story demonstrate different approaches to representing psychological distress, including intrusive thoughts, grief, hopelessness, academic pressure, institutional treatment, and recovery.

The analysis shows that mental health is closely connected with identity, relationships, family expectations, social pressures, and institutional environments. Effective representations avoid defining characters solely through their mental-health conditions and provide space for agency, support, and recovery.

At the same time, YA literature must address the ethical risks of romanticization and stereotypical portrayals, particularly in narratives involving suicide. When represented with complexity and contextual awareness, Young-Adult fiction can contribute to mental-health literacy, empathy, and destigmatization.

References:-

1. Deakin, K., & Eastman, G. (2019). Where's my happy ending? Fostering empathy through conversations about anxiety and depression in young adult literature. Language Arts Journal of Michigan, 35(1).
2. Green, J. (2017). Turtles all the way down. Dutton Books for Young Readers.
3. Hendrickson, B. (2018). Using young adult literature to confront mental health: A culturally relevant approach [Master's thesis, Eastern Illinois University].
4. Jones, F. W., et al. (2024). An initial grounded theory of how young people with mental health problems experience and are affected by fictional representation. Journal of Youth Studies.
5. Köhler, T. (2024). Tackling taboo topics: Narrative strategies in the representation of mental illness stigma in young adult literature [Doctoral dissertation, University of Tübingen].
6. Niven, J. (2015). All the bright places. Alfred A. Knopf.
7. Olan, E., & Richmond, K. J. (2023). Narrative of deficit and authentic portrayals of mental illness and cultural sensitivities in young adult literature. Study and Scrutiny: Research on Young Adult Literature, 6(1), 21–46.
8. Sagara Monaghan, A. (2016). Evaluating representat -ions of mental health in young adult fiction. Enthymema, 16, 32–42.
9. Shephard, M., & Garrison, K. (2024). Supporting adolescent mental health literacy through contemporary young adult literature. School Libraries Worldwide, 29(1), 1–17.
10. Vizzini, N. (2006). It's kind of a funny story. Miramax Books.
11. Wickham, A. (2018). It is all in your head: Mental illness in young adult literature. The Journal of Popular Culture, 51, 10–25.
12. World Health Organization. (2022). World mental health report: Transforming mental health for all. World Health Organization.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण में पंचायती राज की भूमिका

डॉ. अमित मेहता*

* सह–आचार्य (इतिहास) राजकीय कला महाविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

शोध सारांश – भारत गाँवों का देश है। 2011 की जनगणना के अनुसार यहाँ 640867 गाँव है। इन गाँवों में देश की 68.8 प्रतिशत आबादी रहती है। यह आबादी भारत की रीढ़ कही जा सकती है। जो निम्न वर्ग से सम्बन्धित है, और देश के विकास को आधार प्रदान करती हैं। ग्रामीण स्वयं अभाव का जीवनयापन कर और स्वयं को शहरी चमक–दमक से दूर कर देश के विकास को उँची बुलन्दियों को छूने में मदद करता है। अत: देश के विकास के लिए ग्रामीण क्षेत्रों का विकास होना अत्यंत आवश्यक है। जिससे कि ग्रामीण क्षेत्रों से हो रहे ग्रामीण नगरीय पलायन को कम किया जा सके। अत: उपरोक्त अध्ययन ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत स्थानीय स्वशासन द्वारा ग्रामीणों को प्राप्त हो रहे लाभों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन है।

मुख्य शब्द – ग्रामीण विकास, स्थानीय स्वशासन, निर्धनता, आर्थिक विकास।

प्रस्तावना – भारत प्रमुखत: ग्रामों का एक देश है। प्राचीन काल से ही भारतीय ग्रामीण समुदाय की सामाजिक संरचना के तीन महत्वपूर्ण आधार – जाति प्रथा, संयुक्त परिवार और ग्रामीण पंचायत रहे है। स्थानीय स्वशासन की इकाई के रूप में ग्रामीण पंचायतों का यहाँ विशेष महत्व रहा है। स्थानीय प्रशासन समाज के निम्नतम स्तर पर कार्य करता है। यह आधिकारिक स्तर पर जनसाधारण के निकट कार्य करता है जो उनके दैनिक जीवन को छूता है कोई भी अन्य सरकार चाहे वह राज्य स्तर पर हो या राष्ट्रीय स्तर पर, जनता के इतने समीप नहीं होती, जितनी कि स्थानीय प्रशासन। इतिहास की दृष्टि से भी यह अन्य स्तरों के शासन से अधिक प्राचीन है क्योंकि शासन का प्रारम्भ ही तभी हुआ जब लोगों ने सीमित क्षेत्रों में छोटे–छोटे समुदायों में अपने आप को संगठित किया। स्थानीय प्रशासन तथा स्थानीय स्वप्रशासन का प्रयोग ऐसी सरकार के लिए किया जाता है जो स्थानीय निवासियों की प्रतिनिधि है जिसकी स्थापना और जिसको स्वायत्ताता राज्य के विधान के अधीन दी गई है जो केन्द्रीय अथवा राज्य सेवाओं से हटकर किसी एक ग्राम, एक जिला, एक नगर, अथवा नगरीय क्षेत्र में स्थानीय कार्यों को शासित करने के लिए किया गया है। डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी ने ग्राम पंचायतों को प्रजातन्त्र के देवता की संज्ञा दी है। आपने इनके सम्बन्ध में लिखा है 'ये समस्त जनता की सामान्य सभा के रूप में अपने सदस्यों के समान अधिकारों, स्वतन्त्रताओं के लिए निर्मित होती है ताकि सब में समानता, स्वतन्त्रता तथा बन्धुत्व का विचार दृढ़ हो'। डॉ. आर.पी. जायसवाल ने लिखा है 'पुरातन काल के प्रलेखों से ज्ञात होता है कि लोकप्रिय सभाओं एवं संस्थाओं द्वारा राष्ट्र जीवन तथा प्रवृत्तियां व्यक्त की जाती थी' भारत में पंचायतों के प्रमाण ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में मिलते हैं पंचायत व्यवस्था को आरम्भ करने का श्रेय राजा पृथु को है वैदिक काल से ग्राम को प्रशासन की मौलिक इकाई माना जाता है। लघु गणराज्यों के रूप मे हिन्दु–मुस्लिम तथा पेशवा शासन काल में ग्राम पंचायत का विशेष महत्व था। अंग्रेजों के आगमन के पश्चात ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना के समय तक ये पंचायतें ग्रामीण प्रशासन की महत्वपूर्ण इकाइयों के रूप में अपनी भूमिका निभाती रही है। परन्तु अंग्रेजों के शासन काल में इस व्यवस्था को बदल दिया गया। इस समय संयुक्त के स्थान पर व्यक्तिगत उत्तरदायित्वों को विशेष महत्व दिया गया। सभी प्रकार के प्रशासनिक तथा न्याय सम्बन्धी अधिकारों को अंग्रेज अधिकारियों के हाथों में केन्द्रित हो जाने से ग्राम पंचायत की शक्तियों व प्रभाव के फलस्वरूप यहाँ व्यक्तिवादिता को विशेष प्रोत्साहन मिला और सामूहिक ग्रामीण जीवन का आकर्षण और महत्व धीरे–धीरे कम होने लगा। इस प्रकार अति प्राचीन काल से चली आ रही ग्रामीण पंचायतों का पतन और ग्रामीण आत्मनिर्भरता समाप्त होने लगी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात नेताओं का ध्यान ग्रामीण पुनर्निर्माण और पंचायतों की पुन: स्थापना की ओर गया। महात्मा गाँधी का कहना था कि स्वतन्त्रता का प्रारम्भ धरातल से होना चाहिए। प्रत्येक ग्राम एक छोटा गणराज्य हो जो पूर्णतया आत्मनिर्भर हो, उसे किसी भी आवश्यकता को पूरा करने के लिए दूसरों पर निर्भर न रहना पड़े। इसी विचार को क्रियान्वित करने हेतु संविधान की धारा 40 में यह व्यवस्था की गयी कि 'राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करेगा और उनको समस्त अधिकार प्रदान करेगा जिससे वे स्वायत्ता शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने के योग्य हो सकें'। देश के स्वतन्त्र होने के पश्चात यहाँ शासन की लोकतान्त्रिक प्रणाली को अपनाया गया और जनता को स्वयं अपने प्रतिनिधियों को चुनने का अवसर मिला। शासन का विकेन्द्रीकरण करने हेतु विभिन्न राज्यों में ग्राम पंचायतें स्थापित की गयी। वास्तव में ग्राम पंचायत स्वराज्य एवं स्वशासन की बुनियादी एवं सबसे छोटी इकाई है। यह ग्रामीण समुदायों के हित के लिए ग्रामवासियों की अपनी स्वयं की संस्था है। 1952 मे ग्रामों के सर्वांगीण विकास हेतु सामुदायिक विकास कार्यक्रम और 1953 में राष्ट्रीय विस्तार सेवा योजना प्रारम्भ की गयी। ग्रामीणों के पुनर्निर्माण की दृष्टि से यह एक समन्वित योजना थी। ग्रामीण विकास के इस कार्यक्रम में ग्रामीण जनता के पूर्ण सहयोग की अपेक्षा की गयी। ग्रामीण क्षेत्रों में हो रहे विकास में स्थानीय पंचायतों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। हमारे देश में 69 प्रतिशत निवासी आज भी कृषि पर आश्रित होती है। अत: सरकार का प्रयास हमेशा यही रहता है कि ज्यादा से ज्यादा योजनाएं ग्रामीण क्षेत्रों में

चलाई जाये ताकि ग्रामीणों को कृषि से लाभ अधिक से अधिक हो और ग्रामीणों को ग्रामीण क्षेत्रों में ही अन्य रोजगार भी उपलब्ध हो सके जिससे शहरी प्रवास में कमी आये और ग्रामीण कृषि कार्य को अच्छे से कर पाये। केन्द्र सरकार ने पंचायतों को कई अधिकार दिये हैं जिससे ग्रामीण क्षेत्रों का विकास तेजी से हो। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का कथन है कि भारत की आत्मा गाँवों में बसती हैं, जब गाँव है तब देश है। इस मूल मंत्र को दृष्टिगत रखते हुए यह आवश्यक हो जाता है कि देश के गाँवों को विकास के पथ पर अग्रसर किया जाए, गाँवों को विकास की मुख्य धारा में समाहित किया जाए। विकास का मूलभूत उद्देश्य एक समतावादी सामाजिक व्यवस्था को सुनिश्चित करना है। यहाँ पर सभी व्यक्ति समान हो, सभी के लिए समान रूप में अवसरों की समानता विद्यमान हो तथा विभिन्न क्षेत्रों समाज एवं वर्ग आदि में असमानता की लकीरें न हो। गाँव के विकास हेतु अनेक सरकारी योजनायें व कार्यक्रमों का क्रियान्वयन किया जा रहा है। जिनमें मनरेगा जिसके तहत गरीब ग्रामीणों को 100 दिन का रोजगार प्रदान किया जाता है। और सर्वशिक्षा अभियान इसके तहत 6 से 14 साल तक के बच्चों को मुफ्त शिक्षा प्रदान किया जाता है। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, जिसके तहत सड़कों का निर्माण किया जा रहा है। इन्दिरा आवास योजना को तहत आवास निर्मित करने हेतु पैसे दिये जा रहे है। और राष्ट्रीय स्वच्छता मिशन, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, वृद्धावस्था पेंशन योजना जैसे अनेक विकास कार्यक्रम चलाये जा रहे है।

पंचायत की शक्तियाँ, सत्ता तथा उत्तरदायित्व – पंचायत की शक्तियाँ तथा सत्ता राज्य विधानमण्डल विधि द्वारा निश्चित करेंगे। ताकि वे स्वशासन के संस्थान के तौर पर कार्य कर सके।

1. आर्थिक विकास तथा सामाजिक न्याय के लिये योजनायें बनाना।
2. सामाजिक न्याय तथा आर्थिक विकास की योजनाओं को लागू करना जो योजनायें इनको सौंपी गई हो और इन विषयों के सम्बन्ध में जो संविधान की 11 अनुसूची में दिये गये है (धारा 243 जी)

पंचायत निधि तथा कर लगाने की शक्ति – राज्य विधानमण्डल किसी भी पंचायत को कर शुल्क, पथ कर लगाने तथा वसूल करने और प्राप्त करने का अधिकार दे सकता है। यह इन करों की सीमा भी निर्धारित करता है। राज्य सरकार पंचायतों को ऐसे कर और शुल्क भी सौंप सकती है जो स्वयं इसने लगाए और वसूल किये हो। राज्य अपनी संचित निधि से पंचायतों को सहायता अनुदान भी दे सकता है। पंचायतों के लिये भी संचित निधि की भाँति निधि स्थापित कर सकता है। (धारा 243 एच)

धारा 243 जी में उन विषयों का उल्लेख है जो इस संशोधन पर पंचायतों को दिये गये है। इन विषयों की सूची 11 अनुसूची में दी गई है जो इस प्रकार है। भूमि उन्नति, भूमि सुधारों को लागू करना, भूमि चकबन्दी तथा मिट्टी संरक्षण, लघु सिंचाई, जल प्रबन्धन, पशुपालन, डेरी उद्योग तथा मुर्गी पालन, मछली पालन व सामाजिक वनप्रांत तथा फार्म वानिकी, लघु वन उत्पादन, खाद्य प्रोसेसिंग उद्योगों सहित लघु उद्योग, खादी, ग्राम तथा कुटीर उद्योग, ग्रामीण आवास और पेयजल, ईंधन और पशु भोजन, ऊर्जा के गैर परम्परागत संसाधन, निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम, प्राथमिक तथा माध्यमिक स्कूलों सहित शिक्षा, तकनीकी प्रशिक्षण तथा व्यावसायिक शिक्षा, वयस्क तथा अनौपचारिक शिक्षा, पुस्तकालय व सांस्कृतिक गतिविधियाँ, व्यापार केन्द्र तथा मेले, अस्पतालों, प्राथमिक केन्द्रों, दवाखानों सहित स्वास्थ्य और सफाई, परिवार कल्याण व स्त्री और शिशु विकास, समाज कल्याण तथा मानसिक अवरोध और विकलांग, कमजोर वर्गों विशेषतया, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का कल्याण, सार्वजनिक वितरण व्यवस्था, सामुदायिक सम्पत्ति संरक्षण, कृषि कृषि प्रसार सहित, सड़कें, पुलियाँ, पुल, नौका, जल, तथा यातायात के अन्य साधन, बिजली के विभाजन सहित ग्रामों में बिजली पहुँचाना।

उद्देश्य :

1. पंचायती राज संस्थाओं के कार्यक्षेत्र का अध्ययन करना।
2. पंचायतों द्वारा क्रियान्वित योजनाओं से हो रहे ग्रामीण विकास का अध्ययन करना।

साहित्य की समीक्षा :

सादिक अली (1960) के अनुसार पंचायती राज से ग्रामीण क्षेत्रों में गुट बढ़े है, अभी भी जन सहयोग का अभाव है और पंचायती राज तथा सहकारी संस्थाओं में सहयोग की कमी है। राल्फ एच. रेजलॉफ (1963) ने उत्तरप्रदेश के एक गाँव के अपने अध्ययन के आधार पर निष्कर्ष निकाला है कि पंचायतों के प्रारम्भ तथा चुनावों के फलस्वरूप विभिन्न जातियों की शक्ति संरचना में परिवर्तन आया है। बी.बी. चटर्जी (1965) का कहना है कि ग्रामीण लोगों की कर्म शक्ति तथा उत्साह को काम में लेकर ही ग्रामीण विकास कार्यक्रम को सफल बनाया और प्रभावी ढंग से सामाजिक परिवर्तन लाया जा सकता है। एम. वी. माथुर (1966) ने राजस्थान के एक जिले में पंचायती राज संस्थाओं के कार्य संचालन के आधार पर निष्कर्ष निकाला है। कि इन संस्थाओं का समाजशास्त्रीय प्रभाव काफी उत्साहवर्धक है। के. एन. सिंह एवं आर. पी. सिंह (1968) ने पंचायती राज के लाभदायक पक्ष पर प्रकाश डालते हुए बताया कि ग्राम पंचायतों की स्थापना ने ग्रामीणों में उत्तरदायित्व की भावना जागाने की दृष्टि ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। स्वाति शर्मा (2008) के अनुसार भारत गाँवों का देश है भारत गाँव में बसता है अत: गाँव का विकास होना अत्यंत आवश्यक है। योजना आयोग के सिद्धांतों को व्यवहारिक रूप देने के लिए विभिन्न पंचवर्षीय योजनाएं बनाई गई तथा सभी से ग्रामीण विकास पर निरंतर ध्यान दिया गया। जिसके परिणामस्वरूप लोगों के सामान्य जीवन स्तर में सुधार हुआ एवं प्रति व्यक्ति आय भी बढ़ी है। इतना सब होने के बावजूद समस्या का अपेक्षित समाधान खोज पाने में सरकारी कार्य अपर्याप्त ही सिद्ध हुए है। शर्मा (1986) ने अपने अध्ययनों में पाया कि पंचायतों ने बड़े किसानों और व्यापारियों के समूह व उच्च जातियों के हितों के लिए अधिक कार्य किया है, गाँव के सभी निर्णयों में अमीरों को शामिल किया हैं। लोकेश कुमार (2009) ने लिखा कि आज सामान्यत: पंचायतों के लिए जो कर्तव्य एवं दायित्व निर्धारित किए गए उनमें आर्थिक विकास एवं न्याय से संबंधित योजनाओं को तैयार करना, आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की योजनाओं का क्रियान्वयन, भूमि सुधार, लघु सिंचाई, पशुपालन, मत्स्य पालन, शिक्षा व्यवस्था महिला व बाल विकास आदि शामिल है। किंतु पंचायत की भूमिका को और अधिक व्यावहारिक स्वरूप प्रदान करने की आवश्यकता है, ताकि पंचायत में चुने हुए व्यक्ति ही नहीं अपितु गांव के प्रत्येक व्यक्ति विकास को अपना कर्तव्य एवं दायित्व समझे और गांव किसी भी मायने में शहर से कम न हो। उन्होंने यह भी कहा कि ग्राम पंचायतों के जरिए गांवों के हालात बदलने का सपना महात्मा गांधी से लेकर राजीव गांधी ने भी देखा था और केन्द्र सरकार ने गांवों की दशा सुधारने के लिए भारत निर्माण के नाम से एक विशाल योजना शुरू की और योजनाओं का लाभ सभी व्यक्तियों तक पहुंचाने की दृष्टि से पंचायतों का

अत्यधिक महत्व है। जिसके फलस्वरूप विकास की धारा गांवों में प्रवाहित होना आरम्भ हो गयी है। डॉ सुधीश कुमार पटेल (2009) इन्होने अपने लेख 'पंचायती राज में रोजगार की बदलती तस्वीर' में बताया कि ग्राम पंचायतों के सामने सबसे जटिल समस्या ग्रामीणों का पलायन रोकने की है। इसके लिए गांव में ही ग्रामवासियों को रोजगार उपलब्ध कराना आवश्यक है। परस्पर सहयोग के आधार पर काम करने से असम्भव कार्य भी संभव हो जाते है। इसलिए लोगों को स्वरोजगार प्रारंभ करवाना पंचायतों का कर्तव्य है। यदि लोगों में कार्य के प्रति रुचि एवं मेहनत करने की आदत बन गई तो पंचायतों के प्रयास सफल होंगे और लोगों को गांव से शहरों की ओर पलायन करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। अत: ग्रामीण रोजगार प्रबंधन पर अधिक ध्यान देना चाहिए, जिससे न केवल बेरोजगारी दूर होगी वरन् ग्रामीण विकास भी संभव हो सकेगा। आज जरुरत इस बात की भी है। कि हर हाथ को काम मिले और हर काम का उचित दाम मिले, जिससे स्वस्थ एवं सुखमय समाज की रचना होगी और गांवो में सम्पन्नता आएगी। विकास कुमार सिन्हा (2013) इनके लेख 'पंचायतों से सुधर रही है गांव में जिन्दगी' से ज्ञात होता है कि पंचायतों की रूपरेखा व कल्पना सदियों पुरानी है। देश की आजादी के बाद पंचायतें और सशक्त हुई महिलाओं को पंचायतों में अधिकार प्राप्त हुए। पंचायतों के सशक्त होने से देश के गांवों में जीवन स्तर में सुधार हुआ।

निष्कर्ष – उपरोक्त अध्ययनों से ज्ञात होता है कि पंचायतों का कार्यक्षेत्र काफी विस्तृत है जिनको पूर्ण करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में कई योजनाएं चलाई जाती है जिससे ग्रामीण विकास हो और गरीब व अमीर के बीच अन्तर की खाई कम हो। पूर्व में हुए अध्ययनों से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में कियन्वित योजनाओं से ग्रामीण क्षेत्रों का काफी विकास हुआ। ग्रामीण क्षेत्रों में अब सभी सुविधा मौजूद है और प्रत्येक ग्राम में उचित सड़क, पानी, बिजली इत्यादि की व्यवस्था है परन्तु उचित रोजगार ना मिल पाने से और योजनाओं का लाभ सभी को प्राप्त न होने के कारण ग्रामीण मौसमी प्रवजन कर रहे है। अत: पंचायतों के कार्यों में सभी के सहयोग द्वारा पंचायतों को सफल बनाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Mookerji.R.K, 1954,"Our Earliest Conception of Democracy," in Hindustan Standard, Puja Annual p.112.
2. Jayaswal.R.P, 1943, Hindu Polity., p.12.
3. Retzlaff. Ralph H.1963,"A Year of Stability and Change, Asian Survey, 3(2), pp. 16-50.
4. Chatterjee, B.B.1965,"Psychological Factors in Rural Reconstruction through Panchayati raj, khadi Gramodyog, II (8), 602-1.
5. Singh.K.N and Singh.R.P, 1968, "Farmers Reactions to Village Panchayats", Quarterly Journal of Local Self Government, 38 (4) pp. 451-56.
6. Mathur.M.V, 1966," Panchayati Raj In Rajasthan": A Caste Study in Jaipur District, New Delhi.
7. Ali, Sadiq, Panchayati Raj : A.I. C. C. Economic Review, 1960, 12 (13-14).
8. Sharma Swati (2008) Humsamvet article 2008 Page No.1.
9. Kumar lokesh (2009) kurushetra Magzine August (2009) p.no.1-7.
10. Patel. Dr. Sudhish kumar (2009) Kurushetra Magazine (2009) p.no.8-12.
11. Sinha.Vikash Kumar, 14 (2013) Kurukshetra Magazine October 2013, p.no.37-39.
12. Sharma, B.M. "Role of Panchayati raj in Democratic Decentralization" June 1986, p18.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

AI and The Women, Peace and Security Agenda in India

Dr. Bhavna Sharma*

***Assistant Professor (Commerce) Wilsonia Degree College, Moradabad (U.P.) INDIA**

Abstract: The integration of Artificial Intelligence (AI) with the Women, Peace and Security (WPS) agenda offers opportunities to address gender-related challenges in conflict prevention, response, and post-conflict recovery. The WPS agenda, grounded in United Nations Security Council Resolution 1325 (2000), emphasizes women's participation in peace and security decision-making, protection from conflict-related violence, prevention of violence, and relief and recovery. In India, diverse social, geographic, and security contexts shape both the risks women face and their access to institutions and technology. AI-enabled analytics, early-warning support, digital reporting channels, translation tools, and evidence organization may strengthen gender-responsive policies and women's participation. However, these applications also raise concerns about algorithmic bias, privacy and surveillance, data security, accessibility, language representation, and the digital divide. This paper examines the intersection of AI and the WPS agenda in India through a conceptual and policy-oriented review. It outlines potential applications, ethical and governance requirements, and implementation priorities. It argues that AI should support—not replace—human judgment, survivor-centered services, local knowledge, and women's leadership. Responsible adoption requires meaningful participation, transparent oversight, robust data protection, independent evaluation, and accessible non-digital alternatives. The paper proposes a framework and research agenda for evaluating whether AI-enabled initiatives improve safety, inclusion, accountability, and peacebuilding outcomes. As a conceptual paper, it presents no original fieldwork or causal findings.
Keywords: Artificial Intelligence, Women Peace and Security, Gender Equality, Conflict Prevention, India, Digital Inclusion, Ethical AI.

Introduction - Peace and security are not solely matters of military stability or the absence of open conflict. Durable peace also depends on safety, justice, participation, social trust, and access to services. Women may experience insecurity through displacement, gender-based violence, loss of livelihoods, care burdens, and exclusion from decision-making. Women are also peacebuilders, negotiators, community organizers, first responders, and holders of local knowledge.

The Women, Peace and Security (WPS) agenda recognizes women's agency and the gendered effects of conflict. United Nations Security Council Resolution 1325, adopted in 2000, calls for greater participation of women in peace and security processes and attention to gender perspectives in conflict prevention, resolution, peacebuilding, and recovery. Subsequent resolutions developed these commitments.

Artificial Intelligence (AI) may contribute by helping analyze information, detect patterns, support multilingual communication, improve service navigation, and organize reports. Potential uses range from early-warning analysis to more accessible public information. Yet AI can reproduce historical inequities, misclassify risks, expose sensitive information, or encourage intrusive surveillance. Its contribution must be assessed against human rights, gender equality, and community needs.

This paper considers how AI could responsibly support WPS priorities in India. It does not presume that AI is inherently beneficial or that every context involving violence or insecurity should be technologized. It asks what conditions would make carefully governed AI useful, accountable, and inclusive.

Objectives and Research Questions:

1. To explain the relationship between the WPS agenda and emerging AI capabilities.
2. To identify potential AI applications relevant to participation, protection, prevention, and relief and recovery in India.
3. To examine risks involving bias, privacy, security, access, and accountability.
4. To propose a gender-responsive framework and practical recommendations.

Research questions: (1) In what ways might AI support WPS priorities in India? (2) Which risks could undermine safety,

rights, or trust? (3) What governance conditions should guide development, procurement, and deployment?

Research Methodology: This paper adopts a conceptual, narrative policy-review method. It draws on foundational international frameworks and selected institutional guidance on WPS, gender equality, and responsible AI. Themes are organized around participation, protection, prevention, and relief and recovery. This is not a systematic review and does not claim exhaustive database coverage, formal screening, or meta-analysis. No interviews, surveys, or original datasets were collected. The applications discussed are prospective examples, not evidence of established effectiveness in India.

The Women, Peace and Security Agenda

Participation: Participation concerns women's meaningful involvement in negotiations, peace processes, security institutions, governance, and recovery decisions. Representation alone is insufficient if women lack influence over agendas, resources, or outcomes. The WPS approach recognizes women as decision-makers and agents, not merely beneficiaries.

Protection: Protection includes preventing and responding to conflict-related sexual violence and other threats to women's rights and safety. Effective protection requires trusted services, survivor-centered responses, justice pathways, health and psychosocial support, and safeguards against retaliation. Digital tools must not expose survivors or create unsafe records.

Prevention: Prevention involves addressing structural drivers of conflict and gender-based violence, supporting local peace initiatives, and ensuring gender analysis informs policy. Early-warning information can be valuable when credible, contextual, and linked to action. Quantitative signals should complement, not displace, community knowledge.

Relief and recovery: Relief and recovery encompass equitable access to humanitarian assistance, health services, education, livelihoods, documentation, housing, and participation in reconstruction. Women's varied needs—including those of displaced people, persons with disabilities, and marginalized communities—should inform planning and monitoring.

Potential Applications of AI in India

Gender-responsive early warning: With lawful, carefully governed data, analytical tools might help identify changes in service demand, displacement indicators, public incident reports, or other signals relevant to community safety. Systems could help analysts prioritize review, not autonomously label individuals or communities as threats. False alarms, underreporting, manipulation, and uneven data coverage must be anticipated.

Accessible information and service navigation: Conversational interfaces, translation, speech-to-text, and summarization could make information about assistance, legal rights, helplines, shelters, and public programs easier to access across languages and literacy levels. Content must be verified, culturally appropriate, accessible to persons with disabilities, and clear about the limits of automated guidance. High-risk situations should route promptly to trained human responders.

Supporting women's participation: AI-assisted translation, transcription, agenda summarization, and document search may lower barriers to participation in consultations and peacebuilding forums. Tools could help organizers consolidate community submissions and surface overlooked concerns. They should not decide who represents a community, rank contributions by popularity, or replace safe, accessible in-person engagement.

Documentation and institutional learning: Where consent, law, and security permit, tools may assist authorized teams in organizing records, detecting duplicate entries, or finding themes across public policy documents and service feedback. Sensitive testimony requires stringent safeguards. Automated outputs must not be treated as verified evidence without expert review and appropriate evidentiary standards.

Recovery planning and resource allocation: Decision-support models may help planners compare service gaps or forecast needs when reliable, representative data exist. Allocation systems should disclose criteria, allow appeal, and be audited for exclusion. Communities with weak connectivity or limited administrative visibility must not become invisible because their needs are poorly recorded.

Risks and Ethical Challenges

Bias and representational gaps: AI systems learn from data that may underrepresent women in rural, tribal, displaced, minority-language, or otherwise underserved settings. Reported incidents may reflect access to reporting mechanisms rather than actual prevalence. Models can reinforce institutional blind spots. Gender-sensitive evaluation should examine intersectional effects and error patterns.

Privacy, surveillance, and safety: Location traces, identity records, communication logs, and survivor information can cause serious harm if exposed, repurposed, or accessed by abusive actors. Data collection should be minimized and purpose-limited. Access controls, encryption, retention limits, secure deletion, and independent security assessment are essential. In some cases, the safest design is not to collect or centralize data.

Consent and meaningful choice: Consent may be constrained when assistance, safety, or public services depend on participation. People should receive understandable explanations and alternatives where feasible. Survivor-centered practice avoids repeated disclosure, unnecessary data requests, and automated decisions affecting access to support.

Misinformation and deepfakes: Synthetic media and coordinated manipulation may inflame tensions, discredit women leaders, or target peacebuilders. Detection systems

can be imperfect and mistakenly flag authentic material. Responses should combine media literacy, trusted verification, rapid correction, platform accountability, and protection for people at risk.

Digital divide and language inclusion: Connectivity, device affordability, literacy, disability access, and language support differ across communities. Digital-first delivery may widen exclusion. Voice interfaces can help some users but may introduce inaccurate transcription and shared-device privacy risks. Offline, low-bandwidth, and human service channels remain necessary.

Accountability and automation bias: AI recommendations can appear authoritative even when uncertain. Responsibility must remain with identifiable institutions and decision-makers. High-impact systems need documentation, independent evaluation, complaint channels, human review, and clear rules for suspension or withdrawal.

Proposed Gender-Responsive AI Framework:

1. **Purpose and necessity:** define a specific WPS outcome and demonstrate why AI is needed over simpler alternatives.
2. **Co-design and participation:** involve women's groups, local peacebuilders, survivor advocates, disability organizations, language communities, and frontline workers.
3. **Rights and safety assessment:** conduct gender, privacy, human-rights, and threat assessments before deployment and after material changes.
4. **Data stewardship:** minimize collection, define lawful purposes and access, document provenance and limitations, and establish retention and deletion rules.
5. **Human accountability:** assign responsible institutions; preserve human review, appeals, incident reporting, and stop mechanisms.
6. **Monitoring and learning:** evaluate outcomes, harms, distributional effects, community trust, and unintended consequences.

Proposed results chain: responsibly governed AI capability → improved access, analysis, or coordination → better institutional response and participation → potential contribution to WPS outcomes. Each link requires evaluation; improved technical performance alone does not demonstrate improved safety or peace.

Policy and Implementation Recommendations:

1. Develop public guidance for AI in peace, security, gender-based violence response, and humanitarian settings, aligned with applicable law and human-rights obligations.
2. Begin with lower-risk assistive use cases, such as multilingual public information or document accessibility, before considering sensitive predictive applications.
3. Do not delegate high-impact determinations about credibility, eligibility for protection, risk status, or access to assistance to autonomous systems.
4. Create participatory governance with women's organizations and local civil society holding meaningful decision-making roles.
5. Require privacy and security impact assessments, vendor due diligence, model documentation, bias testing, audit access, and incident response.
6. Ensure multilingual, disability-accessible, low-bandwidth, offline, and human-supported channels.
7. Fund digital literacy and technical capacity for women-led organizations, local researchers, and frontline institutions.
8. Publish transparency reports and independent evaluations while protecting confidential information.
9. Establish safe feedback and grievance mechanisms with remedies and protection against retaliation.

Research Propositions and Evaluation Indicators: The following propositions are hypotheses for future empirical testing, not findings:

1. P1: AI-enabled information services are more likely to improve access when they provide accurate local-language content and human referral options.
2. P2: Perceived transparency, privacy protection, and community participation are positively associated with trust in AI-supported services.
3. P3: Unequal connectivity and language coverage moderate the relationship between AI service availability and equitable reach.
4. P4: Human oversight and clear accountability reduce the risk of harmful or exclusionary automated recommendations.

Potential indicators include reach disaggregated by relevant groups where safe and lawful; comprehension and service completion; response time; referral accuracy; user-reported safety and trust; accessibility; complaint resolution; privacy incidents; false-positive and false-negative rates; participation quality; and unintended harm. Metrics should not incentivize surveillance or unnecessary sensitive data collection. Qualitative feedback and independent review are indispensable.

Discussion: AI's potential contributi on to WPS in India lies in supporting institutions and communities to access information, coordinate services, understand patterns, and participate in decisions. Its limitations are equally important. In conflict-affected or high-risk settings, missing or distorted data may make prediction unreliable, while collecting more data may expose vulnerable people. A technically accurate system can still be harmful if its purpose is inappropriate or affected communities cannot challenge decisions.

A WPS perspective changes the question from 'Can AI predict or automate?' to 'Whose priorities shape the system, who benefits, who bears the risks, and who can hold decision-makers accountable?' This places women's agency and institutional responsibility at the center. Trust is earned through service quality, confidentiality,

responsiveness, and justice—not technological sophistication.

India's linguistic and social diversity makes local adaptation essential. A single dataset, language interface, or delivery model cannot be assumed to fit all settings. Partnerships with community organizations can reveal contextual realities, but these organizations should not be burdened with uncompensated data collection or exposed to additional risks.

Conclusion: Artificial Intelligence may offer useful tools for advancing aspects of the WPS agenda in India, including gender-responsive analysis, accessible information, institutional coordination, and women's participation. Its promise is conditional rather than automatic. Bias, privacy threats, digital exclusion, misinformation, and automation bias may undermine the rights and safety that WPS seeks to protect. Responsible implementation should be guided by necessity, inclusion, data minimization, human oversight, transparency, and independent evaluation. AI should complement women's leadership, local knowledge, survivor-centered services, and accountable institutions. Future empirical research should evaluate concrete deployments and measure not only efficiency but safety, equity, trust, participation, and unintended harms.

Limitations and Future Scope: This paper is conceptual and policy-oriented; it has not measured the performance of specific AI systems or assessed program outcomes in India. Examples indicate plausible use cases, not verified deployments or proven impact. Future research could include participatory case studies, interviews with women peacebuilders and service providers, comparative assessments of public-interest AI pilots, and evaluations of language accessibility and safety. Studies should use ethical protocols, avoid unnecessary sensitive data, and include community-defined measures of participation and benefit.

References:-

1. United Nations Security Council. (2000). Resolution 1325 (2000) (S/RES/1325). https://undocs.org/S/RES/1325
2. UN Women. (n.d.). Women, Peace and Security. https://www.unwomen.org/en/what-we-do/peace-and-security
3. UN Women. (2024). Women, peace and security: Report of the Secretary-General (S/2024/671). United Nations. https://undocs.org/S/2024/671
4. UNESCO. (2021). Recommendation on the Ethics of Artificial Intelligence. https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000381137
5. United Nations. (2024). Governing AI for Humanity: Final Report of the UN Secretary-General's High-level Advisory Body on Artificial Intelligence. https://www.un.org/ai-advisory-body
6. United Nations Office of the High Commissioner for Human Rights. (2021). The right to privacy in the digital age (A/HRC/48/31). https://undocs.org/A/HRC/48/31

****